फरवरी १९४९ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
	श्री पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालंकार	विदेश १० शि०
माघ २००५ सं०	[illegible] साहित्य भूषण	१ प्रति का ॥)

विषय सूची

भूल सुधार—

इस अक, के पृ० ६०१ से ६३२ के स्थान मे क्रमश ९ से ४० तक पढिये।

* ओ३म् *

दयानन्द पुरस्कार निधि में

प्रत्येक आर्य नरनारी अपना भाग दें

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री० प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति की

अपील

कलकत्ते के आर्य महा सम्मेलन में इस आशय का प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार किया गया था कि वैदिक सिद्धान्तों के प्रतिपादनार्थ उच्च कोटि का साहित्य उत्पन्न करने के लिए "दयानन्द पुरस्कार निधि" की स्थापना की जाय। इस निधि से उत्कृष्ट ग्रन्थों के लेखकों को पुरस्कृत किया जा सकेगा। इस उद्देश्य से जो निधि स्थापित की जाय उसमे कम से कम १ लाख रुपया एकत्र होना चाहिए। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आर्य महा सम्मेलन के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है। अब आवश्यक है कि आर्य जनता इस राशि को शीघ्र से शीघ्र पूर्ण करे।

कोई संस्था अथवा समाज ऊंचे दर्जे के साहित्य के बिना चिरकाल तक जीवित नहीं रह सकती। हल्का साहित्य कुछ समय के लिये विचारों का प्रचार कर सकता है। परन्तु विचारों का गहरा प्रभाव तभी होता है जब वह मनुष्यों की बुद्धि तक पहुंच जाय। बुद्धि को प्रभावित करने के लिये उत्कृष्ट साहित्य का होना अत्यन्त आवश्यक है। संसार के अनुभव ने सिद्ध किया है कि ऊंचे दर्जे के ग्रन्थों के लेखकों को जो पुरस्कार दिए जाते हैं वे साहित्य सेवा के प्रोत्साहन में अत्यन्त उपयोगी होते हैं। नोबिल पुरस्कार तो प्रसिद्ध ही है अन्य परिमित क्षेत्रों में जिन पुरस्कारों की स्थापना हुई उनसे भी उत्कृष्ट ग्रन्थों के निर्माण मे बहुत सहायता मिली है। हिन्दी साहित्य के निर्माण मे मंगलाप्रसाद पारितोषिक से पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त हुई है।

आर्य समाज के लिये १ लाख रुपया एकत्र करना कुछ भी कठिन नहीं है। अच्छा तो यही हो कि कोई एक ही दानी १ लाख रुपये की राशि का दान देकर निधि की पूर्ति का श्रेय प्राप्त कर ले। ऐसे अनेक आर्य पुरुषों को मैं जानता हूं जो आर्य समाज के स्थिर साहित्य की उन्नति में अपने धन का सद्व्यय करना चाहते हैं। उनमें से यदि कोई एक ही महानुभाव १ लाख रुपये की राशि भेज दें तो आर्य जगत् का यह संकल्प पूरा हो सकता है।

जब कोई दानी ऐसी १ लाख रुपये की राशि भेज देंगे तब उसकी सूचना आर्य जगत् को दे दी जायगी, परंतु हम उसकी आशा में बैठे नहीं रह सकते। आर्य समाज को बड़े २ धनपतियों ने सहायता दी है परन्तु आर्य समाज ने अपने कार्य को आगे बढ़ाने के लिये कभी धनपतियों की प्रतीक्षा नहीं की।

आर्य समाज का धर्मघट तो आर्य नर नारियों की डाली हुई बूंदों से ही भरता रहा है। मैं आर्य मात्र से साग्रह निवेदन करता हूं कि वे कम से कम पांच रुपये इस राशि की पूर्ति के लिये बिना किसी विलम्ब के भेज देवें। पुरुष, स्त्री और बच्चों को भी इस यज्ञ की पूर्ति में अपनी आहुति डालनी चाहिये। यदि प्रत्येक आर्य अपना भाग तुरन्त दे दे तो १ मास भर में १ लाख रुपये की राशि एकत्र हो सकती है। यह ध्यान में रखना चाहिये कि 'दयानन्द पुरस्कार निधि' की पूर्ति में सहायता देना ऋषि ऋण की पूर्ति का आवश्यक साधन है।

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ३१ | मार्च १९४९ ई० फाल्गुन २००५ दयानन्दाब्द १२५ | अङ्क १

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् अहांमुचेप्रभरे मनीषामा सुत्राव्णे सुमतिमावृणानः।

इममिन्द्र प्रति हव्यं गृभाय सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥ अथर्व १९।४२।३

अर्थः—मैं (सुमतिम्) उत्तम बुद्धि को (आवृणानः) चाहता हुआ (अहोमुचे) पापों से छुड़ाने वाले (आ सुत्राव्णे) चारों ओर से अच्छी प्रकार रक्षा करने वाले परमेश्वर के प्रति (मनीषां प्रभरे) अपनी बुद्धि और स्तुति को अर्पित करता हूं। हे (इन्द्र) परमेश्वर! तुम (इम हव्यम्) इस ज्ञानमय स्तुति को (प्रति-गृभाय) स्वीकृत करो (यजमानस्य) यज्ञादि शुभ कर्म करने वाले की (कामाः) शुभकामनाएं (सत्याः सन्तु) सत्य रूप से सफल हों।

विनयः—हे परमेश्वर! आप स्वयं सर्वथा पवित्र और हमें सब पापों से छुड़ाने वाले हो। हम उत्तम बुद्धि को चाहते हुए आप की ही शरण में आते और आप के प्रति अपनी बुद्धि की भेंट चढ़ाते हैं। आप हमारी प्रार्थनादि को प्रेम पूर्वक स्वीकार करें जिस से हम भक्तों की शुभ कामनाएं सदा सत्य और सफल हों।

श्री सावरकर जी की निर्दोष विमुक्तिः—

२७ मई सन् १९४८ से देहली के लाल किले में विश्ववन्द्य महात्मा गांधी जी की हत्या के सम्बन्ध में जो अभियोग नाथूराम विनायक गोडसे, नारायण दत्तात्रेय आप्टे, विष्णु रामचन्द्र करकरे, मदन लाल, डा० परचुरे और श्री विनायक दामोदर सावरकर जी आदि के विरुद्ध चल रहा था उसका निर्णय गत १० फ़रवरी को विशेष न्यायाधीश श्री आत्माचरण जी ने सुना दिया जिस में महात्मा गांधी जी के हत्यारे नाथूराम विनायक गोडसे और उन के मुख्य सहायक नारायण दत्तात्रेय आप्टे को मृत्यु दण्ड का आदेश दिया गया। गोपाल गोडसे, करकरे, डा० परचुरे और मदन लाल को आजीवन काले पानी का दण्ड सुनाया गया। शंकर किस्तैया को भी आजीवन काले पानी का दण्ड देते हुए न्यायाधीश महोदय ने यह सिफ़ारिश की कि उसके दण्ड को ७ वर्ष के कठोर कारावास के रूप में परिवर्तित कर दिया जाय। हिन्दू महासभा के भूतपूर्व प्रधान श्रीविनायक दामोदर सावरकर जी को न्यायाधीश ने सर्वथा निर्दोष बताया और उन को तत्काल विमुक्त करने का आदेश दिया। अपराधियों को १५ दिन के भीतर अपील की अनुमति दी गई यदि वे चाहें। तदनुसार इन सब अभियुक्तों ने पंजाब हाई कोर्ट में अपील कर दी है अत: उस के विषय में अभी कुछ टिप्पणी करना उचित नहीं प्रतीत होता। हमें जिस बात से विशेष प्रसन्नता हुई वह वीर सावरकर जी की निर्दोषिता का प्रमाणित होना है। अभियुक्तों में श्री सावरकर जी ही भारत ही नहीं, सारे जगत् में विख्यात व्यक्ति थे। उन का महात्मा गान्धी जी जैसे विश्ववन्द्य व्यक्ति की नृशंस हत्या में हाथ होना यदि प्रमाणित होता तो यह न केवल उन के व्यक्तित्व के लिये किन्तु एक प्रकार से समस्त हिन्दू जगत् के लिये घोर कलङ्क की बात होती। यद्यपि श्री सावरकर जी ने अपने वक्तव्य में स्पष्ट कहा था कि 'मेरे विरुद्ध जो अभियोग लगाये गये हैं वे सर्वथा असत्य हैं। मैंने इन में से कोई भी अपराध नहीं किया और न ऐसा करने का कोई कारण ही था। मेरे विरुद्ध केवल एक व्यक्ति (बाडगे) के कहने पर अभियोग चलाया गया है और सुनी सुनाई गवाही होने के कारण वह कानून की दृष्टि से सर्वथा स्वीकरणीय नहीं है। तथापि जनता की उनके प्रति आस्था जाती रही थी। यदि वे दोषी सिद्ध होते तो न केवल घोर अपराधी किन्तु असत्यवादी और भीरु भी माने जाते। हमें अत्यन्त हर्ष है कि सुयोग्य न्याय-

धीश ने उन्हें सर्वथा निर्दोष पाकर बन्धन विमुक्त कर दिया। वीर सावरकर जी की देश और समाज के प्रति की गई सेवाएं सुविदित हैं। हम उन की इस निर्दोष विमुक्ति पर उन्हें हार्दिक बधाई देते हैं।

पं० भार्गव का अन्तर्जातीय विवाह समर्थक बिलः—

भारतीय राष्ट्र संसत् (पार्लयामेन्ट) के इस अधिवेशन में जो महत्व पूर्ण विधेयक (बिल) प्रस्तुत हुए हैं उन में पं० ठाकुर दास भार्गव का हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह समर्थक बिल विशेष उल्लेखनीय है। श्री हनुमन्तैय्या, श्री कन्हैयालाल मुन्शी, श्री महावीर त्यागी, श्री देशबन्धु गुप्त बख्शी टेक चन्द्र जी आदि मान्य सदस्यों ने इसका प्रबल समर्थन करते हुए इसे राष्ट्रीय सघटन की दृष्टि से अत्यावश्यक बताया। हम इस बिल का जो प्रवरसमिति (सेलेक्ट कमेटी) के सुपुर्द किया गया है हार्दिक समर्थन करते हैं और आशा करते हैं कि प्रवर समिति इसे स्वीकृत करके ऐसा रूप देगी जो इसे और भी अधिक उपयोगी बना दे। इस विषय मे श्री कन्हैयालाल जी मुन्शी के इस निर्देश से हम सर्वथा सहमत हैं कि इसे पूर्व सम्पन्न अन्तर्जातीय विवाहों के सम्बन्ध में भी क्रियान्वित किया जाय जिससे उत्तराधिकार के सम्बन्ध मे कोई विवाद उपस्थित न हो। हिन्दुओं, सिक्खों, तथा विभिन्न उपजातियों मे परस्पर प्रेम, एकता और संगठन उत्पन्न करने की दृष्टि से इस प्रकार के विधान अत्यन्त उपयोगी हैं क्योंकि जाति भेद सामाजिक सगठन में सब से अधिक बाधक है इस में किसी भी विचार शील उदार व्यक्ति को कोई सन्देह नहीं हो सकता।

एक उत्तम स्पष्टीकरणः—

भारत के प्रधान मन्त्री माननीय श्री पं० जवाहर लाल जी ने '१ जनवरी को गोधरा (गुजरात प्रान्त) में एक भाषण देते हुए भारत राष्ट्र को "सेक्युलर स्टेट" बनाने विषयक नीति का स्पष्टी करण करके अत्युत्तम कार्य किया है। इस शब्द के प्रयोग से जिसका अनुवाद अनेक समाचार पत्र अधार्मिक व धर्म विहीन राष्ट्र भी करते रहे हैं जनता में पर्याप्त भ्रम तथा असन्तोष फैल रहा था। श्री प्रधान मन्त्री जी ने स्पष्टीकरण करते हुए बताया कि इसका अर्थ असाम्प्रदायिक राष्ट्र है। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि हम अधार्मिक अथवा धर्म विहीन नास्तिक बनें और हमारा यह राष्ट्र नास्तिक राष्ट्र हो। इसका तो इतना ही तात्पर्य है कि इस राष्ट्र में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अपने विश्वास वा धर्म में पूर्ण स्वतन्त्रता होगी और उस विश्वास के कारण उस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध न होगा। हम इस स्पष्टीकरण को अत्यावश्यक समझते हुए इस का अभिनन्दन करते हैं। आशा है इस स्पष्टीकरण से जनता का इस राष्ट्र को अधार्मिक व धर्म विरुद्ध राष्ट्र समझने विषयक भ्रम तथा तज्जन्य असन्तोष दूर हो जाएगा। सच्ची आस्तिकता और धार्मिकता की वृद्धि के लिये जो भारतीय सस्कृति और सभ्यता का प्राण है समुचित साधनों का अवलम्बन करना भी राष्ट्र तथा समाज के नेताओं का कर्तव्य है।

श्री पं० जवाहरलाल जी का राष्ट्र भाषा विषयक लेखः—

माननीय श्री पं० जवाहर लाल जी का भाषा के प्रश्न विषयक एक लेख पिछले दिनों अनेक समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है। हमें इसमें निम्न आशय के वाक्यों को देख कर प्रसन्नता हुईः—

(१) मैं निस्सङ्कोच कहूंगा कि भारत की सबसे विशाल सम्पत्ति और उसे उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त सर्वोत्तम वस्तु संस्कृत भाषा और साहित्य तथा उस के भीतर जमा सारी पूंजी ही है।

(२) यह अनिवार्य है कि हमारी अखिल भारतीय भाषा का आधार तथा भण्डार अधि कांश संस्कृत से ही प्राप्त हो।

(३) हमारे लिये एक अखिल भारतीय भाषा की बड़ी आवश्यकता है। ऐसी भाषा अंग्रेजी या अन्य कोई विदेशी भाषा नहीं हो सकती।

(४) जो एक मात्र अखिल भारतीय भाषा सम्भव हो सकती है वह हिन्दी या हिन्दुस्तानी या और जो कुछ कहें है।

(५) निश्चय ही अखिल भारतीय भाषा की लिपि के लिये नागरी लिपि ही सबसे अधिक प्रचलित होगी।

इस प्रकार के वाक्यों से हमें स्पष्ट प्रतीत होता है कि श्री प० जवाहर लाल जी अब हमारे युक्ति युक्त विचारों के पर्याप्त निकट आ रहे हैं यद्यपि कुछ अन्तर अवश्य है जो हमे आशा है शीघ्र दूर हो जाएगा। संस्कृत के महत्व को उन्होंने जिन स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया है और हमारी अखिल भारतीय भाषा का आधार तथा भण्डार अधिकांश संस्कृत से प्राप्त हो यह अनिवार्य है ऐसा जो लिखा है उससे वस्तुत हमारे संस्कृतनिष्ठ हिन्दी को राष्ट्र भाषा घोषित करने विषयक विचार का समर्थन होता है और इसीलिये श्री मान्य पण्डित जी को हिन्दी को अखिल भारतीय भाषा मानने पर भी अब विप्रतिपत्ति नहीं। किन्तु वे कहते हैं कि संस्कृत शब्दों के साथ अन्य साधन मुख्यतया फ़ारसी (जिसके विषय में उनका विचार है कि वह संस्कृत के जितनी निकट है उतनी अन्य कोई भाषा नहीं) अंग्रेजी तथा अन्य विदेशी भाषाओं के भी अनेकानेक शब्द जो लोकव्यवहार द्वारा स्वीकृत हो चुके हैं उस में सम्मिलित रहने चाहियें।"

यदि तो मान्य पण्डित जी का इतना ही तात्पर्य है कि लोक व्यवहार में अत्यधिक प्रचलित पोलिस, बिल, अपील, स्टेशन, जैसे अंग्रेजी शब्दों और शिकायत, सिफ़ारिश जैसे फ़ारसी शब्दों के भी उस अखिल भारतीय भाषा में प्रयोग की अनुमति होनी चाहिये तो इस में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान मंत्र गोविन्ददास जी जैसे हिन्दी के प्रबल समर्थकों का भी मत भेद नहीं है यदि भाषा प्रधानतया संस्कृत निष्ठ रहे जिसके कारण उसका सब प्रान्तीय भाषाओं से निकट सम्बन्ध बना रहेगा। अरबी फ़ारसी के अनावश्यक और कठिन शब्दों से अपनी भाषा को लाद देने की प्रवृत्ति का ही जो हिन्दुस्तानी शब्द से साधारणतया सूचित होती है हम सब विरोध करना अपना कर्तव्य समझते हैं। इस लिये भाषा के लिये हिन्दुस्तानी शब्द का प्रयोग भी भ्रमजनक और अनुचित है क्योंकि वह एक कल्पित, मनघडन्त भाषा है जिसका वस्तुत कोई अस्तित्व नहीं। नये पारिभाषिक शब्दों को मुख्यत संस्कृत से ही लेना पडेगा क्योंकि उन्हें मराठी, बंगाली, गुजराती, तिलगु, मलयालम, कर्णाटक तथा अन्य प्रान्तीय भाषा भाषी सुगमता से समझ सकेंगे। मान्य पण्डित जवाहिर लाल जी ने ठीक ही लिखा है कि "सभी लोगों से देवनागरी और उर्दू ये दोनों लिपियां सीखने के लिये हम नहीं कह सकते, यह एक भारी बोझ है।' उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि 'यह स्पष्ट है कि देव नागरी लिपि ही सब से अधिक प्रचलित होगी।'

किन्तु वे कहते हैं कि 'मेरे विचार में जहां भी आवश्यक हो उर्दू लिपि भी स्वीकार की और पढ़ाई जानी चाहिये।" किन्हीं विशेष प्रदेशों में और विद्यालयों में जहां मुसलमानों की बहुत बड़ी संख्या ऐसा चाहे उर्दू का प्रबन्ध करना भी अनुचित न होगा किन्तु प्रत्येक सरकारी काम में दोनों लिपियों का प्रयोग व्यर्थ व्यय वर्धक तथा अव्यवहार्य होगा। अत हम इस विचार का भी समर्थन नहीं कर सकते।

पाकिस्तान में तो उर्दू लिपि का सर्वत्र प्रचार होगा ही, कोई कारण नहीं कि राष्ट्रीयता वादी मुसलमान क्यों सर्वोत्तम पूर्ण और वैज्ञानिक देवनागरी लिपि को न अपनाए।

१०) मे एक आदर्श अन्तर्जातीय विवाहः—

यह प्रसन्नता की बात है कि आर्यजगत् मे अब जाति बन्धन तोड कर विवाह की प्रथा का क्रम क्रमश बढ़ता आ रहा है यद्यपि उस की वर्तमान प्रगति सन्तोषप्रद नहीं है। अभी ४० फर्वरी का देहली में एक विशेष महत्त्वपूर्ण अन्तर्जातीय विवाह संस्कार वैदिक रीति से मैंने सम्पन्न करवाया जिसमें वर श्री आचार्य धर्मेन्द्र नाथ जी शास्त्री एम ए एम ओ एल साहित्य रत्न, साहित्याचार्य, काव्यतीर्थ संचालक दून विद्यापीठ देहरादून और वधू देहली के श्री मुकन्द मुरारी लाल जी की सुपुत्री कुमारी शशिप्रभा जी एम ए सिद्धान्त भास्कर साहित्यरत्न थीं। हम इस सुशिक्षित आर्य दम्पती का हार्दिक अभिनन्दन करते और उन की दीर्घायु, कीर्ति तथा सर्वविध समृद्धि के लिए भगवान् से प्रार्थना करते हुए आर्य जनता से निवेदन करना अपना कर्तव्य समझते हैं कि वे जाति भेद की दलदल से अपने को निकाले और इस दम्पती का अनुसरण कर के केवल गुण कर्म स्वभाव पर आश्रित विवाह पद्धति को अधिकाधिक लोक प्रिय बनाएं। हमें यह लिखते हुए अत्यन्त दुःख होता है कि जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ नामक जो संस्था सार्वदेशिक सभा की अनुमति से कार्य कर रही है उसे आर्यों का पूर्ण सहयोग प्राप्त नहीं हो रहा है और उस की आर्थिक अवस्था सर्वथा असन्तोषप्रद है जिसके कारण कार्य विस्तार में बड़ी बाधा पड़ रही है। हमारा सभी समाज प्रेमियों से निवेदन है कि जातिभेद निवारक इस अत्यावश्यक और समाज हित साधक आन्दोलन को प्रबल बनाए और इसके लिए उदार आर्थिक सहायता जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ अजमेर के कोषाध्यक्ष महोदय के नाम भिजवाए। दलितोद्धार, शुद्धि, संगठन आदि अत्यन्त उपयोगी आन्दोलनों का भविष्य इस जातिभेद निवारक आन्दोलन की सफलता और प्रबलता पर निर्भर है यह लिखने की आवश्यकता नहीं।

प्रो० लुई रेनू के विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यानः—

पेरिस युनिवर्सिटी में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष तथा भारतीय संस्कृति संस्थान के संचालक प्रो० लुई रेनू एक सुप्रसिद्ध संस्कृतज्ञ पाश्चात्य विद्वान् हैं जो गत ३ मासों से भारत में व्याख्यान यात्रा पर आये हुए हैं। गत ७ और ८ फरवरी को उन के देहली विश्वविद्यालय में दो अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान 'संस्कृत अध्ययन की आवश्यकता' और 'अतीत तथा वर्तमान वैदिक अनुसन्धान' विषय पर हुए जिन्हें सुनने और उन से मिलने का हमें भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रो० रेनू के दोनों व्याख्यान उन के संस्कृत तथा वैदिक साहित्य के प्रति अद्भुत प्रेम और विशाल अनुशीलन के सूचक थे। अपने वैदिक साहित्य के अनुशीलन विषयक भाषण मे उन्होंने ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य तथा उनके वैदिक धर्म उद्धार विषयक कार्य की बड़ी प्रशंसा की। हमारे इस प्रश्न के उत्तर मे कि क्या पाश्चात्य विद्वान् ऋषि दयानन्द के भाष्य का जो श्री अरविन्द जसे सुप्रसिद्ध योगी तथा हम लोगों की दृष्टि में इस युग के वेदभाष्यों मे सर्वोत्तम है अनुशीलन करते हैं? प्रो० रेनू ने सरल स्वभाव से कहा कि वे प्राय इसका अध्ययन नहीं करते क्योंकि यूरप के संस्कृतज्ञ विद्वानों के लिये भी संस्कृत के ग्रन्थों का अध्ययन सुगम नहीं है अत जब तक इस का अंग्रेजी अनुवाद न हो इसका पाश्चात्य विद्वानों में प्रचार न होगा। हमें जहां

प्रो० रेनू के अद्‌भुत संस्कृत प्रेम को देख कर विशेष प्रसन्नता हुई वहाँ अपने लोगों की संस्कृत के प्रति उदासीनता को देख कर बड़ा दुःख हुआ। इन व्याख्यानों में उपस्थिति भी देहली जैसे केन्द्र की दृष्टि से बहुत कम थी। प्रो० रेनू का निश्चित विचार है कि भारत में सर्वसाधारण की लोकप्रिय भाषा भले चाहे संस्कृत निष्ठ हिन्दी रहे किन्तु सांस्कृतिक भाषा तो संस्कृत ही होनी चाहिये जिस का अध्ययन प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति के लिये अनिवार्य हो। तथा न केवल पारिभाषिक नवीन शब्दों का निर्माण संस्कृत के आधार पर करना चाहिये प्रत्युत जो अंग्रेजी अरबी आदि विदेशी भाषाओं के शब्द हिन्दी में आ गये हैं उन्हें हटा कर सरल संस्कृत शब्दों का ही प्रयोग पुनः प्रारम्भ करना चाहिये। प्रो० रेनू ने इसे भारत का दुर्भाग्य कहा कि शिक्षा मन्त्री संस्कृत से जिस के अच्छे ज्ञान के बिना कोई भारतीय संस्कृति, इतिहास तथा विज्ञान को समझ ही नहीं सकता सर्वथा अनभिज्ञ है। हम आशा करते हैं कि प्रो० लुई रेनू जैसे निष्पक्षपात पाश्चात्य विद्वानों का अद्‌भुत संस्कृत प्रेम हमारे देश के शिक्षित वर्ग तथा सरकार को भी प्रभावित करेगा और वे संस्कृत को मृत भाषा समझना छोड़ देंगे तथा इसके गम्भीर अनुशीलन को अपना आवश्यक कर्तव्य समझेंगे। हमारा सब संस्कृतज्ञ विद्वानों से भी निवेदन है कि वे संस्कृत को वास्तविक रूप से जीवित भाषा बनाने के लिये परस्पर वार्तालाप तथा पत्र व्यवहार संस्कृत भाषा में ही किया करें और संस्कृत के प्रचारार्थ अन्य सब आवश्यक साधनों को काम में लाएं।

डरबन के दंगों की उत्तर दायिताः—

गत जनवरी मास में दक्षिण अफ्रीका के डरबन नगर में जो भयङ्कर दंगे अफ्रीकनों और भारतीयों के बीच हुए जिन के परिणाम स्वरूप १२९ व्यक्ति मारे गये और १२४० घायल हुए, भारतीयों के १०० मकान पूर्णतया जला दिये गये तथा लाखों रु० की हानि हुई उन के विषय में द० अफ्रिकन सरकार द्वारा नियुक्त गोरों के कमीशन के सम्मुख के साक्षी देते हुए डा० लौबन ने १७ फर्वरी को बताया कि इन दंगों के लिए उत्तरदायित्व द० अफ्रीकन सरकार के प्रधान मन्त्री डा० मलान तथा अन्य मन्त्रियों की है जिन्होंने भारतीयों को विदेशी कह कर उन के प्रति घृणा उत्पन्न की थी तथा यहां के अनेक यूरोपियन लोगों ने भी जिन्हों ने प्रत्यक्ष रूप से इन उत्पातों के लिये अफ्रीकन लोगों को भड़काया। इस उत्तरदायित्व से बचने के लिये अन्य जो कारण इन उत्पातों के बताने का अब प्रयत्न किया जा रहा है वह सर्वथा अयथार्थ है। जब डा० लौबन ने इस बात पर बल दिया कि उन्हें अन्य साक्षियों की प्रश्न प्रति प्रश्न द्वारा परीक्षा का अवसर दिया जाए तो कमीशन के प्रधान ने उन्हें इस का अनुमति नहीं दी और निराश होकर भारतीयों को उस कमीशन के बहिष्कार का निश्चय करना पड़ा। हम द० अफ्रीकन सरकार और गोरों की इस अनुदार नीति की घोर निन्दा करते हैं और भारत सरकार से निवेदन करते हैं कि वह संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मलान सरकार की इस अनुचित नीति को अति शीघ्र परिवर्तन कराने का पूर्ण प्रयत्न करे। अभी १६ फर्वरी से पुनः वहां ऐसे उत्पात प्रारम्भ हुए हैं। द० अफ्रीका के भारतीयों और अफ्रीकनों का भी कर्तव्य है कि वे स्वार्थी गोरों के जाल में न फंस आर परस्पर प्रेम सम्बन्ध पूर्ववत् स्थापित कर के संयुक्त रूप से अपने अधिकारों की रक्षा करें जिन से उन्हें वञ्चित किया जा रहा है।

घ० दे०

दयानन्द पुरस्कार निधि

५) लश्कर (ग्वालियर) निवासी एक आर्य सज्जन
५) श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय मन्त्री सार्वदेशिक सभा दिल्ली
५) श्रीमती कलादेवी जी पत्नी „
३०) श्री कविराज हरनामदास जी बी० ए० दिल्ली
(अपने परिवार के ६ व्यक्तियों द्वारा)
१०) श्री विश्वनाथ जी ईशापुर जौनपुर
१००) श्री स्वामी सत्यवादी सत्यानन्द जी फतेहपुर
१०) श्री खेमराज जी प्रधान आर्य समाज भटपुरा पो० असमौली (मुरादाबाद)
५) श्रीलाल जी भाई वर्मा वैद्यनाथ धाम (संथाल परगना)
१०) श्री बनवारीलाल जी पचेरीकला पो० साहिबगंज (अपने तथा अपनी पत्नी के)
३०) दान दाताओं द्वारा श्री बनवारीलाल जी द्वारा संगृहीत
२०) „ „ „
६५) आर्य समाज अमरावती (सी० पी०)
५) श्री पं० धर्मदेव जी वि० वा० उ० मन्त्री सार्वदेशिक सभा दिल्ली
२३॥=) आर्य समाज २४८ नानापेठ पूना
३१) श्री जयनारायण जी मोदी सोजतरोड (मारवाड़)
११) „ रामदयाल जी लड्ढा „
११) „ जयदेव जी मोदी „
५) „ बशीलाल जी आर्य सोजत सिटी „
५) „ नेत्रवैद्य सुखदेव जी „
५) „ जुगराज जी „
७) „ मगराज जी तोसनी वाल „
२) „ प्रेमसुख जी नेत्र वैद्य „
५) „ जगन्नाथ जी देहली

४०५॥=) योग

नोट—सभा को शीघ्रातिशीघ्र यह एक लाख की राशि एकत्रित करनी है अतः आर्य समाजों को यह राशि शीघ्रातिशीघ्र पूरी करने में जुट जाना चाहिये।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली।

दयानन्द पुरस्कार निधि

निश्चित राशि एक लाख रुपया

शीघ्र से शीघ्र प्रत्येक आर्य नरनारी को अपना नाम भेजना चाहिये।

१६४२ में जब्त हुआ आर्य साहित्य

प्रेम प्रेम के साथ जो साहित्य पुलिस तहसीलस उठा ले गई थी। साहित्य अब नष्ट भ्रष्ट अवस्था मे वापिस किया है। जिससे ७० ७५ हजार की क्षति हुई। हिन्दी कुरान ७), कुरान और सत्यार्थ प्रकाश।) इस्लाम की छानबीन ४, हिन्दुओ चेतो ।॥=), शास्त्रार्थ प्रदीप ॥), बानता विनोद।), आर्य जाति की पुकार ॥=), मलकानों की पुकार ॥), वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कृत) ॥=) स्नान चिकित्सा।), पुराण किस ने बनाये।), कर्जे का मूख्ता =) अपौरुषेय वेद =)॥, प्रेम भजनावली।) द्रौपदी सत्यभामा।)।

राजपाल एन्ड संस की पुस्तकें भी हमारे यहा मिलती है।

मिलने का पता—

प्रेम पुस्तकालय, फुलट्टी बाजार, आगरा।

बुजुर्गों की सीख

जीवन की सैकड़ों समस्याएं हैं जिनमें बुजुर्गों और बड़ों बूढ़ों के परामर्श और सम्मति की आवश्यकता समझी जाती है, परन्तु विवाहित जीवन की किसी भी समस्या के सम्बन्ध में उनसे कोई सम्मति नहीं ली जाती। कुछ लज्जा सी प्रतीत होती है। विश्वास कीजिये कि 'विवाहित आनन्द' निःसंकोच और अनुभवी बुजुर्ग की हैसियत रखता है। इस की सीख से लाभ उठाएं।

सब बुकसेलर और रेलवे बुकस्टाल बेचते हैं।

कविराज हरनामदास बी. ए.

पंचमहा यज्ञों का फल

[लेखक—श्री पूज्यपाद महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज]

ओ३म् उप प्रागात्परमं यत्सधस्थमर्वा २॥ अच्छा पितरं मातरं च। अद्या देवाञ्जुष्टतमो हि गम्या अथा शास्ते दाशुषे वार्याणि ॥यजु० २६।२४

ऋषि दयानन्द कृत अर्थ—हे विद्वान् (यत्) जो (अर्वान्) ज्ञानी जन (जुष्टतम) अतिशय कर सेवन किया हुआ (परमम्) उत्तम (सधस्थम्) साथियों के स्थान (पितरम् पिता (मातरम्) माता (च) और (देवान्) विद्वानों की (अद्य) इस समय (आशास्ते) अधिक इच्छा करता है (अथ) अनन्तर (दाशुषे) दाता जन के लिये (वार्याणि) स्वीकार करने और भोजन के योग्य वस्तुओं को (उप, प्रआगात् प्रकर्ष करके समीप प्राप्त होता है उसको (हि) ही आप (अच्छ गम्या) प्राप्त हूजिये ॥ २४ ॥

भावार्थ—जो लोग न्याय और विनय से परोपकारों को करते हैं वे उत्तम जन्म, श्रेष्ठ पदार्थों विद्वान् पिता और विदुषी माता को प्राप्त हो और विद्वानों के सेवक हो के महान् सुख को प्राप्त हो वे राज्य शासन करने को समर्थ होवे ॥ २४ ॥

दुर्लभ वस्तु

संसार के अन्दर जीव आत्मा के लिये दुर्लभ क्या है ? दुर्लभ चीज वह होती है जो कष्ट से प्राप्त होती है और प्राप्त होते हुए भी दूर प्रतीत होती है। सुलभ चीज तो वह है जो बिना प्रयत्न के अपने आप हो जावे। स्वाभाविक हो। जैसे मैं आंख से देख रहा हूं, परन्तु मेरी पलकें (निमेष) अपने आप नीचे ऊपर हो रही हैं बिना प्रयत्न या संकल्प के। यदि मुझे लगातार ध्यान से देखना पड़े तो पलकों को रोकना पड़ेगा और इस से थोडी देर में मैं थक जाऊगा। ऐसे ही बोलते हुए, चलते हुए, सोते हुए, अपने आप स्वास आता जाता और रुकता है। यदि मुझे स्वास को दीघ करना हो या रोकना हो तो दोनों अवस्थाओं मे कष्ट प्रतीत होगा।

जीव आत्मा के लिये दुर्लभ जन्म मनुष्य का है। कहने को तो हम सब कहते हैं मनुष्य जन्म दुर्लभ है किन्तु हम इस की कीमत नहीं जानते। कारण यह कि हमने इसको जाना नहीं। परन्तु सन्तों ने तो इसे अन्तर दृष्टि से जाना है, और कहा है कि—

दुर्लभ मानुष जन्म है, मिले न बारम्बार।
तरुवर से पत्ता झड़े, फिर न लागे डार॥

मनुष्यों और पशुओं की गिनती हो गयी। परन्तु बाकी जीव जन्तुओं की गिनती नहीं हो सकती। थोड़े पृथ्वी के टुकड़े को खोद कर कीड़ी और मकोडों को देखें तो असंख्यात होते है।

कुत्ते को तोय कर के बुलाते हैं और उसे खिलाते हैं, किन्तु मनुष्य दुर्लभ जीवन वाला होता हुआ भी दर २ माँगता फिर रहा है।

परन्तु कोई उसे नहीं देता। कुछ वर्ष हुए जब मैं अफ़रीका से आया तो अपनी आँखों देखा, बम्बई के एक होटल से रोटी खा कर ज्यों ही कुत्ते को ग्रास डालने के लिये उठा तो बहुत से आदमी बूढ़े, बच्चे, स्त्रियां, उस ग्रास पर टूट पड़े। और परस्पर लड़ने लगे। वह ग्रास नाली में आ पड़ा और उन्होंने वह उठा कर खा लिया। ऐसी दशा होते हुए भी मनुष्य पशु बनना नहीं चाहता। यदि किसी को हम कुत्ता, गधा, या उल्लू नाम से पुकारें तो उसे क्रोध आ जाएगा। इस लिए वह जीव भाग्यवान् है जिसे मनुष्य का जन्म मिला उस से भी वह भाग्यवान् है जिसे सुख सम्पत्ति की दुर्लभ वस्तु प्राप्त है। सुख के साधन हैं दो—

सुख मिलता है एक तो जड़ पदार्थ से, अन्न, जल, वस्त्र, महल आदि से। और दूसरा मिलता है चेतन से। चेतन में सबसे पहले माता पिता अच्छे नेक और धर्मात्मा हों ताकि बच्चे को सुख मिल सके। पशुओं के भी माता पिता हैं परन्तु उन्हें सुख कहाँ। मक्खी मच्छर बिच्छू आदि मल से पैदा होते हैं। उन्होंने ऐसे ही मलिन कर्म किये जिस से उन की उत्पत्ति, पोसना और रहना सहना, मरना-जीना मल में ही है। उन के कोई माता पिता नहीं। ऐसे भी जीव हैं जिन के माता पिता तो हैं, परन्तु उनको माता का दूध प्राप्त नहीं। जैसे पक्षी और मुर्गी आदि। ऐसे जीव भी हैं जिन को माता से दूध तो मिलता है, परन्तु माता की गोद प्राप्त नहीं जैसे गाय, घोड़ा आदि पशु। एक मनुष्य है कि जिसे माता पिता, माता पिता की गोद और माता का दूध तथा छाती का प्रेम प्राप्त है।

ऐसे कहने को तो हम जो अच्छा आदमी है, उसे धर्मात्मा कह देते हैं, किन्तु धर्मात्मा तो वह है जो सत्य और न्याय से आचरण करता है। जिस ने सब कुछ प्राप्त कर लेने पर सत्य और न्याय को धारण नहीं किया वह परमात्मा को नहीं पा सकता। अच्छे माता पिता के पश्चात् मनुष्य को स्त्री की आवश्यकता है। स्त्री सुलक्षणी हो, गुण, कर्म स्वभाव से अनुकूल हो। फिर चाहिये संतान, और संतान हो तो आज्ञाकारी। मनुष्य समाज का प्राणी है उसे मित्र की भी आवश्यकता है मित्र हो तो सच्चा। केवल आपत्ति में सहायता करने वाला सच्चा मित्र नहीं कहलाता परन्तु मित्र तो वह है जो कुमार्ग पर न जाने दे, बुराई से हटाए, ऐसे ही हाँ में हां मिलाने वाला न हो। जैसे छोटी आयु के विवाह में सहयोग देने वाला। ऐसे मनुष्य को मित्र नहीं कहते। परन्तु अमित्र कहते हैं। शत्रु तो वह नहीं क्योंकि उस की भावना खराब नहीं। परन्तु वह अज्ञान से मित्रता करता है इसलिये अमित्र है। वेद भगवान् ने भी कहा है कि—अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥ (भावार्थ) हमें मित्रों से, अमित्रों से, ज्ञात, अज्ञात सब व्यक्तियों से रात और दिन निर्भयता प्राप्त हो और सब दिशाओं में स्थित प्राणी हमारे मित्र बन जाएं।

मनुष्य का स्वभाव है कि वह सीधा मार्ग ढूंढता है। यदि उसे किसी टेढ़े मार्ग पर खड़ा कर दें तो सीधी सड़क ढूंढेगा, कुमार्ग से बचेगा।

परन्तु पशु को सीधी सड़क पर भी खड़ा कर दो वह सीधा नहीं जाएगा। चाहे घोड़ा सिखाया हुआ भी हो बिना मनुष्य के हाथ में बाग होने के सीधा नहीं जाएगा। भाग्यशाली मनुष्य को नौकर की भी आवश्यकता है। नौकर वफादार विनम्र हो। आज्ञाकारी हो और सब से बड़ी बात वह हितचिन्तक हो। मनुष्य को आगे अपने पथ प्रदर्शन के लिये गुरु भी चाहिये किन्तु निःस्वार्थ निश्छल, निष्कपट हो। इस से भी वह बड़ा भाग्यशाली है जिस में मनुष्यत्व हो। कोई व्यक्ति अदर की आखों से अपने आप को बड़ी मुश्किल से मनुष्य कह सकेगा। वह बड़ा भाग्यवान् है जो दूसरों को मनुष्य बना सके। और (वेद ने भी कहा है कि "मनुर्भव जनया दैव्य जनम्।" अर्थात् मननशील मनुष्य बन दिव्य संतान को उत्पन्न कर) जो अपनी संतान को मनुष्य बना सके।

अति दुर्लभ वह है जो सब कुछ प्राप्त होते हुए भी अपना छुटकारा कर सके आवागमन के चक्र से मनुष्य ही छूट सकता है। मनुष्य इस ब्रह्माण्ड के मुकाबिले में बिलकुल छोटा सा तीन हाथ का है। और परमेश्वर तो एक ब्रह्माण्ड क्या अनेको ब्रह्माण्डों से भी बड़ा है। किन्तु इस छोटे से मनुष्य जीव के लिये इतना महान् परमात्मा इतना ही बड़ा है जितना पुत्र के सामने पिता। पुत्र मानो पिता की आत्मा है। जैसे माता के गर्भ में बच्चा है परन्तु वह दो नहीं कहलाते उस वक्त दो कहलायेंगे जब पृथक पृथक् हो जाएंगे। संसार के अंदर सब सौदागरी है। भगवान् भी बड़ा सौदागर है। भगवान् वेद ने कहा है

वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जं शतक्रतो।
देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे॥
यजुर्वेद=अध्याय ३=मन्त्र ४६-५०—

शब्दार्थ (शतक्रतो) असंख्यात कर्म वा प्रज्ञा वाले जगदीश्वर आप की कृपा से हम यज्ञ कराने और करने वाले विद्वान् होता और यजमान दोनों (इषम्) उत्तम २ अन्न आदि पदार्थ (ऊर्जम) पराक्रम युक्त वस्तुओं को (वस्नेव) वैश्यों के व्यवहारों के समान (विक्रीणाव है) दें व ग्रहण करें। (यजु अ० ३ म० ४६) हे मित्र तू (मे) मुझ को यह वस्तु (देहि) दे वा मैं (ते) तुझ को यह वस्तु (ददामि) देऊ व देऊगा। तथा तू (मे) मेरी यह वस्तु (निधेहि) धारण कर। मैं (ते) तुम्हारी यह वस्तु (निदधे) धारण करता हू। (यजु अ० ३ य० ५०)

अगर कोई हम से प्राण ले ले तो भी मर जाए गे। अगर हम किसी को प्राण अर्पण कर देवें तो भी मर जायेंगे प्रत्येक इन्द्रिय से देना लेना है। परमेश्वर का काम भी लाना और देना है। हम भगवान् को क्या देवें जिससे हम को मनुष्य का जन्म मिले। कोई ऐसा काम करना पड़ेगा जिस में कुछ कष्ट प्रतीत हो। वह काम जो पशु नहीं कर सकता। पशुओं को यदि सिखा या भी जाय तो वह दूसरे पशुओं को नहीं सिखा सकते परन्तु मनुष्य जो कुछ सीखता है वह दूसरों को सिखा सकता है।

धन दौलत अन्न जल वस्त्र से अधिक दान केवल विद्या का ही है। शास्त्रकारों ने भी कहा है कि "सर्वेषामेव दानाना ब्रह्मदान विशिष्यते" अर्थात् सब दानों में ब्रह्म अर्थात् वेद विद्या का दान सब से श्रेष्ठ है।

जिस से मनुष्य का जन्म हो सकता है। विद्या पढ़ना और पढ़ाना मनुष्य का काम है। प्रत्येक मनुष्य विद्या नहीं पढ़ सकता। तो क्या इस का अर्थ है कि कोई भी मनुष्य न बने। किन्तु हर एक मनुष्य अपनी सन्तान को सिखाता हा है। और विद्या के लिये तन धन और अन्न का दान देना भी विद्या का दान है। विद्या तो वही है जो सत्य विद्या है जो परमेश्वर का ज्ञान करावे, विद्या से प्रकाश हो जावे। जो मालिक का ज्ञान करा सके।

ईश्वर का नाम लेने से भी मनुष्य का जन्म तो मिलेगा ही। वाणी और हाथ से यदि काम किया है, चाहे मन खोटा हो तो भी मनुष्य बनावेगा। प्रत्येक अवस्था में वाणी और हाथ के किये का फल मिलेगा। प्रत्येक मनुष्य को बलि-वैश्वदेव यज्ञ अवश्य करना चाहिये। जो मनुष्य चींटी से लेकर हाथी पर्यन्त पशु पक्षी आदि और वृक्ष दीन दुखी और कगाल की सेवाकरता है, उसे सब सुख सपत्ति के साधन प्राप्त होते हैं लोग तीन मञ्जिल मकान पर रहते हैं, कुत्ते आदि कहां पहुंचें। भिखारी बिचारे की वहां पहुंच कहा। किन्तु हमारी जाति मे ऋषि मुनियों ने यह बड़ी सरल प्रथा चलाई थी। अब भी कसबों और गावों मे पक्षियों के लिये बाजरा आदि, कीड़ियों के लिये तिल शक्कर आदि बखेरते हैं। किन्तु बलिवैश्वदेव यज्ञ के स्वरूप को जान कर जो ऐसा दान करता है उस को सुख सपत्ति के सब साधन प्राप्त होते हैं। यह तो जड़ सुख साधन बताये हैं अब चेतन सुख का साधन है जो पीछे कह चुके हैं। स्त्री पुत्र, मित्र, नौकर सब वफादार नेक और धर्मात्मा मिलते हैं पितृ यज्ञ के स्वरूप को जान कर जो ऐसा करता है उस को यह सब साधन मिलते हैं। अतिथि यज्ञ के करने से उसे निष्कपट गुरु मिलता है। हम अभी अतिथि को समझे नहीं हैं। अतिथि तो परमेश्वर ही है। हमारे यहां लोकोक्ति है कि "मेहमान आया भगवान आया"। अतिथि को परमेश्वर का पुत्र कहा है। अतिथि वह है जो परमेश्वर के वेद ज्ञान का निःस्वार्थ भाव से प्रचार करे। ससार के जीवों के कल्याण के लिये। अर्थात् वह अपने पिता परमेश्वर का काम करने आया है। जो किसी के पुत्र की सेवा करता है उसके माता पिता अपने आप उस पर प्रसन्न हो जाते हैं। उदाहरणार्थ यदि कोई मेरे पुत्र का सत्कार करता है तो मेरा पुत्र जान कर, मेरी ही सेवा करता है यदि कोई तिरस्कार करे और मुझे ज्ञात हो जावे तो मुझे उस से दुःख होना स्वाभाविक है। परमेश्वर तो सर्व अन्तर्यामी है उसे तो उसी समय ज्ञान हो जाता है। अथर्ववेद और कठ-उपनिषद् में भी आया है कि उस मनुष्य का जप तप आदि सब नष्ट हो जाता है, जिसके द्वार से अतिथि खाली पेट चला जावे या उसका तिरस्कार हो।

ज्ञान परमेश्वर की निज सपत्ति है धन दौलत आदि साधारण चीज है। जैसे पुत्र की अपनी कोई चीज नहीं उसके पिता की है। जो भगवान् का काम करने आया है उस का निरादर करने से सब कुछ समाप्त हो जाता है। एक सच्चा दृष्टान्त पहले बचपन में मेरी बहन का सुनाया हुआ सुनिये। मैं तो उसको पहले सब

महन्त कथा रोचक रूप से समझता था। परन्तु अब मैंने पढ़ा तो सच पाया। किसी महा कंजूस धनी के घर एक नयी ब्याही स्त्री भोजन बना रही थी। एक साधु अतिथि द्वार पर भोजन के लिये आये। उस ने उठ कर जोर से साधु को कहा—जब कि उसका ससुर भोजन कर रहा था—कि इस घर में कुछ भी नहीं है। साधु ने कहा क्या खा रहे हो? देवी ने कहा यह तो बासी खा रहे हैं। फिर साधु ने कहा आगे क्या करेंगे? देवी ने कहा तेरे जैसे हो जाएगे। साधु तो चला गया परन्तु उसके ससुर को बहुत क्रोध आया कि यह इतना बड़ा झूठ बोल रही है। हमारा अपमान कर रही है। ससुर ने जब पूछा तो नम्रता पूर्वक कहने लगी कि मैंने ठीक कहा है, आप उस साधु को बुला कर पूछ लेवें। उसके ससुर ने साधु को बुला कर पूछा तो साधु ने उत्तर दिया कि यह ठीक कहती है। जब से यह आपके घर में आई। इसने आपको दान करते या आपके घर दान होते नहीं देखा। इस लिये कहा कि यहां कुछ नहीं है। और पहले कर्मों की कमाई को यह खा रहे हैं। अर्थात् यह बासी खा रहे हैं। यह ठीक ही कहता है। फिर मैंने पूछा कि आगे क्या करेंगे? तो कहा आप जैसे हो जाएगे। इस में झूठ या अपमान की कोई बात नहीं, देवी ने सच्ची और वास्तविक बात ही कही है। जो आज बीज नहीं बोता कल काटेगा क्या। ससुर की बुद्धि में कुछ दान करने के भाव पैदा हुए। तो बहू से कह दिया कि हमारे घर में ये जो चनों की बोरियाँ भरी पड़ी हैं आने वाले अतिथि लोगों को दिया कर।

दूसरे दिन उन चनों को जो गले सड़े थे ससुर ने दान करने की आज्ञा दी थी। पीस बना कर ससुर के आगे चने की रोटी परोस कर रख दी। ससुर बहुत नाराज होने लगा कि मैंने यह तुम्हें अपने लिये थोड़ा कहा था? वह देवी बोली कि पिता जी मैंने तो आप की आदत बनाने को ऐसा किया। क्योंकि फिर आपको आगे ऐसी ही मिलेंगी। आप को फिर कष्ट नहीं होगा, "जैसा कोई दान करता है, वैसा पाता है"। अब तो उस धनी की काया पलट गई। और उसे ऐसी लग गई बहू से कहा कि खूब दिल खोल कर अन्न खिलाया करो। कोई द्वार पर आया अतिथि खाली न जावे। स्वयं भी साधु सन्त सेवा में निमग्न हो गया। दान पुण्य करने लगा। इस से प्रभु ने उसे बड़ा भाग्य लगाया। आज वे बिरला बन्धु दान वीर विख्यात उस देवी के पुत्र सब संसार के सामने हैं। वह देवी दानवीर बिरला की मा है। इस द्रव्य यज्ञ करने से भगवान् की प्रजा को तो बाँध सकता है, परन्तु परमेश्वर को नहीं। (कारण) इस में अहम् भाव रह जाता है। क्योंकि शुद्ध वायु जल अन्न प्रजा के लिये होता है। परमेश्वर के लिये नहीं इस लिये परमेश्वर को नहीं पा सकता। किन्तु अतिथि मनुष्य को खिलाने से जो उस के अन्दर रक्त मांस अस्थि आदि बना। जो कुछ भी बना उसके खिलाने से उसका भागीदार होगा। अतिथि परमेश्वर का भजन करता है मन और जिस भाव से खिलाया वह सब कुछ परमेश्वर के आगे रखेगा। क्योंकि इस से न सिर्फ स्थूल शरीर बल्कि सूक्ष्म शरीर भी बनेगा

कहावत है "जैसा अन्न, वैसा मन" "जैसा पानी वैसी वानी, जैसा घी, वैसी बी" । हम जब किसी एक इन्द्रय आँख कान जिह्वा को नहीं जीत सकते तो मन को कैसे जीत सकेंगे ? मेरी आँख कान नासिका जिह्वा मे अन्न के बिगड़ने से सब कुछ बिगड़ गया। अतिथि ती शरीर के लिये नहीं, तथापि भजन के लिये खाते हैं। अतिथि की सेवा नहीं की या गन्दा खिलाया तो आप के हिसाब में वही जमा होगा। आप को वैसा ही गन्दा मल मिलेगा। अर्थात् अंधकारमय जीवन होगा और पथप्रदर्शक कोई नहीं मिलेगा। गुरु तो वह है जो अंधकार का नाश कर दे और मन में प्रकाश कर दे। दूसरे को मनुष्य वह बना सकता है जिस में तप और त्याग हो। हम कब तप और त्याग कर सकते है, हमे अपने बच्चों को प्यार करने का अवकाश भी नहीं मिलता। जब तक मनुष्य भक्त नहीं, तब तक त्याग नहीं कर सकता। जो २ महान् पुरुष हुए हैं वे भक्त ही थे। भगवान् का रास्ता वह बता सकता है जो भगवान् का भक्त है। भक्त तो छुटकारा चाहता नहीं भगवान् की भक्ति चाहता है। वह तो चाहता है ज्ञान जो परमेश्वर की निज सम्पत्ति है। और छुटकारा होता है ज्ञान से। प्रकृति और परमेश्वर के भेद करने का जो ज्ञान है वो ही ज्ञान है। और जब तक ऐसा ज्ञान नहीं तब तक विषय वासनाओं मे फसा रहता है। मनुष्य को परमेश्वर की भक्ति से ही परमेश्वर का ज्ञान होगा। इस लिये मनुष्य को जन्म सफल करने के लिये सावधान हो जाना चाहिये। इस प्रकार पञ्चमहायज्ञों की उपयोगिता और उन के लाभ स्पष्ट ज्ञात होते हैं। जैसे ब्रह्म यज्ञ से मनुष्य योनि तो अनिवार्य ही है। इसके अतिरिक्त आध्यात्मिक लाभ भी बहुत है। ब्रह्म यज्ञ में जप उपासना, स्तुति, प्रार्थना, सत्संग, स्वाध्याय सम्मिलित हैं। मनुष्य के अन्त करण को काम क्रोध, लोभ मोह आदि कुवृत्तियों के कारण अपवित्रता और अधीनता रहती है। इन सब का पृथक् २ लाभ यह है, कि उपासना से मन जो मोह से अपवित्र होता है वह पवित्र हो जाता है। स्तुति से चित्त की शुद्धि होती है। प्रार्थना से अहंकार और जप, सत्सग, स्वाध्याय से बुद्धि की पवित्रता होती है। क्योंकि बुद्धि लोभ से, मन मोह से, चित्त काम से, वाणी क्रोध से कान अहंकार से अपवित्र होते हैं। देव यज्ञ से जहा बाह्य रूप मे ससार के भूत प्राणियों की नीरोगता, सुख सपत्ति, जल अन्न वायु की शुद्धि होती है वहा आध्यात्मिक रूप से सूक्ष्म शरीर की पवित्रता होती है सूक्ष्म शरीर के पवित्र रहने से ही आत्मिक बल बढता है। पितृ यज्ञ से जहा उत्तम माता पिता, स्त्री,पुत्र, मित्र, भृत्य की प्राप्ति होती है। वहा आध्यात्मिक रूप से वाणी की शुद्धि होती है। वाणी मे कोमलता मधुरता प्राप्त होती है। अतिथि यज्ञ से समृद्धि के अतिरिक्त जहा निष्कपट गुरु की प्राप्ति होती है वहा सत महात्मा, विद्वान् गुरुजन के सत्कार सेवा से, अमृत वचन श्रवण करने से कानों की पवित्रता होती है जिससे मनुष्य बुराइयो से दूर और भलाइयों के समीप हो जाता है। बलि वैश्व देव यज्ञ से सब जड पदार्थ सुख साधन

प्राणायाम इतना लाभ दायक क्यों ?

[लेखक—पं० विश्वेश्वरनाथ जी आयुर्वेदाचार्य वैद्यशास्त्री, दिल्ली]

चबा कर खाया हुआ अन्न आमाशय (मेदा) आदि स्थानों में अनेक रसों से मिलकर अन्तड़ियों में जाता है। अन्तड़ियों उसका सार निकालकर ऊपर भेज देती है। और बाकी खारज रस नीचे को धकेल दिया जाता है। वही रस कई परिवतनों के बाद हृदय में आकर शुद्ध होता है।

इसी स्थान से शुद्ध रक्त वाहिनी नाडिया सम्पूर्ण शरीर मे रक्त ले जाती हैं।

मनुष्य देह का लगभग पाचवाँ भाग रक्त होता है। हृदय से निकलकर यह पानी की छोटी छोटी कूलों (नालियों) की तरह नाड़ियों में दौड़ लगाता है। और सब अङ्ग प्रत्यङ्गों को तथा योग्य रीति से अपना भाग देकर फिर हृदय देश की ओर लौट आता है।

एक मिनट में इसके दो चक्कर सारी देह मे लगते हैं। जब यह अपने स्थान से प्रस्थान करता है तब स्रोत जल की तरह शुद्ध निर्मल और लाल होता है। पर जब अशुद्ध रक्तवाहिना नाडियों द्वारा लौटकर आता है, तब नगर की गन्दी नालियों की तरह देह के गले सडे पट्ठों से लदा होने के कारण मैला हो जाता है। परन्तु ज्यों ही वह मैला रक्त अपने स्थान मे आकर नवीन प्राणवायु की गगा मे गोता लगाता है शीघ्र ही मल और दोष धोकर पूर्ववत् निर्मल और लाल हो जाता है।

पूर्ण प्राणायाम से सम्पूर्ण फेफडे काम करने लग जाते हैं। इसलिए जितना प्राण वायु रक्त मे प्राणायाम से पहुचाया जा सकता है उतना अन्य किसी प्रकार से पहुचाया नहीं जा सकता। साधारण रीति से जितना मनुष्य एक मिनट मे वायु लेता है उससे कई गुणा अधिक प्राणायाम म लिया जाता है।

कुम्भक मे भरा हुआ प्राणवायु रक्त के एक एक, परमाणु मे रम जाता है। जैसे चिरकाल तक रग में भीगे हुए वस्त्र मे रग व्याप्त हो जाता है वैसे ही प्राणवायु कुम्भक काल में रक्त मे व्याप्त हो जाता है। जितना अधिक रक्त होगा उतना अधिक नीरोगता और प्रसन्नता बढेगी। प्राणायाम के बिना ऐसा कोई साधन नहीं जिससे इतना अधिक रक्त शुद्ध हो सके। इसलिए प्राणायाम को नीरोगता और प्रसन्नता का स्रोत समझना चाहिए। प्राणायाम के तीन भेद हैं—

१ पूरक, २ कुम्भक, ३ रेचक। प्राणवायु को भीतर भरने का नाम पूरक प्राणायाम है और भीतर रोकने का नाम कुम्भक प्राणायाम है प्राणों को बाहर फेंकने का नाम रेचक प्राणायाम है।

यह याद रखना चाहिए कि प्राणायाम जब भी करे शरीर सीधा रखना चाहिए। तब प्राणायाम सफलता से हो सकता है अन्यथा नहीं।

की प्राप्ति के अतिरिक्त मैत्री करुणा आदि गुण आध्यात्मिक रूप से प्रकट होते हैं और आत्मों की अत्यन्त पवित्रता प्राप्त होती है। और मनुष्य वायु के दोष से मुक्त होता है। इसलिये प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है कि नित्य प्रति पञ्च महा यज्ञों को कर के लाभ उठावे। और दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति के लिये प्रयत्न शील रहे। प्रभु से प्रार्थना है हमें शक्ति दे कि हम सब ऐसा कर सकें॥

टंकारा तथा चाणोद

एक यात्रा के संस्मरण

[ले०— श्री प० भीमसेन जी शास्त्री एम० ए० संस्कृतोपाध्याय कोटा, राजस्थान]

सार्वदेशिक के प्रेमियों के संमुख मैं चिरोत्तर उपस्थित हो रहा हू। पौने तीन वर्ष पूर्व सार्वदेशिक द्वारा मैंने सं० २००३ कार्तिक पूर्णिमा पर ऋषि-गृह त्याग शताब्दी मनानेका प्रस्ताव उपस्थित किया था। उसके पश्चात् ऋषि की जन्म तिथि' (स० १८८१ फाल्गुन कृ० १ शुक्र = ४ २ १८२५) तथा ऋषि का गृह-त्याग' (स० १९०३ चैत्र शुक्ल के आरम्भ मे ही) पर दो लेख प्रस्तुत किये थे। उसी वर्ष महर्षि के प्रारम्भिक जीवन से सम्बद्ध दो अति महत्वपूर्ण स्थानों 'टंकारा' तथा चाणोद के दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। इन स्थानों के सम्बन्ध मे स्व विचारावली को 'सार्वदेशिक के प्रेमियों की सेवा मे निवेदन करने का आरम्भ से ही संकल्प था। पर इसमे अनेक कारणों से अति विलम्ब हो गया। वह आज प्रस्तुत कर रहा हू। अन्य पत्रों के सम्पादक भी इसे स्वपत्रों मे प्रकाशित करने की कृपा करें जिससे मेरा निवेदन अधिक आर्य महानुभावों के कर्णगोचर हो सके। हा अपने उस अंक की एक प्रति मेरे पास अवश्य भेजने का अनुग्रह करें।

चिरकाल से महर्षि के जन्म स्थान के देखने का अभिलाष चला आता था स० २००३ मे ऋषि के गृह त्याग को १०० वर्ष पूरे हुए थे विचार हुआ कि इस वर्ष मे तो इस पुनीत कार्य को कर सकू। शारदावकाश में इस कार्य को करने का संकल्प किया। साधारणत २४ दिसम्बर से १ जनवरी तक ९ दिन का यह अवकाश होता है। सं० २००३ में २३ दिसम्बर को सोमवती अमावस्या तथा २२ को रविवार होने से स्वास्थ्य खराब था यात्राकाल सन्निकट होने पर भी पर्याप्त निर्बलता थी। १ दिसम्बर को भी कालेज तांगे मे गया था। मित्र गण से संकल्पित यात्रा की बात पहले से कह चुका था। २१ दिसम्बर को दो मित्रों ने पृथक् पृथक् इस विषय मे जिज्ञासा की। मैंने कहा कि 'जाने की इच्छा बलवती है पर निर्बलता भी आप देख रहे हैं। निश्चय से कह नहीं सकता।

लम्बी यात्रा से १० १२ घंटे पूर्व इस उत्तर से विस्मय होता ही था। एक मित्र ने कहा आपका स्वास्थ्य इस यात्रा योग्य नहीं है। दूसरे अधिक मनचले थे। हस पडे कि होगई यात्रा। कुटुम्बी जन भी असहमत थे। मैं स्वय भी असमञ्जस मे था तथापि रात्रि के कुछ घन्टे विश्राम से पूर्व यात्रार्थ सामान एकत्र कर लिया कि प्रात कुछ स्वास्थ्य ठीक भी जचे तो सामान तयार न होने से ही यात्रा व्याहत न हो जावे।

प्रात शीघ्र उठा। यात्रा का ही निर्णय किया फिर इतना लम्बा निराबाध छुट्टा न जाने कब आती। बिस्तरा गोल किया। मेरा दशवर्षीय

भतीजा चिर० यतीन्द्र साथ हुआ। बड़ौदा, चाणोद-कर्णाली, अहमदाबाद, टंकारा सिद्धपुर आदि अनेक ऋषि-जीवन-संसृष्ट स्थानों के समयसीमा में यथा शक्य देखने का संकल्प था कौटुम्बिकों ने चलते चलते भी कहा कि अहमदाबाद कदापि न जाना। वहां अभी अभी साम्प्रदायिक दंगे हो चुके हैं। अब भी कुछ कुछ अवाञ्छित घटनाएं होती ही रहती हैं। मैंने सोचा कि भगवान् रक्षक है। देखा जायगा। पर अब एक शिशु साथ होने से अधिक सावधानता अनिवार्य होगई थी। यह छोटा बालक मेरे लिये कुछ बन्धन तो था ही, पर मेरी अस्वस्थ अवस्था मे पर्याप्त सहाय भी सिद्ध हुआ। परेशानुकम्पा से मेरा स्वास्थ्य यात्रा में संभलता ही गया।

कोटे से चल कर वटोदर (बड़ौदा) उतरा। वहां श्री प० चन्द्रमणि जी से मिला। वे बड़े सज्जन हैं। मेरी ज्ञातव्य बातों में यथा शक्ति सहायता दी। अगली यात्रा के लिये परिचय पत्र दिये। उस नगर के शुद्ध नाम का ज्ञान भी इन्हीं महानुभाव से हुआ। महर्षि के जीवन वृत्तान्त मे वटोदर वर्णन मे चेतनमठ, बनारसी बाई वैरागी का स्थान, गोविन्दराम रोडिया की धर्मशाला, केदारेश्वर का मन्दिर — इन स्थानो का नाम आता है। इन सब स्थानों को मैं देखना चाहता था। तथा सच्चिदानन्द परमहंस तथा ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी का की भी चर्चा है। इनके जीवन वृत्तान्त जानने के भी इच्छा थी। इस यात्रा में यह अनुभव हुआ कि आज से १०० वर्ष की घटनाओं के स्थानों का भी नामत वर्णन होते हुए भी मिल पाना कठिन हो गया है। संभव है स्थानों के नामादि में कुछ परिवर्तन होगया हो। पर जिन स्थानों का आज स्थानीय पुरुष प्रयत्न करने पर भी पता लगाने में असमर्थ हैं उनका कुछ समय पश्चात् तो पता लगना संभवत: असंभव ही हो जायगा और विरोधियों को मनमानी फबतियां उड़ाने का और जनता को अपने पक्ष में प्रभावित करने का मनचाहा अवसर मिल जावेगा। मेरे सामने तो पूछ ताछ करने पर भी पता न लग सका था, पर तत्पश्चात् और भी पूछ ताछ करके भी श्री चन्द्रमणि जी पता न पा सके। मेरे पास समय अति सीमित था। और अधिक से अधिक समय मैं टंकारा को अवश्य देना चाहता था। आवश्यकता इस बात की है कि आर्य जनता कुछ पूर्ण योग्य व्यक्तियों को इस काम पर नियुक्त करे। वे लोग खोज की योग्यता रखते हों (यह योग्यता थोड़े जनों में ही होती है), और धुन के पक्के हों। ऐसे कई विद्वान् ऋषिभक्त कई वर्ष कार्य करें तो ही सारे भारत के ऋषि भ्रमण की पड़ताल हो सकती है। कुल स्थानों, मठों, मन्दिरों के नामादि का परिवर्तन हो चुका प्रतीत होता है उनका पता लगा कर वर्णन कर दिये जाने से तत्सबद्ध घटनाएं अज्ञेय हो जायेंगी। अन्यथा ये ही कुछ काल में विरोधी आन्दोलन का पुष्ट आधार होंगी। इसके अतिरिक्त कुछ वर्णनों में भूलें भी हो गई हैं। उनका भी निरास हो जायगा। ऐसी एक भूल की मैं यहां उदाहरण रूप से चर्चा कर दू। जीवन चरितों में वर्णित है कि मथुरा में हरदेव पत्थर वाले ऋषि को २) मासिक दुग्धार्थ भेंट करते थे। इसमें थोड़ीसी

भूल है। ऋषि को श्री हरदेव के बड़े भाई २) मासिक भेंट करते थे। जब स्वर्गीय श्री पं० लेखराम जी ऋषि जीवन वृत्त संग्रहार्थ पधारे तब श्री हरदेव के अग्रज शान्त हो चुके थे और श्री हरदेव जी ही उस दूकान के स्वामी थे। उनका नाम लिख दिया था। घटना सत्य है पर उसका वर्णन अयथार्थ प्रकार से किया गया है। छोटी से छोटी भूलों का भी निरास करने का परम यत्न परमावश्यक है उपयुक्त दो बातों के अतिरिक्त एक तीसरी बात और भी है। गत ३ वर्षों से मेरा यह यत्न चल रहा है कि मैं जहां भी जाऊं जीवन चरितो मे वर्णित घटनाओं की पड़ताल करूं तथा और भी नई बाते जानने का यत्न करू। मैं इस कार्य में अधिक समय न लगा सका। केवल एक बार मथुरा मे चार दिन तथा टङ्करादि यात्रा में ११ दिन अर्पित कर सका। इसके अतिरिक्त देहली, मुरादाबाद, चौरासी, फर्रुखाबाद मनपुरी, जयपुर, अजमेर अपने कार्यो से जाते हुए यथा शक्य बातचीत की। मेरा अनुभव है कि पर्याप्त अवर्णित घटनाओं का आज भी संग्रह हो सकता है। अनेक अवर्णित बाते आज भी लोग बताते हैं। कई तो ऐसे स्थान हैं जहां ऋषि एक बार अथवा एक से अधिक बार भी गए कई कई दिन रहे, अनेक उपदेश हुए। पर जीवन चरितो में नाम निर्देश भी नहीं है। ऐसा ही एक स्थान चदौसी है। ऋषि का प्रथम आदरणीय जीवन चरित श्री देवेन्द्रनाथ जी का लिखा बगला में प्रकाशित हुआ था। इसका हिन्दी अनुवाद आज भी श्री गोविन्दराम हासानन्द जी नई सड़क देहली से प्राप्य है। इसमें थोड़ी ही घटनाओं का वर्णन है। इसके कुछ ही समय पश्चात् श्री लेखराम जी की संकलित सामग्री से बृहदाकार उर्दू जीवन चरित प्रकाशित हुआ। नोट उर्दू मे लिये गये थे, प्रेस कापी व छपाई भी उर्दू मे हुई। उर्दू-लिपि सुलभ कुछ भूलें भी जीवन चरितो में चल पड़ी हैं। आगामी योग्य लेखकों ने उनकी पड़ताल व निरास का प्रयास नहीं किया। यह सब अब अवश्य किया जाना चाहिये। समय बहुत बीत चुका है। पर आज भी बहुत कुछ हो सकता है। जैसे २ समय व्यतीत होता जा रहा है, साधन समाप्त होते जा रहे हैं। क्या आर्य जगत् इस प्रार्थना पर कर्णपात करेगा। क्या २ कहे ? ऋषि के प्रारम्भिक जीवन वृत्तान्त के लिये आधार भूत सामग्री -- थियोसोफिस्ट में प्रकाशित ऋषि का आत्म चरित तथा पूना व्याख्यानों का प्रामाणिक संस्करण भी हमने आज तक तैयार नहीं किया। इससे बढ कर और प्रमाद क्या हो सकता है ? जहां भी एक लेख अन्यत्र उद्धृत व संक्षिप्त हुआ है, नये से नये प्रमादों की क्रीड़ास्थली बना है। लेखकगण स्वलेखादि मे सीमातीत क्षिप्रकारिता का परिचय देते हैं। परिणाम भयंकर होता है। यह दोष सर्वथा परिहरणीय है। २० भ्रम विस्तारक लेखों के स्थान में एक सावधान लेख लिखना लेखक-पाठक उभय कल्याणकर है।

बड़ौदे से मैं चाणोद कर्णाली गया। इस स्थान का महर्षि के जीवन से अति महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध रहा है, पर आर्य जनता (जीवन चरित लेखक तक) इस स्थान के ऋषि जीवन में

महत्त्व से अपरिचित प्राय है। ऋषि ने यहीं संन्यास लिया। और मेरा अनुमान है कि वे अपने सन्यास गुरु के साथ रहे। खेद का विषय है कि महर्षि के सन्यास गुरु के नाम का भी हमने निर्णय नहीं किया। कोई जीवन चरित्र उन्हें परमानन्द लिखता है तो कोई पूर्णानन्द। आर्य समाज ने अब तक यह खोज नहीं की कि चाणोद से एक कोस पर कौनसी कुटया थी जिस में ऋषि ने सन्यास लिया था। उर्दू के कुप्रभाव से अनेक स्थानों के नाम अशुद्ध होगए। यही लीला अगरेजी ने की है। चाणोद अगरेजी में Chandod लिखा गया। अगरेजी के इस लेख को लोग चाँदोद पढने लगे और आज वह अपने इस नए नाम से अधिक प्रसिद्ध हो गया है। प्राय छ मास वे यहा रहे। यहीं पर ऋषि को दो उत्तम राजयोगी ज्वालानन्द पुरी व शिवानन्द गिरि मिले और वास्तविक योग शिक्षा का प्रारम्भ यहीं हुआ। मेरा अनुमान है कि चाणोद कर्णाली तथा समीप वर्ती प्रदेश में ऋषि प्राय तीन वर्ष रहे। जन्मभूमि टकारा के अतिरिक्त दक्षिण प्रदेश मे सर्वाधिक ऋषि निवास यहीं हुआ। दु ख है कि इस प्रदेश में अब तक आर्यसमाज स्थापित नहीं हुआ। सिद्धपुर में सभवत शिशु मूलशकर का चूडाकर्म हुआ होगा तथा वहीं अन्तिम पितृ दर्शन हुआ। वहा भी आर्यसमाज नहीं है। मैं जिन बातों की खोज करना चाहता था [सन्यास दीक्षा स्थान आदि] इस विषय में यदि पता कुछ लगता तो भी चिरभम से ही। समय स्वल्पतावश मैंने तीर्थ यात्रा सदृश पर्यटन कर ही सतोष कर लिया। जो सज्जन कुछ उद्योग कर सकें उनसे मै एक बात का पता लगाने की और प्रार्थना करूगा। चाणोद से प्राय १ कोस पर पश्चिम मे नर्मदा तट पर स्वामी ब्रह्मानन्द सस्थापित गङ्गानाथ महादेव का मन्दिर है। उनका समय आदि जानने का प्रयत्न करना चाहिये। और यह जानने का कि क्या स० १६०३ में ये बडौदे में तो न थे अर्थात् ऋषि का जिन ब्रह्मानन्द से बडौदे मे सपर्क हुआ था वे क्या यही हो सकते हैं?

चाणोद से मैं बडौदे लौटा, और समय स्वल्पता का विचार कर पहले सीधे टकारा जाने का विचार किया। बडौदे से मौरवी आया। टकारा की गाडी मे ४-५ घण्टे का अन्तर था। नगर मे आर्यसमाज में गया। श्री म० लक्ष्मण नारायण जी चौहान बडे प्रेमी हैं। उन्होंने बडे प्रेम से स्वगृह लेजाकर भोजन कराया। उसी दिन (२६ ता० की) साय टकारा पहुच कर सीधा आर्यसमाज मन्दिर पहुचा। वहा के प्रधान श्री महाशय गिरधरलाल गोविन्द जी महता बडे योग्य व सज्जन व्यक्ति हैं। मैं अस्वस्थ सा ही था तथापि उनके यहा सब प्रकार का आराम रहा।

जाते ही उस रात श्री प० पोपट लाल जी रावल से मिला। इनका वास्तविक नाम श्री प्रभाशकर है पर ये उपर्युक्त नाम से ही प्रसिद्ध हैं श्री मूलशंकर (महर्षि दयानन्द का जन्म नाम) पाच बहन भाई थे। इन पाचों में मूल जी (दयानन्द जी) ही सब से बडे थे। उनके दो वर्ष पश्चात् एक बहिन, और अन्त मे एक भाई

का जन्म हुआ था। श्री कर्षन जी (श्री मूल जी-के पिता) की उपर्युक्त पॉच सन्तानों में से दूसरी संतान (पुत्री) १४ वर्ष की अवस्था में (सं० १८६७ अथवा १८६८ में) ही दिवगत हो गई थी। प्रथम सतति (श्री मूल जी) स० १६०३ में गृह से सदा के लिये निकल पडे और कुल-पावन जगद् गुरु दयानन्द बने। शेष दोनों पुत्र भी पिता के सामने ही काल के गाल मे चले गये। केवल चौथी सतति (कन्या प्रेमबाई) ही पॉच बहिन भाइयों मे से अवशिष्ट रही थीं। इन प्रेमबाई के दो प्रपौत्र थे। छोटे का सन् १६४४ में देहान्त हो गया। श्री पोपट जी उपर्युक्त प्रेमबाई के ज्येष्ठ प्रपौत्र हैं ये ही कर्षन जी के वशधर हैं। ईश कृपा से इनका घर सतति से भरा-पूरा है।

मैं ऊपर कह चुका हू कि मैं २६ ता० की रात्रि में श्री पोपट रावल से मिला। ये बडे सज्जन हैं। अगले दिन प्रात आँख बनवाने को मोगा जाने वाले थे पर मुझ पर अनुग्रह कर एक दिन रुक गए। अगले दिन प्रात मैंने शिशु सहित श्री पोपट जी के गृह पर भोजन किया तथा उनसे उनके कुल का पुराना-नया वृत्त पूछता रहा। श्री पोपट जी तथा इनके पिता व पितामह आदि महर्षि दयानन्द को नास्तिक, कृष्टान एव कुल-कलङ्क समझते थे। अत ये लोग श्री दयानन्द का अपने कुल से सम्बन्ध सदा छिपाते रहे। श्री पोपट जी के जीविकार्थ मध्य-प्रान्त में तथा कलकत्ता रहते हुए अपने कार्य-दाता ठेकेदार श्री रामलाल कायस्थ आदि से शनै शनै पता चला कि श्री दयानन्द नास्तिक न थे वे वेदोद्धारक थे और जगद् गुरु बने। इस बात को जान कर इन लोगों ने जो कुछ प्राचीन वृत्त इन्हें ज्ञात था उसे बताना आरम्भ किया। कृष्ण जी के पुराने बहीखाते आदि भी ऋषि के अनन्य भक्त श्री देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय को दिखाए। तब पुण्य श्लोक श्री देवेन्द्रनाथ जी महर्षि के जन्मस्थान आदि का निर्णय कर सके। खेद की बात है कि श्री दयानन्द का जन्म गृह जिसकी धूलि मे आधे घण्टे तक लोट लगा कर भक्ति भरित श्री देवेन्द्र नाथ जी मुखोपाध्याय ने अपने आपको कृतकृत्य माना था और जिसकी पावन रज को सं० १६८२ (सन् १६२६) की टकारा शताब्दी मे एकत्रित हुए समस्त आर्य पुरुषो, नेताओं ने अति श्रद्धा पूर्वक माथे पर लगाया था, और जिस गृह की महिमा मयी रज को योगी नारायण स्वामी जी जैसे श्रेष्ठ मानव भी अपने साथ लाए थे, वह ४० लाख आर्यो का श्रद्धा भाजन गृह जिसे जगद् गुरु महर्षि दयानन्द का जन्म स्थान होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, एक समृद्ध आदमी ने सन् १६४४ मे मोल ले लिया। वणिग्वृत्ति आर्य कार्य कर्ता चार या पाँच सौ रुपये की बचत सोचते अनीहा से ताकते रह गये और वह दूसरों की सम्पत्ति बन गया। वहाँ पुराने घरों को तोड़ कर तथा आस पास की भूमि को मिलाकर विशाल भवन बन गया है। अब आर्य जनता जगदुद्धारक महर्षि के जन्म गृह के दर्शन चित्र में ही कर सकते हैं। साक्षात् नहीं। अहो विडम्बना। भगवान् इस वणिग्वृत्ति को आर्य कार्य कर्ताओं से दूर करें। यह दु ख

की बात है कि आर्य समाज के अनेक कार्य कई अयोग्य पुरुषों के हाथों में रहते हैं जो आर्य जगत् की भावनाओं तथा अभिलाषों का बलिदान अकुण्ठित भाव से अपनी उमङ्गों तथा तरङ्गों की तृप्ति के लिये कर डालते हैं सौभाग्यवान् होंगे वे स्थान जहाँ कि आर्य जनता ऐसे कार्य कर्ताओं के कोड़ों से प्रताड़ित न हो।

टकारा निवास-काल में मैं स्वाभिलषित बातों में से बहुत थोड़े से अंश का अनुसधान कर सका। प्रयत्न करके भी मैं न जान सका कि संवत् १९०२ के अधिकांश भाग मे श्री मूलशंकर टंकारासे ३ कोस पर स्थित किस ग्राम मे अध्ययन करते रहे थे और वे कौन धन्य पुरुष थे जिनको मूल जी को प्राय एक वर्ष वेदान्तादि पढ़ाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मैंने आस पास के ग्रामों में घूम कर खोजने का प्रयत्न किया पर १०० वर्ष से अधिक पुरानी सर्वथा विस्मृत बात का परिमित समय में पता लगाना संभव न हुआ। ३१ ता० की साय एक समीपवर्ती स्थान मे जाने का विचार किया। टंकारा स्टेशन पर पहुच कर टिकट भी ले लिये। तत टाइम टेबिल देखा तो गाड़ियो के मेल अच्छे न थे, और मैं अगले दिन साय टंकारा से चल कर अपनी ड्यूटी पर समय पर न पहुच सकता था। टिकट लौटा कर टंकारा वापिस आया और अगले दिन प्रात कोटे को प्रस्थित होगया।

यद्यपि स्व जिज्ञासित विषयों मे से थोड़े से अंश को ही जान सका। इस परिमित समय मे अधिक हो ही न सकता था पर जितना लाभ मैं प्राप्त कर सका उससे वह अस्वस्थ अवस्था की दीर्घ यात्रा भी परम सतोषावह रही। महर्षि की दिगन्त व्यापिनी कीर्ति से परिचित हो अब अनेकों उदीच्य कुल तथा अनेक ग्राम ऋषि दयानन्द से अपना सम्बन्ध जोड़ने को समुत्सुक हैं। मूल जी का जन्म टंकारा के जीवापुर मुहल्ले में हुआ था। टंकारा से लगभग दो कोस पर जीवापुर ग्राम है। वहा का एक उदीच्य कुल ऋषि दयानन्द को स्वकुलीय उद्घोषित करता है और जीवापुर ग्राम को ऋषि की जन्म भूमि बताता है। जब मैं टंकारा में था तो एक सज्जन कुछ आर्य पुरुषों से कह गये कि स्वामी जी हमारे कुल के थे और हमारे पास वंश वृक्ष विद्यमान है। मैं जीवापुर पहुचा। उस सज्जन को खोजा और वंश वृक्ष मांगा तो टालम-टोल करने लगे। भाई ग्रामान्तर में गया है। उसके आने पर ही मिलेगा कागजों में दबा रखा है। खोजने का अत्यधिक आग्रह करने पर घर से लौटकर कहा कि चूहों ने काट डाला है। कटी हुई दशा में बताने का आग्रह करने पर कहा पूर्णतया नष्ट हो गया है। उस ग्राम के अधिपति ठाकुर बड़ी चौड़ी लम्बी बातें करते थे। मानो ऋषि दयानन्द की कई पीढ़ियों की वंश परम्परा और वृत्तान्त उन्हें सुविदित है। जब मैंने नोट करने को कागज कलम हाथ में लिये तो सब अथाह ज्ञान लुप्त हो गया और कहने लगे— इस उदीच्य कुल का अमुक व्यक्ति अमुक ग्राम मे रहता है, उससे पूछ कर नोट करना। अनेक विपरीत वादियों की बाते सुनी, पर सबको निस्सार पाया। लोगों में वृथा सन्देह करने की तथा वृथा

सदेह फैलाने की बान सी पड़ गई है। मैंने अनुभव किया कि लोग अबतक हुए अनुसंधान का अध्ययन करने का भी कष्ट नहीं करते और अटकल पच्चू बात बनाते रहते हैं। कुछ न कुछ बोलते रहने मे ही लोगों ने अपनी शोभा मान रखी है सब बाते सुनकर व विचार कर श्री देवेन्द्र नाथ जी का निर्णय ही समर्थनीय जचा—'टकारा ही ऋषि को जन्म देकर गौरवा विन हुआ है।

एक बात में श्री देवेन्द्रनाथ जी तथा श्री स्वामी सत्यानन्द जी दोनों ने भूल की है। संवत् १८९४ की शिवरात्रि (२२ २ १८३८ गुरु) का जागरण ट कारा से ६ मील से अधिक दूर ऋषिभक्त श्री देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय ने स्वलिखित जीवनचरित्र मे पार्श्व १८ पङ्क्ति ७ वा ३५ पर जडेश्वर के मन्दिर को ट कारा से ४ मील दूर लिखा है। यह ठीक नहीं है यह मन्दिर टकारा से ६ मील से भी अधिक दूर है। जडेश्वर के मन्दिर मे मूल शङ्कर ने किया था ऐसा ये दोनों ऐतिहासिक तथा इनके आश्रय से लिखने वाले अन्य लोग मानते हैं। यह सर्वथा अयथार्थ है। यह मन्दिर विट्ठलराव देव जी ने संवत् १८६४ मे बनवाया था। सं० १८९४ श्री मूलशकर के जागरण की शिव रात्रि तक इसे बने केवल २५ वर्ष व्यतीत हुए थे। मैंने इसे स० २००३ में देखा था अर्थात् मेरे देखने के समय इसे बने १३४ वर्ष बीत चुके थे। स० १८९४ में तो मूल मन्दिर के अतिरिक्त आसपास भवन निर्माण अति साधारण हुआ होगा। अब तो यह स्थान एक बडी बस्ती का रूप धारण कर चुका है। आसपास का जगल कट चुका है। पर यह मन्दिर एक छोटी पहाड़ी के ऊपर स्थित है। और इसके चढ़ाव उतार इस प्रकार के हैं कि आज भी २ ३ मनुष्य आधी रात को इस पर से उतर कर ट कारा आने का साहस न करेंगे। स० १८९४ में तो यह स्थल हिंस्र जन्तुओं का आश्रयी भूत था तब तो यह पूर्णतया असम्भव था। श्री देवेन्द्रनाथ जी ने अपने ग्रन्थ के पार्श्व १९ पर इस शङ्का का उत्तर दिया है। उपर्युक्त पार्श्व की पङ्क्ति २५ २६ मे उनका लेख 'जहाँ बहुत से मनुष्य इकट्ठे होकर रहते हो वहा हिंस्र जन्तुओं का भय रहते हुए भी हिंस्र जन्तु वास्तव में कुछ नहीं कर सकते' यथार्थ है। पर इससे उस स्थान पर जागरण की सभावना ही सिद्ध होती है सो जागरण तो हम भी मानते हैं कि उस मन्दिर में स १८६९ की शिवरात्रि से ही होता रहा होगा। और जागरण तो बडी बात है। उसमे तो बहुत से मनुष्य प्रसिद्ध मन्दिरों में एकत्र हो जाते हैं। २ ४ मनुष्य—पुजारी आदि तो मन्दिर बनने के समय से ही सदा रहें हो यह सभव हो सकता है। मैं स्वयं उज्जैन के पास ज्ञानेश्वर स्थान पर जहाँ हिंस्र जन्तु जल पीने आते हैं, ६ मास एकाकी रहा था, और खुले स्थान पर सोता था। बन्द कमरे मे नहीं। सो जागरणार्थ लोगों का वहा एकत्र होना शङ्कास्पद नहीं है, पर आधीरात को एक १३ वर्षीय बालक का एक सिपाही मात्र के साथ उस जोखम पूर्ण पहाड़ी से उतर कर ३, ३॥ कोस पर ट कारा में आना शङ्कास्पद ही नहीं, एकान्त असंभव है। यह एक ही बात स० १८९४ की जागरण घटनार्थ जडेश्वर

को सर्वथा अमान्य बना देती है। पर उस रात्रि की घटनावली में तो अन्य भी बातें हैं जो उस स्थान की अमान्यता का अनुमोदन करती हैं। ऋषि ने आत्मचरित्र में वर्णन किया है। "दूसरे पहर की पूजा हो गई थी। १२ बजे के अनन्तर लोग जहाँ तहाँ मारे ऊँघ के भूलने लगे और शनै शनै सब लेट गये।
मन्दिर के बिल से एक ऊदर बाहर निकलकर ......। मेरे चित्त मे प्रकार प्रकार के विचार उत्पन्न हुए । ऐसे बहुत से तर्क मन में उठे। तब पिता जी को जगा के" । उन्होंने कहा । ऐसा सुन के मेरे मन मे धारणा हो गई कि इसमें कुछ गड़बड़ अवश्य है। और भूख भी बहुत लग रही थी। पिता से पूछा । उन्होंने कहा कि सिपाही को साथ लेके जा.. । मैंने घर में जाकर । माता ने कुछ मिठाई आदि दी । उसको खाकर एक बजे सो गया।"

[श्री प० भगवद्दत्त जी सपादित ऋषि दयानन्द का आत्मचरित्र, पार्श्व १२, प० १० से पार्श्व १४ प० २ तक]

उपरि उद्धृत शब्दावली जिन घटनाओं का सकेत करती है, वे घटनाएं उपर्युक्त ग्रन्थ मे लगभग दो पृष्ठों मे वर्णित हैं। बारह बजे पिता श्रीकर्षण जी को जगाना, उनसे वाद प्रतिवाद सिपाही के साथ घर आना, माताजी से बातचीत, मिष्टान्न भोजन, सो जाना—इतनी घटनाएं एक घण्टे में घटित होना कर्षण जी तिवारी (दयानन्द जी के पिता) के बनवाए कुबेरनाथ जी के मन्दिर मे जागरण करते ही सभव हो सकता है। जडेश्वर में उपवास करते तो इतने कार्यों के बाद सोते तक प्रात के चार बज जाते।

तीसरी बात यह है कि ऋषि ने जागरण के शिवालय का अपने नगर के बाहर ही होना वर्णन किया है। यह वर्णन कुबेरनाथ जी के मन्दिर पर ही चरितार्थ होता है। ३-३॥ कोस पर स्थित जडेश्वर के मन्दिर को नगर के बाहर स्थित कोई नहीं कह सकता। उपर्युक्त तीनों प्रमाणों में से एक एक भी कुबेरनाथ जी के मन्दिर में जागरणसिद्धि को पर्याप्त है। तीनों समुदित की तो बात हीक्या है।

ऋषि के पूना व्याख्यान मे जागरण के शिवालय का 'नगर के बाहर एक बड़ा शिवालय' वर्णन हुआ है। सुना गया है कि पूना के व्याख्यान संस्कृत मे हुए थे। सस्कृत मे नोट किए गए, और मराठी में मुद्रित हुए। शार्ट हैन्ड नोट लेने वाले इस समय भी सभवत नहीं हैं। उस समय स० १९३२ श्रावण शु० ३ बुध (४.८ १८७५) के व्याख्यान के दिन तो हिन्दी मराठी का शार्ट हैंड भी न था, अत नोट कितने प्रामाणिक लिये जा सकते थे—यह सुस्पष्ट है। उस व्याख्यान के नोट मे किसी प्रकार भूल से शिवालय के साथ बड़ा मुद्रित हो गया बस यही 'बड़ा' शब्द इस जडेश्वर-जागरण के बड़े भ्रम का कारण बन गया है। पर उस मराठी रिपोर्ट की उसी पक्ति का 'नगर से बाहर' विशेषण इस बड़ा' शब्द की अशुद्धि को उद्घोषित कर रहा है।

श्री देवेन्द्र नाथ जी की महर्षि के जन्मस्थान का वर्णन करने वाली पुस्तिका को श्री घासीराम जी ने जीवन चरित्र के प्रथम परिशिष्ट रूप में सक्षिप्त करके दिया है। यह अश बहुत ही भ्रम जनक हो गया है। उसकी अशुद्धियों का ज्ञान भी ट कारा जाने से हो सका और कई वर्षों से चले आने वाले भ्रम दूर हुए। लेख विस्तर भीति से उनकी चर्चा यहाँ नहीं करता।

वैदिक सिद्धान्त विमर्श —

सृष्टि की उत्पत्ति

[लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक]

सृष्टि कार्य है—उत्पन्न की गई है + । इस मे कार्य के धर्म पाए जाते हैं । कार्य के धर्म हैं उत्पन्न होना, कुछ काल ठहरना फिर नष्ट हो जाना, जैसे घड़ा कार्य है किया जाता है-बनाया जाता है कुछ काल ठहरता है फिर नष्ट हो जाता है । यद्यपि समष्टि सृष्टि-समुदित सृष्टि (समुदाय रूप सृष्टि) हमारे सम्मुख उत्पन्न नहीं हुई परन्तु इसके अवयव अवयव मे कार्य के धर्म उत्पत्ति आदि पाए जाते हैं, वनस्पति हो, कीट पतङ्ग हो, सरीसृप हो, पक्षी हो, पशु हो या मनुष्य का शरीर हो, उत्पन्न होता है कुछ काल ठहरता है फिर नष्ट हो जाता है । अवयव में कार्य धर्म—उत्पत्ति-स्थितिनाश के पाए जाने से समष्टि-समुदाय रूप सृष्टि भी निश्चित कार्य रूप है—उत्पन्न हुई हुई है, कारण कि अवयव मे जो धर्म हुआ करता है वह उसके समुदाय में भी मिला करता है । पेंसिल से बने चित्र का कोई अवयव यदि रबर से मिट सकता है तो समुदाय रूप समस्त चित्र भी रबर से मिट कर नष्ट हो सकता है, लकड़ी का कोई अवयव अग्नि मे जल सकता है तो समुदाय रूप समस्त लकड़ी भी अग्नि में जल कर भस्मसात् हो सकती है अत. सृष्टि के अवयव अवयव में कार्य के धर्म पाए जाने से समुदाय रूप सृष्टि भी कार्य है—उत्पन्न हुई हुई है यह स्पष्ट हुआ ।

सृष्टि की उत्पत्तिके कारण हैं तीन निमित्त कारण, साधारण कारण और उपादान कारण । जैसे घड़े का निमित्त कारण कुम्हार, साधारण कारण ग्राहकजन, उपादान कारण मिट्टी या वस्त्र रूप कार्य का निमित्त कारण तन्तुवाय (जुलाहा), साधारण कारण ग्राहक जन, उपादान कारण रुई । ऐसे ही यहा भी सृष्टि का निमित्त कारण कुम्हार या जुलाहे के समान चेतन कर्ता ईश्वर, साधारण ग्राहक जैसे चेतन जीव और उपादान कारण मिट्टी या रुई के समान जड़ प्रकृति है । इन मे से किसी एक के अभाव में सृष्टि न बन सकेगी बनाने वाला ईश्वर न हो तो न बने, ग्राहक रूप जीव न हो तो किस के लिये बने मूल पदार्थ प्रकृति न हो तो किस से बने या रूपान्तर कौन हो ?

प्रकृति का स्वरूप—

प्रकृति का स्वरूप क्या है प्रथम यह देखना चाहिए । सृष्टि बनो हुई है वस्त्र या घड़े की भांति और प्रकृति मूल वस्तु है रुई या मिट्टी की भांति यह तो स्पष्ट ही है । वस्त्र में धागे, धागों में तन्तु, तन्तुओं में रुई के छोटे छोटे बिन्दुरूप

+ "द्यावाभूमी जनयन् देव एक"
(ऋ० १० । ८१ । ३)
"इयं विसृष्टिर्यत आबभूव"
(ऋ० १० । १२६ । ७ ।)

कण हैं ये रूई कण वस्तु का मूल कारण है, घड़ा भी मिट्टी के छोटे छोटे कणों से बना है। किसी काले संगमरमर के फर्श वाले १०० फुट गोल कमरे में एक तोला रूई सूक्ष्म धुन धुन कर सर्वत्र फैला दी जावे तो रूई का कुछ भी आकार भान न होगा परन्तु जब चारो ओर से झाड़ देंगे तो बीच में रूई का एक गोला बन जावेगा। रूई के गोले को सृष्टि और रूई के सूक्ष्म कण फैलाव को प्रकृति समझें या सृष्टि को रूई के पिण्ड जैसा और प्रकृति को रूई के सूक्ष्म कण फैलाव जैसा जानें। पृथिवी गोल पर से एक छोटी सी मिट्टी की ढेली को लो, उसे देख सकते हैं, छू सकते हैं तोल सकते हैं पुन उसे बारीक पीस कर हथेली पर रख फूंक मार दो तो आकाश में उड़ जावेगी अब वह देखने, स्पर्श करने में नहीं आती अतीन्द्रिय होगई, अवयव के धर्म समुदाय मे होने से यह पृथिवी गोल रूप महान् ढेला भी इसी प्रकार कणों से बना हुआ होने से सूक्ष्म कणों अणुपरमाणुओं के रूप में फैल सकता है और पिण्ड रूप में आने से पूर्व यह फैला हुआ था भी। केवल यह पृथिवी गोल ही नहीं किन्तु चन्द्र तारा सूर्य आदि समस्त ग्रहपिण्ड भी सूक्ष्म कण फैलाव के रूप में थे। इस प्रकार समस्त सृष्टि से पूर्व की अवस्था को वेद मे बतलाया है कि—

> तम आसीत् तमसा गूढमग्रे
> ऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।
> तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपस-
> स्तन्महिनाजायतैकम्॥
> (ऋ० १०। १२९। ३)

अर्थात् "सृष्टि से पूर्व अन्धकार से आवृत अन्धकार रूप जानने के अयोग्य आकाश जैसा 'आभु' सृष्टि (उत्पत्ति) का कारण पदार्थ प्रकृति* परमेश्वर के सम्मुख तुच्छ भाव से एक देशी छिपा हुआ था पुन उसे परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से कारण रूप से कार्य रूप कर दिया,,। सृष्टि का कारण पदार्थ प्रकृति नामक परमाणु फैलाव परिमाण वाला था, जैसे मन्त्र में 'तुच्छय' शब्द से और ऋषि दयानन्द ने 'एक देशी' शब्द से स्पष्ट किया है। साकार वस्तु कितनी भी सूक्ष्म बन जावे अपना परिमाण अवश्य रखेगी। अत्यन्त अणु परिमाण और अत्यन्त महत् परिमाण की वस्तु गोलाकार धारण किया करती है, इस नियम से प्रकृति भी गोल रूप मे ही अपना परिमाण रख सकेगी। उक्त प्रकृति को दर्शनों में सत्त्वरज-तम अर्थात् प्रकाश शक्ति, तरल शक्ति, ठोस शक्ति की साम्यावस्था कहा है "सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः" (सांख्य सूत्र) इस प्रकृति से सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुवी अब यह देखें।

सांख्य दर्शन में कहा है कि "प्रकृतेर्महान् महतोऽहङ्कारः अहङ्कारात् पञ्चतन्मात्राः पञ्चतन्मात्राभ्यः स्थूलभूतानि" (सांख्यसूत्र) प्रकृति से महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से अहंकार,

*वेद में सृष्टि के कारण पदार्थ को 'आभु' कहा है क्योंकि सृष्टि इस से आभूत—विकसित हुई है जैसे आगे इसी प्रकरण में वेद में कहा है "इयं विसृष्टिर्यत आबभूव" (ऋ० १०। १२९। ७)

अहंकार से पञ्चतन्मात्राएं अर्थात्—आकाश आदि पांच सूक्ष्म भूत और पञ्च सूक्ष्म भूतों से स्थूल भूत उत्पन्न हुए। वो कैसे हुए अब यह देखें। इस अव्यक्त गोलाकार प्रकृति में ईश्वर की ईक्षण शक्ति से* सर्वत्र गतितरङ्ग चल पड़ती है जैसे किसी गोल जलाशय में सर्वत्र गतितरङ्ग, उसके केन्द्र में आघात करने—पत्थर फेंकने से हो जाया करती है वह गतितरङ्ग समस्त जल राशि को परिधि तक सर्वांग प्रेरित या आन्दोलित कर देती है वह गति नाभि गति या केन्द्र गति कहलाती है जैसे चक्र की नाभि को गति देने से समस्त चक्र गतिमय हो जाया करता है वह प्रसारण गति कहलाती है। इस प्रकार प्रकृति परिमण्डल में वह केन्द्रगतितरङ्ग परिधि तक चल पड़ने से जो उसका गतिमय या तरङ्गमय स्वरूप हुआ वह प्रथम विकृति महत्तत्त्व नाम से प्रकट हुआ। पुनः परिधि से परि मण्डलगति वृत्त अर्थात् गोलकक्षा बनाकर केन्द्र को लक्षित करके केन्द्र के चारों ओर होने लगती है वह आकर्षण गति कहलाती है। इसी प्रकार परिधि से केन्द्र तक वृत्तगति युक्त स्वरूप दूसरी विकृति अहंकार नाम से प्रसिद्ध होती है पश्चात् उसका केन्द्र की ओर आकुञ्चन होना (सिमटना) प्रारम्भ होता है तो पञ्च तन्मात्राएं अर्थात् सूक्ष्म पञ्च भूतों का विकास होकर पृथिवी आदि स्थूल भूत बनने लगते हैं, यह इस प्रकार जैसे उपनिषद् वचन में कहा है 'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी...." (तैत्तिरीयोपनिषद्) उस अहंकार स्वरूप का केन्द्र की ओर आकुञ्चन होने (सिमटने) से चारों ओर अवकाशरूप आकाश प्रकट हो गया और केन्द्रीय आकर्षण में शेष गतिमय पदार्थ वायु आदि रहा पुनः उसमें से भी आकुञ्चन होने से वायु अलग हो गया और कुछ स्थूल या अग्नि आदि रह गया पश्चात् आकुञ्चन से तीव्र गति के कारण अग्नि ज्वालाएं प्रकट हो गईं, पुनः उसी आकुञ्चन से तथा अग्नि के ताप से सूक्ष्म जल भी प्रकट हो गया तब शेष पृथिवी भाग रह गया। जैसे ही पृथिवी भाग उसी आकुञ्चन से ठोस या स्थूल होता गया तो केन्द्रीय आकर्षण से सूक्ष्म-भूतों से स्थूल भूत बनने लगे।

केन्द्र को लक्ष्य कर घूमती हुई सभी परिमण्डल कक्षाओं में सूर्य आदि पिण्ड बनने लगते हैं और वह प्रकृति का केन्द्र सूर्य आदि समस्त पिण्डों का ध्रुव बन जाता है, ध्रुव से ही समस्त पिण्डों तक उनको स्थापित करने और घुमाने वाला वरुण (परिधिमण्डल या कक्षामण्डल) आता है* जिस वरुण पाश से नियन्त्रित हुए सूर्य आदि पिण्ड उसमें गति करते हैं। इस प्रकार अनेक ब्रह्माण्ड उन परिधियों में प्रकट हुए इसी प्रकार अनेक सूर्य और अनेक प्रत्येक जाति के पिण्ड बने,

*"यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्" (ऋ०१।१२६।७)

*"वरुणस्य ध्रुवं सद" (ऋ० ८।४१।६) वरुण (परिधि मण्डल या कक्षा मण्डल) का स्थान ध्रुव है।

पृथिवियाँ भी अनेक उत्पन्न हुईं। पिण्डों के परिधि प्रदेश वेद में 'भू' भुव, स्व, मह', जनः, तप', सत्य' नाम से कहे गए हैं, परन्तु तीन परिधिप्रदेशों या. लोकप्रदेशों का क्षेत्र ही हमारे सम्मुख होता है।

पृथ्वी की उत्पत्ति—

पृथ्वीगोल उत्पन्न होने से पूर्व जलराशि या जलघेरे के अन्दर छिपा हुआ जलरूप था* और उसके अन्तस्तल में उथल पुथल हो रही थी, ध्रुवीय आकर्षण जल से विद्युद्भरे पार्थिव भाग पर्वत भूवृत (भूपरिधि) से ऊपर उठ गए तो पृथ्वी भाग जल से बाहिर आया एव उत्तर में पृथ्वी भाग के खिंच आने से दूसरी ओर महागर्त (महाखड्ड) हो गया तब वे चारों ओर के तरलभाग रूप जल केन्द्रीय आकर्षण से भूवृत (भूपरिधि) को पूरा करने के लिये—समता बनाने के लिये उस महागर्त में जा गिरे तो वह समुद्र के रूप में प्रसिद्ध होगया। अतएव समुद्र भूवृत के समसूत्र में वा पृथिवीवृत के समतल में वर्तमान है इसी कारण समुद्र स्तर से ही किसी पर्वत आदि की ऊँचाई मापी जाती है। जैसे जैसे जल उस महागर्त की ओर आने लगे वैसे २ पृथिवी के प्रदेशों की प्रकटता होती गई*

परन्तु पृथिवी का सर्वप्रथम भूभाग पर्वतीय भाग ही ऊपर उभरा या बाहिर आया और वहीं पर वनस्पति-प्राणी-मनुष्य कीप्रथम सृष्टि हुई हम देखते हैं कि जल में डूबी हुई भूमि का जो भाग जल सूखते रहने आदि से बाहिर आता है उसी पर घास मच्छर कृमिकीट आदि की सृष्टि होती है अतः प्रथम सृष्टि कहीं ऊँचे स्थान पर ही हो सकती है वह स्थान त्रिविष्टप (तिब्बत) कहलाता है और कहलाया करता है, सूर्य-विद्युत्-अग्नि तीनों देवों का प्रवेशस्थान समा-गमस्थान* होने से त्रिविष्टप-कहलाता है नारायणोपनिषद् में कहा है—

उत्तमे शिखरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि ।
ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथा सुखम् ॥
स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता हुँ

(नारायणोपनिषद् । २६)

'पर्वतमूर्धा' अर्थात् हिमालय के ऊँचे शिखर पर प्रकट हुए भूभाग में ब्राह्मणों-अग्नि आदि ब्रह्मवेत्ता ऋषियों द्वारा प्रकट हुई वेदमाता देवि: संसार का सुख जिस प्रकार हो सके तू फैल।

जल से बाहिर निकले उस भूभाग पर प्रथम वनस्पति की पुनः पशु पक्षी की पश्चात् मनुष्य की सृष्टि हुई।

(क्रमशः)

---

*पृथिवीगोल में भी वेद ने सात परिधिस्तर कहे हैं आधुनिक विज्ञान तीन स्तरों 'पांसु-अश्मा-.शिला-(मिट्टी-पत्थर रत्न-चट्टान) इन तक ही पहुंचा है। ऊपर के स्तर पांसु (मिट्टी) से ओषधि वनस्पतियां प्राप्त होती हैं।

*"त्रय' सुपर्णा उपरस्य मायू नाकस्य पृष्ठे अधि त्रिविष्टपि श्रिताः। स्वर्गलोका अमृतेन विष्ठा इषमूर्जं यजमानाय दुह्राम्।"

अथर्व० (१८।४।४)

हमारा समाज

[समालोचक—श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ]

वर्ण व्यवस्था और जातिभेद

श्री सन्तरामजी बी० ए० प्रधान मंत्री जातपात तोड़क मण्डल लाहौर, एक प्रसिद्ध और योग्य लेखक हैं। उन्होंने बहुत से पुस्तक लिखे हैं और "क्रान्ति" नामक मासिक पत्र के सम्पादक हैं। जाति भेद को दूर करने के प्रयत्न में उन्होंने बहुत सुधार का काम किया। मैं भी उनके पूर्वोक्त मण्डल का सदस्य हू। मुझ को खेद है कि एक विषय पर मत भेद हुआ। यदि एसा न होता तो मैं पूर्ण रूप से उनके मण्डल में सहयोग देता। और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अध्यक्षता में जो "जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ" सन् १९४४ मे स्थापित किया गया उसकी स्थापना की आवश्यकता न होती। उक्त मण्डल ने विशेषत पंजाब में काम किया। यदि पूर्वोक्त मत भेद न हुआ होता तो पंजाब की आर्य समाजें उक्त मण्डल को अधिक सहयोग देतीं और मण्डल ने जो कुछ काम किया उस से बहुत अधिक काम पंजाब में उसकी ओर से हो सकता था।

मत भेद का विषय यह था कि श्री सन्तरामजी अपने खण्डनात्मक लेखों व आलोचनाओं में जन्म गत जातिभेद के साथ बहुधा वर्ण व्यवस्था को भी घसीट लेते हैं जो आर्य समाज का निश्चित सिद्धान्त है। इस पर मैं अपने विचार आगे स्पष्ट रूप से प्रकट करूंगा।

२ 'हमारा समाज' पुस्तक नालन्दा प्रकाशन बम्बई की ओर से छपा है और उनकी ओर से उसकी एक प्रति मेरे पास समालोचनार्थ आई है। मैं ने पुस्तक को आदि से अन्त तक ध्यान पूर्वक पढ़ा।

३. यह "जाति भेद" के खण्डन मे एक उपयोगी और उत्तम पुस्तक है। इस विषय का शायद ही कोई ऐसा अङ्ग होगा जिस पर उस में किसी प्रकार प्रकाश न डाला गया हो। उस में २० परिच्छेद और २५३ पृष्ठ हैं। ५ वे परि० में जाति भेद के आरम्भ होने का और १० व ११ प० में जाति भेद की उत्पत्ति का बड़ी योग्यता से वर्णन किया गया है। लेखक ने यह स्पष्ट रूप से लिखा है कि पूर्वकाल में—अर्थात् वैदिक युग में और कुछ बाद तक ब्राह्मणादि वर्ण गुण कर्म से माने जाते थे। जाति भेद न था। महाभारत में और कुछ पुराणों में भी (जैसे भविष्य पुराण में विशेष कर और वायु पुराण, ब्रह्म-पुराण, हरि वंश आदि में भी) अनेक वचन और ऐतिहासिक दृष्टान्त इस बात के समर्थन में पाये जाते हैं कि वर्ण विभाग गुण कर्मानुसार होने चाहिये और कि पूर्व समय में वर्णों का परिवर्तन और अन्तर्जातीय विवाह होते थे। परन्तु पीछे पीछे कुछ अंश में जाति भेद भी

("हमारा समाज" लेखक—श्री सन्तराम जी बी० ए० प्रकाशक—नालन्दा पब्लिकेशन्स बम्बई मूल्य ३)

प्रभावित हो गया और बदला गया। बौद्ध समय में जाति भेद बिलकुल नष्ट हो गया।

४. परन्तु ब्राह्मण बौद्ध मत के विरोधी थे जिन में अधिक तर क्षत्रियों का योग था। ब्राह्मणों और क्षत्रियों का संघर्ष पूर्वकाल से चला आता था। क्षत्रियों ने बुद्ध से पहले भी अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिये उपनिषदों की रचना में भाग लिया जो वैदिक साहित्य में बहुत उच्च कोटि के ग्रन्थ हैं।

ब्राह्मणों ने ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना में भाग लिया और कर्मकाण्ड के यज्ञादि की विधि को बहुत लम्बी और जटिल बना दिया जिस से उन की सुगमता के बिना वे कार्य्य सुगमता से न हो सके।

५ अन्त में ब्राह्मणों की विजय हुई। बौद्ध मत भारतवर्ष से निकाला गया और उसके साथ क्षत्रियो की शक्ति भी नष्टप्राय हो गई। इसी समय में मनुस्मृति, महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थों में जाति भेद समर्थक श्लोक घड़कर डाले गये, और नवीन ग्रन्थ (बहुत कुछ प्राचीन ऋषियों के नाम से) बनाये गये जिन में ब्राह्मणों को योग्यता व सदाचार न होने पर भी पूज्य बतलाया गया है और शूद्रों से योग्यता होने की दशा में भी निरादर व घृणा की गई है ६ परि० मे योग्य लेखक ने इन मध्य कालीन स्मृतियों और प्रक्षिप्त किये गए मनुस्मृति के भी ऐसे दूषित श्लोकों का समह विस्तार के साथ दिया है जिस को पढ़ कर रोमांच हो आता है।

(६) इसी समय में अस्पृश्यता या अछूत पन की उत्पत्ति हुई जो पहले न थी उसका कारण वर्तमान मनुस्मृति के ऐसे श्लोक दिखलाये गये हैं—

"जिन लोगों पर कलंक का टीका लग गया हो उनके संबन्धियों को, क्या मातृ कुल के और क्या पितृ कुल के, चाहिये कि उनका परित्याग कर दें। और करुणा एवं आदर की कुछ भी परवा न करें।

"हमें उनके साथ रोटी और बेटी का सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये। न उनके साथ मिलकर यज्ञ और पठन पाठन ही करना चाहिये। सर्व सामाजिक बन्धनों से पृथक् वे पृथ्वी पर दुःख झेलते फिरें।"

(७) १३ प० में 'वर्ण संकरता का होना और १४ प० मे रक्त संकर व वृत्ति संकर का वर्णन किया गया है। १८ प० में भारत के राजनैतिक इतिहास पर दृष्टि डाली गई है। सातवीं शताब्दि की बात है सिन्ध नरेश दाहर के पिता चच ने पुरोहितों की बहकावट में आकर सिन्ध के जाटों मेडों लुहारों को शूद्र ठहरा दिया था। और सेना मे भरती होने का निषेध कर दिया था। इससे देश में बड़ी द्वेषाग्नि फैल गई थी। अवसर पाकर जब दाहर के समय मे अरब के अबुल कासिम ने सिंध पर आक्रमण किया तो लड़ने के लिए थोड़े से क्षत्रिय निकले" फलत राजा की हार हुई। वह युद्ध में मारा गया।" (पृ० २०६)। "इतिहास में ऐसे ही बीसियों उदाहरण हैं जहां जाति भेद के कारण हिन्दुओं की पराजय हुई। (पृ० २०८)

(८) प० १६ में जाति भेद से हिन्दुओ को जो अन्य भारी हानियां हुई उनका वर्णन कर यह दिखलाया है कि हिन्दुओं का धर्म जितना पवित्र है इन की समाज रचना उतनी ही दूषित एव गन्दी है।" (पृ० १७८) "इसलाम में जहा सैकड़ों त्रुटिया है वहा सामाजिक बन्धुता का एक ऐसा बहु मूल्य गुण है जो उन सब त्रुटियों को दबा कर इसलाम को ससार में बराबर फैलाता जा रहा है," (पृ० १७९) इसके अनेक उदाहरण इतिहास से देकर दिखलाया गया है कि जाति भेद वास्तव में हिन्दुओ के जीवन व मृत्यु का प्रश्न हो गया है।

(९) प० १६ मे योग्य लेखक ने यह सिद्ध किया है कि प्रजातन्त्र व जाति भेद दो परस्पर विरुद्ध चीजे हैं। "प्रजा तन्त्र शासन पद्धति वहीं संभव हो सकती है जहा पहले समाज का रूप भी प्रजातन्त्री हो।" (पृ० २१४) इस लिये जो राजनीतिज्ञ भारत में प्रजा तन्त्र शासन प्रणाली की सफलता चाहते हैं उनको पहले जाति भेद को निर्मूल करना चाहिये।

(१०) अन्त में परिशिष्ट रूप से श्री किशोरी लाल मशरूवाला का लिखा हुआ "श्री जिन्ना के जीवन से शिक्षा" शीर्षक से एक लेख है। जिस में यह परिणाम निकाला गया है कि "श्री जिन्ना व पाकिस्तान हिन्दू समाज के ही पके फल हैं।" इसकी सत्यता में बिलकुल सन्देह नहीं। जब ६ अप्रैल १९४४ को देहली में श्री जिन्ना की अध्यक्षता मे मुसलिम लीग का विशेष अधिवेशन हुआ था और पाकिस्तान की मांग का रेजोल्यूशन स्वीकार किया गया तो उसे रेजोल्यूशन में पूर्वोक्त मांग का मुख्य कारण बडे स्पष्ट और उग्र शब्दों में यह बतलाया गया था कि हिन्दुओं ने अपनी समाज व्यवस्था में जन्मगत जाति भेद रूपी एक ऐसी क्रूर और अनुदार कुप्रथा को पाल रक्खा है, जिस से करोड़ो हिन्दु जाति के लोग अछूत बना दिये गए और उनसे भी अधिक संख्या के लोग दलित कर दिए गए। इसलिये मुसलमानों को भय है कि उनके साथ रहने से मुसलमान तथा अन्य अहिन्दू जातिया भी ऐसी दासता या अछूत पन के गढ़े में गिर जाएगी जिस से निकलना उनको महा कठिन हो जायगा।

(११) अब मैं श्री सन्तराम जी के साथ मैं उस मत भेद के विषय की ओर आता हू जिस का जिकर मैंने इस लेख के पैरा २ में किया था— मुझको वास्तव में आश्चर्य है कि श्री सन्तराम जी ने यह मानते हुए कि वैदिक युग में गुण कर्मानुसार वर्ण थे क्यों आर्य्य समाज की वर्ण व्यवस्था का तिरस्कार किया। उन्होने यह जिकर किया है कि कुछ लोग कहा करते हैं कि हजारों जाति उपजातियो के स्थान में केवल ४ जातिया या वर्ण रक्खे जावे। इस में सन्देह नहीं कि इस योजना से जाति भेद दूर नहीं होता। यदि ४ वर्ण रख कर प्रत्येक मनुष्य का व्यवसाय समाज नियत करे और उस व्यक्ति को यह अधिकार न हो कि वह अपनी रुचि के अनुसार जो व्यवसाय चाहे करे तो जातिभेद के लगभग [illegible] बने रहेंगे सिवाय इसके कि सहस्रों उप[illegible] स्थान में ४ वर्ण होकर कुछ कठनाइयां दूर हो जायगी। परन्तु ऐसी वर्ण

व्यवस्था को कोई नहीं चाहता। श्री महात्मा गान्धी ने एक बार ऐसी कल्पना की थी पर पीछे उनको छोड़ दिया। कम से कम आर्य्य समाज ने ऐसी झूठी, वर्ण व्यवस्था का कभी समर्थन नहीं किया। वैदिक वर्ण व्यवस्था में यह आवश्यक है कि चारों वर्ण भी जन्मानुसार न माने जा कर गुण कर्मानुसार हों और प्रत्येक व्यक्ति को यह पूरा अधिकार हो कि वह अपनी योग्यता व रुचि के अनुसार चाहे जो व्यवसाय करे।

(१२) परन्तु ग्रन्थ कर्ता ने आर्य्य समाज की मानी हुई व्यवस्था का भी जिकर किया है। पृ० २१६—३० पर वे लिखते हैं—"कुछ सज्जन कहा करते हैं कि जन्म मूलक जाति भेद तो मान लिया कि बुरा है पर गुण कर्म स्वभाव से वर्ण व्यवस्था तो अच्छी है। इस सबन्ध में प्रश्न यह होता है कि यदि चातुर्वर्ण्य में व्यक्ति को उस के गुणों के अनुसार ही स्थान मिलेगा तो लोगों पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के लेबिल लगाने की क्या आवश्यकता है ? "श्री डा० बी० आर अम्बेडकर ने अपनी (Annihilation ofcastes) पुस्तक में भी यह प्रश्न रक्खा है और श्री सन्तराम जी ने शायद वहीं से यह विचार लिया हो। ग्रन्थ कर्ता ने इस विषय में लिखा है कि चातुर्वर्ण्य को गुण कर्म स्वभाव मूलक बतला कर लोगों पर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र के दुर्गन्ध युक्त लेबिल लगाना एक प्रकार का महा पाखण्ड जाल फैलाना है। शूद्रों और अछूतों को चातुर्वर्ण्य शब्द से ही घृणा है। उनकी आत्मा इस के विरुद्ध विद्रोह करती है।" यदि चातुर्वर्ण्य को केवल नाम मात्र के लिये गुण कर्म स्वभाव के अनुकूल कहा जाय तो नि:सन्देह उस को महा पाखंड जाल फैलाना कहा जा सकता है, यदि उक्त व्यवस्था को वास्तव में गुण कर्म स्वभाव के आधार पर रख कर उस का सच्चा सुधार किया जाय तो वह पाखण्ड जाल कैसे हो सकता है ? शूद्रों को चातुर्वर्ण्य शब्द से घृणा विशेष कर दक्षिण मे है जहा उन पर इस अन्याय पूर्ण प्रथा के आधार पर घोर अत्याचार किये गये। अब ये अत्याचार ही न रहेंगे, (जो अब तो भारतीय सरकार की आज्ञा से कानून द्वारा वर्जित हो गये—) तो शब्द से घृणा का क्या प्रश्न ?

(१३) (Plato) प्लैटो के वर्गीकरण का हवाला देकर एक आपत्ति यह उठाई गई है, समूची जनता का जिस मे अनेक व्यवसाय हैं ४ श्रेणियों में कैसे विभाग या वर्गीकरण हो सकता है। यह आपत्ति भी निराधार है। जो वेद मन्त्र वर्ण व्यवस्था का आधार माना जाता है उस में मनुष्य के शरीर के चार भाग किये गए हैं यद्यपि शरीर में अनेक अग व अवयव है। एक शिर जिसका स्थानीय समाज में ब्राह्मण वर्ण है। दूसरे बाहू जो क्षत्रियों के स्थानीय है। तीसरा ऊरू जो वैश्य स्थानीय है और चौथे पाव जो शूद्र स्थानीय हैं। यह लिखना आवश्यक है कि ऊरू शब्द का यहा अर्थ जघा नहीं किन्तु शरीर का मध्यम भाग है। इस का प्रमाण इस से अधिक क्या हो सकता है कि यह मन्त्र अथर्ववेद में भी आया है जो इस प्रकार है—

"ब्राह्मणो ऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य कृत । मध्य यदस्य तद् वैश्य पद्भ्या शूद्रो अजायत । इस में सब वे ही शब्द हैं, जो ऋग्वेद के मन्त्र में हैं केवल ऊरू शब्द की जगह मध्य शब्द है। किसी वेद के मंत्र या शब्द के अर्थ करने में वेद मन्त्र से अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है ? शरीर क मध्यम भाग मे शिर बाहू और पॉव को छोडकर और सब अग स्थित हैं, अर्थात् मेदा, जिगर आते, दिल गुर्दा, फेफडे, मसाना गुदा व उपस्थे न्द्रिय वा जननेन्द्रिय आदि । इसी प्रकार वैश्य वर्ण में ब्राह्मण क्षत्रिय व शूद्र के सिवाय और सब व्यवसाय आ जाते हैं जैसे किसान, जमींदार, साहूकार, व्यापारी, सुनार, लुहार, जुलाहा, बढई राज आदि । इनमें से बहुत से व्यवसायों को वर्तमान की झूठी समाज व्यवस्था ने शूद्रों मे शामिल कर उन के साथ घोर अन्याय किया है । वास्तव में उनका स्थान वैश्य वर्ण में हैं, वैश्य शब्द विश या विट् शब्द से बना है जिसका अर्थ प्रजा है। वह व्यापक वर्ग है । जैसे हाथी के पाव में सब पाव आ जाते हैं वैसे ही ब्राह्मण क्षत्रिय शूद्र के सिवाय और सब धन्धे व पेशे वैश्यों में आजाते हैं। उसी प्रकार शरीर के मध्यम भाग उस मे शिर, बाहु, व पाव के सिवाय सब अग रक्खे गए हैं। इसलिए समूची जनता का ४ श्रेणियों में वर्गीकरण करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं । जो व्यवसाय ३ वर्णों में नहीं वह वैश्य रूपी व्यापक वर्ण में माना जायगा ।

(१४) एक बडी विचित्र आपत्ति पृ० २३२ पर यह उठाई गई है कि "चातुर्वर्ण्य को सफल बनाने के लिये एक दृढ विधान का होना आवश्यक है जो डण्डे के जोर से जनता से उस का पालन करा सके। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था के सामने उसको तोडने वालों का प्रश्न सदा ही बना रहना अनिवार्य है । जब तक लोगों के सिर पर दण्ड का भय न होगा वे अपनी २ श्रेणी में नहीं रहेंगे । यह आपत्ति श्री अम्बेडकर की Annihilation of Caste पुस्तक में भी है और शायद वहीं से ली गई है। मैंने उस पुस्तक की समालोचना मे भी इस का उत्तर दिया था । बडे आश्चर्य्य की बात है कि सुयोग्य ग्रन्थ कर्त्ताओं के ध्यान से यह महत्त्व पूर्ण बात बिलकुल जाती रही कि वैदिक चातुर्वर्ण्य के अनुसार जिसकी व्यवस्था ऊपर दी जा चुकी प्रत्येक व्यक्ति को पूरा अधिकार होगा कि अपनी योग्यता व रुचि के अनुसार जो व्यवसाय चाहे करे । फिर डण्डे के जोर से किसी को उसकी श्रेणी में रखने का प्रश्न कैसे उठ सकता है ?

(१५) अन्त में मुझ को लिखना पड़ता है कि योग्य ग्रन्थ कर्ता ने वर्ण व्यवस्था को जाति भेद के साथ लपेट कर उसका तिरस्कार करने में बड़ी भूल की है। वर्ण व्यवस्था का सच्चा रूप वही मानना चाहिये जिस की आर्य समाज शिक्षा देता है। पुस्तक में जगह जगह पर 'चातुर्वर्ण्य" शब्द जाति भेद के ही अर्थ में प्रयुक्त किया गया है ।

(१६) भारत का बड़ा सौभाग्य है कि वर्तमान पार्लीमेंट वा विधान सभा ने भारत के

नव विधान की धारा ११ के द्वारा अस्पृश्यता को वर्जित करके उस को दण्डनीय अपराध ठहरा दिया। मैं अपने सनातनी भाइयों को साधुवाद कहता हूं कि यद्यपि उन में से बहुत से दिल से इस सुधार के समर्थक नहीं परन्तु उन्होंने इस नियम का विरोध नहीं किया और न हल्ला गुल्ला मचाया। योरुप व अमरीका के बहुत से नेता भी इस को देखकर चकित हो गये। अमरीका में अब तक वहां के हवशियों Negroes पर अत्याचार किये जाते हैं (जिनका वर्णन पत्रों मे प्रकाशित होता रहता है), और उनके अधिकारों मे बाधा डाली जाती है यद्यपि उन अधिकारों को मिले हुए इतने वर्ष बीत चुके।

(१७) परन्तु आर्य समाज व अन्य सुधारकों को यह कदापि नहीं समझना चाहिये कि केवल कानून बन जाने से सब कार्य हो गया, ग्रामो मे—(और भारत की अधिक जनता ग्रामों ही मे रहती है)—अभी तक शूद्रों के साथ अनुचित व्यवहार होता है। किसी दीन व्यक्ति के लिये यह महा कठिन है कि वह अपने अधिकार छीनने वाले पर न्यायालय मे जाकर अभियोग चलावे। आर्य समाज और अन्य सुधारकों को इस मे बहुत परिश्रम करना होगा। ३१ दिसबर व १ व २ जनवरी १६४६ को कलकत्ता में आर्य महासम्मेलन हो चुका है। मैंने उस में एक प्रस्ताव भेजा था कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा आर्य समाजों को आदेश देवे कि प्रत्येक आर्य समाज ३ वा ५ सभासदों की एक उपसमिति इस उद्देश्य से बनावे कि वे देख रेख रक्खें कि उनके नगर वा ग्राम में शूद्रों व अछूतों पर अत्याचार नहीं होता है। जो व्यक्ति ऐसा करना चाहे उस को समझावें और रोकें। यदि वह समझाने पर न माने तो उस पर न्यायालय में अभियोग चलावे जिस का खर्च, (यदि कुछ होवे) स्थानिक आर्य समाज देवे और इस के लिये प्रत्येक समाज अपने वार्षिक बजट मे कुछ प्रबन्ध रक्खे। मैं आशा करता हूं कि आर्य समाजें इस पर ध्यान देंगी। बालविवाह प्रतिबन्धक कानून—(शारदा ऐक्ट) कुछ वर्ष तक एक ऐसा कानून ही रहा और उसके विरुद्ध बाल विवाह होते रहे, पीछे आर्यों व सुधारकों ने जगह जगह पर कमेटियाँ बनाईं जो ऐसे बाल विवाहों की रिपोर्ट करके अपराधियों को दण्ड दिलाने लगी, तब पूर्वोक्त कानून का पालन बहुत अंश में होना आरम्भ हो गया।

(१८) सामान्यतया पुस्तक बहुत उत्तम है। जाति भेद के खण्डन मे बहुत उपयोगी होगी। प्रचार की दृष्टि से ६) मूल्य अधिक है। छपाई व कागज और जिल्द अच्छी है। मैं आशा करता हूं कि सुधार प्रेमी लोग पुस्तक का आदर करेंगे और उसके प्रचार मे सहायक होंगे।

(हम मान्य प० गङ्गाप्रसाद जी की समालोचना से सहमत हैं। उनके अतिरिक्त हमे जो वक्तव्य है उसे अगले अंक में प्रकाशित करेंगे। —सम्पादक सा० दे०)

गावो दयानन्द गुण गान

[कवि—श्री रुद्रमित्र जी शास्त्री विद्यावारिधि "कमलेश"]

गावो दयानन्द गुण गान ।
ऋषि ने ही इस देश जाति का—किया विश्व-कल्यान ॥

(१)

घनी भूत थी निशा चतुर्दिक्
जगती भर मे छायी— ।
महाराय-सी घोर अविद्या,
जन-मन मे थी समायी ॥

भटक रही थी आर्य जाति—
जनता जगती मे भाई ।
सत्य ज्ञान की जोति जगा कर—
ऋषि ने राह दिखायी ॥

दूर किया अज्ञान अन्धेरा, फैला स्वर्ण विहान ॥

(२)

वेद ज्ञान ही सत्य ज्ञान है,
वेद विरुद्ध मत मानो ।
वेद धर्म ही एक धर्म है,
सत्य धर्म पहचानो ॥

श्रुति प्रमाण से सभी प्रमाणित,
वेद—प्रकाश दिखावो ।
वेद सूर्य लख चलो, न जग मे—
अन्धा बनो, बनावो ॥

सत्य सत्य उपदेश धर्म का किया विवेक वितान ॥

(३)

पराधीन परतन्त्र पड़ा था,
भारत देश हमारा ।
उठो, उठो, जागो, जागो,
ऐ आर्य वीर ! ललकारा ॥

चक्रवर्ति साम्राज्य मन्त्र दे,
किसने प्रथम पुकारा ।
आर्य्यावर्त्त स्वतन्त्र बने शुभ—
स्वतन्त्रता का नारा ॥

जागृति का सन्देश सुना कर किया देश उत्थान ॥

(४)

खड़ा हो गया देश सचेतन,
जग ने होश सम्हाला ।
मृतप्राय नस नस में फिर—
अमृत सजीवन डाला ॥

धवल धमनियों में फिर से,
नव रक्त प्रवाह बहाया ।
फलीभूत—स्वाधीन देश है,
आज उमङ्ग समाया ॥

सुख वसन्त आया जन मन मे, ऋषि-उपकार महान ॥

(५)

नव वसन्त की हरियाली में,
हरा भरा लहरायें ।
शाप—ताप—सन्ताप मिटा —
शुचि जीवन सुखी बनाये ॥

श्रुति प्रशस्त पथ पर चल कर
ऋषि का संदेश सुनायें ।
आज पुन "कमलेश" अधूरा—
पूरा कर दिखलायें ॥

बढ़े चलो, निर्भय निज पथ पर, ले ऋषि का वरदान ॥

साहित्य समीक्षा

शास्त्रीय धर्म दिवाकर वा यथार्थ प्रकाश—

लेखक—श्री दण्डी स्वामी रामतीर्थ जी महाराज मिलने का पता—लाला मुरारी लाल जी सोनी मुहल्ला सोनीया, लुधियाना। मूल्य १।)

इस लगभग २३० पृष्ठों की पुस्तक मे श्री दण्डी स्वामी रामतीर्थ जी ने धर्म और अधर्म का स्वरूप, सनातन धर्म क्या है? वर्णव्यवस्था का वास्तविक स्वरूप, अछूत समस्या, विवाह किसे कहते है, विवाह का समय, पतिव्रत धर्म, स्त्रीव्रत धर्म, विधवा का कर्तव्य, भक्त के लक्षण, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम इत्यादि विषयों पर उदारता पूर्वक अपने विचार प्रकट किये हैं। स्वामी रामतीर्थ जी सनातन धर्माभिमानी सन्यासी हैं। उन्होंने शास्त्रों का निष्पक्षपात अध्ययन कर के पौराणिक भाइयो को परामर्श दिया है कि वे अपने दृष्टि कोण को उदार बनाएं और धार्मिक, सामाजिक सुधार की ओर अग्रसर हों। जन्म-मूलक वर्णव्यवस्था को अशास्त्रीय और हानिकारक बताते हुए सुयोग्य स्वामीजी ने उसका प्रबल खण्डन किया है। उनके इस विषयक विचार विशेष रूप से पढ़ने योग्य हैं। अस्पृश्यता को सर्वथा अन्याय पूर्ण बताते हुए स्वामी जी ने उसे दूर करने की प्रेरणा की है। स्त्रियों के वेदाधिकार का समर्थन करते हुए स्वामी जी ने ठीक ही लिखा है कि 'विदेशी राज्य मे बनाये हुए श्लोकों को आगे लेकर गाते ही रहना कि स्त्रियों का वेद शास्त्र मे अधिकार नहीं यह केवल अपनी पूजा रूपी स्वार्थ सिद्धि के लिये ही है।,, (पृ० ६४) बाल विवाह का खण्डन करते हुए मान्य स्वामी जी ने लिखा है कि "माता पिता को चाहिये कि बाल विवाह से घृणा करें","युवावस्था को प्राप्त होने पर कन्या का पिता उसकी सम्मति से करे यही उत्तम मार्ग है।" बाधित वैधव्य की प्रथा का विरोध करते हुए श्री स्वामी जी ने लिखा है "कितना घोर अत्याचार है? पुरुष तो स्त्री की विद्यमानता में भी कई विवाह करे, पत्नी के मरते ही झट विवाह करे, परन्तु अबोध बालविधवा को समग्र जीवन ब्रह्मचर्य से व्यतीत करने के लिए बाध्य किया जाए। यह कितना अन्याय तथा पाप है। शास्त्र तो यह आज्ञा देता है कि अक्षत योनि विधवा कन्या का दुबारा विवाह करना सर्वथा धर्म संगत है।" (पृ० १०३) शुद्धि, दलितोद्धारादि का शास्त्रीय प्रमाणों से समर्थन इस पुस्तक मे भली भाति किया गया है। इस प्रकार यह एक उदार सनातनधर्माभिमानी संन्यासी की वर्तमान समय में लिखी विशेष रूप से उपयोगी पुस्तक है जिसका हम अभिनन्दन करते हैं। मूर्ति पूजादि एकाध विषय में हम मान्य लेखक के विचार से सहमत नहीं तथापि सम्पूर्णतया इस ग्रन्थ के उपयोगी होने के कारण हम चाहते हैं कि पौराणिक विद्वान् इसे विशेष रूप से पढ़ें और अपने अन्दर उदारता लाकर समाज सुधार में तत्पर हों। मनुस्मृति के श्लोक कहीं २ पूरे न देकर उनका प्रतीक दिया गया है उन्हें अगले संस्करण में पूरा दे देना चाहिये।

धर्मदेव वि० वा०

कर्मयोगी—मूल ग्रन्थ लेखक सुप्रसिद्ध योगी—श्री अरविन्द जी। अनुवादक-प० जगन्नाथ जी वेदालङ्कार। सम्पादक—डा० इन्द्रसेन जी एम० ए० पी० एच० डी। प्रकाशक—अदिति कार्यालय श्री अरविन्दाश्रम पाण्डीचेरी।

प्रस्तुत पुस्तक सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी की सन् १६०६—१६१० में अपने साप्ताहिक अंग्रेजी पत्र 'कर्मयोगिन्' में प्रकाशित लेख माला का अनुवाद है। यह लेखमाला उन दिनों लिखी गई थी जब श्री अरविन्द जी बङ्ग भङ्ग विरोधी तथा स्वदेशी आन्दोलन के अत्यन्त प्रमुख नेता थे। इस मे कर्मयोगी का आदर्श कर्मयोग, भारत की जागती हुई आत्मा, बलिदान का सिद्धान्त, शान्ति की शक्ति, व्यक्ति की महत्ता आदि विषयों पर बड़े भावपूर्ण सारगर्भित लेख हैं और अनुवाद मे भी लेखों की ओजस्विता मूल की तरह विद्यमान है। इन लेखों में कर्म योग का आदर्श बताते हुए प्राचीन भारतीय अध्यात्मिकता पर विशेष बल दिया गया है। 'कर्मयोगी के आदर्श मे श्री अरविन्द जी ने देश भक्तों को प्रेरणा की 'सब से पहले भारतीय बन जाओ। अपने पूर्व-पुरुषो की पैतृक सम्पत्ति को फिर से प्राप्त करो। आर्य विचार आर्य अनु शासन, आर्य चरित्र आर्य जीवन को पुन प्राप्त करो।' (पृ० २०) पहले तुम्हें आत्म राज्य, आन्तरिक स्वराज्य को जीत कर वापिस ले लेना होगा, उसके बाद ही तुम बाह्य साम्राज्य को वापिस ले सकोगे, (पृ० ६१) कर्म योगी के आदर्श के विषय में श्री अरविन्द जी ने लिखा है—'हमारा विश्वास है कि योग को मानव जीवन का आदर्श बनवाना ही वह प्रयोजन है जिसके लिए आज भारत का अभ्युदय हो रहा है, योग से ही वह अपनी स्वाधीनता, एकता और महत्ता को अधिगत करने की शक्ति प्राप्त करेगा, योग से ही वह इन्हें सुरक्षित रखने की शक्ति अपने में स्थिर रखेगा, ऐसी आध्यात्मिक क्रान्ति को ही हमारी भावि दृष्टि देख रही है और भौतिक क्रान्ति तो इसकी छाया एव प्रतिबिम्ब मात्र है।"

सभी लेख महत्वपूर्ण और मननीय हैं। यह पुस्तक सब देश भक्तों के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

शक्ति रहस्य अर्थात् मास भोजन मीमासा—लेखक—प० यश पाल जी सिद्धान्ता लङ्कार अधिष्ठाता वेद प्रचार विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब जालन्धर नगर, प्रकाशक आर्य प्रति निधि सभा पजाब, मूल्य एक १)

स्व आचार्य राम देव जी के सुपुत्र पं० यश पाल जी गुरुकुल काङ्गडी के सुयोग्य स्नातक हैं जिन्होंने मांस भोजन के विषय पर वैज्ञानिक धार्मिक, नैतिक, आयुर्वैदिक तथा आर्थिक दृष्टि से विस्तृत विचार करते हुए बड़ी उत्तमता से सिद्ध किया है कि मास भोजन अस्वाभाविक, हानिकारक तथा नतिकता के सर्वथा प्रतिकूल है। यह दु ख की बात है कि मास का प्रचार इन दिनों शिक्षित जनता में बढता हुआ प्रतीत होता है। ऐसे समय में उस के विरुद्ध प्रचारार्थ यह पुस्तक जिस मे सुयोग्य डाक्टरों तथा अन्य शरीर शास्त्र विशेषज्ञों के ग्रन्थों से स्पष्ट उद्धरण दिए गए हैं बड़ी उपयोगी सिद्ध होगी। हम

चाहते हैं कि शिक्षित जनता में इसके विशेष प्रचार की व्यवस्था की जाए। मास खाने से शक्ति बढती है इस भ्रमका ऐतिहासिक तथा अन्य दृष्टियो से भली भाति निराकरण किया गया है। शक्ति रहस्य यह नाम पुस्तक के विषय को स्पष्टतया सूचित नही करता।

चार साधन—मूल लेखक श्री अरविन्द जी अनुवादक—प० जगन्नाथ जी वेदालङ्कार प्रकाशक—अदिति कार्यालय श्री अरविन्दाश्रम पाण्डेचेरी मूल्य ॥)

सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी के महत्त्व पूर्ण ग्रन्थ 'The Synthesis of Yoga' वा योग समन्वय के एक अध्याय को श्री डा० इन्द्रसेन जी ने योगजिज्ञासुओ के लाभार्थ सकलित किया था। उसी का यह अनुवाद है। इस मे योगसिद्धि के चार प्रधान साधनों अर्थात् शास्त्र उत्साह, गुरु और काल इन पर उत्तम प्रकाश डाला गया है। योग्य लेखक महोदय ने शास्त्र पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि 'पूर्ण योग का परम शास्त्र है प्रत्येक विचारशील प्राणी की हृदय गुहा में निहित नित्य वेद। साधक शास्त्र का उपयोग करेगा किन्तु महान शास्त्र के साथ भी अपने को कभी बांधेगा नही। यदि धर्म शास्त्र गम्भीर, विशाल, पारलौकिक है तो उसका साधक पर प्रभाव परम कल्याणकारी और अपार महत्त्वशाली हो सकता है। परन्तु अन्त मे उसे अपनी आत्मा को ही अपना विश्राम धाम बनाना होगा' क्योंकि वह एक पुस्तक का या अनेक पुस्तकों का साधक नही, वह अनन्त देव का साधक है।' मान्य लेखक महानुभाव का तात्पर्य यही प्रतीत होता है कि वेद, उपनिषदादि को आत्मज्ञान के साधन के रूप में स्वीकार करना और उनसे पूर्ण लाभ उठाना चाहिये स्वय साध्य वा उद्देश्य के रूप मे नहीं। 'यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति' इत्यादि वेद मन्त्रों मे स्वय वेद भगवान् ने इसी भाव को प्रकट किया है कि जो भगवान् को नहीं जानता (और न जानना चाहता है) वह केवल वेद पढ़ के भी क्या करेगा?। 'गुरु' के विषय मे भी अरविन्द जी ने लिखा है कि 'पूर्ण योग का परम पथप्रदर्शक और गुरु है हमारे भीतर प्रच्छन्न अन्तर स्थित पथ प्रदर्शक, ससार शिक्षक जगद् गुरु। योगी गुरु का कर्तव्य बस यही है कि दिव्य प्रकाश को उद्बुद्ध कर दिया जाए और उस दिव्य शक्ति की क्रिया को प्रारम्भ करा दिया जाए जिसका कि वह स्वयम् एक साधन और उपकरण आधार या प्रणालिका मात्र है। पूर्ण योग के गुरु का यह भी एक चिन्ह होगा कि वह मानवीय अहङ्कार के तरीके से तथा अभिमान के भाव मे गुरु पन का अनुचित दबाव नहीं करेगा।'

इस पुस्तिका के अन्त मे श्री अरविन्द जी के 'भगवान् के प्रति प्रेम'' विषयक दो पत्र भी प्रकाशित किये गये हैं जो महत्त्व पूर्ण हैं। इन मे कहा गया है कि भगवान के प्रति सच्चा प्रेम है आत्मदान—मांग से मुक्त, नमन और समर्पण से पूर्णतया युक्त। अपने प्रेम को समस्त स्वार्थ पूर्ण दावों और कामनाओं से मुक्त रक्खो।'' इत्यादि

[शेष पृष्ठ ६३१ पर]

वेद-चर्चा—

ऋग्वेद के १०म मण्डल पर पाश्चात्य विद्वानों का कुठाराघात

[लेखक—अनुसन्धानकर्त्ता श्री शिवपूजनसिंह जी पथिक साहित्यालङ्कार, सिद्धान्त भास्कर साहित्य शिरोमणि पो० बाक्स न० २५० कानपुर]

—⟶•⟵—

वेदों के अनुशीलन में पाश्चात्य विद्वानो ने अच्छा काम किया है । आज भी यूरोप और अमेरिका के प्राय प्रत्येक बडे विश्वविद्यालय मे सस्कृत का पुस्तकालय है और उसको पढाने के लिये योग्य अध्यापक नियुक्त हैं इस विषय मे प्रो० मैक्समूलर, सरविलियम जोन्स, कोलब्रुक, फ्रीडरिक रोजन, रुडाल्फ रौथ, बेहट लिङ्क, वीवर, विल्सन ग्रासन लुडविग ग्रिफिथ यन्फे, ओल्डेन, वर्ग बलूमफील्ड ह्विटनी, गेल्डर पिशेल, मैक्डानल कीथ, मूर, जेकोबी, प्रभृति विद्वानों के कार्य अत्यन्त श्लाघनीय है। परन्तु इन विद्वानों का दृष्ट कोण भिन्न २ था। ये वेद को अपौरुषेय नहीं मानते हैं । वेदों मे गोमास भक्षण, नरबलिप्रथा आदि वर्णन दिखलाना इनका मुख्योद्देश्य था। इन्हीं पाश्चात्य विद्वानों के अनुयायी श्री राजेन्द्रलाल मित्र, सर रमेश चन्द्र भण्डारकर, श्री कमलकृष्ण भट्टाचार्य, श्री शिवनाथ शास्त्री, श्री रामनाथ सरस्वती, स्वामी हरिप्रसाद जी, श्री चिन्तामणि विनायक-वद्य श्री अविनाशचन्द्र जी, पावगी, मिश्रबन्धु, लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक, प्रो० क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय एम ए प्रभृति विद्वान् हैं।

ऋग्वेद के १०म मडल को पाश्चात्य विद्वान् अर्वाचीन मानते हैं। उनकी युक्तिया इस प्रकार हैं—

प्रो० मेक्डानल (Prof MacDonell) अपनी पुस्तक[1] मे लिखते हैं।

(क) ऋग्वेद का १० म मडल सबसे पीछे का बना हुआ है क्योंकि उसकी भाषा भिन्न है।

(ख) मन्यु और श्रद्धा जैसे अमूर्त्त (Abstract) विचारों की अधिकता है।

(ग) विश्वेदेवता की प्रधानता हो गई है ।

[1] देखो-MacDonell's Sanskrit Literature' Page 43-44-45-

[शेष पृष्ठ ६३० का]

इस प्रकार यह लगभग ४० पृष्ठों की पुस्तिका योग मार्ग के पथिकों के लिये बडी उपयुक्त है। "हम भगवान् का ज्ञान प्राप्त करते और भगवान ही हो जाते है क्यो कि अपनी प्रच्छन्न प्रकृति मे हम पहले से वह ही हैं।" यह वाक्य हमे भ्रम जनक प्रतीत होता है यदि भगवान से परमेश्वर का अर्थ लिया जाए किन्तु यदि भग के धर्म, ज्ञान, यश, वैराग्यादि अर्थो को लेकर उसका प्रयोग किया गया हो जैसे कि "तेन वय भगवन्त स्याम" इत्यादि वेद मन्त्रों मे है तो हमे कोई विप्रतिपत्ति नहीं। पुस्तिका की छपाई, आकार, प्रकारादि उत्तम और आकर्षक हैं। ध० दे०

(घ) उषा देवी का मान कम होता दीखता है।

(ङ) २०-२६ सूक्तों का कर्त्ता "अग्निमीले" से आरम्भ करता है, अत पहिले ९ मण्डल पुस्तक रूप मे भी आ चुके थे।

(च) क्योंकि यह सोम अध्याय के पश्चात् रक्खी गई है,

(छ) क्योंकि इसके सूक्तों की सख्या प्रथम मण्डल के बराबर है।

(ज) "Nevertheless the Supplements collected in it appear for the most part to be older than the additions which occur in the earlier books तो भी इस (दशम) मडल के सूक्त अधिकतर उन मिलावटों से प्राचीन प्रतीत होते हैं जो अन्य मण्डलों मे की गई हैं।

प्रो० मैक्डानल साहब की युक्तियों के आधार पर कतिपय प्राच्य विद्वान् भी १०म मण्डल को अर्वाचीन लिखते व मानते हैं।—

ब्राह्मणकुलोद्भव प० बलदेव उपाध्याय एम ए साहित्याचार्य प्रोफेसर, संस्कृत तथा पाली विभाग, विश्वविद्यालय, काशी तथा प० गौरीशङ्कर उपाध्याय एम ए लिखते हैं।—"दशम मण्डल के मन्त्र नाना ऋषिकुलों से सम्बद्ध हैं, इसमें केवल देवताओं की स्तुति नहीं है अपितु अन्य विषयों का सन्निवेश है। दूसरे से लेकर सातवें मण्डल तक ऋग्वेद सबसे प्राचीन माना जाता है। दशम मण्डल पूरे ऋग्वेद में अर्वाचीन माना जाता है।[२]"

ज्योतिषाचार्य, विद्यार्णव श्री रजनीकान्त शास्त्री, बी. ए बी एल साहित्य सरस्वती, ज्योतिर्भूषण ऋग्वेद मण्डल १०, सूक्त ९० मंत्र ११, १२ पुरुषसूक्त के विषय में लिखते हैं —

"अब पूछिए तो वेद मन्त्रों के विशालागार में प्रवेश कर उसके कोने छान डालिए, पर आपको वर्ण-भेद पोषक कोई भी मन्त्र, सिवा पुरुषसूक्त के एकाकी उदाहरण के नहीं मिलेगा और पुरुषसूक्त के विषय में भी पाश्चात्य किंवा प्राच्य सभी विद्वानों की यह सम्मति है कि उसकी रचना अन्य वेद मन्त्रों के ऋक्, यजु, साम और अथर्व के रूप मे वर्गीकरण के कई शताब्दियों के पश्चात् हुई थी, अत उसका वर्ण विषयक मंत्र नितान्त नवीन है जैसा कि उसकी भाषा तथा भावना से मालूम होता है।[३]

"बा० श्री भगवत प्रसाद वर्मा अपने एक लेख[४] में लिखते हैं —

"दशम मण्डल का सङ्कलन (इसमें कई सूक्तों के होते हुए भी) बहुत पीछे हुआ था।"

श्री ईश्वरदत्त मेधार्थी कानपुर लिखते हैं —

ऋग्वेद के दशम मण्डल को पुरातत्व विशारद (Historians) बहुत पीछे का बना हुआ बताते हैं।

---

२. "संस्कृत साहित्य का इतिहास" प्रथम सस्करण पृष्ठ २१.

३ "हिन्दू जाति का उत्थान और पतन" प्रथम सस्करण पृष्ठ २५५

४ मासिक पत्रिका "गङ्गा" का "वेदाङ्क" प्रवाह २, जनवरी १९३२ ई०, तरङ्ग १, पृष्ठ २३८ कालम १ "वैदिक संहिताओं का सिंहावलोकन" शीर्षक लेख।

अष्टाध्यायी के भाष्य कर्त्ता प्रकाण्ड पण्डित मेजर बी० डी० वसु (प्रयाग) ने यह सिद्ध करके दिखा दिया है कि इस मण्डल की रचना अर्वाचीन है (जितने भी पाश्चात्य विद्वान हुए हैं सभी ने ऋग्वेद के ६ मण्डलों को ही सब प्राचीन (The oldest book) माना है।' ५

प्रतीच्य और प्राच्य विद्वानों की दी गई युक्तिया पर विचार—

प्रो० मेक्डानल का संस्कृत ज्ञान—'कुछ काल बीता जब एक देशी संस्कृत और अंग्रेजी के विद्वान् गवर्नमेंट से छात्र वृत्ति पाकर संस्कृत के विशेष अध्ययन के लिए इंग्लैंड गए। संस्कृत के अध्यापक उस समय वही मेक्डानल महोदय थे। उनकी जब मैक्डौनल से भेंट हुई तो उन्होंने संस्कृत में बातचीत शुरू की, परन्तु मैक्डौनल उनसे संस्कृत में बातचीत नहीं कर सके। उस समय मैक्डौनल ने अपने होने वाले शिष्य से कहा कि यह मैं स्वीकार करता हूं कि संस्कृत की आपकी जितनी योग्यता है उतनी मेरी नहीं। और यह कि आप यहां संस्कृत साहित्य के अध्ययन के लिए भेजे भी नहीं गए हैं। यहां तो आप केवल इस लिए आए है कि पश्चिमी विद्वानों की अन्वेषण प्रणाली को आप सीख लेवें।

इस घटना से, पश्चिमी विद्वानो की आम तौर से, और विशेषकर प्रो० मैकडोनल की संस्कृत भाषा की योग्यता का भली भाँति ज्ञान हो सकता है।" ६

(क) मेक्डौनल की पहली युक्ति है कि भाषा भिन्न है।

मेक्डौनल साहब की यह युक्ति भ्रमपूर्ण है।

चतुर्वेद भाष्यकार, विद्वद्वर्य प० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार, मीमांसातीर्थ लिखते हैं —

"दूसरी युक्ति भाषा भेद की है। सरल और कठिन भाग तो आप ऋग्वेद के सभी मण्डलों में पावेंगे। हम लोग साधारण लौकिक संस्कृत के ज्ञान की अपेक्षा करके वेद की भाषा की सरलता और कठिनता का विचार करते हैं और उसी से उसकी अर्वाचीनता वा प्राचीनता का अनुमान करने लगते हैं। यह निराम् असङ्गत है। यदि किसी व्यक्ति को केवल वैदिक संस्कृत के व्याकरण का ही बोध करावे तो कदाचित् वासवदत्ता और कादम्बरी आदि के साहित्य के कठिन ग्रन्थ दुर्गम ऊँचे और उन ग्रन्थों में भी कोई भाग सरल और कोई दुर्गम हो। उनमें यह कहना कि सरल भाग कवि ने पहले या पीछे बनाए और दुर्गम भाग पीछे या पहले बनाए होंगे, बड़ा हास्यास्पद है। कवि तो यथास्थान औचित्य देख कर भाषा का प्रयोग कर देता है।' ७

(क्रमशः)

---

५ "वर्ण व्यवस्था विध्वंस" प्रथमसंस्करण, पृष्ठ ५

६ देखो वेद रहस्य" प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४७

७ देखो-'ऋग्वेद संहिता भाषा भाष्य" प्रथम खण्ड, द्वितीयावृत्ति, भूमिका पृष्ठ ८

महिला जगत्—

मेरे ऋषि कैसे थे ?

[लेखिका--श्रीमती सुशीला देवी चन्द्रकान्त वेद वाचस्पति गुरुकुल सूपा (नवसारी)]

वे सच्चे सन्यासी थे !

राजकुमार सिद्धार्थ ने ३० वर्ष की आयु मे राजपाट और पुत्र कलत्र को त्याग कर यदि महा निष्क्रमण किया था और बुद्धपद प्राप्त किया था तो मूल शकर ने अपनी बहिन और चाचा की मृत्यु को देख कर मृत्युञ्जय बनने के लिये महाप्रयाण शुरू किया और सन्यासी बने। सन्यासी के त्याग की ज्वालाएँ भगवे वस्त्रों में ही नहीं परन्तु रोम रोम से जल उठी थी। एक दिन उदयपुर के महाराजा ने ऋषि को कहा—मूर्ति पूजा का खण्डन छोड कर एकलिंग महादेव के मठाधीश बनकर राज्य के गुरु बन जाइये। राजा के राजा महर्षि ने कहा—राजन्! क्या तुम लालच देकर मुझे अपने ध्येय से विमुख बनाना चाहते हो? तुम्हारे छोटे राज्य को और शिव मठ को मैं एक दौड म माप सकता हू। परन्तु प्रभु के अनन्त राज्य से कैसे भाग सकता हू। इस शताब्दी मे भारत के राजाओं को सबसे प्रथम मार्ग प्रदर्शन करने वाले महर्षि न थे तो कौन थे? त्याग की पराकाष्ठा तो तब हुई जब कि लाहौर की आर्य समाज के अधिवेशन मे महर्षि को प्रमुख पद देकर 'परम सहायक" घोषित किया गया। महर्षि बोल उठे "मैंने कोई नया मत चलाने को गद्दी नहीं चलाई। मठो और महन्तों की गुलामी से प्रजा को मुक्त करने आया हू। 'परम सहायक" पद के अधिकारी एक भगवान् हैं। मैं तो एक सामान्य सेवक हूँ।" ऋषि के उत्तर मे त्याग की पराकाष्ठा और लोक तन्त्र प्रणाली की उच्च भावना भरी हुई है।

वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी और मातृशक्ति के पुजारी थे।

यमुना नदी के नीर पद्मासन लगाये ऋषि के चरणों को छूकर जाती हुई देवियों को 'मा" कह कर पुकारा और गोवर्धन पर्वत की निर्जन-गुफा मे वे तीन दिन और तीन रात उपवास करके आत्म शुद्धि करते हैं। शृङ्गार विभूषित उपदेश लेने आई हुई देवियों को उपदेश दिया कि अपने पतियों को उपदेश सुनने भेजो। उन्हे उपदेश सुना दूगा। वे तुम्हें सुनावेंगे।

तीन तीन बार जोधपुर नरेश यशवन्त सिंह जी के दरबार में निमन्त्रित होकर ऋषि गये। राजा के पास से 'नन्ही जान" वारांगना को भागते हुए देख कर ऋषिने सिंह गर्जना की—

'राजन्! केसरी सिंह की गुफा में क्या कुतियाँ घुस सकती हैं? जोधपुर के नाथ की इस मे क्या शोभा है? इसको छोड दो"। महर्षि के हृदय म महात्मा बुद्ध और आचार्य शकर के समान स्त्री जाति क प्रति उदासीनता न थी। उनके हृदय मे स्त्री शूद्र हर प्राणी के लिये करुणा का स्रोत बहा करता था।

फर्रुखाबाद मे ज्ञान चर्चा चल रही थी। मृत बालक को लेकर फटे कपडे पहिन कर एक माता आई। ऋषि ने कहा देवि! प्राण प्रिय पुत्र के वियोग होने पर भी तेरे गले से वस्त्र नहीं छूटा! देवी रोई कपडे कैसे निकालूँ! सुन कर ऋषि रो उठे। एक सायकाल ऋषि गंगा के किनारे बैठे थे, मरे हुए बालक को गङ्गा में बहा कर जाती हुई एक देवी ने जब कफन के

कपड़े को अपने साथ लिया तब मेरे ऋषि रो उठे। बहिन और चाचा की मृत्यु ने जिस ऋषि को न हिलाया वे अबला के इस दृश्य से पिघल उठे।

वे निर्भीक महावीर थे—

भक्तों ने कहा स्वामिन्! जोधपुर न जाइये। लोग आपको दुःख देंगे। ऋषि ने कहा मेरी अँगुलियों को जला कर मशाल बनावे तो भी मैं जाऊँगा। ऋषि जोधपुर गये।

विरोधियो ने अनेक बार ईंट पत्थर फेंके—ऋषि ने उन्हें फूल समझा। बरेली के ठाकुर राव कर्ण सिंह ने नगी तलवार लेकर तीन तीन बार तीन तीन आदमियो को भेजा। ऋषि ने सिंह गर्जना की और तलवारें हाथ से गिर पड़ीं। स्वामी के एक साथी बलदेवसिंहने रुपये के लालच से उन्हें विष देना चाहा। तब ऋषि बोले जिसका प्रभु रक्षक है उसे कौन मार सकता है? काशी मे मुझे विष दिया गया, राव कर्णसिंह ने विष खिलाया तो भी प्रभु की इच्छा होने से मैं जी रहा हू।

वे सत्यवीर थे।

लाहौर मे नवाब निवाजिश अली खान की कोठी पर उतरकर ऋषिने इस्लाम की विवेचना की। सब सज्जनों ने कहा कि आप नवाब साहब के यहा उतरकर उनके मत की टीका क्यों करते हैं? स्वामी जी ने कहा कि मैं किसी मतया पथ के गुणगान करने नही आया हू। सच्चे वेद धर्म का प्रचार करने आया हू। नवाब के यहा उतर कर उन्हें आर्य धर्म की महत्ता न समझाऊ तो कृतघ्नता होगी। प्रभु के सिवाय मुझे किसी का डर नहीं।

वे सब को प्रेम करते थे।

मेरे ऋषि के हृदय में हिन्दु मुसलमान सब समान थे।

ऋषि के भक्त इमदाद हुसैन लिखते हैं—" हम ऋषि के ऐसे भक्त थे कि उनकी आज्ञानुसार कार्य करते और उससे लाभ उठाते। मुझे याद है कि वे बनारस जाने से पूर्व मुझे कुछ दिये बिना नहीं गए। उन्होंने मुझे उपदेश दिया कि इमदाद हुसैन! जब तक तुम्हारी २५ वर्ष की आयु न हो जावे विवाह न करना। इतने समय को सदाचार से गुजारना। मैंने उस आज्ञा का पालन किया।

सर सयैद अहमद, कर्नेल आल्कट, मडेम ब्लेवेट्स्की, श्री केशवचद्र सेन, महर्षि देवेन्द्रनाथ गोविन्द रानाडे प्रभृति भिन्न २ धर्मो के महा पुरुष ऋषि के भक्त थे।

वे मृत्युञ्जय थे।

महा शिवरात्रि के दिन जिस ऋषि ने दिव्य जन्म पाया था वे १९४० आश्विन कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि मे पाचक जगन्नाथ के हाथों से दूध में विष पी गए। अपने देह की लीला छोडते हुए "प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो" का उच्चारण किया। नास्तिक मुनि गुरुदत्त विद्यार्थी को आस्तिकता का उपदेश दिया और हसते हसते ओंकार का जप करते हुए मृत्यु को आलिंगनकर गये। मृत्यु से पहिले जगन्नाथ को कहा—"ले यह रुपये ले और नैपाल मे चला जा। जल्दी जा नही तो लोग तेरे टुकड़े टुकडे कर डलेंगे।" मैं इस शिवरात्रि के दिन सन्यासी नैष्ठिक ब्रह्मचारी, सत्यवीर, निर्भीक, महावीर, मृत्युञ्जय महर्षि के चरणो मे बारबार अपना शिर झुकाती हू।

दान सूची सार्वदेशिक सभा देहली

आर्य समाज स्थापना दिवस

१५) आर्य समाज नजीबाबाद (बिजनौर)
१) श्री आर्य केशवार्य जी शास्त्री
गोली बपल्ली (कृष्णा)
२) " मन्त्रिणी जी स्त्री आर्य समाज
अत्तर सुइयां, प्रयाग (इलाहाबाद)

१८) (क्रमशः)
१४१४॥) गतयोग

१४३२॥)

जिन समाजों का भाग अभी तक अप्राप्त है वे शीघ्रातिशीघ्र भिजवा देवें।

विविध दान

१०) श्री पद्म प्रसाद जी सहारनपुर द्वारा १ शेयर सार्वदेशिक प्रकाशन लि० (पूरा भाग।)
१०) श्री भगवत किशोरजी नई दिल्ली
१००) श्री लक्ष्मण दास जी केसरगंज लुधियाना २० शेयर

१२०)
३५५॥≥) १० गत योग

४७५॥≥) १०

गंगा प्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री—सार्वदेशिक सभा

ग्राहकों से निवेदन

निम्न लिखित ग्राहकों का चन्दा मार्च मास के साथ समाप्त होता है। अतः प्रार्थना है कि वे अपना वार्षिक चन्दा मनीआर्डर से तत्काल भेज देवें अन्यथा उनकी सेवा में आगामी अंक वी० पी० से भेजा जावेगा।

ग्राहक संख्या	नाम समाज या ग्राहक
२	श्री मन्त्री जी आर्य समाज आरा
२९३	श्री प० मेधातिथि जी दीवानहाल दिल्ली
४३१	श्री मन्त्री जी आर्य समाज छोटी सादड़ी नीमच, मेवाड़।

प्रबन्धकर्त्ता—सार्वदेशिक

एक आवश्यक प्रश्न का श्री प्रधान जी द्वारा उत्तर

करनाल
१०-१-४९

श्रीमान् मन्त्री जी सार्वदेशिक सभा,

सादर नमस्ते।

निवेदन है कि आर्य समाज मन्दिर को राजनीतिक पार्टियों के व्याख्यानों के लिये देना उचित है या नहीं। सार्वदेशिक सभा ने इस विषय में पहिले निश्चय किया था कि नहीं देना चाहिये। परन्तु यह निश्चय स्वतन्त्रता मिलने से पूर्व हुआ था अब सार्वदेशिक सभा ने इस विषय में जो निश्चय किया हो उसकी सूचना लौटती डाक से दें क्योंकि यहां आर्य समाज में आज कल इस विषय पर विचार हो रहा है और इस पर आपका निर्णय मांगता है, अतः आप शीघ्र उत्तर देने की कृपा करें।

भवदीय
नारायण वैद्य
पुराना सराफा बाजार,
करनाल।

—आपका पत्र मिला अब भी सार्वदेशिक सभा का वही निश्चय है जो पहले था, कि आर्य समाज मन्दिर राजनीतिक दलों को सभाओं अथवा कार्यालयों के लिये न दिये जाएं। उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

इन्द्र विद्यावाचस्पति,
प्रधान-सार्वदेशिक सभा।

महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी

(८)

अहिंसा, सर्वधर्म समतादि विषयों पर तुलनात्मक विचार

[लेखक—श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा]

अब तक इस लेखमाला मे मैंने महर्षि दयानन्द के सामाजिक राजनैतिक तथा कुछ धार्मिक विचारों की तुलना महात्मा गाधी जी के इस विषयक विचारों से की है। अहिंसा विषय मे इन दोनों महापुरुषों के विचारों में कहाँ तक समानता और कितनी विभिन्नता है इस विषय पर विचार करना इस तुलनात्मक अनुशीलन के समय अत्यावश्यक है क्योंकि सभी जानते हैं कि महात्मा गाधी अहिंसा के प्रबल समर्थक तथा उपासक थे। सत्य और अहिंसा पर उनका सबसे अधिक बल था और इन की उन्होने अपने जीवन मे विशेष रूप से साधना की थी।

महर्षि दयानन्द और अहिंसाः—

महर्षि दयानन्द भी पूर्णयोगी होने के कारण अहिंसा व्रतधारी थे इस मे किसी को जरा भी सन्देह नहीं हो सकता। अपने वैयक्तिक जीवन मे उन्होने अहिंसा के सार्वभौम महा व्रत का पालन किया था यहाँ तक कि अपने घातकों के प्रति भी उन्होंने दयालुता और उदारता पूर्ण व्यवहार दिखाया था इस बात को इस लेखमाला के २ य लेख में (जो सार्वदेशिक के अप्रैल सन् १९४८ के अङ्क में प्रकाशित हो चुका है) मैं अनेक उदाहरण देकर दिखा चुका हू जिन के दुहराने की यहा आवश्यकता नहीं। भयङ्कर विष दे कर प्राण हरण करने वाले जगन्नाथ नामक पाचक के प्रति जो उन्होंने दयालुता दिखाई, उसकी प्राणरक्षार्थ आर्थिक सहायता देकर जो उसे नेपाल भेज दिया यह सर्व विदित है। इससे बढ कर अ[illegible] क्रियात्मक उदाहरण क्या हो सक[illegible] अनूप शहर में पान मे विष देने वाले व्यक्ति क पकडे जाने पर 'मैं ससार मे किसी को कैद करवाने नहीं आया' किन्तु सब को कैद से छुड़वाने आया हू।' ये उनके अमर वाक्य कैसे भुलाये जा सकते हैं? सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में योगदर्शन के सुप्रसिद्ध सूत्र 'तत्राहिंसा सत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमा" (योग २।३०) की व्याख्या मे महर्षि दयानन्द ने 'अहिंसा' का अर्थ 'वैर त्याग" ऐसा किया है।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के उपासना प्रकरण में उन्हों ने इस सूत्र पर व्यासमुनि जी का भाष्य उद्धृत करके जिसमें अहिंसा की व्याख्या——"तत्र सर्वथा सर्वदा सर्वभूताना मनभिद्रोह' इत्यादि रूप मे की गई है महर्षि ने भाषानुवाद मे लिखा है— 'अहिंसा अर्थात् सब प्रकार से सब काल मे सब प्राणियों क साथ वैर छोड के प्रेम प्रीति से वर्त्तना।

मनुस्मृति २।१५६ के

"अहिंसयैव भूतानां, कार्यं श्रेयोनुशासनम्।
वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा, प्रयोज्या धर्ममिच्छता ॥

इस श्लोक का अनुवाद करते हुए महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखा—

विद्वान् और विद्यार्थियों को योग्य है कि वैर बुद्धि छोड़ के सब मनुष्यों को कल्याण के मार्ग का उपदेश करें और उपदेष्टा सदा मधुर सुशीलता युक्त वाणी बोले। जो धर्म की उन्नति चाहे वह सदा सत्य ही का उपदेश करे।"
सत्यार्थ प्रकाश ३ य समुल्लास पृ० ५५)

दृते दृंह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।"
(यजु० ३६।१८)

इस सुप्रसिद्ध वेद मन्त्र की व्याख्या करके भावार्थ में ऋषि दयानन्द ने लिखा कि—

'त एव धर्मात्मानो मनुष्या ये स्वात्मवत् सर्वान् प्राणिनो मन्येरन् कञ्चिदपि न द्विषेयुर्मित्र वत् सर्वान् सदोपकुर्युरिति अर्थात् वे ही धर्मात्मा जन हैं जो अपनी आत्मा के सदृश सम्पूर्ण प्राणियों को मानें, किसी से भी द्वेष न करें और मित्र के सदृश सब का सदा उपकार करें।

इस से बढ़ कर अहिंसा का आदर्श क्या हो सकता है? किन्तु इस प्रकार जहाँ महर्षि दयानन्द ने अहिंसा धर्म के पालन का उपदेश दिया वहां क्षात्र धर्म का प्रतिपादन वेदादि सत्य शास्त्रों के आधार पर करते हुए उन्होंने दुष्टों के नाश को क्षत्रियों का आवश्यक कर्त्तव्य बताया।

यद्ध त्य मायिन मृग तमु त्य मायया'वधी
रर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ऋ० १।८०।७

का यह अर्थ करते हुए कि हे सभाध्यक्ष राजन् तुम मायी—छलादि दोषयुक्त मृग—पर स्वापहर्ता अथवा दूसरों के पदार्थों का अपहरण करने वालों को अपनी बुद्धि से नष्ट करते हुए स्वराज्य की रक्षा करते हो। महर्षि ने भावार्थ में लिखा—

'ये प्रजापालनाय सूर्यवत् स्वबलन्यायविद्या प्रकाश्य कपटिनो जनान् निबध्नन्ति ते राज्य वर्धयितु करान् प्राप्तु च शक्नुवन्ति"

अर्थात् जो प्रजा की रक्षा के लिये सूर्य की तरह अपने बल, न्याय और विद्या का प्रकाश करके कपटियों को दण्ड देते हैं वे राज्य को बढ़ाने और करों को प्राप्त करने में समर्थ होते हैं।"

इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सह। महत्तदस्य पौंस्य वृत्र जघन्वा असृजदर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ऋ० १। ८०। १० की व्याख्या में ऋषि दयानन्द ने लिखा कि—

"विद्युदिव पराक्रमी सभाध्यक्ष मेघस्येव शत्रो बल नितरा हन्यात् ॥ अर्थात् विद्युत् की तरह पराक्रमी सभाध्यक्ष मेघ के समान शत्रु का निरन्तर हनन करता है।

विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान् ॥ ऋ० १।५१।८ की व्याख्या में महर्षि दयानन्द ने आर्याभिविनय में लिखा है कि—

'जो नास्तिक, डाकू, चोर, विश्वासघाती, मूर्ख, विषयलम्पट हिंसादि दोषयुक्त, उत्तम कर्म में विघ्न करने वाले स्वार्थी, स्वार्थ साधन में तत्पर वेद विद्या विरोधी, अनार्य मनुष्य सर्वोपकारक यज्ञ के विध्वंसक हैं इन सब दुष्टों को आप मूल सहित नष्ट कीजिये और (शासद-व्रतान्) ब्रह्मचर्य, गृहस्थ वानप्रस्थ, सन्यासादि धर्मानुष्ठान व्रत रहित वेद मार्गोच्छेदक अनाचारियों को यथायोग्य शासन करो (शीघ्र उन पर दण्ड निपातन करो) जिस से वे भी शिक्षा युक्त हो के शिष्ट हों अथवा उनका प्राणान्त हो जाए किंवा हमारे ही वश में रहें।" (आर्याभिविनय रामलाल कपूर ट्रस्ट ४र्थ सस्करण पृ० ४२)

महर्षि दयानन्द के वेद व्याख्यात्मक इस लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार के दुष्टों के लिये हिंसा का प्रयोग वेद तथा महर्षि सम्मत है। यहां भी उद्देश्य यथा सम्भव

उन दुष्टों को शिष्ट बनाना ही माना गया है यदि वे ऐसे नीच हों कि अन्य किसी प्रकार से मानें ही नहीं तथा अपने अनाचार को न छोडे तभी उनके प्राणान्त कर देने का आदेश है जिस से उन के कारण समाज वा राष्ट्र को हानि न पहुचे।

स्थिरा व सन्त्वायुधा पराणुदे वीलू उत प्रतिष्कभे। युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिन।' ऋ० १।३।१८।२

इस वेद मन्त्र की व्याख्या में महर्षि दयानन्द ने इस उपर्युक्त भाव को और अधिक स्पष्ट किया है। 'आर्याभिविनय' पृ० ५८ में महर्षि लिखते हैं —

"परमेश्वरो हि सर्वजीवेभ्य आशीर्ददाति— परमेश्वर सब जीवों को आशीर्वाद देता है कि हे जीवो! तुम्हारे आयुध अर्थात् शतघ्नी (तोप) भुशुण्डी (बन्दूक) धनुष बाण, तलवार, बरछी आदि शस्त्र स्थिर और दृढ हो। किस प्रयोजन के लिये? (पराणुदे) तुम्हारे शत्रुओ के पराजय के लिये तुम्हारे कोई दुष्ट शत्रु लोग कभी दुःख न दे सके। (उत प्रतिष्कभे) शत्रुओ के वेग को थामने के लिये। (युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी) तुम्हारी बलरूप उत्तम सेना सब संसार मे प्रशंसित हो जिससे तुम से लडने को शत्रु का कोई सकल्प भी न हो परन्तु (मा मर्त्यस्य मायिन) जो अन्यायकारी मनुष्य है उसको हम आशीर्वाद नहीं देते। दुष्ट, पापी ईश्वर भक्ति रहित मनुष्य का बल और राजैश्वर्यादि कभी मत बढ़े। उसका पराजय ही सदा हो। हे बन्धुवर्गो! आओ अपने सब मिल के सर्व दुःखो का विनाश और विजय के लिये ईश्वर को प्रसन्न करें जो अपने को वह ईश्वर आशीर्वाद देवे जिससे अपने शत्रु कभी न बढे।"

(आर्याभिविनय पृ० ५६)

वेद और महर्षि दयानन्द के अहिंसादि विषयक अभिप्राय को स्पष्ट करने के लिये उपर्युक्त उद्धरण पर्याप्त हैं। ब्राह्मणों और सन्यासियों के लिये महर्षि दयानन्द पूर्ण अहिंसा के आदर्श को स्वीकार करते थे अन्य सर्व साधारण के लिये विशेषत क्षत्रियों के लिये नहीं यद्यपि उनके लिये भी 'असपत्ना प्रदिशो मे भवन्तु न वै त्वा द्विष्मो अभय नो अस्तु' अनमित्र न पश्चादनमित्र न उत्तरात्" इन्द्रानमित्र नो ऽधरादनमित्र पुरस्कृधि' इत्यादि वैदिक आदर्शों के अनुसार किसी से द्वेष भाव रखना सर्वथा निषिद्ध है। तथापि दुष्टों के नाश का कार्य भी उन्हें समाज और राष्ट्रहित को ध्यान मे रखकर द्वेषरहित कर्तव्य बुद्धि से ही करने का आदेश है जो अत्यन्त उच्च और महत्त्व-पूर्ण भाव है।

पूज्य महात्मा गाधी जी के अहिंसा विषयक

पूज्यमहात्मा गान्धी जी के अहिंसा विषयक विचारो को यद्यपि जनता साधारणतया जानती है तथापि उनका शुद्ध रूप में सकलन कुछ कठिन है। सबसे पहले मैं उनके यरवदा जेल से जुलाई सन् १६३० मे साबरमती आश्रम वासियो के नाम लिखे पत्र से उद्धरण दूगा जो 'मङ्गल प्रभात" के नाम से प्रकाशित सग्रह से लिया गया है। अहिंसा की व्याख्या करते हुए पूज्य महात्मा जी ने इस पत्र में लिखा था कि —

यह अहिंसा वह स्थूल वस्तु नहीं है जिसे आज हम देखते हैं। किसी को न मारना तो है ही। बुरे विचार मात्र हिंसा है। उतावली (जल्दबाजी) हिंसा है, मिथ्या भाषण हिंसा है, द्वेष हिंसा है, किसी का बुरा चाहना हिंसा है, जगत् के लिये जो वस्तु आवश्यक है उस पर कब्जा रखना भी हिंसा है। लेकिन हम जो खाते हैं वह जगत के लिये आवश्यक है, जहा खडे हैं वहा सैकडों सूक्ष्म जीव पडे पैरों तले कुचले जाते हैं यह जगह उनकी है। तो फिर क्या आत्म हत्या कर लें? तो भी निस्तार नहीं।

विचार में देह का संसर्ग छोड़ दे तो अन्त में देह हमें छोड़ देगी यह मोहरहित स्वरूप सत्य नारायण है। इतना सब समझ ले कि अहिंसा बिना सत्य की खोज असम्भव है। अहिंसा और सत्य सिक्के के दोनों बाजुओं या चिकनी चकती के दोनों पहलुओं की भांति बिल्कुल एक समान है, उसमें उलट सीधे की पहचान कैसे हो? तथापि अहिंसा को साधन और सत्य को साध्य मानना चाहिये। साधन हमारे हाथ की बात है, इससे अहिंसा परम धर्म मानी गई। सत्य परमेश्वर हुआ। हमारे मार्ग में चाहे जितने सकट आ जाए, बाह्य दृष्टि से हमारी चाहे जितनी हार होती दिखाई दे तो भी हमें विश्वास न छोड़कर एक ही मन्त्र जपना चाहिये-सत्य है, वही है, वही एक परमेश्वर है। उसके साक्षात्कार का एक ही मार्ग एक ही साधन अहिंसा है, उसे कभी न छोड़ूंगा। जिस सत्य रूप परमे॰ ॰ नाम से यह प्रतिज्ञा की है वह उसके पालन करने का बल दे।'

(देखो—मङ्गल प्रभात रामलाल कपूर ट्रस्ट लाहौर द्वारा प्रकाशित पृ० १०—१२)

श्री किशोरीलाल मशरूवाला द्वारा सकलित और महात्मा गांधी जी द्वारा प्रमाणित 'गान्धी विचार दोहन नामक सस्ता साहित्य मंडल नई देहली द्वारा प्रकाशित पुस्तक में 'अहिंसा' विषयक म० गान्धी जी के विचार सगृहीत किये गये हैं जिनमें से पूर्वोक्त उद्धृत वाक्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं —

"प्रेम का शुद्ध व्यापक स्वरूप अहिंसा है। पर जिस प्रेम में राग या मोह की गन्ध आती हो वह अहिंसा नहीं हो सकती।" (पृ० ५) दूसरे के शरीर या मन को दुःख या पीड़ा न पहुचाना, इतना ही अहिंसा धर्म नहीं है, हा साधारणतः इसे अहिंसा धर्म का बाह्य लक्षण कह सकते हैं। दूसरों के शरीर या मन को स्थूल दृष्टि से दुःख या क्लेश पहुचता जान पड़ता हो तो भी उसमें शुद्ध अहिंसा धर्म का पालन होता हो यह सम्भव है। अहिंसा का भाव दिखाई देने वाले परिणाम में ही नहीं है, बल्कि अन्तःकरण की राग द्वेष रहित स्थिति में है। (गान्धी विचार दोहन पृ० ४) इस के साथ महर्षि दयानन्द की अहिंसा के वैरत्याग इस अर्थ की तुलना विशेष रूप से द्रष्टव्य है।

अहिंसा में तीव्र कार्य साधक शक्ति भरी हुई है। इस में जो अमोघ शक्ति है उसकी अभी पूरी खोज नहीं हुई है। "अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः अथवा अहिंसा की सिद्धि होने पर सारे वैर द्वेष शान्त हो जाते हैं, यह सूत्र शास्त्रों का प्रलाप नहीं है, बल्कि ऋषि का अनुभव वाक्य है। हिंसा के मार्गों के शोधन और सगठन करने का मनुष्य ने जितना दीर्घ उद्योग किया है उतना यदि वह अहिंसा की शक्ति के शोधन और संघटन के लिये करे तो मनुष्य जाति के दुःखों के निवारणार्थ वह एक अनमोल, अचूक और परिणाम में उभय पक्ष का कल्याण करने वाला साधन सिद्ध होगा।

(गान्धी विचार दोहन पृ० ५)

(क्रमश)

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक--पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित

Red No D 159

सार्वदेशिक पुस्तकालय दिल्ली

सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड

विक्रयार्थ पुस्तक सूची

नाम पुस्तक लेखक व प्रकाशक

(१) वैदिक सिद्धान्त सजिल्द (सार्व० सभा) १)
(२) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर ,, १।)
(३) आर्य सिद्धान्त विमर्श ,, १॥)
(४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास ,, अ० ४)
, स० २॥)
(५) आर्य डायरेक्टरी ,, अ० १।)
(६) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या ,, ।)
(७) आर्यसमाज के महाधन सचित्र २॥)
(स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)
(८) स्त्रियों का वेदाधिकार
(पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति) १।)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण
(पं० इन्द्रजी वि. वा) ।=)
(१०) यम पितृ परिचय पं० प्रियरत्नजी आर्ष २)
(११) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र ,, १)
(१२) वैदिक ज्योति शास्त्र १॥)
(१३) वैदिक सूर्य विज्ञान , =)
(१४) वेद में असितशब्द , -)।
(१५) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(१६) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां १)
(१७) विमान शास्त्र ,, ।=)॥
(१८) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वामी ब्रह्म मुनि) ।)
(१९) स्वराज्य दर्शन सजिल्द
(पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित) १)
(२०) नया संसार श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक =)
(२१) मातृत्व की ओर ,, ,, अ० १।)
(२२) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म ,, ।=)
(२३) आर्य शब्द का महत्व ,, -)॥
(२४) कथा माला (म० नारायण स्वामी जी की कथाओं के आधार पर ॥।)
(२५) श्री नारायणस्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ ५)
(२६) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(२७) योग रहस्य ,, १)
(२८) मृत्यु और परलोक ,, १।)
(२९) विद्यार्थी जीवन रहस्य
पूज्य नारायण स्वामी जी ॥)
(३०) प्राणायाम विधि ,, =)
(३१) उपनिषद् ईश =) केन ॥) कठ ॥)
प्रश्न ।=) मुण्डक =) माण्डूक्य =)
ऐतरेय ।) तैत्तरीय ॥।)
(३२) श्री नारायण स्वामी जी का संक्षिप्त जीवनी -)
(३३) आर्य समाज का परिचय =)
(३४) शहीदी पत्रिका ।=)
(३५) आर्यसमाज मन्दिर चित्र ।)
(३६) वेद और गोमेध
(श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी) =)
(३७) सत्यार्थ प्रकाश गान
(पं० सत्यभूषणजी योगी) ।=)
(३८) हमारे घर (श्रीनिरञ्जनलालजी गौतम) ॥=)
(३९) भारतवर्ष में जाति भेद ,, ।)
(४०) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग का कार्य क्रम -)
(४१) शाङ्कर भाष्यालोचन सजिल्द
(श्री पं० गङ्गा प्रसाद जी उपाध्याय कृत) ५)
(४२) वीरमाता का उपदेश
(प्रो० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार) ।)
(४३) महाराणा सांगा श्री हरविलास शारदा १)
(४४) आर्य्य पर्व पद्धति
(पं० भवानी प्रसाद जी) १।)

मिलने का पता —
सार्वदेशिक पुस्तकालय,
बलिदान भवन, दिल्ली

१९४९ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
२००६ सं०	[illegible] धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार	विदेश १० शि०
	विद्यावाचस्पति साहित्यभूषण	१ प्रति का ।।)

विषय सूची

बलिदान भवन देहली में कुछ आवश्यक सभाएं

२३ ४ ४६ मध्याह्न २ बजे से सार्वदेशिक सभा की अन्तरङ्ग सभा

२४ ४ ४६ ,, ,, ,, का वृहदधिवेशन

२३ ४ ४६ }
२४ ४ ४६ } प्रात ८ से १० तक जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ का बृहदधिवेशन

२५ ४ ४६ }
२६ ४ ४६ } मध्याह्न २ बजे से धर्मार्य सभा का अधिवेशन हिन्दू कोड बिल आदि आवश्यक विषयों पर विचारार्थ तथा चुनाव।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति

स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा तथा धर्मार्य सभा

उपाध्यक्ष जाति भेद निवारक आ० प० संघ।

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ३१ | अप्रेल १९४६ ई० चैत्र २००५ दयानन्दाब्द १२६ | अङ्क २

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनु वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायताम्। निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ यजुर्वेद २२।२२

भावार्थ

['रघुपति राघव राजाराम' की तर्ज पर]

विनती तुमसे है भगवान्
हम को दो ऐसा वरदान। (टेक)
ऐसी कृपा करो अखिलेश
उन्नत होवे सारा देश।
जग भर में पावे सन्मान ॥ हमको दो

ब्राह्मण यहाँ यशस्वी होवे
तेजस्वी वर्चस्वी होवें।
होवें ज्ञानवान विद्वान् ॥ हमको दो
क्षत्रिय शूर महारथि होवें
निपुण शस्त्रचालन मे होवें
रण विजयी अतुलित बलवान् ॥ हमको दो

[शेष पृष्ठ ५० पर]

भारत कोकिला का चिरमौनः—

यह जान कर किस को खेद न हुआ होगा कि भारत माता की अन्तारार्ष्ट्रीय ख्याति प्राप्ता सुपुत्री, सुप्रसिद्धा कवयित्री, समाज सुधारिका और देश-भक्ता, संयुक्त प्रान्त की सर्वप्रियशासिका भारत कोकिला श्रीमती सरोजिनी देवी का गत २ मार्च की रात्रि हृदय की गति रुक जाने से लगभग ७० वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। श्रीमती सरोजिनी देवी एक प्रतिभाशालिनी कवयित्री थीं जिनकी अंग्रेजी कविताओं का पाश्चात्य देशों मे भी बड़ा मान हुआ। समाज सुधार के लिये उन के मन मे इतना प्रेम और उत्साह था कि ब्राह्मण कुलोत्पन्ना हो कर भी उन्होंने लगभग १९ वर्ष की आयु में डा० गोविन्द राजुलु नायडू नामक अब्राह्मण वंशज सज्जन से विवाह किया। महात्मा गान्धी जी द्वारा प्रवर्तित सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन मे पूर्ण सक्रिय भाग ले कर देश की स्वतन्त्रतार्थ उन्हों ने अनेक यातनाए सहीं। सन् १९२५ मे आप को अपनी अद्भुत योग्यता और देशभक्ति के कारण राष्ट्रीय महा सभा (कांग्रेस) का अत्यन्त गौरवान्वित अध्यक्षपद दिया गया जिसके कर्तव्यों का भली भांति पालन करके

[शेष पृष्ठ ४९ का]

बना योजना नित्य विशाल
करे देश को मालामाल।
वैश्य बने दानी धनवान्॥ हमको दो

गौवे होवे खूब दुधार
खूब बहावे अमृत धार।
सब जन करें अमृत का पान॥ हमको दो

वृषभ महा बलशाली होवे
भार प्रचुर मात्रा मे ढोवें।
द्रुत गामी होवें सब यान॥ हमको दो

सती और साध्वी महिला हों
रूपवती विदुषी कुशला हो।
देखें सकल गुणों की खान॥ हमको दो

सभी देशवासी हों सभ्य
पहचानें अपना कर्त्तव्य।
वीर जनक होवे यजमान॥ हमको दो

कृषी हेतु जब जब हम चाहें
जल धर जलधारा बरसावें
प्रचुर यहा होवे धन धान॥ हमको दो

सब ही स्वस्थ सुखी समृद्ध
होवे बाल युवा और वृद्ध।
प्राप्त करे सब सुख सामान॥ हमको दो

अनुवादक—श्री पं० सोमदत्त विद्यालङ्कार

श्रीमती सरोजिनी देवी ने भारत माता के मुख को उज्ज्वल किया। मार्च १९४७ में देहली में जब एशियाई सम्मेलन हुआ तो उसकी अध्यक्षता भी श्रीमती सरोजिनी देवी ने करते हुए अत्यन्त मार्मिक तथा ओजस्वी भाषण विश्व बन्धुत्व के विषय में दिया जिसे एशिया के भिन्न २ देशों से आये हुए माननीय प्रतिनिधियों ने मन्त्रमुग्ध सा होकर सुना। सुप्रसिद्ध समाज सुधारिका होने के कारण महर्षि दयानन्द के प्रति श्रीमती सरोजिनी देवीकी बड़ी पूज्य बुद्धि थी। महर्षि के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हुए श्रीमती सरोजिनी-देवी ने एक बार कहा था कि—"स्वामी दयानन्द वर्तमान समय के विशाल शक्ति पुत्र थे। उनका संदेश तथा उपदेश वास्तव मे प्राचीन वैदिक धर्म का निचोड़ तथा अतर था जो जाति को पुनर्जीवित करने वाला तथा अपने प्रभु की ओर आदर्श सीमा में दूर तक पहुँचने वाला और स्थायी था। भारत को अब यदि कोई अत्यन्त आवश्यकता है तो वह आध्यात्मिकता को जीवित करने की है। स्वामी दयानन्द के समान विचार-शील विद्वान् ही भारत वर्ष के सुधार का मार्ग खोल सकते हैं।"

ऐसी जगद्विख्याता, देश भक्त और समाज सुधारिका के आकस्मिक देहावसान से जो क्षति देश को पहुंची है उसकी पूर्ति बड़ी कठिन है।

श्री पं० ज्ञानेन्द्र जी का देहावसान—

गुजरात प्रान्त मे आर्य समाज के अत्यन्त उत्साही और योग्य नेता 'तरणि' मासिक पत्रिका के सम्पादक तथा गुजरात में वैदिक धर्म विषयक अनेक ग्रन्थों के लेखक, हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के समय सर्वाधिकारी श्री पं० ज्ञानेन्द्रजी सिद्धान्तभूषण का गत ४ फर्वरी को देहावसान हो गया जिससे आर्य जगत् को एक बड़ी हानि हुई। स्व० पण्डितजी बड़े ही स्वाध्यायशील, मिलन सार सज्जन थे। वैदिक धर्म के प्रति उनकी अत्यधिक आस्था थी तथा दिन रात उसके प्रसार की ही उनको चिन्ता थी। अपने परिवार को भी पूर्णतया आर्य आदर्शों के अनुकूल बनाते हुए वे प्रचार कार्य में अहर्निश तत्पर थे। ऐसे आर्यरत्न का ३४ वर्ष की आयु में देहावसान वस्तुत अत्यधिक दुःखप्रद है। उनके उत्तम आदर्शों पर चलने का सब आर्यों को सदा प्रयत्न करना चाहिये। हम आर्य जगत् तथा 'सार्वदेशिक' परिवार की ओर से स्वर्गीय पं० ज्ञानेन्द्र जी के सब सम्बन्धियों और इष्ट मित्रों से समवेदना प्रकट करते हैं।

अफगान विद्यार्थियों का आर्य शब्द से प्रेमः—

देहली के दैनिक पत्र इन्डियन न्यूज क्रानिकल के ६ मार्च के रविवार संस्करण मे अन्ताराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान् डा० रघुवीर जी एम० ए०, पी० एच्० डी० का एक लेख "Study of Sanskrit at Kabul University" (काबुल विश्व विद्यालय में संस्कृत का अध्ययन) इस विषय पर निकाला है जिसमे उन्होंने बताया है कि काबुल विश्व विद्यालय मे संस्कृत का पाठ्य क्रम क्या है और किस प्रकार अफ़गानिस्तान के मुस्लिम विद्यार्थी भगवद् गीतादि का प्रेम पूर्वक अध्ययन करते हैं और संस्कृत साहित्य की प्राचीनता ने उन की आंखें खोल दी हैं। एक विशेष बात जिसकी ओर उस लेख में हमारा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ

और जिसे हम अपने पाठकों के सन्मुख भी रखना चाहते है वह उस लेख का निम्न लिखित अन्तिम वाक्य है —

Lastly, I may ment on that the Afgan boys are proud to append Aryan after their surnames They issue a monthly magaz ne Ayana (Indian News Chronicle 6th march 1949)

अर्थात् अन्त मे मैं यह वर्णन कर दू कि अफगान विद्यार्थी अपने नाम के पीछे 'आर्यन्' शब्द लगाने पर बडा गर्व व स्वाभिमान अनुभव करते हैं। वे 'आर्यना' नाम की एक मासिक पत्रिका भी निकालते हैं।

हमे निश्चय है कि सभी पाठकों को इस समाचार से बडी प्रसन्नता होगी । संस्कृत के अध्ययन से मुस्लिम अफगान विद्यार्थियो का आर्य शब्द से यह अद्भुत प्रेम अत्यन्त प्रशसनीय और महत्त्व पूर्ण है । हमारा विश्वास है कि सस्कृत साहित्य का अनुशीलन उन की दृष्टि को विशाल करेगा तथा आर्य धर्म और सस्कृति से उन के प्रेम को अधिकाधिक बढाएगा। भारत सरकार से भी हमारा अनुरोध है कि वह सस्कृत के अध्ययन को समस्त विद्यालयो मे अनिवार्य कर दे जिससे कि सब विद्यार्थी प्राचीन धर्म, सस्कृति और इतिहास के समझने मे समर्थ हो सके। जैसे कि हमारे माननीय प्रधान मन्त्री श्री प० जवाहर लाल जी ने अपने भाषा विषयक लेख मे स्वीकार किया सस्कृत साहित्य एक अमूल्य सम्पत्ति या निधि है जिस की रक्षा करना हम सब का कर्त्तव्य है। भारतीय विद्यालयों मे सस्कृत की वर्तमान उपेक्षा नितान्त निन्दनीय है।

इस सम्बन्ध मे एक और बात का भी निर्देश कर देना हमे उचित प्रतीत होता है जो यह है कि जहाँ मुस्लिम अफगान विद्यार्थियों को अपने नाम के पीछे 'आर्यन्' शब्द लगाने से प्रेम हो रहा है वहा बहुत से आर्य सज्जन भी ऐसे उत्तम शब्द का प्रयोग करनेके स्थान पर जिस का अर्थ धर्मात्मा, सदाचारी, कर्त्तव्य परायण, शान्त, चित्त, न्याय मार्गावलम्बी, उदार चारत है भल्ला चावला, नारंग, गाजरा, बेरी, कपूर, चड्ढा, सेठ इत्यादि जाति सूचक नामो का प्रयोग ही अधिक पसन्द करते हैं यह कितने आश्चर्य, दु ख और लज्जा की बात है। हम आशा करते है कि एसे आर्य सज्जन अफगान विद्यार्थियो के 'आर्य' नाम के प्रेम से शिक्षा ग्रहण करते हुए जात्युप जाति सूचक नामों का प्रयोग बन्द कर देंगे और सकुचित जातीय सभाओं से कोई सम्बन्ध न रक्खेगे। जाति भेद का सम्पूर्णतया क्रियात्मक परित्याग किये बिना आर्य समाज की उन्नति तथा शुद्धि, सघटन, दलितोद्धारादि की सन्तोष जनक प्रगति हमे सभव प्रतीत नहीं होती।

अफगान विद्यार्थियो के आर्य शब्द से इतने प्रेम द्वारा हमे अपने देश का आर्यावर्त नाम सर्व प्रिय बनाने की प्रेरणा भी मिलनी चाहिये।

उच्च कोटि के साहित्य निर्माणार्थ उत्तम योजना.—

धर्म के प्रचारार्थ सब से उत्तम साधन उत्तम साहित्य का निर्माण और उस का प्रसार है। यह खेद की बात है कि यद्यपि वैदिक धर्म

सर्वोत्तम, पूर्णतया युक्तियुक्त, विज्ञानसम्मत और सार्वभौम धर्म है तथापि इसके विषय मे ससार का विविध भाषाओ मे जो उच्च कोटि का साहित्य प्रकाशित होना चाहिये था उस म न्यूनता रही है यहा तक कि अंग्रेजी जैसी प्रसिद्ध भाषा मे भी चारो वेदो, उपनिषदो और दर्शन शास्त्रो के उत्तम तथा प्रामाणिक अनुवाद अभी तक विद्यमान नही है। वैदिक सिद्धान्तो के समर्थन और विरोधियो के आक्षेपों के निराकरणार्थ प्रकाशित उच्च कोटि के साहित्य का न्यूनता को अनुभव करते हुए आर्य महासम्मेलन कलकत्ता से सर्वसम्मति से "साहित्य सत्कार निधि" अथवा दयानन्द पुरस्कार निधि की आयोजना की थी जिसे सार्वदेशिक सभा ने स्वीकृत करके तदर्थ प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया है। सार्वदेशिक सभा के मान्य मन्त्री श्री प० गङ्गा प्रसाद जी उपाध्याय एम ए तथा मान्य प्रधान श्री प० इन्द्र जी विद्या वाचस्पति की इस विषयक अभ्यर्थना (अपील) पाठको ने 'सार्वदेशिक' तथा अन्य पत्रों मे अवश्य पढी होगी। इस निधि मे आर्य महानुभावों से धन प्राप्त हो रहा है किन्तु उसकी गति अभी नितान्त मन्द है। हम इस उत्तम योजना का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए आर्य नर नारियो से सानुरोध निवेदन करते है कि वे वैदिक धर्म प्रचारार्थ अत्यावश्यक इस पवित्र कार्य पूर्ति के लिये उदार सहायता सभा कार्यालय म अविलम्ब भेज कर यश और पुण्य के भागी बने। ईश्वर की कृपा से सम्पन्न आर्य नर नारियो को इस वेदिक धर्म प्रचार यज्ञ मे विशेष सहायता देकर धन का सदुपयोग करना चाहिये।

एक लिपि आन्दोलन--भारतीयों को एक सूत्रता मे लाने के लिए जिन साधनो की आवश्यकता है उन मे से एक सर्व सामान्य भाषा वा राष्ट्र भाषा के अवलम्बन के अतिरिक्त विविध प्रान्तीय भाषाओं के लिए एक लिपि का प्रयोग भी है। पूज्य महात्मा गाधी जी भी इस एक लिपि आन्दोलन के प्रबल समर्थको मे से थे। एक लिपि का प्रश्न इस शीर्षक से जो लेख उन्होने २१-७-१९२७ के 'नवजीवन' मे लिखा था उस के मुख्यांशो को इस प्रसङ्ग मे हम उद्धृत किए बिना हम नही रह सकते। उन्हो ने लिखा था कि 'सचमुच मेरा दृढ विश्वास है कि भारत की तमाम भाषाओ के लिए एक ही लिपि का होना फायदमन्द है और वह लिपि देवनागरी ही हो सकती है। यदि तमाम व्यवहार और राष्ट्रीय कार्यो के लिए बंगाली, गुरुमुखी, सिन्धी, उडिया, गुजराती, तिलगू, कन्नडी मलयालम तामिल, आदि सब लिपियों के स्थान पर देवनागरी का उपयोग होने लग जाए तो वह एक भारी प्रगति होगी। उस से हिन्दू भारत सुदृढ हो जाएगा और भिन्न २ प्रान्त एक दूसरे के अधिक निकट आ जाएगे। प्रत्येक भारतीय अपने अनुभव से जनता है कि नवीन लिपि को भली भाति सीखने मे कितनी देर लगती है। इस लिए हमे एक ऐसी सर्व सामान्य लिपि की जरूरत है जो जल्दी से जल्दी सीखी जा सके। और देवनागरी के समान सरल, जल्दी सीखने योग्य और तैय्यार लिपि दूसरी कोई है ही नही। इत्यादि

यह प्रसन्नता का बात है कि इस एक लिपि आन्दोलन की ओर विद्वानो का ध्यान आकृष्ट हो रहा है। कवीन्द्र रवीन्द्र जी की गीताञ्जलि देवनागरी लिपि म प्रकाशित हो चुकी है। माध्व [illegible] आदि कई कर्णाटक भाषा के ग्रन्थ भी देवनागरी लिपि म नकल चुके है जिन की सहायता से ही पहले [illegible] कर्णाटक भाषा का सुगमता से अभ्यास किया था। यदि देवनागरी लिपि म सब प्रान्तीय भाषाओ के ग्रन्थ छपने लगे तो उन से लाभ उठाना सब के लिए

सुगम हो जाएगा । श्री मावलङ्कर जी अध्यक्ष भारतीय राष्ट्र ससत् आदि महानुभावों ने भी पिछले दिनो प्रवासी बग साहित्य सम्मेलन मे इस एक लिपि आन्दोलन का समर्थन करते हुए देवनागरी लिपि को ही ऐसी लिपि बताया है। माननीय श्री प० जवाहिर लाल जी ने भी देवनागरी लिपि ही राष्ट्र लिपि हो सकती है, इसका स्पष्ट प्रतिपादन किया यह हर्ष की बात है। यद्यपि उन के इस कथन से हम सहमत नहीं हो सकते कि हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने का आन्दोलन सास्कृतिक व देश हित की दृष्टि से नहीं किन्तु सकुचित राजनैतिक दृष्टि कोण से किया जा रहा है। उन की यह धारणा यथार्थ नहीं है। देश के वास्तविक हित और विशाल दृष्टि से ही यह आन्दोलन किया जा रहा है।

भारतीय विश्व विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम--

भारतीय विश्वविद्यालयों मे शिक्षा का माध्यम क्या होना चाहिये इस विषय मे कुछ मासों से पर्याप्त चर्चा समाचार पत्रों और सभा समितियो मे चल रही है। इससे तो प्राय सभी सहमत हैं कि अग्रेजी जैसी विदेशी भाषा शिक्षा का माध्यम न रहनी चाहिये यद्यपि ५ या १० वर्षो तक अग्रेजी ही शिक्षा का माध्यम रहे ऐसा प्रतिपादन करने वाले अनेक सुशिक्षित महानुभाव हैं। गत वर्ष नई देहली मे विश्वविद्यालयो के उपाध्यक्षों (वाइस चान्सलर्स) की सभा ने ऐसा ही निश्चय किया था। अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन के रेवा अधिवेशन मे यह निश्चय किया गया कि प्रान्तीय भाषा ही अन्त तक शिक्षा का माध्यम रहे तथापि राष्ट्र भाषा का अध्ययन अनिवार्य रूप से विश्वविद्यालय में अन्तिम कक्षा तक कराया जाए। भारत सरकार ने भी इस विचार से अपनी सहमति प्रकट की है किन्तु हमारी सम्मति मे भिन्न २ विश्वविद्यालयों मे भिन्न २ प्रान्तीय भाषाओं के शिक्षा का माध्यम होने से वह सास्कृतिक एकता की भावना उत्पन्न न हो सकेगी जो राष्ट्र की उन्नति के लिये अत्यन्त आवश्यक है। पारिभाषिक शब्द भिन्न २ प्रान्तीय भाषाओं मे पृथक् २ होने से विज्ञानादि के उच्च अध्ययन मे परस्पर सहयोग न रह सकेगा। एक प्रान्त के विद्यार्थी यदि अध्ययनार्थ दूसरे प्रान्त मे जाए तो प्रान्तीय भाषा के शिक्षा माध्यम होने से उन्हें बडी भारी कठिनाई होगी। प्रिन्सिपल अग्रवाल ने इस सबध मे जो लेख लिखा है और जो इन्डियन न्यूज क्रानिकल देहली के १४ मार्च के अङ्क मे प्रकाशित हुआ है उस से भी हम उपर्युक्त कारणों से असहमत हैं। उन्होंने भी अभी कई वर्षो तक अग्रेजी को ही शिक्षा का माध्यम बनाये रखने का विचार प्रकट किया है जो एक दास मनोवृत्ति का सूचक है। उन्होंने महात्मा गान्धी जी का नाम भी लेख के अन्त मे अपने विचारो के समर्थनार्थ लिया है किन्तु महात्मा गाधी जी तो विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम रखने के घोर विरोधी थे। ५ जुलाई सन् १९२८ के यङ्ग इन्डिया मे पूज्य महात्मा जी ने लिखा था कि विदेशी शासन की बहुत सी बुराइयों मे से देश के युवको पर विदेशी भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप मे लादने को इतिहास मे सब से बडा माना जाएगा। इस ने राष्ट्र की शक्ति को नष्ट कर दिया है। इस ने विद्यार्थियों के जीवन को छोटा कर दिया है। इस ने उन्हें सर्व साधारण से अपरिचित सा बना दिया है तथा शिक्षा को अनावश्यक रूप से व्ययबहुल बना दिया है। यदि यही प्रक्रिया चलती रही तो हमारा राष्ट्र अपनी आत्मा से रहित हो जाएगा। इस लिये शिक्षित भारत जितनी जल्दी विदेशी माध्यम के जादू से छुटकारा पा ले उतना ही यह उस के अपने लिये और लोगों के लिये अच्छा होगा।"

(अंग्रेजी से अनूदित)

राष्ट्र भाषा' के प्रश्न के शीघ्र निर्णय पर हम इसलिये भी इतना बल देते हैं कि इस के निश्चय के साथ ही अगली तैयारी हो सकती है। प्रान्तीय भाषाओं के विश्वविद्यालयों में शिक्षा माध्यम रहने से संकुचित प्रान्तीयता की भावना ही बढ़ेगी जिस के अभिशाप से माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे राष्ट्र के राजनीतिज्ञ शिरोमणि नेता जनता को सावधान करते रहते हैं। राष्ट्रीय भावना और एकता के पूर्ण विकाश के लिये राष्ट्र भाषा का जो भारती अथवा संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही हो सकती है सब भारतीय विश्वविद्यालयों मे शिक्षा का माध्यम होना अत्यन्त आवश्यक है।

उत्तम विश्वनिर्माण और शान्ति के मुख्य साधन

अमेरिका के एक सुप्रसिद्ध लेखक और वक्ता डा० शेर वूड एड्डी ने नई देहली में १७ मार्च को 'एक उत्कृष्ट तर जगत् के लिये नमूना' (A Pattern for a Better World) इस विषय पर व्याख्यान देते हुए बताया कि आर्थिक न्याय, विश्व भ्रातृत्व, प्रजातन्त्रात्मक स्वतन्त्रता और सदाचार पूर्ण एकेश्वर वाद ये चार नवीन विश्व के निर्माण के मुख्य तत्त्व हैं। इस का प्रतिपादन करते हुए डा० एड्डी ने महात्मा गान्धी जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित की और कहा कि जिन तीस देशों को उन्होंने देखा उन में महात्मा गान्धी जी के व्यक्तित्व को ही सब से उच्च पाया।

जहां तक इन चार तत्त्वों का सम्बन्ध है इस में सन्देह नहीं कि ये उत्तम जगत् के निर्माणार्थ अत्यन्त आवश्यक हैं। जब तक अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था, परस्पर विद्वेष या वैर विरोध की भावना, नास्तिकता वा एकेश्वरवाद के स्थानमे अनेक देवी देवताओं की पूजादि विद्यमान है तब तक जगत् उस उच्च स्थिति को प्राप्त नहीं कर सकता जिसके लिये हम सब उत्सुक है। इन तत्त्वों के अतिरिक्त यह भी विश्व शान्ति के लिये आवश्यक है कि सब एकेश्वर के उपासक हों। सब प्राणियो को उस परम पिता का पुत्र मान कर उन के साथ प्रेम करने वाले हों तथा धन, जाति, रंग, देश इत्यादि के आधार पर कल्पित संकुचित भावनाओं से ऊपर उठे हुए हों। अनेक मतों और सम्प्रदायों मे जब किसी को अवतार, पैगम्बर या बिचौलिया का स्थान दे दिया जाता है तथा उसके बिना कोई सच्चरित्र तथा सवथा पवित्र व्यक्ति भी मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकता ऐसा कहा जाता है तो यह भी परस्पर विरोध और घृणा का कारण बन जाता है अत एकेश्वर वाद का विशुद्ध रूप मे प्रचार विश्व शान्ति तथा उच्च विश्व निर्माण के लिये अनिवार्य है। वेदों के 'मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्याहं चक्षुषा समीक्षामहे' (यजु० ३६।१८) समानी व आकूति समाना हृदयानि व समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति।"(ऋ० १०।१९१।४) 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधु: सौभगाय। युवा पिता स्वपा रुद्र एषा सुदुघा पृश्नि सुदिना मरुद्भ्य ।।" (ऋ० ५।६०।५)

सहृदय सामनस्यमविद्वेषं कृणोमिव:। अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ।।"
(अथर्व ३।३०।१)

इत्यादि मन्त्रों मे विश्व के कल्याण, उन्नति और शांति के लिए यही उपदेश किया गया है कि सब प्राणियों को (केवल मनुष्यों को ही नहीं) हमे मित्र की दृष्टि से देखना चाहिये, हमारे संकल्प समान रूप से शुद्ध और पवित्र होने चाहिएं। हमारे हृदयों और मनों का ऐसा मेल हो जिस से शुभ कार्यो में सब का सहयोग हो, तुम सब आपस मे ऐसा प्रेम करो कि जैसे गाय नव जात बछडे के साथ प्रेम करती है, सब मनुष्य भाई २ है उन मे जन्म से कोई छोटा बडा नहीं है, परमात्मा सब का पिता है और प्रकृति वा भूमि सब की माता है ऐसा जान कर प्रेम पूर्ण व्यवहार करने से ही सब को सौभाग्य प्राप्त होता है तथा सब की वृद्धि व उन्नति होती है।

गत २२ मार्च को श्री राजा महेन्द्र प्रताप जी द्वारा प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन मे आयोजित विश्व सत्यधर्म सम्मेलन मे वैदिक धर्म और विश्वबन्धुत्व पर भाषण करते हुए मैंने इन वैदिक शिक्षाओं की ओर सब शांति प्रेमियों का ध्यान आकर्षित किया। इन वैदिक शिक्षाओं को क्रियात्मक रूप दिए बिना विश्व मे शांति की स्थापना अथवा नवीन और उच्च जगत् का निर्माण असम्भव है। केवल ऊपर की लीपा पोती से कुछ काम नहीं चल सकता। उत्तर अटलान्टिक सन्धि जो अमेरिका, इंगलैंड फ्रांस, हालैण्ड आदि देशों में इस मास हुई वह रूस आदि देशों के साथ संघर्ष को बढ़ायेगा। उस से विश्वशांति की स्थापना मे सहायता मिलेगी ऐसी हमे अणु मात्र भी आशा नहीं है। (ध दे)

आर्य समाज और लोक संघ

कई स्थानों से यह समाचार आया है कि आर्य समाज के साप्ताहिक अधिवेशनों तथा वार्षिक उत्सवों पर लोक संघ नामक एक नई राजनैतिक संस्था के समर्थन मे व्याख्यान दिये जाते है और उसे आर्य समाज और सार्वदेशिक सभा द्वारा सम्मत संस्था बतलाया जाता है। इस प्रकार के प्रचार से भ्रांति उत्पन्न होने का भय है, इस कारण निम्नलिखित स्पष्टीकरण प्रकाशित किया जाता है —

कलकत्ते के आर्य महा सम्मेलन मे आर्य समाज और राजनीति के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया था उसका अन्तिम भाग निम्नलिखित था।

आर्य संस्कृति तथा आर्य सभ्यता की दृष्टि से वर्तमान राजनीति को अधिक से अधिक प्रभावित करने के साधनो पर विचार करने तथा आर्य समाज की राजनैतिक मांगों को अंकित करने के लिये निम्नलिखित सज्जनो की समिति बनाई जाय जो ३ मास के अन्दर सार्वदेशिक सभा मे अपनी रिपोर्ट उपस्थित कर दे —

इस प्रस्ताव के अनुसार बनी हुई समिति की बैठक १४।२।४९ को दिल्ली मे हुई। विदित हुआ है कि उसनेजो प्रस्ताव स्वीकार किया उसमे लोक संघ नामकी राजनैतिक संस्था बनाने का प्रस्ताव किया गया है। वह प्रस्ताव आर्य महा सम्मेलन के राजनीति सम्बन्धी प्रस्ताव के अनुसार सार्वदेशिक सभा मे प्राप्त होगा ही। सभा का अधिवेशन २४ अप्रेल को होगा। जब तक सभा उस प्रस्ताव पर अपना मत प्रकट न कर दे तब तक लोक संघ का आर्य समाज से कोई सम्बन्ध नहीं समझा जा सकता। सार्वदेशिक सभा द्वारा निर्णय हो जाने पर उस निर्णय के अनुसार ही आर्य समाज और संघ का परस्पर सम्बन्ध स्थापित होगा। उससे पूर्व आर्य समाज का किसी भी व्याख्यान वेदी पर लोक संघ के पक्ष या विपक्ष मे प्रचार करना सर्वथा अनुचित है। आर्य समाज के अधिकारियों को सावधानता पूर्वक अपनी व्याख्यान वेदी की मान रक्षा करनी चाहिए। उसे सामाजिक राजनैतिक वाद विवाद का अखाड़ा नहीं बनने देना चाहिए।

(प्रो०) इन्द्र विद्यावाचस्पति
प्रधान
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली
ता० २५।३।४९

आल इण्डिया रेडियो

आल इण्डिया रेडियो और सार्वदेशिक सभा के मध्य जो पत्र व्यवहार हो रहा है उससे हमे यह सूचना मिली है कि धार्मिक संस्थाओं के प्रोग्राम के विषय मे भारत सरकार विचार कर रही है।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
एम० ए०
मन्त्री सार्वदेशिक सभा दिल्ली।

मनु के महत्वपूर्ण उपदेश

सामाजिक सघटन

(५)

[लेखक—श्री प० गगा प्रसाद जी उपाध्याय एम ए मन्त्री सार्वदेशिक सभा]

[गताङ्क से आगे]

मनु के वर्गीकरण मे भेदभाव को देखना मनु के उद्देश्यो को न समझने के कारण है। यह जो शिकायत है कि वर्ण भेद ने हिन्दू जाति को नष्ट कर दिया यह मनु का दोष नहीं अपितु मनु की आज्ञा भङ्ग करने का दोष है। यदि हिन्दू समाज मनु की आज्ञा के अनुसार हर व्यक्ति को अपना वर्ण चुनने की आज्ञा देता और अस फल न होने पर ब्राह्मण से शूद्र या सफल होने पर शूद्र से ब्राह्मण बनने देता तो उन्नति मे कोई बाधा न पडती और समाज अपके निर्दिष्ट उद्देश्य की भली भाति प्राप्ति कर सकता। परन्तु जब वरण की स्वतन्त्रता नहीं रही तो वर्ण ही नही रहा। लोग अपने माता पिता या पूर्वजा के वर्ण को बिना वरण किय हुये ही अपना समझने लगे और बिना कर्त्तव्य पालन के उन पर चिपटे रहे इसलिये वही दशा हुई जैसी काठ के हाथी या चमडे की हिरण की हो सकती है। यह सब वर्ण व्यवस्था के त्यागने के कारण हुआ।

सिर, बाहू, उरू और पेट की उपमा देकर एक और बात स्पष्ट कर दी गई। अर्थात् पृथक् होते हुये भी यह चारो कोटिया पृथक् नही है। स्वस्थ शरीर के अङ्ग तो तभी तक अङ्ग है जब तक उनमे परस्पर सहकारिता रहे। कटा सिर, कटी भुजा, कटा पेट और कटे पैर भूतकाल मे भले ही शरीर के अङ्ग रहे हो अब तो पृथक् होने के कारण वे शरीर के अङ्ग नही और न वह शरीर शरीर है। न्यायदर्शन मे कहा है —

चेष्टेन्द्रियार्थाश्रय शरीरम्।

अर्थात् जब तक शरीर की इन्द्रिया अपना अपना कार्य करे वह शरीर है। ऐसे कटे सिर को जो अपने पैरो से सम्पर्क नही रखता लाश तो कहते है शरीर नही। जिस समाज मे सिर पैर से और पैर सिर से सम्पर्क नही रखता वह मनु निर्दिष्ट समाज कदापि नहीं।

मनु स्मृति के विरुद्ध एक बड़ी शिकायत यह है कि उसने ब्राह्मणो को बढा रक्खा है और अन्य वर्ण दब गये है, शूद्र तो नितान्त ही। यह ठीक है कि किसी वस्तु का दुरुपयोग भी हो सकता है। काठ के हाथी पर चढने वाले यदि काठ के हाथियों को ही हाथी समझलें तो वे हाथी की सवारी का लाभ न उठा सकेगे इसी प्रकार यदि वर्ग विशेष को ब्राह्मण कहा जाने लगे जिसमे मूर्ख, दम्भी, पाखण्डी, ज्ञानी, तपस्वी सब धान बारह पसेरी हो जाय तो ब्राह्मण की प्रतिष्ठा से भयकर परिणाम होगे ही। परन्तु यदि ब्राह्मण को ज्ञान साधक और सिर का प्रतिनिधि माना जाय तो ब्राह्मण की कौन प्रतिष्ठा न करेगा? यदि ब्राह्मण वही है जो पढता, पढाता, यज्ञ करता कराता, दान देता और

दान लेने का अधिकारी है तो ब्राह्मण की प्रतिष्ठा से इनकार ही कौन करेगा ? मनुष्य के शरीर मे सिर सब से ऊ चा क्यो है और आखो को पैर की एडी मे क्यो नही लगाया गया, माथे पर क्यो लगाया गया है इसका प्रयोजन प्रकृति माता से पूछिये और प्रभु पिता से या अपनी बुद्धि से पूछिये। यह शिकायत व्यर्थ है कि सिर को ऊँचा बना दिया। ससार के सब देशो और सब युगो मे ज्ञान का मान रहा है। जहा ज्ञान का मान नही वहा नाश को समीप ही समझना चाहिये "विद्वान् सर्वत्र पूज्यते" और विद्वान् का नाम ही ब्राह्मण है। ब्राह्मण कुल मे जन्म पाने वाले का नाम ब्राह्मण नही। वर्णीकरण कल्पित वर्गीकरण नही है।

अब देखना चाहिये कि ब्राह्मण को कौन से अधिकार दिये गये है जिससे आपको मनु से शिकायत है। प्रथम तो ऊपर के श्लोको से विदित है कि मनु ने कर्म बताये है अधिकार नही। पढना, पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना और दान यह पांचो कर्म कठिन हैं, सब कर्मो से कठिन है। ऐसा कठिन कोई काम है ही नही। यदि ऐसे कठिन कर्मो को निस्वार्थ भाव से करने वाला किसी दान दाता की दान शीलता को सफल बनाने के लिये दान भी लेवे तो इसमे शिकायत क्या है ? दान न तो भिक्षा है और न अपने काम का मोल। ब्राह्मण के काम का कुछ मोल तो हो ही नही सकता। कोई शिष्य अपने गुरु के उपदेशों का धन के रूप मे क्या मोल चुका सकता है ? जिसने मुझे ज्ञान दिया उसने तो उससे भी अधिक उपकार किया जिसने मुझे लाख रुपये दिये। क्योकि ज्ञान से रुपये कमाने के पश्चात भी उस ज्ञान की पू जी सुरक्षित बनी रहती है। ब्राह्मण, जाति के ज्ञान-भडार को भरता है। जाति उसके बदले मे उसे दे ही क्या सकती है। ब्राह्मण न ज्ञान बेचता है और न भिक्षा मागता है। दान लेता है, कर के रूप मे नही। श्रद्धा पूर्वक दी हुई दक्षिणा के रूप मे। इसमे दान दाता का उपकार है। परन्तु क्या आपने देखा कि ब्राह्मण को ब्राह्मण बनने के लिये मनु ने कितनी कठिन नियंत्रणा लगादी ? देखिये –

सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव।
अमृतस्येव चाकाङ्क्षेदवमानस्य सर्वदा।

अर्थात ब्राह्मण सदा सम्मान को विष समझ कर उससे बचता रहे और अपमान को अमृत समझे।

यह क्यो कहा ? ब्राह्मण को दूसरों को सत्यासत्य का उपदेश देना है। दूसरो को उनके दोषों से बचाना यह काम बड़ा कठिन है। लोग उसके शत्रु हो जायं या उसका अपमान करने लगे। बहुत से लोग सच कहने से इस लिये घबराते हैं कि उनकी कीर्ति में बट्टा लगेगा। प्राय देखा गया है कि कीर्ति का प्रलोभन धन के प्रलोभन से भी अधिक तीव्र है। नाम को बचाने के लिये लोग बडे से बडा पाप कर बैठते हैं। मनु के इस छोटे से श्लोक मे बडी भारी मनोवैज्ञानिक सचाई है। मनु का संसार भर के लिये तो यह उपदेश है, कि ब्राह्मण की उसी प्रकार प्रतिष्ठा करो जैसे रोगी कडवी दवा की करता है। दूसरी ओर ब्राह्मण को यह उपदेश है कि तुम संसार के सम्मान की परवाह न करते हुये अपने कठिन और कड़वे कर्त्तव्य का पालन करो। गालियो की परवाह मत करो।

यो ऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
सजीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वय ॥

जो ब्राह्मण वेद नहीं पढता और धन, विषय आदि के लोभ में फसा रहता है वह जीते जी अपने वंश सहित शूद्रत्व को प्राप्त हो जाता है। कितना कडा नियम है ?

तपोविशेषैर्विविधैर्व्रतैश्च विधिचोदितै ।
वेद कृत्स्नोऽधिगन्तव्य सरहस्यो द्विजन्मना ॥

अर्थात् विशेष तप और व्रतो को विधिवत् पालन करके सम्पूर्ण वेद को रहस्य समेत पढे। जो लोग ब्राह्मण को केवल दान लेनेवाला समझते हैं उनको नीचे का श्लोक पढना चाहिये—

प्रतिग्रहाद् याजनाद् वा तथैवाध्यापनादपि ।
प्रतिग्रह प्रत्यवर प्रेत्य विप्रस्य गर्हित ॥
१०।३४।१०६

दान लेना, यज्ञ कराना और पढाना। इनमे सबसे बुरा दान लेना है। इससे ब्राह्मण का (कुसस्कार पडने के कारण) भविष्य बिगड जाता है।

जपहोमैरपैत्येनो याजनाध्यापनै कृतम् ।
प्रतिग्रहनिमित्त तु त्यागेन तपसैव च ॥
१०।३५।१११

यदि यज्ञ करने या पढाने म कोई पाप होजाये तो जप या होम से उसका प्रायश्चित हो सकता है। परन्तु दान लेने मे जो पाप हो जाय वह तो विशेष त्याग या तप से ही दूर हो सकेगा। अर्थात् ब्राह्मण के लिये दान लेना तलवार की धार पर चलना है।

शिलोञ्छमप्याददीत विप्रोऽजीवन् यतस्तत ।
प्रतिग्रहाच्छिल श्रेयास्ततोऽप्युञ्छ प्रशस्यते ॥
१०।३६।११२

यदि ब्राह्मण के पास जीविका न हो तो क्या करे। शिल और उञ्छ से काम चलावे। दान लेन से शिल अच्छा और शिल से उञ्छ अच्छा।

शिल और उञ्छ क्या चाज हैं ? सुनिये जब किसान खेत काटकर घर को लेजाय तो कुछ अन्न खेत मे रह जाता है उसको 'शिल' कहते हैं। ब्राह्मण को चाहिये कि उन खेतो से बीन लावे और उसपर गुजारा करे। शिल बीनने के पश्चात् भी कुछ दाने रह जाते है जिनका बीनना कठिन होता है। उसे उञ्छ कहते है। मनु का कहना है कि ब्राह्मण को दान की परवाह नहीं करनी चाहिये। दान न मिले तो दान के लिये मारा मारा न फिरे। खेतों से शिल और उञ्छ बीनकर खावे। धन और मान की जो इस प्रकार परवाह न करे और जाति के ज्ञान कोष की वृद्धि के लिये दरिद्रता और भूख की यातनाये भी सहनी पडे तो सहे वह है ब्राह्मण।

अद्रोहेणैव भूतानामल्पद्रोहेण वा पुन ।
या वृत्तिस्ता समास्थाय विप्रो जीवेदनापदि ॥
४।२।२

अर्थात् ब्राह्मण को ऐसा काम करके निर्वाह करना चाहिये जिससे किसी प्राणी को हानि न पहुँचे या यदि पहुचे भी तो ऐसी जो लगभग न पहुचने के बराबर।

ऐसे तपस्वी और परार्थी ब्राह्मण के प्रति ससार का भी तो कर्त्तव्य है। क्या इतने त्याग के बदले समाज ब्राह्मण की साधारण भक्ति और शुश्रूषा भी न करे ? ऐसा करने से तो ससार कृतघ्नता के घोर गर्त मे गिर जायगा। इसलिये मनुजी ने कहा—

उत्तमागोद्भवा यज्ज्यैष्ठयाद् ब्रह्मणश्चैव धारणात् ।
सर्वस्यैवास्य सर्गस्य धर्मतो ब्राह्मण प्रभु ॥
१।८८।९३

जैसे शरीर मे सिर या मुख बडा है ऐसे ही ब्राह्मण भी बडा है क्योकि वह वेद को धारण करता है। समस्त जाति को ज्ञान प्राप्त करता है अत वह सबका प्रभु या मालिक हुआ।

भूताना प्राणिन श्रेष्ठा प्राणिनां बुद्धिजीविन ।
बुद्धिमत्सु नरा श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणा स्मृता ॥
१।८८।९६

ससार की भौतिक अभौतिक सभी चीजों मे प्राणी श्रेष्ठ हैं। प्राणियों मे भी वह जिनमे बुद्धि हो। बुद्धि वालों मे मनुष्य और मनुष्यो मे ब्राह्मण ॥

इसमे क्या असत्य हुआ ?

ब्राह्मणेषु च विद्वासो विद्वत्सु कृतबुद्धय ।
कृतबुद्धिषु कर्तार कर्तृषु ब्रह्मवेदिन ॥

ब्राह्मणों मे भी कई श्रेणी के सत्पुरुष होगे। उनका तारतम्य दिखाते हैं—ब्राह्मणो म वह श्रेष्ठ हैं जो विशेष ज्ञान रखते है। उनमे वह जिनकी सूझ मे कुछ चमत्कार है। चमत्कृत बुद्धि वाला म वे जो नये नये आविष्कार कर सकते हैं। और आविष्कार करने वालों से भी वे श्रेष्ठ है जो परम उत्कृष्ट ब्रह्मविद्या वाले है।

उत्पत्तिरेव विप्रस्य मूर्तिर्धर्मस्य शाश्वती।
स हि धर्मार्थमुत्पन्नो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥
१।१४।९८

सदा रहने वाले (सनातन] धर्म की रक्षा के लिये ही तो ब्राह्मण के पद का समाज निर्माण मे स्थान नियत किया गया है। ब्राह्मण उत्पन्न ही धर्म के लिये हुआ जिससे मोक्ष की प्राप्ति मे सहायता मिले। अर्थात् ब्राह्मण को अपनी और अन्य जीवों की मुक्ति के लिये प्रयत्नशील रहना चाहिये।

ब्राह्मणो जायमानो हि पृथिव्यामधिजायते।
ईश्वर सर्वभूताना धर्मकोशस्य गुप्तये ॥
१।१५।९९

ब्राह्मण के पद की नियुक्ति ही इसलिये की गई है कि वह समस्त पृथ्वी मे सर्वोपरि हो। धर्म कोश की रक्षा करने के कारण वह सब प्राणियो का अधिपति है।

जो लोग ब्राह्मण की उच्चता की शिकायत करते है अथवा जो बनावटी ब्राह्मण [काठ के हाथी] बिना किसी गुण विशेष के जगत् के स्वामी बने फिरते है वह श्लोक के तीसरे चरण पर तो दृष्टि डालते हैं और साथ ही चौथे चरण को भूल जाते है। ब्राह्मणों की प्रमुखता धर्म की रक्षा के कारण है अन्यथा नहीं।

सर्वस्व ब्राह्मणस्येद यत्किंचिज्जगतीगतम्।
श्रैष्ठयनाभिजनेनेद सर्व वै ब्राह्मणोऽर्हति ॥

मनुजी ब्राह्मण के प्रति कहते है "देखो! ससार मे जो कुछ है सब ब्राह्मण का ही है। ब्राह्मण ही सब से श्रेष्ठ है। वही इस सब जगत् का रक्षा करने मे समर्थ है।

वस्तुत ब्राह्मण और ब्रह्म मे बहुत सा सादृश्य है। उपनिषद् मे कहा भी है कि जो ब्रह्म को जानता है वह ब्रह्म ही सा होजाता है। ब्रह्म वह महती शक्ति है जो बिना स्वार्थ के केवल परोपकारार्थ जगत् की रक्षा करती है। ब्राह्मण भी मनुष्यों मे सबसे अधिक नि स्वार्थ भाव से जगत् का

उपकार करता है । इसीलिये वह सबका प्रभु हुआ ।

स्वमेव ब्राह्मणो भुङ्क्ते स्वं वस्ते स्वं ददाति च।
आनृशंस्याद् ब्राह्मणस्य भुञ्जते हीतरे जनाः ॥
[१।१०१]

ब्राह्मण अपना ही खाता है, अपना ही पहनता है और अपना ही दान करता है। ब्राह्मण की कृपा से ही अन्य सब जीते है।

यह एक प्रकार की अत्युक्ति और ब्राह्मण की अनुचित श्लाघा प्रतीत होती है। परन्तु विचार दृष्टि से देखा जाय तो ऐसा है नहीं। यदि धर्म की रक्षा करने वाले और सत्यासत्य का बोध कराने ब्राह्मण न हो तो समाज का ढाचा ही बिगड जाय। लोग अन्धाधुन्ध करने लगे। लोगो को खाने, पहनने और दान देने के लिए कुछ न मिले। इसलिए ससार भर के मनुष्यो की ब्राह्मण के प्रति ऐसी भावना होना चाहिए। जिससे ब्राह्मण को तप त्याग तथा धर्म की रक्षा करने मे कठिनाई न पडे। मनु जी दो भिन्न २ प्रवृत्तियो पर बल देते है। ब्राह्मण से कहते है तुम त्याग करो"। अन्यों से कहते है 'तुम सब कुछ ब्राह्मण को देने के लिए तैयार रहो"। कैसा अच्छा उपदेश है। एक दूसरे के प्रेम की यह पराकाष्ठा होती है। इससे मैत्री बढती है। यदि इसके विप रीत ब्राह्मण सब कुछ मागे और लोग देने के लिए तैयार न हो तो आपाधापी हो जाय। स्वार्थ बढ जाय। वर्तमान हिन्दू जाति मे यही हुआ। ब्राह्मणो ने त्याग छोडकर दक्षिणा चाही। लोगों ने उनका तिरस्कार किया। भिक्षुक का कौन मान करता? ब्राह्मण कर्तव्यविहीन हुए। धर्म नष्ट हुआ। समाज पतित हुआ और वैदिक सभ्यता बदनाम हुई। परन्तु इसमे मनु का दोष नहीं था। यदि काशी की गगा मे काशी की गलियों का गदा पानी आ मिले तो इसमे गगोत्री को तो दोष नहीं देना चाहिए।

मनु ने तो ब्राह्मणो को दान का अधिकारी बताते हुए भी उनको दान लने के दोषों से भी सावधान किया क्योकि दान लेकर उसका समुचित प्रयोग कठिन है और दान लेने से आत्मा के कलुषित हो जाने की महती आशका है। इस विषय मे नीचे के श्लोक विचारणीय है। आज कल के ब्राह्मण कहलाने वाले विद्वान या अविद्वान् सभी लोगों को इन श्लोको को ध्यान से पढना चाहिए —

प्रतिग्रह समर्थोऽपि प्रसग तत्र वर्जयेत्।
प्रतिग्रहेण ह्यस्याशु ब्राह्म तेज प्रशाम्यति ॥
[४।१८६]

जिसको दान लेन का अधिकार है उस ब्राह्मण को भी चाहिए कि दान लेने का विचार छोड देवे। दान लेने मात्र से ब्रह्म तेज नष्ट हो जाता है।

(क्रमश)

बुढ़ापे की समस्या
और
वान प्रस्थ आश्रम का महत्त्व

[लेखक श्री गगा प्रसाद जी एम ए रिटायर्ड चीफ जज जयपुर]

इग्लैंड के एक साधन सम्पन्न लार्ड (Rt Hon ble Viscount Nuffield G B E F R S) ने १५००००० पाउण्ड (लगभग २५ करोड रुपय) का दान करके एक ट्रस्ट वा निधि दीन बूढ लोगों क सुख साधन व इस बात की जाच क लिय स्थापित की है कि बूढे लोगों को क्या क्या कठिनाइया व कष्ट सहने होते हैं। ट्रस्टियो को यह अधिकार दिया गया है कि वे अन्य दाताओं से इस निधि की वृद्धि के लिए धन ग्रहण करे। श्री महाराणी राजराजेश्वरी इस निधि की सरक्षिका है और इग्लैंड के ७ प्रमुख डाक्टर सदस्य है।

(२) इस ट्रस्ट की ओर से एक कमेटी श्री Rowntra L T O की अध्यक्षता मे बूढे लोगों की सामाजिक दशा की जाच (Social Survey) के लिये नियत की गई थी। उसकी रिपोर्ट Old People नामक पुस्तक के रूप मे प्रकाशित हो चुकी है। दूसरी कमेटी श्री G W Reddick की अध्यक्षता मे बूढों की शारीरिक व मानसिक दशा Physical & Mental Survey की जाच के लिये नियत हुई है। उसकी रिपोर्ट Social Medicine of old Age पुस्तक के नाम से प्रकाशित हुई है जिसके देखने का मुझ को अवसर मिला। पुस्तक मे ७ अध्याय व १३६ पृष्ठ है-मूल्य ५ शिलिंग है।

इस कमेटी ने अपना कार्य क्षेत्र वूल्वर हैंप्टन (Wolverhampton) नगर को रक्खा जिसकी मनुष्य सख्या १॥ लाख है जो न बहुत बडा है न बहुत छोटा और जिसमे अमीर, गरीब और सब व्यवसाय करने वाले मनुष्य रहते हैं। कमेटी के कार्य का ढग यह था कि नगर के बूढे लोगो मे ५८३ पुरुष स्त्री ऐसे छांटे गये थे जिनको कमेटी नमूने Samples के तौर समझनी थी। प्रश्नों की एक सूची Questionnaire तैयार कर ली गई था। उनके उत्तर लिख लिये जाते थे। ६० वर्ष की आयु से अधिक आयु की स्त्रिया व ६५ वर्ष से अधिक आयु के पुरुष बूढ माने गये दो वर्ष जाच मे लगे। अन्त म सब उत्तरों का मिलान करके उस कमेटी की medical sub committee on the causes & results of aging की रिपोर्ट तैयार की गई। वही social medicine of Old Age पुस्तक के नाम से प्रकाशित हुई है।

(३) बूढ़े लोगों की शारीरिक जॉच

अध्याय १ व २ मे बूढों की शारीरिक जाच का फल दिखलाया गया है। इसमे सब शारीरिक रोगों का वर्णन है, व दात आँख कान आदि की

दशा, चलने फिरने की शक्ति, नींद आदि सब शारीरिक दशा सम्बन्धी बातो का हाल है। परिणाम यह निकला कि ७४ प्रतिशतक मनुष्य जॉच के समय रोगी थे ४४ प्र० श० जाच से पहले ३ वर्षो मे रोगी रह कर चिकित्सा करा चुके थे। ७६ प्र० श० ऐसे थे जिनको कोई रोग इस बीच नहीं हुआ। शारीरिक दशा के विचार से ३ श्रेणियाँ रक्खी गई। ७४ प्र० श० पहली श्रेणी मे ४४ दूसरी व ७६ तीसरी मे पाये गये। इनका सविस्तार वर्णन बहुत रोचक है, और बहुत प्रकार का है। उदाहरण के लिये ३५ प्र० श० मनुष्य ऐसे थे जिन को सीढी पर चढने उतरने मे कष्ट होता था।

(४) मानसिक जॉच

अध्याय ३ मे मानसिक जॉच का वर्णन है। इस मे जिन बूढों की जॉच की गई उन की स्मृति शक्ति अपनी रक्षा व सेवा करने की सामर्थ्य अपने समय का उपयोग, चिन्ता आदि का वर्णन है। अकेले रहने की बहुतो को शिकायत पाई गई। अकेलेपन को ग्रन्थकर्ता ने well-known calamity of old age अर्थात् बुढ़ापे की प्रसिद्ध व्यथा लिखा है। भारत की सस्कृति व इङ्गलैंड वा योरप की सस्कृति मे जो बड़ा भेद है उसका यही एक अच्छा उदाहरण है। भारत मे बूढ़ो को अकेला रहना वाछनीय समझा जाता है। हमारे शास्त्रो की शिक्षा है कि जब पुत्र का भी पुत्र हो जाय, बाल पक जॉय तो घर को छोड़ कर बन मे या एकान्त मे वास करे। इस के विषय मे वानप्रस्थ आश्रम के प्रसग मे मै नीचे फिर लिखूंगा।

मानसिक दशा की जॉच मे भी लगभग ८१ प्रतिशतक लोग साधारण Normal अवस्था मे पाये गये। ११ प्र० श० मे कुछ थोड़ी अयोग्यता Slight disability पाई गई। ३ प्र० श० कुछ विचित्र बुद्धि के Eccentric थे और ४ प्र० श० बुद्धिहीन Dementid पाये गये। २ प्रतिशत हस्पतालो मे थे।

(५) गृह प्रबन्ध आदि

अकेले रहने मे बहुतो ने कष्ट वा असुविधा बतलाई। बहुत से वृद्ध अपने नातेदारो वा सन्तान के साथ रहते पाए गये। पुत्र वा वधू की अपेक्षा पुत्री व जामाता के साथ रहना अच्छा माना जाता है। लगभग आधे मनुष्य ऐसे थे जो पहले रोगी रहे। रोग की दशा मे सेवा व शुश्रूषा अधिकतया स्त्रिये करती हैं। ६४ स्त्रिये रोगी सेवा nursing का काम करती थी। घर का प्रबन्ध बूढ़े लोग व उनके साथ रहने वाले युवा बाट कर करते थे। परन्तु युवा मनुष्य बूढ़ो के कामो का करना अधिकाश मे भार रूप समझते है। पश्चिम सभ्यता का ऐसा ही रूप है।

(६) वानप्रस्थ आश्रम का महत्त्व

पूर्वोक्त रिपोर्ट पढ़ने से वानप्रस्थ आश्रम का महत्त्व बहुत स्पष्टता से सिद्ध होता है। बुढ़ापे की अवस्था मे घर मे पडे रहना घर वालो को भी भार रूप लगता है और बूढ़े लोगो को भी दु खदायी होती है। शास्त्रो की शिक्षा के अनुसार वानप्रस्थ आश्रम मे प्रवेश करने वा एकान्त वास से मनुष्य अपनी आध्यात्मिक उन्नति कर सकता है, कुछ समाज की सेवा कर

सकता है और आगे के लिये सन्यास आश्रम के द्वारा अधिक सेवा करने की योग्यता प्राप्त कर सकता है।

आश्रम व्यवस्था के बिगड़ जाने से वानप्रस्थ आश्रम का तो लोप ही हो गया था। ऋषि दयानन्द ने उसका पुनरुद्धार किया और आर्य समाज ने कुछ आश्रम वानप्रस्थियों के लिये खोले। सबसे पहला आश्रम ज्वालापुर मे श्री स्वामी नारायण स्वामी जी के उद्योग से स्थापित हुआ, पीछे और आश्रम भी बने और बनने लगे है। ऐसे आश्रमो की जितनी वृद्धि हो देश और समाज के लिये लाभ दायक होगा।

बूढ़ो के लिये अन्यशालाएं

पूर्वोक्त ग्रन्थ के अन्त मे अध्याय ७ मे यह प्रस्ताव रक्खा गया है कि वृद्ध लोगो के लिये कुछ (Hostels) शालाएं इस उद्देश्य से होनी चाहिये कि जब उनका मन अकेले पन के कारण ऊबने लगे तो वे कुछ समय के लिये ऐसी शालाओ मे जाकर रहे। भाव यह है कि **समाज वाद** (socialism) के सिद्धान्तो के अनुसार जैसे सरकारी नौकरो को बुढापे मे पेशन मिलता है ऐसे और लोग भी जो अन्य व्यवसाय करते है एक प्रकार से देश व समाज की सेवा करते है। वे भी बेकार होकर पेशन पाने के अधिकारी है। इङ्गलैण्ड में इस समय मजदूर दल का शासन है जो **समाज वाद** (Socialism) के अनुयायी है और (Old Age pension) बूढो को पेशन देने के समर्थक हैं। यदि बूढे लोगो के भोजन व वस्त्र के लिये उन को पेशन देना उचित है तो उनके रहने के लिये पूर्वोक्त प्रकार की शालाए (Hostles) बनाना भी न्याय्य वा उचित है। देश वा समाज के लिये भी ऐसी शालाए उपयोगी होंगी क्यो कि जो वृद्ध लोग वहा जाकर रहेगे वे अनुभवी होने से कुछ समाज की सेवा कर ही सकते हैं और अपने जैसे अन्य वृद्ध लोगो के सहवास व सहयोग से और अधिक सेवा करने के योग्य बन सकते है।

(८) भारतवर्ष मे भी ऐसी शालाऐ उपयोगी होगी। जो लोग आर्य्य समाजी नही वा पूरे आर्य्य समाजी नही होना चाहते व आर्य्य समाज के आश्रमो मे नही लिये जा सकते और नित्य सन्ध्या हवन आदि के नियमो को कडा बन्धन समझ कर उन मे जाना भी नही चाहेगे। परन्तु ऐसी वृद्ध शालाओ मे जिन का ऊपर वर्णन किया गया वे स्थान पा सकते है। उन शालाओमे भी नैतिक जीवन के कुछ नियम और दिन चर्य्या की व्यवस्था का होना आवश्यक ही है। इस लिये जो वृद्ध लोग ऐसी शालाओ मे रहे वे घरो मे रहने की अपेक्षा अपने जीवन को अधिक सुखमय बना सकते है और परस्पर के सहवास वा सहयोग से देश की अनेक प्रकार से सेवा के योग्य बन सकते हैं। इस लिये आर्य्य वानप्रस्थ आश्रमो के अतिरिक्त ऐसी भी कुछ शालाए स्थापित होनी चाहिये, जो वृद्ध लोग उन मे रहे उन से किराया वा चन्दे के रूप से कुछ धन लेना उचित होगा जिस से उक्त शालाओ का खर्च चल सके।

अस्पतालो मे जो (Private Wards) रोगियो के कमरे होते है उन मे भी रोगियों से किराया लिया जाता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि पूर्वोक्त शालाए अस्पतालो से भिन्न होंगी।

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के अनमोल रत्न

[लेखक—श्री लब्भूराम जी आनन्द आश्रम लुधियाना]

आज संसार मे मनुष्य, मनुष्य के रक्त का प्यासा हो रहा है और बन्धुभावना का गला घोटा जा रहा है। ऐसी अवस्था मे वेद भगवान् मनुष्य मात्र को मित्र के समान देखने का मंगलमय उपदेश करते हैं। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश मे वर्णन किया है कि जो स्वयं धर्म पर चल कर सब संसार को धर्म पर चलाते हैं जिससे आप और सब संसार को इस लोक अर्थात वर्तमान जन्म मे, परलोक अर्थात् दूसरे जन्म मे स्वर्ग अर्थात् सुख का भोग कराते हैं वही धर्मात्मा जन सन्यासी और महात्मा हैं। भारतभूमि ने समय २ पर जिन महान् आत्माओं को जन्म दिया है उन में ऋषि दयानन्द जी का उच्च स्थान है। उन्होंने अपनी आवाज उस समय बुलन्द की जब कि कोई सुनने को भी तैयार न था। आज हम देखते हैं कि जिन बातों का भगवान् दयानन्द ने प्रचार किया उनको आज अपनाया जा रहा है। परन्तु आर्य समाज मे पहिले की अपेक्षा अब स्वाध्याय का वह शौक नहीं रहा इस लिये प्रत्येक आर्य पुरुष को ऋषि कृत ग्रन्थों का स्वाध्याय करते हुए अपने जीवन को उच्च बनाने का यत्न करना चाहिये। इसी मे हमारा कल्याण है। आर्य समाज के नियम तीन मे लिखा है

"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्य्यों का परम धर्म है ॥ ३ ॥ वेद सब विद्याओं से युक्त हैं, अर्थात उनमे जितने मन्त्र और पद हैं वे सब सम्पूर्ण सत्य विद्याओं के प्रकाश करने वाले हैं ॥ जितनी सत्य विद्या संसार मे हैं वह सब वेदों से ही निकली हैं ॥ (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका) जैसे परमात्मा ने पृथिवी जल, अग्नि, वायु, चन्द्र सूर्य, अन्नादि पदार्थ सबके लिये बनाये हैं वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये गये हैं। जैसे माता, पिता अपने सन्तानों पर कृपा दृष्टि कर उन्नति चाहते है वैसे ही परमात्मा ने सब मनुष्यो पर कृपा करके वेदो को प्रकाशित किया है जिससे मनुष्य अविद्यान्धकार भ्रम जाल से छूट कर विद्या विज्ञानरूप सूर्य को प्राप्त होकर अत्यानन्द मे रहें और विद्या तथा सुखो की वृद्धि करते जायं। जिस बात मे ये सहस्र एक मत हों वह वेद मत ग्राह्य है और जिसमे परस्पर विरोध हो वह कल्पित, झूठा, अधर्म अग्राह्य है।
(सत्यार्थप्रकाश)

अस्पताल रोगियो के लिये होते है? वे शालाए वृद्ध मनुष्यों के लिये होंगी। आशा है कि आर्य समाजों सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभाओ के अतिरिक्त देश की सेवा करने वाली अन्य सस्थाएं (जिन मे सर्वोदय समाज भी है) और दान शील देश भक्त इस योजना पर विचार करेंगे। यदि यह कार्य्य रूप मे परिणत हो सके तो देश के उद्धार मे सहायक हो सकती है।

जयपुर
८—७—४६ गंगाप्रसाद
भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक आ० प्र० सभा
अध्यक्ष जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ

वैदिक सिद्धान्त विमर्श

सृष्टि की उत्पत्ति

[२]

[लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक]

आरम्भसृष्टि मे माता पिता तो थे ही नही तब जब भी मनुष्यों की प्रथम सृष्टि हुई वह अमैथुनी ही हुई। यह कोई अचम्भे की बात नही। जीवोत्पत्ति के प्रारम्भिक नियम की बात है आज कल भी तो किन्ही जीवो की अमैथुनी सृष्टि देखने मे आती है। मनुष्य आदि जरायुज और पक्षी आदि अण्डज प्राणियो की मैथुनी सृष्टि तथा कृमियों की अमैथुनी। अण्डजो मे भी मेण्डक आदि क्षुद्रजन्तुओ की भी अमैथुनी सृष्टि वर्षा ऋतु मे होती ही है। मध्यकाल मे समुद्र से निकले हुए छोटे छोटे द्वीपो मे जहा अभी योरोप या भारत से जाकर लोगो ने निवास किया है ऐसे स्थानों पर जरायुज सिंह गौ कुत्ता आदि पशु तो पाए गए हैं, उन ऐसे जरायुज पशुओं की मध्यकाल मे अमैथुनी सृष्टि हुई। मनुष्यो की अमैथुनी सृष्टि करने की ऋतु या अवस्था पृथिवी की वह प्रारम्भिक ही थी। यह तो स्पष्ट ही है कि माता अपने प्रारम्भिककाल [यौवन काल] मे ही योग्य सन्तान को उत्पन्न करती है पुन क्रमश उस से हीन सन्तान को उत्पन्न किया करती है बुढापे मे तो अतिहीन उत्पन्न करती है या नही करती है। सृष्टि के प्रारम्भ मे पृथिवी माता का नवजीवन या प्रारम्भ यौवनकाल होता है उसे "ऊर्णम्रदा युवति" +वेद मे स्पष्ट युवति कहा भी है। उस समय वह जीवों मे सब से योग्य मनुष्य जैसे सन्तान को अपने आञ्चल से उत्पन्न करती है पुन शक्ति के नष्ट होते रहने से आजकल क्षुद्रजन्तुओं की ही वर्षा ऋतु में अमैथुनी सृष्टि करती है।

पृथिवीस्तर में से मनुष्य कैसे बाहिर आए !

आरम्भ सृष्टि मे जीवो की माता एक मात्र पृथिवी ही थी उस समय मनुष्यो की भी अमैथुनी सृष्टि हुई, ऋग्वेद १०।१८।१०-१२ अथर्व०

+ उप सर्प मातर भूमिमेतामुरुव्यचसं पृथिवीं सुशेवाम्

ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत एषा त्वा पातु निरृते रुपस्थात्* ॥

उच्छ्वञ्चस्व पृथिवी मा निबाधथाः सूपायनास्मै सूपवञ्चना।

माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णु हि।

उच्छ्वञ्चमाना पृथिवी सुतिष्ठतु सहस्रं मित उप हि श्रयन्ताम्।

ते गृहासो घृतश्चुतो भवन्तु विश्वाहास्मै शरणाः सन्त्वत्र।

[ऋ० १०।१८।१०-१२ अथर्व० १८।३।४९-५१]

*पातु प्रपथे पुरस्तात् इति पाठोऽथर्व वेदे।

१८।३।४८-४१ॐ के अनुसार नाना प्रकार के मनुष्यों का प्रादुर्भाव हुआ, उस समय पृथिवी माता का बाह्यतल ऊन जैसा मृदु (कोमल) सान्द्र (गिलगिलासा) उफना हुआ हो जाता है जिस मे जीव गर्भ बढते है और पूर्ण होते ही पृथिवी उन्हें बाहिर प्रकट करने योग्य तथा अपने अन्नरस भरे प्रदेश से पालन करने योग्य होजाती है अत एव उस समय मनुष्य सब प्रकार अन्नादि ग्रहण करने मे समर्थ अपनी कुमारावस्था (प्रारम्भिक यौवनावस्था) मे उत्पन्न होते हैं। कुछ काल तक पृथिवी की यह उफनी हुई मृदु स्थिति बनी रहती है उसी स्थिति मे असख्य जीव गर्भ इकट्ठे रहते है जिनका पृथिवी के आन्तरिक स्वाभाविक रसो से पोषण होता है पुन वे बाहिर प्रकट हो जाते है जिस प्रकार इन्द्रगोप (वीर वहूटी) आदि क्षुद्र जन्तु पृथिवी से बाहिर अपनी कुमारावस्था मे प्रकट होते है, उस समय (वर्षा ऋतु मे) भी पृथिवी का बाह्य तल मृदु और उफनासा हो जाता है उसी स्तर मे इन्द्रगोप आदि क्षुद्र जन्तुओं के गर्भ बनते और पूर्ण होते है, वर्षा ऋतु मे कभी ऐसे उफने हुए स्थल को कुरेदते है तो उस मे उन क्षुद्र जन्तुओं के कच्चे गर्भ देखने मे आते हैं, मनुष्य भी उसी जैसे उफने हुए मृदु स्तर मे से सृष्टि के आरम्भ मे अपनी कुमारावस्था मे बाहिर आते हैं न कि अत्यन्त शैशवावस्था में क्योंकि बाहिर बिना

अर्थ—[एतान् उरुव्यचस सुशेवा भूमि पृथिवी मातरम् उपसर्प] हे जीव तू सृष्टि मे जन्म पाने के लिये बहुविध जीवदेहों को प्रकट करने वाली सुखदायिनी इस प्रथिवी भूमिरूप माता क ऊपरी स्तर मे प्राप्त हो [दक्षिणावते-एषा युवति-ऊर्णम्रदा] जन्मार्थ बीज भाव से निज समर्पण करने वाले के लिये "त्यागो दक्षिणा" (प्राणाग्निहोत्रोपनिषद् । ४) यह युवति 'तुझे जन्म देने योग्य' ऊन जैसी मृदु-कोमल हो जाती है [त्वानिर्ऋते-उपस्थात् पातु] तुझे विपत्ति के आश्रय से बचावे। या [पुरस्तान् प्रपथे त्वा पातु] प्रथम सृष्टि के पथाग्र पर तेरा रक्षण करे ॥४६॥

पृथिवि-अस्मै-उच्छ्वचस्व मा॑ निबाधथा सूपायना सूपवञ्चना भव] हे पृथिवि ! तू इस जीव के लिये पुलकितपृष्ठा-उफनी हुई होजा "उच्छ्वञ्चस्व-उच्छ्वञ्चमाना पुलकिता भव" (सायणः) बाधा या रुकावट न डाल किन्तु इसके लिये भली प्रकार उपयुक्त और उसके उभरने के योग्य हो [भूमे माता पुत्र यथा सिचा-एनम्-अभ्यूर्णुहि] हे भूमि ! माता जैसे पुत्र को दुग्धरस सेचन पार्श्व से आश्रय देती है ऐसे इसे आश्रय द ॥५०॥

उच्छ्वञ्चमाना प्रथिवी सुतिष्ठतु] पुलकितपृष्ठा—उफनी हुई प्रथिवी भली प्रकार हो। उसके अन्दर [मित गृहास सहस्र, हि-उपश्रयन्ताम्] जीव शरीर के निर्माण करने वाले गृह-कोश-गर्भ कोश सहस्रो के आश्रय देने वाले तैयार हो [ते-अस्मै घृतश्चुत स्योना-अत्र शरणा सन्तु] वे गर्भकोश-गर्भ कोष्ठ इस के लिये-जीव के लिये रसपूर्ण सुखकारक इस स्थिति मे इस काल मे शरण हों ॥५१॥

[शेष पृष्ठ ६८]

दयानन्द काल और ईसाइयत

(श्री महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल हिन्दु विश्व विद्यालय काशी)

श्री स्वामी दयानन्द जी का जन्म सन् १८२४ ई० मे हुआ सन् १८६३ ई मे उन्होंने प्रचारकार्य प्रारम्भ किया। सन १८८३ ई म मृत्यु हुई। अत स्पष्ट है कि उन्नीसवी शताब्दी ईस्वी से ही उनका विशेष सम्बन्ध रहा।

इतिहासों में स्पष्ट है कि उन्नीसवीं शताब्दी ऐसी है जबकि भारत मे मुसलमानों का पतन हो रहा था और ईसाई लोग राष्ट्रीय व धार्मिक दोनों रूप म तेजी के साथ बढ रहे थे। नाना प्रकार के कष्टो को सहते हुए यूरप व अमेरीका के अनेक ईसाई (स्त्री पुरुष) भारत में कार्य करने के निमित्त आये। इनमे से अधिकाश यहीं मरे और अपने आप को भारत भूमि के अर्पण कर दिया।

[शेष पृष्ठ ६७ का]

पकाने वाले के न पलेंगे और न ही बुढ़ापे में क्योंकि आगे सन्तति कैसे चला सकेंगे। अत सृष्टि के आरम्भ मे मनुष्य कुमारावस्था (प्रारम्भिक यौवनावस्था) मे ही उत्पन्न हुए थे पुन आहार निद्राभय मैथुन मे सामान्य प्रवृत्ति हुई इन में विशेष परिष्कार सुधार तथा कला विज्ञान की ओर वेद की शिक्षा अग्नि आदि चार ऋषियों द्वारा प्राप्त कर आगे बढे।

इस प्रकार सृष्टि अर्थात् पार्थिव सृष्टि एव पृथिवी से उत्पन्न हुए सन्धिकाल (अपने भूत गर्भ) से बाहिर आए १९६०८५३१०४ वर्ष हुए है और इसके ऐसे ही बने रहने मे २३३३२२७६८-९६ वर्ष शेष रहे है पुन सन्धि प्रलय होजावेगा। जैसे ही यह सृष्टि जितने काल का है वैसेही इसका प्रलय भी उतने काल का होता है। *सृष्टिकाल को

"तद्दै युगसहस्रान्त ब्राह्म पुण्य महर्विदुः।
रात्रिं च तावतीमेव तेऽहोरात्रविदो जनाः॥"
(मनु० अ० १)

ब्राह्मदिन और प्रलयकाल को ब्राह्मरात्रि कहते हैं। सृष्टि के पश्चात् प्रलय और फिर सृष्टि फिर प्रलय फिर सृष्टि इत्यादि सृष्टि और प्रलय का चक्र निरन्तर चलता रहता है, जैसा कि वेद में कहा है—

"सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्"

(ऋ० १०-१९०-३) सूर्य और चन्द्रमा को परमेश्वर ने पूर्व की भाँति बनाया जैसे पूर्व कल्प में बनाया था। मनु ने भी कहा है" —

सृष्टि सहार एव च। क्रीडन्निवैतत्कुरुते परमेष्ठी पुनः पुनः॥ (मनु० अ० १)

इस प्रकार सृष्टि प्रवाह से अनादि हुई।

इन सहस्र चतुर्युगों मे ६ चतुर्युग जितना काल सन्धिकाल है ऋषि दयानन्द ने सृष्टि उत्पत्ति काल—मनुष्यसृष्टि उत्पत्तिकाल तथा वेदोत्पत्तिकाल दिखलाने से सन्धिकाल निकाल कर दिया है।

*सृष्टि की काल गणना आदि मनुस्मृति और सूर्य सिद्धान्त आदि ग्रन्थो मे दी हुई है एक कल्प एक सहस्र चतुर्युगों का होता है—

भारत मे उस समय अंग्रेजो की शक्ति राष्ट्रीय दृष्टि में बढ रही थी। इस कारण ईसाई ने अच्छा अवसर पाकर ईसाई मत प्रचारार्थ आये। उस समय जर्मनी, इटली, स्पेन, फ्रास, अमेरिका आदि के ईसाई यहा आये। क्योंकि वास्तव में यह राष्ट्रीय समस्या न थी बल्कि धार्मिक व सांस्कृतिक प्रश्न था जिसके कारण अनेक देशों के ईसाई केवल भारत में नहीं बल्कि संसार के अनेक देशों अथवा स्थलों में फैले थे।

सन् १८०६ ई० में जर्मनी के पादरी हेनरी मारटिन आये। जर्मनी निवासी पादरा फरवर सन् १८४० ई० में आये। अमेरीका के पादरी जानसन सन् १८६० में आये। उन्होंने नाना प्रकार के उपायों से कार्य किया। किसी ने शिक्षा-प्रचार को अपने उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त साधन बनाया। किसी ने चिकित्सा कार्य के द्वारा अपना कार्य करना मुख्य जाना।

ईसाइयों के परिश्रम का ही फल था कि अनेक अच्छे-अच्छे हिन्दू व मुसलमान ईसाई हो गये और फिर उनके द्वारा प्रचार, शिक्षा व साहित्य आदि के कामों में बड़ा कार्य हुआ। जो लोग ईसाई हुए उनकी सूची तो वास्तव में बड़ी लम्बी ठहरती है, केवल थोडे से नाम ये हैं:—

नाम व जन्म मरण काल,	ईसाई होने का काल
१ शेख सालेह १७६५ १८२७	१८१७
२ सुजातअली १७८१ १८६५	१८२४
३ कृष्णमोहन बनर्जी १८१३.१८८१	१८३२
४ जेकबराम वर्मा १८१५ १८५४	१८३५
५ धानजीभाई नौरोजी १८२२.१९०८	१८३९
६ होरमजदजी पेस्टनजी १८२० १८६१	१८३०
७ मैकेल मधुसूदनदत्त १८२४ १८७३	१८४३
८ नारायण शेशाद्रि मृत्यु १८६१	१८४३
९ लालबिहारी डे १८२४ १८९४	१८४३
१० शिवचन्द्र बैनरजी १८३० १८९२	१८४७
११ नीलकण्ठ शास्त्री १८२५ १८९५	१८४८
१२ रामचन्द्र १८२१ १८८०	१८५२
१३ कालीचरन चैटरजी १८३९ १९१६	१८५४
१४ तालिबउद्दीन (.)	१८६२
१५ सफदरअली (..)	१८६५
१६ इमादउद्दीन लगभग १८३०,१९००	१८६६
१७ पूर्णचन्द उप्पल १८४६ १९३०	१८६६
१८ दीनानाथ (मृत्यु १८८८)	१८७७
१९ मुहम्मद हनीफ... ...	१८७८
२० रमाबाई (१८५६ जन्म काल)	१८८३

इन लोगों का संक्षिप्त परिचय भी दिया जा सके इस बात के लिये यहां स्थान नहीं। केवल दो चार के विषय में कुछ बतलाया जा रहा है— शेख सालेह साहब का नाम ईसाई होने पर अब्दुल मसीह हुआ था। इन्होंने अध्यापन व प्रचार किया था और अन्तिम दिन आगरा में बिताया था। सुजाअतअली अरबी फारसी के अच्छे ज्ञाता थे। इनके उद्योग से बहुत से लोग ईसाई हुये थे। कृष्णमोहन बनरजी एक उच्च कुल में पैदा हुये थे। अपनी उच्च शिक्षा के कारण बिशप कालिज कलकत्ता मे प्रोफेसर हो गये थे। यूनीवर्सिटी के फैलो बने थे। सन् १८७६ ई० में डाक्टर आफ ला की उपाधि से विभूषित किये गये थे। संस्कृत, हिन्दी, तामिल और उड़िया के भी अच्छे ज्ञाता

[शेष पृष्ठ ७२ पर]

प्रताप की पुकार

[लेखक—श्री पं० धमघोर कुमार जी शास्त्री साहित्यरत्न]

अब सो न समय-असमय निहार ।
अवसर न मिलेगा बार-बार ॥

करता घन गनन प्रलय मेघ उत्ताल अतुल लहरी अपार ।
आक्रान्त प्राण-मन मानव के कम्पित वसुधा के तार-तार ॥
है बन्द चेतना-वातायन झंझा ढोती तम बहुत भार ।
'रे सुख-स्वप्नों की सुधि बिसार तुझको न कभी कुछ दुर्निवार ।"

करता नीरवता पर प्रहार ।
छाया यह स्वर ध्वनि पर प्रसार ।

तू तनिक विगत युग पृष्ठ पलट तेरा कुछ क्या सुख मूल नहीं ?
धूमिल मयंक तव चरण विहत करती थी क्या रे, धूल नहीं ?
तेरी दिग्विजया का उदन्त बनता था अरि दृग् शूल नहीं ।
अभिमानी निज को भूल, नहीं विस्मृति दोला में भूल नहीं ।

था तुझे प्राप्त दिव का दुलार ।
स्वागत निमुक्त अपवर्ग-द्वार ।

पांचाल पंचनद-काशमीर शुचि सुर सरिता का पुण्यतीर ।
उत्तुंग हिमाचल नयन नीर, सरि धारा बन क्षिति पर अधीर ।
यक्षिय सुगन्ध भर वहन चपल बहता न मलय गिरि मृदुसमीर ।
कण-कण वसुधा का तुझे वीर ! लख रहा सुरवांछित सपीर ।

मिट गया अखिल वैभव विहार ।
खोई मनि, सोया स्वजन प्यार ।

लहरा यद्यपि बाधा समुद्र पर तू निज साहस हार नहीं ।
तू तोड़ न दे यदि निज आशा तो फिर सुदूर भी पार नहीं ।

मन में विचार यह सुदृढ़ सबल मैं नहीं कि पारावार नहीं।
हो पल न पृथक् कर प्रगति अथक मां का जब तक उद्धार नहीं।

कायरता बन पथ-अन्धकार,
कर सके न धूमिल सुयश-सार।

अंकित कण-कण मे जय गाथा, वह अमर समर-सेनानी बन।
मिट गई प्रेरणा छोड़ अमिट, साका का रक्त-निशानी बन।
बुझ गया, जला, पथ का प्रशस्त दीपक की सजल कहानी बन।
आता बसन्त, कुछ दूर क्षितिज, पतझार सदृश हे मानी, बन।

तू बन दधीच कहती पुकार।
तुझको तेरी जननी मिवार।

कर साहस उर मे एक बार, हे जननी के जीवित दुलार।
तू उठे हिमाचल भीम भार, तू उमडे नीरधि-सा अपार।
युग-युग से अर्जित कीर्त्ति अमल पर हो न पराजय का प्रहार।
जय हो तेरी उठ एक बार, कह रहा वीर कण कण पुकार।

हे तरुण, करुण मुख-श्री निहार।
कर अरुण, विदूरित तम-निकार।

निश्छल, छलनामय मान, निकट लज्जित न पडे तुझको होना।
निश्चल, चल चित्त शक्ति-सम्मुख तर्जित न पडे तुझको होना।
गर्वीले, अगुरु यवन सरित्-मज्जित न पडे तुझको होना।
निर्भयो, भय से मा का सुहाग अर्जित न पडे तुझको खोना।

होना न पडे नम-कुलागार।
चढ़ चढ़ सविता सम एक बार।
बढ चढ़ सपूत कहती पुकार।
तुझको तेरी जननी मिवार॥

विधान परिषद् के सदस्यों की सेवा में —

हमारी राष्ट्र भाषा

स्वतन्त्र भारत की विधान परिषद् के सम्मुख आज कल कई महत्वपूर्ण विषय प्रस्तुत हैं जिन में राष्ट्र भाषा क्या हो, इस पर भी विवाद चल रहा है। इस लेख मे इसी विषय की चर्चा की जायगी।

जिस प्रकार किसी भवन के निर्माण के लिये उसका आधार रखा जाता है, उसी प्रकार राष्ट्र के निर्माण के लिये भी उसका एक आधार होता है। राष्ट्र का आधार उसकी संस्कृति होती है और संस्कृति का आधार साहित्य, साहित्य का आधार भाषा तथा भाषा का आधार भाव होता है। परन्तु भाव की एकता के लिये भाषा की एकता नितान्त आवश्यक है।

महाभारत के समय अर्थात् अब से पाँच सहस्र वर्ष पूर्व तक इस प्राचीन आर्यावर्त की भाषा संस्कृत थी। समय के लम्बे काल चक्र मे संस्कृत से बिगड़ते बिगड़ते कई भाषायें बन गई, जिनमें संस्कृत के शब्दों की भरमार है। इन सब भाषाओं की लिपि संस्कृत से मिलती जुलती है।

अब जिस भाषा को हिन्दी भाषा कहा जाता है, उसकी लिपि, व्याकरण तथा स्वर सब संस्कृत

[शेष पृष्ठ ६१ का]

थे। इनकी कई उत्तम रचनायें हिन्दू-धर्म के विषय की हैं।

लालबिहारी डे हुगली कालिज मे इतिहास के प्रोफेसर हो गये थे। श्री स्वामीजी से कई बार मिले थे। गोविन्द सामन्त नाम का इनका एक उपन्यास बङ्गला मे एक ग्रन्थ है। नीलकण्ठ शास्त्री काशी के एक ब्राह्मण थे। संस्कृत के अच्छे पण्डित थे। हिन्दू दर्शन शास्त्र के खण्डन मे इनका एक ग्रन्थ हिन्दी व अंग्रेजी दोनो मे छपा है। रामचन्द्र दिल्ली के निवासी थे। गणित के अच्छे ज्ञाता थे। इमादउद्दीन अरबी फारसी खूब जानते थे। पानीपत के निवासी थे। ईसाई होने के पश्चात इन्होंने मुसलमानो के विरुद्ध कई ग्रन्थो को लिखा था। पण्डिता रमाबाई का उल्लेख श्री स्वामी जी के पत्रो मे भी आया है। ईसाई मत ग्रहण करने के पश्चात् इन्होंने बहुत काम किया। वे एक कालिज मे संस्कृत की अध्यापिका बनी थी। अमेरिका मे भी वह गई थीं। बम्बई में एक आश्रम सन् १८८६ ई० मे स्थापित किया। कुछ काल के पश्चात् पूना मे उसे ले आई।

विशेष रूप से छान-बीन करने पर पता चलता है कि ईसाईयों की जो संस्थाये भारत में कार्य कर रही हैं उन मे से अधिकांश ऐसी हैं जो कि उन्नीसवीं शताब्दी ईस्वी मे स्थापित हुई थी। ऐसी दशा मे भलीभांति कुछ न कुछ समझा जा सकता है कि श्री स्वामीजी महाराज किस समय कार्य क्षेत्र में थे, उस समय भारत मे ईसाइयत की क्या दशा थी और उनके सन्मुख क्या परिस्थिति उपस्थित थी।

———

के साथ पूर्ण रूप से मिलते हैं। यही कारण है कि आज हिन्दी देश के सबसे अधिक भाग अर्थात् संयुक्त प्रान्त, बिहार, पूर्वी पंजाब, मध्यभारत, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश में व्यवहार में लाई जाती है। महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल, उड़ीसा, काश्मीर तथा हैदराबाद के लोग भी हिन्दी बोल व समझ सकते हैं। आन्ध्र तथा मैसूर राज्य में भी लाखों की संख्या में लोग हिन्दी बोलते व समझते हैं। तामिलनाड और मालाबार में पूज्य महात्मा गांधी तथा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के उद्योग से वहाँ के लाखों व्यक्ति हिन्दी सीख गये हैं। उन प्रान्तों में जिन लोगों ने अभी तक हिन्दी नहीं सीखी है, उनके सम्मुख यदि सरल संस्कृत अथवा संस्कृतनिष्ठ हिन्दी बोली जावे तो वह बहुत कुछ समझ लेते हैं। हिन्दी विरोधियों से हम पूछते हैं कि देश में हिन्दी के अतिरिक्त किस भाषा को इतनी लोकप्रियता प्राप्त है?

अब रही हिन्दुस्तानी की बात। हिन्दुस्तानी तो एक मनगढ़ंत भाषा है। उसकी अपनी कोई सत्ता नहीं है। न इसकी अपनी कोई लिपि है। हिन्दुस्तानी के समर्थक हिन्दुस्तानी को देवनागरी व फारसी दोनों अक्षरों में लिखने का समर्थन करते हैं, जिसका अर्थ है दो लिपियाँ। संसार के इतिहास में आज तक किसी भी देश में दो राष्ट्रीय लिपियाँ प्रचलित नहीं हुई। परन्तु हिन्दुस्तानी के समर्थकों को इस बात का ध्यान नहीं है। इन लोगों को केवल अपनी बात मनवाने का आग्रह है। क्योंकि उन्हें एक विशेष सम्प्रदाय को प्रसन्न करने की विशेष चिन्ता है। इसी मनोवृत्ति के कारण भारत माता का अंग भंग हुआ तथा लोगों को अकथनीय यातनाएं तथा अत्याचार सहने पड़े। यदि आज देश का सच्चा मत राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में लिया जावे तो निश्चित रूप से देश अपना मत हिन्दी के पक्ष में देगा। देश के विभाजन के पश्चात् तो अब इस देश में खिचड़ी भाषा और दो लिपियों का प्रश्न नहीं रहता। परन्तु फिर भी देश के कुछ नेता हिन्दी का विरोध करने पर अभी तक डटे हुए हैं। इसे देश का दुर्भाग्य ही कहेंगे। परन्तु यह निश्चय है कि यह लोग कितना ही विरोध क्यों न करें, देश की राष्ट्रभाषा तथा लिपि एक न एक दिन हिन्दी तथा देवनागरी ही होकर रहेगी।

कुछ लोग कहते हैं कि राष्ट्र की तथा विधान कि भाषा जन-साधारण की होनी चाहिए। जनसाधारण की भाषा तो बाजारू बालकों, अशिक्षितों, मजदूरों और कुली कबाड़ियों की होती है। इन लोगों की भाषा राष्ट्र की भाषा नहीं कहलाती। राष्ट्र की भाषा तो राष्ट्र के कर्णधारों, उच्चपदाधिकारियों, विद्वानों, कवियों, साहित्यकारों का भाषा कहलाती है। वह भाषा सदैव, उन्नत, सजग और साहित्यिक सौंदर्य से परिपूर्ण होती है। इङ्गलैण्ड की भाषा वहां के अशिक्षितों, मजदूरों तथा सैनिकों (टोमियों) की भाषा नहीं है, किन्तु वह तो शैक्सपियर, बर्क, मिल्टन, बर्नर्डशा, ग्लेडस्टोन, चर्चिल तथा एटली की भाषा है। इसी प्रकार इङ्गलैंड का विधान तथा भारतवर्ष का विधान जो अंग्रेजी सरकार के समय यहां बना था वह भी जनसाधारण की बोल चाल में नहीं है किन्तु उसके अन्दर भी अंग्रेजी साहित्य

का सौंदर्य विद्यमान है। हम अपने देश के प्रधान मन्त्री माननीय प० जवाहरलाल नेहरू से बड़े आदर के साथ पूछते हैं कि जब वे अंग्रेजी बोलते व लिखते हैं तो क्या वह टोमी जनता धारण का अंग्रेजी बोलते या लिखते हैं।

कहा जाता है कि हमारे कुछ मद्रासी भाई हिन्दी का विरोध कर रहे हैं। उसके दो कारण बताये जाते हैं। प्रथम तो यह कि हिन्दी देश की भाषा बन गई तो उनकी प्रांतीय भाषाएं नष्ट हो जावेंगी और दूसरा कारण यह कि मद्रासी भाई जो भारत सरकार मे उच्च पदों पर आरूढ़ है उनके लिये अब बड़ी आयु मे कार्य करने योग्य हिन्दी सीखना कठिन है। इन मद्रासी भाइयों की सेवा मे निवेदन है कि हम उनकी प्रान्तीय भाषाओं को नष्ट करना नहीं चाहते। इन प्रान्तों में हाई स्कूल तक शिक्षा तथा छोटे सरकारी कार्यालयों मे कार्य वहा की प्रान्तीय भाषाओं में होना चाहिये। विश्वविद्यालयों म शिक्षा तथा बड़े सरकारी कार्यालयों और उच्च न्यायालयों का कार्य हिन्दी में होना चाहिये। अंग्रेजी की दासता के समय म तो मद्रासी भाई अपनी प्रान्तीय सरकार तथा भारत सरकार दोनों म ही विदेशी अंग्रेजी भाषा में कार्य करते रहे इससे उनकी प्रान्तीय भाषाएं नष्ट नहीं हुई परन्तु ज्ञात नहीं हिन्दी जो उनके अपने देश की भाषा है उसके संबध मे वे ऐसा विचार क्यो करते हैं कि इसके कारण उनकी भाषाएं नष्ट हो जावेगी। दूसरे कारण के संबंध में भारत सरकार की सेवा मे हमारा निवेदन है कि जो मद्रासी भाई अधिक आयु के हो गये हैं और जो कार्य करने योग्य हिन्दी सीखना कठिन समझते हैं ऐसे लोगों के लिये कुछ समय अंग्रेजी में ही कार्य करने की सुविधा दे दी जाय। रहा मद्रासी युवकों के सबंध में जो भारत सरकार की सेवा में गत महायुद्ध के बाद प्रविष्ट हुए हैं उनके लिये यह नियम किया जाय कि वे अधिक से अधिक पॉच वर्ष में हिन्दी में कार्य करने की योग्यता प्राप्त कर लें। मद्रासी भाई विदेशी भाषा अंग्रेजी की योग्यता के लिये प्रसिद्ध हैं। जब वह अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा का उच्चतम ज्ञान प्राप्त करके उसमे पारंगत हो सकते हैं, तब क्या वे हिन्दी का उच्च ज्ञान प्राप्त करके उसमें पारंगत नहीं हो सकते?

जिन प्रान्तों में भविष्य मे वहा की प्रान्तीय भाषाओं मे आरम्भिक शिक्षा होनी है, वहा की माध्यमिक शिक्षा में हिन्दी को एक अनिवार्य विषय बनाया जाय ताकि उन प्रान्तों का प्रत्येक व्यक्ति हिन्दी लिखना, पढ़ना, और बोलना सीख जाय जिससे आगे चलकर उसे कठिनाई उपस्थित न हो। अंग्रेजों के समय में तो इन प्रान्तों में समस्त विषय अंग्रेजी में पढ़ाये जाते थे। उस समय इन लोगों ने कोई आपत्ति नहीं उठाई। साथ ही हिन्दी भाषा इतनी सरल है कि सभी सुगमता के साथ सीखी जा सकती है।

जिस उर्दू तथा फारसी लिपि को हिन्दुस्तानी का जामा पहिनाने का यत्न किया जा रहा है, वह तो पाकिस्तान बन जाने के पश्चात् अब किसी भी प्रान्तीय सरकार की भाषा तथा लिपि नहीं रही और न भविष्य में रहेगी। तो फिर उस दूषित

[शेष पृष्ठ ७५]

आर्यसमाज के एक उज्ज्वल रत्न

स्वर्गीय श्री पण्डित भवानी प्रसाद जी

[लेखक—श्री बाबूराम जी गुप्त लुधियाना]

आर्य सामाजिक जगत् मे कौन ऐसा सज्जन होगा जो श्री भवानी प्रसाद जी इन्दौर निवासी के विख्यात नाम से अपरिचित हो। श्री प० जी उन तपस्वी सत्पुरुषों एवं समाज और साहित्य-सेवी सेवकों और चुप चाप काम करने वालों में से थे जो अपने सद्गुणों से अपनी तुलना में एक ही व्यक्ति कहे जा सकते हैं। उनका सारा जीवन आर्य भाषा, संस्कृत और स्वदेशी सेवा मे ही व्यतीत हुआ। उन्हें हिन्दी और संस्कृत पर इतनी भक्ति और प्रेम था कि वह इसे ही लोक भाषा और राजभाषा के रूप मे प्रचलित होने के स्वप्न देखा करते थे। अपने साधारण वार्तालाप में भी वह संस्कृत के प्रचार के लक्ष्य को ही समक्ष रखते थे। एक बार मुझे कहने लगे, 'देखिये गुप्त जी, आप मेरे समधी हैं न! आप जानते हैं यह समधी शब्द संस्कृत का शब्द है, जिसके अर्थ है, दो समान बुद्धि वाले व्यक्ति। मैंने हंसते २ कहा "अर्थ ठीक है- मगर क्षमा करें मैं तो अपने आपको आप जैसा धीमान् कहने व समझने का साहस नहीं कर सकता।" इस छोटी सी बात पर ही

[शेष पृष्ठ ७४ पर]

हिन्दुस्तानी तथा फारसी लिपि को कौन सी प्रान्तीय सरकार भारत सरकार के साथ पत्र व्यवहार मे काम मे लावेगी? हां यह हो सकता है कि हिन्दुस्तानी के कुछ इने-गिने पक्षपाती जब आपस में पत्र व्यवहार करे तो कदाचित् हिन्दुस्तानी का उपयोग करें।

परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वह विधान परिषद् के समस्त सदस्यों को ऐसी बुद्धि प्रदान करें कि वे राष्ट्रियता के मूलभूत सिद्धान्तों के आधार पर ही इस स्वतन्त्र भारत का सुन्दर, सुदृढ़ तथा विशाल भवन निर्माण कर सके, जिससे वह भवन केवल अपने निवासियों के लिये ही कल्याणकारी न हो अपितु समस्त मानव जाति के लिये सुख और शान्ति प्रदान करने वाला हो।

निवेदक—
शिवचन्द्र
अखिल भारतीय आर्य (हिन्दू) धर्म सेवा संघ दिल्ली

(जो इस विषय मे विस्तार से जानना चाहते हैं उन्हें 'हमारी राष्ट्र भाषा और लिपि' नामक हमारी पुस्तक सार्वदेशिक सभा कार्यालय देहली से ६ आने मे मगवाकर अवश्य पढ़नी चाहिये जिस मे भारत की सब प्रान्तीय भाषाओं का संस्कृत से सम्बन्ध दिखाते हुए संस्कृत निष्ठ हिन्दी के ही राष्ट्र भाषा और देवनागरी लिपि के सर्वोत्तम, वैज्ञानिक लिपि होने का सप्रमाण प्रतिपादन किया गया है—सम्पादक सा० दे०]

उनका विद्याभण्डार खुल गया और मैं आंखे बन्द किये हुए मुग्ध होकर सुनता रहा।

(२)

उपाध्याय श्री भवानी प्रसाद जी ने हिन्दी और संस्कृत के कई उच्च कोटि के ग्रन्थ लिखे हैं। उनकी अमर रचना "आर्य पर्व पद्धति" को निसन्देह 'संस्कार विधि' का दूसरा दर्जा दिया जा सकता है। आपने सस्कृत मे प्राकृतिक चिकित्सा-विषय पर प्राकृतिक स्वास्थ्य सहिता के नाम से एक और पुस्तक लिखी है। यदि यह पुस्तक छप गई तो संस्कृत साहित्य की एक बेजोड़ सम्पत्ति होगी।

प० भवानी प्रसाद जी वैसे तो गुरुकुल-कांगड़ी के जन्म काल से ही कुल के सहायक सेवक अमरशहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी के मित्र और उनकी भुजा रहे थे। किन्तु मई १६३६ से तो उन्होने गुरुकुल की सेवा के लिये अपने आपको अर्पण ही कर दिया था। आप गत अक्टूबर तक गुरुकुल मे निसर्गोपचार के अवैतनिक प्रोफेसर रहे। गुरुकुल के विस्तृत पुस्तकालय के एक बड़े कमरे में जब मैंने उनकी दान की हुई किताबों को धरा देखा, उनके त्याग स्वभाव पर नतमस्तक हो गया। यों तोवह पुस्तकें हजारो की होगी ही किन्तु उनमे से कई पुस्तके किसी भाव पर भी इस समय मिल सकती हो इस मे मुझे सन्देह है।

(४)

प० जी जिला बिजनौर के प्रसिद्ध रईस और जमीन्दारों मे से थे। किन्तु आर्य समाज और साहित्य सेवा की लगन उन्हें अपने रियासती कारोबार में लिप्त न कर सकी। आपने पर्याप्त विरोध सह कर ही हल्दौर में सर्वप्रथम आर्य समाज की स्थापना आदि बहुत से सुधार कार्य किये थे। वह वर्षों बिजनौर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्य रहे। विद्या विलासी पं० जी पश्चिमी सभ्यता व शिक्षा पर भारतीय संस्कृति को ऊंचा स्थान देने वाले, गुरु कुल शिक्षा प्रणाली के अनन्य भक्त थे। इसी लक्ष्य को समक्ष रखते हुए ही उन्होंने अपने सुपुत्रों को गुरुकुल शिक्षा प्रणाली और सुसंस्कारों से विद्वान्, चरित्रवान्, और शीलवान् बनाया है। आज उनके सुपुत्रों पं० मदनगोपालजी विद्यालंकार और चिरञ्जीव रामगोपालजी विद्यालंकार व श्री सिद्धगोपालजी काव्यतीर्थ की साहित्य व मातृ भाषा की सेवाओं का भी क्या परिचय देने की आवश्यकता है? यद्यपि वह संन्यासी न थे किन्तु अपने जीवन के उत्तरार्ध मे उनका रहनसहन त्यागी सन्यासियो जैसा ही था। ऐसा प्रतीत होता है जैसे उन्हो ने अपनी सहज समाधि से ही महीनो पहले मृत्यु का साक्षात् कर लिया हो। उनके एक पत्र से ऐसी झलक पड़ती है।

(५)

गुरुकुल कांगड़ी

पं० जी का पत्र ता० १७ अप्रैल १६४८

प्रिय सुहृद्वर ला० बाबूराम जी,

सप्रेम नमस्ते

आपकी कारावन्धन की विपत्ति के समाचार सुन कर अत्यन्त खेद हुआ था। आपकी अवस्था के दुर्बल देह के लिए यह कष्ट परम्परा असह्य हुई होगी। श्री महाशय जी का (महाशय कृष्ण से अभिप्राय है) सम्पादकीय लेख उर्दू दैनिक

"प्रतीप" में मैंने पढ़ा था। कल पुत्र रामगोपाल जी के पत्र से आपके कल १० अप्रैल को कारावास से छूटने का समाचार जान कर सन्तोष हुआ। कृपया अपने स्वास्थ्य आदि तथा स्वपरिवार के कुशल के वृत्तान्त लिखें। अब आपको स्वास्थ्य सुधार पर पूरा ध्यान देना चाहिए। मेरा स्वास्थ्य भी पिछले शीतकाल में ठीक नहीं रहा। कास, तथा प्रतिश्याय का कष्ट रहा। मेरी दशा पर हाली का यह पद लागू है।

अब जोफ के पिंजरे से निकलना मालूम
पिरी का जवानी से बदलना मालूम।
खोई है वह चीज जिसका पाना है मुहाल।
आता है वह वक्त जिसका टलना न मालूम।

अनायासेन मरणं विना दैन्येन जीवनम्। देहान्ते तव सान्निध्यं देहि मे परमेश्वर। मेरी नित्य की प्रार्थना है।

मेरे योग्य सेवा भवदीय
भवानीप्रसाद

क्या यह पत्र स्पष्ट नहीं बतला रहा कि स्वर्गीय पण्डित जी ने अपने आने वाले अन्त समय की झांकी न ले ली थी। उपरोक्त पत्र मे मुझे मेरे स्वास्थ्य सुधार के लिए जागृत रहने का आदेश करते हैं। क्या मालूम था कि मेरे लिए उनका यह अन्तिम आदेश होगा। पौष शुक्ला १ संवत् १६३४ को जन्म लेकर कार्तिक शुक्ला १ संवत् २००४ को वह अपने जीर्ण वस्त्रों को त्याग कर एक उज्ज्वल चोला पहन परम पिता की गोद मे जा बैठे। इन पंक्तियो द्वारा उनकी पुण्य स्मृति मे अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करते हुए और उनके परिवार से सहानुभूति प्रकट करते हुए अनायास ही मुंह से निकलता है। वाह भगवान्! तू ने अच्छी लीला की। तेरी इच्छा पूर्ण हो। भगवान तेरी इच्छा!

बाबूराम लुधियाना

[स्वर्गीय श्री पं० भवानी प्रसाद जी के सम्पर्क मे आने का हमे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ था क्योंकि उनके सुपुत्र श्री पं० रामगोपाल जी विद्यालङ्कार गुरुकुल कांगड़ी में हमारे सहाध्यायी थे। स्व० पण्डित जी की सरलता, साधुता, स्वाध्यायशीलता तथा संस्कृत भाषा के अद्भुत प्रेम से मैं विशेष प्रभावित हुआ था। कई बार हम लोगो को भी ऐसे प्रतीत होता था कि उनका संस्कृत प्रेम सीमातीत था। वे एक बार अपने पुत्र को कहने लगे 'तुम मे इतनी भी शेमुषी नहीं है' हमारे पाठको मे से ६५ प्रतिशतक संभवत न जानते होंगे कि 'शेमुषी' का अर्थ बुद्धि होता है। एक विद्यार्थी से उन्होंने पूछा तुम्हारे पिता जी क्या काम करते हैं? जब उसने कहा कि वे स्टेशन मास्टर हैं तो उन्हो ने उसे डांटा कि अंग्रेजी शब्दो का व्यर्थ प्रयोग क्यों करते हो यह कहो कि वे 'वाष्पयान स्थिति स्थान प्रधान हैं।

आप पर्व पद्धति में भी उन्होंने बहुत अधिक संस्कृत मय भाषा का प्रयोग किया है। कुछ भी हो उन का यह अद्भुत संस्कृत प्रेम दिखावे का नहीं था वह उनकी धर्म निष्ठा का विशेष परिचायक था। वे बहुत ही सरलस्वभाव व आर्य सज्जन थे इस बात का हम अपने अनुभव के आधार पर निस्सन्देह कह सकते है। ऐसे एक सच्चे आर्य विद्वान् के निधन से आर्य जगत् को एक बड़ी क्षति पहुंचती है। सम्पादक सा० दे०]

आर्य वीर की वाणी से

मैं आर्य वीर दल का सैनिक,
दृढ़ निश्चय देश जगाऊंगा ?

मैं तो अतीत से भी आगे,
हूँ चाह रहा जन जन जागे।
मेरी शक्ति को अनुभव कर,
आ सके न विरोधी भी आगे॥

मैं आर्य जाति का स्वयं सेवक,
माता की लाज बचाऊंगा।
मैं आर्य वीर दल का सैनिक,
दृढ़ निश्चय देश जगाऊंगा॥

कह रहे मुझे व्यर्थ शक्ति,
होगी इससे क्या देश भक्ति ?
मैं पूछ रहा उनसे नम कर,
अब तक क्या कार्य किया प्रियवर॥

मैं वीर जाति का हूँ सैनिक,
बलि वेदी पर चढ़ जाऊँगा।
मैं आर्य वीर दल का सैनिक,
दृढ़ निश्चय देश जगाऊँगा॥

कहते शक्ति अर्जन करके,
हम काम देश के आवेंगे।
पर वर्तमान का जग क्रन्दन,
सुन कर कब दुखा तुम्हारा मन !

जग की दृष्टि मे यह कुमार्ग।
युवको संभलो ! पकड़ो सुमार्ग॥
मेरा तो कार्य आज सैनिक,
जग को सुमार्ग दिखाऊँगा।
मैं आर्य वीर दल का सैनिक,
दृढ़ निश्चय देश जगाऊँगा ?

भीमसिंह "साहित्यालङ्कार"
नगर-नायक आर्य वीर दल
ग्वालियर नगर॥

गृहस्थियों के लिये उपदेश

यज्ञ और प्राणायामादि की उपयोगिता

[लेखक—श्री पूज्यपाद महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज]

यजुर्वेद अ० १३, म० ४४,४५ के आधार पर

परमेश्वर ने मनुष्य योनि पूर्ण बनाई। उसकी पूर्णता उसकी इन्द्रियों से है। कई प्राणी ऐसे हैं जिनकी आंखें नहीं जैसे बिच्छू, कई ऐसे हैं जिनके कान नहीं जैसे पक्षी, कई ऐसे हैं जिनके हाथ नहीं जैसे पशु पक्षी आदि, परन्तु किसी की भी वाणी तथा बुद्धि नहीं। परमेश्वर ने मनुष्य को बुद्धि, वाणी, हाथ और इन्द्रियां सारी की सारी दीं जिनके द्वारा ज्ञान प्राप्त हो सकता और हम कर्म करते हैं। यदि हमारे आंख और कान न हों तो हम बेकार हैं। साधन इस लिये दिये कि हम उस पूर्ण प्रभु के साथ पूर्ण हो जावें। हम अपूर्ण अशुद्ध हैं, इस लिये कि हमारा प्रकृति के साथ मेल है जो अपूर्ण है। अब अत्यन्त शुद्ध के सङ्ग से ही पूर्ण हो सकते हैं। इस के लिये परमेश्वर ने तीन रास्ते (मार्ग) बनाये।

एक बनाया प्राणायाम, इस से आत्मा के अन्दर बल उत्पन्न होता है।

दूसरी बनाई गायत्री, जो मनुष्य को स्वतन्त्र कर देती है।

[illegible] तीसरा बनाया यज्ञ, जो सुगन्धित पदार्थों से जल थल, पृथिवी, वायु, को शुद्ध करता और [illegible] को [illegible] बनाता है।

[illegible] इस बात की है तीनों को अपना [illegible], [illegible] तो जो [illegible] करे वह [illegible] है। [illegible]

यज्ञ करने वाले को पांच चीजें मिलती हैं जैसा कि इस मन्त्र में दर्शाया है—

अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्म वर्चसेनान्नाद्येन समेधय, स्वाहा॥

पहली वस्तु है चमक कांति। शरीर कांतिमान्, रूपवान् तथा सुन्दर सुडौल मिलता है। साथ ही नीरोगता प्राप्त होती है। नीरोगता एक मूल्यवान् देन है।

दूसरी वस्तु जो यज्ञ से मिलती है वह है प्रजा, सन्तान। ऐसी सन्तान जिसको वेद ने कहा सुख के देने वाली हो और हमारी आंखों के सामने मरने वाली न हो। 'प्रजा' दो शब्दों से बना है प्र और जा से। 'जा' के अर्थ हैं जय को प्राप्त करने वाली सन्तान भीरु और कायर न हो, हर संग्राम में विजय प्राप्त करने वाली हो। परतन्त्र न हो। 'प्र' पूर्ण आयु के भोगने वाली हो।

तीसरी वस्तु है दूध। दूध मिलता है पशुओं से याज्ञिक के पास अवश्यमेव दूध रहेगा, आलस्य से चाहे न रखे उस की इच्छा।

चौथी वस्तु है ब्रह्मवर्चस। ब्रह्म के अर्थ हैं परमात्मा अथवा वेद। जिसको विद्वानों का, महात्माओं तथा सन्तों का अपने आप साथ मिलता रहे, जहां परमेश्वर का नाम सदा मिले, उसके अहोभाग्य हैं। जहां प्रतिदिन हवन हो

वह बिना वेद वाणी के नही हो सकता। यही परमात्मा का नाम लेना वेद का पढना ब्रह्मचर्म है।

पाचवी वस्तु है अन्न। वह गृह अन्न से खाली नही रहेगा जहा नित्य हवन होता है। गृहस्थी को इन्ही चीजो की आवश्यकता है।

हमारे ऊपर कितना ऋण है। जो मनुष्य प्रसन्नता पूर्वक ऋण चुका देता है उसकी साख बनी रहती है और जो अदा नहीं करता उसकी साख नही रहती अपयश होता है। इस लिये वेद ने कहा कि अविद्या और अभिमान के कारण विद्या और वायु का विनाश मत करो। परमेश्वर की प्राण प्रद वायु जिस से हमे जीवन मिलता है, उसको हम अशुद्ध करते है। मुख से, नाक से, चक्षु से पसीने आदि से जो मैल हमारे भीतर से निकलती है, उससे वायु अशुद्ध हो जाती है। मल मूत्र विसर्जन से जो दुर्गन्ध निकलती है, उसको हम स्वय नहीं सह सकते, तो अन्य लोग कैसे सहेंगे। ऐसी दूषित वायु सारे ससार के प्राणी सेवन करेंगे और हम पापी बन जायेंगे। जैसे एक मिर्च को यदि अग्नि मे डाले तो जहा सब खासने लग जायेंगे वहा हमे अपशब्द कहेंगे। जहा गन्दगी अथवा मल पडा हो वहा से मनुष्य नासिका बन्द करके गुजरता है। वेद ने कहा प्रमाद मत करो, जितना अन्न, जल, वायु को अशुद्ध करते हो, उतना शुद्धी भी करो, रोज का ऋण रोज ही चुकाते चले जाओ, जो नित्य प्रति हवन द्वारा वायु को शुद्ध करता है मानो वह अपना दैनिक ऋण चुका रहा है और अगले जन्म मे वह इस ऋण से मुक्त होगा। आजकल तो घर घर मे टट्टिया हैं, उस दुर्गन्ध के परमाणुओं का हम पर प्रभाव पडता है परन्तु जिस प्रकार भगी घर में मल के ढेर रखते हुए भी दुर्गन्ध से नाक भौ नहीं चढाता और उसे अनुभव भी नही होता कि वह दुर्गन्ध है और मेरे मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव डाल रही है, ठीक इसी प्रकार घर की टटिट्यों के दूषित पमारणुओं को हम लोग इतने सह जाते हैं कि फिर हमको कोई कष्ट प्रतीत ही नहीं होता। यही कारण है कि हमारी बुद्धि का ह्रास हो रहा है। तभी शास्त्रकारो ने कहा कि पाखाने (शौच) पर मिट्टी डाल दे ताकि मल पर मच्छर, मक्खी बैठकर विष न फैलाये।

अग्नि के द्वारा किया हुआ यज्ञ वायु और पदार्थ के परमाणुओं तथा गन्ध को बहुत दूर तक ले जाताहै, अत हम ऋण से मुक्त हो जाते हैं। ऐसे व्यक्ति को देवता आशीर्वाद देते हैं। इसका नाम रखा पञ्च महायज्ञ। पूर्णमासी से अश्वमेध तक सब यज्ञ हैं परन्तु दैनिक हवन एक महायज्ञ है इसलिये कि राजा भी करता है और रंक भी करता है। हवन यज्ञ के करने से अहंकार नहीं होता। 'इदं न मम' का पाठ यही शिक्षा देता है। घर मे अच्छे पदार्थ खाने वाला अहकार नही करता परन्तु दूसरो को खिलाने वाला अहंकार करता अर्थात् जो कार्य अपने लिये किया जाता है वह महान् है और उसमे अहंकार नही होता। अहंकार के अभाव से ही मनुष्य महान् कहलाता है। महात्मागांधी, महर्षि दयानद, शङ्कराचार्य आदि महान पुरुष कहलाये क्योंकि उनके अंदर अहंकार न था। श्री बिड़ला जी इस समय बड़े

दानी हैं परन्तु वे महा पुरुष नहीं कहलाते जिसका उपकार अहंकार रहित है, वह महान् कहलाता है। यज्ञ कितनी उत्तम वस्तु हुई। अल्प सी मात्रा देकर परमेश्वर से हम सब वस्तुओं के अधिकारी बन जाते हैं। कौन ऐसा मनुष्य है जिसको यह आवश्यकता नहीं। परन्तु हम करते नहीं। प्रतिदिन श्रद्धा से दें, भावना से दें तो हमारा कार्य्य सिद्ध हो जावेगा। कोई विरला निकलेगा जो हवन करता हो।

पर परमेश्वर पर हमें विश्वास नहीं। जब तक विश्वास न हो, प्रेम नहीं हो सकता। जितना विश्वास बढ़ेगा उतना प्रेम बढ़ेगा। परमेश्वर से हमारा प्रेम नहीं क्योंकि उस पर विश्वास नहीं आदमी पर विश्वास है।

जब दांत न थे तब दूध दियो।
जब दांत दिये तब अन्न न देई है?

यह कभी हो सकता है? उस प्रभु की दया का कोई अन्त नहीं। माता के मटके प्रसव से पूर्व ही दूध से भर देता है, यदि बालक के लिये दूध मोल लेना पड़ता तो निर्धन कङ्गाल स्त्रियों के लिये बालक की पालना कितनी कठिन होती। यह प्रभु की अपार दया है जो हमारे जन्म से पूर्व हमारे भोग के साधन उपस्थित कर देता है। ऐसा जानते हुए भी हम उस पर विश्वास नहीं करते। कारण यह कि जो शक्ति परमात्मा ने हमें दी, हम उसका अनुभव नहीं करते।

शक्ति, प्रेम, विश्वास तीन चीजें प्रभु ने दीं। हमारी शक्ति शून्य है। नव जात बालक की दोनों मुट्ठियां बन्द होती हैं, क्यों? माता मुट्ठी सीधा करना चाहती है, वह रोता है। क्या? मुट्ठी तब बन्द करते हैं जब अमूल्य वस्तु पास हो, छिपा लेता है, किसी को देना नहीं चाहता। मुट्ठी बड़ी मजबूत होती है। बालक के पास कोई वस्तु थी जिसे वह देना नहीं चाहता, और अपने पास रखना चाहता है। यह शक्ति उसके पास थी। यदि मनुष्य इस शक्ति को जाने तो उसका प्रभु पर विश्वास हो जाय। बालक की एक मुट्ठी में परमात्मा है और एक में प्रकृति। इस लिये कि वह योगी है। बालक को कड़ी दृष्टि से न देखो, मांसाहारी, जुवारी, डाकू, व्यभिचारी की छाया उस पर न पड़े। योगी को दूसरा जन्म याद होता है बालक को भी याद होता है। योगी का तालु टप टप करता है। अंगूठा चूसता है, अंगूठे के चूसने से सलीवा (अमृत) टपकता है, जब तक टपकता है वह पूर्ण योगी है और बेखबर योगी है। बालक के सामने क्रीड़ा भी न करो। योग के अन्दर आया, अहिंसा का फल है कि वैरी का वैर भी त्याग हो जाता है। बालक के सामने सर्प भी वैर त्याग देता है। बच्चे की मुस्कान परायों को भी हर लेती है। योग की चार निशानियां (चिन्ह) हैं।

१ योग में प्रवेश करने पर समता आती है। बच्चे में समता होती है, हिन्दु मुसलिम का कोई भेद नहीं, कोई उठाले। २ शान्ति, ३. सुख और ४ हास्य। मुस्काना जो सब के शोक चिन्ता को दूर कर देता है। वह योगी है, वह (बालक) राग और द्वेष से शून्य है। परमेश्वर भी उस को प्राप्त हुआ जो राग और द्वेष से रहित है। और प्रकृति भी उसके अधिकार में आई जो राग द्वेष

से रहित हुआ। इसका नाम है शक्ति, निष्पाप होना राग द्वेष रहित होना। यह शक्ति मनुष्य मे बहुत नीचे रहती है। सिर मे रहता है अमृत। ज्यो - ससार की हवा लगी, माता के विचार उसके अन्दर गये बालक की शक्ति का ह्रास होने लगा। दूध पिला रही है और कुढ भी रही है, मानो बालक मे विष प्रविष्ट करा रही है वह शक्ति, जो अमृत थी ऊपर से नीचे दौड आई और गुदा के भीतर जहा सेन है, उस मे प्रविष्ट हो गई, दब गई। उस कुण्डलिनी शक्ति को जगाने के लिये योगी योग करता है। यह जग जाय तो बस बेड़ा पार है। परमेश्वर ने पूर्ण साधन दिये कि वह उस के साथ एक हो जाय। प्रभु ने कान, आख, नाक, मन बुद्धि, वाणी दी, कि इन की सहायता से एकता प्राप्त कर सके। इस के लिये जरूरत पडी प्राणायाम की।

यजुर्वेद अध्याय १३, म० ५५ के भावार्थ मे महर्षि दयानन्द ने लिखा कि 'स्त्री पुरुषो को चाहिये कि प्राण का मन और मन का प्राण नियम करने वाला है ऐसा जान के प्राणायाम से आत्मा को शुद्ध करते हुवे पुरुषों से सम्पूर्ण, सृष्टि क पदार्थों का विज्ञान स्वीकार करे।

तो आत्मा की शुद्धि के लिये ही प्राणायाम किया जाता है। रावण ने वायु आदि भौतिक आदि देवताओ को वश मे किया परन्तु प्राणों पर अधिकार प्राप्त न कर सका। भीष्म पितामह ने प्राणो पर इतना अधिकार प्राप्त किया हुआ था कि शर शय्या पर पडे हुवे भी मृत्यु को अपने समीप न फटकने दिया। जब उत्तरायण काल आया तो अपनी इच्छा से प्राण त्यागे।

मनुमहाराज ने कहा है कि प्राणायाम से एक बल पैदा होता है जो सर्व वासनाओं को दग्ध कर देता है और वह शक्ति जग कर ब्रह्मरन्ध्र मे पहुँचती है। जो प्राण मनुष्य लेता है, यदि वह सारा बाहर निकाल दे तो मनुष्य का जीवन भी समाप्त हो जाय। इस से स्पष्ट है कि कुछ न कुछ प्राण अन्दर रह जाता है, यह स्वाभाविक कुम्भक है। यह परमात्मा द्वारा प्राणायाम है, सङ्कल्प तथा इच्छा से नहीं। मनुष्य सङ्कल्प द्वारा कुम्भक करे।

इञ्जन सहस्रों मन भार उठाता है। भाप को बन्द कर दिया जाता है, कुम्भक करते है तब रेल चलती है। साईकल का पहिया, मोटर का पहिया तब चलता है जब उसके अन्दर वायु का कुभक किया जाता है। तनिक मात्र वायु निकल जाने पर, मोटर साईकल नहीं चल सकती। प्राणायाम करेगे तो उस से बल आकर हमे चलने की शक्ति आयगी। वायु अन्दर भरने से वायु के गुण, कर्म, स्वभाव अपने अन्दर आते है। वायु का गुण है स्पर्श। भूत मात्र को, जड तक को भी, मुझ को भी स्पर्श करेगी। यदि जड दीवार को वायु न मिले तो गिर जायगी। जो मकान अन्दर बन्द रहता है वह शीघ्र गिर जाता है।

वायु का स्वभाव है सम रहना। हमारे अन्दर आयगी समता। जो बालक के अन्दर थी वह हमारे अन्दर आयगी। यह प्राणायाम का फल है लाख यत्न करे कि सम हो जाऊँ नही हो सकता जब तक प्राणायाम न करे। जल मे प्रथिवी मे समता नहीं समता केवल वायु मे है। वायु को एक प्रकार से सब नमस्कार करते हैं। जब चलती है, वृक्ष

झुक जाते हैं। पवन गुरु है। पृथिवी, जल, अग्नि को भोले मनुष्य नमस्कार करते हैं।

वायु का कर्म है निरन्तर चलते रहना। सूय जल, पृथिवी, अग्नि निरन्तर उपकार करते है। प्राण वायु सदा चलती रहती और जीवन प्रदान करती है। एक क्षण भी हम से पृथक् नहीं होती ठहर जाय, हिलाने से तुरन्त आजाती है। प्राणायाम करने वाले का जीवन ससार के लिये हो हो जाता है। प्राणायाम प्रभु की देन है। वेद ने स्वय कहा "अयं दक्षिणा विश्वकर्मा। -य० १३-५५ स्त्री पुरुषों को चाहिये कि प्राणायाम द्वारा आत्मा को शुद्ध करे। २१ दिन विधि पूर्वक प्राणायाम कर लेने पर बुद्धि बडी सूक्ष्म हो जाती है। तीन से आरम्भ करके धीरे धीरे ८० तक चला जाय। बुद्धि से आवरण दूर हो जाता है। करोगे फल पावोगे।

मनुष्य जीवन की सफलता जन्म, औषधि, मन्त्र, तप, समाधि से होती है।

कइयो को जन्म से ही सिद्धि प्राप्त होती है, पूर्व जन्म के कर्मफल के कारण, वैराग्य जन्म से हो गया।

औषधि द्वारा भी सिद्धि प्राप्त हो सकती है। औषधि कई प्रकार की है हिमालय मे रहने वाले योगी एक चिता बना देते है और औषधि घोट कर, जिसे सोम अथवा कोई नाम दें, शिष्य के शरीर पर मल देते है और जलती चिता मे बिठा देते है। जब वह औषधि नितात शुष्क हो जाती है, उसको निकाल देते है।

मन्त्र द्वारा भी सिद्धि प्राप्त होती है। गायत्री मन्त्र के विधि सहित जाप से सफलता प्राप्त हो जाती है।

तप द्वारा भी वही कार्य सिद्ध हो सकता है। महात्मा गांधी ने तप द्वारा सिद्धि प्राप्त की।

पाचवा साधन ः समाधि।

वेद कहता है, गायत्री वेद का प्राण है। यह वसन्त ऋतु है। वसन्त का यह काम है। शरद ऋतु मे धनी लोग घरों के अन्दर बन्द रहते हैं, वस्त्रो का भार कन्धे पर उठाते है, वसन्त के आने पर घरों से बाहर निकल आने और वस्त्रो के भार से मुक्त होकर स्वतन्त्रता पूर्वक बाहर विचरते हैं। वसन्त बहार है, मन को तरोताजा करता है, आखो को ठण्डक देता है। गायत्री का भी यही फल है। इससे मनुष्य आवागमन के चक्र स छूट जाता है और परमेश्वर को प्राप्त करता है।

[हमारी प्रार्थना पर परमश्रद्धेय पूज्यपाद महात्मा प्रभु आश्रित जी ने यह उपयोगी लेख सरल शैली से लिख कर भेजने की कृपा की है जिसके लिये हम उन का हार्दिक धन्यवाद देते है। हमारा आर्य मात्र से सानुरोध निवेदन है कि वे पूज्य महात्मा जी के इस उपदेश को क्रियात्मक रूप देकर लाभ उठाए। सम्पादक सा० दे०]

गृहस्थ जीवन की सुख वृद्धि के सुनहरी नियम

[लेखक—श्री पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक]

गृहस्थ जीवन के सुख और सौन्दर्य को नष्ट होने से बचाने के लिये कतिपय सुनहरी नियम है जिनको प्रत्येक पति पत्नी को लक्ष्य मे रख कर उन पर आचरण करना चाहिये। उन मे से एक नियम है निरन्तर छिद्रान्वेषण और दोषारोपण से बचना।

मनुष्य जीवन के अन्य विभागो मे भी इस नियमका आचरण परम आवश्यक है। कहा जाता है मनुष्य को सदैव दूसरो के गुणों पर दृष्टि रखनी चाहिये उनकी त्रुटियों और कमजोरियों पर नहीं। ऐसा करने से मनुष्य जहा स्वय ऊँचा उठता है वहा वह समाज को भी ऊँचा उठाता है जो बृहत्तर समाज की आधार शिला का काम देता है। अत परिवार मे इसी विशेषता की रक्षा करना उसके सदस्यो का एक आवश्यक कर्तव्य होता है।

गृहस्थ मे नारी को तो इस नियम पर आरूढ रहने की बडी आवश्यकता होती है। वे नारिया धन्य है जिन्होने विवाह को सदैव एक विशुद्ध आध्यात्मिक और पवित्र सबन्ध के रूप मे देखा है यही कारण है वे अपनी सहनशीलता और दृढ़ता से असुन्दर को सुन्दर बनाती हुई भयानक काण्ड को सौन्दर्य मे परिवर्तित करती एव वैवाहिक वैषम्य अथवा विषम परिस्थितिया मे भी वैवाहिक सुख की ज्योति को ऊँचा रखती रही है। पति के प्रति उसके आत्मसात् होने को लोग भले ही अत्याचार कहें वा सामाजिक अभिशाप कहें परन्तु वह निर्विवाद है कि उनके इस पुण्य बल का समाज की शान्ति मे बहुत बड़ा योग रहा है। नारी के हृदय मञ्च पर जिस व्यक्ति का पति रूप से अधिकार हुआ उसने उसी को अपना पूज्य और इष्ट देव माना। उसने उसे पार्थिव चक्षुओ से न देखकर मानसिक नेत्रो से देखा और उसे अपना आंखो पर बिठलाया। पति की निर्धनता, उसकी कुरूपता अथवा अन्य किसी प्रकार की त्रुटि पत्नी के पति-सुख की साधना के प्रयास को कुंठित न कर सकी।

भगवती सीता राजकुमारी थी और राजघराने मे ही उनका विवाह हुआ था, परन्तु उनका कौनसा राजोचित सुख प्राप्त हुआ ? उनका समस्त वैवाहिक जीवन त्याग और घोर कष्ट का जीवन रहा परन्तु उन्होने सब कुछ प्रसन्नता पूर्वक सहन किया।

आधुनिक काल मे जिन्होने महात्मा गान्धी का आत्मचरित पढ़ा है वे प्रात स्मरणीया कस्तूरबा की कष्ट सहिष्णुता की घटनाओ से गद्गद् हुए बिना नही रह सकते। महात्मा जी की साधना मे उन्होंने अपने को मिटाया हुआ था। यौवन क सुख-स्वप्नो और उमगो से किस नारी का हृदय उद्वेलित नही होता ? वृद्धावस्था मे गृहस्थ के राज्यसिंहासन पर बैठ कर निश्चिन्तता और अधिकार का जीवन व्यतीत करने

की गुदगुदी किस नारी के हृदय मे उत्पन्न नहीं होती परन्तु महात्मा जी की साधना मे सहायिका बनने के कारण उनके ये सुखस्वप्न एक २ करके शून्य मे विलीन हुए परन्तु वे एक क्षण के लिये भी उनकी साधना मे बाधिका न बनी। कितना उज्ज्वल था यह त्याग यदि यह कहा जाय कि कस्तूरबा जैसी पत्नी प्राप्त करने मे महात्मा जी का सौभाग्य था तो अत्युक्ति न होगी।

संसार के नारी समाज का इतिहास इस प्रकार के अनेक उज्ज्वल उदाहरणो मे भरा पड़ा है। उसमे से यहा हम ३-४ उदाहरणों की चर्चा करेंगे।

फ्रान्स के राजा नेपोलियन तृतीय ने संसार का सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी यूजीनीनामक स्पेन की एक लडकी के प्रेम मे आसक्त होकर उसके साथ विवाह किया। स्वय राज मन्त्री तथा फ्रान्स के निवासी इस विवाह के विरुद्ध थे क्यों कि वह लडकी एक साधारण कुल की थी। नपोलियन का कहना था कि उस लडकी के सौन्दर्य और कोमलता मे उसे दिव्य ज्योति के दर्शन होते थे। एक बार उसने समूचे राष्ट्र की भावना को ठुकराते हुए राजमच से भाषण देते हुए कहा, मै जिस लडकी को नहीं जानता उसकी अपेक्षा उस लडकी को पसन्द करूगा जिससे मुझे प्रेम है और जिसका मे आदर करता हूँ।

नैपोलियन और उसकी पत्नी दोनो ही स्वस्थ सुन्दर और सुख के प्रत्येक साधन से युक्त थे। कोई कारण न था कि वे दोनो वैवाहिक जगत् मे चमत्कार उत्पन्न न करते। परन्तु हुआ इसके सर्वथा विपरीत। नेपोलियन की प्रणय शक्ति और राज्य का आतक उस देवी को हर समय दोषारोपण करने से न रोक सके। परिणामत नैपालियन परेशान हो गया। आशका और ईर्ष्या के कारण वह देवी सदैव परछाई की तरह उसके पीछे लगी रहती। उसकी आज्ञा का उल्लंघन करना उसके लिये साधारण बात बन गई थी। न केवल घर के भीतर ही अपितु राज दरबार मे भी वह नैपालियन को डाटने और बुरा भला कहने मे न झिझकती थी। सैनिको वैभवशाली महलों वाले फ्रान्स के सम्राट को उस देवी से छुपने के लिए एक अल्मारी तक नसीब न होती थी। सचमुच निरन्तर छिद्रान्वेषण और कलह के विषैले कीटाणुओं से घिरे हुए प्रेम को न राज्यैश्वर्य जीवित रख सकता है और न सुन्दरता।

महात्मा टालस्टाय के गार्हस्थ्य जीवन की कहानी भी बडी दुखद है। वे ससार के सर्वश्रेष्ठ उपन्यसकारो मे से थे। उनके प्रशसक दिन रात उनको घेरे रहते और उनके मुह से निकले हुए साधारण से साधारण शब्द को लेख बद्ध करते रहते थे। रूस की सरकार ने उनकी लेखनी से निकले हुए प्रत्येक वाक्य को मुद्रित कराने की व्यवस्था की है।

टालस्टाय और उनकी पत्नी के पास धन था, समाज मे यश था और आदर था। प्रारम्भ मे उनका गृहस्थजीवन सुखी और स्थायी दख पड़ा। वे दोनो प्राय परमात्मा के आगे घुटने टेक कर गृहस्थ जीवन के सुख की अभ्यर्थना किया करते थे। इसके बाद टालस्टाय के जीवन मे धीरे २ परिवर्तन प्रारभ हुआ और सहसा ही

उनकी जीवन धारा बदल गई। अब उन्होने शान्ति रक्षा, युद्ध एव निर्धनता निवारण के विषय पर छोटे २ ट्रैक्ट लिखन आरम्भ कर दिये। उन्हे अपने बडे २ ग्रन्थो पर लज्जा अनुभव होने लगी। उन्होंने अपनी भूमि गरीबो मे बाट दी और स्वेच्छा पूर्वक निर्धनता का जीवन अगाकार कर लिया। इन दिनो वे स्वय अपना खेत क्यार करते, अपना जूता स्वय बनाते, अपने घर का भाडते बुहारते और लकडी के बर्तनो मे भोजन खाते थे। यही समय था जब वे ईसा की शिक्षानुसार अपने शत्रुओं से प्रेम करने की चेष्टा मे सलग्न हुए थे।

उनकी पत्नी का भोग-विलास से जितना अनुराग था टालस्टाय को उनसे उतनी ही उपरामता थी। उनकी पत्नी के हृदय मे सामाजिक ठाट बाट और शान-शौकत के लिये बड़ा सम्मान था परन्तु टालस्टाय की दृष्टि मे उनका कोई मूल्य न था। वह धन, सम्पत्ति और ऐश्वर्य का भूखी था परन्तु टालस्टाय उन्हे पाप मानते थे। इस वैषम्य के कारण घर मे नित्य प्रति देवासुर सग्राम मचा रहता था। जब टालस्टाय पत्नी का विरोध करते तो वह बेहोशी का बहाना कर जमीन पर लोट जाती, शपथ खाने लग जाती और अफीम की शीशी होंठो पर लगाकर आत्महत्या करने वा कूए मे डूबकर मर जाने की धमकी देने लगती।

विवाह के ४० वर्ष उपरान्त प्रेम से विह्वल हुई उनकी पत्नी एक दिन टालस्टाय के पास गई और उनके चरणो को पकड़ कर बोली, स्वामिन्, मुझे प्रेम के उन अवतरणों को जोर से पढ़ कर सुनाओ जो मेरे संबन्ध मे अब से ४० वर्ष पूर्व अपने अपनी डायरी मे लिखे थे। जब टालस्टाय ने उन सुखी दिनो की कथा वर्णन की जो अब वापस नही आ सकते थे तो दोनों रो पडे। आह जीवन के कठोर सत्य उनके काल्पनिक सुख-स्वप्नो से कितने भिन्न थे।

अन्त मे ८२ वर्ष की अवस्था मे घर से तंग आकर टालस्टाय १९१० ई० मे जाड़ों की कडकडाती सर्दी की रात मे घर से निकल भागे और ११ दिन के बाद न्यूमोनिया से एक रेल्वे पर उनका देहान्त हो गया। मरते समय उनका आदेश था कि उनकी पत्नी को उनके शव के पास न आने दिया जाय।

टालस्टाय की पत्नी ने मरने से पूर्व अपनी पुत्रियों से कहा मै ही तुम्हारे पिता की मृत्यु का कारण थी। परन्तु उसे यह ज्ञान बहुत देर मे हुआ।

इसमे सन्देह नहीं कि टालस्टाय की पत्नी के उस दुर्व्यवहार का कोई कारण अवश्य था। परन्तु ऐसा करने से क्या लाभ हुआ? उससे तो उनके पारस्परिक सबन्ध कटु से कटुतर और कटुतर से कटुतम ही होते चले गये। हाय मै पागल थी यह कहकर वह प्राय अपने हृदय के पश्चात्ताप को व्यक्त किया करती थी परन्तु कब जब तीर तरकस से निकल चुका था।

अब्राहम लिंकन की जीवन कहानी भी कम दुःख प्रद नही है उनकी पत्नी उनको निरन्तर तग करती रहती थी। दिन रात मे कोई क्षण ऐसा न होता था जब वह आलोचना करने से रुकती। लिंकन की शक्ल भौंडी है। उसे चलने फिरने और

उपनिषद् के कुछ शब्दों का अर्थ

(स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ, अध्यक्ष वानप्रस्थाश्रम, ज्वालापुर (जि० सहारनपुर) ।

हमारे शास्त्रों मे अनेक स्थलों पर पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है जिनके पारिभाषिक अर्थ न जानने के कारण बहुधा कृतविद्य लब्धप्रतिष्ठ, महाविद्वान् भी कुछ का कुछ अर्थ कर जाया करते हैं। इसी लिए आचार्यों ने बहुश्रुत होने का उपदेश किया है। मुनिमूर्धन्य व्यास ने इसी भाव से कहा है—बिभेत्यल्पश्रुतादवेद = थोडे पढे हुए से वेद भय खाता है।

उपनिषत् हमारे पास ऐसी गुह्य विद्या है कि जिस ने समस्त ससार के विचारकों को मुग्ध कर रखा है। नित्य नये नये भाष्य और टीकाए इनका भाव आविष्करण करने के लिये की जा रही है और कोई यह अहङ्कार नहीं कर सकता कि उसने इसका समस्त रहस्य खोल दिया है। महान् से महान् विद्वान भी सर्वज्ञ नहीं हो पाता, अत उसकी कृति मे भी कहीं त्रुटि का रह जाना असंभव नही है। उदाहरण के लिए हम यहा

[शेष पृष्ठ ६८ का]

उठने बैठने का शऊर नहीं है। उसके कान बहुत बेढंगे और बडे हैं। उसकी नाक चपटी है। नीचे का होठ मोटा है। हाथ और पैर बहुत बडे और शिर छोटा है। वह प्राय यही आलोचना करती रहती थी। शिक्षा स्वभाव, रुचि और मानसिक प्रवृत्ति इत्यादि सब दृष्टियो से पति और पत्नी एक दूसरे से नितान्त भिन्न थे। एक बार एक बार्डिंग हाउस मे खाना खाते समय उनकी पत्नी लिंकन की किसी चेष्टा से क्रुद्ध हो गई और आपे से बाहर होकर बुरी भली बात कहने लगी यहा तक कि उसने चाय का प्याला उठाकर कई सम्मानित मित्रों की उपस्थिति मे लिंकन के मुह पर दे मारा। बेचारा लिंकन अपमान के उस कडवे घूट को चुपचाप पी गया।

जिस नगर मे लिंकन रहता था उसमे अन्य ११ वकील भी रहते थे उन दिनो उन लोगो को अपने काम पर प्राय देहात मे जाना पडता था जहा अदालतें लगा करती थीं। ये लोग अपने परिवार के साथ छुट्टी का उपभोग करने के लिये प्रति शनिवार को नगर को लौट आया करते थे। परन्तु बेचारा लिंकन न लौटता था। उसे घर जाते डर लगता था। वह कई २ महीने बाहर रहता। अन्त मे उसकी पत्नी पागल होगई थी।

क्या पत्नी के कलह और तंग करने से लिंकन बदल गये थे? नहीं अपितु लिंकन का ही रुख अपनी पत्नी के प्रति बदल गया था।

प्रश्न होता है कि उपर्युक्त प्रकार की देवियों ने पति की निरन्तर आलोचना से क्या प्राप्त किया? कुछ नहीं सिवा इसके कि उन्होंने अपने जीवन को स्वयं दुःखी बना डाला।

अत गृहस्थ जीवन के सुख की रक्षा के लिये आवश्यक है कि छिद्रान्वेषण एवं दोषारोपण करने से बचा जाय।

तैत्तिरीयोपनिषद् मे आये कुछ शब्दो के सबन्ध मे निवेदन करना चाहते हू। ब्रह्मचारी जब विद्या समाप्त करके गुरु गृह से पितृगृह को जाने को होता था तो आचार्य लोग उस स्नातक का एक उपदेश दिया करते थे जो तैत्तिरीयोपनिषद् मे अङ्कित है, [यह आज कल के convocation भाषण के समान है] इसमे आचार्य शिष्य को दान करने की प्रेरणा करते हुए कहते हैं—कि 'सविदा देयम्, श्रिया देयम्, ह्रिया देयम्, भिया देयम्, [सावत् से देना चाहिए, श्री से देना चाहिये, ह्री से देना चाहिये, भी=भय से देना चाहिये] इस उपदेश मे आए सविद, श्री, ह्री, भी शब्द पारिभाषिक हैं, इन का भाष्यकारो ने पारिभाषिक अर्थ न करके स्वमनोकल्पित अर्थ किया है, जो कुछ असगत सा लगता है। शुक्र नीति के तृतीयाध्याय मे दान प्रकरण मे इन शब्दो का अर्थ इस प्रकार किया गया है—

देवतार्थं च यज्ञार्थं ब्राह्मणार्थं गवार्थकम् ॥ २०२ ॥
यद्दत्त तत्पारलौक्य सविद्दत्त तदुच्यते ॥
वन्दिमागधमल्लादि नटेभ्योर्थ च दीयते ॥ २०३
पारितोष्य यशार्थं तच्छ्रिया दत्त तदुच्यते ।
उपायनीकृत यत्तु सुहृत्सबन्धिबन्धुषु ॥ २०४
विवाहादिष्वाचारदत्त ह्रीदत्तमेव तत् ।
राज्ञे च बलिने दत्त कार्यार्थं कार्यघातिने ॥ २०५
पापभीत्याथवा यच्च तत्तु भीदत्तमुच्यते ॥

देवता के निमित्त, यज्ञ के निमित्त, ब्राह्मण के निमित्त तथा गौ के निमित्त परलोक सुधार के लिए जो दिया जाय, उसे सविन् से दिया हुआ कहते है ॥ वन्दी (स्तुतिपाठक), मागध,मल्ल (पहलवान), आदि और नटों को जो पारितोषक रूप मे दिया जाता है, और जो जो यश के लिये दिया जाता है। उसे श्रियादत्त= श्री से दिया हुआ कहते है ॥ मित्रो, सम्बन्धियो तथा बन्धुओ को विवाह आदि के अवसर पर लोकाचार मान कर जो दिया जाता है उसे ह्रियादत्त ह्री से दिया हुआ कहते है ॥ राजा, बलवान् तथा कार्य बिगाडने वाले को कार्य सिद्धि के लिए तथा पाप के भय से दिया जाता है उसे भीदत्त—भियादत्त—भय से दिया हुआ कहते हैं।

इस पर विशेष टिप्पणी करने की आवश्यकता नही है। इतना कहना पर्याप्त होगा कि इन अर्थों मे सगति है। भाव यह है कि दान के नाना अवसर हैं। उन पर अवश्य देना चाहिये। इसी प्रसग मे अगले श्लोक मे एक और प्रकार के दान का वर्णन है। विचार शील उस पर विचार करें —

यद्दत्त हिंस्रवृद्धयर्थं नष्ट द्यूतविनाशिनम् ॥ २०६
चौरैर्हृत्त पापदत्त परस्त्रीसङ्गमार्थकम् ॥

जो हिंसको की उन्नति के लिये दिया जाता है, जो गुम हो गया हो, जो जुए मे नष्ट हुआ हो, चोरो ने छीना हो, पर स्त्री के सङ्गम के लिए दिया गया हो, उसे पापदत्त=पापदान कहते हैं। कई महात्मा इसे तामसदान का नाम देते हैं।

महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी

[६]

अहिंसा विषय पर तुलनात्मक विचार

[लेखक श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

[गताङ्क से आगे]

अहिंसा के अत्यन्त प्रबल समर्थक होते हुए भी पूज्य महात्मा गांधी जी सर्व साधारण के लिये उस के अपवादों को स्वीकार करते और भीरुता तथा हिंसा मे से हिंसा के आश्रय की सलाह देते थे ।

यङ्ग इन्डिया के ११ अगस्त सन् १६२० के अङ्क मे महात्मा गांधी जी ने स्पष्ट लिखा था कि —

"I do believe that where there is only a choice between cowardice and violence, I would advise violence" (Young India Aug 11, 1920)

अर्थात् जहा भीरुता और हिंसा मे से किसी एक के चुनने का प्रश्न है, मै हिंसा की ही सलाह दूगा ।

इस का उदाहरण देते हुए उन्होंने लिखा कि जब मेरे ज्येष्ठ पुत्र ने मुझ से प्रश्न किया कि जब सन् १६०८ मे मुझ पर एक पठान ने घातक आक्रमण किया तब यदि मैं उपस्थित होता तो मुझे क्या करना चाहिये था/ भाग जाना या हिंसा का प्रयोग करना ? तो मैंने उसे कहा कि हिंसा का प्रयोग करके भी रक्षा करना उसका कर्तव्य था। य कारण है कि मैंने बोर युद्ध, त था प महायुद्ध मे भाग लिया था। इसी प्रसङ्ग म यहा तक लिखा कि —

"I would rather have India resort to arms in order to defend her honour, than that she should in a cowardly manner become or remain a helpless witness to her own dishonour" (Young India 11—8—1920)

अर्थात् अपेक्षा इसके कि भारत भीरुता से अपने अपमान का एक असहाय द्रष्टा बना रहे मै इस बात को पसन्द करूगा कि वह अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए शस्त्र ग्रहण करे ।

(Teachings of Mahatma Gandhi Edited by Jag Parvesh Chandra P 410) Gandhi's Wisdom Box"

मे इस विषय मे महात्मा गांधी जी स किए प्रश्न और उनके उत्तर विशेष उल्लेखनीय है । पू० महात्मा जी से किसी ने प्रश्न किया —

Suppose some one came and hurled insult at you, should you allow yourself to be thus humiliated ? ' (Gandhi's Wisdom Box P 51)

अर्थात् कल्पना कीजिये कि कोई आया और उसने आपका खुला अपमान किया तो क्या आप अपना इस तरह अपमान होने देगे ?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा जी ने — —

If you feel humiliated, you will be ified in slapping the bully in the face

or taking what ever action you might deem necessary to vindicate your self respect The use of force, under the circumstances, would be the natural consequences if you are not a coward Your non-violent behaviour would then either make the bully feel ashamed of himself and prevent the insult, or make you immune against it so that the insult would remain only in the bully s mouth and not touch you at all"

(Gandhi s Wisdom Box P 51)

अर्थात् यदि तुम अपमानित अनुभव करो तो तुम्हारे लिये अपमान कर्ता के मुख पर चपत मारना अथवा अपने आत्मसन्मान की रक्षा के लिए अन्य कोई भी उचित कार्य करना सर्वथा न्याय सगत होगा । यदि तुम भीरु नही तो इन परिस्थितियों मे शक्ति का प्रयोग स्वाभाविक परिणाम होगा। तुम्हारा अहिंसात्मक व्यवहार या तो आक्रान्ता को लज्जित करके अपमान को रोक देगा अथवा तुम्हें इसके विरुद्ध सुरक्षित कर देगा जिस से तुम उस अपमान से जरा भी प्रभावित न हो ।

एक दूसरा प्रश्न जो महात्मा गाधी जी से किया गया यह था --

कल्पना कीजिये एक पागल है जो हत्या पर तुला हुआ है और आप उस समय वहा उपस्थित हो जाते है। एक उत्तेजित भीड बहुत अधिक क्षुब्ध अवस्था मे है और आप अपने को विवश वा असहाय अनुभव करते है ऐसी अवस्था मे क्या आप उस पागल को रोकने के लिये शारीरिक बल और उस भीड को तितर बितर करने के लिये अश्रु गैस आदि के प्रयोग का अनुमोदन करेंगे ?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा गाधी जी ने लिखा कि —

मैं इस प्रकार के बल प्रयोग के लिये सदा क्षमा कर दूगा किन्तु मैं यह न कहूँगा कि अहिंसात्मक दृष्टिकोण से यह ठीक है। मैं कहूँगा कि आपके अन्दर अहिंसा की उतनी मात्रा न थी जो आपको विशुद्ध अहिंसात्मक व्यवहार मे विश्वास उत्पन्न करावे। यदि आप मे पूर्ण अहिंसा होती तो आप की केवल उपस्थिति ही उस पागल को शान्त करने के लिये पर्याप्त होती।

(Your simple presence would be sufficient to pacify the lunatic)

तुम्हारे अन्दर बुरा कार्य करने वाले के प्रति भी प्रेम और दया का प्रवाह होना चाहिए। जब वह विद्यमान होगा तो वह अपने को किसी क्रिया द्वारा प्रकट करेगा। अश्रुगैस आदि के प्रयोग के सम्बन्ध मे महात्मा जी ने लिखा —

"The use of tear gas is not justified in terms of the non-violent ideal But I would defend its use against the whole world if I found myself in a corner when I could not save a helpless girl from violation or prevent an infuriated crowd from indulging in madness, except by its use God would not excuse me, if I were to plead before him that I could not prevent these things from happening because I was held back by my creed of no-violence (Gandhi's Wisdom Box P 52)

अर्थात् अहिंसा के आदर्श की दृष्टि से अश्रु गैस का प्रयोग भी उचित नहीं है। किन्तु मैं सारे ससार के विरुद्ध भी इसके प्रयोग का समर्थन करूगा यदि मैं अपने को किसी ऐसे कोने मे पाऊ जहा मैं इसके प्रयोग क बिना किसी असहाय कन्या की रक्षा करन और उत्त जित भाड को पागलपन क कार्य मे रोकन म अपन को असमर्थ पाऊ। परमश्वर मुझे क्षमा नही करेगा यदि मै उसक सामन यह निवेदन करू कि मैं इन दुर्घटनाओ को अपन अहिंसा म विश्वास क कारण नही रोक सका।

ये शब्द अत्यन्त स्पष्ट हैं और इन पर किसी टिप्पणी की आवश्यकता नही। पूज्य महात्मा जी का आत्मिक शक्ति मे विश्वास अत्यन्त दृढ था इस लिये ये वाक्य लिख कर भी उन्होने लिखा कि मर लिए यह कहना अधिक अच्छा है कि मेरे अन्दर पर्याप्त अहिंसा नही अपेक्षा इस क कि मैं एक नित्य सिद्धान्त मे अपवाद स्वीकार करू। मेरा अपवाद स्वीकार करने से इन्कार मुझे अहिंसा की विद्या मे पूर्णता प्राप्त करने क लिए प्रोत्साहित करता है। मै शब्दश पतञ्जलि मुनि के सूत्र मे विश्वास करता हूँ कि अहिंसा के सन्मुख हिसा नष्ट हो जाती है।'

वस्तुत उच्च कोटि के ब्राह्मणों, साधु सन्तों और महात्माओं मे ऐसी अद्भुत आत्मिक शक्ति होती है और वे अहिंसा धर्म का पूर्णतया पालन करते हैं। सन्यासी के धर्मों का प्रतिपादन करते हुए मनुस्मृति के।

"क्रुध्यन्तं न प्रतिक्रुध्येदाक्रुष्ट कुशल वदेत्।
(मनुस्मृति६।४८)

इस श्लोक का अनुवाद महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के पञ्चम समुल्लास मे इस प्रकार दिया है—

'जहा कहीं उपदेश वा सवादादि मे कोई सन्यासी पर क्रोध करे अथवा निन्दा करता सन्यासी को उचित है कि उस पर आप क्रोध न करे किन्तु सदा उसक कल्याणार्थ उपदेश ही करे। इत्यादि

इस प्रसङ्ग मे मै एक अत्यावश्यक और मुख्य प्रश्न प्रश्नकर्ता और महात्मा गान्धी जी के अपन ही शब्दो मे उद्धृत किये बिना नही रह सकता जो इस प्रकार है।

किसी सज्जन ने महात्मा जी से प्रश्न किया—

Can a state carry on strictly accord ing to the principles of non violence?

अर्थात् क्या कोई राष्ट्र पूर्णतया अहिंसा के सिद्धान्तानुसार चल सकता है?

इसका उत्तर पूज्य महात्मा गान्धी जी ने निम्न शब्दो मे दिया।

Government can not succeed, in becoming entirely non violent because it represents all the people I do not to day conceive of such a golden age But I do believe in the possibility of a pre-dominantly non violent society And I am working for it A Government representing such society will use the least amount of force But no government worth its name can suffer anarchy to prevail Hence I have said that

even under a Government based primarily on non-violence a small police force will be necessary (Gandhi s Wisdom Box P.52 53)

अर्थात् एक सरकार सर्वथा अहिंसात्मक होने मे नही सफल हो सकती क्यो कि यह सब लोगों की प्रतिनिधि है। मैं आज ऐसे स्वर्णयुगकी कल्पना नहीं करता किन्तु मेरा एक मुख्यतया अहिंसात्मक समाज की सभावना मे विश्वास है और मैं उसके लिये प्रयत्नशील हू । इस प्रकार क समाज की प्रतिनिधि भूत सरकार शक्ति वा हिंसा का कम से कम प्रयाग करेगी। परन्तु कोई भी सरकार अराजकता की अनुमति नहीं दे सकती। इस लिये मैं ने कहा है कि मुख्यतया अहिंसा पर आश्रित सरकार मे भी थोडी सी पोलीस शक्ति आवश्यक होगी।

इन वाक्यों मे क्षात्र शक्ति के उपयोग की आवश्यकता को पूज्य महात्मा जी ने स्वीकार किया ही है। उनके जीवनकाल मे और जहा तक हमे ज्ञात हुआ है उनका आशीर्वाद प्राप्त करके हमारी वर्तमान राष्ट्रीय सरकार ने काश्मीर मे अपनी सेना भेजी थी जिस कार्य की सभी ने मुक्त कण्ठ से प्रशसा की। इस प्रकार महर्षि दयानन्द द्वारा वेदों के आधार पर प्रतिपादित अहिंसा विषयक सिद्धान्त ही समाज और राष्ट्रहित की दृष्टि से सर्वथा उपयोगी और व्यवहार्य हैं। महात्मा गान्धी जी पूर्ण अहिंसा के उच्च आदर्श के पालन करने करानेका प्रयत्न करते रहे पर उन्हे भी विशेष अवस्था में हिंसा के प्रयोग की आवश्यकता स्वीकार करनी पडी अत विशेष अन्तर नहीं।

साहित्य समीक्षा

आर्यस्मृति—लेखक श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० प्रकाशक—कला प्रेस, इलाहाबाद। मूल्य १॥)

श्री प० गङ्गा प्रसाद जी उपाध्याय आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् लेखक हैं जिनकी आस्तिक वाद, (जिस पर उन्हें १२००) का मङ्गला प्रसाद पारितोषक हिन्दी साहित्य सम्मेलन से प्राप्त हुआ था) अद्वैत वाद, जीवात्मा, शाङ्कर भाष्यालोचन इत्यादि विद्वत्ता पूर्ण पुस्तकों से आर्य जनता भलीभांति परिचित है। उन्होंने शाहपुरा निवासी श्री प० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री प्रजाचक्षु इत्यादि विद्वान् मित्रों की सहायता से यह आर्य स्मृति १५ अध्यायों और ८५४ श्लोकों में तय्यार की है। धर्म का मूल, आर्यानार्यदस्यु विवेचन, ब्रह्मचर्य, गृहस्थाश्रम व्यवस्था, वानप्रस्थ, सन्यास, वर्णचतुष्टय, ब्राह्मणकर्तव्य निरूपण, राज्य व्यवस्था वैश्य कर्म, शूद्र कर्म, आपद्धर्म व्यवस्था, प्रायश्चित्त, शुद्धि, दाय भाग, यज्ञ इन विषयों पर क्रमश अनुष्टुप् छन्द के सरल श्लोकों द्वारा इन १५ अध्यायों मे वेदादि सत्य शास्त्रो और महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थों के आधार पर प्रकाश डाला है। नीचे मूल संस्कृत श्लोकों का अनुवाद भी दे दिया है जिस से संस्कृतानभिज्ञ सज्जन भी लाभ उठा सके। इस का प्रारम्भ निम्न श्लोक से होता है जिसमे इसके आधार और उद्देश्य का संक्षिप्त वर्णन है—

आलोच्य श्रुति सिद्धान्त, मन्वादींना मत तथा।
देश कालौ यथा प्रज्ञ, स्मृतिं वक्ष्याम उत्तमाम् ॥

इस का अनुवाद लेखक महोदय ने यों दिया है—

"वैदिक सिद्धान्तों और मनु आदि ऋषियों के मत को जान कर, देश और काल का विचार करके यह उत्तम (Uptodate) स्मृति बनाई जाती है।" 'राज्यव्यवस्थावर्णनम्' इस शीर्षक का ८ म अध्याय जिस मे ११८ श्लोक है विशेष रूप से वर्तमान काल की आवश्यकताओं को ध्यान मे रख कर लिखा गया है। उसके अन्तिम दो श्लोक उल्लेख योग्य है—

मुकुटैर्मणियुक्तेर्वा, प्रासादैर्वा खचुम्बिभि ।
न राजते तथा राजा, यथा लोकपकर्मभि ॥
धनी राजा प्रजा दीना, दुःखी लोक सुखी नृप ।
यस्मिन् राज्ये व्यवस्थेय, ततो लक्ष्मी पलायते ॥

अनुवाद—राजा की शोभा उसके मणिजड़ित मुकुटो तथा ऊचे महलों मे नहीं है। उसकी शोभा लोकोपकारक कामों मे है। जहॉ राजा धनी हो प्रजा निर्धन हो, राजा सुखी हो प्रजा दुःखी हो वहा से लक्ष्मी शीघ्र भाग जाती है।

मान्य लेखक की उदात्तभावना और वैदिक धर्मनिष्ठा को दर्शाने के लिये निम्न लिखित २ श्लोको को यहॉ उद्धत करना हमे उचित प्रतीत होता है।

"कथ नो वैदिका धर्मो देशेषु प्रचरिष्यति।
इति चिन्तापरैर्भाव्यम्, आर्यावर्तीयपण्डितै ॥ ११३
धर्मो वैदिक एवाय, सुख शान्ति विधायक ।
न प्रचारोऽस्यस्यावत्स्यात्, तावद् भू कलहस्थली ॥ ११४

अनुवाद—अब आर्यावर्त के विद्वानो को चाहिये कि ऐसी चिन्ता कर जिससे अन्य देशो मे वैदिक धर्म का प्रचार फैले। ११४-वैदिक धर्म ही सुख और शान्ति का देने वाला है। जब तक

इस का प्रचार नहीं होगा ससार मे कलह बनी रहेगी।"

यहाँ इतना लिख देना आवश्यक है कि जब तक सार्वदेशिक सभा विशेषत तदन्तर्गत धर्मार्य सभा की मुहर ऐसे ग्रन्थ पर न लग जाए तब तक इसे वैयक्तिक प्रयत्न समझना चाहिये। हम मान्य उपाध्याय जी के इस वैयक्तिक प्रयत्न का अभिनन्दन करते हैं यद्यपि प्रत्येक मानवी कृति की तरह इस की रचनादि में भी अभी हमें कहीं २ कुछ संशोधन की आवश्यकता प्रतीत होती है। गुणग्राही विद्वान् यदि ऐसे संशोधनों को शुद्धभाव से लिख कर मान्य लेखक महोदय के पास भेजें जिससे इस की उपयोगिता में और भी वृद्धि हो तो हमें निश्चय है कि वे उनका सहर्ष स्वागत करेंगे क्योंकि उन का पूर्णता का कोई दावा नहीं है।

मूर्तिपूजा विचारः—लेखक श्री प० शिव शर्मा जी महोपदेशक, प्रकाशक श्री प्रकाश चन्द्र जी विद्यार्थी अध्यक्ष शर्मा आर्य पुस्तकालय सभल यू० पी० मूल्य ।≈)

श्री प० शिव शर्मा जी महोपदेशक एक सुप्रसिद्ध आर्य विद्वान् हैं जिनकी सत्यार्थ निर्णय, धर्म शिक्षा, चमन इस्लाम की सैर इत्यादि अनेक उत्तम पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। प्रस्तुत पुस्तका में मान्य पण्डित जी ने मूर्ति पूजा पर शास्त्र तथा तर्क की दृष्टि से विस्तृत विचार करते हुए उन सब प्रमाणों और युक्तियों का खण्डन किया है जो इसके समर्थकों की ओर से प्राय प्रस्तुत किये जाते हैं और उनकी निस्सारता सिद्ध की है। यह पुस्तक सब सिद्धान्त प्रेमियों और जिज्ञासुओं के लिये उपयोगी है। शास्त्रार्थ करने वालों के लिये तो यह अत्यधिक सहायक होगी। श्री प० शिव शर्मा जी का परिश्रम अत्यन्त प्रशसनीय है किन्तु खेद है कि इसकी छपाई अच्छी नहीं हुई। एक तो कागज ही अच्छा नहीं लगा दूसरा छापे की कई भयङ्कर अशुद्धियां सस्कृत उद्धरणों में रह गई हैं जिन्हें आशा है अगले सस्करण में अवश्य ठीक कर लिया जाएगा जिससे इस अत्यन्त परिश्रम से लिखी विद्वत्ता पूर्ण पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ जाए। पुस्तक सब जिज्ञासुओं और विद्वानों के लिये उपादेय है॥

ध० दे

एक प्रश्न का मान्य प्रधान जी द्वारा उत्तर

श्रीमान् जी नमस्ते।

उत्तर देकर कृतार्थ करें कि आया आर्य समाज महात्मा गांधी जी का जन्म तथा मृत्यु दिवस राम और कृष्ण के जन्म उत्सवों की भाँति मना सकता है या नहीं, युक्ति युक्त उत्तर दे कर कृतार्थ करें।

भीमसेन वर्मा मन्त्री आर्य समाज जबलपुर

उत्तर

श्री मन्त्री जी आर्य समाज जबलपुर

श्रीमन्! नमस्ते।

महात्मा गान्धी का धार्मिक दृष्टि से आर्य समाज से विशेष निकट सम्बन्ध नहीं था, अत उनका दिवस आर्य समाज समूह रूप से नहीं मना सकता।

(ह०) इन्द्र विद्या वाचस्पति
प्रधान सार्वदेशिक सभा

दयानन्द पुरस्कार निधि

(१ लाख रुपये की अपील)

प्राप्त दान सूची

१०) श्री नेत्रवैद्य सुखदेव जी सोजत सिटी (मार्च ४६ के अंक में भूल से १५) के स्थान पर ५) छपे

२०) श्री आर्यसमाज बिड़ला जूट मिल बिड़लापुर (२४ परगना)

५) श्रीमती सुशील देवी जी जौहरी लखीमपुर

५) " ला० हरनारायण सुन्दर लाल जी एडवोकेट

५) " डा० मदनलाल जी "

५) " जगन्नाथप्रसाद जी गुप्त } द्वारा वन व रीलालजा चेरीवाली

५) " धनिक लाल जी

५) हुकमचन्द्र ओं शकर जी जैजों (होशियारपुर)

५) " पं० गङ्गाप्रसाद जी जयपुर

३५) " प्रधान आर्य समाज गगोह (सहारनपुर)

५) " जगदीश चन्द्र जी } द्वारा आ० स० पीपाड

५) " भवरी लाल जी भूतडा

५) " धर्मसिह जी }

५) " जयनारायण जी } आर्य समाज

५) " ताराचन्द्र जी }

१३।-) छात्राए वैदिक कन्या विद्यालय } आबूरोड द्वारा

१॥≡) अन्यों से

५) श्री राजकुमार अलखकेत सुमन सरोज वोसदा सेठ via बिल्ली मोरा

१०१) श्री ऐन० वी० राव जी बम्बई

५) आर्य समाज झालावाड

५) वा० प्रेमबहादुरजी वर्मा प्रोफेसर इन्टर कालेज झालावाड

५) उज्जैन (ग्वालियर)

५) " म० अमर सिंह जी आर्यमहोपदेशक राजस्थान अजमेर

५) श्रीमती विद्यावती जी धर्मपत्नी "

५) " अजना कुमारी जी सुपुत्री "

५) " वीरेन्द्र कुमार जी सुपुत्र "

२८१)

४०५॥=) गतयोग

६८६॥=)

(क्रमश)

अपना अपना भाग अवश्य और शीघ्र भेजिये।

गङ्गा प्रसाद उपाध्याय
मन्त्री—सार्वदेशिक सभा

साहित्य समीक्षा

वेद में स्त्रियां—लेखक श्री प० गणेशदत्त जी 'इन्द्र' विद्यावाचस्पति प्रकाशक—पं०जगत्‌कुमार जी अध्यक्ष साहित्य मण्डल दीवानहाल देहली मूल्य १॥)

यह उपयुक्त पुस्तक का २ य संस्करण है जिस मे स्त्रियों के कर्तव्य विषयक ३१ वेद मन्त्रों की सरल और हृदयङ्गम व्याख्या की गई है। स्त्रियों के पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय सभी कर्तव्यों पर प्रकाश डालने वाले मन्त्रो का उत्तम सकलन करके उनकी उपयुक्त व्याख्या वर्तमान अवस्था को ध्यान मे रख कर की गई है और उनके अन्दर प्राचीन आर्य आदर्शों को भरने का यत्न किया गया है जिनसे दुर्भाग्यवश आजकल वे प्राय विमुख हो रही है। पुस्तक अत्युत्तम है। मैं चाहता हू कि आर्य कन्या पाठशालाओं तथा अन्य आर्य सस्थाओं की उच्च कक्षाओं मे उनका विशेष प्रचार पाठ्य पुस्तक के रूप मे लगा कर किया जाए। व० दे०

Real Hinduism

लेखक श्री डा० गोकुल चन्द जी नारग, भूतपूर्व सचिव पजाब गवर्नमेण्ट, पृष्ठ स० ३५०, मूल्य ६॥) आकृति बहुत सुन्दर, कवर पेज चित्ताकर्षक।

वैदिक सस्कृति के विषय मे यह एक बहुत उत्तम पुस्तक है। इस मे वैदिक धर्म का महत्त्व दिखाकर बताया गया है कि असली हिन्दू धर्म वैदिक धर्म ही है वर्तमान रूढिवाद नहीं। पहले अध्याय मे भारतवर्ष के प्राचीन गौरव और उसकी विश्व व्यापी उन्नति का वर्णन है। इसके अतिरिक्त शेष १५ अध्यायों मे ईश्वर का तात्त्विक स्वरूप, आत्मा, मुक्ति, आश्रम और वर्ण, शुद्धि, स्त्री जाति आदि आदि उपयोगी विषयो पर महत्त्व पूर्ण विचार दिये गए है। भाषा मे प्राबल्य और रस है। इस मे सब कुछ आर्य समाज के ही विषय में हैं। केवल आर्य समाज का नाम नहीं है। पुस्तक उपयोगी है।

गंगा प्रसाद उपाध्याय

श्री प० हरिशरण जी सिद्धान्तालङ्कार कृत प्रार्थना मन्त्र, श्री पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट कृत 'कर्म व्यवस्था' तथा समालोचनार्थ प्राप्त अन्य पुस्तकों और पत्र पत्रिकाओ की आलोचना अगले अङ्क मे की जायगी।

श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित।

१९४९ ई०
२००५ सं०

सम्पादक—

वार्षिक मूल्य
विदेश १० शि

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २६ | मई १६४६ ई० २००५ वैशाख दयानन्दाब्द १२७ | अङ्क ३

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् अग्ने वैश्वानर विश्वैर्मा देवैः पाहि स्वाहा।
ओ३म् विश्वम्भर विश्वेन मा भरसा पाहि स्वाहा॥ अथर्व २-१६-४-५

शब्दार्थ—हे (वैश्वानर अग्ने) विश्व के नेता वा सचालक ज्ञान स्वरूप परमेश्वर! तू (विश्वै देवै) सब दिव्यगुणो, शक्तियो और सत्य निष्ठ ज्ञानियो के द्वारा (मा पाहि) मेरी रक्षा कर (स्वाहा) मैं अपना तन मन धन तेरे प्रति अर्पित करता हूँ। हे (विश्वम्भर) सारे ससार का भरण पोषण करने वाले जगदीश्वर तू (विश्वेन भरसा) अपनी सम्पूर्ण धारक शक्ति से (मा पाहि) मेरी रक्षा कर (स्वाहा) मैं उत्तम वाणी को प्रयोग करता और अपने को तेरे प्रति अर्पित करता हूँ।

विनय—हे सारे ससार के स्वामिन् परमेश्वर! तुम सर्व व्यापक, सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान् जगदाधार हो। अपनी अनन्त शक्ति से तुम सम्पूर्ण जगत् को धारण कर रहे हो। हमारी तुमसे यही प्रार्थना है कि हम मे दिव्य गुणो तथा शक्तियो को भर दो। सत्यनिष्ठ ज्ञानियो का उपदेश हम सदा सुने और उस के अनुसार आचरण करते हुए सदा आनन्दित रहें। हमारा सम्पूर्ण जीवन तुम्हारे अर्पित हो जिस से हम सर्वदा तुम्हारी रक्षक शक्ति का अनुभव करें।
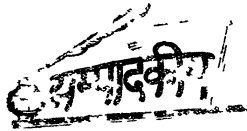
माननीय सरदार पटेल चिरंजीवी हों:—

भारत सरकार के उप प्रधान मन्त्री माननीय सरदार वल्लभ भाई पटेल देश के उन मान्य नेताओं में से हैं जिन को योग्यता, निर्भीकता, कर्मशीलता, दृढ़ अध्यवसाय तथा स्पष्टवादिता पर समस्त राष्ट्र गर्व कर सकता है। समस्त देश में फैली हुई सैकड़ों देशी रियासतों को बुद्धिमत्ता पूर्वक एक सूत्र में आबद्ध करना यह स्वयम् उनका इतना अधिक महत्त्व पूर्ण कार्य है जिस की जितनी भी प्रशंसा की जाए उतनी ही थोड़ी है। गत ३० मार्च को भारतीय रियासतों के सब से बड़े संघ और राजनैतिक एवं शासन की दृष्टि से भी सब से बड़ी इकाई महा राजस्थान संघ की स्थापनार्थ जयपुर जाते हुये दुर्भाग्यवश वे विमान की दुर्घटना में फंस गये। स्वभावत नियत समय पर जयपुर के विमान अड्डे पर न पहुंचने के कारण सर्वत्र चिन्ता की लहर दौड़ गई। परमेश्वर की अपार कृपा से वे इस दुर्घटना से बाल २ बच गये और सुरक्षित जयपुर पहुंच गये जिसके लिये भगवान् को हम शतशः धन्यवाद देते हैं और माननीय सरदार पटेल को बधाई देते हुए परमेश्वर से उन की दीर्घायु और आरोग्य की प्रार्थना करते हैं। लगभग ७५ वर्ष की आयु में भी वे देश सेवा में जिस कुशलता से दिन रात तत्पर हैं वह नितान्त अभिनन्दनीय है। ऐसे सच्चे, निर्भीक, देश भक्त पुत्रों की भारत माता को अभी बहुत आवश्यकता है।

कुछ अत्यन्त उपयोगी नवीन विधान:—भारतीय राष्ट्र संसद् के गत अधिवेशन में जो कई अत्यन्त उपयोगी विधान (क़ानून) स्वीकृत हुए हैं उनमें से निम्न लिखित विशेष उल्लेखनीय हैं—

[१] श्री ठाकुरदास भार्गव द्वारा प्रस्तुत विवाहार्थ न्यूनतम आयु को बढ़ाने आदि विषयक संशोधन।—

[२] हिन्दुओं, सिक्खों, जैनियों की जाति उपजातियों में परस्पर विवाह की वैधता विषयक प्रस्ताव—

इन में से प्रथम प्रस्ताव द्वारा कन्याओं के लिये विवाहार्थ न्यूनतम आयु को जो प्रचलित शारदा ऐक्ट के अनुसार १४ वर्ष है बढ़ा कर १५ वर्ष कर दिया गया। श्री भार्गव ने विवाहार्थी पुरुषों की आयु १८ से २० करने का भी प्रस्ताव रक्खा था जिसे प्रवर समिति [सिलेक्ट कमेटी] ने स्वीकार भी कर लिया था किन्तु खेद है कि माननीय श्री गाडगिल ने भारत सरकार की ओर से इस का विरोध करते हुए कहा कि एक लड़का १८ वर्ष की आयु में सेना में भर्ती योग्य समझा जाने लगता है पर बिल के अनुसार वह उस आयु में विवाह योग्य नहीं समझा जाएगा। शारदा

ऐक्ट मे जो मूल आयु रक्खी गई है वही कायम रहनी चाहिये।"

हमे श्री गाडगिल के इस भाषण से बड़ा आश्चर्य और दुःख हुआ। चरक सुश्रुत आदि आयुर्वेद के ग्रन्थों मे पुरुष और स्त्री के लिये विवाह तथा मैथुनार्थ न्यूनतम आयु २४ और १६ मानी गई है और यहा तक लिखा है कि

ऊन षोडशवर्षायाम्, अप्राप्त पञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं, कुक्षिस्थ स विपद्यते॥
जातो वा न चिर जीवेद्, जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रिय॥

अर्थात् २४ से कम आयु का पुरुष यदि १६ से कम आयु वाली स्त्री से मैथुन करता है तो या तो गर्भ नष्ट हो जाता है यदि बच्चा उत्पन्न होता है तो वह चिरजीवी नहीं होता, यदि हो तो वह बड़ा दुर्बल होता है।

जिस समय शारदा ऐक्ट बनाया गया था बहुत छोटी २ आयु मे बालक बालिकाओं के विवाह हो जाते थे अत उस समय ठीक दिशा में प्रथम पग के रूप मे १८ और १४ की आयु को निश्चित करना बुरा न था पर अब तो उसे बढ़ा कर २४ और १६ कर देना ही सर्वथा उचित होता। १८ से २० कर देने के नर्म प्रस्ताव का भी भारतीय सरकार के एक माननीय मन्त्री द्वारा विरोध सर्वथा अनुचित है पुरुष के लिए१८ वर्ष की आयु को विवाहार्थ पर्याप्त समझना वेदादि सत्य शास्त्र, आयुर्वेद, आरोग्य तथा अनुभव किसी भी दृष्टि से ठीक नहीं। पुरुष और स्त्री की आयु में ८ वर्ष का अन्तर प्राचीन शास्त्रकारों ने उचित माना है वर्तमान नवीन विधान के अनुसार यह केवल ४ वर्ष का रह जाता है जो सर्वथा अपर्याप्त है अत इस विषय में वैध आन्दोलन तब तक जारी रहना चाहिये जब तक पुरुष और स्त्री के लिये विवाहार्थ न्यूनतम आयु २४ और १६ नहीं कर दी जाती। श्री भार्गव का एक प्रस्ताव यह था कि विषम विवाह को दूर करने के लिये यह आवश्यक है कि ४५ वर्ष से अधिक आयु का पुरुष १८ वर्ष से कम आयु की लड़की से विवाह न कर सके। यह दुःख की बात है कि प्रवर समिति ने भी इस प्रस्ताव को स्वीकृत करने योग्य न समझा। हमारे विचार में तो ऐसा प्रतिबन्ध विषम विवाह निवारणार्थ जिस का भयङ्कर परिणाम बाल विधवाओं की बहुत बड़ी सख्या के रूप मे दृष्टि गोचर होता है अत्यावश्यक है। ऐसे विधान को बनवाने के लिये भी पुन प्रयत्न अवश्य करना चाहिये। बाल विवाह निरोधक विधान को वस्तुत प्रभाव जनक बनाने के लिये आर्थिक दण्ड (जुर्माने) के अतिरिक्त कारावास का दण्ड जोड़ना अत्यन्त आवश्यक था ससद् ने उस सशोधन को स्वीकृत करके अच्छा ही किया है।

अन्तर्जातीय विवाह समर्थक विधान की पुष्टि हम सार्वदेशिक' के मार्च अक मे प्रकाशित टिप्पणी द्वारा कर ही चुके हैं। हम पुन इस का अभिनन्दन करते हुए यह आशा करते हैं कि इस प्रकार अन्तर्जातीय विवाहों के मार्ग मे वैधानिक बाधा दूर हो जाने पर जाति बन्धन तोड़ कर विवाह जिन मे केवल गुण कर्म स्वभाव का ही विचार किया जाएगा अधिकाधिक सख्या मे होने लगेंगे। निस्सन्देह ऐसे विधान का बन जाना जाति भेद निवारक आर्य परिवार सघ जैसी

सस्था के लिये अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है। इस से उस का क्षेत्र और अधिक विस्तृत हो जाता है। इस विधान से लाभ उठाते हुए युवक युवतियो को सकीर्णता वर्धक जातिभेद की दल दल से ऊपर उठाने के लिये निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिये। आर्य समाज को इन दोनों विषयों मे विशेष रूप से प्रयत्न जारी रखना चाहिये।

श्री लब्भूराम जी का अनुकरणीय कार्यः—

आनन्दाश्रम लुधियाना के श्री लब्भूराम जी एक अत्यन्त उत्साही वृद्ध महानुभाव हैं जिन की गुरुकुल और आर्य समाज के कार्यो के प्रति निष्ठा को हम न केवल अभिनन्दनीय किन्तु अनुकरणीय समझते है। आप अपनी प्रतिज्ञानुसार अपनी मित्र मण्डली की सहायता से गुरुकुल विश्व विद्यालय कागडी के लिये २ लाख से अधिक की राशि एकत्रित करके दे चुके हैं। अभी गत मास 'सार्वदेशिक' आदि पत्रो मे 'दयानन्द पुरस्कार निधि' के लिये सार्वदेशिक सभा के माान्य मन्त्री जी की अभ्यर्थना (अपील) पढ कर आपने अपने परिवार तथा मित्रो से एकत्रित करके २००) मान्य मन्त्री जी को गुरुकुलोत्सव के अवसर पर दे दिये है और अधिक राशि के सग्रहार्थ वे प्रयत्नशील है। 'सार्वदेशिक' की ग्राहक वृद्धि मे भी वे सदा तत्पर रहते है। ८० से अधिक वर्ष की आयु मे अस्वस्थ होते हुए भी श्री लब्भूराम जी की यह कर्तव्य परायणता और वैदिक धर्म तथा आर्य समाज के प्रति निष्ठा सब आर्यो के लिये अनुकरणीय है। हम समस्त आर्यो से अनुरोध करते हैं कि वे भी अपने अन्दर ऐसे ही उत्साह को धारण करके उत्तम साहित्य निर्माणार्थ आयोजित दयानन्द पुरस्कार निधि आदि' की योजनाओं को शीघ्र क्रियान्वित करने मे पूर्ण सहयोग प्रदान करे तथा 'सार्वदेशिक' परिवार की वृद्धि में भी तत्पर रहे।

सच्चे स्वराज्य की स्थापनार्थ दो अत्यावश्यक विषय—

भारत राजनैतिक दृष्टि से स्वाधीनता प्राप्त कर चुका है किन्तु सच्चे स्वराज्य की स्थापना के लिये अभी बहुत से विषयों मे प्रयत्न करने की आवश्यकता है। इन मे से एक तो आर्य भाषा वा सस्कृत निष्ठ हिन्दी को राष्ट्र भाषा और देव नागरी लिपि को राष्ट्र लिपि के रूप मे घोषित कर के उन को पूर्ण क्रियात्मक रूप देना और दूसरा गोवध का सर्वथा निषेध है। इन दोनों अत्यावश्यक विषयों की ओर सब से पहले महर्षि दयानन्द ने देशवासियों का ध्यान आकर्षित किया था इस मे सन्देह नहीं। श्री दुर्गाप्रसाद जी नामक सज्जन के नाम शुद्ध श्रावण शुक्ल ३ सवत् १९३८ को उदयपुर से पत्र भेजते हुए महर्षि दयानन्द ने लिखा था कि "अति शोक करने की यह बात है कि आज कल सर्वथा अपनी आर्य भाषा के राज कार्य मे प्रवृत्ति होने के अर्थ उस मे पजाब हाथा आदि से मेमोरियल भेजे गये है परन्तु मध्य प्रान्त, फर्रुखाबाद, कानपुर, बनारस आदि स्थानों से नहीं भेजे गये ऐसा ज्ञात हुआ है। यह काम एक के करने का नहीं और अवसर चूके वह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ तो आशा है मुख्य सुधार की एक नींव पड जाएगी। गोरक्षार्थ कितनी सही हुई है? इस विषय मे

ध्यान देना अवश्य है। बड़े हर्ष के ये दोनो विषय प्रकाशित हुए हैं। इस लिये जहा लो हो सके तन मन धन से सब आर्यो को अति उचित है इन दोनों कार्यो के करने मे प्रयत्न करे। बारम्बार ऐसा ही निश्चय होता है कि ये दो सौभाग्यकारक अंकुर आर्यो के कल्याणार्थ उगे हैं। अब हाथ पसार न लेवे तो इस से दौर्भाग्य की दूसरी क्या बात होगी ?"

दुर्भाग्यवश अपने जीवित काल मे महर्षि की यह आशा पूर्ण न हो सकी किन्तु अब देशवासियो का ध्यान इन दोनो अत्यावश्यक विषयो की ओर गया है। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान सेठ गोविन्द दास जी ने १७ अप्रेल को एक सार्वजनिक सभा मे ठीक ही कहा कि इस देश के निवासी स्वराज्य का वास्तविक अर्थ तब तक न समझ सकेंगे जब तक गो वध सर्वथा बन्द न कर दिया जाए और हिन्दी को राष्ट्र भाषाके रूप मे स्वीकार न कर लिया जाए। उन्होंने इस बात पर खेद प्रकट किया कि यद्यपि केन्द्रीय सरकार ने यह आदेश दिया हुआ है कि १० वर्ष से कम आयु की गौओ की हत्या न की जाए तो भी ऐसी हत्या अभी तक प्रचलित है।

हम देशवासियों, नेताओं, सविधान सभा के सदस्यों और सरकार का ध्यान इन दोनो अत्यावश्यक विषयो की ओर पुन आकृष्ट करते हुए उन से अनुरोध करते हैं कि वे इन्हें शीघ्रतम क्रियात्मक रूप दे। सविधान सभा के आगामी अधिवेशन मे जो १६ मई से प्रारम्भ होगा राष्ट्र भाषा और लिपि विषयक प्रस्ताव का निश्चय अवश्य ही सस्कृत निष्ठ हिन्दी और देव नागरी लिपि के पक्ष मे करवा कर ही छोडे तथा गो वध निषेध विषयक विधान भी अवश्य बनवावें। वस्तु भारतीय विधान के प्रेरक सिद्धान्तो मे उसका आना पर्याप्त नही है। माननीय प० जवाहरलाल जी ने १६ अप्रेल को देहली विश्वविद्यालय म भाषण देते हुए स्वीकार किया है कि हिन्दी भारत मे सब से अधिक शक्ति शालिनी भाषा होगी। अब उन्हे इसकी राष्ट्र भाषा के रूप मे घोषित करने मे सर्वथा बाधक न बनना चाहिये। इस विषयक जनता की माग सर्वथा न्याय सगत है उस मे कोई सकीर्ण हृदयतानही। इन दोनो विषयो मे आन्दोलन तब तक निरन्तर जारी रहना चाहिये जब तक पूर्ण सफलता न मिल जाए।

हैदराबाद में ईसाई मत परिवर्तन के अनुचित साधन:—

हैदराबाद रियासत के बीदर जिले मे ईसाई प्रचारक हरिजनो को ईसाई बनाने के लिये जिन अत्यन्त अनुचित और निन्दनीय साधनो को काम में ला रहे है उनका विवरण पाठकों ने अनेक समाचार पत्रो मे पढा होगा। श्रद्धानन्द मिशन नासिक के कार्यकर्ता श्री गोपालराव बावामी ने उन ग्रामो का निरीक्षण करके हैदराबाद के सैनिक शासक श्री जे० एन् चौधरी को उसका विवरण भेजा है जिस मे बताया है कि जिन लोगों ने पुलिस कार्यवाही के पश्चात् या पूर्व नियम विरुद्ध (गैर कानूनी) कार्य किये थे जब उन की पकड धकड शुरु हुई तो ईसाई प्रचारकों ने उन्हे यह विश्वास दिलाया कि यदि वे ईसाई मत को स्वीकार

कर लेंगे तो उन्हे बचा लिया जाएगा। जिन्हे ईसाई बनाया गया है उन्हे यह कहने का आदेश दिया गया है कि उन्हे ईसाई बने हुए बहुत वर्ष हो गये है। कई मन्दिरो को रात का रात गिरा दिया गया है। ईसाई प्रचारक अशिक्षित हरिजनो मे यह झूठा प्रचार फला रहे है कि बहुत शीघ्र हैदराबाद रियासत के हिन्दू मुसलमानो मे भीषण सघर्ष होने वाला है अत जो ईसाई बन जाएगे वे इस सघर्ष की लपटो से बच जाएगे। ये ईसाई प्रचारक शासन और काग्रेस के विरुद्ध प्रचार कर रहे है। हरिजनो को ईसाई बना कर कम्युनिस्ट बनने की प्रेरणा भी कई प्रचारक कर रहे है जिस के सम्बन्ध मे कई लिखित प्रमाण मिले हैं ऐसा बादामी जी ने लिखा है। ये ईसाई प्रचारक तरह तरह के प्रलोभन देकर हरिजनो को राष्ट्र विरोधी, देश द्रोही और प्रतिगामी बनाने का भरसक प्रयत्न कर रहे है। ये सामाजिक बहिष्कार का भी भाव प्रकट कर रहे है। जो हरिजन ईसाई हो चुके है वे अपने अन्य सम्बन्धियो को हर प्रकार के बहिष्कार की धमकी दे रहे है जिस से वे अशिक्षित मत परिवर्तन पर विवश हो रहे हैं। प्राय ईसाई प्रचारक जिला बीदर के कलक्टर मि० रोबेलो के नाम का भी उपयोग कर रहे है जो स्वयम् ईसाई है।

यह बताने की आवश्यकता नही कि निर्धन और अशिक्षित दलितों को ईसाई बनाने के लिये ऐसे अनुचित साधनों का प्रयोग कितना निन्दनीय है? हैदराबाद के सैनिक शासक तथा अन्य अधिकारियों का ध्यान इसकी ओर आकृष्ट करते हुए हम उनसे अनुरोध करते हैं कि वे ऐसे निन्दनीय साधनो को प्रयोग मे लाने वाले ईसाई प्रचारकों के विरुद्ध कठोर कार्यवाही करें, उन्हे उचित दण्ड दे और उनकी सस्थाओं— विद्यालय, हस्पताल आदि को जो सरकारी सहायता दी जाती है उसे तत्काल बन्द कर दे क्यो कि उस का घोर दुरुपयोग किया जा रहा है। इसके साथ ही हैदराबाद की हिन्दू जनता का ध्यान भी हम उस के कर्तव्य की ओर आकृष्ट करना आवश्यक समझते हैं क्यो कि यह ज्ञात हुआ है कि पुराने ढग के लिङ्गायत तथा अन्य लोग दलितो के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते। कई स्थानो पर नाई हरिजनों की हजामत नही बनाते, गर्मियों की कड़कती धूप मे भी उन्हें एक दो मील की दूरी से पानी लाना पड़ता है। ग्रामों में जब कोई अधिकारी आता है तो उन्हें उन का सामान मुफ्त ढोना पड़ता है। पटेल पटवारी अपने पत्र डालने के लिये ८-१० मील दूर तक भेजने के लिये इन्ही हरिजनों को पकड़ता है और प्राय उस परिश्रम के लिये उन्हें कुछ नहीं देता। इन्कार करने पर उन्हे बुरी तरह तग करते हैं। वे प्रत्येक ग्राम मे सरकारी या अन्य पाठशाला मे हरिजनों के बच्चो को नहीं लेते अथवा उन के साथ घृणा का व्यवहार किया जाता है। इन बुराइयों को दूर करना आवश्यक है केवल ईसाई प्रचारकों को दोष देने से काम नही चल सकता। आर्य कार्यकर्ताओं को प्रेम पूर्वक समझा बुझा कर इन बुराइयों को दूर कराने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।

तीन प्रतिष्ठित आर्यों का शोक जनक देहावसानः—

पिछले दिनों आर्य जगत् के तीन प्रतिष्ठित आर्यों का देहावसान हुआ है जिस का सब को आवश्य खेद होगा। एक तो पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्य कर्ता प्रधान तथा गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय के भूत पूर्व मुख्याधिष्ठाता श्री पं० विश्वम्भर नाथ जी जिन के विषय मे श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति का 'एक आदश कर्म योगी' शीर्षक लेख पाठक इसी अङ्क मे पढ़ेंगे। दूस। पजाब प्रतिनिधि सभा के कोषा॰ श्री नोतन दास जी गम्भीर जिन्हों ने अपने जीवन को संकट मे डालकर भी प्रतिनिधि सभा की वस्तुओ को सुरक्षित भारत पहुँचाया था। इन दोनों महानुभावों के देहावसान से पंजाब प्रतिनिधि सभा को तो अत्यधिक तथा असह्य हानि पहुची जिस की पूर्ति बड़ी कठिन है। तीसरे सज्जन जिन का ६ अप्रैल को मद्रास में देहावसान हुआ है श्री माणिक लाल बेचर जी शर्मा थे जिन्हें अपने वैयक्तिक परिचय के आधार पर हम दक्षिण भारत मे आर्य धम प्रचार का प्रथम स्तम्भ या प्राण कह सकते हैं। वे गुजराती दानवीर सज्जन थे जो मद्रास में बस गये थे और आर्य भवन होटल इत्यादि व्यापार के द्वारा जिन्हों ने धन कमा कर उसका सदुपयोग गुरुकुल शिक्षाप्रणाली, राष्ट्रीयउन्नति तथा वैदिक धर्म के प्रचारार्थ किया था। सत्यार्थ प्रकाश के अंग्रेजी अनुवाद तथा अन्य आर्य साहित्य के प्रकाशन, आर्य समाज की स्थापना और धर्म प्रचारादि कार्यो की सहायतार्थ आप की थैलिया सदा खुली रहती थीं। ऐसे दानवीर उत्साही आर्य सज्जन के देहावसान से दक्षिण भारत को अति विशेष हानि हुई है इस में कोई सन्देह नहा। हम इन तीनों प्रतिष्ठित महानुभावों के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए उन की सद्गति के लिये प्रार्थना करते तथा उनके सब सम्बन्धियों से समवेदना और सहानुभूति प्रकट करते है। साथ ही हम समस्त आर्यो से उन के उत्तम गुणो तथा अदम्य उत्साह को अपने अन्दर धारण करने की प्रेरणा करते है।

रेडियो पर वेद कथादि.—

आय समाज दीवान हाल देहली के १७-४-४९ के साप्ताहिक सत्सङ्ग का निम्न प्रस्ताव हमे प्रकाशनार्थ प्राप्त हुआ है —

"आर्य समाज दीवान हाल देहली की यह सभा अखिल-भारतीय रेडियो से अनुरोध करती है किअन्य धार्मिक प्रवचनों के साथ प्रति सप्ताह रेडियो पर वेद कथा का भी अवश्य प्रबन्ध होना चाहिये। वेद ३३ कोटि भारतीय आर्य (हिन्दू) जनता का परमप्राचीन धर्म ग्रन्थ है। अत ईश्वरीय ज्ञान की रेडियो द्वारा उपेक्षा असह्य है। इस सभा का यह निश्चित मत है कि अखिल भारतीय रेडियो यदि भारत सरकार के आदेशों का पालन कर देश मे से भ्रष्टाचार एवं घूस खोरी, चोर बाजारी आदि का निराकरण करने में सहायक होना चाहता है तो वेद भगवान् के पवित्र सन्देश प्रतिसप्ताह इस कार्य मे पूर्ण सहायक सिद्ध हो सकते हैं।"

हम चाहते हैं कि देश की समस्त आर्य समाजे इसी प्रकार का प्रस्ताव स्वीकृत कर के

ब्राडकास्टिंग विभाग के मन्त्री श्री श्रा० आर० दिवाकर जी नई देहली तथा श्री स्टेशन डाइरैक टर जी आल इन्डिया रेडियो नई देहली के पास भेजें। अभी कल ही २१ अप्रैल को हमे एक आर्य शिष्टमण्डल के साथ श्री बलवन्त प्रसाद जी भट्ट स्टेशन डाइरैक्टर से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। उनके सामने प्रतिसप्ताह रेडियो पर वेद कथा, महर्षि दयानन्द जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी आदि आर्य नेताओ के जीवन चरित्र, संस्कार, भारतीय संस्कृति आदि विषयक व्याख्यान रेडियो से करवाने का प्रस्ताव रक्खा गया। उन्होने इन प्रस्तावो से सहानुभूति प्रकट करते हुए बताया कि भारत सरकार धार्मिक प्रोग्राम के सारे विषय पर विचार कर रही है, अत माननीय श्री दिवाकर जी से इस सम्बन्ध मे मिलना उत्तम होगा। महर्षि दयानन्द जी का जीवन चरित्र कुछ दिन पूर्व रेडियो के देहाती प्रोग्राम में प्रसारित किया जा चुका है ऐसा भी उन्होने बताया। उनकी बातों से यह भी स्पष्ट था कि सरकार को जनता की इस विषयक माग का पूरा प्रमाण मिलना चाहिये जब हम लोगो ने उन का ध्यान रेडियो से प्रसारित अश्लील फिल्मी गीतों की ओर आकृष्ट किया तो उन्होने कहा कि प्रतिसप्ताह सहस्रो पत्र हमारे पास ऐसे गीतो को प्रसारित करने के लिये आते हैं।

हम ने उन्हें कहा कि ऐसे अश्लील गीतों को प्रोत्साहित करना जनता के चरित्र निर्माण की दृष्टि से अत्यन्त अनुचित और हानिकारक है जिस पर उन्होंने भविष्य मे इस का अधिक ध्यान रखने का वचन दिया यद्यपि साथ ही वे कह गये कि फिल्मों का सेन्सर बोर्ड जिन गीतों को पास कर दे उन को रोकना वैधानिक दृष्टि से रेडियो के अधिकारियो के लिये कठिन हो जाता है। वस्तुत अश्लील और कामोत्तेजक सिनेमाओं और उन मे प्रयुक्त अश्लील शृङ्गारमय गीतों के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन की भी बडी आवश्यकता है। भारतीय राष्ट्र संसत् (पार्लियामेंट) के गत अधिवेशन मे १८ वर्ष से कम आयु के बच्चो को ऐसी फिल्मे दिखाने का प्रतिबन्ध लगाया गया है जो कामोत्तेजक हों परन्तु केवल उतना पर्याप्त नहीं है। इन अश्लील गीतों का प्रभाव युवक युवतियों के चरित्र पर बहुत ही बुरा पड रहा है। यदि इनका ऐसा ही प्रचार होता रहा तो देशवासियों का चरित्र का स्तर बहुत नीचा हो जायगा जो अवस्था नितान्त अवाञ्छनीय है। भारत सरकार को भी इन विषयो मे जनता का पथ प्रदर्शन करना चाहिये। जनता के नेताओं की तो इस विषय मे बडी भारी उत्तरदायिता है जिसे उन्हें गम्भीरता से अनुभव करते हुए सुधार का निरन्तर प्रयत्न करना चाहिये। । द

मनु के उपदेश

समाज संघटन

[लेखक श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०]

[गताङ्क से आगे]

न द्रव्याणामविज्ञाय विधिं धर्म्यं प्रतिग्रहम्।
प्राज्ञः प्रतिग्रहं कुर्यादवसीदन्नपि क्षुधा ॥
४। १२०। ७

दान लेने में जो द्रव्य ब्राह्मण को मिलते हैं उनकी यथार्थ विधि और धर्म को समझना कठिन है अर्थात् ।कहीं उनका दुरुपयोग न हो जाय, अत उस ज्ञान के बिना भूख से सताया हुआ ब्राह्मण भी दान न लेवे।

हिरण्यं भूमिमश्वं गामन्नं वासस्तिलान् घृतम्।
प्रतिगृह्णन्नविद्वांस्तु भस्मी भवति दारुवत् ॥
(४। १२१। १८८।)

सोना भूमि, घोड़ा गाय, अन्न, वस्त्र, तिल और घी। इन को दान में लेकर जो उनका यथावत् प्रयोग नहीं जानता वह अग्नि में लकड़ी के समान भस्म हो जाता है।

अतपास्त्वनधीयानः प्रतिग्रहरुचिर्द्विजः।
अम्भस्यश्मप्लवेनेव सह तेनैव मज्जति ॥
(४। १२१। १९०)

तप करने वाला, बेपढ़ा, दान का लोभी ब्राह्मण समुद्र मे पत्थर की नाव के समान स्वयं भी डूबता है।

वर्णो मे दूसरा नम्बर क्षत्रिय का है। क्षत्रिय वे लोग हैं जिन्होंने अपने लिये यह वरण किया हुआ है कि हम जाति तथा देश के शक्तिपुंज को बढ़ा कर उनकी भीतरी और बाहरी अत्याचारों से रक्षा करेंगे।

क्षत्रियों में राजा से लेकर साधारण मनुष्य तक जो राजा को प्रजा पालन में सहायक। देते हैं सम्मिल हैं। क्षत्रिय का कर्त्तव्य है कि—

युक्तश्चैवाप्रमत्तश्च परिरक्षेदिमाः प्रजाः।
(७। १२८। १४२)

अर्थात् अपने को नियम में रखता हुआ प्रमाद छोड़कर प्रजा की रक्षा करे।

क्षत्रियस्य परो धर्मः प्रजानामेव पालनम् ॥
(७। १३०। १४४)

क्षत्रिय का मुख्य धर्म प्रजा का पालन है। यह कैसे होगा ? (१) बल प्राप्त करके, जिससे दुष्टों का दुष्टता करने का साहस न रहे (२) अपने आप को कठोर संयम में रख कर, जिससे अभिमान न हो, न बल को अपने स्वार्थ में प्रयुक्त करे (३) ब्राह्मणों अर्थात् ज्ञानी पुरुषों से सदा परामर्श करके जिस से कहीं बल का भूल से अनुचित प्रयोग न हो जाय। अंग्रजो की कहावत है कि It is good to have a giant's strengh, but to use it as giant is bad अर्थात् एक दैत्य के समान शक्ति ग्रहण करना अच्छा है परन्तु उसका दैत्य के समान प्रयोग करना बुरा है।

घमण्डी शक्तिमान् क्षत्रिय अपने बल को दंभ और कामना की सिद्धि मे लगा है। वह उस शक्ति के द्वारा दूसरो को सताता है। मनु के लक्षण के अनुसार वह क्षत्रिय है ही नही। जिस फूल मे कांटा हो सुगन्धि न हो वह फूल नहीं।

ब्राह्मण दुष्टो को दुष्टता छोडने का उपदेश देता है। परन्तु क्षत्रिय उनको दण्ड देता है जो उपदेश मात्र से सीधे मार्ग पर नही आ सकते इस सम्बन्ध मे मनुस्मृति मे लिखा है--

यदि न प्रणयेद्राजा दण्डं दण्डयेष्वतन्द्रित
शूले मत्स्यानिवापक्ष्यन् दुर्बलान् बलवत्तराः ।
(७। २। २०)

अर्थात् यदि अपराधियो को दण्ड देने वाला राजा न हो तो बलवान् दुर्बलो को इस प्रकार भून डाले जैसे मछली खाने वाले मछलियो को भून लेते है।

अद्यात् काकः पुरोडाशं श्वा च लिह्याद्धविस्तथा।
स्वाम्यं च न स्यात् कस्मिंश्चित् प्रवर्तेताधरोत्तरम् ॥
(। २१। २)

कौआ पुरोडाश को खा जाय। कुत्ता हवि को चाट जाये। किसी का किसी पर स्वत्व न रहे। ऊँचा नीचा हो जाय और नीचा ऊँचा।

दुष्येयु सर्ववर्णाश्च भिद्येरन् सर्वसेतवः ।
सर्व लोकप्रकोपश्च भवेद् दण्डस्य विभ्रमात् ॥
(७। २। ०४)

सब वर्ण दूषित हो जाय। सब पुल अर्थात् मर्यादायें नष्ट हो जाय और सब लोको मे क्षोभ हो जाय यदि दण्ड विधान ठीक न हो समाज मे क्षत्रिय की बडी आवश्यकता है। जब किसी नगर या देश मे विद्रोह हो जाता है तो क्या दशा हो जाती है? किसान खेती नही कर सकता व्यापारी व्यापार नही कर सकते। विद्वान् पढ पढा नही सकते। स्त्रियां अपने सतीत्व की रक्षा नहीं करती। भयङ्कर गडबड उत्पन्न हो जाता है। मार काट मच जाती है। इसी लिये सुदृढ राज की जरूरत है। राजाओं को मर्यादित रखने के लिये मनु ने राजाओं मे उत्पन्न हो जाने वाले दोषो को गिना कर उनको पहलेसे सतर्क कर दिया--

इन्द्रियाणां जये योगं समातिष्ठेद् दिवानिशम् ।
जितेन्द्रियो हि शक्नोति वशे स्थापयितु प्रजा ॥
७।३४।४४

अर्थात् राजा को चाहिये कि इन्द्रियो को वश मे रखने का रात दिन यत्न करता रहे। प्रजा को वश मे वही रख सकता है जो जितेन्द्रिय हो। यह उपदेश केवल राजा के लिए ही नही है। इस मे समस्त कर्मचारी आ जाते है अर्थात् मजिस्ट्रेट, पुलिस, सेना आदि।

दश कामसमुत्थानि तथाष्टौ क्रोधजानि च ।
व्यसनानि दुरन्तानि प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥
७।३५।४५

इन कठोर दुर्व्यसनो को छोड दे। दस काम से उत्पन्न होने वाले, तथा आठ क्रोध से उत्पन्न होने वाले।

कामजेषु प्रसक्तो हि व्यसनेषु महीपतिः ।
वियुज्यतेऽर्थधर्माभ्यां क्रोधजेष्वात्मनैव तु ॥
७।३६ ४६

जो राजा काम से उत्पन्न हुये व्यसनो मे फंसता है वह अर्थ और धर्म से छूट जाता हैं, क्रोध से उत्पन्न हुये व्यसनों से अपने आत्मा को ही नष्ट कर देता है।

मृगयाक्षो दिवास्वप्न परिवाद स्त्रियो मद ।
तौर्यत्रिक वृथाट्या च कामजो दशकोगण ॥
७।३७।४७

शिकार, जुआ, दिन मे सोना, दूसरा के दोष निकालना, स्त्रिया के साथ रहना, नशा, नाचना, गाना बजाना व्यर्थ घूमना, यह दस काम से उत्पन्न हुए अवगुण है। कामी पुरुष का मन स्थिर नहीं होता वह इधर उधर जी बहलाता फिरता है। राजा को इन से बचना चाहिए।

शुन्य साहस द्रोह ईर्ष्यासूयार्थदूषणम्।
वाग्दण्ड न च पारुष्य क्रोधजो ऽपि गणो ऽष्टक॥

चुगली साहस, द्रोह, ईर्ष्या डाह धन मार लेना, गाली, मारना पीटना यह आठ दोष क्रोध से उत्पन्न होते है।

मनो वैज्ञानिक विश्लेषण मे मनुस्मृति कितनी दक्ष है इस का इन श्लोको से भली भाति पता चल जाता है। क्षत्रिया अर्थात् प्रजा के रक्षको मे ये दोष कितने भयानक होते है इस की कल्पना पाठक गण कर सकते है। कामी राजा किसी सुन्दर युवती को किसी दुष्ट के हाथ से बचाकर स्वय उसका सती व नष्ट करेगा। लोभी राजा किसी धनपति को डाकू से रक्षा करके स्वय उसको हड़प कर लेगा। कामी और लोभी राजे, मजिस्ट्रेट पुलिस तथा सेना वालो के दुष्कर्मो भी से इतिहास के पन्ने के पन्ने भरे पड़े है। इसी लिए राजा के ऊपर यह नियन्त्रण रक्खा गया।

बहुत से लोगो का मत है कि जब राज्य व्यवस्था करने वालों मे ऐसे दोष लग जाते है तो राज व्यवस्था को ही क्यों न नष्ट कर दो। क्षत्रिय रहें ही क्यों ? सब अपनी २ रक्षा कर लेंगे। परन्तु इतिहास साक्षी है कि जब जब राज्य का प्रबन्ध ढीला होता है लोग अपनी रक्षा नही कर सकते। एक अत्याचारी के बजाय सकडो अत्याचारी खड़े हो जाते है। जब कभी किसी देश मे एक अत्याचारी शासन को दूर करने का यत्न किया गया तो उस थोड़े से समय मे जो दूसरे अच्छे शासन की स्थापना मे लगा देश भर मे दिन दूने और रात चौगुने अत्याचार होने लगे। धन का अपहरण और स्त्रियों के सतीत्व पर आक्रमण यह तो शासन के ढीला होते ही आरम्भ हो जाता है। और कभी कभी तो यह भयानक रूप धारण कर लेता है इस लिये राज्य व्यवस्था को सुधारने की आवश्यकता है उसे नष्ट करने की नही।

राज्य व्यवस्था के सुधारने का सब से उत्तम उपाय यह है कि ब्राह्म शक्ति और क्षात्र शक्ति का समन्वय किया जाय क्योकि तपस्वी ज्ञानी ब्राह्मण राजा को ठीक २ परामर्श देगा। से बाहुबल के प्रयोग के लिये मस्तिष्क की आवश्यकता है मस्तिष्क हीन बलवान् कभी उत्तम या अच्छा प्रयोग नही कर सकता इसी प्रकार सच्चे ब्राह्मण के परामर्श पर न चलने वाला राजा भ्रष्ट हो जाता है। मनु जी कहते है —

सर्वेषा तु विशिष्टेन ब्राह्मणेन विपश्चिता।
मन्त्रयेत् परम मन्त्र राजा षाड्गुण्यसयुतम्॥

राजा को चाहिए कि गूढ और गभीर विषयो पर श्रेष्ठ ब्राह्मण की अवश्य अनुमति ले।

नित्य तस्मिन् समाश्वस्त सर्वकार्याणि नि क्षिपेत्।
तेन सार्धं विनिश्चित्य तत कर्म समारभेत॥

उस तपस्वी ब्राह्मण पर विश्वास करके उसे को वह काम सौंप दें और उसके साथ पूर्ण रीति से विचार करके ही उस काम को करे।

राज्य-व्यवस्था को सुसघटित रखने के लिए निर्लोभी त्यागी, ज्ञानी और परोपकारी ब्राह्मणो की बड़ी आवश्यकता है जो अपना हित छोड़ कर प्रजा के हित की बात सोच सके और राजो की हा मे हा मिलाकर अपने स्वार्थ की सिद्धि मे न लग जावें। यह काम बड़ा कठिन है इस के लिये निर्भीकता और आत्मा-त्याग का आवश्यकता है।

ब्राह्म और क्षात्र शक्तियो के परस्पर सम्बन्ध के लिये राजा और ब्राह्मण दोनो की मनावृत्तिया विशेष प्रकार की होनी चाहियें। यदि राजा अपनी शक्ति के मद मे किसी की बात सुनता ही नही ता कोई विद्वान् उसकी सहायता नही कर सकता। प्राय आधुनिक राजा लाग विद्वानो को मजबूर करते ह कि व राजो की व्यर्थ ही बडाई किया करे और उनके दुष्ट व्यसना के लिय भी अच्छी व्यवस्था दिया करे। उस से ब्राह्मण भा शन लाभी हो जाते है और उनका ब्राह्मणत्व नष्ट जाता है। मनु न इस विषय मे दानो को समझाया है —

नाब्रह्म क्षत्रमृध्नोति नाक्षत्रं ब्रह्म वर्धते।
ब्रह्म क्षत्र च सपृक्तमिह चामुत्र वर्धते॥
९।२२।३२२

बिना ब्राह्मण के क्षत्रिय की समृद्धि नही होती। न बिना क्षत्रिय के ब्राह्मण की। ब्राह्मण और क्षत्रिय मिल कर ही लोक और परलोक की उन्नति कर सकते हैं। बिना हाथ के सिर का काम नहीं चलता और न बिना सिर के हाथ का।

तीसरा वर्ण वैश्य है। ब्राह्मण को ज्ञान और क्षत्रिय को यश प्रिय होते हैं। ज्ञान और यश दोनों के लिये कष्ट उठाने पड़ते हैं। विलासिता ज्ञान की भी शत्रु है और यश की भी। विलासी ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं और विलासी क्षत्रिय क्षत्रिय नहीं। परन्तु ससार मे बहुत से ऐसे लोग भी हैं जिन को कष्ट सहन करना स्वीकार नहीं। वे प्रण करते हैं कि हम देश के धन सम्पत्ति को बढ़ा कर देश को धनाढ्य बनावेंगे। ऐसों को वैश्य कहा है। खेती करना, पशु पालना कला कौशल की उन्नति करना, व्यापार करना यह सब वैश्य के काम हैं। देखो मनु ८।९० हिन्दुओं मे आज कल बहुतसी जातियाँ है जो नीच समझी जाती है। वस्तुत वे द्विज है और उनकी गिनती वैश्यों मे होनी चाहिये। जैसे शरीर का बहुत छोटा अग सिर और उस से कुछ ही बडी भुजाये है जब कि धड सब से बडा है इसी प्रकार समाज मे ब्राह्मण और क्षत्रियो का सख्या कम और वैश्यों की अधिक होती है। शाक फल, फूल, अन्न तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले वैश्य है। लकडी मिट्टी, पीतल, सोने, चॉदी, आदि का सामान बनाने वाले वैश्य हैं, व्यापारी वैश्य हैं, और ब्याज लेकर लेन देन करने वाले वैश्य हैं, बडे बडे भवन, नगर, सडके, पुल इजन आदि बनाने वाले वैश्य हैं। इन का सदा धन से रहता सम्पर्क है। धन का विचार करना ही इनका वैश्यत्व है। अत यह ब्राह्मण और क्षत्रिय की अपेक्षा कुछ

अधिक विलास प्रिय होते हैं। खाने को अच्छा, रहने के लिये अच्छे भवन, पहनने को बढिया कपड़ा, और स्वर्ण आदि के आभूषण यह वैश्यों को चाहिये। ब्राह्मण कुशा के आसन और फल फूल पर गुजारा करलेगा। क्षत्रिय को शरशय्या मखमल की शय्या से और लोहे की तलवार सोने के कङ्कण से अधिक प्रिय है। परन्तु वैश्य कुछ अधिक विलास प्रिय होता है। परन्तु वैश्य का कर्त्तव्य यह है कि वह जाति को धनाढ्य बनावे न कि समस्त धन को अपने लिये रख लेवे जो पट और अङ्गों को शुद्ध रक्त नही पहुँचाता वह तो पट नहीं है और जिस वैश्य के द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र की जीविका नही चलती वह वैश्य भी नही है। धन के बिना तो कोई काम चल नही सकता। और उस धन से भी कोई काम नही चल सकता जो गतिमान् नही है। एक फार्सी कवि ने कहा है—

बराय निहाद्न च सगो च जार।

अर्थात् यदि जमीन मे गाडना ही है तो जैसा पत्थर वैसा अशर्फी। अशर्फी इस लिये अशर्फी नही है कि वह सोने की है अपितु इसलिये कि उस से लोगों के निर्वाहार्थ अधिक वस्तुए खरीदी जा सकती है।

आज कल श्रमजीवियों और पूँजी पतियो के बीच मे एक बहुत भयानक वैमनस्य उत्पन्न हो गया है। और लगभग एक सौ वर्ष से ससार के विशाल मस्तिष्क उस को दूर करने के प्रयत्न मे लगे हुए है परन्तु रोग घटने की अपेक्षा बढता जा रहा है।

वैदिक काल मे ऐसी भयकर परिस्थिति न थी और न मनुस्मृति मे इस रोग या इस की चिकित्सा का कोई विशेष उल्लेख मिलता है, इस का मुख्य कारण था वर्णों का सुव्यवस्थित होना। प्रथम तो शिक्षा के कारण क्षत्रियों और ब्राह्मणों की आन्तरिक प्रवृत्ति ही धनोपार्जन की नहीं होती थी। दूसरे समाज की ओर से यह अच्छा नहीं समझा जाता था कि जो क्षत्रिय या ब्राह्मण के कर्मों को अपने लिये वरण करले वह धनोपार्जन मे लगे। यदि कोई ऐसा करता भी तो उसे ब्राह्मणत्व और क्षत्रियत्व त्याग कर वैश्य बनना पडता था जिनकी प्रवृत्ति क्षत्रियत्व या ब्राह्मणत्व की ओर होती थी वे स्वय अपने जीवन मे इतना पतन लाना स्वीकार नही करते थे उनका निर्धन होने पर अभिमान होता था। उनकी साधारण आवश्यकताये समाज की सुव्यवस्था के कारण पूरी होती रहती थी। इस प्रकार धनोपार्जन का कार्य केवल वैश्य वर्ग का ही होता था और उन को धनवान् देख कर कोई उन से ईर्ष्या नही करता था। उसी प्रकार जैसे आज कल किसी जज या मुंसिफ की कचहरी वाला को कोष विभाग मे रुपयो की गठरिया देख कर डाह नही होता व समझते है कि यह धन तो हमारे ही लिये है। कोष विभाग तो उस का रक्षक मात्र है।

इस के अतिरिक्त वैश्यो को अनुचित रीति से धन इकट्ठा करने से रोकने को मनु ने दो उपाय निर्धारित किये है एक तो कर और दूसरा दण्ड। कर के विषय मे नीचे के श्लोक देखिये —

क्रय विक्रयमध्वान भक्त च सपरिव्ययम्।
योगक्षेम च सप्रेक्ष्य वणिजो दापयेत् करान्॥
(७। १२७। १२७)

राजा को चाहिये कि बनियों से इतनी बातो को देख कर कर लेवे –कहां से किस प्रकार माल लिया जाता है। कहा बेचा जाता है, कैसी विक्री होती है। माल को लाने मे कितना मार्ग चलना पडा बनिये को स्वय खाने पीने मे कितना व्यय हुआ। कितना माल के लाने पर व्यय करना पडा चोर आदि से माल को सुरक्षित रखने मे क्या व्यय प॰ा। कितना लाभ हुआ इत्यादि इत्यादि।

यथा फलेन युज्येत राजा कर्ता च कर्मणाम्।
तथावेक्ष्य नृपो राष्ट्र कल्पयेत् सतत करान्॥
(७।११४।१२८)

जिस रीति से राज कोष और व्यापारी दोनो को यथोचित लाभ हो उसी रीति को सोच कर कर लगाना चाहिये।

यथाल्पाल्पमदन्त्याद्य वार्योकोवत्सषट्पदा।
तथाल्पाल्पो ग्रहीतव्यो राष्ट्राद्राज्ञाब्दिक कर॥
(७।१२६)

जैसे जोक, बछडा और भौरा थोडा थोडा करके खाते है इसी प्रकार राजा भी देश से थोडा थोडा ही कर लेवे।

मनु की यह तीन उपमाये बडी रोचक है। जोक एक कीडा है जो मनुष्य के किसी अङ्ग या गन्दा शरीर चूस जाता है। वैद्यक मे इसका प्रयोग किया है। इससे रोगी को पीडा नही होती। रुधिर को पीता हुआ पाकर रोगी प्रसन्न होता है। इसी प्रकार राजा को भी ऐसे कर लेना चाहिये कि कर देने वाले को दुख के स्थान मे आनन्द हो।

बछडा अपनी माता का दूध भी इसी प्रकार पीता है कि दूध पिलाने वाली कष्ट का अनुभव नही करती। राजा को भी इसी प्रकार कर लेना चाहिये।

मधुमक्षिका फूलो से मधु को लेते हुये फूलो के जीवन अथवा सौन्दर्य पर नाम मात्र भी आघात नही करता। फूलों का रंग और रूप अधिक सुहावना हो जाता है। इसी प्रकार राजा को कर लगाना चाहिये।

यत् किंचिदपि वर्षस्य दापयेत् कर सा॰ज्ञतम्।
व्यवहारेण जीवन्त राजा राष्ट्रे पृथग्जनम्।
(७।१३७)

जो दीन और साधारण जन शाक पत आदि बेचकर किसी प्रकार गुजारा करते है उन से कर भी कम लिया जाय।

नोच्छिन्द्यादात्मनो मूलं परेषा चातितृष्णया।
उच्छिन्दन् ह्यात्मनो मूलमात्मान ताश्च पीडयेत्॥
(७।१३६)

राजा को चाहिये कि न तो प्रेम दिखाने के उद्देश्य से कर कम लगावे क्योंकि ऐसा करेगा तो आय न होगी और राज्य का न चलेगा। और न अधिक कर लगा देवे। यदि अधिक लगावेगा तो लोगों को कष्ट होगा और व्यापार को हानि पहुंचेगी।

विक्रोशन्त्या यस्य राष्ट्राद् ध्रियन्ते दस्युभि प्रजा।
सपश्यत सभृत्यस्य मृते स न तु जावति॥
७।१२६ १४३

जिस राजा या उसके कर्मचारी की आखो के सामने दस्यु (दुष्ट लोग) प्रजा को लूट लेवे उस राजा को मरा समझो। जीवित न समझो।

दण्ड के विषय मे नीचे के श्लोक देखिये —
(शेष पृष्ठ १० पर)

हम इतने आगे बढ़ आये

[रचयिता—कवि श्री कमल जी साहित्यालंकार]

लाशों पर चढ़–पापों से लड़
हमने मानव धर्म बचाया
सम्भ्रात रहा न हित विष का
पान किया धन धाम गवाया
प्रीति रुग्न संताप श्राप सब जीवन पथ के कलुष मिटाये ॥

ममता का क्या कहें आज तुम
श्रम का निर्मम कह सकते हो
कि न सहा ना कुछ हमने है
तुम भी क्या यह सह सकते हो ?
मन अपने आगे प्राणप्रिय काट काट कर वहीं नचाये ॥

सम्मुख दल के टकने कुचले
इस पर भी हम कभी न विचले।
देखे कितने नेखण हम
जाने ना नित जौहर उजले ॥
दया क्षमा के धनी रहे हम फिर भी पग पीछे न हटाये ॥

अरे स्थूल के मूर्ख पुजारी
सूक्ष्म का तू मूल्य न जाने
अविग हिमाचल के पग हैं हम
हमें चला कर आज डिगाने
सौर लोक में हमने ही तो ध्रुव बन कर निज पाँव जमाये ॥

साहस के इस पुण्य लोक में
जहां अटल विश्वास सफलता
क्रियाशील उत्फुल्ल हृदय में
सरसिज-सा उल्लास पुलकता
यहां त्याग के सत्य शिखर पर हम इतने ऊंचे चढ़ आये ॥

हमने जीना सीख लिया है
पाप ताप का नाश किया है।
मृत्यु विवर मे पडे मृतक को
हमने जीवन दान दिया है।
मधुर कल्पना के नयनों मे सोते थे जो स्वप्न जगाये ॥
चढे आज हम इतने ऊपर
नीचे गिरिवर तरस रहे हैं।
हम को देख पडोसी अब तो
नभ के तारे हर्ष रहे हैं
शून्य हुआ साकार हमारे हाथों मे अब तारे आये ॥
अमरों का वरदान जहाँ पर
जीवन जय के गीत सुनाता।
वीरों का रण घोष गगन मे
मुखरित हो मिरदंग बजाता।
उसी देश मे हमने अपने तन के चोले नित नव पाये ॥
हम मृत्यु का भय दिखला कर
काल यहा खुद भूल रहा है।
मुट्ठी मे है गला काल का
शीश लुढकता भूल रहा है ॥
आज समझने लगा काल भी हमने कितने काल मिटाये ॥
हम इतने आगे बढ आये ॥

[शेष पृष्ठ १० का]

शुल्कस्थान परिहरन्नकाल, क्रयी विक्रयी।
मिथ्यावादी च सस्थाने दाप्योऽष्टगुण मत्ययम् ॥
८।२३६।४००

जो चु गी आदि बचाने के हेतु दूसरी जगह या दूसर समय माल लवे या बेचे या व्यापार मे धोखा दे उस से आठ गुणा लिया जाय।

आगम निर्गम स्थान यथा वृद्धिक्षयावुभौ।
विचार्य सर्वपण्याना कारयेत् क्रयविक्रयौ ॥
८।२४०।४०१

आयात, निर्यात, स्थान, लाभ, हानि इन सब विचार करके चीज़ों का भाव नियत करे।

(क्रमश)

मानसिक क्रिया

(लेखक—श्री पं० विश्वेश्वर नाथ जी आयुर्वेदाचार्य वैद्य शास्त्री)

अब मन पर विचार किया जाता है कि मनुष्य का मन क्या वस्तु है। यह इन्द्रियों से सूक्ष्म है। इन्द्रिय इसकी सत्ता से काम कर सकते हैं। परन्तु मन इन्द्रियों का विषय नहीं बन सकता।

मन एक व्यापक क्रिया है। सृष्टि आरम्भ से लेकर जन्म जन्मान्तरों के अनुभव इसमें अङ्कित रहते हैं। जब यह अन्तर्लीला में प्रवृत्त होता है, तब यह कई तरह के खेल खेलता है।

कभी राजा कभी रङ्क कभी देवता, यह अनेक रूप धारण कर लेता है। साधारण मनुष्य के मन का और योगी के मन का बहुत अन्तर पाया जाता है।

योगी का मन परतन्त्र है। हर समय योगी के वश में रहता है। उसकी आज्ञानुसार कार्य करता है। किन्तु अज्ञानी पुरुष का मन स्वतन्त्र रूप से विचरता रहता है। और अनेक सकल्प विकल्प उत्पन्न करता है। अज्ञानी मनुष्य अपने मन के वशी भूत होकर शुभाशुभ संकल्पों के पीछे चलता रहता है और हिताहित का कुछ विचार नहीं करता, इसके विपरीत मनोविजेता योगी मन के द्वारा अनेक अपने जन्म जन्मान्तरों के संस्कार प्रत्यक्ष कर लेता है।

योगी के मन की अन्तर्गति होती है। साधारण मनुष्य का मन अन्तर्ज्ञान से शून्य रहता है। उसकी वृत्तियां बाह्य संसार मे घूमती रहती हैं। अज्ञानी मनुष्य उन्हें रोक नहीं सकता। यजुर्वेद के बहुत से मन्त्र मन की शक्तियों का वर्णन करते हैं। "यज्जाग्रतो दूर मुदैति" इत्यादि अर्थात् मनुष्य का मन जाग्रत अवस्था में दूर निकल जाता है। और स्वप्न में भी दूर २ घूमता रहता है।

मनुष्य के मन का गमन तीन प्रकार की दूरी से होता है। मन की पहिली दूरी यह है, किसी पदार्थ का रहस्य ज्ञात करने पर उसके अन्तिम सीमा तक पहुँच जाना इसका नाम रहस्य कृत दूरी है।

द्वितीय दूरी यह है कि चर्म चक्षुओं की सीमा से लेकर बहुत दूर अर्थात् परलोक तक भी निरीक्षण कर लेना यह स्थान कृत दूरी कहलाती कहते है।

तृतीय दूरी दूर दूर से भी भूत भविष्यत् का ज्ञान प्राप्त कर लेना इस को काल कृत दूरी कहते हैं।

यह तीनों प्रकार की दूरियाँ मन का क्षेत्र है। परन्तु दूरी को छोटा करना या विस्तृत करना, अथवा निकृष्ट बनाना या उत्कृष्ट बनाना मनुष्य के मन की शक्ति पर निर्भर है।

साधारण मनुष्य के मन की दूरी का क्षेत्र बहुत छोटा होता है, और साथ ही निकृष्ट भी होता है।

इसके विपरीत योगी या ज्ञानी मनुष्य के मन की दूरियाँ विस्तृत हो जाती हैं। महर्षि के

मन का क्षेत्र अति विस्तृत बन जाता है। अब इसकी पुष्टि वेद मन्त्र भी करता है।

"येनेद भूत भुवन भविष्यत् परिगृहीत ममृतेन सर्वम्॥"

इस मन्त्र से मनकी बहुत अद्भुत शक्ति का परिचय मिलता है मन्त्र यह सिद्ध करता है, कि भूत, वर्तमान, और भविष्यत् में जो कुछ भी विद्यमान है वह सब मन का क्षेत्र ही है। यदि यह प्रश्न किया जाये कि भूत, "वर्तमान" के सम्बन्ध म मन कितना परिचय प्राप्त कर सकता है। इसका समाधान करने के लिये मन्त्र म सर्व पद दिया है। और दूसरा विशेषण अमृतेन पद से निर्देश किया गया है। अथात् मन अमर है। यह भी एक रहस्य है कि मनुष्य का मन अमर होने से जन्म जन्मान्तरों के सस्कार प्रकट कर सकता है।

इस लिये बहुत से योगी अपने पूर्व जन्मो के समाचार कथन करने मे कुशल होते हैं।

मनो वेग सब से शीघ्र गामी है। इसकी समता कोई यान नही कर सकता, क्षण भर मे यह हजारो मीलो से दूर निकल जाता है। बल्कि परलोक की सूचना ले आता है। जिस मनुष्य ने इस पर अधिकार कर लिया है वह इस से अनेक प्रकार के कार्य ले सकता है।

आज कल भी मस्मरेजम और हिप्नोटिजम आदि के करने वाल मन के प्रभाव से लोगो को कई प्रकार के चमत्कार दिखा सकते है। यह सब मन की लीला है, उसकी शक्ति का प्रभाव है। योगी का मन अनेक जन्मों का वृत्तान्त और अदृष्ट वस्तुओं को भी बतला सकता है।

साधारण मनुष्य के मन मे यह शक्ति नहीं उत्पन्न हो सकती इस मे एक दृष्टान्त दिया जाता है।

जैसे एक मनुष्य को यह अधिकार दिया जाय कि हमारा यह कार्य होगा कि कार्यालय (आफिस) के नवीन और पुराने रिकार्ड को यथा क्रम लगा कर नियमानुसार अपने २ स्थान पर स्थापन करो। और दूसरा कार्य यह है कि अतिथियों का स्वागत करना।

परन्तु वह मनुष्य रिकार्ड क्रम को भूल कर केवल अतिथि सेवा मे ही सलग्न हो गया। उसने सम्पूर्ण समय उसी कार्य मे व्यतीत कर दिया। यही दशा हमारे मन की है।

हमारा मन प्रति दिन नवीन संस्कार रूपी अतिथियों के स्वागत मे लगा रहता है। पूर्व जन्म के सस्कार रूपी रिकार्डो को भूल गया है।

इस लिये हम पूर्व जन्म के वृत्तान्त ज्ञात नही कर सकते। यदि योगियों की भाँति अपने मन को एकाग्र कर ले और उसकी वृत्तियो का निरोध हो जाये जैसे योग दर्शन मे लिखा है "योगश्चित्तवृत्तिनिरोध"। अर्थात् चित्त वृत्तियों का रोकना ही योग कहलाता है।

जब हमारा मन बहिर्मुख वृत्तियों से शून्य होकर अन्तर्मुखी हो जाय तब हम भी अन्तःकरण मे एकत्र हुए जन्म जन्मान्तरों के सस्कारो को भली भांति देख सकते हैं अन्यथा नहीं।

(शेष फिर)

❋ पांच भूलें ❋

[लेखक—श्री पूज्यपाद महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज]

अमीषां चित्तानि प्रतिमोहयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैर्ग्राह्यामित्रांस्तमसा विध्य शत्रून् ॥ अ० ३-२-५

इस मन्त्र मे पाप वृत्ति को सम्बोधन करके कहा गया है कि (अप्वे परा इहि) हे व्याधि अर भय ! पापवृत्ते ! हमारे यहां से चलो जा । (अमीषा चित्तानि प्रतिमोहयन्ती) इन शत्रुओं के चित्तों को मोहित करता हुई (अगानि गृहाण) उनके शरीरों को जा पकड़ अर्थात् हमे मूढ़ न बना और हमारे शत्रुओं के शरीरों का विमोहित करदे और उनको (शोकै निर्दह) शोक से भस्म कर डाल । (ग्राह्या तमसा शत्रन् विध्य) निरुद्यम वृत्ति से और अन्धकार से शत्रुओं को वेध डाल, विनाश करदे ।

मनुष्य पाप से डरता है और इसलिए उस से छुटकारा चाहता है ।

मनुष्य पाप से क्यों डरता है, उसके शत्रु कौन से हैं जिनका वह विनाश चाहता है और उसके साधन क्या है यह देखना है ।

मनुष्य और पशु ससार को देखने में बड़ा भेद प्रतीत होता है । एक वे पशु पक्षी हैं जो परतन्त्र है, एक वे जड पदार्थ हैं जो यन्त्र वत् है जैसे सूर्य आदि जो इस देव के नियमों का पालन करते हैं । और एक वे जीव हैं जो मुक्त स्वतन्त्र हैं स्वेच्छाचारी हैं । परन्तु मनुष्य को क्या कहें । यह बात ध्यान देने योग्य है कि मनुष्य के अन्दर जो आत्मा है वह एक विशेष आत्मा है । पशु का बच्चा पैदा होते ही एक घण्टे के बाद फुदकने और कूदने लग जाता है । भैंस का बच्चा और बुतिया का पिल्ला तो जल में तैरने भी लग जाता है घर आकर माता के स्तनों से चिपट जाता और अपनी क्षुधा की निवृत्ति करता है । परन्तु मनुष्य का बच्चा पैदा होते ही निस्सहाय और परतन्त्रता के पाश से ग्रस्त होता है । यह तो जन्म से हर एक बात में शिक्षा और सहायता का मोहताज है । पशु के बच्चे को शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं । वह भक्ष्याभक्ष्य से अभिज्ञ है, शत्रु और मित्र में पहचान कर सकता है, शत्रु से कभी मित्रता नहीं गांठता परन्तु मनुष्य का बच्चा ऐसा नहीं कर सकता । बच्चा पैदा हो, उसकी झिल्ली दूर की जावे, साफ स्वच्छ करके बच्चे को जहां लिटा दिया जाय पड़ा रहेगा, भूख लग रही हो, रोवेगा पर रौला करे माता के स्तनो को नहीं चिमटेगा और छाती पर पड़ा हुआ भी स्तनों को नहीं पकड़ सकता जब तक कि माता स्वयं कृपा और दया से द्रवित होकर उसे स्तनों से न लगाये । बच्चे को बिठाना चलना, फिरना, कूदना आदि हर प्रकार की शिक्षा देनी पड़ती है । इस सर्व शिक्षा के होते हुए भी विरले मनुष्य ही मनुष्य बनते हैं । इस का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि पशु तो जन्म से पशु पैदा होता है, मरण पर्यन्त पशु रहता है और पशु का काम

करता है। परन्तु इस सृष्टि को उत्पन्न हुए १,९७,४९,२९,०४९ वर्ष बीत गये, मान लो कि एक जन्म मे एक सौ वर्ष आयु बीती तो गोया २ कोटि जन्म मिलने पर भी हम अभी मुक्त नहीं हुए और न इस से पूर्व सृष्टि मे मुक्त हुए। हमारी उन्नति तो यह हुई कि हम मनुष्य भी न बन सके, नहीं तो वेद हमे न कहता "मनुर्भव" 'मनुष्य बन!' बनना तो हमे देवता था पर हम मनुष्य ही न रह सके। यह अवनति क्यो हुई? विचार करने से पता चलेगा कि यद्यपि प्रभु ने अपार कृपा कर के हमें एक विशेष जन्म दिया और हमे सब योनियों से जिनकी सख्या ८४ लाख बताई जाती है, श्रेष्ठ बनाया और श्रेष्ठता का साधन दिया बुद्धि, परन्तु हमने अपनी बुद्धि का विकास न किया और भूल पर भूल करते गये। जैसा कि ऊपर कह चुके हैं कि पशु अपने शत्रु से मित्रता नहीं करता पर एक मनुष्य ही है जो अपने शत्रुओं से मित्रता करता है और उनकी मित्रता मे वास्तविक बात को भूल जाता है। परमात्मा ने इस वेद मन्त्र में आदेश कर दिया कि ऐ मनुष्य! पाप वृत्ति से दूर रह और साधन भी बता दिया। हम ने आचरण न किया इस में परमात्मा का क्या दोष है?

गर न बीनद बरोज शपरा चश्म।
चश्मए आफताब रा चि गुनाह॥

फारसी के कवि ने कहा, जिसका ता य यह है कि प्रभु ने सूर्य बना दिया कि ससार भर को प्रकाश दे, सूर्य तो प्रकाश करता है यदि चिमगादड़ आखें मूंद कर दिन के प्रकाश को न देखे तो इस में सूर्य का क्या दोष है?

मनुष्य अल्पज्ञ है, भूल तो उस ने करनी है, अङ्गरेजी में कहा है ' To err is hum1n " भूल करना मनुष्य का स्वभाव है। भूल सात्विक, राजसिक और तामसिक तीनों वृत्तियों वाला करता है। सात्विक वृत्ति वाला भूलता है ससार की विषय वासनाओं को और भूलता है अपनी की हुई नेकी को और दूसरों की की हुई बुराई को। राजसिक वृत्ति वाला भूलता है अपने मित्र सबन्धियों को जब वह निर्धन बन जाते हैं और तामसिक वृत्ति वाला भूलता है भगवान को धर्म और श्रेष्ठ कर्म को। परन्तु बड़ी भूले जो सब साधारण मे एक जैसी पाई जाती हैं, वे पाच हैं

१—कि हम मौत (मृत्यु) को भूल गये।

२—किये हुवे पापो को भूल गये।

३—अपने जन्म के अन्दर भोगे हुवे दुःखों को भूल गये।

४—ईश्वर की दया और न्याय को भूल गये।

५—सुख सम्पत्ति जो हमें मिली उस के साधन, कारण को भूल गये।

मेरा यह विश्वास है कि यदि मनुष्य अपने अन्दर से ये भूलें निकाल दे तो बस वह देवता है और ईश्वर प्राप्ति उसके लिये सुगम है अतः क्रमशः एक २ भूल का तनिक विचार करते हैं —

१ शास्त्रकारों ने कहा है "हेय दुःखमनागतम्" आने वाले दुःख का प्रतिकार करो। जो दुःख बीत गया वह गया, जो बीत रहा है वह चला जायगा। जो अभी नहीं आया उसका विचार और चिकित्सा करो आने वाला दुःख तो मृत्यु है जो पुनः मे जन्म देता है। यही आवा गमन का चक्र दुःख ही तो है। हम मृत्यु को भूल गये।

महाभारत मे एक कथा आती है कि युधिष्ठिर को जगल मे प्यास लगी तो उसने भीमसेन से कहा कि भ्राता कहीं से जल लाओ। भीम ने वृक्ष पर चढ कर देखा तो एक स्थान पर हरे २ घने वृक्षों का समूह प्रतीत हुआ उस ओर चल दिया। एक ताल था, ताल से जल लेने लगा तो यक्ष ने ललकारा कि भीम सेन ! सचेत ! यदि जल लेना है तो मेरे प्रश्नों का पहले उत्तर दो, उत्तर सन्तोष जनक होने पर जल पी सकते हो। यदि बलात्कार करोगे तो मूर्छित कर दिये जावोगे। भीम बली था, अपने बल के आगे उसे किसी की परवाह नहीं थी, इस चेतावनी की उपेक्षा कर क बलात्कार जल लेने लगा तो मूर्छित होकर गिर पडा। एक २ भाई बारी २ उस तालाब पर आया और भीम की सी अवस्था को प्राप्त हुआ। सब से अन्त मे युधिष्ठिर आया युधिष्टिर ने देखा चारों भाई मूर्छित पडे है। चकित हो गया, प्यास बुझान के लिए आगे बढा तो यक्ष की उसी आवाज को सुना, धर्मात्मा था, मन मे विचार किया कि यक्ष की सम्पत्ति का उपयोग उसकी आज्ञा बिना नहीं हो सकता तो कहा कि महाराज ! फरमाइए क्या प्रश्न हैं। तो यक्ष ने बहुत प्रश्नों मे से एक यह पूछा "किम् आश्चर्य्यम्"—आश्चर्य्य क्या है ? तो युधिष्ठिर ने उत्तर दिया।

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्ति यम मन्दिरे। अपरे स्थातुमिच्छन्ति, किमाश्चर्य्य मत परम् ॥

अर्थात् हम प्रति दिन देखते हैं कि मरे हुए प्राणी यमालय में जाते हैं और शेष स्थिर रहने की इच्छा करते हैं, इससे बढ कर और क्या आश्चर्य्य है ?

इस उदाहरण का भाव केवल यह है कि मनुष्य मृत्यु को भूल गया है। मृत्यु को भूल जाने जाने का कारण कामदेव है जो हमारा बडा शत्रु है। एक धनी सेठ का नवयुवक बालक मर गया व जिस सेठ का सिर किसी के आगे नही झुकता आज शोक की अवस्था मे सब के सामने झुक जाता है। स्त्री पुरुष दोनों रोते चिल्लाते है, सिर मे खाक रमा रखी है। खाना पीना अच्छा नही लगता। काम व्यवहार भी छूट जाता है परन्तु अभी एक वर्ष ही बीता कि पुत्रोत्पत्ति की बधाई मिलती है, यह पुत्र कहा से आगया ? यदि मृत्यु याद होती तो एक पुत्र का शोक देख चुका था, स्त्री सग न करता, परन्तु नही कामदेव ने मृत्यु को भुलवा दिया यह सब कामदेव की कृपा है। जिसने काम को अपना शत्रु समझा और शत्रु से दूर रहा तो वह मृत्यु के पजे से बच गया निस्सदेह आवागमन का मूल कारण दूसरीभूल-किये हुवे पापों को भूल जाना है। पापों के भुला देने का कारण लोभ देवता है। हम देखते हैं कि एक व्यक्ति ब्लैक मार्केट करता है, पकड़ा जाता है, दण्ड पाता है परन्तु छूट जाने पर भी बाज नहीं आता, वही काम करता है। इसी प्रकार चोर चोरी का दण्ड भुगत करके लोभ वश चोरी से नहीं रहता।

उदाहरण—

एक दरजी बडा कारीगर था हर प्रकार के वस्त्र तय्यार करता था, बडा अच्छा काम चला हुआ था। दैवयोग से रोग ग्रस्त हो गया। रोग

बढ़ता गया, क्लेश भी बढ़ता गया, दुःखी हुआ। एक दिन दरजी को बीमारी में स्वप्न आया। स्वप्न मे क्या देखा कि एक बड़ा ऊंचा झण्डा है और उस पर सब प्रकार के टुकडे रंग बिरंगे जो वह चुरा लेता था लगे हुवे हैं। बडा भयभीत हुआ और परमात्मा से रुदन करके प्रार्थना करने लगा कि भगवन्! इस बार अवश्य कृपा करके स्वस्थ करदो यह पाप न करूंगा। परमात्मा ने यह प्रार्थना स्वीकार कर ली। स्वस्थ हो गया और दुकान पर जब आया तो शिष्यों से कह दिया कि किसी के वस्त्रों से न चुराया करें और जब वह (दरजी) भी ऐसा काम करने लगे तो उसे याद दिला दें। कुछ दिनों तक यह रीति प्रचलित रही। एक दिन किसी व्यक्ति ने किमखाब का एक बहु मूल्य वस्त्र सिलवाने के लिये दिया। वस्त्र जहां मूल्यवान् था वहां रूपवान् भी था, दरजी के मन में लोभ आ गया कि इस कोट से बच्चे की एक वास्कट (सदरी) भी तय्यार हो सकती है वस्त्र को कैंची उठा कर टेढा रखना चाहा कि शिष्य ने स्मरण करा दिया, रख दिया कि कल काटेंगे। दूसरे दिन भी वैसे ही हुआ। तीसरे दिन शिष्य की अनुपस्थति मे लोभ देवता ने याद दिलाया कि अब समय है वस्त्र उठाया आखों के सामने वह ध्वजा भी प्रतीत हुई जिस पर पहले किये पापों की कातरें लगी हुई थीं, पर लोभ प्रबल था, वस्त्र को इच्छानुसार यह कहते हुवे काट ही लिया कि

"ई हम बर अलम्"

अर्थात् यह भी उस ध्वजा पर। जहां पर सहस्रों पाप किये हैं, वहां एक यह भी।

तीसरा भूल है—अपने जन्म के अन्दर भोगे हुवे दुःखों को भूल गये।

इस का मूल कारण है मोह। इसका प्रमाण शरणार्थी हैं। पश्चिमी पंजाब में जब मार धाड हुई तो प्रत्येक व्यक्ति ऐसी आपत्ति मे प्रभु का स्मरण कर रहा था और प्रार्थना कर रहा था कि भगवन् धन सम्पत्ति आदि सब कुछ ले लो इन तीन ही वस्त्रों मे सुरक्षित भारत मे पहुँचा दो। उस समय पुत्र परिवार नौकर चाकर पशु माया की कुछ चिन्ता न थी, एक शरीर के साथ मोह था और इस के लिए भगवान् के दरबार मे सच्चे दिल से पुकार की, प्रभु ने सुनी परन्तु जब भारत पहुचे तो सब भोगे हुए दुःखों को भूल गये और अपनी उदरपूर्ति के लिये माया संग्रह में इतने ग्रस्त होते गए कि ईश्वर को भी भुला दिया और मोह से मित्रता कर ली।

चौथा भूल है कि परमेश्वर की दया और न्याय को भूल गए।

वैज्ञानिक तत्त्व वेत्ता कहते है कि मनुष्य चौबीस घंटे में २१६०० श्वास लेता है यदि परमेश्वर केवल मनुष्य जन्म ही दे देता और श्वास न देता तो हम क्या करते अथवा यदि एक श्वास का एक पैसा देना पडता तो सौ श्वास के एक रुपया नौ आने देने पडते, सहस्र के पन्द्रह रु० दस आने। २१६०० श्वास के लगभग ३४ रु० देना पडता, सेठ बिडला जैसे धनी भी शीघ्र असमर्थता प्रकट करदे, और फिर जिसके परिवार में आठ दस व्यक्ति हों वह बेचारा कैसे हजारों का बिल अदा करता? एक पाई मूल्य

होता तो १२० रु० प्रतिदिन देना पड़ता। एक कौड़ी प्रति श्वास दाम होता तो साढ़े तीन रुपया प्रति दिन का बिल होता परन्तु यह प्रभु की दया है कि दाम कुछ नहीं लेता और फिर दूसरी दया यह कि हम श्वास अपने अन्दर लेते और निकालते हैं यह काम बिना किसी इच्छा के होता है। यदि हमें श्वास लेने के लिए इच्छा करनी पड़ती तो हम सारा दिन शू २ ही करते रहते। श्वास आने जाने के लिए नासिक बना दी। कान का काम सुनना आंख का देखना, वाणी का बोलना और चखना, त्वचा का स्पर्श नियत कर दिया। एक इन्द्रिय से दूसरी इन्द्रिय का काम नहीं हो सकता जिस इन्द्रिय का दुरुपयोग करेंगे वह इन्द्रिय छीन लेगा आंख से बुरा देखेंगे तो अगले जन्म में अंधे पैदा होंगे। इस प्रकार शेष इन्द्रियों का समझ लीजिए यह उस का न्याय है।

हम भोजन खाते हैं, पेट में जाकर उस का रस, रक्त, मास, अस्थि, मज्जा वीर्य बनता और केश अनायास बाहर निकलते है। हमे इन के लिए कुछ भी प्रयत्न नहीं करना पड़ता। यदि हमें अपने भोजन को रस आदि में परिवर्तित करने के लिए भट्टी तपानी पड़ती तो न जाने क्या दुर्दशा हमारी होती? हम सो रहे हों बैठे हों चल रहे हों, श्वास आ जा रहा है, भोजन का रस आदि मे परिवर्तन होकर शरीर बन रहा है।

इस दया और न्याय को भुलाने का मूल कारण अहंकार है। अहंकार में आकर मनुष्य किसी के उपकार को नहीं मानता।

पांचवी भूल है सुख सम्पत्ति आदि के साधन का कारण भूल गये। इस भूल का मूल कारण क्रोध है। बच्चा अभी गर्भ से बाहर नहीं आता कि माता के स्तनों में दूध आजाता हैं। गर्भ से बाहर आने पर मटके भरे तैय्यार हैं। भोग उपस्थित है। यदि दूध मोल लेकर बच्चे का पालन किया जाता तो निर्धन से बढ़कर और कौन दुःखी होता? परन्तु नहीं, प्रभु ने बच्चे के साधन माता को अनायास दे दिये। अन्न खाय, फल खाय, जो भी खाय, उसका दूध रूप मे रस बन जाता है। और जब भूख हो, मटके खोल दे। ज्ञान इन्द्रियां हम दी हम इन बातों को समझ, उपकारी का उपकार मानें परन्तु हम ने ज्ञान इन्द्रियों का दुरुपयोग किया। उपकार करने वाले से भी द्वेष करने लगे। यह द्वेष तब बढ़ता है जब क्रोध आता है। क्रोध से द्वेष वृत्ति जागती है दूसरे के गुण और समृद्धि को देखकर मनुष्य जल जाता है, ईर्ष्या करता है यह नहीं सोचता कि वह किस कर्म से बढ़ा है और दूसरे के अवगुण को देखकर उस से घृणा करता है, इस लिये इस क्रोध के कारण से सुख सम्पत्ति के सुख को भूल जाता है।

हम ने देखा कि काम, लोभ, मोह, अहंकार और क्रोध वास्तव मे हमारे शत्रु है और हम ने इनके साथ मित्रता कर रखी है मानों सुख की लुटिया स्वयं अपने हाथो से डुबो दी है और कष्ट पर कष्ट उठा रहे है।

प्रभु करे कि हमे बुद्धि आए कि हम इन भूलों को समझें और शत्रुओं से मित्रता न करके पाप से मुक्त हो जावें। यही वेद मन्त्र का आशय है। शत्रु कैसे हटें इसके समाधान की किसी दूसरे अंक में प्रतीक्षा कीजिये

ओ३म् शम्

गृहस्थ जीवन को सुखी बनाने के कतिपय सुनहरी नियम

[लेखक—श्री पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक]

मनुष्य पाशविक और मानवीय दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों का समुच्चय होता है। जो स्त्री पुरुष केवल पाशविक प्रवृत्तियों की सन्तुष्टि के लिए प्रणय-सूत्र मे बधते हैं, यदि वे सुखी गृहस्थ का निर्माण करने मे सफल हो जायें तो सचमुच वैवाहिक जीवन मे यह एक चमत्कार समझा जाता है। परन्तु ऐसा बहुत कम होता है। पाश्चात्य देशों की तलाकों की भरमार से जहाँ ऐसे सम्बन्ध बहु सख्या मे होते हैं इस तथ्य की भली भाँति पुष्टि होती है। अत विवाह का उद्देश्य केवल मनुष्य की पाशविकता की तृप्ति नहीं अपितु ऐसा गृहस्थ बनाना होता है जहाँ मनुष्य सासारिक एव मानवीय दोनों दृष्टियों से ऊंचे स्तर पर रहे। इस लक्ष्य को सामने रखकर जो स्त्री पुरुष विवाह रूप मे बँधते है वे प्राय सुखी रहते है।

इस सम्बन्ध में इङ्गलैंड के सुप्रसिद्ध राज-नीतिज्ञ डिस्राइली का उदाहरण मनन करने योग्य है। वे कहा करते थे कि मैं जीवन मे बहुत सी भूलें कर सकता हूँ परन्तु केवल आसक्ति के कारण विवाह करने का मेरा इरादा नही है।" उन्हों ने अपनी इस धारणाको अपने उदाहरण से चरितार्थ कर दिखाया था।

प्रश्न होता है कि क्या शारीरिक सौन्दय और आकर्षण वैवाहिक विषय मे कोई अर्थ नहीं रखते। वे वहाँ तक ही अर्थ रखते है जहाँ तक वे मानसिक और हार्दिक सुन्दरता से ओत प्रोत हों।

डिस्राइली ३५ वर्ष की आयु तक अविवाहित रहे। उन्होंने एक विधवा के सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। वह न सुन्दर थी और न युवती। उसकी शिक्षा भी बहुत कम थी। इतिहास का ज्ञान तो उसे जरा भी न था। कपड़ों के प्रति उसकी रुचि बड़ी भद्दी और बेढगी थी। बात चीत का ढग आता न था। इस पर भी उसमें दो विशेष गुण थे। एक तो वह विशेष धन-सम्पन्न थी और दूसरे व्यवहार कुशल थी। वैवाहिक विषयों मे व्यवहारकुशलता एक कला और प्रतिभा समझी जाती है। उस देवी ने डिस्राइली के प्रस्ताव के उत्तर मे १ वर्ष की अवधि मागी जिससे वह उसके चरित्र का अध्ययन कर सके। इस अवधि के समाप्त होने पर दोनों का विवाह हुआ। यह विवाह वैवाहिक जगत् मे सफल माना जाता है।

डिस्राइली ऐसा घर चाहते थे जहाँ वे दिन भर की थकान के पश्चात् शान्ति का अनुभव कर सकें और गृहपत्नी के प्रेम की गर्मी से अपने हृदय को सेक सकें। डिस्राइली का मनोरथ पूरा हुआ। उनकी पत्नी ने अपनी बुद्धि को अपने पतिदेव की बुद्धि के विरुद्ध कभी प्रयुक्त न किया और अपनी सम्पत्ति को पति की सम्पत्ति समझ कर उसके सुख के लिये खर्च किया।

डिस्राइली की तर्क शक्ति और आलोचना का प्राय सभी लोहा मानते थे परन्तु उन्होंने उस तर्क को अपने घर में प्रविष्ट न होने दिया। उन्हों ने कभी अपनी पत्नी की कटु आलोचना न की और न उसे बुरा भला ही कहा। जब कभी कोई व्यक्ति सावजनिक व्यवहार अनभिज्ञता के कारण उस देवी पर हँसता या उसकी मजाक उड़ाता तो डिस्राइली तत्काल उसकी रक्षा के लिये दौड़ पड़ते थे। जब वे दोनो अत्यन्त प्रसन्न चित्त होते तो आपस मे बड़ी मीठी मजाक किया करते थे डिस्राइली कहते 'देवि मैंने धन के कारण ही तुम से विवाह किया था न?' देवी मुस्करा के कह देती यदि तुम इस समय मुझ से विवाह करते तो धन के कारण नहीं प्रत्युत प्रेम के कारण ही ऐसा करते डिस्राइली इस सचाई को स्वीकार कर लेते थे।

डिस्राइल की पत्नी में बहुत सी कमियां थी फिर भी वे बहुत चतुर थे और उन कमियों के कारण अपनी पत्नी को दुखी वा लज्जित होने का अवसर न देते थे।

क्यों अच्छे से अच्छे विवाह शीघ्र ही असफल और भार बन जाते हैं? इसके बहुत से कारण हो सकते हैं परन्तु मुख्य कारण इस सुनहरी नियम को भुला देना है कि विवाह की सफलता उपयुक्त व्यक्ति पा लेने की अपेक्षा स्वयं उपयुक्त बने रहने पर निर्भर करती है।

गृहस्थ जीवन को सुखी बनाने का दूसरा सुनहरी नियम यह है कि वासना के लिये विवाह न किया जाय विवाह को सामाजिक प्रथा न समझ कर आत्मिक मिलन समझा जाय और अपनी पत्नी को अपने मन का मौज और शृंगार पर नाचने के लिये बाध्य न किया जाय

महर्षि महिमा

[कवि—विद्यावारिधि रुद्रमित्र जी शास्त्री 'कमलेश']

—

यदि ऋषि दयानन्द न आते !
तो आर्यावत के ये आर्य कुल गौरव गवा आते !!

[१]

मिटी वेदों की शुभ शिक्षा,
मिटी सच्छास्त्र को चर्चा।
नही अध्यात्म विद्या उपनिषद्,
का भी कहीं अर्चा ॥
न सच्चे धर्म कर्मादिक,
न सच्चे ईश की पूजा।
बनाकर मूर्ति पत्थर की-
अपूज्यो की हुई पूजा ॥
बने थे हम विपथ गामी कहा सन्मार्ग पर आते !!

[२]

अनेको पोप लीला पन्थ मत,
फैले थे मत वादी।
निरे ढोंगी थे पाखण्डी ॥
हठ ढग स्वार्थी बकवादी ॥
अविद्या के अन्धेरे मे-
पडे भूले भटकते थे।
जन्म गत जाति पाँति-
छूत छातो मे अटकते थे ॥
इमी चक्कर मे संस्कृति का धरा शायी बनाजाते !!

[३]

न जाने युग गये कितने,
सहस्रों वर्ष बीते भी।
पडे बेहोश मे हम थे
न मरते और जीते भी ॥
लुटा धन धान्य सुख सम्पत्
बने फिरते थे दीवाने।
भटकते थे पहन दर दर,
भिखारी दीन के बाने ॥
मिटा कर मान मर्यादा स्वय को भी मिटा जाते !!

[४]

मचा सघष था चहु ओर,
हा हा कार होता था।
व्यथा दीनो के उर से भी,
महा चीत्कार होता था।
भला विधवा अनाथो की,
पुकारे कौन सुन सकता !
अछूतों, नारियो की दुर्दशा,
पर कौन रो सकता !!
भुला कर पूर्वजो का मान मिट्टी मे मिला जाते !!

[५]

गुलामी में पड़ा भारत भी,
अपनी जान खोता था।
सिसकता और रोता था,
निरा आँसू पिरोता था॥

बहू बेटी भी लुटती थी,
जनेऊ चोटियाँ कटतीं।
छुरी चलती थी गर्दन पर
गऊ की बोटिया कटतीं॥

गिरे जाते थे हम इतने कि भारत को गिरा जाते॥

[६]

जगाता कौन जाति को,
उठाता कौन जाति को।
पिला कर शक्ति की घूटी
हसाता कौन जाति को॥

लगा कर जान का बाजा,
सुजीवन दान देता कौन?
अरे बलिदान देकर भी
भला वरदान देता कौन॥

मरी सी जाति के तन को विदेशी गृध्र खा जाते॥

[७]

पता चलता नहीं जग में,
कहा थे आर्य भी कोई।
न आर्यावर्त्त भी कोई,
न उसका कार्य भी कोई॥

न भारत वर्ष ही होता,
न हिन्दुस्थान ही होता।
कहीं शायद भला इस
'इण्डिया' का ही निशा होता॥

प्रमादी हम निशा मे थे, नशा मे सब नसा जाते॥

[८]

नवल तम चेतना देकर,
उठाया देश भारत को।
प्रबलतम प्रेरणा देकर,
बढाया देश भारत को॥

किया सर्वस्व अर्पण—
राष्ट्रहित ऋषिवर दयानन्द ने
महा कल्याण दुनियाँ का,
किया ऋषिवर दयानन्द ने॥

कहो "कमलेश" क्या सचमुच रसातल में न हम जाते॥

महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी

सर्वमतसमतादि विषयक विचारों का तुलनात्मक अनुशीलन

(१०)

[लेखक—श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति]

महर्षि के सर्व मत समता विषयक विचार

महर्षि दयानन्द के धर्म विषयक विचार सत्यार्थ प्रकाश में स्पष्टतया वर्णित हैं अतः उनके विषय में विस्तार से लिखने की विशेष आवश्यकता नहीं। महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के अन्त में स्वमन्तव्यामन्तव्य लिखते हुए निम्न स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य वाक्यों द्वारा सागर को गागर में भर दिया है कि—

जो बात सब के सामने माननीय है उस को मानता अर्थात् जैसे सत्य बोलना सब के सामने अच्छा और मिथ्या बोलना बुरा है ऐसे सिद्धान्तों को स्वीकार करता हूं और जो मत मतान्तर के परस्पर विरुद्ध झगड़े हैं उन को मैं प्रसन्न (पसन्द) नहीं करता, क्यों कि इन्हीं मतवालों ने अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फंसा कर परस्पर को शत्रु बना दिये हैं। इस बात को काट सर्व सत्य का प्रचार कर सबको ऐक्य मत में करा द्वेष छुड़ा परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त करा के सब से सब को सुख लाभ पहुंचाने के लिये मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। सर्व शक्तिमान् परमात्मा की कृपा सहाय और आप्त जनों की सहानुभूति से यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे जिस से सब लोग सहज से धर्मार्थ काम मोक्ष की सिद्धि कर के सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।

(सत्यार्थ प्रकाश ९८ वां वार पृ० ३८६)

सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में यह प्रश्न उठवा कर कि आप सब का खण्डन ही करते आते हो परन्तु अपने २ धर्म में सब अच्छे हैं। खण्डन किसी का न करना चाहिये जब करते हो तो आप इन से विशेष क्या बतलाते हो? महर्षि ने उत्तर दिया है कि धर्म सब का एक होता है वा अनेक? जो कहो अनेक होते हैं तो एक दूसरे से विरुद्ध होते हैं वा अविरुद्ध? जो कहो कि विरुद्ध होते हैं तो एक के बिना दूसरा धर्म नहीं हो सकता और जो कहो अविरुद्ध हैं तो पृथक् २ होना व्यर्थ है। इस लिये धर्म और अधर्म एक ही हैं अनेक नहीं। (सत्यार्थ प्रकाश ११ वां समुल्लास पृ० २४५) इसके पश्चात् एक जिज्ञासु राजा को विविध मतवादियों के पास भेजा जाता है जिस सब मतवादी यही कहते हैं कि हमारा ही मत सच्चा है अन्य सब झूठे हैं। अन्त में वह एक आप्त विद्वान् की शरण में आता है जिसको वे यह उपदेश देते हैं कि 'ये सब मत अविद्या जन्य विद्या विरोधी हैं। मूर्ख, पामर और जङ्गली मनुष्य को बहका कर अपने जाल में फंसा के अपने प्रयोजन सिद्ध करते हैं। वे विचारे अपने मनुष्य जन्म के फल से रहित होकर अपना मनुष्य जन्म व्यर्थ गमाते हैं।' देखो

जिस बात मे ये सहस्र मत एक हो वह वेद मत ग्राह्य है—और जिस मे परस्पर विरोध हो वह कल्पित, झूठा, अधर्म, अग्राह्य है। (जिज्ञासु) इस की परीक्षा कैसे हो ? (आप्त) तू जाकर इन २ बातों को पूछ। सब की एक सम्मति हो जाएगी। तब वह उन सहस्रों की मण्डली के बीच मे खड़ा हो कर बोला कि सुनो सब लोगो! सत्य भाषण मे धर्म है वा मिथ्या मे ? सब एक स्वर हो कर बोले कि सत्य भाषण में धर्म और असत्य भाषण मे अधर्म है। वैसे ही विद्या पढ़न, ब्रह्मचर्य करन, पूर्ण युवावस्था मे विवाह, सत्सङ्ग, पुरुषार्थ, सत्य व्यवहार आदि मे धर्म और अविद्या ग्रहण, ब्रह्मचर्य न करने व्यभिचार करने, कुसग, आलस्य, असत्य व्यवहार छल कपट, हिंसा, परहानि करने आदि कर्मो मे ? सबने एक मत हो के कहा कि विद्यादि के ग्रहण मे धर्म और अविद्यादि के ग्रहण मे अधर्म। तब जिज्ञासु ने सब से कहा कि तुम इसी प्रकार सब जने एक मत हो सत्य धर्म की उन्नति और मिथ्या मार्ग की हानि क्यों नही करते हो। वे सब बोले जो हम ऐसा करें तो हम को कौन पूछे ? हमारे चेले हमारी आज्ञा मे न रहें जीविका नष्ट हो जाय, फिर जो हम आनन्द कर रहे हैं सो सब हाथ से जाय। इस लिये हम जानते हैं तो भी अपने २ मत का उपदेश और आग्रह करते ही आते है क्यों कि 'रोटी खाइये शक्कर से, दुनिया ठगिये मक्कर से।' ऐसी बात है। देखो ! ससार मे सूधे सच्चे मनुष्य को कोई नहीं देता और न पूछता। जो कुछ ढोंग वाजी और धूर्तता करता है वही पदार्थ पाता है। इत्यादि (सत्यार्थ प्रकाश पृ० २४७)

इन उपर्युक्त तथा इस के आगे के शब्दों मे महर्षि दयानन्द जी ने साम्प्रदायिक लोगो की मनोवृत्ति का नग्न चित्र खेंच कर उससे दूर रहने का सब का उपदेश दिया है। उन्हो ने सत्यार्थ प्रकाश के पिछले चार समुल्लासो मे इन मतों को तर्क की कसोटी पर कस कर उनके दोषों का भी दिग्दर्शन अत्यन्त शुद्ध भाव से कराया है जैसे कि अपने महान् ग्रन्थ की प्रारम्भिक भूमिका मे ही उन्हो ने लिख दिया है कि 'मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषो से सत्य को छोड असत्य मे झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ मे ऐसी बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है। किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करे, क्यो कि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।" (सत्यार्थ प्रकाश भूमिका पृ० २) ऐसा ही पिछले चार समुल्लासों की अनुभूमिकाओं मे लिखा है।

इस का यह अर्थ नहीं समझना चाहिये कि महर्षि के विचार मे इन विविध मत-मतान्तरों मे कोई सत्य का अंश न था। इस्लाम विषयक चतुर्दश समुल्लास के अन्त मे महर्षि ने एक कट्टर मुसलमान के मुख से प्रश्न करवाया है कि 'देखो हमारा मत कैसा अच्छा है कि जिस में सब प्रकार का सुख और अन्त में मुक्ति होती है। इसका महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदत्त उत्तर स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है जो यह है कि—

'ऐसे ही अपने मत वाले सब कहते हैं कि हमारा ही मत अच्छा है बाकी सब बुरे, बिना हमारे मत के दूसरे मत मे मुक्ति नही हो सकती। अब हम तुम्हारी बात को सच्ची माने वा उनकी? हम तो यही मानते हैं कि सत्य भाषण, अहिंसा, दया आदि शुभ गुण सब मतो में अच्छे हैं बाकी वाद विवाद, ईर्ष्या द्वेष, मिथ्या भाषणादि कर्म सब मतो मे बुरे हैं। यदि तुम को सत्य मत ग्रहण की इच्छा हो तो वैदिक मत को ग्रहण करो।

(सत्यार्थ प्रकाश पृ० २८१)

जिस एक धर्म और अधर्म का महर्षि ने एकादश समुल्लास के ऊपर उद्धृत वाक्य मे उल्लेख किया है उस का लक्षण उन्होंने निम्न शब्दो मे दिया है—

"जो पक्षपात रहित न्यायाचरण, सत्य भाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदो से अविरुद्ध है उस का धर्म और जो पक्षपात सहित अन्यायचरण मिथ्याभाषणादि ईश्वराज्ञा भङ्ग वेद विरुद्ध है उसको अधर्म मानता हूँ। इस प्रकार महर्षि दयानन्द के इस अत्यावश्यक विषय पर विचारो को संक्षेप से उन्हीं के शब्दो मे दिखाने के पश्चात् मैं महात्मा गान्धी जी विचारो को श्री किशोरी लाल मशरूवाला द्वारा संकलित "गान्धी विचार दोहन", से उद्धृत करता हूँ।

महात्मा गान्धी के सर्व धर्म समता विषयक विचारः—

१ प्रत्येक युग और प्रत्येक राष्ट्र मे सत्य के गहरे खोजी और जन कल्याण के लिये अत्यन्त लगन रखने वाले विभूति मान पुरुष और सन्त पैदा होते है। उस युग के और उस जन समाज के दूसरे लोगो की अपेक्षा वे सत्य का कुछ अधिक साक्षात्कार किये होते है इन का कुछ साक्षात्कार सनातन सिद्धान्तो का होता है और कुछ अपने जमाने की परिस्थिति मे उपजा हुआ होता है। इसके सिवा ऐसा होता है कि कितने ही सिद्धान्त अपने सनातन स्वरूप मे उनकी समझ मे आने पर भी, उन्हे कार्य रूप देने को उद्यत होने पर उस युग और देश की परिस्थिति मे उसका मेल ही रहे ऐसी मर्यादा के अन्दर ही उस को प्रणाली उन्हे सूझती है। इन सब मे से ही जगत के भिन्न २ धर्मो की उत्पत्ति हुइ है।

२ इस रीति से विचार करने वाला किसी धर्म मे सत्य का सर्वथा अभाव नहीं देखता, वैसे ही किसी धर्म को सम्पूर्ण सत्य के रूप मे नहीं स्वीकार करता। वह धर्मो मे परिवर्तन और विकास की गुंजाइश देखेगा। उसे दिखाई देगा कि विवेक पूर्वक अनुसरण करने पर प्रत्येक धर्म उस प्रजा का कल्याण साधन कर सकता है और जिसमे व्याकुलता है उसे सत्य की झाकी कराने तथा शान्ति और समाधान देने मे समर्थ है।

३ ऐसा मनुष्य यह अभिमान नही रखता कि उसी का धर्म श्रेष्ठ है और मनुष्य मात्र को अपने उद्धार के लिये उसी का स्वीकार करना चाहिये। वह उसे छोडेगा भी नहीं और उस के दोषों की ओर से आंखे भी नहीं मूंदेगा। वह जैसा आदर भाव अपने धर्म के प्रति रक्खेगा वैसा ही दूसरे धर्मो और उन के अनुयायियों के

प्रति भी रक्खेगा और चाहेगा यही कि प्रत्येक मनुष्य अपने २ धर्मों के ही उत्तमोत्तम सिद्धान्तों का यथोचित रीति से पालन करे ।

४. निन्दक बुद्धि पर धर्म मे छिद्र देखेगी। सत्यशोधक को प्रत्येक धर्म में सत्य का जो अङ्ग विकसित जान पडेगा उसका अंश ग्रहण कर लेगा। इससे सत्य शोधक पुरुष के बारे मे प्रत्येक धर्म के अनुयायी को ऐसा जान पडेगा मानों वह उसी के धर्म का सच्चा अनुयायी है। इस प्रकार सत्य शोधक अपने जन्म धर्म का त्याग किए बिना सब धर्मो का अनुयायी सा प्रतीत होता है ।

(गाधी विचार दोहा पृ० १६४७)

'मङ्गल प्रभात' के नाम से जो महात्मा गाधीजी के यरवडा जेल से सन् १६३० मे सत्याग्रहाश्रम वासियों के नाम लिखे पत्र रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से प्रकाशित हुए है उन मे सर्वधर्म समभाव' शीषक से लिखा है कि "अहिसा हम दूसरे धर्मो के प्रति समभाव सिखाती है। आदर और सहिष्णुता अहिसा की दृष्टि से पर्याप्त नही है। दूसरे धर्मो के प्रति समभाव रखने के मूल मे अपने धर्म की अपूर्णता का स्वीकार भी आ ही जाता है और सत्य की आराधना अहिंसा की कसौटी यही सिखाती है। हम पूर्ण सत्य को नही पहचानते, इसीलिए उसका आग्रह करते है, इसी मे पुरुषार्थ की गु जाइश है। इसमे अपनी अपूर्णता को मान लेना आ गया। हम अपूर्ण तो हमारे द्वारा कल्पित धर्म भी अपूर्ण, स्वतन्त्र धर्म सम्पूर्ण है। उसे हम ने देखा नही, जिस तरह ईश्वर को हमने नही देखा। हमारा माना हुआ धर्म अपूर्ण है और उसमे सदा परिवर्तन हुआ करता है, होता रहेगा। ऐसा होने से ही हम उत्तरोत्तर ऊपर उठ सकते हैं सत्य की ओर—ईश्वर की ओर दिनप्रति दिन आगे बढ सकते है और यदि मनुष्य कल्पित सभी धर्मो को अपूर्ण मान ले तो फिर किसी को ऊच नीच मानने की बात नही रह जाती। **सभी सच्चे हैं पर सभी अपूर्ण हैं** इस लिये दोष पात्र है। **सम भाव होने पर भी हम उस मे दोष देख सकते हैं। हमे अपने मे भी दोष देखने चाहिये।** उस दोष के कारण धर्म का त्याग न करे। या समभाव रखे तो दूसरे धर्मो मे जो कुछ ग्राह्य जान पडे उसे अपने धर्म मे स्थान देते सकोच नही, इतना ही नहीं, वैसा करना धर्म हो जाए

'सभी धर्म ईश्वर प्रदत्त है, परन्तु वे मनुष्य कल्पित होने के कारण, मनुष्य द्वारा उन का प्रचार होने के कारण वे अपूर्ण हैं। ईश्वर दत्त धर्म अगम्य है। मनुष्य उसे अपनी भाषा मे प्रकट करता है। उसका अर्थ भी मनुष्य लगाता है। किस का अर्थ सच्चा माना जाय? सब अपनी २ दृष्टि से जब तक वह दृष्टि बनी रहे, तब तक सच्चे है। परन्तु सभी का झूठा होना भी असम्भव नही है। इसी लिये हमे सब धर्मो के प्रति समभाव रखना चाहिये। इससे अपने धर्म के प्रति उदासीनता नही उत्पन्न होती, परन्तु स्व धर्म विषयक प्रेम, अन्ध प्रेम न रह कर ज्ञानमय हो जाता है। इस से अधिक सात्विक तथा निर्मल बनता है। सब धर्मो के प्रति समभाव आने पर

ही हमारे दिव्य चक्षु खुल सकते हैं। धर्मान्धता और दिव्य दर्शन मे उत्तर दक्षिण जितना अन्तर है। धर्म ज्ञान होने पर अन्तराय मिट जाते हैं और समभाव उत्पन्न होता है। इस समभाव का विकास कर के हम अपने धर्म को अधिक पहचान सकते हैं।

यहां धर्म अधर्म का भेद नही मिटता। यहाँ तो उन धर्मो की बात है जिन्हें हम निर्धारित धर्म के रूप मे जानते है। इन सभी **धर्मों के मूल सिद्धान्त एक ही हैं।** सभी मे सन्त स्त्री पुरुष हो गये है, आज भी मौजूद हे। इस लिये धर्मो के प्रति समभाव मे और धर्मियों—मनुष्यो के प्रति वाले समभाव म कुछ अन्तर है। मनुष्य मात्र—दुष्ट और श्रेष्ठ के प्रति, धर्मी और अधर्मी के प्रति समभाव की आवश्यकता है **परन्तु अधम के प्रति कदापि नहीं।** तब प्रश्न यह होता है, कि बहुत से धर्मो की क्या आवश्यकता है ? यह हम जानते है कि धर्म अनेक है। आत्मा एक है पर मनुष्य देह अगणित है। देह की असत्यता दूर करने से दूर नही हो सकती फिर भो आत्मा की एकता को हम जान सकते है। धर्म का मूल एक है जैसे वृक्ष का, उसमे पत्ते अगणित है।"

(मङ्गल प्रभात पृ० ६०—६६)

'हमारा माना हुआ धर्म अपूर्ण है।' यह वाक्य जो ऊपर के पत्र मे उद्धृत है अस्पष्ट है इस के विषय मे राम लाल कपूर ट्रस्ट की ओर से महात्मा गान्धी जी से प्रश्न पूछा गया जिस के उत्तर मे उनकी ओर से १५-९-३८ को निम्न उत्तर दिया गया —

'आप का पूज्य गान्धी जी के नाम का ता० १०-८-३८ का पत्र मिला। पू० गान्धी जी के कहने का मतलब यह है कि सत्य अहिंसा ब्रह्मचर्य आदि धर्म अचल और सनातन हैं। पर भिन्न २ समाज और युगों मे उन का जो व्यावहारिक स्वरूप धर्म के नाम पर चलता है उसी को हमेशा के लिये सच्चा और पूर्ण न मानना चाहिये, इस मे उत्तरोत्तर शुद्धि और विकास के लिये गुञ्जाइश है। उदाहरणार्थ शौच (शुद्धाचार) के नाम पर अस्पृश्यता चली हो और वह धर्मरूप मानी गई हो तो उस मे संशोधन होना आवश्यक होता है। आशा है, इस स्पष्टीकरण से समाधान होगा। आपका

किशोरी लाल

मगल प्रभात ६१।६२

इन लम्बे उद्धरणो और स्पष्टीकरण को मैंने इस लिये जनता के सामने रक्खा है जिससे इस विषय मे महर्षि दयानन्द और महात्मा गाधी जी के विचारो की तुलना मे सुविधा हो। यह तो स्पष्ट है कि इस विषय मे दोनो महापुरुषो के विचार मे बहुत अन्तर है। यहा तक तो महर्षि दयानन्द और महात्मा गाधी के विचार मे समानता है कि मतभेद के कारण किसी भी व्यक्ति से द्वेष न किया जाए किन्तु इस का यह अर्थ नही कि धर्म और मत मतान्तर समान माने जाए। धर्म तो एक ही हो सकता है जिस का लक्षण महर्षि दयानन्द के अनुसार यह है कि जो पक्षपात रहित न्यायाचरण, सत्यभाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदो से अविरुद्ध है।

वह धर्म सार्वभौम है। उस मे अन्य मत मतान्तरो की (जो पीछे चले) अच्छी २ सब

बातों का समावेश है। महर्षि दयानन्द पूर्णयोगी और वेदों के पूर्ण पण्डित होने के कारण निश्चित रूप से धर्म के यथार्थ स्वरूप को जान सकते थे किन्तु वैयक्तिक जीवन की दृष्टि से अत्यन्त उन्नत होते हुए योग और वेद ज्ञान मे न्यूनता के कारण (जिस को महात्मा जी स्वय स्वीकार करते थे) महात्मा गाधी धम को यथार्थ रूप से जानने मे समर्थ न हो सके यह खेद की बात है। वैदिक धर्म के युक्ति युक्त, न्याय सङ्गत और सार्वभौम सिद्धान्तों की बात जाने भी दे तो यह कहना कि जैन बौद्ध जैसे पूर्ण अहिंसा प्रतिपादक मतो और ईसाइयत तथा इस्लाम के इस विषयक सिद्धान्त मे कोई अन्तर नहीं, इस प्रकार वैदिक धर्म और इस्लाम के सदाचारादि विषयक विचार एक जैसे हैं इन क विषय मे अपने अज्ञान को प्रकट करना है। इन मे आकाश पाताल का अन्तर निष्पक्षपात विचारकों को स्पष्ट दिखाई देगा यद्यपि एकेश्वर पूजादि कुछ थोडे से विषयों मे समानता से भी इन्कार नहीं किया जा सकता। सृष्टि के प्रारम्भ मे परम पिता परमेश्वर द्वारा मनुष्य मात्र के कल्याण और मार्ग प्रदर्शनार्थ एक न्याय सङ्गत, युक्ति युक्त, सार्वभौम धर्म का उपदेश दिया जाना सर्वथा तर्क सम्मत विश्वास है। वही धम कालान्तर मे प्रचलित होने वाले विविध मतों का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मूल हुआ जैसे कि श्री प० गङ्गाप्रसादजी एम०ए० भू० पू० प्रधान सार्वदेशिक सभा ने अपने Fountainhead of Religion नामक अत्युत्तम ग्रन्थ में बडी योग्यता से सप्रमाण दिखाया है। यहाँ इस विषय के विस्तार मे जाने की आवश्यकता नहीं इस विषय में तो महात्मा गान्धी जी भी सहमत थे कि हमें ईसाइयत, इस्लाम आदि मतों का अनुशीलन करते हुए विवेक से काम लेना चाहिये। स्वयम् उन्होंने ईसाइयों के अनेक मन्तव्यों की समालोचना आत्मकथा तथा Christian mission आदि में की है। उनकी 'आत्म कथा' से निम्न उद्धरण इस विषय में विशेष रूप से उल्लेखनीय है—

'मेरी कठिनाइयो की जड बहुत गहरे में थी। 'एक मात्र ईसा-मसीह ही ईश्वर के पुत्र है, जो उन्हे मानता है, वही मुक्ति का अधिकारी हो सकता है यह बात मेरा मन किसी तरह स्वीकार करने को तैयार नहीं होता था। यदि ईश्वर का पुत्र होना सम्भव है तो हम सभी उनके पुत्र हैं। ईसा मसीह ने अपनी जान देकर अपने खून से ससार क सब पापों को धो डाला है, इस बात का अक्षरश सत्य मानने को मेरी बुद्धि कबूल नही करती। इसके अलावा ईसाई लोगों का विचार है कि आत्मा कवल मनुष्या में ही है, अन्य जीवों में नही है, एव शरीर के विनाश के साथ ही साथ उनका सब कुछ विनष्ट हो जाता है। इस बात से मेरा मन सहमत नहा है। ईसा मसीह को मै एक महान् त्यागी महापुरुष और धर्म गुरु के रूप में मान सकता हूं। यह भी मैं स्वीकार करता हूँ कि ईसा की मृत्यु ससार में बलिदान का एक महान् दृष्टान्त छोड गई है। पर मेरा हृदय यह स्वीकार नहीं कर सका है कि उनकी मृत्यु ने ससार में कोई अभूत पूर्व या रहस्य पूर्ण प्रभाव डाल रखा है। ईसाई लोगों के पवित्र

जीवन मे मुझे ऐसा कुछ भी नहीं मिलता है जो अन्य धर्मावलम्बियो के पवित्र जीवन मे नहीं मिलता। सात्विक दृष्टि से भी ईसाई धर्मके तत्त्वो मे कोई ऐसी असाधारणता नहीं है और त्याग को दृष्टिसे देखने पर ता हिन्दू धर्म ही श्रेष्ठ प्रतीत होता है। मैं ईसाई धर्म को पूर्ण अथवा सर्व श्रेष्ठ धर्म मानने को तैयार नही हूँ।" 'जब प्रसङ्ग आ उपस्थित होता है तो मैं अपने ईसाई मित्रों के आगे धर्म सम्बन्धी यह हृदयोद्गार व्यक्त कर दिया करता हूं पर मुझे इसका सन्तोष जनक उत्तर उन से नहीं मिलता।" (आत्मकथा पृ० १०३-१०७) वस्तुतः महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश मे ईसाई मत की जो आलोचना की है उसमे इनमे से प्राय सभी बातो का समावेश है सिवाय इस के कि उन्होंने 'धर्म गुरु' जैसे अत्युत्तम पद का ईसा मसीह के लिये कहीं प्रयोग नहीं किया।

महात्मा गाधी को सेठ अब्दुल्ला आदि इस्लाम की महत्ता और पवित्रता के विषय मे बहुत कुछ कहते रहते थे। तब उन्होंने अपने गुरु तुल्य भाई रामचन्द्र जी को इस विषय मे पत्र लिखा जिसके उत्तर मे भाई रामचद्र जी ने लिखा कि "हिन्दू धर्म मे जो गूढ़ तत्त्व और विचार है, आत्मा की ओर उसका जो स्थिर लक्ष्य है, उस मे जो अपार दया भाव है वह अन्य धर्मो मे नहीं। पक्षपात रहित दृष्टि से विचार करने पर मैं इसी सिद्धान्त पर पहुँचा हूँ—यही मेरा विश्वास है।"

(म० गाधी की आत्म कथा पृ० २०८)

इस पत्र मे प्रयुक्त 'हिन्दू धर्म' का अर्थ यदि उसके विशुद्ध और मूल रूप में प्रचलित वैदिक धर्म लिया जाए तो यह बात सर्वथा यथार्थ है। इसे अनेक प्रमाणों और युक्तियों से सिद्ध किया जा सकता है किन्तु विस्तारभय से ऐसा करना हमे उचित नहीं प्रतीत होता। दुःख की बात यह है कि महात्मा गाधी जी वेदों के विद्वान् न होने के कारण जहा वैदिक धर्म को विशुद्ध रूप मे समझने मे समर्थ न हुए वहां अरबी आदि का ज्ञान न होने के कारण वे कुरान की अनेक हानि कारक शिक्षाओं को भी पूर्णतया न जान सके इस कारण उनके इस विषयक सिद्धान्तों का कोई महत्त्व नही महर्षि दयानन्द ने कुरान और बाइबल आदि की आलोचना उन दिनों प्रामाणिक माने जानेवाले अनुवादों के आधार पर और विशुद्ध भाव से की अतः उनको इसके लिये दोष देना सर्वथा अनुचित है। धर्म विषयक महर्षि का मन्तव्य ही न्याय संगत और युक्ति युक्त है।

(क्रमश)

———

एक आदर्श कर्मयोगी

स्व० श्री पण्डित विश्वम्भर नाथ जी

[लेखक—श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति]

७ अप्रैल १९४६ के प्रात काल एक ऐसे महान् आर्य का देहावसान हो गया, जिसे भगवद्गीता की परिभाषा के अनुसार सच्चा कर्मयोगी कह सकते है। सम्भवत आर्य समाज की परिधि के बाहर उस कर्मयोगी को लोग न जानते हो, यह भी सम्भव है कि आर्य सामाजिक जगत् मे भी पजाब से बाहर उसकी विशेष ख्याति न हो परन्तु यदि मुझसे कोई पूछे कि तुमने जितने सार्वजनिक कार्यकर्त्ता देखे है, उनम से ऐसा कौन व्यक्ति था, जिसे सच्चे अर्थो मे निष्काम कर्म योगी कह सकते है, तो मै उत्तर दूगा कि वह प० विश्वम्भर नाथ जी थे।

प० विश्वम्भर नाथ जी उस युग के आर्य समाजी थे, जिसमे आर्य समाज को नौजवानो की सासारिक उन्नति का साधन नहीं समझा जाता था, अपितु नौजवान उसे साध्य मान कर उसके लिये अपने तन मन धन को अर्पण करन मे सौभाग्य का अनुभव करते थे। प्रारम्भिक आयु मे ही गहरी नि स्वार्थ भावना को हृदय मे लेकर प० विश्वम्भर नाथ जी ने आर्य समाज की सेवा मे पदार्पण किया। उस दिन से लेकर अपनी मृत्यु के समय तक वे अपन अभीष्ट ध्येय की पूर्ति मे सर्वतोभावेन लगे रहे यद्यपि वह बात चीत में और व्यवहार में अत्यन्त समझदार, उदार और शान्त व्यक्ति थे तो भी उनके मित्र जानते थे कि आर्य समाज, और उसकी प्रमुख संस्था गुरुकुल से उनका प्रेम उस सीमा तक पहुचा हुआ था जिसे पागल प्रेम कहते है। पागल प्रेम का ही दूसरा नाम भक्ति है और भक्ति के बिना निष्काम कर्म असम्भव है। प० विश्वम्भरनाथ जी आर्य समाज के परम भक्त थे, और इसी कारण वे ऊचे दर्जे के कर्मयोगी थे।

प० विश्वम्भरनाथ जी ने कई हैसीयतों से आर्य समाज की सेवा की। लगभग २० वर्षो तक पजाब की आर्य प्रतिनिधि सभा के जीवन प्राण रहे। प्रधान आये और चले गये जैसे हर साल बरसात मे बादल आते हैं और हवा में उड जाते है, परन्तु हिमालय की ऊची शिखा की भाति स्थिर भाव से खडे हुए प० विश्वम्भर नाथ जी अपने उप प्रधान के आसन पर अटल रहे। उन्होंने अपने हृदय मे कभी बादल बन कर आकाश मे उडने की महत्वाकाक्षा नही उत्पन्न की और न कभी थक कर पृथ्वी पर लेटने का विचार किया कविता मे प्रसिद्ध कासाब्याका की तरह वह मौन वीर अपने मोर्चे पर सदा डटा रहा। और प्रति वर्ष चुनाव के समय आने वाले वायु और जल के थपेडों को शूरता के साथ सहता रहा।

पं० विश्वम्भरनाथ जी का एक बहुत बडा गुण यह था कि वे अहम्भाव से शून्य थे। वह बडी 'मैं' जो सार्वजनिक कार्य के लिये थोडी-सी कुर्बानी करने वालों मे शीघ्र ही उत्पन्न हो जाती

है, अपना यौवन, रोजगार और सुख-यह सब कुछ धर्म सेवा के अर्पण करके भी पं० विश्वम्भर नाथ जी मे सर्वथा नहीं थी। यू परमात्मा ने उन्हें सुन्दर रूप और बलिष्ठ शरीर दिया था। उसके अनुरूप ही ओज भी उन मे था। अप्रिय बात पर वे क्रुद्ध भी हो जाते थे, परन्तु यह क्रोध क्षण स्थायी ही होता था। हमें यह देख कर आश्चर्य होता था कि जिस प्रतिपक्षी की बात पर वह एक क्षण पहले उग्र रोष प्रकट कर रहे होते थे, एक क्षण पीछे उसके गले मे हाथ डाल कर उसे प्यार से समझा रहे होते थे। उन्होने अपनी निजू सत्ता को अपने अभीष्ट ध्येय की सत्ता मे सर्वथा विलीन कर दिया था।

७० वर्ष के लगभग आयु हो जाने पर भी उनका स्वास्थ्य नौजवानों को लजा देने वाला था। जैसा स्वास्थ्य दिखाई देता था, वैसी ही कार्य शक्ति भी थी। उन्होंने मुझ से कई बार यह बात कही कि बडी आयु में विश्राम करने से मनुष्य मे जग लग जाता है। मैं जंग लग कर मरना नहीं चाहता। जब तक शरीर में शक्ति है। तब तक कार्य करता हूँ यही मेरा संकल्प है।' साधारण व्यक्तियों के संकल्प क्षणिक होते हैं, वह पानी के बुदबुदे की तरह हवा का झोंका लगते ही नष्ट हो जाते है। उसी व्यक्ति के संकल्प पूरे होते हैं, जिसके जीवन मे सचाई हो, सयम हो, और श्रद्धा हो। यह पं० विश्वम्भरनाथ जी की सचाई, सयम और श्रद्धा का ही परिणाम था कि कार्य करते हुए, शात दशा मे थोड़े से कष्ट के पश्चात् ही दिल की धडकन बन्द होने से उनका देहावसान हो गया।

आज बडे दुख से यह मान लेना पड़ा है कि सभी जीव मरण-धर्मा हैं, अतः पं० विश्वम्भर नाथ जी भी नहीं रहे। वह अपने परिचितो के जीवन में प्रेम पूर्ण अमर व्यक्ति की तरह रम गये थे उनकी मृत्यु के झटके ने मानों हम लोगों को नींद से जगा कर यह सूचना दी है कि संसार मे अमर कोई भी नहीं। जो उत्पन्न हुआ है, वह अवश्य मरेगा भेद केवल इतना ही है कि मरने वाला अपने पीछे पं० विश्वम्भरनाथ जी जैसा मीठी स्मृतिया छोड जावेगा या कडवी स्मृतिया। जिसके पीछे मीठी स्मृतिया रह जाएँ वह परलोक मे सुख का भागी होगा और जो अपने पीछे कडवी स्मृतिया छोड़ जायगा, उसका भविष्य कण्टकाकीर्ण होगा। इसमे कोई सन्देह नही कि पं० विश्वम्भरनाथ जी इस लोक को छोड कर उस लोक को प्रयाण कर गये हैं जिसमें प्रभु के प्यारे ही निवास कर सकते हैं।

आदर्श वेदोद्धारक स्वामी दयानन्द जी सरस्वती

[वेद तथा मीमांसादि के धुरन्धर विद्वान् महामहोपाध्याय श्री चिन्नस्वामी शास्त्री जी के आर्य विद्वत्सम्मेलन कलकत्ता मे दिये भाषण का सार]

"हम यहां भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए एकत्रित हुए हैं भारतीय आर्य संस्कृति ही हमारी जननी स्थानीय है। स्वभाव से मन की इच्छा होती है कि विशेष कर मातृभक्त अपनी माता को सर्वोच्च स्थान देगा। हमारी बात सुनी जावे ता हम तो अपनी माता आर्य संस्कृति तथा संस्कृत भाषा को सर्वोच्च स्थान देंगे, भारत स्वतन्त्र होने पर भी हम इस के पुनरुत्थान मे कटिबद्ध न हों, तो हम होंगे।

मैं अभी तक संस्कृत मे बोल रहा था, मैं समझा हूं लोग मेरे भाषण को नहीं समझ रहे होंगे। इसलिए मैं हिन्दी में ही अपना भाषण आरम्भ कर रहा हूँ, आज इस महा सम्मेलन के अवसर पर बड़ी भारी सभा एकत्रित हुई है, मुझे आज यह गौरव प्राप्त है कि मेरे शिष्य तपोमूर्त पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु इस आर्य विद्वत् सम्मेलन के सभापति पद पर आसीन हैं।

संस्कृत राष्ट्र भाषा होनी चाहिए।

मद्रासी होने के नाते मुझे हिन्दी नहीं मालूम, किन्तु काशी में रहने का अवसर प्राप्त हुआ है, इसलिए मैं हिन्दी में भाषण करता हूँ। मैं हिन्दी भाषा भाषियों से प्रेम करता हूँ, हिन्दी बहन है और संस्कृत माता। जिस प्रकार हम लोग माता के गर्भ से पैदा होते हैं, वैसे हम लोग अपनी माता की रक्षा करते हैं। उसी तरह संस्कृत की भी रक्षा करनी चाहिए।

संस्कृति का स्वरूप कहां से आया है, जिसका हम लोग गौरव समझते हैं यह आदि काल की स्मृति है। आज वही संस्कृति परिवर्तित रूप मे विराजमान है, इस संस्कृति का मूल वेदों में पाया जाता है।

वर्तमान में स्वामी दयानन्द सर्व प्रथम वेदोद्धारक।

यद्यपि पंडित लोग गरीब हैं। पुनरपि हम लोगों ने वेद की रक्षा की है। हम लोगो ने धन, गौरव, मान, मर्यादा का विचार नहीं किया बड़े बड़े महलों मे रहने की इच्छा नहीं की और जंगल मे रहकर फल मूल कन्द खाकर वेदों की रक्षा की। हम लोग अपने शरीर की रक्षा केवल अपने स्वार्थ के लिए नहीं करते। अपितु प्राणिमात्र के सुख के लिए और मानव कल्याण के लिए हम लोग उपदेश करते हैं। क्योंकि हमारा शास्त्र कहता है।

'सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे भवन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत्"

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सब के सुख के लिए ही आर्य समाज की स्थापना की। मानव सुख की पुष्टि के लिए वेदों का प्रचार आरम्भ से ही ऋषि मुनि करते चले आ रहे हैं, और वेदों की रक्षा भी होती रही। वेदों के अनेक उद्धारक होगए हैं, जिन में सर्व प्रसिद्ध श्री स्वामी दयानन्द जी हैं। स्वामी जी ने चाहा कि वेद तथा

वैदिक धर्म का उद्धार हो और हमारी वैदिक संस्कृति अचल रहे, और उसी को सब कोई धारण करे।

वेद मंत्रों के तीनों प्रकार के अर्थ

स्वामी दयानन्द जी का आध्यात्मिक अर्थ स्वाभाविक एव मानव कल्याणार्थ है।

स्वामी दयानन्द जी ने वेद मन्त्रो का जिन २ अर्थों मे भाष्य किया है उससे सनातन धर्मी पंडितो का मत भेद हो सकता है। सनातन धर्मी और आर्य समाजी एक ही है। हम सभी को मिल कर काम करना चाहिए। हम लोगो में सिद्धान्त भेद हो सकता है। कोई शिव की पूजा करते है, कोई विष्णु की। भिन्न २ मत को मान कर भी हम लोग एक ही साथ एक घर में रहते है। कोई सगुण परमात्मा की उपासना करता है। कोई निर्गुण परमात्मा की।

मैंने सस्कृत मे परिश्रम किया है मुझे अपनी तैत्तिरीय सहिता सस्वर कठस्थ है। यह सब मैं इस लिए कह रहा हूँ कि कोई सज्जन ऐसा न समझे कि मै वेदों के विषय मे यो ही कह रहा हूँ। वेद मन्त्रो का अर्थ करते समय स्वामी दयानन्द जी महाराज ने आध्यात्मकादि विविध प्रक्रियाओ मे जो अर्थ किया है, वह ठीक ही किया है।

इस की पुष्टि मे एक दृष्टात उपस्थित करता हूँ। बृहदारण्यकोपनिषद् मे कथा आयी है कि एक समय देव मनुष्य और असुर प्रजापति के पास गये और उन लोगो ने कहा कि हम लोगो को उपदेश कीजिए। प्रजापति ने इन तीनों के लिए 'द' का उपदेश किया, प्रजापति ने पूछा, तुम लोग इस का अभिप्राय समझ गए। उन्होंने कहा कि हा महाराज समझ गए। प्रजापति ने पूछा कि क्या समझे। तब उन्होंने उत्तर दिया, आपने हमे 'दान्ता भवत' इन्द्रियों का दमन करो, हमारे लिए यह उपदेश दिया है। तदनन्तर मनुष्यों से पूछा तुम ने क्या अभिप्राय समझा। मनुष्यों ने कहा कि 'दत्त' दान करो 'हमने आपके 'द' का यह अभिप्राय समझा है। इसके पश्चात् राक्षसों से पूछा कि तुम लोग क्या समझे हो। उन्होने कहा 'दयध्वम्' दया करो हमे यह उपदेश दिया है।

आगे यहा यह भी समझना चाहिए कि देव मनुष्य असुर ये सब कोई पृथक् नही, अपितु मनुष्य ही है। मनुष्यों मे जो दान्त है, इन्द्रियो का वश मे करते हैं वे 'देव' कहाते है। और जो दान' करते है वे मनुय होते हैं। और जो हिसादि मे तत्पर रहते है, वे असुर कहाते ह, इसलिए हिसा न करने का उपदेश किया है।

इस व्याख्यान मे केवल एक 'द' का अर्थ नाना प्रकार से किया गया है। उसका अर्थ यह नहीं कि वेद मंत्रों का उतना ही अर्थ होता है, अपितु श्री सायणाचार्य के अर्थ यज्ञ परक है, उसी प्रकार 'इष त्वा ऊर्जे त्वा' मन्त्र का अर्थ जहां यज्ञ परक है वहा अध्यात्मपरक भी है। स्वामी जी महाराज ने जिन मन्त्रों के अर्थ आध्यात्मिक किये हैं वे ठीक ही है।

यजुर्वेद के प्रथम मंत्र का 'शाखा' देवता नहीं 'शाखा' में विनियोग है।

इसमें जो 'इषे त्वा' मन्त्र का देवता शाखा बताते हैं, सो ठीक नहीं क्योंकि दर्शपौर्णमास

साहित्य समीक्षा

मे शाखा छेदन मे इस मन्त्र का विनियोग ह न कि शाखा देवता है। इसमे यह भी हेतु है कि इषे त्वोर्जे' मन्त्र का विनियोग विकृति योगो मे अनेक स्थानो पर 'इषेत्वेत बर्हिरादत्ते इत्यादि प्रमाणों से अन्य विषयों मे भी है, शाखा म ही है यह बात नही। शाखा में ियोग होना और शाखा दवता होना एक बात नही। वेद जीवन की सब समस्याये हल करता है, इस लिये वेद मन्त्रों का अर्थ अध्यात्म परक होना स्वाभाविक है। स्वामी जी महाराज ने ऐसा करके वास्तव में बड़ा ही उपकार किया।

महर्षि दयानन्द—लेखक—आशु कवि श्री प० अखिलेश शर्मा साहित्य रत्न, काव्य धुरीण, टीकाकार और प्रकाशक प० जगत्कुमार जी शास्त्री मा लक साहित्य मडल दीवान हाल देहली।

मूल्य ।।=)

इस मे आशु कवि प०अखिलेश शर्मा जी न महर्षि दयानन्द जी के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि ४७ सुललित मुक्तक छन्दो मे समर्पित की है। कविता व्रज भाषा म है। अपन हृदय क आतशय भक्ति पूर्ण उदगारो को कवि ने लालित्य मय भाषा म प्रकट किया है। जो व्रज भाषा म लिख पदा का आनन्द लने मे असमर्थ ह उन क लिये प० जगत् कुमार जी की टीका बडी उपयुक्त है। महर्षि दयानन्द जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करन से पूर्व गुरुवर विरजानन्द जी का वन्दना की गई है जिस के निम्न पद्य मे दी उपमा कवि। तथा पौराणिक कथा की दृष्टि से उत्तम होने पर भी आर्य सिद्धान्त की दृष्टि से हमे अखरी कि "वन्दौ विरजानन्द विषय सिन्धु कुम्भज सरिस। जा रसना स्वच्छन्द, नाची वानी नर्तकी।" यहा विषय रूपी समुद्र के सोखने के लिये अगस्त्य ऋषि के समान गुरुवर विरजानन्द जी का मैं वन्दन करता हूँ। अगस्त्य क लिये कुम्भज शब्द का प्रयोग तथा समुद्र सुखाने की कथा पौराणिक भाव लिये हुए है जो आर्य कविकी महर्षि विषयक उत्तम कविता मे कुछ सङ्गत नही प्रतीत होती। नवम पद्यमे 'फरन बुलन्द धर्म धुजा भूमि भारत म द्वन्द हर तब दयानन्द अवतार भो।' यहा दयानन्द जी के जन्म क साथ अवतार शब्द का प्रयोग भ्रम जनक है। सम्पूर्णतया भाव, भाषा तथा शैली की दृष्टि से प० अखिलेश जी का यह रचना अत्यन्त अभिनन्दनीय है।

प्रार्थना मन्त्र—व्याख्याकार श्री प० हरिशरण जी सिद्धान्तालङ्कार मूल्य ।।।) मिलने का पता आर्य समाज नयाबास अथवा दीवान हाल देहली।

श्री प हरिशरण जी सिद्ध तालङ्कार गुरुकुल कागडी के एक सुयोग्य स्नातक है। उन्होंने इस छोटी पुस्तक मे 'विश्वानि देव सवित आदि प्रार्थना मन्त्रों की जिन का आर्य समाज के दैनिक और साप्ताहिक सत्सगो मे सदा पाठ किया जाता है बडो उत्तम तथा हृदयङ्गम व्याख्या की है जिस म प्रत्येक शब्द के भाव को खोल कर दिखाया है। यस्यच्छाया अमृत यस्य

मृत्यु ' का जिस से किया गया छेदन भेदन अर्थात् दण्ड और जिस से प्राप्त कराई गई मृत्यु भी जीव की अमरता के लिये है यह अर्थ हमे खैंचातानी से किया गया प्रतीत हुआ। ऋषि दयानन्द का किया हुआ जिसकी (छाया) आश्रय ही (अमृतम्) मोक्ष सुखदायक है (यस्य) जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही (मृत्यु) मृत्यु आदि दुःख का कारण है' यह अर्थ ही हमे अधिक उपादेय प्रतीत होता है। सम्पूर्णतया यह पुस्तक आर्य मात्र के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

संस्कृत वाक्य प्रबोध—ऋषि दयानन्द प्रणीत। प्रकाशक—आर्य साहित्य मण्डल अजमेर मूल्य ।≈)

यह सस्करण वाक्य प्रबोध का शुद्ध संस्करण है जिस मे प० अम्बिका दत्त व्यास द्वारा अबोध-निवारण के नाम से किये गये आक्षेपो के प० भीमसेन जी द्वारा दिये उत्तरो को भी प्रकाशित किया गया है। संस्कृत वाक्य प्रबोध मे छापे इत्यादि की जो अशुद्धियां शीघ्रता के कारण रह गई थी उनको हटा दिया गया है जिस से यह संस्करण विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

सन्धि विषय—ऋषि दयानन्दकृत प्रकाशक आर्य साहित्य मण्डल अजमेर मूल्य ।॥)

यह भी वेदाङ्ग प्रकाश के २ य भाग सन्धि विषय का शुद्ध सस्करण है जो विद्यार्थियों के लिये बड़ा उपयोगी होगा। अब जब कि संस्कृत को निकट भविष्य में राष्ट्र भाषा बनाने का आन्दोलन चल रहा है 'संस्कृत वाक्य प्रबोध और सन्धि विषय' जैसे ग्रन्थ प्रारम्भ करने वालों के लिये बडे सहायक सिद्ध होंगे।

कर्म व्यवस्था—अर्थात् पुरुषार्थ और प्रारब्ध का समन्वय—(लेखक —श्री पूर्णचन्द जी ऐडवोकेट आगरा—प्रकाशक—श्री राम मेहरा ऐण्ड को० आगरा मूल्य ४)

'विश्व की पहेली', 'मन मन्दिर' इत्यादि पुस्तकों के लेखक श्री पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट आर्य जगत् के एक प्रसिद्ध स्वाध्यायशील सज्जन है। आपने यह कर्म व्यवस्था नामक पुस्तक अपनी धर्मशीला धर्मपत्नी श्रीमती यमुना देवी जी के ३० अगस्त सन् १९३८ को दुःखप्रद देहावसान के पश्चात् उन की स्मृति मे लिखी थी यद्यपि इस का प्रकाशन इस वर्ष ही हो सका है। इस विषय मे पुरुषार्थ और प्रारब्ध पर सब दृष्टियों से बडा विस्तृत विचार किया गया है और प्रसङ्ग वश जीवात्मा के स्वरूप उसका ईश्वर से सम्बन्ध, मृत्यु, स्वर्ग, पुनर्जन्म, पाप पुण्य भाग्य निर्माण इत्यादि अनेक दार्शनिक तथा सामाजिक विषयो पर बडा उत्तम प्रकाश डाला गया है। इन विषयो मे जो शङ्काए प्राय उठाई जाती है उन सब का बड़ा उत्तम समाधान किया गया है। भेद भाव कैसे मिटे? तकदीर और धार्मिक क्षेत्र, तकदीर और तत्व ज्ञान इत्यादि प्रकरण विशेष रूप से पठनीय हैं। हमे यह देख कर प्रसन्नता हुई कि सुयोग्य लेखक महोदय ने प्रत्येक प्रश्न पर बड़ी गम्भीरता से विचार किया है। और गहराई में जाने का प्रयत्न किया है। इस पुस्तक के द्वारा आर्य समाज के दार्शनिक साहित्य में एक अभिनन्दनीय वृद्धि हुई है जिस के लिये

लेखक महोदय प्रशंसा के पात्र हैं। भाषा की दृष्टि से कहीं २ संशोधन की आवश्यकता प्रतीत होती है क्यों कि कई स्थानों पर अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करके उनका अनुवाद नहीं दिया गया। उदाहरणार्थ पृ० १९५ का निम्न वाक्य है -

ईश्वर सर्वज्ञ और सर्वव्यापक है उस का Adjustment परिपूर्ण और देश काल के बन्धन से रहित है। इस लिये परमात्मा का Determination अटल और अटूट है।" जीवन अल्पज्ञ और एकदेशी है, इस का Determination अनिश्चित है परन्तु जीव के Determination पर ईश्वर का Determination हर समय अकुश रखता है और उसकी भूल को Adjust करता रहता है।"

अंग्रेजी से अनभिज्ञ पाठकों के लिये उपर्युक्त वाक्य का अर्थ कठिन होगा। किन्तु ऐसे स्थल अधिक। नहीं उन मे भाषा का संशोधन अगले करण मे कर देना अच्छा होगा। सम्पूर्णतया यह पुस्तक अत्यन्त उत्तम और उपादेय है

इन्डिया नहीं भारत—लेखक श्री ज्ञानचन्द्र जी आर्य -सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रकाशित

हमारे इस स्वतन्त्र देश का क्या नाम होना चाहिये यह राष्ट्रीय दृष्टि से एक अत्यन्त महत्त्व पूर्ण प्रश्न है जो संविधान सभा के आगामी अधिवेशन के सन्मुख आने वाला है। सार्वदेशिक सभा के अत्यन्त स्वाध्यायशील आजीवन सदस्य श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी आर्य ने इस छोटी सी पुस्तक में अनेक प्रबल प्रमाण देकर सिद्ध किया है कि इस देश का नाम इन्डिया या हिन्दुस्तान नहीं अपितु आर्यावर्त और भारत वर्ष है। इंडिया नाम को ऋग्वेद कालीन सिद्ध करने के उपहास जनक प्रयत्न की उन्होंने सप्रमाण पोल खोली है तथा हिन्दू, हिन्दुस्तान आदि नामों को घृणा सूचक तथा अर्वाचीन होने के कारण त्याज्य बताया है। उपसंहार में उन्होंने ठीक ही लिखा है कि 'इस से स्पष्ट है कि स्वतन्त्र भारत का नाम हिन्दोस्तान या इन्डिया रखना न केवल भारतीयो की सम्मति और भावनाओ के ही विरुद्ध है अपितु स्वतन्त्र भारत मे गये गुजरे विदेशी राज्य की स्थिर यादगार या मैमोरियल बनाना है। इस लिये नम्र निवेदन है कि माननीय विधान बनाने वालो को स्वतन्त्र भारत का नाम हिन्दोस्तान या इन्डिया नहीं अपितु भारत वर्ष ही रखना चाहिये जिसके साथ भारत भूमि का ऐतिहासिक सम्बन्ध है और जो कि इस देश की सभ्यता तथा गौरव का सूचक है।" हमे इस लगभग ८२ वर्ष की आयु मे भी श्री ज्ञानचन्द्र जी की स्वाध्याय शीलता निष्ठा और कर्तव्यतत्परता को देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई। इस पुस्तक का खूब प्रचार होना चाहिये। ध० दे०

दान आर्य समाज स्थापना दिवस

४) आर्य समाज बलिया
४१) „ „ दीवान हाल दिल्ली
११।) प्रो० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री प्रिन्सिपल डी० ए० वी० इन्टर कालेज लखनऊ
५) आर्य समाज शिवपुरी (ग्वालियर)
१०) „ गगोह (सहारनपुर)
१०) " मवाना कलां (मेरठ)
१०) „ फीरोजपुर शहर
१८) आबू रोड
५) पं० गंगा प्रसाद जी, रिटा० चीफ० जज जयपुर
५) आर्य समाज मेसवाल

१०६।।) योग (क्रमशः)

विविध दान

१०) श्री कुन्दनलाल जी इन्स्पेक्टर पोलिस दिल्ली

दान दयानन्द पुरस्कार निधि

५) ला० पूनम चन्द्र जी आर्य समाज भिवानी
५) आर्य समाज भिवानी हिसार
१०) „ , लोहरदगा (राची)
१०) रामचन्द्र जी वनवासी कुल्लू वैली ट्रान्सपोर्ट पठानकोट
१०) डा० ज्ञानचन्द्र जी दीवान हाल दिल्ली
५) श्री ज्वाला प्रसाद जी दिल्ली
३१) „ ला० चरणदास जी पुरी एडवोकेट दिल्ली
२) श्री शंकरलालजी छोटी सादड़ी (मेवाड़)
५) „ सत्य प्रकाश जी मन्त्री आर्य समाज हनमकोंडा
५) „ बाबूराम जी गुप्त चौड़ा बाजार लुधियाना
५) „ प्रताप चन्द्र जी महता मथुरा
५) „ मती परमेश्वरी जी महता „
५) प्रो० महेन्द्रप्रतापजी शास्त्री प्रिंसपल डी० ए० वी० इन्टर कालेज देहरादून
५) म० बाबूराम जी आ० स० अमरोहा मुरादाबाद
५) „ नारायण प्रसाद जी
२) श्री प० गंगाप्रसाद जी रिटा० चीफ जज जयपुर
५) आर्य समाज मनुसर गंज (भागलपुर)
५) श्रीमती चन्द्रकली जी वर्मा हरदोई
१०) श्री ठाकुर भ्राताजी लोअर बाजार शिमला
५) „ मती रूपवती जी हरदोई
५) „ राम बहादुर लालजी „
५) „ कुसुमवती जी वर्मा „
५) „ कर्मदेवी जी मानवाल नई दिल्ली
२६।।) „ बी० के० पटेल ट्रिन्चार्डट (ट्रान्सवाल)
२२) ला० लब्भूराम नय्यड़ आनन्दाश्रम लुध्याना अपने तथा अपने परिवार के
७) ला० लब्भूराम जी नय्यड़ लुध्याना

(क्रमशः)

५) चि० हरिशंकर जी नय्यड़
५) कु० राज नय्यड़ बी० ए०
५) चि० बलदेव जी वर्मा फीरोजपुर
१०) रायसाहब शिवप्रसाद जी रईस लुध्याना
१०) रा० सा० श्री कृष्णदास जी रईस लुध्याना
६) पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार
५) श्री पं० इन्द्र जी वि० वा० दिल्ली
५) डा० दीनानाथ जी कोली M B B. S
५) डा० धर्मपाल जी बेरी लुध्याना
५) दीवान रामसरन दास बैंकर लुध्याना
५) ला० अमीर चन्द्र शान्ति स्वरूप जी लुध्याना
५) हैडमास्टर आर्य हाई स्कूल लुध्याना
५) ला० रामलाल जी नय्यड़ आफ मोहनी हौजरी लुध्याना
५) ला० खुशीराम जी खोसला आफ मोहनी हौजरी लुधियाना
५) ला० दीनानाथ जी खोसला आफ सतलज हौजरी
५) डा० गुजरमल जी एन्ड सन्स लुध्याना
५) ला० बन्शीलाल जी बांसल एन्ड सन्स
५) ला० सत्यपाल जी आनन्दाश्रम लुध्याना
५) म० यसोदा राम जी आर्य वीर लुध्याना
५) रायजादा प्रेम नाथ जी रईस लुध्याना
५) ला० लक्ष्मण दास केसर गंज लुध्याना
५) सोमदत्त जी ठण्डा सड़क लुध्याना
५) चौ० हंसराज जी थापर रईस लुध्याना
५) ला० धर्मपाल जी खन्ना B A लुध्याना
५) सेठ रामाश्रम पूर्णचन्द्र जी लालवाड़ रईस लुध्याना
५) ला० तुलसीराम जी कुसाव अफ्रीका
५) डा० अमरनाथ जी वोरी अफ्रीका
५) डा० अर्जुन दास जी अफ्रीका
५ डा० वृन्दावन पीतमलाल जी लुध्याना
५ ला० केदारनाथ जी सूद ऐंड सन्स रईस लुध्याना
५) हकीम हरलाल जी पटयालवी लुध्याना
५) प० महादत्त जी सुपुत्र पं० नौरंग राम जी
५) पं० विष्णुमित्र जी स्नातक पुत्र पं० नौरंग राम जी
२) बा० उग्रसेन जी सुन्दर दास जी रिटा० पोस्ट मास्टर
१५) पं मिहिर चन्द्र जी धीमान् कलकत्ता

३८१॥)
६८४॥≈) गतयोग
१०६८≈)

आर्य शब्द का महत्व

तीसरा संस्करण

इस ट्रैक्ट में वेद, स्मृतियों, गीता, महाभारत, रामायण, संस्कृत, कोष पूर्वीय और पश्चिमी विद्वानों द्वारा की गई आर्य शब्द की व्याख्या उद्धृत करके जीवन में आर्यत्व किस प्रकार धारण किया जा सकता है, इसके उपायों पर विचार किया गया है। मूल्य डेढ़ आना, ७॥) सैकड़ा। प्रत्येक आर्य और आर्य समाज को इस पुस्तिका का अधिक से अधिक प्रचार करना चाहिए।—

मिलने का पता—

१ आर्य साहित्य सदन देहली शाहदरा।
२ सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड पाटौदी हाऊस, देहली।

सार्वदेशिक के ग्राहकों से निवेदन

निम्न लिखित ग्राहको का चन्दा मई मास के साथ समाप्त होता है अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल मनीआर्डर द्वारा भेज देवे अन्यथा उनकी सेवा मे आगामी अक वी पी से भेजा जावेगा। धन प्रत्येक दशा में ३०।५।४९ तक कार्यालय मे पहुँच जाना चाहिये। कृपया अपने मित्रों को भी ग्राहक बनाइये।

ग्राहक सख्या	नाम समाज
२	श्री मन्त्री जी आर्य समाज आरा जिला शाहाबाद
३	,, ,, ,, सागर सी० पी०
६	,, ,, ,, ,, हरदोई यू० पी०
२७	,, ,, ,, ,, नागौर राजपुताना
३०	,, ,, ,, ,, हैदराबाद पोस्ट गोरा
३२	,, ,, ,, ,, गाजियाबाद मेरठ
४१	,, गोकुल प्रसाद सिंह जी ग्राम फुलौना जिला सुल्तानपुर
४६	,, मन्त्री जी आर्य समाज बिलासपुर सी पी०
५६	,, ,, ,, ,, खुर्जा जिला बुलन्दशहर
७२	,, ,, ,, ,, मऊ नाथ भँजन
१४१	,, ईश्वर मेणिसिन काई कार्यदर्शी आर्य समाज दाजी वान पेठ हुबली
१५७	,, मन्त्री जी आर्य समाज आकलान खेडा
१७२	,, राम प्रसाद बिलासी प्रसाद जी करजा
१७५	,, मन्त्री जी आर्य समाज रत्नगढ बीकानेर
३९६	,, प० महेश प्रसाद जी मोलवी आलिम फाजिल बनारस
३९७	,, मुख्याधिष्ठाता जी गु० कु० होशगाबाद
४०१	,, मन्त्री जी आर्य समाज मेरठ सिटि
४०२	,, ,, ,, ,, श्रद्धानन्द बाजार अमृतसर
४०५	,, ,, ,, ,, खामगाम (बरार)
४१०	,, साहू नन्द किशोर जी रईस हसनपुर जिला मुरादाबाद
४१३	,, हैडमास्टर डी० ए० बी० हाई स्कूल अलीगढ
४१४	,, मन्त्री आर्य समाज बादली वाया बहादुर गढ रोहतक
४१५	,, ,, ,, ,, शान्ता कुज बम्बई
४१६	,, ,, ,, ,, मसाही जिला चम्पारन बिहार
४२३	,, शम्भूमाधा जी आर्य समाज हिजडावाली मेरी वडवा भाव नगर सौराष्ट्र
४२५	,, मन्त्री जी आर्य समाज चम्बा वाया डलहौजी
४२८	,, सेठ मेगली नयन जी भगतवान थर्ड फ्लोर मिल माधवबाग बम्बई
४२९	,, विरूवेंकटाचार्य आयुर्वेदाचार्य मगल घाट हैदराबाद
४३०	,, डी० सत्य नारायण जी अवनीगड्डा जिला कृष्णा
४३५	,, दयानन्द मन्दिर घौलडी जिला मेरठ
४४०	,, मन्त्री जी आर्य समाज एहन जिला अलीगढ
४४२	,, मैनेजर दयानन्द वाचनालय बान्दा यू० पी०

आर्य जगत्

आर्य समाज स्थापना दिवस

आर्य समाजें विशेष ध्यान दें

आशा है सभा के निर्देशानुसार भारत तथा विदेश की समाजों ने आर्य समाज स्थापना दिवस गत २०।३।४९ को समारोह पूर्वक मनाया होगा और सभा की वेद प्रचार विषयक अपील पर धन संग्रह किया होगा। समाजो को एकत्र किया हुआ धन शीघ्र से शीघ्र इस सभा मे भेज देना चाहिए। सभा कार्यालय से इस धन की प्राप्ति के लिए समाजो को पृथक् रूप मे लिखना और स्मरण दिलाना पड़ता है। यदि समाजे इस ओर विशेष ध्यान देकर स्वयं ही धन भिजवाना अपना एक आवश्यक कर्त्तव्य समझलें तो पत्र व्यवहार मे जो धन और शक्ति का अपव्यय होता है वह न होने पाए। जो समाजें इस दिवस के उपलक्ष मे अपना भाग सभा को नहीं भेजती है वे अनुशासन भंग का अपराध करती है। अतः विश्वास है कि इस बार सभा को इस प्रकार की शिकायत का अवसर प्राप्त न होगा। कुछ समाजें भूल से अपना भाग अपनी प्रान्तीय सभा को भेज देती हैं अतः उन्हें यह धन इस सभा में भेजने में विशेष सावधानी रखनी चाहिए। प्रान्तीय सभाओं से सभा को इस प्रकार का धन प्राप्त हो जाता है परन्तु डाक का दोहरा व्यय इनके भेजने मे व्यर्थ मे ही हो जाता है, ऐसा न होना चाहिए।

आर्य जगत को यह भ्रम है कि सार्वदेशिक सभा के पास प्रचुर धन राशि है और उसको अपने कार्य के लिए समाजों की सहायता की विशेष आवश्यकता नहीं है। सभा मे जो राशियां हैं वे प्राय विशेष कार्य्य के लिए नियत है, और उनका धन उन्हीं कार्य्यो मे खर्च हो सकता है। सभा के प्रचलित व्यय के लिए ऐसी कोई राशि नहीं है। यही कारण है कि सभा का व्यय प्रति वर्ष

४४५ ,, मन्त्री जी आर्य समाज कुसमरा जिला मैनपुरी

४५१ ,, सुपरिन्टेन्डेन्ट आर्य हाई स्कूल सिविल लाइन लुध्याना

४५३ ,, व्यवस्थापक जी श्री गोपाल वैदिक स्वाध्यायसदन घिरोर जिला मैनपुरी

४५४ ,, तोताराम जी आर्य समाज जहरीखाल जिला गढवाल

४६४ ,, विश्वनाथ राजू जी पाटनागढ़ जिला सम्मलपुर

४६५ ,, पी० एस आचार्य कुलपति इडुपुगल्लू जिला कृष्णा

४८६ ,, मन्त्री जी आर्य समाज राजा का रामपुर जिला एटा

४९३ ,, रामचन्द्र जी आर्य ५३ मोचीमहाल सदर बाजार २४ परगना

५०० ,, मन्त्री जी आर्य समाज वास कृपाल-नगर राजपुताना

५१७ , मन्त्री जी आर्य समाज पुरवा जिला उन्नाव

५८० ,, मांगीलाल जी आर्य आर्य समाज के सामने प्रतापगढ़

साधारण वार्षिक अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली,

तिथि २४-४-४९ ।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली का वार्षिक साधारण अधिवेशन २४ अप्रैल ४९ को बलिदान भवन दिल्ली में श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के सभापतित्व मे सम्पन्न हुआ। इसमे भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त के ५० प्रतिनिधि सदस्यों ने भाग लिया। आगामी वर्ष के लिये निम्न प्रकार अधिकारियों तथा अन्तरग सदस्यों का निर्वाचन हुआ =,

१ प्रधान श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति दिल्ली
२ उप, प्रधान श्री प० पूर्णचन्द जी एडवोकेट आगरा
३ ,, ,, श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त, अध्यक्ष धारा सभा मध्यप्रान्त दुर्ग सी० पी०
४ ,, ,, श्री प० मिहिरचन्द्र जी धीमान् कलकत्ता
५ मन्त्री ,, ,, गगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०
६ उप मन्त्री श्री ला० रामगोपाल जी दुशाले वाले दिल्ली
७ कोषाध्यक्ष श्री ला० नारायण दत्त जी नई दिल्ली
८ पुस्तकाध्यक्ष ,, ,, हरशरणदासजी नई दिल्ली

अतरगसदस्य,

९ ,, प० वासुदेव जी शर्मा, पटना, विहार-प्रान्त)
१० ,, , चचलदास जी ब्यावर राजस्थान (सिन्ध प्रान्त)
११ , कु० चादकरण जी (राजस्थान प्रांत)
१२ ,, प० दीनबन्धु जी वेद शास्त्री कलकत्ता (बगाल प्रात)
१३ ,, ,, प्रताप चन्द्र जी बडोदा (बडौदा स्टेट)
१४ ,, ,, ज्ञानचन्द्र जी बी० ए० दिल्ली (पंजाब-प्रान्त)
१४ ,, ला० चरणदास जी ऐडवोकेट दिल्ली ,, ,,
१५ ,, चौ० जयदेवसिंह जी ऐडवोकेट मेरठ, (सयुक्त प्रान्त)
१६ ,, प० रामदत्त जी एम. ए एल एल बी० ऐडवोकेट लखनौ (सयुक्त प्रात)

(शेष पृष्ठ ४१ का)

आय से बहुत बडी राशि मे बढ़ जाता है। इस समय यह राशि १००००) तक पहुँच चुकी है। यदि समाजो से प्रति वर्ष कम से कम ६०००) स्थापना दिवस की आय के रूप मे प्राप्त हो जाया करे तो इस व्यय की सुगमता से पूर्ति हो सकती है, और धीरे २ अन्य उपयोगी योजनाएँ भी जो धनाभाव के कारण हाथ मे नहीं ली जा सकतीं, मूर्त रूप धारण कर सकती हैं। अत समाजों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए, और वर्ष के अन्त मे मुझे कम से कम ६०००) की राशि की प्राप्ति की घोषणा करने मे समर्थ बनाना चाहिए।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक सभा देहली

[हम समस्त आर्य समाजों से अनुरोध करते हैं कि वे अपने सदस्यों और सहायकों से धन एकत्रित करके सार्वदेशिक कार्यालय मे भिजवा दें— सम्पादक सा० दे०]

१८ „ प्रो० धर्मेन्द्रनाथ जी शास्त्री एम० ए० मेरठ (समाजों के प्रतिनिधि)
१९ श्री ठा० कर्णसिंह जी (आजीवन सदस्यों के प्रतिनिधि)
२० „ राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री साधु-आश्रम अलीगढ़
२१ „ म० कृष्ण जी बी० ए० नई दिल्ली
२२ „ स्वामी वेदानन्द तीर्थ जी ज्वालापुर यू०पी०
२३ „ मदनमोहन जी रिटा० डिस्टि० जज लखनौ यू० पी०
२४ „ देशराज जी चौधरी दिल्ली
२५ „ प्रो० ताराचन्द जी एम० ए० बम्बई

आगामी वर्ष के लिये ४८८५०) का बजट स्वीकृत हुआ।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा दिल्ली

धर्मार्य सभा

धर्मार्य सभा की साधारण सभा का अधिवेशन २५। ४। ४९ को बलिदान भवन दिल्ली मे श्री पं० द्विजेन्द्र नाथ जी शास्त्री के सभापतित्व में हुआ और आगामी ३ वर्ष के लिए निम्न प्रकार अधिकारी तथा अन्तरंग सदस्य निर्वाचित हुए —

अधिकारी

१. प्रधान—श्री स्वामी वेदानन्द तीर्थ जी
२ मंत्री—, „ स्वतन्त्रानन्द जी
३ सं० मन्त्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

अन्तरंग सदस्य

४. श्री पं० रामदत्त जी ऐडवोकेट, लखनऊ
५. „ „ द्विजेन्द्र नाथ जी शास्त्री मेरठ
६ „ „ भीमसेन जी शास्त्री कोटा (राजस्थान)
७ „ „ गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
८. „ आचार्य विश्वश्रवा, जी बरेली
९ „ पं० भगवान् स्वरूप जी न्यायभूषण अजमेर
१० „ पं० राजेन्द्र नाथ जी दिल्ली
११ „ मती लक्ष्मी देवी जी कन्या गुरुकुल सासनी (अलीगढ़)

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
सं० मंत्री
धर्मार्य सभा

आर्योपदेशक सम्मेलन

१५, १६, १७ मई को लखनऊ मे आर्योपदेशक सम्मेलन होगा जिसका उद्घाटन श्री कन्हैया लाल माणिकलाल मुंशी करेंगे। राष्ट्रभाषा सम्मेलनादि भी होंगे। हमे निश्चय है कि सब प्रचारक तथा भजनीक महानुभाव प्रेम पूर्वक बैठ कर गम्भीरता से वर्तमान परिस्थिति पर विचार करते हुए प्रचार की वर्तमान प्रणाली मे आवश्यक परिवर्तनो का निश्चय करेंगे और ऐसा कार्य-क्रम बनाएंगे जिससे समाज की यथार्थ उन्नति हो और आर्यो मे नवजीवन का सचार हो। सभाओं से सघर्ष की भावना नहीं किन्तु पूर्ण सहयोग की भावना ही उनके विचारो का मूलाधार होगी यह कहने की आवश्यकता नहीं।

आवश्यक सूचना

आर्य जनता की सूचनार्थ निवेदन है कि सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड का कार्य्यालय पाटौदी हाउस दर्यागंज देहली मे चला गया है।

मैनेजिंग डाइरेक्टर
सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड दिल्ली

सार्वदेशिक पुस्तकालय दिल्ली

(सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड पटौदी हाउस दिल्ली,)

विक्रयार्थ पुस्तक सूची

वेद (मूल)

ऋग्वेद ४ अथर्ववेद)
यजुर्वेद १) सामवेद)
गुटका १॥)

महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ

(वैदिक यन्त्रालय अजमेर द्वारा प्रकाशित)
(१) ऋग्वेद भाष्य ६ भाग मे (पहला भाग छोड कर) ४४)
(२) यजुर्वेद भाष्य चार भागो मे सम्पूर्ण २०)
(३) यजुर्वेद भाषा भाष्य ५)
(४) सत्यार्थ प्रकाश ॥)
(५) संस्कार विधि ॥)
(६) पंच महायज्ञविधि –॥
(७) आर्याभिविनय –)
(८) संस्कृत वाक्य प्रबोध –)॥
( ) व्यवहार भानु –॥
( ) आर्योद्देश्य रत्न माला ।
(६ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका)
(१०) गोकरुणा निधि –)॥

महात्मा नारायण स्वामीजी महाराज कृत ग्रन्थ

उपनिषद ईश ।=) ( ) केन ॥
(३) कठ ॥) (४ प्रश्न ।–)
(५) मुण्डक ।– (६) माडूक्य =
(७) ऐतरेय ।) (८) तैत्तिरीय ॥।)
(६ विद्यार्थी जीवन रहस्य ॥)
(१०) योग रहस्य १)
(११) मृत्यु परलोक ॥)
(१ प्राणायाम विधि =)
(१३) कथा (माला महात्मा नारायण स्वामी जी की कथाओ के आधार पर) ॥।)

श्री स्वामी वेदानन्दतीर्थ जी महाराज कृत ग्रन्थ

राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन)
निर्मित्तक वैदिक पाठ ।)
स्वाध्याय सुमन १॥)

स्वामी ब्रह्ममुनि जी (प० प्रियरत्न जी आर्ष) द्वारा कृत ग्रन्थ

(१) यम पितृ परिचय २)
(२) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र २)
(३) वैदिक ज्योतिष शास्त्र ॥
(४) वेद मे दो बडी वैज्ञानिक शक्तियां १)
(५) विमान शास्त्र –)॥

प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत ग्रन्थ

( ) आस्तिकवाद ३) (५ मैं और मेरा
(२) जीवात्मा ४) भगवान १।)
(३) शांकर भाष्य लोचन ५)
(४) हम क्या खाएं ।)

आर्य समाजो में प्रतिदिन उपयोग की पुस्तकें

( ) पंच यज्ञ प्रदीप प भजनो प्रसाद कृत १)
(२) आर्य समाज गुटका ।)
(३) आर्य डायरेक्टरी १)
(४) आर्य विवाह पद्धति व्याख्या ।)
(५) आर्य समाज का परिचय =)

(५) आर्य समाज के मान्ता हम सत्संग का कार्यक्रम —)
(६) आर्य शब्द का महत्व —॥
(७) सार्वदेशिक सभा का इतिहास
अजिल्द ☰)
सजिल्द ॰॥)
(८) वैदिक सिद्धान्त १)
(९) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १।)
(१०) आर्य सिद्धान्त विमर्श १॥)
(११) आर्य पारस्कर गार्ह्य शिक्षण ।≈)
(१२) शहीदी पाठिका ।≈)
(१३) भारत वर्ष में जाति भेद ।)
(१४) भक्ति दर्पण ।)
(१५) प्रार्थना मन्त्र
(पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार) ॥≈)
(१६) पुष्पाञ्जलि १)

उपयोगी पुस्तकें

(१) स्वराज्य दर्शन सजिल्द
पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित कृत ।)
(२) महाराणा सांगा
श्री हरविलास शारदा कृत ।)
(३) नया संसार ≡)
(४) मातृत्व की ओर
पं० रघुनाथ प्रसाद पाठक कृत १।)
(५) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म
पं० रघुनाथ प्रसाद कृत ॥≈
(६) बहिनों की बातें
पं० सिद्धगोपाल कविरत्न कृत १)
(७) एशिया का वैनिस
स्वामी सदानन्द कृत ।॥)
(८) स्त्रियों का वेदाधिकार
पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति कृत ।)
(९) संध्या रहस्य (पं० चमूपति कृत) ।॥)
(१०) आनन्द संग्रह (स्वामी सर्वदानन्द कृत) ।॥)
(११) हमारे स्वामी (पं० चमूपति एम०ए०) कृत ।)

(१२) महापुरुषों के दर्शन
(ले० प्रो० रामस्वरूप कौशल) ॰॥)
(१३) काल चक्र
(ले० डा० सिद्धेश्वर शास्त्री) ॥)
(१४) हिन्दू और हरिजन (उर्दू में) १)
(१५) इज़हार हक़ीकत (उर्दू में)
(ले० ला० ज्ञानचन्द्र आर्य) ।)

BOOKS IN ENGLISH

		Rs	As	Ps
(1)	Truth and Vedas by Late R B Thakur Datt Dhavan	0	6	0
(2)	Truth Bed Rock of Aryan Culture	0	8	0
(3)	Daily Prayer of an Arya by Narain Swamiji	0	8	0
4	Glimpses of Dayanand by Late Pt Chamupati M A	1	(	0
(5)	Principles and Bye laws of the Arya Samaj		1	
6)	Landmarks of Swami Daya Nanda by Pt Ganga Prasad Upadhyaya M A	1	)	
7)	Humanitarian Diet by Pt Ganga Prasad Upadhyaya M A	)		
(8)	Satyartha Prakash	(		0
9)	Marriage and Married Life by Pt Ganga Prasad Upadhyaya M A	1	0	
10	Voice of Arya Vart		)	)
11)	Universality of Satyarth Prakash	0	1	)

राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन

लेखक
आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान
स्वामी वेदानन्दतीर्थ जी महाराज
छप रहा है
आज ही आर्डर दीजिये ताकि निराश न होना पड़े
मूल्य १)

रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित।

जून १९४९ ई०
ज्येष्ठ २००६ सं०

सम्पादक—
श्री पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालंकार

वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
विदेश १० शि०
१ प्रति का ।)

विषय सूची

आवश्यक सूचना

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा का विषय सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के विचाराधीन है। इस सभा ने इस मामले की छानबीन करने के लिये श्री पं० धर्मपाल जी विद्यालंकार को नियुक्त कर दिया है। वह मध्य भारत में जाकर इस मामले की देख भाल करेंगे और अपनी रिपोर्ट सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा में प्रस्तुत करेंगे। उसके आधार पर इस सभा की अन्तरंग सभा यह निश्चय करेगी कि मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा की अलग सत्ता को स्वीकार किया जाय वा नहीं।

इस कारण यह आवश्यक है कि इस विषय पर खंडनात्मक तथा मण्डनात्मक लेख न लिखे जायं और नहीं किसी प्रकार का विक्षोभ पैदा किया जाय।

गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
बलिदान भवन, देहली।

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ३१ | जून १९४९ ई० २००६ ज्येष्ठ दयानन्दाब्द १२८ | अङ्क ४

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् बलमसि बलं मे दाः स्वाहा ॥

परिपाणमसि परि पाणं मे दाः स्वाहा ॥

अथर्व ७। १७

शब्दार्थ —

हे परमेश्वर ! तू (बलम् असि) बल स्वरूप है (मे) मुझे (बल दा) बल दे (स्वाहा) मैं तेरे प्रति अपने को समर्पित करता हूँ।

हे प्रभो ! (परिपाणम् असि) तू सब ओर से रक्षा करने वाला है (मे) मुझे (परिपाणम् दा) सब ओर से रक्षा दे (स्वाहा) मैं तेरे प्रति अपने को सम्पूर्णतया समर्पित करता तथा सदा शुभ वचन बोलता हूँ।

विनय—

हे सर्वशक्तिमय परमात्मन् ! तुम समस्त शक्ति के भण्डार हो हम तुम से बल की प्रार्थना करते हैं। तुम सर्व रक्षक हो हमारी सब ओर से रक्षा करो।

'प्रताप' की अपील स्वीकृत--एक महत्वपूर्ण निर्णय

पाठकों ने अनेक समाचार पत्रों मे इस समाचार को पढ़ा होगा कि पंजाब के सुप्रसिद्ध पत्रकार और पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री महाशय कृष्ण जी द्वारा सम्पादित 'प्रताप' की तीन और पांच हजार की दो जमानतें चीफ-कमिश्नर देहली के आदेश से जब्त की गई थीं। उनके विरुद्ध 'प्रताप' के संचालकों ने पंजाब हाई कोर्ट शिमला मे अपील की जो स्वीकृत हो गई। न्यायाधीशों ने इस अपील को स्वीकृत करते हुए निम्न आशय के अत्यन्त महत्त्व पूर्ण शब्दों मे कई शासकों की मनोवृत्ति की कटु आलोचना की जो उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने निर्णय मे लिखा —

"ऐसा मालूम होता है कि देश की स्थिति मे जो वैधानिक परिवर्तन हुआ है उसका शासक वर्ग के दृष्टि कोण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है और उन के मन मे पुरानी अहङ्कार भावनाएं बनी हुई हैं। हमारे देश ने जो स्वाधीनता प्राप्त की है उस ने उनकी दृष्टि को उदार और विशाल नहीं बनाया है। वर्तमान शासक वर्ग का झुकाव अब भी उचित टिप्पणी को दबाने की ओर है। जो त्रस्त जन अपना दुःख निवारण करवाने के लिये विनय करते हैं उनके हृदयोद्गारों को शान्त करने के स्थान पर कानून का आश्रय लेकर दबाने का यत्न किया जाता है।' इस देश के लिये वह दिन बुरा होगा जब कि इण्डियन प्रेस ऐक्ट ४ (१) को उचित समालोचना रोकने के लिये काम में लाया जाएगा।" इत्यादि

हम जहा अपने सहयोगी 'प्रताप' को अपील करने के साहस और उस मे सफल होने पर हार्दिक बधाई देते है और पंजाब हाईकोर्ट के न्यायाधीशों के इस निर्भीकता सूचक न्याय का अभिनन्दन करते हैं वहा हम स्वतन्त्र भारत के समस्त वर्तमान शासक वर्ग का ध्यान भी न्यायाधीशों के महत्वपूर्ण निर्णय की ओर आकृष्ट करते हुए यह अनुरोध करते हैं कि वह अपनी पुरानी मनोवृत्ति का परित्याग करके पत्रकारों की उचित स्वतन्त्रता में व्यर्थ हस्ताक्षेप करना बन्द कर दे अन्यथा जनता के असन्तोष में उत्तरोत्तर वृद्धि होना स्वाभाविक है। गतवर्ष 'सार्वदेशिक' के जनवरी अङ्क में प्रकाशित एक लेख को आपत्ति जनक मान कर देहली के तत्कालीन चीफ़कमिश्नर श्री खुरशीद अहमद की ओर से १०००) एक १ हजार की जमानत 'सार्वदेशिक' के प्रकाशक और मुद्रक से मांगी गई थी जिस पर पंजाब हाईकोर्ट

मे अपील की गई और २ अगस्त को सर्व सम्मति से न्यायाधीशों ने अपील स्वीकृत करते हुए उस लेख को सर्वथा आपत्ति रहित बताया तथा जमानत को व्यय सहित लौटाने का आदेश दिया। इसी प्रकार का निर्णय गत मास 'युग धर्म' और 'राष्ट्र शक्ति' नामक मराठी साप्ताहिक पत्रों की अपील पर नागपुर हाईकोर्ट के न्यायाधीशों ने किया है।

हम आशा करते हैं कि भविष्य में शासक अपनी उत्तरदायिता का अधिक गम्भीरता से अनुभव करते हुए अपने अधिकार का इस प्रकार उपयोग करेंगे जिस से सम्पादकों की उचित स्वतन्त्रता की रक्षा हो तथा वे समुचित न्याय संगत समालोचना के प्रति असहिष्णुता प्रदर्शित न करेंगे।

पाकिस्तान का आध्यात्मिक नेतृत्व ?

पिछले दिनों पाकिस्तान के विदेश सचिव श्री जफरुल्लाखा ने एक भाषण मे कहा कि पाकिस्तान संसार का आध्यात्मिक नेतृत्व करेगा। हमे यह पढ़ कर अत्यन्त आश्चर्य हुआ। सच्चे आध्यात्मिक जीवनकेलिये जिन गुणों की आवश्यकता है उनका हमे तो मुसलमान भाइयों और उनके नेताओं मे प्राय सर्वथा अभाव प्रतीत होता है। जिस प्रकार के साधनों का प्राय मुसलमान अवलम्बन करते हैं वे सदाचार की दृष्टि से अत्यन्त निन्दनीय हैं इस अप्रिय विषय पर हमे अधिक लिखने की आवश्यकता नही। सत्य, अहिंसा, तप, त्याग, ब्रह्मचर्य, विश्वबन्धुत्व, विश्वप्रेम, ईश्वर विश्वास आदिसद्गुण ही आध्यात्मिकता के आधार हैं। इन को वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन मे धारण किए बिना कोई आध्यात्मिक नेतृत्व कर सकता है यह कहना ही उपहासास्पद है। निस्सन्देह भारत संसार का नेतृत्व कर उसे शान्ति का सन्देश दे सकता है किन्तु यह तभी सम्भव है जब भारतीय अपने अन्दर सच्ची आध्यात्मिकता का विकास करें। यह दुर्भाग्य की बात है कि हमारे बहुत से राजनैतिक नेताओं की भी इन विषयों मे सर्वथा उदासीनता व उपेक्षा है जो शोचनीय है। सच्ची आध्यात्मिकता भारतीय संस्कृति का अनिवार्य अङ्ग है जिस के प्रचार के बिना विश्वशान्ति एक स्वप्नमात्र रह जाएगी। यह समय है जब कि भारत यों को अपनी इस अमूल्य निधि की न केवल रक्षा करनी चाहिये किन्तु उसे देश देशान्तरों मे वितीर्ण करके विश्व का उद्धार करने को कटिबद्ध होना चाहिये। क्या भारतीय अपने इस कर्तव्य और उत्तरदायिता को गम्भीरता पूर्वक अनुभव करते है ? हमे इस मे बहुत सन्देह है।

देश में बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार।—

इन पंक्तियों को लिखते हुए अपने प्रिय देश मे बढ़ते हुए भ्रष्टाचार के सैकड़ों नग्न चित्र हमारी आखों के सामने आते और हमे दुःखित कर देते है। जो भारत अपनी आध्यात्मिकता के प्रताप से जगद् गुरु बनने का दावा कर सकता था और जिसके आध्यात्मिक नेतृत्व की इस समय अति विशेष आवश्यकता थी उसके निवासियों मे सदाचार की शोचनीय उपेक्षा और भ्रष्टाचार की निरन्तर वृद्धि को देख कर किस का चित्त खिन्न न होगा ? अभी कुछ दिन पूर्व 'अर्जुन' आदि पत्रों मे समाचार प्रकाशित

हुआ कि एक ६० वर्ष के साधु वेषधारी को ११ वर्ष की बालिका के साथ बलात्कार के अपराध मे हरद्वार मे पकड़ा गया है। इस प्रकार के दुराचार और भ्रष्टाचार, ठगी चोरी, डकैती के समाचारो से पत्रों के स्तम्भों के स्तम्भ भरे रहते है। राष्ट्रीय महासभा के अध्यक्ष डा० सीतारामैय्या ने देहरादून के एक साप्ताहिक पत्र को सन्देश देते हुये गत २० मई को कहा कि —

"कांग्रेस की विभिन्न शाखाओं में झगडे जिस स्तर पर आ गये हैं उस से पता लगता है कि कांग्रेस कितनी पतित हो गई है। वैसे तो ससार की प्रत्येक सस्था के जीवन मे ऐसे उतार चढ़ाव आते रहते है लेकिन वे कांग्रेस जैसी सत्य और अहिंसा पर आधारित संस्था मे नहीं आने चाहिये।"

भारतीय लोक ससत् (पार्लियामेन्ट) के माननीय अध्यक्ष डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने इस बढ़ते हुए भ्रष्टाचार की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट करते हुये आत्म सुधार की विशेष प्रेरणा सब को की है जो ठीक ही है। आर्य समाजो, आर्य कुमार सभाओ तथा अन्य धर्म प्रधान सस्थाओं को तो मुख्यतया इस भ्रष्टाचार के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन करना तथा उसे शीघ्र तिशीघ्र दूर करना अपना कर्तव्य समझना चाहिये। कम्यूनिस्ट (वर्गवाद) जैसे केवल प्रकृति वाद समर्थक ईश्वरवाद विरोधी आन्दोलन भी इस भ्रष्टाचार के बढ़ने मे सहायक हो रहे है इस मे सन्देह नहीं।

दक्षिण अफ्रीका सरकार की निन्दनीय नीति और संयुक्त राष्ट्र सघ—

दक्षिण अफ्रीका की सरकार डा मलान के प्रधान मन्त्रित्व मे जिस वर्ण विद्वेष सूचक मलिन नीति का अनुसरण कर रही है उस के विषय में हम इन स्तम्भों मे पहले भी कई बार टिप्पणी कर चुके हैं किन्तु यह दुःख की बात है कि इस निन्दनीय नीति मे अभी न केवल कोई परिवर्तन नहीं आया प्रत्युत इस की उग्रता उत्तरोत्तर बढती जा रही है। गत १४ मई को सयुक्त राष्ट्र सघ के बृहदधिवेशन मे इस विषय पर विचार हुआ और १ के विरुद्ध ४७ मत से फ्रान्स और मैक्सिको द्वारा सयुक्त रूप से प्रस्तुत प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि भारत, पाकिस्तान और दक्षिण अफ्रीका की सरकारो को एक गोल मेज सम्मेलन के रूप मे सयुक्त राष्ट्र सघ की ओर से निमन्त्रित किया जाय जिस मे सयुक्त राष्ट्रों के घोषणा पत्र के उद्देश्य और सिद्धान्त तथा मानव अधिकारों की घोषणा को ध्यान मे रखते हुए विचार किया जाए।

भारतीय प्रतिनिधि मण्डल द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव जिस मे एक कमीशन की नियुक्ति का निर्देश किया गया था लौटा लिया गया क्योंकि उस के ⅔ बहुमत से स्वीकृत होने की आशा न थी। यद्यपि भारतीय प्रतिनिधि मण्डल के नेता श्री शीतलवाड ने सयुक्त राष्ट्र सघ द्वारा केवल दक्षिणअफ्रीका के विरोध पर स्वीकृत इस प्रस्ताव का स्वागत किया है तथापि [illegible] से सफलता की कोई आशा प्रतीत नहीं होती। यदि भारत के माननीय प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल जी डा० मलान से मिलने के समय इस विषय का समाधान करा लेते तो बहुत अच्छा होता किन्तु दुर्भाग्यवश उन की बात अधूरी ही रह गई और

पतनाला वहीं का वहीं रहा प्रत्युत गोरों के भारतीय महिलाओं से विवाहादि विषयक प्रतिबन्ध लगा कर स्थिति को पूर्वापेक्षया भी बिगाड़ दिया गया है। श्री शीतल बाबू ने २२ मई को स्विटजरलैंड में भाषण देते हुए यह अवश्य कहा कि "यदि दक्षिण अफ्रीका की सरकार इच्छुक हो तो गोल मेज सम्मेलन का समुचित प्रबन्ध किया जा सकता है" किन्तु इस के सन्तोष जनक समाधान की हमें कोई सम्भावना नहीं प्रतीत होती। अमरीका की इण्डिया लीग के अध्यक्ष सरदार जे० जे० सिंह ने २२ मई को न्यू यार्क मे ठीक ही कहा कि "मुझे विश्वास नहीं कि मित्र राष्ट्र सघ दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर किये जा रहे दुर्व्यवहार की समस्या को सन्तोष जनक रूप से सुलझा सकेगा। नां ही मुझे यह आशा है कि भारत सरकार और दक्षिण अफ्रीका की सरकार मे वार्ता से कोई सन्तोष जनक परिणाम निकल सकेगा। मेरी द० अफ्रीका के भारतीयों को सलाह है कि वे वहाँ के निवासियों के साथ घुल मिल जाएं क्योंकि अन्तत इसी से उन के अधिकारों की प्राप्ति हो सकेगी।"

हम भी श्री सिंह जी के भारतीयों को दिये परामर्श का अनुमोदन करते हैं और आशा करते हैं कि भारतीयों और अफ्रीका निवासियो के दृढ़ संघटन, सहयोग और प्रबल आन्दोलन के परिणाम स्वरूप डा० मलान की सरकार को अपनी मलिन नीति परिवर्तन करने को विवश होना पडेगा।

काश्मीर की समस्याः—

यह खेद की बात है कि काश्मीर की समस्या अभी वैसे ही लटक रही है। यद्यपि १ जनवरी को काश्मीर कमीशन ने युद्ध बन्द करने का आदेश विराम सन्धि के रूप मे दे दिया था तथापि ज्ञात हुआ है कि पाकिस्तान की ओर से उसे लगभग २०० बार भङ्ग किया जा चुका है। अब जो प्रस्ताव अन्तिम रूप में काश्मीर कमीशन की ओरसे रक्खे गये हैं यद्यपि उन का विवरण अभी ज्ञात नहीं हुआ तथापि प्रतीत होता है कि वे एक पक्षीय हैं और इस लिये भारत सरकार द्वारा उनकी स्वीकृति की सम्भावना बहुत कम है। हमें तो काश्मीर कमीशन द्वारा इस समस्याका कोई सन्तोषजनक समाधान किया जा सकेगा इस की आशा बहुत ही कम है यद्यपि ऐसा न्यायपूर्ण सन्तोषजनक समाधान निकल सके तो हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। इस बीच में काश्मीर के प्रधान मन्त्री शेख अब्दुल्ला की एक विदेशी पत्र के संवाद दाता श्री माकेल के द्वारा प्रकाशित भेंट के इस समाचार ने कि "काश्मीर को सर्वथा स्वतन्त्र रहना चाहिये उस का भारत अथवा पाकिस्तान में से किसी से भी मिलना अवाञ्छनीय है।" भारत मे सर्वत्र असन्तोष उत्पन्न कर दिया था। हमें हर्ष है कि शेख अब्दुला ने काश्मीर के भारत से मिलने के विचार का समर्थन किया है किन्तु उनका यह स्पष्टीकरण अपूर्ण है क्योंकि उन्होंने श्री माइकेल से भेंट का स्पष्टतया खण्डन नहीं किया। क्या उस विदेशी पत्र के संवाद दाता ने सारी भेंट कल्पित कर ली थी? ऐसी संभावना भी कठिन प्रतीत होती है। कुछ भी हो शेख अब्दुल्ला

को उस भेंट का यथार्थ विवरण देकर जनता के असन्तोष को अवश्य दूर करना चाहिये।

भारत की राष्ट्रमंडल की सदस्यता:—

अब जब कि भारतीय संविधान परिषत् और अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा द्वारा बहुत बड़े बहुमत से माननीय प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल जी द्वारा लण्डन मे प्रधान मन्त्रियों के सम्मेलन में किये गये इस निर्णय की पुष्टि की जा चुकी है कि भारत कामनवेल्थ का पूर्ण सदस्य माना जाएगा और उस की पूर्ण स्वतन्त्रता में किसी प्रकार की बाधा न रहेगी न इङ्गलैंड के राजा के प्रति भक्ति की शपथ उसके लिये आवश्यक होगी इस विषय में कुछ भी लिखना हमें अनावश्यक प्रतीत होता है किन्तु इतना लिख देना हम आवश्यक समझते हैं कि यदि किसी भी समय ऐसा प्रतीत हुआ कि कामनवेल्थ की सदस्यता से भारत की स्वतन्त्रता में अणुमात्र भी बाधा पड़ती है तो उसे राष्ट्र मण्डल (कामनवेल्थ) से सर्वथा पृथक् होने मे किञ्चिन्मात्र भी संकोच न करना चाहिये तभी वह विश्वशान्ति का सन्देश संसार को दे सकेगा कुछ प्रबल राष्ट्रों के दल की दलदल में फंस कर नहीं।

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि की अभिनन्दन-नीय योजना:—

हम 'सार्वदेशिक' के इस अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित 'सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि' विषयक योजना की ओर जिस का उद्देश्य देशदेशान्तरों में प्रचारक भेज कर और प्रचार केन्द्र स्थापित कर के वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति के प्रचार की व्यवस्था कराना है आर्य जनता का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करते हैं। "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" अर्थात् सारे संसार को आर्य अथवा धर्मात्मा सदाचारी बनाते हुए तुम विचरण करो इस वैदिक आदेश का यदि हम पालन करना चाहते हैं तो उस के लिये सब प्रकार की उचित व्यवस्था करनी होगी। इसके लिये आर्थिक प्रबन्ध किये बिना काम नहीं चल सकता। यूरप, अमरीका आदि में भी इस समय जब कि हमारा देश स्वतन्त्र हो गया है वैदिक धर्म के पवित्र शान्तिदायक सन्देश को सुनाने के लिये सुयोग्य अनुभवी प्रचारकों को भेजना अत्यावश्यक है। अत. हमारा प्रत्येक वैदिक धर्म और आर्य संस्कृति के प्रेमी से अनुरोध है कि वह इस यज्ञ मे अपनी आहुति श्रद्धापूर्वक अवश्य डाले। ऐसा करना प्रत्येक का आवश्यक धार्मिक कर्तव्य है। वेद ज्ञान के प्रचार के लिए दिया दान सर्वोत्तम दान है।

धर्मदेव वि० वा०

सार्वदेशिक के ग्राहकों से निवेदन

निम्न लिखित ग्राहकों का चन्दा जून मास के साथ समाप्त होता है अतः प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल मनीआर्डर द्वारा भेज देवें अन्यथा उनकी सेवा में आगामी अंक वी० पी० से भेजा जायगा। धन प्रत्येक दशा में ३०-६-४९ तक कार्यालय में पहुँच जाना चाहिए। कृपया अपने मित्रों को भी ग्राहक बनाइए।

ग्राहक संख्या	नाम समाज
२१	श्री शिवपूजन गुप्त, बहेड़ी (बरेली)
१३४	,, कान्ति किशोर जी भरतिया
१३५	,, नत्थनलाल जी आर्य हरिद्वार
१३६	,, मन्त्री आर्य समाज पाटन
१३७	,, प० गंगाराम हेडमास्टर बहेनी धडेका
२११	,, आर्य समाज सोहनगंज देहली
३४८	,, उदयराम आर्य अजमेर
३५८	,, स्वामी शिवानन्द जी तीर्थ रांची (बिहार)
३८७	,, मन्त्री आर्य समाज पीलीभीत
४३३	,, मुक्तासिंह जी आलीपुर पो० सरसावा (सहारनपुर)
४३४	,, पं० प्रेमनाथ कौल, काश्मीर
४३६	,, मन्त्री आर्य समाज मोठ झांसी
४३७	,, ,, ,, ,, पहाड़गंज नई देहली
४४१	,, डा० नन्दलाल जी देहली
४४८	,, मन्त्री आ० समाज एटा
४५२	,, डा० रघुवीरशरण जी अतरौली
४५६	,, आर्य समाज जहानाबाद
४५७	,, ,, नानापेठ (पूना)
४६०	,, ,, विल्लेपल्ली (बम्बई)
४६१	,, जयपुर (सिटी)
४६२	,, धनौरा मन्डी
४६८	,, ,, ,, लाडुवा
४७०	,, ,, ,, दनकौर
४७१	,, ,, ,, लालगंज बरेली
४७४	,, ,, ,, गोपीराम मोहरसिंह सोहना (गुड़गांव)
४७५	,, ,, ,, मन्त्री मादूंगा
४७९	,, ,, ,, सुजानगढ़
४८०	,, ,, ,, पिरागपुर (काँगड़ा)
४८१	पुस्तकाध्यक्ष डी० ए० वी० हाई स्कूल अजमेर
४८२	प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालिज अनूपशहर
४८३	बाबू उमाशंकर जी वकील फतेहपुर
४८४	श्री नारायण प्रसाद जी गुप्त हुगली
४८६	किशनराम नत्थमल जी शर्मा ग्राम भादूका (बरार)
४८७	श्री० गोकुलचन्द जी नीमच छावनी
४९१	श्री मन्त्री आ० समाज रामनगर
४९२	,, ,, ,, गोतमपुरा इ० [illegible]
४९४	,, कस्तूरबा प्रजातन्त्र पुस्तकालय आ० समाज किशनगंज देहली
४९५	,, मन्त्री आ० समाज बुलानाला
४९४	,, ,, ,, अल्मोड़ा
४९९	,, ,, ,, रोडाघाट (दरभंगा)
५०१	,, ,, ,, मन्दसौर ग्वालियर
५०६	श्री आचार्य स्वामी ब्रह्मानन्द जी दंडी गुरुकुल एटा
५०८	श्री मन्त्री आ० स० प्रतापगढ़ राज्य
५०९	,, ,, पौढ़ी
५१६	,, हरिशरण जी आर्य ग्वालियर
५१७	,, पं० धर्मदेव जी निरुक्ताचार्य गोरखपुर
५१८	,, मन्त्री आ० कुमार सभा भवानी कलाँ (मेरठ)
५२१	,, ,, बैतूल बाजार (सी०पी०)
५४६	,, रामप्रताप आर्य सांभरलेक

व्यवस्थापक सार्वदेशिक पत्र

❋ मनु के उपदेश ❋

समाज संघटन

[लेखक—श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०]

(गताङ्क से आगे)

पञ्चरात्रे पञ्चरात्रे पक्षे पक्षेऽथवा गते।
कुर्वीत चैषां प्रत्यक्षमर्घसंस्थापनं नृपः।
(८।२४१।४०२)

राजा को चाहिये कि पांच पांच दिन या एक एक पक्ष का भाव स्वयं निश्चित कर देवे

तुलामानं प्रतीमानं सर्वं च स्यात् सुलक्षितम्।
षट्सु षट्सु च मासेषु पुनरेव परीक्षयेत्॥
(८।२४२।४०३)

राजा बाट और तोल को नियत करे और छः छः मास पीछे जांच लिया करे।

यदि राजा की ओर से इन सब बातों पर विचार किया जाय और राज कर्मचारी सत्यता से व्यवहार करें तो पूंजीवाद का रोग उत्पन्न न होवे।

पूंजीवाद के रोग के निदान में विचारकों का मत भेद रहा है। अतः उपचार भी भिन्न भिन्न प्रस्तुत किये गए हैं। आधुनिक काल में यूरोप में जब विज्ञान की उन्नति के कारण भाप और बिजली का आविष्कार हुआ और कलों की भरमार हो गई तो सैकड़ों आदमियों का काम एक कल अत्यल्प काल में करने लगी। बेकारी बढ़ गई। पूंजीपति ही कलों के कारखाने खोल सकते थे। अतः उनको लाभ अधिक हुआ। इस प्रकार देश के अत्यल्प भाग के पास बहुत धन आ गया। और बहु संख्या के पास धन नहीं रहा। धनियों की आवाज देशों की सरकारों में बलवती हो गई। राजा की ओर से जो उन पर प्रतिबन्ध या कर लगाना चाहिये था न लगा। जब रोग अति भीषण रूप धारण करने लगा तो सुधारक उत्पन्न हुये। इन में कार्ल मार्क्स का नाम सब से प्रसिद्ध है क्योंकि पूंजीपतियों को नष्ट करने का आन्दोलन इन्हीं की ओर से आरम्भ हुआ। इस आन्दोलन के दो बड़े रूप हैं एक को साम्यवाद या कम्यूनिज्म कहते हैं और दूसरे को समाजवाद या सोशलिज्म इन का एक मोटा सिद्धान्त यह है कि जो काम वैश्यवर्ग के आधीन था उसे गवर्मेंट या राजा ले लेवे। समस्त व्यापार राजा के आधीन हो जाय। अतः जो लाभ होगा वह समस्त राजा का होगा और सब को बराबर बराबर सुख मिलेगा। दूसरी बात यह है कि प्रत्येक मनुष्य को जितने भोजन और जितने वस्त्र की आवश्यकता है उतना उसको दिया जाय और जितना अधिक से अधिक वह कार्य कर सकता है उतना कार्य करने के लिए उसे बाधित किया जाय। जैसा कि एक परिवार में होता है। परिवार में जो बच्चा कुछ नहीं कमाता वह भर पेट खाना खाता है और जो सब कुछ कमाता है उसे भी मात्रा से अधिक सामग्री नहीं मिलती।

इन दो सिद्धान्तो का कार्य रूप मे लाने के लिये सौ वर्ष से निरन्तर नाना सस्थाये नाना रूपों मे परिश्रम कर रही है परन्तु रोग कम होने के बजाय बढ गया है। भयानक युद्ध हो चुके है और अधिक भीषण होने वाले है। धन सम्बन्धी अप्रासगिक प्रश्न भी छेड दिए गए है। जैसे कार्ल मार्क्स और उनके साम्यवादी अनुयायी कहते है कि पहले तो ससार से धर्म और ईश्वर का नाम मिटा दो। यह अफीम है जिस ने लोगो को पागल बना रखा है। ईश्वर और उसके मानने या मनवाने वाले पुजारी ही गरीबो को चूसते हैं। दूसरे राजाओं या शासकों का नाम मिट जाना चाहिए। न राजा होगे न अत्याचारी होगा। तीसरे विवाह प्रथा भी तोड देनी चाहिए इस से पुरुषों को स्त्रियो पर अत्याचार करने का अवसर मिलता है और स्त्रिया आयु भर दासी हो कर रहती है। स्त्री और पुरुष जहा चाहे जिस प्रकार चाहें जब तक चाहें स्वच्छन्दता से विचरे या आचरण करे।

हम ऊपर कह चुके हैं कि यह अप्रासगिक प्रश्न थे। समस्या थी धन सम्बन्धी और उसे बना दिया गया धार्मिक और सामाजिक। इन सब का दार्शनिक भित्ति हुई भौतिकवाद। अर्थात् कहा गया कि ससार के बनाने मे किसी ऐसी अभौतिक चेतन सत्ता का हाथ नही है जिसे ईश्वर कह सके। और न जीव की ही कोई अभौतिक आध्यात्मिक सत्ता है। यह जगत् जड पदार्थ का ही एक नियन्त्रित रूप (organized form of matter) है। यदि इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया जाय तो ऐहिक क्षणिक भोगो से अतिरिक्त और कुछ ध्येय नहीं रह जाता। और मानवी दृष्टि कोण के बदलने से उस के सब व्यवहार बदल जाते है। धर्म और आचार एक सुविधा की चीज रह जाते हैं।

इसमे सन्देह नहीं कि धार्मिक या सामाजिक मर्यादाए मनुष्य की स्वच्छन्दता मे बाधक अवश्य होती हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि यदि मनुष्य सब प्रकार की मर्यादाओं से मुक्त कर दिया जाय तो क्या वह स्वच्छन्दता को सुरक्षित रख सकता है। यदि इस का परिणाम यही होना है कि जिसकी लाठी उसकी भैस तो स्वच्छन्दता तो न रही। छोटी मछली बडी को खा गई। खाने वाली मछली स्वच्छन्द है परन्तु खाई जाने वाली मछली के मन से भी तो पूछिये, उस बिचारी के ऊपर क्या बीतती है। उदाहरण के लिये यदि एक युवक और एक युवती से कहा जाय कि तुम दाम्पत्य-मर्यादाओं से सर्वथा मुक्त हो गये, स्वच्छन्दता से विचरो तो आरम्भ मे तो युवक और युवती दोनो प्रसन्न होगे। क्योंकि पति और पत्नी के अधिकार सब को मिल गये। कर्त्तव्यो से छुटकारा हो गया। परन्तु क्या इस से युवती बिचारी अपनी स्वच्छन्दता स्थिर रख सकेगी? क्या जिसके पास पैसे अधिक हैं या जिसकी लाठी मे बल है वही उसको भोगने का प्रयत्न न करेगा? जो युवती आज रूपवती है कल बीमार भी हो सकती है। उसके लावण्य का उपभोग करने वाले सकड़ो होगे और उसके रोग मे उसकी शुश्रूषा करने वाले कौन होगे? क्या यह अवस्था गृहस्थ की उस अवस्था से अच्छी होगी जिस को जेल का नाम दिया जा रहा है?

जहा दाम्पत्य सम्बन्ध मे शिथिलता आगई है वहा की स्त्रियो की दशा को देखो तो सही। क्या दशा है ? स्त्री तो भोग की सामग्री हुई। उस पर तो चारों ओर से बुरी दृष्टि पडती है। जो मर्यादा उसकी रक्षा करती थी वह तोड दी गई।

जो लोग यह कहते हैं कि जगत् केवल जड पदार्थ का नियन्त्रित रूप है कोई आध्यात्मिक सत्ता नहीं, वे भूल जाते है कि 'नियन्त्रित' (organized) शब्द ही अभौतिक चेतन सत्ता का बाधक है। नियन्त्रण ता बिना अभौतिक, चेतन नियन्ता के सभव ही नहीं। ईश्वर कोई मनगढन्त या कपोल कल्पित सत्ता नहीं है। आप ईश्वर के नाम को भुला सकते हैं, मन्दिर, मसजिद तोड सकते है, परन्तु केवल अल्प काल तक जब तक कि आप बाहरी आडम्बरो मे फसे रह और जगत् की सूक्ष्म प्रवृत्तियों को ध्यान मे न लावें। परन्तु एक दिन तो आखे खुल जायगी। इस प्रकार की मनोवृत्ति से भोगवाद का ताता टूटने का नही और न आगे आने वाली विपत्तिया से छुटकारा मिल सकता है।

आज कल फैशन यह है कि हर एक जीमाग को धन से सम्बद्ध किया जाय। हर एक समस्या को आर्थिक (Ecomomic) कहा जाता है मानों ससार मे लोभ ही एक वस्तु है। पुरान शास्त्रो मे मन के चार विकार मुख्य माने गये हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह। ये चारों विकार मन की सूक्ष्म और आन्तरिक वृत्तियो के रूप है। इनके कारण जीवन की अनेको समस्याये उपस्थित होती रहती हैं। आधुनिक युग का यह बडी भारी भूल है कि उसने इनका एकीकरण धनकी इच्छा के रूप में किया है। यह ठीक है कि धनका प्रश्न बडे महत्व का है। धन के लोभ मे मनुष्य क्या कुछ नहीं कर बैठता। ईश्वर से उतर कर धन ही सब का वशी है। परन्तु है यह आधी सचाई। कामी पुरुष कामवासना की पूर्ति के लिये समस्त धन को बरबाद कर देता है। धन सब कुछ नहीं है और न समस्त आपत्तियॉ या ससार की सब जटिल समस्याये धन के कारण है। इसी लिये धन की प्राप्ति ही केवल उन विपत्तियो की चिकित्सा नही है। यदि ससार के सब मनुष्यो को बराबर बराबर पुष्कल कोष बाट दिया जाय तब भी उनकी हर प्रकार से शान्ति नहीं हो सके। इस लिये मानवी विपत्तियो को दूर करने के साधनों की खोज करते हुये मानवी मस्तिष्क की अन्य प्रवृत्तियो को सुलझा देना चाहिये।

कभी कभी मनुष्य वह चीजे मागने लगता है जो स्पष्टतया उसके अधिकार मे नही है। उदाहरण के लिये यह मॉग की जाती है कि देश की समस्त सपत्ति को देश के लोगों मे बराबर बॉट दो। परन्तु यदि सब लोग इस पर सहमत भी हो जाय तो भी समझ मे नहीं आता कि बॉट का काम कैसे सम्पादित किया जाय। एक दिल्ली नगर मे भिन्न भिन्न सम्पत्तिया के बारह लाख आदमी रहते है। कुछ की एक दिन की आय आठ आना या बारह आना से अधिक नही है। कुछ की एक दिन की आय कई हजार रुपये होगी। कोई जादू का छडी ऐसी नही निकली जिसको छुआ देने से सबका आर्थिक तल एकसा हो जाय और फिर उन मे वैषम्य उत्पन्न ही न होने पावे। निर्धन लोगों को लूट मार की आज्ञा

दे दी जाय तो वह धनिकों को एक घण्टे में निर्धन कर सकते हैं। परन्तु ऐसा कौनसा उपाय है कि यह नये धनिक न हो जाय। पहले परिश्रम करके पुंजीपति बने थे चाहे उसके साधनो मे कुछ अनिष्ट भी क्यो न हो। अब लूट मार कर पूंजीपति हो जायगे। यही हो रहा है।

शायद लोग कहें कि सब जनों के धन को समतल करने का एक उपाय है अर्थात् समस्त छोटे व बडे उद्योगों का राष्ट्रीयकरण (nationalization) हो जाना चाहिये। अर्थात् किसी को निज शक्ति से उद्योग, धन्धा या व्यापार करने का अधिकार न दिया जाय। सब काम सरकार की ओर से होने चाहियें। रेलें सरकार की हों, यातायात का प्रबन्ध सरकार का हो। कारखाने सरकार के हों, उद्योग धन्धे सरकार के हों। लोग सरकार के नौकर बनकर काम करें और अपने निर्वाहार्थ उचित वेतन लेवें। न किसी की निज् सम्पत्ति होगी न पूंजीवाद सिर उठा सकेगा। जो लाभ उद्योगों से होगा वह सरकार का होगा। अर्थात् उसकी स्वामिनी समस्त जनता होगी। इस प्रकार सब में नितान्त समता न सही, व्यावहारिक समता तो आ ही जायगी।

यह एक मत है जिस पर गंभीरता से विचार करना है। साधारणतया तो यह एक चित्ताकर्षक और परम उपयोगी सिद्धान्त प्रतीत होता है। परन्तु इस में त्रुटियां बहुत हैं। प्रथम तो जनता मे उद्योग सम्बन्धी वैयक्तिक स्वतत्रता नही रहती। सब सरकारी नौकर हो जाते हैं। इस से सब से बडी जातीय हानि यह होती है कि जातिभर का मनोवृत्ति नौकर की हो जाती है। याद रखना चाहिये कि नौकर की और स्वामी की मनोवृत्तियों में बडा भेद है। दासत्व एक भयानक रोग है जो मानव जाति के विकास में अत्यन्त बाधक है। स्वतत्र रूप से चार पैसे कमाने वाला उद्योगी नौकर रूप से एक हजार कमाने वाले की अपेक्षा कहीं अच्छा है। स्वतत्र पुरुष सोचता है कि मुझे उन्नति करनी है। उसके मन मे एक प्रकार का गर्व है कि मैं किसी का नौकर नहीं हूँ। परतंत्र अफसर भी सोचता है कि मेरा तो इस उद्योग से केवल इतना ही सम्बन्ध है कि मै इतनी मात्रा मे काम कर दूं और मुझे इतनी मात्रा मे पारिश्रमिक प्राप्त हो जाय। इस से प्रथम तो आत्म गौरव की हानि होती है, दूसरे अन्ततोगत्वा उद्योग की उन्नति भी मारी जाती है। आप शायद यह सोचें कि ये नौकर तो जनता के हैं। अपना ही आप नौकर हो तो इस मे दासता का प्रश्न नही उठता। परन्तु इसको व्यावहारिक रीति से सोचिये। शासन पद्धति कुछ भी क्यो न हो शासन की बागडोर कुछ चुने हुये व्यक्तियों के हाथ मे रहेगी जो सख्या मे जनता की अपेक्षा बहुत कम होंगे। मानव प्रकृति को देख यह कोई उपाय नहीं है कि वे लोभी और स्वार्थी न हो सकें। उन मे अपनी निर्बलतायें होंगी। उद्योग और व्यापार तो व्यापार के ढङ्ग से ही चलेगा। सरकार को अधिक से अधिक लाभ करने की प्रवृत्ति भी रहेगी ही। वह प्रवृत्ति भी पूंजीवाद के समस्त दोषों से पूरित होगी। जनता फिर भी दास ही होगी। न एक कम्पनी की सही, समस्त सरकार की। उस समय हमारे शासक वर्ग की मनोवृत्ति ही व्यापारिक हो जायगी।

मनुस्मृति की परिभाषा मे यो कहिये कि शासन का काम क्षत्रियो के हाथ से लेकर वैश्यों के हाथ मे दे दिया गया। आजकल छोटे से मण्डलाधीशो से लेकर बडे बडे राज्य तक व्यापारी बन हुये हैं। उन का ध्यान एक ही बात की ओर रहता है अर्थात् हमारे माल को कहा कहा अच्छ बाजार मिल सकते है। देशो की सीमाये इसी विचार से नियत की जाती है। परस्पर सन्धिया भी ऐसी आधार पर होता है। युद्ध भी इसी आधार पर छेड जाते हैं। न्याय वही है जो व्यापार के लिये सुविधा जनक हो और सब अन्याय है। महाभारत की घोषणा यह थी 'यतो धर्मस्ततो जय'। 'यतो व्यापारस्ततो जय' आज की घोषणा यह है। इसका परिणाम यह है कि प्रबन्ध मे बुराइया कम नहीं हुई बढ गई। पहले शासक वर्ग व्यापार पर नियत्रण रखते थे। और वह जनता के हित की दृष्टि से रोक थाम करते रहते थे। अब वही व्यापारी है और वही शासक। शासन कौन करे? मनु के विधान म क्षत्रियों को व्यापार करने का अधिकार नही। वैश्यों को इस विषय म पूर्ण स्वतन्त्रता है। वह उद्योगो मे पूर्ण स्वतन्त्र है। हा, वह जनता का शोषण न कर सके इसके लिये शासक वर्ग ने दो शस्त्र अपने हाथ मे रक्खे है एक कर दूसरा दण्ड। ब्राह्मणो का वश्यों को यह उपदेश है कि धर्मानुकूल कमाओ। कोई काम ऐसा न करो जो जनता को पीडा पहुँचाने वाला हो। और कमाई हुई राशि मे से पुष्कल दान कर दो। मनु ने दान की राशि कमाई का दसवा भाग रक्खा है। राजपुरुष या क्षत्रियों की ओर से यह नियम है कि कर लगाओ। और यदि कोई अनुचित करे तो उसका दण्ड रूपेण सर्वस्व छीन लो। उद्योग और व्यापार के राष्ट्रीयकरण मे यह दोनो रोक सभव नही है। जहा जहा जिन जिन उद्योगो का राष्ट्रीयकरण हुआ वहा शासकवर्ग को उन धन्धो मे आसक्ति हो गई और वे शासन नही कर सके।

कुछ लोगो का विचार है कि यद्यपि छोटे छोटे साधारण धन्धो के राष्ट्रीयकरण की आवश्यकता नही और छोटे २ वैश्यों को स्वतन्त्र छोड देना चाहिए परन्तु कुछ ऐसे बडे धन्धे है जिन के लिए करोडो और अरबो रुपये की आवश्यकता होती है। ऐसे धन्धे व्यक्तियो की शक्ति से बाहर है। और उनको करना भी न चाहिए। क्योकि इससे करोडो रुपये एक ही मनुष्य की जेब मे चले जाते है।

यह बात कई अशो तक ठीक है। परन्तु इन धन्धो के विषय मे भी शासको की मनोवृत्ति के बिगडने का भय है। ब्रिटिश राज्यकाल मे अफीम का कार्य केवल सरकार की ओर से होता था। चीन वाले अफीम बहुत खाते थे। सरकार ने अफीम को हाथ मे इस लिए लिया कि उधर चीन पर भी आधिपत्य रहे और इधर अफीम का नफा भी सरकार को मिले। इस मे सरकारी अफसरो का ध्यान सदैव आय बढाने की ओर था। शराब की बिक्री का नियत्रण सरकार के हाथ मे है। लोग इस व्यापार मे स्वतन्त्र नहीं हैं। परन्तु इस विषय मे सरकारी अफसर आय बढाने की धुन में रहते हैं। इस से शराब के पीने मे कमी तो नहीं आई। इसलिए अच्छा तो

यह कि बडे धन्धो को भी सघों के हाथ मे दिया जाय। विशेष अवस्थाओ मे सघो की सहायता करके उनके काम को प्रोत्साहित किया जाय। और वे सघ जनता के रुधिर के शोषक न बने इसके लिए कडे दण्ड दिए जाय। कडे दण्ड देना उसी क्षत्रिय वर्ग के लिए सम्भव है जो धनाढ्य होने की नहीं सोचता और अपने कर्तव्य अर्थात् शासन मे अधिक से अधिक त्याग दिखा सकता है। पाश्चात्य देशो मे शासक वर्ग बडी बडी कम्पनियो के हिस्सेदार हैं और वे उनके हित को दृष्टि मे रखकर ही शासन करते हैं। ससार भर की सरकारे उनकी ऋणी है। अत न्याय की आशा ही दुरूह हो जाती है। चोर बाजार और रिश्वत ने शासन को दूषित कर रक्खा है। थैली हाथ मे ले लो और छोटे से छोटा और बडे से बडा पाप कर सकते हो। यह है पूजीवाद जिसके विरुद्ध कार्ल मार्कस आदि ने समुचित आवाज उठाई। परन्तु उनसे सब से बडी भूल यह हुई कि रोग का कारण है भोगवाद। इसी को और बढा दिया। त्याग तो आध्यात्मिक शिक्षा से ही सभव है। जडवाद के प्रचार से आत्म त्याग और परोपकार का भाव तो जीवित नही रह सकता और इन भावो के जीवित रहने से ससार को सुख मिल नही सकता।

यह ठीक है कि ईश्वर के नाम पर बहुत से ढोंगी मूर्खो को ठगते हैं। परन्तु इस से भी बडी एक सचाई यह है कि करोडो मनुष्य ईश्वर के भय से दूसरों पर अत्याचार करने से हाथ खींचते और ईश्वर को प्रसन्न करने के हेतु दूसरों का उपकार करने मे तत्पर रहते हैं। लूट के कारणों को दूर करने की जरूरत है।

मनुस्मृति मे रिश्वत खोरी के लिये बहुत बडे दण्ड का विधान है। जैसे—

राज्ञो हि रक्षाधिकृता परस्वादायिन शठा ।
भृत्या भवन्ति प्रायेण तेभ्यो रक्षेदिमा प्रजा ॥
(७।१०६।१२३)

अर्थात् राजा के रक्षण के लिये जो नौकर रक्खे जाते हैं वे प्राय दूसरों को धोखा देकर अपना लाभ उठाते है। राजा को चाहिये कि इन के अत्याचारो से प्रजा को बचाता रहे।

ये कार्यिकेभ्यो ऽर्थमेव गृह्णीयु पापचेतस ।
तेषा सर्वस्वमादाय राजा कुर्यात् प्रवासनम् ॥
(७।११०।१२४)

जो पापी लोग काम वालो से रिश्वत लेवे उनका सब माल जब्त करके राजा उन को निकाल दे।

पूजीपतियों का कोई उल्लेख मनु मे नहीं पाया जाता। क्योंकि वर्ण धर्म के यथोचित पालन मे पूजीवाद के लिये कोई स्थान है ही नहीं। वेदो मे अवश्य ऐसे व्यापारियों का उल्लेख मिलता है जो प्रजा के रक्त को चूसते है। उन के लिये ऋग्वेद मे "पणि" शब्द का प्रयोग हुआ है। पणि और वैश्य मे भेद है। वैश्य उचित रीति से धन कमाता है। उस की दृष्टि समाज के हित के लिये होती है, परन्तु पणि को आज कल का पूजी पति ही समझना चाहिये। ऋग्वेद मे पणियों को असुर कहा है, क्योंकि उन मे सुरत्व या देवत्व नहीं है राजा के लिये आज्ञा है कि पणियों का नाश कर दे यहा कुछ मन्त्र दिये जाते है—

यमिन्द्र दधिषे त्वमश्वं गा भागमव्ययम् ।
यजमाने सुन्वति दक्षिणावति तस्मिन्
तं धेहि मा पणौ ॥

(ऋग्वेद ८।९७।२)

अर्थात् हे इन्द्र घोडे, गाय, इत्यादि धन आप उसे पुरुष को देवें जो यज्ञ करता और दान देता है । पणि को न देवे । सायणाचार्य ने इस का अर्थ किया है—

द्रव्यव्यवहारादयष्टा जन पणि ।"
जही न्यत्रिण पणि वृको हि ष ॥

• (ऋ० ६।५१।१४)

"खाऊ पणि का नाश करो । वह तो भेडिया है ।"

वर्ण धर्म के विषय मे हम इतना और कहना चाहते है कि यह धर्म है, वर्ण है, प्रतिज्ञा है, आपाधापी नही है । स्वार्थ या भोग नही है । इस का पालन व्यक्ति या जाति उसी समय कर सकती है जब उन को धर्म के परोक्ष रूप पर श्रद्धा हो, जब वे अध्यात्म के मूल्य का समझ सके । धर्म की प्रवृत्ति आन्तरिक होती है, राज्य व्यवस्था या समाज व्यवस्था उस आन्तरिक प्रवृत्ति के बाह्य सहायक है । जब तक वह आन्तरिक प्रवृत्ति उपस्थित नही है समाज के बाहरी नियम या केवल शासन विधान कुछ कर नही सकता । जिस मनुष्य का 'सत्य भाषण' पर श्रद्धा नही है वह कानून के डर से कहाँ तक सच बोलेगा ? उसे अपने झूठ को छिपाने के लिये कोई न कोई अवसर अवश्य मिल जायंगे । इस लिये तो कहा कि क्षत्र का सहायक ब्रह्म होना चाहिये । ब्रह्म आन्तरिक श्रद्धा उत्पन्न करेगा और क्षात्र सामयिक भय दिखाकर प्रलोभनो से बचायेगा । जिस समाज मे ब्रह्म के लिए स्थान नही वहा बडे से बडे शासक भी घूस खाकर कर्तव्य च्युत हो सकते और अन्याय, अनाचार, अत्याचार और दुराचार के साधक बन सकते है । आजकल के साम्यवाद और समाजवाद मे यह एक गुण है कि अत्याचारो के विरुद्ध आवाज उठाई जाती है और अनिष्ट वैषम्य को मिटाने का प्रयास किया जाता है परन्तु यह प्रयास इसलिये फलीभूत नही हो सकता कि जड़वाद, भोगवाद और असहकारिता उसके साधन है । श्रम जीवियो से कहा जाता है कि यदि पूजीवाद को मिटाना है तो पूजीपतियो का नाश कर दो, मशीनो को तोड दो, उनकी फैक्टरियों मे प्रवेश पालो फिर अवसर पा कर असहयोग और हड़ताले कर दो । यदि थोडी देर के लिए इस बात को आँख से ओझल कर दिया जाय कि ये बाते सम्भव है और इन से पूजीपति नष्ट हो जायगे तो भी एक बात विचारणीय है। यदि जनता को इस प्रकार की असहकारिता की लत पड़ गई तो उन का अन्त कहा होगा ? क्या यह प्रवृत्ति नाश करने वालों का नाश न कर देगी । रोग को दूर करने के प्रयास मे यदि रोगी भी नष्ट हो जाय तो ऐसी चिकित्सा से क्या लाभ ? शूद्रो के विषय मे हम फिर कहेंगे ।

असाम्प्रदायिकों में साम्प्रदायिकता का बीज वपन

[लेखक—श्री रणजीतसिंह जी वैद्य, मन्त्री आर्य उपप्रतिनिधि सभा, पीलीभीत]

आठ मार्च सन् ४९ को इन्दौर के समीप राऊ नामक स्थान पर श्री राजेन्द्र बाबू की अध्यक्षता मे गान्धी जी के विचार प्रसार चाहने वाले व्यक्तियो का सर्वोदय समाज के नाम से एक सम्मेलन हुआ जिसमे विनोवा भावे का व्याख्यान १८ मार्च के हिन्दुस्तान पत्र मे छपा है जिसको पढ़कर उक्त महोदय की यह भावना प्रतीत होती है कि सर्वोदय समाज के नाम से एक नवीन मत ससार मे प्रसारित किया जाय। विनोवा भावे महोदय का कहना है कि किसी एक ही आदमी को पूर्ण विचार सूझे यह नहीं हो सकता। एक को एक अंग दूसरे को दूसरा अंग और तीसरे को तीसरा अ ग सूझेगा। इस तरह से सब के अंगों को मिलाकर एक पूर्ण विचार होगा इसलिये विचार भेद होना जरूरी है। यह दोष नहीं गुण ही है लेकिन हित विरोध नहीं होना चाहिये अर्थात् यह सर्वोदय समाज विभिन्न साम्प्रदायिक विचारो के सम्मिश्रण का एक रासायनिक घोल होगा या इसकी अवस्था ठीक उस प्रकार के व्यक्तियो के समुदाय की होगी जिन्होंने हाथी को आखो से देखने का कष्ट न कर उसके विभिन्न अ गो का स्पर्श कर एक ने कहा हाथी ऊपर से मोटा गोल २ नीचे क्रमश पतला होता है अगला हिस्सा मुलायम होता है। दूसरे ने कहा कि हाथी दो सूपों की तरह होता है। तीसरे ने कहा कि हाथी चार मोटे २ खभो की तरह होता है। चौथे ने कहा कि हाथी एक गोल मोल लबे चौड़े चबूतरे की तरह होता है। इस प्रकार इन सब अंगो को इकट्ठा कर एक हाथी ज्ञान प्राप्त किया गया। यदि ये सब महोदय हाथी को आख से देख कर ज्ञान उपलब्ध करते तो सुगमता से ही हाथी का ज्ञान प्राप्त हो जाता।

श्रीमान् जी जब भगवान् का दिया वेद रूपी ज्ञान आपके सामने है जिसमे प्राणी मोक्ष की हित भावना है। जो सवथा सर्वोदय का स्वार्थ है उससे विमुख हो मानुषी विचारो मे बहकर एक नये सम्प्रदाय की गणना क्यो बढा रहे हो। क्यो आपको विश्वास नहीं कि यह सम्प्रदाय जिसको आज कांग्रेसी सरकार बडे जोरदार शब्दों मे कहती है हम सम्प्रदाय विहीन राज्य चाहते है। हम साम्प्रदायिता का भेद भाव मिटाना चाहते है जब उदय हुवे थे तो इनकी घोषणा मानव समाज को सत पथ पर लाने की नही थी। प्रत्येक सम्प्रदाय के नेता पैगम्बर गुरुओ का और उसके बाद उसके पूर्व अनुयायियो और शिष्यो का यही अभिमत था कि मनुष्य समाज का हित हमारे ही विचारो से हो सकता है। सर्वथा शान्ति सुख हम ही देसकते हैं अन्य नही। बौद्ध, जैन, सिक्ख ईसाई मुसलमान आदि सम्प्रदाय सब उपर्युक्त विचारों की बुनियाद पर खडे हुवे। आगे चलकर इन सम्प्रदायों से कितनी अशान्ति फैली यह इतिहास विदित है। इसलिये महात्मा जी के इन शब्दो को स्मरण कर कि 'किसी अच्छे उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये भी अशुद्ध साधनों का इस्तेमाल नही करना चाहिये" इस नये सम्प्रदाय की रचना से उपरत होइये। सर्वोदय संदेश वेद

में पूर्ण है उसे देखिये । आपके लिये वेदों के कुछ उद्धरण इस हेतु देता हूँ ।

(१) मनुष्य बनो और अपने अन्दर देवों को जन्म दो ।

"तन्तु तन्वन् रजसो भानु मन्विहि ज्योतिष्मत
पथो रक्षधिया कृतान् । अनुल्वण वयत जोगुवा
मपो मनुर्भव जनया दैव्य जनम् ॥

(२) प्राणीमात्र परस्पर मित्र की दृष्टि से एक दूसरे को देखे ।

दृते दृंह मा मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे । मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।

सर्व प्राणियो में आत्मभाव रखोः—

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति ।
सर्व भूतेषु चात्मान ततो न विजुगुप्सते ।
यस्मिन् सर्वाणिभूतानि आत्मैनाभूद् विजानत ।
तत्र को मोह क शोक एकत्वमनुपश्यत ॥

इस प्रकार अनेको प्रमाण सर्वोदय के वेद मे मौजूद हैं । फिर उसका ही आश्रय ले अनुसरण क्यो न कीजिये । जब कि स्वत आप का ही कथन है कि भगवान् ने इस दुनिया मे मानव समाज का निर्माण किया तो मानव का आपस मे विरोध हो यह मन्शा उसकी कभी नहीं हो सकती । यह सर्वथा ठीक है जब भगवान् ने मानव का निर्माण किया तो उसकी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिये उसे सब साधन दिये । बुद्धि के विकास के लिये वेद रूप ज्ञान कोष भी उसने दिया ताकि उसके द्वारा ज्ञानवान् होकर मनुष्य सब कार्यो की सिद्धि करे । ये भेदभाव मानवो की शिक्षा की उपज है जो विभिन्न सम्प्रदायों के रूप में प्रसारित हुवे । प्रारम्भ उन सब का मानव समाज की हित कामना से ही हुवा पर आगे चलकर विषम विष के रूप मे प्रदर्शित हुवे । अत दूरदर्शिता से काम लीजिये । यह नया सम्प्रदाय अवश्य बन जायेगा और इसका भी अ त मे वही परिणाम होगा जो अन्य सम्प्रदायों का हुआ ।

मुझे महात्मा गाधी जी के व्यक्तित्व मे पूर्ण श्रद्धा है । उनकी महत्ता मे पूर्ण आस्था है । परन्तु क्या बुद्ध भगवान् अपने समय के पूर्ण तपस्वी और न्यायी न थे ? क्या उन्होंने अहिंसा और सत्य को अपने आचरण मे नही ढाला था ? क्या महात्मा ईसा न्यायी व पवित्र आचरण वाले न थे । क्या मुहम्मद साहेब अपने यहा के जन समाज के उद्धार के लिये नही जन्मे थे । परन्तु इन सब की शिक्षाओं के बाद जो उनके अनुयायियों के द्वारा हुआ वह इतिहास भली भाति बताता है । यह सब क्यों हुआ ? उत्तर मे यही कहना होगा क्योकि ये सब मनुष्य थे अपूर्ण थे । आपका स्वत कहना ही है कि किसी एक को पूर्ण ज्ञान हो ही नहीं सकता ।

अपूर्ण ज्ञान की शिक्षा अपूर्णता ही फैलायेगी । प्रभु ही एक पूर्ण है । उसका ही शिक्षा से मनुष्य पूर्ण ज्ञान योग्य हो सकता है ।

आप कहेंगे कि क्योकि सब मत वाले वेद को नही मानते हमे सब व्यक्तियो को लेकर सर्वोदय करना है । श्रीमान जो इसमे वेद का क्या दोष है ? यदि कोई प्राणी सूर्य के उदय होने पर अपनी आख मीच कर पड रहे और वह कहे कि मुझे

सूर्य से क्या मतलब। वह जब उदय होता है, मेरा शिकार खेलना बंद हो जाता है तो क्या उसे साथ लेने के लिये बुद्धिमान् सूर्य से ही लाभ लेना बंद कर देगा ? कदापि नहीं तो आप वेद रूपी सूर्य से विमुख होने की क्यों सोचते हैं ?

सर्व मान्य नेता भारत के प्रधान मन्त्री पंडित जवाहर लाल जी का कहना है कि सब संकुचित सम्प्रदायो को इकट्ठा कर हिन्द महासागर में डुबो देना चाहिये और आप एक नये सम्प्रदाय का उद्घाटन कर रहे हैं और वह भी कांग्रेस के प्रमुख कार्य कर्ताओं द्वारा।

आप कहेंगे कि बिना इस समाज के निर्माण किये हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदियों मे परस्पर मेल न होगा, सर्वोदय समाज द्वारा ही सब मे मेल और सबके उदय का अवसर होगा किन्तु आपको याद रखना चाहिये कि अकबर के समय मे भी दीन इलाही नाम से एक मत इसी निमित्त खड़ा किया गया था और एक अल्लोपनिषद् नाम से पुस्तक भी निर्माण की गई थी। वह चल न सका। इन भावों की प्रतिक्रिया रूप औरंगजेबी तलवार उसकी तीसरी पीढ़ी में ही चली थी जिसने प्रात स्मरणीय शिवा जी महाराज तथा गुरु गोविंद सिंह आदि को जन्म दिया।

[लेखक ने सर्वोदय समाज के विषय में जिन बातों का उल्लेख किया है इन सब में से कुछ के विषय मे मत भेद संभव है। जातिभेद तथा अस्पृश्यता निवारण, दलितोद्धार, खादी-प्रचारादि जिस कार्य क्रम को सर्वोदय समाज ने अपनाया है उसके बहुत से अंश वस्तुत बहुत उपयोगी हैं और उन अंशों में उसे सभी समाज-हितैषियो का सहयोग प्राप्त होगा, किन्तु यह देख कर हमे सचमुच दुःख होता है कि यह एक सम्प्रदाय का रूप धारण कर रहा है। विविध मतानुयायियो मे प्रेम और सौहार्द रहे यह अच्छी बात है उदारता भी स्वयम् एक प्रशसनीय वस्तु है किन्तु सर्वोदय समाज के कई नेताओ के विषय मे जब यह ज्ञात होता है कि वे इस तथाकथित एकता और उदारता के नाम पर जो व्यक्ति अपनी इच्छा से अपनी प्राचीन संस्कृति और धर्म को अपना चुके थे। उन्हे शिखा यज्ञोपवीतादि पवित्र चिन्हों के परित्याग की प्रेरणा करने मे भी सकोच नही करते तथा ऐसी अवस्था मे पूर्ण सरकारी सहायता व सुविधा का आश्वासन दिलाते हैं तब हम उनकी न प्रशंसा कर सकते हैं और न हां मे हां मिला सकते हैं। हम तो इसे उन की भ्रान्ति समझते है। लेखक ने इसी नई साम्प्रदायिकता की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया है।

—सम्पादक सा० दे०]

ऋग्वेद के १०म मंडल पर पाश्चात्य विद्वानों का कुठाराघात

[लेखक—अनुसन्धानकर्त्ता श्री शिवपूजन सिंह जी 'पथिक' साहित्यालङ्कार, सिद्धान्तभास्कर, साहित्य शिरोमणि, पो० बाक्स न० ७५० कानपुर]

(गताङ्क से आगे)

वैदिक (Vedic) संस्कृत और लौकिक (Classical) संस्कृत में बहुत भेद है। इस भेद को न समझने के कारण पाश्चात्य और प्राच्य विद्वान् भूल करते है।

सुप्रसिद्ध विद्वान् वी० एस० घाटे (V S Ghate) लिखते हैं—

"वैदिक संस्कृत लौकिक संस्कृत की अपेक्षा अधिक सरल नियमित तथा स्वाभाविक है। विभक्ति (Declension) तथा रूपकरण (conjugation) के स्वरूप वैदिक संस्कृत मे अधिक नियत है। वैदिक भाषा की सन्धियाँ सरल तथा सुस्पष्ट है। वेद मे (Infinitive mood) के ६ रूप हैं जहाँ लौकिक संस्कृत में केवल एक है। कहने का तात्पर्य यह है कि लौकिक संस्कृत और वैदिक संस्कृत में पर्याप्त भेद हैं। ८

इस और इस मण्डल से सम्बद्ध अन्य ऐसे ही आक्षेपों पर विचार करते हुए वेदों के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी लिखते हैं—

"हमारी समझ मे तो दशम मण्डल तथा (ऋग्वेद के) अन्य मण्डलों की भाषा एक जैसी है। हमारी बुद्धि मे उनकी भाषा की विभिन्नता नहीं जंचती न जाने हमारा यह निर्णय बुद्धि की मलिनता, अथवा श्रोत्रेन्द्रिय के दोष या हठ के कारण है।"६

वैदिक गवेषक प० भगवद्दत्त जी बी० ए० लिखते हैं—

"जो साधारण लोग ब्रह्मऋषियो को मन्त्रद्रष्टा नहीं मानते और भूल से उन्हें मन्त्र-कर्त्ता ही मानते हैं उनके लिए भी ऋषियों के इतिहास के गत अध्यायों के आधार पर हम मांधाता के काल की ऋग्वेद की स्थिति का दिग्दर्शन कराना चाहते हैं।

आगे इसी का वर्णन किया जाता है—

ऋषि—	सूक्त
वैन्य पृथु	१० । १४८
अदिति दाक्षायणी	१० । ७२
प्रजापति परमेष्ठी	१० । १२६
विवस्वान्	१० । १३
वैवस्वत मनु	८ । २७ - ३१
यम वैवस्वत	१० । १४
यमी वैवस्वती	१० । १५४
यम-यमी	१० । १०
नाभानेदिष्ठ	१० । ६१, ६२
शर्यात या शार्यात्	१० । ६२
विरूप	८ । ४३, ४४
वत्सप्रिभालन्दन	६ । ६८, १० । ४५-४६

८ "Lectures on Rigveda" की भूमिका देखो।

६ देखो—"वेद-रहस्य" प्रथम संस्करण पृष्ठ ४७

बुध	१० । १०१
पुरूरवा	१० । ६५
मारीच कश्यप	१ । ६६, ६ । ६४, ६१, ६२, ११३,११४
कवि या काव्य उशना	८ । ८४ । ६ । ४७-४६, ७५-७६, ८७-८६
शची पौलामी	१० । १५६
त्रिशिरा	१० । ८६
बृहस्पति आङ्गिरस	१० । ७१
च्यवन	१० । १६
मांधाता यौवनाश्व	१० । १३४
जमदग्नि	१० । ११०

इस सूची के बनाने मे हमने दशम मण्डल के सूक्तों का ही अधिकाश ध्यान रखा है। इस सूची के अनुसार महाराज मांधाता के काल तक ऋग्वेद मण्डल मे कुल १६१ सूक्त है। उनमे से ३३ का काल हमने निर्धारित कर दिया। शेष रहे १६६ सूक्त। इन मे से भी अनेक ऐसे है जो कि मांधाता के काल मे समुपलब्ध थे। परन्तु इनके ऋषियो का ऐतिहासिक सम्बन्ध बताने के लिए हमारे पास यहा स्थान नही है।

अब सोचने का स्थान है कि पाश्चात्यों का भाषा-विज्ञान कितना सत्य है? उनके अनुसार दशम मण्डलस्थ मन्त्रो की भाषा और उनमे प्रकट किये गए विचार बहुत नवीन समय के है। कदाचित् ईसा से १५०० या १४०० वर्ष पहले के है।

इसके विपरीत हमने दिखा दिया है कि सम्राट् मान्धाता के काल मे ही दशम मण्डल मे कम से कम २२ सूक्त तो उपलब्ध थे। दशम मण्डल का नासदीय १०। १२६ सूक्त तो आद्य त्रेता युग मे दक्ष आदि के समय ही उपस्थित था। उसका ऋषि प्रजापति परमेष्ठो है। पाश्चात्य लेखक इसे बहुत ही नया सूक्त कहते हैं।

यह है आधुनिक भाषा-विज्ञान का फल, कि जिस पर पाश्चात्यो का इतना बल है। विचारवान् महाशय देख सकते हैं कि पाश्चात्य-विचार ने वेद के सम्बन्ध मे कितने भ्रान्तवाद फैला दिए हैं। आर्य मात्र का यह प्रथम कर्त्तव्य है कि इस प्रकार के भ्रान्त और परम हानिकारक मतो का तीव्र विध्वंस करे।

आर्य इतिहास अब भी सुरक्षित है। उसके यथार्थ अध्ययन की ही कमी है।

यदि त्रेतायुग कम से कम ३००० वर्ष का और द्वापर कम से कम २००० वर्ष का माना जाए, तथा त्रेता की सन्धि ३०० वर्ष की मानी जाए, और भारत युद्ध ईसा से ३१३८ वर्ष पहले माना जाए, तो आद्य त्रेतायुग ईसा से लगभग ८४०० वर्ष पहले होगा। तब प्रजापतियों के पास सारा वेद था। मांधाता और दक्ष प्रजापति के काल मे लगभग १५०० वर्ष का अन्तर हो सकता है इसलिए ईसा से लगभग ७००० वर्ष पहले ऋग्वेद के पूर्वोक्त सूक्त अवश्य विद्यमान थे। इससे कम समय तो हो ही नही सकता।[१०]

(ख, ग, घ,) तीन युक्तियाँ नि सार हैं क्योंकि ऋग्वेद शब्दानुक्रमणी से तो यह पता लगता है—

१० "भारत वर्ष मे इतिहास" प्रथम संस्करण पृष्ठ ७७-७८

मण्डल	मन्यु	श्रद्धा	विश्वेदेव	उपस	उषा
प्रथम	३ बार	३	३	३॰	॰३
द्वितीय	२	१	—	१	१
तृतीय	—	—	७	१६	१
चतुर्थ	२	—	१	५७	१
पञ्चम	१	—	१	६	३
षष्ठ	१	१	७	१४	—
सप्तम	६	१	१	५६	६
अष्टम	४	१	१	७	७
नवम	१	॰	७	८	१
दशम	४	५	३	॰३	६

अतएव प्रो० मकडौनल महोदय का मन्यु, श्रद्धा, विश्वदेवन की प्रधानता और उषादेवी का मान कम लिखना भ्रान्तिपूर्ण है । पाठक इस तालिका से ही विचार सकते है ।

(ड) ऋ० १०।२०।१ मे "अग्निमीडे' के शब्द आने से यह सिद्ध किया जाता है कि १०म मण्डल पीछे बना । दूसरी ओर कहा जाता है कि म मण्डल भी ॰—७ मण्डलों के पश्चात् बना । यहा कतिपय उदाहरणो स दिखाया जाता है कि ऐसा परिणाम सर्वथा अशुद्ध है

"अग्न आयाहि ४ ५ २२, ६ ४ ३॰
अग्नि दूत १ १ ५५, ॰ ३४ ६ ३ २६
अग्निमीडे १ १ १ ४ १ ६ ७, ७॰
अग्निरीशे बृहते ३ ५ १२ ५ २ १४
अग्निर्जाते ४ १ ६ ७ ७ ४
अग्नि र्देवेषु ४ १ १७ ६ ३ २३
अग्निर्होता १, ३, ४ मे पॉच बार है ।
अग्नि होतार २ १ १२ ३ १ १६
अग्नि वोदेव ५ ७ ३ ६ ५ १३
अग्नि सुनू ३ १६, ६ ५ १३
अग्ने जुषस्व ७ ७ १॰ ३ १ ३१
अग्ने विश्वेभि ३ १ ५४ ४, १, १६ ४ ५ ॰०
अग्ने शुक्रेण शोचिषा १ १ ॰३ ७ ७ ५
अ नेग्माधासनामचाभूमानागसा वयम ६ ४ १०, ८ ८ २॰
अतारिष्म तमसस्पार १ ६ ॰५॰ ४ ७६ ५ ५ २०
अदर्शिगातु ॰ १ ॰६ ६ ७ १३
अद्रिभि सुत पवते ७ २ ॰५ ७ ३ १६
अधाह्यग्ने ३ ५ १० ७ ६ १
अनश्वो जातो अनभी २ २ ॰॰ ३ ७ ७
अनुकृष्णे वसुधिती ३ ॰ ८ ३ ७ ५४
अनुत्वा रोदसी उभे ५ ८ १६, ६ ५ २८
अनुप्रत्नस्यौकस १ २ ॰६ ६ ५ ७
अपघ्नन्पवते मृधो ७ १ २५ ७ १ ३४
अपश्य गोपामनिपद्यमानं ॰ ३ ॰० ८ ८, ३५
अप्सुमे सोमो अब्रवात् १ २ ११ ७ ६ ५
अबोध्यग्नि ५ २ २७ ३ ८ १२
अभित्वा गोतमागिरा १ ५ २, ३ ६ ७॰
अस्माकमिन्द्र ४ ५ ८ मे ४ बार

इस प्रकार हमने अ वर्ण से आरम्भ होने वाले ५८ उदाहरण समान शब्दो की विद्यमानता के दिए है ।

भिन्न २ ऋषियो ने समान शब्दों के धारण करने वाले मन्त्र कैसे बनाए ?

२ य से ७ म मडल तो एक समय के बने कहे जाते है तो उनमे ये समान शब्द कैसे आए ?

अन्य मण्डलों मे भी वे कैसे आ सके जब तक लिखित पुस्तकों का प्रचार न था ? दो चार हजार वर्ष ई० पूर्व जैसे पाश्चात्य लोग विकास सिद्धान्तानुसार मानते हैं ये समानताए कदापि नहीं आ सकती थीं ।

(शेष १६७ पर)

दयानन्द

(बन्धन मुक्त भारत मां को सपूत की याद)

श्री कवि कुलदीप 'सिन्धु' एम० एस सी०

हो कैसे लोचन नीर-बन्द ?
था एक सुखाने वाला-वह भी
चला गया है दयानन्द !

दो दिन की देकर चमक दमक
सौन्दर्य सूर्य वह अस्त हुआ
मैं आशा हार पिरोती थी—
वह कर काल-कर-ग्रस्त हुआ
दो दिन यदि और चमक पाता
कटते कष्टों के सभी फन्द !

जब से माली ने मुख फेरा
है सूख गया भारत-उपवन
सब हरित क्षेत्र है शुष्क बनें
हैं शुष्क पुष्प, अरु हर कण कण
सब चिड़ियां पंछी शेर बने
ले उड़ा गए फल-मूल-कन्द !

वह बिछुड़े लाल अछूतों से
नित गोद हमारी भरता था
जब थके शीश को मेरे रख—
कर अंक, थपोका करता था
मैं मधुर नींद के सुपनों में
सुनती थी उससे वेद-छन्द !

मैं लुटा चुकी थी जो वैभव
उसने फिर मुझे प्रदान किया
विस्मृत वेदों के स्वर्ण कोष से
पुनः मुझे धनवान किया
मैं चकित हो गई देख उठे
जग के कर, करने चरण-वन्द !

वह सुप्त सपूतों को मेरे
कर जागृत और सचेत गया
"माता के बन्धन भंग करो"
वह उनको कर संकेत गया
प्राचीन धर्म के जादू से
वह मिटा गया सब द्वेष द्वंद्व !
उसके होते स्वाधीन हुई, होती तो अवयव क्यों कटते ?
संकीर्ण शिथिल से वर्गों में, मेरे सपूत फिर क्यों बटते ?
क्यों मुझ को कंपित कर सकती
जग-उथल पुथल की पवन मन्द !

(शेष पृष्ठ १६५ का)

ईश्वरीय ज्ञान होने मे यही एक अद्भुत प्रमाण है।

(च और छ इन युक्तियों की निःसारता स्वयं सिद्ध है।

(ज) मैकडोनल महोदय के लेख ने कि "दशम मण्डल के सूक्त प्राचीनतर हैं, स्वयं उनके कथन, ने कि दशवा मण्डल अन्य मण्डलों से भाषा की दृष्टि से पीछे का बना हुआ है काट दिया और यह बात स्पष्ट हो गई कि दशवे मण्डल तथा अन्य मण्डलों की भाषा मे अन्तर नही है।

आपने यह भी लिखा है कि इस में लोक प्रचलित नवीन शब्दों का है। यदि लोक प्रचलित शब्दो की विद्यमानता किसी मण्डल को नवीन बना सकती है तो पुराने मण्डलों मे भी उनकी उपस्थिति है। यथा—लाङ्गल यह शब्द ऋ० ४। ५७। ४ मे आया है। लाङ्गल=हल, क्या कृषक होते हुए वारंवार हल का भी वर्णन न करते केवल एक बार क्यो आया ?

वणिक् ऋ० ५ ४५ ६ मे आया है, १० म मण्डल मे नहीं।

छाग ऋ० १ १६२. ३ में आया है।

ये शब्द लोक प्रचलित हैं और प्राचीन मण्डलों मे क्यों आए ?

अतएव उनकी यह युक्ति भी भ्रमपूर्ण है।

प्रोफेसर बलदेव उपाध्याय एम ए, श्री रजनीकान्त शास्त्री, श्री मेधार्थी प्रभृति विद्वानों को उचित था कि वे निष्पक्ष होकर ऊहापोह से विचार करते। परन्तु इन विद्वानों ने पाश्चात्य विद्वानो के लेख को ईश्वर कृत समझ कर बिना तर्क की कसौटी पर कसे हुए आँख मूँद कर मान लिया।

जब प्रोफेसर मैक डानल महोदय की युक्तियाँ ही भ्रान्तिपूर्ण हैं तो उनके अनुयायियों की कैसी होगी, विज्ञ पाठक स्वयं विचार सकते हैं।

(क्रमशः)

वेदोपदेश

आत्म समर्पण का फल

[लेखक—श्री पूज्यपाद महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज]

ओ मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये । मा नो रीरधत निदे ॥ ऋ० ७ ९४-३ ॥

पाठक वृन्द ! मनुष्य पाप से बचना चाहता है, । उसका ध्येय मट्टी से स्वर्ण बनना है । मट्टी से जो भी पदार्थ बनाओ, घट बनाओ, लोटा बनाओ, सुराही बनाओ कुछ भी बनाओ, मट्टी ही है । इसी प्रकार गोधूम से हम रोटी, पूडी, कचौडी, पकवान आदि बना सकते है, आटा, सूजी, मैदा, रवा, छान [चोकर] तय्यार कर सकते है, इतने रूप परिवर्त्तन करने पर भी मूल तो गोधूम ही है । परन्तु परमात्मा की बडी विचित्र और अदभुत लीला है । वह क्या से क्या बना देता है । वह विश्व कर्मा है, उस जैसा कारीगर ढू ढे से कही भी नही मिलता । यह उस का महान् सामर्थ्य और कारीगरी का ही प्रताप है कि वह रज वीर्य की दो बिन्दुओ से मनुष्य का एक विचित्र पुतला बनाता है जिसके शरीरान्तगत मन, बुद्धि, चित्त, अहकार की कौसिल आत्मा के आधीन सर्वदा और सर्वत्र उपस्थित कर रखी है । प्रत्येक कार्य करने के लिये मनुष्य को सोच विचार का साधन दिया । "जैसा कोई करेगा वैसा ही वह भरेगा' यह उसका अटल नियम है । कवि ने भी कहा है जैसा किसी का हो अमल, वैसा ही पाता है वो फल दुष्टो को कष्ट मिलता है, शिष्टों को होता दुःख हरण' वह (परमात्मा) महान् फल दाता है । छोटे से छोटे कर्म का भी वह फल अवश्य देता है । वेद कहता है —

कदाचन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।
उपोपेन्नु मघवन्भूयइन्नु, ते दान देवस्य
पृच्यते ॥ य० ३-३४

इसके भावार्थ मे महर्षि दयानन्द लिखते है कि यदि जगदीश्वर कर्म के फल को देने वाला न होता तो कोई भी प्राणी व्यवस्था के साथ किसी कर्म के फल को प्राप्त न हो सकता ।

पाप का फल बुरा और पुण्य का फल सदा भलाई है । इस लिये साधक डरता हुआ अपने से अधिक बुद्धिमान् गुरु, आचार्य अथवा उपदेशक के समीप उपस्थित होकर प्रार्थना करता है कि भगवन् ! हमे (पापत्वाय) पाप कार्य्य के लिये और (अभिशस्तये) पराधीनता के लिये और (निदे) निन्दा योग्य कार्य के लिये (मा रीरधतम) कभी किसी के वश मे न होने दे । हमे कृपया पाप कर्म से बचने के साधन बताइए ।

ऐसी अवस्था मे आचार्य लोग उसे उपदेश करते है कि हे मनुष्य ! यदि पाप से बचना चाहता है तो प्रभु की शरण ले । भगवान् कृष्ण ने भी अर्जुन को यही उपदेश दिया था कि पाप पुण्य के उत्तरदायित्व से बचना चाहते हो तो 'मामेक शरण व्रज"—मेरी शरण मे आजा । इसी भाव को हिन्दी के एक कवि ने सुन्दर शब्दों मे प्रकट किया —

जीवन का मैंने सौंप दिया
सब भार तुम्हारे हाथों में।
उद्धार पतन है अब मेरा
भगवान् तुम्हारे हाथों में॥

तो प्रभु की शरण लो। उसी से ही कल्याण होगा और बेड़ा पार होगा। देखो, वेद भगवान कहता है—

ओं प्र यो राये निनीषति मर्त्तो यस्ते वसो दाशत्।
स वीरन्धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम्॥

ऋ० ८-१०३-४॥

इस मन्त्र मे जहा आत्म समर्पण बताया है वहा उस का फल भी बताया है। शब्दार्थ इस प्रकार है —

हे वसो! समस्त ससार के आश्रय दाता! (यः मर्त्त) जो मरण धर्म पुरुष (राये) अमृत धन के निमित्त (प्र निनीषति) तुझ तक पहुँचना चाहता है (य ते दाशत्) जो तुझे समर्पण करता है (स) वह, हे अग्ने! (उक्थशंसिनं) वेदवक्ता (सहस्रपोषिणं) हजारों को भरण पोषण करने वाले (वीरं) पुत्र को (त्मना धत्ते) अपने सामर्थ्य से उत्पन्न करता है।

अर्थात् ईश्वर को स्मरण करने और उसको आत्म समर्पण करने वाले याजक धर्मात्मा के घर में जो पुत्र उत्पन्न होते हैं वे स्वयं विद्वान्, वेद वक्ता और सहस्रों को पालन पोषण करने वाले होते हैं।

तो मानो, पाप से बचने का एक अत्र अचूक साधन आत्म समर्पण बतलाया। परन्तु आत्म समर्पण बड़ी कठिन बात है। हम शरीर समर्पण तक तो नहीं कर सकते, आत्म समर्पण तो दूर रहा।

अर्पण किसको हो?— शरीर बना है माता पिता और राष्ट्र तत्व से, इस लिये शरीर तो माता पिता के लिये है या राष्ट्र के लिये। इसी एक मर्म को भी हम समझ जायं तो भारत को स्वयं सेवकों की चिन्ता ही न रहे। पितृ सेवा से सुख की भी वृद्धि हो। अत जो शरीर माता पिता अथवा राष्ट्र के अर्पण कर देता है, वह उत्तम है।

शरीर से दूसरे दर्जे पर मन है। मन को अर्पण करना है गुरु के। जो मगे गुरु के अर्पण करता है वही विद्वान् तथा गुणवान् बन जाता है।

परन्तु

परन्तु प्रभु के पास न तो शरीर जा [illegible] और न मन। वहां तो केवल आत्मा ही पहुं सकती है। इस लिये वास्तविक आनन्द प्राप्त करना है और पाप से सर्वदा के लिये मुक्त होना है तो आत्म समर्पण के लिये मनुष्य को सदा प्रयत्नशील रहना चाहिये।

आत्म समर्पण कौन कर सकता है?

आत्म समर्पण केवल भक्त ही कर सकता है, परन्तु वर्त्तमान समय मे भक्त भी कई प्रकार के हैं

भक्त के प्रकार— तीन प्रकार के भक्त हैं, पत्थर नाथ, भक्तेच्छा लाल, नमक देव,।

पत्थर नाथ भक्त— जिस प्रकार पत्थर को, सौ वर्ष चाहे जल मे डाल दो, पड़ा रहेगा और बाहर निकालो तो पत्थर का पत्थर ही होगा। जल की एक बिन्दु भी उसके भीतर प्रविष्ट न हुई होगी। ठीक इसी प्रकार जो भक्त माला तो फेरते रहते

हैं और ओ३म् की रट भी लगाते हैं और मन जिनका नहीं बदलता तो वे केवल दिखावे के ढोंगी भक्त हैं, जिन को हम पत्थर नाथ के नाम से सम्बोधित कर रहे हैं। ऐसा पत्थर ऊपर से लेसदार और चमकदार बन जाता है पर जब ऊपर पाँव पड़ा, तो तुरन्त फिसल जाता और चकनाचूर हो जाता है। इस प्रकार के भक्त का संग बड़ा भयानक होता है. इस से बचना चाहिए।

दृष्टांत—एक बार मैं हरिद्वार से वापस पंजाब को जा रहा था, तो मेरे डिब्बे में एक बुढ़िया माता बैठी थी। गङ्गा स्नान करके घर को वापस जा रही थी, न जाने कितनी बार उसने गङ्गा में डुबकियां लगाई होंगी। माला उसके हाथ में थी, बड़ी तीव्रता से माला फेर रही थी और राम २ की रट भी लगा रही थी। इतने में एक स्टेशन आया गाड़ी ठहर गई, तो स्टेशन से एक माई ने जिसके सिर पर भार भी था; भीतर दाखिल होना चाहा और बुढ़िया को कहा "माई जी! यह मेरी गठड़ी तनिक अन्दर ले लेना" तो बुढ़िया ने झट कहा "जा! जा! यहां स्थान नहीं है"। मैं बैठा देख रहा था और विचार रहा था कि देखो! यह बुढ़िया गङ्गा स्नान करके आ रही है, माला भी फेर रही है, परन्तु इस का मन नहीं बदला, यह माला फेरना तो इस का केवल दिखावा ही है। तो इस प्रकार के भक्त जिनके मन में परिवर्तन न आये, वह पत्थर नाथ कहलाते हैं।

अङ्गोच्छा लाल भक्त—दूसरी प्रकार के भक्त अङ्गोच्छा लाल कहलाते हैं। जिस प्रकार स्नान के समय जब अङ्गोच्छा जल से सिञ्च जाता है तो धूप पर सुखाने के लिये लटका दिया जाता है। तो अङ्गोच्छे से जल के बिन्दु टप २ गिरते हैं और अङ्गोच्छा अपना सारा जल त्याग कर देता है तो लोभ की वायु और अभिमान की धूप से अकड़ जाता है और उसके अन्दर दुर्गन्ध भी आती है। इसी प्रकार के भक्त जो होते हैं वे सिद्धियां तो प्राप्त कर लेते हैं और एक २ सिद्धि से संसार के लोगों को लाभ भी पहुँचाते हैं परन्तु अपने स्वार्थ के लिये, लोभ और कमाई के लिये। जब धन सम्पत्ति उनके पास कुच्छ इकट्ठी हो जाती है तो सम्पत्ति की धूप उसकी सिद्धियों को सुखा देती है और अभिमान से वे अकड़ जाते हैं और दुर्गन्ध पैदा हो जाती है अर्थात् वे अपयश के भागी बन जाते हैं।

तीसरी प्रकार के भक्त नमक देव कहलाते हैं। जिस प्रकार नमक (लवण) को जल के घट में डाल दें तो वह अपना अस्तित्व खोकर सारे को लवणीय बना देगा और सारा जल नमकीन कहलायगा। अथवा जिस प्रकार मिश्री को जल में डालदें तो मिश्री अपने आकार को खोकर जल को मीठा बना देती है तो उसे मीठा जल कहते हैं। मीठा अथवा नमकीन पहले और जल पीछे। ऐसा भक्त जो परमात्मा में आत्म समर्पण करता है वह परमात्मवत् बन जाता है और पहले भक्त का नाम आता है पीछे भगवान् का। कबीर ने कहा—

कबीरा मन निर्मल भया ज्यूं गङ्गा का नीर।
पाछे पाछे हरि फिरें कहत कबीर कबीर॥

नमक अथवा मिश्री ने जिस प्रकार जल को अपना लिया, अपना भार घट को सौंप कर घट के भार को बढ़ा दिया। सारी जिम्मेदारी उस पर डाल दी। अब उसको जिस भी पात्र में डालो, वैसा ही उसका आकार हो जाएगा। लोटे मे लोटे का, गिलास में गिलास का,। ऐसे ही प्रभु भक्त वैसा ही रूप धारण कर लेता है:—

तदपश्यत् तदभवत् तदासीत् ।। य० ३२-१२।

प्रभु का साक्षात् करता हुआ वैसा ही हो जाता है।

जहां घट का भार बढ़ा, वहां मिश्री अथवा नमक की अपनी शक्ति भी बढ़ी। जितनी शक्ति के साथ उसका मेल होगा उतनी शक्ति उसके अन्दर आजाएगी। जैसे साईकल में वायु को भर देने से वायु का साईकल के साथ सम्बन्ध होता है। तो वह १०-१२ मील प्रति घण्टा की गति से जा सकता है। उसी वायु को मोटर के पहिये में भर दें तो तो गति ८० मील प्रति घण्टा तक बढ़ जाती है और वायुयान में तो उसी वायु की गति ४०० मील प्रति घण्टा हो जाती है। इसी प्रकार जब भक्त अपना सम्बन्ध देवी देवताओं के साथ जोड़ता है तो उसके अन्दर सीमित शक्ति ही आयगी परन्तु जब उसका सर्व शक्तिमान् और शक्तियों के पुञ्ज के साथ सम्बन्ध होगा तो उस की अपनी शक्ति असीमित सी हो जायगी। इस तीसरी प्रकार के भक्त ही संसार का कल्याण कर सकते हैं। महर्षि दयानन्द उसी श्रेणी के भक्त थे।

आत्म समर्पण का फल

आत्म समर्पण का लाभ तथा फल तो वेद ने स्वयं ही बता दिया कि उसकी सन्तान वेद वक्ता और सर्व सम्पत्ति सम्पन्न होती है, सहस्रों की पालन पोषण करने वाली होती है।

प्रभु की महिमा

सचमुच विचित्र है। कोई क्या वर्णन कर सकता है। कभी तो भगवान् अल्प कर्म का महान् फल प्रदान कर रहा है कभी अपनी विचित्र निर्माण कला से ही मनुष्य की बुद्धि को चकित कर रहा है। गर्भाशय के गुप्त स्थान में १६ कलाएं हैं जिनको चन्द्रमा का घर कहा गया है। यह तो निर्विवाद है कि उन कलाओं का चन्द्रमा के साथ संबंध है।

सुषुम्णा किरण और त्वष्टा प्राण

सूर्य की अनेकों किरणें हैं। हर एक किरण का नाम भी पृथक् २ है। यह और बात है कि हम मर्म को न समझें। इसी प्रकार शरीर के अन्दर कितनी नाड़ियां हैं, हर एक का पृथक् २ नाम है। साधारण जन तो नाड़ियों का नाम जानते नहीं, लोगों का ज्ञान इडा, पिङ्गला, सुषुम्णा तक ही सीमित है। डाक्टर वैद्य लोग इन से भी कुछ अधिक नाड़ियों का ज्ञान रखते हैं। और योगी तो डाक्टरों से भी अधिक ज्ञान रखते हैं। सूर्य की एक किरण का नाम सुषुम्णा है। शरीर के अन्दर भी एक सुषुम्णा नाड़ी है। ब्रह्माण्ड मे सुषुम्णा किरण और शरीर में सुषुम्णा नाड़ी विशेष महत्त्व रखती हैं। सुषुम्णा किरण न हों तो जीवों की उत्पत्ति रुक जाय, सुषुम्णा नाड़ी न हो तो योग की गति थम जाय। अस्तु, सुषुम्णा किरण सूर्य से चन्द्रमा में जाती है और चन्द्रमा को

प्रकाशित करती है, चन्द्रमा मे पूर्ण रूप से नही समाती, पात्र छोटा है, लौट कर पृथिवी पर आती है, यहा भी नही लेता है, वहा प्रकाश प्रदान करती हुई जल मे प्रविष्ट होती है वहा भी न समाकर [कुछ अंश रज वीर्य मैं आता है। एक सुषुम्णा किरण है जो चन्द्रमा और जल को शीतलता प्रदान करती है, इतनी कि देख २ कर आखें तृप्त नहीं होतीं। जब तक वह किरण सूर्य मे है तो उसके स्रोत की ओर ससार भर के प्राणी आख नही उठा सकते परन्तु जब चन्द्रमा अथवा जल मे प्रविष्ट करती है तो मस्तिष्क को तरोताजा कर देती है। पृथिवी पर सुषुम्णा का अंश हरियाली रूप मे प्रकट हो आह्लाद दे रहा है। रज वीर्य मे प्रविष्ट हो सन्तान रूप मे प्रदर्शित हो जीवन प्रद फल बन जाता है। इसी प्रकार भक्त के हृदय में जब सूर्य रूपी प्रभु की ज्योति आती है तो वह अन्दर न समाकर बाहिर आती है और उसके मुख के चहुं ओर तेजोमण्डल पैदा कर देती है, दर्शक उसको देख कर प्रसन्न होते हैं। यही किरण स्त्री के गर्भाशय के गुप्त भाग में वीर्य द्वारा दाखिल होती है।

स्त्री का शुक्ल पक्ष

स्त्री जब ऋतुमती होती है तो वह उसका शुक्ल पक्ष है इस लिए सोलह दिन ही गर्भाधान करने के लिये ऋषियों ने लिखे हैं चन्द्रकला ज्यों २ बढ़ती है, त्यों २ गर्भाधान के लिये उत्तरोत्तर उत्तम समय आता है। इसी शुक्ल पक्ष में ही स्त्री पुरुष के मेल से सन्तान हो सकती है, इसके उपरान्त नहीं। सत्रहवें दिन से स्त्री के रजस्वला होने तक जो भी स्त्री संग करेगा, वह वीर्य को नष्ट कर रहा ह

त्वष्टा प्राण

जीव जब गर्भ मे आता है तो बढ़ने लगता है। लोग प्रश्न करते हैं कि जब जीव बढ़ता है तो उसके अन्दर प्राण का आवागमन है अथवा नहीं। यदि नहीं तो वह बढ़ता कैसे है? यदि है तो वह मल मूत्र विसर्जन क्यों नहीं करता? इस का समाधान वेद ने स्वयं कर दिया। जीव के अन्दर प्राण है जिसका नाम त्वष्टा है, इसी त्वष्टा से उस का पालन पोषण होता तथा बढती होती है।

पूर्व जन्मों की याद

तो वह जीव सुषुम्णा किरण के प्रकाश द्वारा ही अपने पूर्व जन्मजन्मान्तरों को जानता है। निरुक्तकार की साक्षी इस बारे में उल्लेखनीय है—

नाना योनि सहस्राणि मया यान्युषितानि च।
मृतश्चाहं पुनर्जातो जातश्चाहं पुनर्मृत ॥ अ०१४

कि जिस समय बालक माता के गर्भ में होता है और उसे पूर्व नाना दुखी योनियों की याद आती है और उल्टा लटका हुआ पुकार करता है कि प्रभो! दया करके इस बार बाहर निकालो, अब आप का ही स्मरण करूंगा। गर्भ में बालक का सिर नीचे ही होता है। उस अवस्था में प्रभु देव अपनी दया शक्ति से उसको नम्रता का पाठ सिखाते हैं परन्तु जिस समय मनुष्य गर्भ से बाहर आता है तो वह प्रतिज्ञा भूल जाता है और संसार की वायु के स्पर्श करते ही अकड़ जाता है, अब सिर को ऊंचा कर लेता है। सुषुम्णा किरण का जीव के

अन्दर प्रविष्ट करने का एक प्रमाण यह है कि उस अवस्था में उसे सुख दु:ख का भान नहीं होता। जिस समय मनुष्य का सुषुप्ति की अवस्था होती है, गाढ़ निद्रा होती है, दु:ख दर्द का भान नहीं होता इसलिये योगी लोग अपनी आत्मा को समाधि अवस्था में सुषुम्णा में ही प्रविष्ट करते हैं और फिर उनको दु:ख दर्द का भान ही नहीं होता। वेद में भी इस का प्रमाण उपस्थित है देखिये —

अत्रा ह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम्।
इत्था चन्द्रमसो गृहे॥ ऋ० १।८४।१५

अर्थ —' अत्रा ह' यहां निश्चय से (त्वष्टु) समस्त संसार को गढ कर बनाने वाले सूर्य की (गो) किरण का (अपीच्यम्) कुछ सुप्त अंश ही (चन्द्रमसो गृहे) चन्द्रमा के घर मे (नाम) जाता है।

इस प्रकरण मे प्राण ही त्वष्टा है जो गर्भ गत पुरुष को नौ दस मास मे शनै शनै बनाता है। गर्भाशय का गुप्त भाग चन्द्रमा का घर है जो १६ कला युक्त है। काम-गृह का वाचक है जो क्रम से एक पक्ष में घटता और १४ दिन में बढ़ कर पुन: ऋतुकाल में वेला के समान उपस्थित है। उस स्थान पर भी सृष्टिकर्ता परमात्मा की ही यह शक्ति है जो गर्भ में भी गुप्त रूप से विद्यमान है। उस गर्भ में भी गति है। उसमें भी मुख्य प्राण आदित्य का ही अंश प्रसुप्त रूप में शनै शनै बढ़ता है।

अथवा त्वष्टा पुरुष को कहते हैं पुरुष का वीर्यांश ही गर्भ आशय में जाता है जैसा कि उपनिषत्कारों का मत है।

'आदित्य' को उपनिषत्कारों ने 'गौ' का नाम भी दिया है। उसकी एक रश्मि चन्द्रमा की ओर जाकर प्रकाश करती है।

देखिये ऐतरेय—अध्याय ७, मन्त्र १ ६॥ और और यजुर्वेद १८ ४० मे भी सुषुम्णा को 'गौ' कहा है।

यह किरण ही जीव को गर्भाशय मे छोड़ती है इसके लिए देखिये —

वायु पुनातु सविता पुनात्वग्नेर्भ्राजसा सूर्य्यस्य वर्चसा। विमुच्यन्तामुस्रिया॥ यजु० १५।३।

अर्थ— हे मनुष्यो! तुम (वायु) पवन (अग्ने) बिजली की (भ्राजसा) दीप्ति से (सूर्य्यस्य) सूर्य के (वर्चसा) ते जन हम लोगों को (पुनातु) पवित्र करे, (सविता) सूर्य्य (पुनातु) पवित्र करे (उस्रिया) किरण (मुच्यन्ताम्) छोड़े।

भावार्थ— जब जीव शरीर को छोड के विद्युत् सूर्य्य के प्रकाश और वायु आदि को प्राप्त होकर जाते हैं और गर्भ मे प्रवेश करते है तब किरण उनको छोड देती है। तो पाठकगण—इतने से हमारा यही दिखाना ही अभीष्ट था कि उस प्रभु देव की महिमा तथा लीला कैसी विचित्र है। वह "मिषतो वशी" है। समस्त संसार को उसी ने वश मे किया हुआ है। उसी की शरण मे जाने से अमृत सुख मिलेगा अन्यथा नहीं। 'यस्य छायाऽमृत यस्य मृत्यु जिसका आश्रय लेना ही मोक्ष सुखदायक है, जिससे विमुख होना मृत्यु आदि महान दु:खों का कारण है। अत आवो प्यारे भाइयो आवो। यदि पाप और निन्दित कर्मो से बचना है तो उसी महान् पिता की चरण शरण में आओ जिसका कि यह सब पसारा है। प्रभुदेव हमें बुद्धि और शक्ति प्रदान करें कि हम उसकी कल्याण वाणी के मर्म को समझते हुवे जीवन में घटा सकें और जीवन को सफल बना सकें।

ओ३म् शम्

अध्यात्मसुधा
जिज्ञासुओं के प्रश्नों के उत्तर

[हमारी प्रार्थना पर परमश्रद्धेय पूज्यपाद महात्मा प्रभुआश्रित जी ने 'सार्वदेशिक' के लिये आध्यात्मिक विषयों पर लेख लिखने की कृपा की थी। वे लेख 'सार्वदेशिक' के फर्वरी और मार्च के अङ्कों में प्रकाशित हुये। उनके सम्बन्ध में श्री संसारचन्द्र जी नामक नई देहली निवासी सज्जन ने पूज्य महात्मा जी को जो पत्र लिखा और उसका उन्होंने जो संक्षिप्त उत्तर दिया उसे हम जिज्ञासुओं के लाभार्थ प्रकाशित कर रहे हैं। आशा है अध्यात्ममार्ग के पथिक उस से लाभ उठाएंगे।

सम्पादक सा० दे०]

१६५३ जैन मन्दिर
राजा बाजार नई देहली

श्री पूज्य महात्मा जी

७-४-५१

सादर नमस्ते

आपके दोनों लेख "सार्वदेशिक" पत्रिका में पढ़े। कुछ जिज्ञासा हुई उसके निवारणार्थ पत्र आपकी सेवा मे आया है आशा है कि आप पत्रोत्तर अवश्य देंगे।

१ पंच महायज्ञों को किस प्रकार से करना चाहिये कि उससे पूर्ण लाभ प्राप्त हो?

२ प्राणायाम विधि पूर्वक किस प्रकार करना चाहिये कि बुद्धि सूक्ष्म और बुद्धि के ऊपर से अस्वच्छ आवरण दूर हो। रेचक, पूरक, कुम्भक कितनी २ देर और कौन पूर्व कौन उपरान्त? प्राणायाम करने का पूर्ण विवरण बताने का कष्ट करें कि पूर्ण लाभ प्राप्त हो।

३. आपने लिखा भी है कि गायत्री मंत्र को विधि पूर्वक जप करने से सफलता प्राप्त होती है। अतः गायत्री मंत्र को किस प्रकार, विधि क्या है और कैसे करनी चाहिये इन पर प्रकाश डाल कर समझाने का कष्ट करें ताकि उनसे लाभ प्राप्त किया जा सके और आनन्द प्राप्त हो।

भवदीय
संसार चन्द्

प्रश्नों का उत्तर

प्रश्न १—पञ्च महायज्ञों को किस प्रकार करना चाहिये कि जिससे पूर्ण लाभ हो।

उत्तर—विधि तो पुस्तकों में लिखी है, इनके करने से अन्त करण की शुद्धि, और आत्मिक उन्नति तब हो सकती है, जब तप और त्याग की भावना से किये जाएं, इन्द्रिय संयम और चित्त की एकाग्रता इसमे आवश्यक समझी जावे।

इन पञ्चमहायज्ञों मे ब्रह्म यज्ञ मूल है, और शेष चार यज्ञ उसके सफल बनाने के लिये आवश्यक अंग है। ब्रह्म यज्ञ का रूप बाहर से अन्दर की ओर और बाकी चार का अन्दर से बाहर की ओर फैलने का है।

प्रश्न २-प्राणायाम विधि पूर्वक किस प्रकार करना चाहिये कि बुद्धि सूक्ष्म और बुद्धि के ऊपर से

अस्वच्छ आवरण दूर हो। रेचक—पूरक कुम्भक कितनी २ देर और कौन पूर्व और कौन उपरान्त प्राणायाम करने का पूर्ण विधान बताने का कष्ट करें कि पूर्ण लाभ प्राप्त हो।

उत्तर—प्राणायाम सम्बन्धी विधि भी कई एक प्रसिद्ध महानुभाव अभ्यासी विद्वानों ने लिखी हैं। चतुर बुद्धि के संस्कारी जन तो उन को पढ़कर अपने अभ्यान्तर के संस्कारों से स्वयं लाभ उठा सकते हैं। परन्तु साधारण जन को किसी अभ्यासी योगी से सीख कर करना चाहिये और उसकी निगरानी मे समय लगाकर सीखना और करना चाहिये। वरना यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है।

(सुने सुनाये जो करे योग—काय छिजे (क्षीण) बढ़ूचे रोग) इस कार्य मे ब्रह्मचर्य व्रत की अति आवश्यकता होती है। मनुष्य अन्दर और बाहर से जकड़ा हुआ है। बाहर तो विषयों से और अन्दर वासनाओं से। प्राणायाम ऐसा रत्न है कि जो दोनों को अपने वश में करा देता है इसमें योग दर्शन का सूत्र है—

"स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमि"

दृढभूमि अमल करने से होती है। उतावली और विनोद भाव से (शौकिया करने) से नहीं।

रेचक से पूरक आधा और कुम्भक दुगुना होना चाहिये। या पूरक से रेचक दुगुना और कुम्भक चौगुना होना चाहिये। मगर रेचक करते समय पहला रेचक तो बहुत जोर से करना चाहिये। इसके बाद जितनी बार भी रेचक होता है नितान्त धीरे २ कि आवाज न सुनाई दे। इसमें हठ से कुम्भक न करना चाहिये। रेचक मे मूलबन्ध-उड्डियान बन्ध और जिह्वा का उलटना बहुत जरूरी है। बन्ध लगाए बिना लाभ नहीं होता। गुदा को ऊपर सुकेड़ने का नाम मूलबन्ध है। और पेट को पीछे पीठ की तरफ सुकेड़ कर ले आने का नाम उड्डियान बन्ध है।

एक और बन्ध भी है जिसे जालन्धर बन्ध कहते हैं। जो कुम्भक के समय ठोडी को विशुद्धि (कंठस्थ) चक्र में लगाने को कहते हैं।

इन तीन बन्धों के लगाने से प्राणायाम की सिद्धि शीघ्र होती है। शीघ्र से तात्पर्य तत्काल *का नहीं, बल्कि जितना समय साधारण रीति से प्राणायाम करने मे लगता है उससे बहुत कम* समय मे इसकी सिद्धि हो जाती है।

पुस्तकों मे लिखी हुई बातों को बार २ दुहराने से किसी का लाभ नहीं, जितना क्रियात्मक रूप से स्वयं करने से लाभ होता है। इसलिये जिसे प्राणायाम का शौक हो उसे किसी प्रसिद्ध योगी वा अभ्यासी को ढूंढ कर अपना काम सिद्ध करना चाहिये। और उसके निरीक्षण में अपना जीवन प्रोग्राम बनाना चाहिये। यही अच्छा उपाय है।

प्रश्न २—गायत्री मन्त्र को विधिपूर्वक जाप करने से सफलता प्राप्त होती है अतः गायत्री मन्त्र की किस प्रकार विधि है और कैसे करना चाहिये ?

उत्तर—गायत्री मंत्र की विधि भी पुस्तकों में लिखी है। इसके जपने का प्रकार भिन्न भिन्न है।

जितनी जितनी किसी की योग्यता हो और योग्यता के साथ हो उद्देश्य।

जैसे प्रथम कक्षा के विद्यार्थी को कहा जावे कि तू पाठ को दिल में याद कर एकान्त मे तो वह नही कर सकेगा उसे तो और बच्चों के साथ मिल कर जोर जोर से उच्चारण करने में रस आवेगा। और पाठ भी याद हो जावेगा। शौक बढेगा और अगर बी० ए० कक्षा वाले को कहें कि तू जोर जोर से पढा कर तो उसे घबराहट होगा उसको निरन्तर शान्त एकान्त चाहिये और वह दिल मे एकाग्र वृत्ति से पढेगा तो उसके पल्ले कुछ पडेगा वरना नहीं।

गायत्री का वाचिक जप नवाभ्यासियों के लिये होता है। उपांशु वह करे जो बढ़ गये और मानसिक वह करें जो और रूढ गये।

गायत्री से ध्यान और धारणा भी होती है। "भर्गो देवस्य धीमहि" का अर्थ है ध्यान और धारणा। कुम्भक से गायत्री का जाप बहुत लाभदायक होता है। यह मन्त्र आत्मसमर्पण का है। अन्तिम अवस्था इस मन्त्र की समाधि का रूप है।

जो लोग केवल जप करना चाहें उनके लिये सीधी बात है कि वह माला ले कर करे। या हाथ की अंगुलियों पर या समय निश्चित कर लेवे आंखें मूंद लेवें आसन लगा लेवें एकान्त स्थान ढूंढ लें।

हां जिन्होंने इसे उपासना का रूप बनाना हो उनको पुनः कई विशेष नियमों का पालन करना होगा। इस प्रयोग की भी श्रेणी और योग्यतानुसार विधि है। कि कसे कुम्भक से कैसे धारणा या ध्यान से अमल करे। जैसे योग मे वृत्ति को किसी विशेष स्थान पर एकाग्र किया जाता है इसका भी वही तरीका है सो वह सन्मुख सीखने से सम्बन्ध रखता है।

किसी भाषा का ज्ञान करने के लिये एक चतुर बुद्धि मनुष्य किसी एक भाषा को जानकर दूर की भाषाओं का ज्ञान पुस्तकों की सहायता से प्राप्त कर सकता है। परन्तु जो वैज्ञानिक विद्या होगी उसे तो क्रियात्मक रूप से सीखना पडेगा।

एक बी० ए० एम० ए० अगर लोहा या लकडी का काम जानना चाहे तो उसे पुस्तक प्रारम्भ में इतना लाभ नहीं देगी जितनी शुरु मे उसे उस्ताद से नियम पूर्वक सीखने से सफलता होगी।

प्रभु आश्रित

राष्ट्रभाषा हिन्दी और दक्षिण भारत

[लेखक—प्रोफेसर रामप्रात ना रगु गुन्टूर]

लगभग पच्चीस तीस वर्ष पहले पूज्य बापू हिन्दी का अमर ज्योति लेकर दक्षिण को पधारे थे। उसे यह ज्योति कोई अपरिचित सी नहीं लगी। उसकी चमक में वह अपनी चिरन्तन आत्मा का जिसके ऊपर अंग्रेजी भाषा का मल जम गई थी, दर्शन करने लगा। दक्षिण के खास कर आंध्र देश के घर घर ने उसका स्वागत किया। देखते देखते उस दिव्य ज्योति ने १५ वर्षों के अल्प समय मे समस्त दक्षिण का अपार स्नेह प्राप्त कर,वहा की जनता के हृदयो मे अपने लिये स्थायी रूप से स्थान बना लिया है। उसकी लोकप्रियता का एकमात्र कारण उसमे प्रयुक्त शुद्ध देशी सस्कृत घृत का परिमल ही है जिससे देश का कोना कोना एक प्रकार की पवित्रता का अनुभव कर बैठा। लगातार जलते रहने से इस बत्ती के ऊपर भी मैल (कारबन) जम गया है, उस मल को यदि समय पर न हटाया जाय तो वह बढता ही जायगा और बत्ती की चमक मद पड जायगी। हिंदी की उस ज्योति पर हिन्दुस्तानी के रूप मे वह 'कार बन" सन १९४६ ई० से जमता आ रहा है। उसे हटाकर बत्ती उकसाने की जिम्मेदारी इस समय प्रत्येक दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचारक व प्रेमी के कन्धो पर है।

मदरास प्रान्त की चार भाषाओं मे से एक तामिल को छोड बाकी तीनों अत्यन्त संस्कृतनिष्ठ हैं। ६० से लेकर ८५ प्रतिशत तक सस्कृत के शब्द इन मे पाये जाते हैं। हिन्दी भी इन्हीं की तरह संस्कृतनिष्ठ है। इसी कारण से दक्षिण भारत वासियों ने बिना किसी भाच सकोच के तुरन्त उसे अपनाया था। इस भाषा में काफी लोग योग्यता प्राप्त कर चुके हैं।

१९४६ से भारत के सभी प्रान्तों को एक सूत्र मे गूँथनेवाली हिन्दी का उन्मुक्त गगन मेघाच्छन्न सा (दक्षिण मे) होने लगा। राष्ट्र भाषा का क्षेत्र राजनीति के दावपेच का अखाडा बन गया। जिन्ना साहब की जमात को खुश करने के लिये गाधी जी ने अपनी पहली नीति राष्ट्र भाषा हिन्दी और राष्ट्रलिपि नागरी—मे काफी सशोधन कर दिया। अपना पहला नारा--"एक राष्ट्र भाषा हिन्दी हो एक हृदय हो भारत जननी!" छोड बैठे। मदरास मे हिन्दी की रजत जयती के साथ ही साथ उसे काले पानी का हुक्म भी दिया गया है। हिन्दी प्रचार सभा के 'साईनबोर्ड' रातों रात बदले! पहले निकले कानो से बाद को उठने वाले सींग जोरदार होते हैं, वाली तेलुगु कहावत ठीक निकली। अपने जन्म स्थान व जन्म क्रम का पता बताने मे असमर्थ एव लज्जित हिन्दुस्तानी रानी बना दी गई। वेश्या पुत्री कुलवधू का हक उडा ले बैठी।

अब हम देखें कि हिन्दुस्तानी--जो कि वास्तव मे उर्दू का नामातर मात्र है—का कौन सा इतिहास रहा। अनेक भाषा विद् भाषा शास्त्र एवं

विद्वान उद्भट पंडित डाक्टर सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने अपने एक अध्यक्ष भाषण में (कराची में) इस प्रकार हिन्दुस्तानी के जन्म का 'वाकया' प्रकट किया —

'पंजाब और पछाह से आकर दक्षिण में ईस्वी १४ वीं शती से बसे हुए मुसलमानों ने १५ वीं शती में एक नई साहित्यिक भाषा की नींव डाली जो पुष्ट होकर 'दखनी' बनी। इसे लिखने के लिये शुरू से ही (जहां तक दलीलें मिली) फारसी या अरबी लिपि इस्तेमाल करते थे। इस कारण इसे मुसलमानों ने 'उर्दू' पुकारा है। पर 'दखनी' में प्रयुक्त शब्द अविकृतया शुद्ध हिन्दी और संस्कृत के शब्द ही होते थे + + + दक्षिण में उत्तर भारत के प्राचीन भारतीय अर्थात् हिन्दी साहित्य शैली से नियुक्त हो जाने के कारण, और यह अरबी लिपि में लिखी जाती थी, इस कारण भी ईस्वी १६ वीं सदी से 'दखनी' में अरबी फारसी शब्दों का कुछ अधिक प्रयोग होने लगा। + + + + पर इसकी शब्दावली ईस्वी १८वीं शती तक मुख्यतया भारतीय ही थी। १७ वीं शती के चतुर्थ चरण में दिल्ली से मुगल लश्कर द्वारा लाई हुई खड़ी बोली जो कि दक्षिण में, 'जबान ए-उर्दू -ए मु 'अल्ला', और हिन्दुस्तानी कहलाने लगी—इस पर 'दखनी' का जोर पड़ने लगा। और कवि वली औरंगाबादी ईस्वी १७२० के बाद दिल्ली में आकर जब बसे तब से दिल्ली की खड़ी बोली 'उर्दू' साहित्य का आधार बनी। वली की भाषा देखिये उस में शुद्ध ठेठ हिन्दी शब्दों की कुछ कमी नहीं है, + + + + मुसलमान राजशक्ति का ह्रास होने लगा + + + + फ़ारसी के पढ़े लिखे शरीफ़ और खानदानी मुसलमान फारसी और अरबी के शब्दों को चुन चुन कर एक नया बिलौर का प्रसाद बनाने लगे जो 'उर्दू' काव्य साहित्य के रूप में प्रकट हुआ + + + !"

इस उद्धरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दुस्तानी के नाम से चलने वाली 'उर्दू' की उम्र मुश्किल से दो सदियों की है, यह भाषा एक दम बनावटी है, जिसे दक्षिण के चंद मुसलमानों ने अरबी और फारसी के शब्दों की, खड़ी बोली हिन्दी के साथ 'नापाक मिलावट' करके एक नये साँचे में ढाल लिया है। उस समय साधारण मुसलमानों की भाषा तो हिन्दी ही रही। मौलवियों को 'दीन' का प्रचार करते समय हिन्दी का ही सहारा लेना पड़ता था। इस तथ्य को अनुभव कर ईस्वी १८ वीं शती में "गरीब" उपनाम के किसी मुसलमान कवि ने अपनी "तारीख गरीबी" नाम की पुस्तक में हिन्दी के प्रति खानदानी मुसलमानों की बढ़ती हुई उदारता को एक दम अनुचित कहा है 'गरीब' का कहना है।

हिन्दी पर ना मारो ताना—
सभी बतावें हिन्दी माना।
यह जो है कुरान खुदा का,
हिन्दी करै बयान सदा का।
लोगो को जब खोल बतावै,
हिन्दी में कह कर समझावैं।
जिन लोगो में नबी जो आया,
उनकी बोली सो बतलाया।
हिन्दी 'मेहदी' में फरमाई,
'ख्ंदमीर' के मुँह पर आई।

कई दोहरे साखी बात,
बोले खोल सुधारक जात।
मियाँ 'मुस्तफा ने' भी कही
और किसी की फिर क्या रही।"
"अनुराग बाँसुरी पृष्ठ ३,४।"

मुगल राज्य को हस्तगत कर लेने के बाद अंग्रेजों ने उर्दू को अदालतों और सरकारी कामों में स्थान दिया था, जिससे उस भाषा की चाल अस्वाभाविक रूप से बढ़ी। यही कारण है कि आज हमारी प्रांतीय भाषाओं मे भी अदालती व्यवहार से सबंध रखने वाले कई 'उर्दू' के शब्द मिलते हैं। भाषा के संबध मे भी अंग्रेजी की वही नीति—फूट डाल कर शासन करने की—रही जैसी कि शासन के सबध मे रही।

उस दुष्ट नीति—हिन्दुस्तानी यानी उर्दू और हिन्दी—के कड़वे परिणाम आज भी हम भोग रहे है। इस 'वाक्या' को न समझने की कोशिश कर आज कुछ हिन्दुस्तान के 'हिमायती' प्रांतीय भाषाओ मे, उर्दू शब्दो के अस्तित्व को "भाषा का विकास" कहने का दम भरते है। उन शब्दो को ज्यो के त्यो अपनाने की सिफारिश तक करते है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अंग्रेजी की ही कृपा से आत्मवचना तथा दूसरो को चक्कर मे डालने की नीयत हिंदुस्तानी के समर्थको मे आ गई है। हमने अंग्रेजों के शासन को, बावजूद उसकी अच्छाइयों के, अपनी पवित्र भूमि से ६० वर्ष की तपस्या एव सग्राम के बाद हटा दिया है। उससे हम राजनैतिक स्वतत्रता मात्र प्राप्त कर चुके है। किन्तु अभी उससे भी अधिक महत्त्व रखने वाली भाषा विषयक स्वतत्रता की लड़ाई लड़नी है। यह कम परिताप की बात नही है कि इस लड़ाई मे हमारा विरोध हमारे ही भाई कर रहे हैं।

'हिन्दुस्तानी' के समर्थकों का हिन्दी पर यह आक्षेप है कि वह सस्कृतनिष्ठ है, अत राष्ट्रभाषा के आसन पर बैठने के लिये अयोग्य है। किन्तु ऐसे महानुभावों से मैं यह प्रश्न करूँगा कि क्या उसका सस्कृतनिष्ठ रहना कोई अपराध या पाप है? फिर भारतवर्ष की कौनसी भाषा सस्कृतनिष्ठ नहीं है? सेतु से शीताचल तक का प्रत्येक प्रांत वासी साधारण संस्कृत शब्दो को जिस सुगमता से समझ सकता है, और ऐसे शब्दों के श्रवण से उसके हृदय मे आत्मीयता का जो स्पदन उठता है, वह हिन्दुस्तानी यानी उर्दू अरबी शब्दों के द्वारा सम्भव नहीं है। यदि हिन्द की राष्ट्रभाषा की समस्या हल करते समय प्रांतीय भाषाओं के महत्त्व का ध्यान रखना है तो निस्सदेह न्याय हिन्दी ही की 'तरफदारी' करेगा। यहाँ के निवासी चाहे वे उत्तर के हो अथवा दक्षिण के, उस 'जबान' का समर्थन कदापि नही कर सकेंगे जो इधर के किसी भी प्रांत की बोलचाल की भाषा कभी नही रही, जिसका शब्द जाल एक दम विदेशी हो, अत उनके लिये नितांत अपरिचित लगता हो। ऐसे अस्वाभाविक प्रयत्नो से भारत की सस्कृति का भविष्य संकट मे पड जायगा। भारत की राष्ट्रभाषा के लिए 'उर्दू' शब्दो की यह अननुकूलता उस स्थिति मे और भी बढ़ जायगी जब कि उन्हें—भारतीयों को—अपनी भाषाओ के निकट सम्बन्ध रखने वाली बहुस्थान व्याप्त बहुसंख्यक प्रजा से बोली जाने वाली एक स्वदेशी भाषा—हिन्दी—की विद्यमानता और प्रचार साफ दीखते हो। जिस 'जबान' को अभी तक कोई

व्यवस्थित रूप नही बना है, जिसका भारतीय संस्कृति के साथ कोई सबध नही है, जिसके अल्प इतिहास के पन्ने अंग्रेजी की कूटनीति के धब्बों से काले पडे हो, उसको प्रधानता दे सकना भारतवासियों के लिये कितना असभव हो जाता है यह भी किसी के लिए अविदित नहीं है।

अपने पक्ष का समर्थन करने के लिये हिन्दुस्तानी के पक्षपाती दूसरा एक निराला और बेढगा तक प्रस्तुत करते है। वह यो है—'दक्षिण व दूसरे प्रातों मे यह डर बना हुआ है कि उत्तर के नेता अपनी भाषा व साहित्य को दूसरो पर लादना चाहते है। इस दबाव से उनको एक नई भाषा सीखनी पडेगी जो कि उनकी भाषा से भिन्न और सीखने मे मुश्किल है। राष्ट्रभाषा को बनाने मे उनका कोई हाथ नही रहेगा। क्या यह बात सरासर झूठ नहीं है? एक दक्षिणी और अहिन्दी-भाषा भाषी होने के नाते मुझे भी दक्षिण की जनता के मनस्तत्व का अध्ययन करने का अवकाश मिला है। दक्षिण के लोगो को यदि किसी भाषा के सीखने मे कठिनाई होगी अथवा कोई नई भाषा सी लगेगी तो वह हिन्दुस्तानी ही होगी जिसमे ऊपर दिखाये गए अवगुण सभी विद्यमान है। हमनेहिन्दी को तो सांस्कृतिक एवं साहित्यिक आदान प्रदान का एक सुन्दर साधन बना लिया है। हिन्दी और तेलुगु आदि मा ह्त्यो के तुलनात्मक ग्रन्थ हर माल तैयार हो रहे है जिनका स्वागत हृदय से हिन्दी जगत् कर रहा है। इस तथ्य का अनुभव कम से कम मुझे तो है। जब तक राष्ट्रभाषा का स्वरूप संस्कृतनिष्ठ रहेगा तभी तक एक दक्षिणी का उसके 'बनाने और बढ़ाने' मे हर तरह का हाथ रहेगा। यदि उसे दुर्भाग्य से 'हिन्दुस्तानी' माना जायगा तो वास्तव मे ऐसी कई दिक्कतें उठ खडी होगी।

दक्षिण के लोग अपने मस्तिष्क की उर्वरता [illegible] प्रसिद्ध है। वे जब कि अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा मे ही अन्य प्रातवालों से बाजी मार ले गये है—तब हिन्दी मे—एक पड़ोस की ही भाषा मे—वे पिछड जाएंगे, यह कोई तर्क ही नहीं रह जाता। दूसरो को (हिन्दी वालों को) बिना व्यय प्रयास के सहज सुविधा यदि उस भाषा मे मिल भी जाती हो,तो उसके लिये ईर्ष्या कर बैठे, ऐसी सकीर्णता और स्वार्थपरता, कम से कम दक्षिण भारतवासियो मे नहीं है।

संस्कृत के प्रचार के धार्मिक क्षेत्र तक ही सीमित रहने के एक भ्रामक विचार मे कुछ सज्जन पडे हुए है। किंतु यह अशुद्ध है। अन्य क्षेत्रो मे भी वही इस समय राज्य कर रही है, किन्तु परोक्ष रूप से जिस प्रकार 'बीज अपनी आत्मा का बटवारा वृक्ष की असंख्य शाखाओं, पत्तो, फूलो तथा फलो मे कर देता है, उसी प्रकार, संस्कृत-बीज ही से अनुप्राणित होकर आज भारत की असख्य भाषाये पनप रही है। उनमे शक्ति का सतुलित सचालन करने वाला आलवाल वही अमर भाषा है। उसकी सृजनात्मकता पश्चिमी [illegible] वायुओं के प्रकोप से थोडे से समय के लिये कुण्ठित रह गई है। [illegible] उसकी शक्ति मे और किसी भी तरह का अन्तर नही आ गया है। इस 'वाकया' को भूलना भी उलटी गंगा बहाना है। अब रह गई 'हिन्दुस्तानी की अत कालीन (Interim) अनावश्यक, अस्वाभाविक

और अहितकर वृद्धि को रोकने के प्रयत्न करने की बात, जिसे उलटी गंगा बहाना कहा जाता है। अगर यही माना जाय तो हम उससे भी जबर्दस्त गंगा की धारा उलट चुके हैं। अंग्रेजों का हुकूमत बही गगा रही जिसको छाया हिन्दुस्तानी के रूप मे अब भी हम पर सवार है। इस विष को उतारे बिना राष्ट्र की स्वतन्त्रता स्वस्थ नहीं रह सकती है।

भारत की 'जनता की भाषाओ' पर संस्कृत की जो अमिट छाप लगी है, उसका भव्य इतिहास जानने के लिये हमें अपनी दृष्टि दूर अतीत की ओर दौड़ानी पड़ती है। प्राकृत, पाली अपभ्रंश मे संस्कृत शब्दो की बहुलता की बात सर्वमान्य है ही। मुगलो के शासन काल मे और उसके भी पूर्व 'बुत शिकन' महमूद गजनवी के समय मे संस्कृत ने शासन सम्बन्धी व्यवहारों मे काफी हाथ बंटाया था, इसके प्रबल ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं। तब के कट्टर मुसलमान भी भाषा के विषय मे आज की तरह असहिष्णु नहीं रहे।

"सुलतान महमूद गजनवी ने अपनी भारतीय जनता के लिये चाँदी का सिक्का चलाया था जिस मे भारतीय लिपि और संस्कृत भाषा मे मुसलमानो के धर्मबीज कलमा मन्त्र का अनुवाद था'—'अव्यक्तम् एकम् मुहम्मद अवतार' और बादशाह का नाम तारीख आदि भी यों दिये गये थे—'नृपति श्रीमहमूद। अयं टंक महमूद पुरे घट्टे आहत'। तारीख मे हिजरी शब्द का भी संस्कृत अनुवाद किया गया था, 'जिनायन वर्ष' अर्थात् नबी के अयन—पलायन का वर्ष। खुद बादशाह औरङ्गजेब ने दो प्रकार के आम के नाम रखने के लिये अपने पुत्र द्वारा अनुरुद्ध होकर ये नाम दिये थे—'सुधारस', और 'रसना-विलास'।[१]" बादशाह अकबर के जमाने मे हिन्दी और संस्कृत को जो प्रोत्साहन मिला था वह हिन्दी साहित्य का इतिहास पढ़े हुये पण्डितों के लिये अविदित नहीं है। हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ अब्दुर्रहीम खानखाना की कविता-मंजरी संस्कृत शब्द गन्ध से सुवासित है। यही क्यों स्वय अकबर बादशाह संस्कृतनिष्ठ हिन्दी मे कविता करते थे। इनके अलावा रसखान, रसलीन, ताज वगैरह कई मुसलमान पुरुष तथा स्त्रियाँ अपनी सरस रचनाओ के द्वारा हिन्दी की शोभा बढ़ा चुके थे।

हमे ऐसे लोगो और ऐसी 'जबान' से कुछ नहीं सीखने की आवश्यकता है जिनकी समस्त शक्तियाँ अन्य जातियो को नैतिक पतन की ओर ले जाकर अपने क्रीतदास बनाने ही मे केंद्रित रहा करते है। यदि आज अंग्रेजी, ससार की सर्वश्रेष्ठ भाषा बन बैठी है तो वह उसकी उदारता का परिणाम नहीं है, किन्तु उसके साम्राज्यवादी अनीति का ही नतीजा है। अपने सभी उपनिवेशों एव सामंत देशो मे अंग्रेजो ने इस 'विष वल्ली' को रोपा था जो आज फूलती, फलती नजर आ रही है। अंग्रेजों को, साम्राज्य बढ़ाने की तृष्णा ही उनकी भाषा अंग्रेजी की भी रही है। अपने साम्राज्य को स्थायी बनाने का एक साधन मात्र उन्होंने उसे बना लिया है। यही इस जबान की सर्वव्यापकता और सर्वश्रेष्ठता का मर्म है। अगर आप दाक्षिणात्यों मे 'दक्षिणात्यों पर आर्यों की हुकूमत'

[१] डाक्टर सुनीतिकुमार चटर्जी, का भाषण

के नारे सुनाई दे रहे हैं तो यह काम भी कुछ राष्ट्र की विनाशात्मक शक्तियों तथा स्वार्थी व्यक्तियों की प्रेरणा का परिणाम मात्र है, जिन्हें भारत की सरकार अल्प समय ही मे कुचल सकती है।

संसार मे हर एक स्वतन्त्र राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्र भाषा होती है, जिसमें उस भूखंड की विशिष्ट संस्कृति प्रतिबिम्बित रहती है। वह भाषा बनाई नहीं जाती है, किन्तु अनादि समय से स्वयं बनती चली आती है। हिन्दुस्तानीवादी नये सिरे से राष्ट्र भाषा को 'बनाने' की बात जो उठाते है, वही पर उनके तर्क का खोखलापन प्रकट होता है, राष्ट्र के साथ-साथ उनकी भाषाये भी उसी प्रकार लगी रहती है, जिस प्रकार शरीर के साथ छाया। प्राय देशो के नामो के अनुरूप, वे भी व्यवहृत होती हैं—जर्मनी की भाषा जर्मन, इंगलैंड की भाषा इंग्लिश आदि। उसी प्रकार 'हिन्द' की भाषा भी 'हिन्दी' अथवा 'हिन्दवी' है। इस भाषा का, इधर की भूमि के साथ चोली दामन का नाता है। यह तो रातो रात, ठोक पीट बनाई नही गई है जैसा कि 'हिन्दुस्तानी' के बारे मे हम ऊपर देख चुके है। वास्तव मे हिन्दी 'उर्दू' का अन्तर न समझनेवालो को चक्कर में डाल कर अपना उल्लू सीधा बनाने के लिये 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग हो रहा है। विषय की पुष्टि मे हम अपनी ओर से कुछ न कह कर उर्दू के प्रकाण्ड पण्डित लब्धक प्रवर श्री चन्द्रबली पांडे के गवेषणात्मक उद्धरण नीचे देते है। श्री पांडे जी हिन्दुस्तानी के कट्टर भक्तो और प्रचारकों से ये प्रश्न करते है—

"क्या आप जानते है ?

'उर्दू' के आदि आचार्य प्रसिद्ध कवि इंशा अल्लाखां का स्वयं स्पष्ट कहना है कि—

'शाहजहानाबाद के खुशबयानों (शिष्ट वक्ताओं) ने मुत्तफिक (सहमत) हो कर (परिगणित) जबानो से अच्छे-अच्छे लफ्ज निकाले और बाज इबारतों (कतिपय वाक्यों) और अलफाज मे तसर्रुफ (परिवर्तन) करके, और जबानो से अलग एक जबान पैदा की जिसका नाम 'उर्दू' रखा।

(दरिया-ए लताफत, सन् १८०८ ई०) अंजुमन तरक्की उर्दू दिल्ली सन् १९३५ पृष्ठ २।

क्या आप जानते हैं ?

'उर्दू' के प्रमुख तबलीगी नेता ख्वाजा हसन निजामी देहलवी साहब आप ही सब को समझाते है।

'यह हिन्दी जबान ममालिक मुत्तहदा (यू० पी०) अवध और रुहेलखण्ड और सूबा बिहार और सूबा सी० पी० और हिन्दुओं की अकसर देशी रियासतो मे मुरव्विज (प्रचलित) है। गोया बङ्गाली और बरमी और गुजराती और मरहठी वगैरह सब हिन्दुस्तानी जबानों से ज्यादह रिवाज 'हिन्दी यानी नागरी' जबान की है।' (कुरान मजीद के हिन्दी अनुवाद की भूमिका सन् १९१६ ई०)

क्या आप जानते है ?

मुसलिम साहित्य के प्रकाण्ड पण्डित, देश भक्त अल्लामा सैयद सुलमान साहब नदवी का खुला निर्देश है कि—

'हम अपने बदगुमान (भ्रान्त) दोस्तो को खबर (सचेत) करना चाहते है कि यह लफ्ज

'हिन्दुस्तानी' मुसलमानो के इसरार (हठ) से और मुसलमानों की तिफ्ल तसल्ली (सुख सन्तोष) के लिये रखा गया है, और इससे मुराद (इष्ट) हमारी वही जबान है जो हमारी बोलचाल मे है। हमको जो शिकायत है वह यह है कि हिन्दी और हिन्दुस्तानी को हममानी (एकार्थवाची) और मुरादिफ (पर्याय) क्यो ठहराया गया है ?

'नुकूशे सुलेमानी दारुल मुसन्नफीन आजम गढ़ (सन् १९३८ पृष्ठ १०६।)"१

अब रह गई राष्ट्रभाषा (हिन्दी) से व्यापार शिक्षा, शासन विधान, अन्यान्य दैनिक जीवन स संबद्ध विषयो मे पारिभाष शब्दावली का चयन करने की बात जब कि हिन्दुस्तानी के 'हिमायती राष्ट्रभाषा का स्वरूप निर्णय करने के विषय को लेकर माथा पच्ची कर ही रहे है अभी उनकी प्रगति 'तज्वीजों' तक ही सीमित रह गई है । प्रयाग के हिन्दी परिषद् के कर्मठ राष्ट्र हितचिन्तक उस गम्भीर तथा महत्त्वपूर्ण प्रश्न को हल करने मे लगे हुये है। उन्हें आरम्भ ही मे आशातीत सफलता मिली है। अपने प्रदेश के हिन्दी प्रेमियों को यह बतलाते मुझे हर्ष होता है कि १६,००० शब्दों का शासन-कोष उक्त परिषद् के तत्वावधान मे छप रहा है। अभी अभी प्रायोगिक विज्ञान (Applied Science) का शब्द कोश बनाने का काम परिषद् ने ले लिया है। तीन चार वर्षों के अन्दर ही तीन लाख पारिभाषिक शब्दों का सचयन करने की दीक्षा परिषद् ले बैठी है। वे लोग चाहते हैं कि प्रयोगिक विज्ञान के बारे मे दक्षिण के पण्डितो की भी सहयोग प्राप्त कर लिया जाय। उनके प्रयत्नो से यथासंभव लाभ उठाया जाय। इसलिये मेरा अपने दक्षिण के विज्ञान के प्रोफेसरों से निवेदन है कि वे इस दिशा मे अपने प्रयत्नो का ज्ञान प्रयाग, हिन्दी परिषद के वा कर्मोओं को कराव। इसी प्रकार राष्ट्रभाषा की श्रीवृद्धि करने मे हम दक्षिणी हाथ बटा सकेंगे।

इतना कह कर मै अपने दक्षिण के हिन्दी प्रचारकों, प्रेमियो तथा प्रत्येक शिक्षा प्राप्त सज्जनो से अनुरोध करूँगा कि वे स्वय हिन्दी हिन्दुस्तानी के इस विवादपूर्ण प्रश्न पर निष्पक्ष राष्ट्र से विचार करें और कहे कि हम किस देश के नाते 'हिन्दुस्तानी' या 'उर्दू' का दम भरे ? हम दक्षिणी अपने विवेकपूर्ण एवं सुनिश्चित निर्णय सुनाने के लिये प्रसिद्ध रहे है, कहीं ऐसा न हो कि दबाव अथवा बहलाव मे आकर उस यश से हाथ धो बैठें ।

—राममूर्ति

अब हमारी राष्ट्रभाषा के प्रश्न को स्थगित करना अथवा हिन्दी के विपक्ष मे निर्णय देना हमारे राष्ट्र के लिये किसी प्रकार भी हितकर न होगा। हिन्दी का प्रश्न हमारे सास्कृतिक जीवन एव मरण का प्रश्न है। मुझे अपनी भाषा एव सस्कृति के लिए अत्यधिक प्रेम है । मैं उसके लिए अपना सर्वस्व तक न्यौछावर कर सकता हूँ।"

—बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'
[सम्मेलन पत्रिका]

१'माधुरी जुलाई अङ्क १९४८, पृष्ठ ५१५,५१६।

आर्य कुमार जगत्

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्
परीक्षाफल (सन् १९४९)

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से इस वर्ष धार्मिक परीक्षाएं गत ३ जनवरी तथा ६ फरवरी को हुई थीं। परिषद् के कार्यकर्ताओं तथा हमारे परीक्षा कार्यालय के सतत प्रयत्न से परीक्षा कार्य में इस बार पर्याप्त उन्नति हुई है। सन् १९४६ में जब मेरे पास परीक्षा कार्यालय आया, भारत में केवल १६ परीक्षा केन्द्र थे सन् १९४७ में १३ सन् १९४८ में १७० और इस वर्ष २१० केन्द्र हो गये हैं। दक्षिण अफ्रीका में भी परीक्षा केन्द्र खुल गया है। छात्रों की संख्या भी इस वर्ष ५००० से अधिक हो गई है। सब केन्द्र व्यवस्थापक तथा परीक्षक महोदय हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। इस वर्ष का परीक्षाफल निम्न प्रकार है—

सिद्धान्त सरोज परीक्षा।

इस परीक्षा में कुल ९७५० आवेदन पत्र आये। परीक्षाफल ७३ प्रतिशत रहा। सर्वप्रथम —प्रेमवती शर्मा (आगरा नामनेर)। सर्व द्वितीय —रघुराज स्वरूप (सासनी) सर्व तृतीय —धनीराम (रामपुर मन्हारान)

सिद्धान्त रत्न परीक्षा।

कुल १६८५ आवेदन पत्र आये। परीक्षाफल लगभग ८१ प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम —पुरुषोत्तम-दास तथा देवीकृष्ण (ब्यावर)। सर्व द्वितीय— बोधराम (रामपुर मन्हारान) सर्व तृतीय— मदनमोहन प्रसाद (बाँकीपुर पटना) तथा सावित्री देवी (पचगामा)।

सिद्धान्त भास्कर परीक्षा।

कुल ४१६ आवेदन पत्र आये। परीक्षाफल ६२ प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम ब्रजनन्दनलाल शर्मा (अलीगढ)। सर्वद्वितीय मन्शीलाल (बिजनौर)। सर्वतृतीय - रघुवरदयाल (बिजनौर)। कन्या सर्व प्रथम —कृष्णाकुमारी (लोहागंज आगरा)।

सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा।

कुल २९४ आवेदन पत्र आए। परीक्षाफल लगभग ८० प्रतिशत रहा। सर्व प्रथम श्री रमादेवी शर्मा (रामपुर, कानपुर)। सर्व द्वितीय— पूर्णचन्द्र (आगरा नामनेर)। सर्व तृतीय— रोशनलाल गुप्त (नामनेर) आगरा।

नोट —उपर्युक्त समस्त परीक्षार्थियों को परिषद की ओर से पारितोषक तथा समस्त उत्तीर्ण छात्रों को प्रमाणपत्र यथासम्भव शीघ्र भेज दिए जायेंगे। समस्त उत्तीर्ण छात्रों को मेरी ओर से बधाई है।

सिद्धान्त शास्त्री परीक्षाफल १९४९

(नोट प्रत्येक नाम के पीछे उत्तीर्ण होने की श्रेणी दी गई है)

सिकन्दरा —आनंद प्रकाश २, धर्मसिंह वर्मा २, अजमेर —जयकिशन गोपाल २, रामलाल गुप्त २, सुन्दर देवी ३, नरेन्द्रकुमार गुप्त ३, नृपेन्द्र झा २, सतीशकुमार ३, राधवरण २ ओम्प्रकाश ३, जितेन्द्र दत्त ३, लक्ष्मीनारायण ३, चित्तौड —ब्र. सत्यकाम २, ब्र लक्ष्मणानन्द २ ब्र

भारतेन्दु २, सैदपुर —चन्द्रभान सिंह २, जौनपुर —चुन्नीलाल निगम ३, बदायू —सुरेन्द्रचन्द्र शर्मा २, कुचामन सिटी —श्रीकृष्ण शर्मा २, साँभरलेक —रेवतीरमण शर्मा ३ हरिद्वार —जगवती देवी ३, इन्द्रा देवी ३, चन्द्र गन्धर्व ३, बरेली (भूड़)—अतिविशेषघन ३, कमला देवी सक्सेना ३, शाहपुरा —ओमप्रकाश गौड़ ३, गोरखपुर,—सत्य व्रत आर्य २ हैदराबाद दक्षिण —व्रतपाल ३, देवनाथ ३, मिलक —भारत मित्रशर्मा २, नागरिक —दिवाकर २, अलीगढ़ —किशोरीलाल गुप्त ४, सगरिया —कलावती २, नई देहली (ईदो सराय)—जानकीनाथ धर ०, भर्थना —भगवत दयाल मुख्तार २, रामेश्वर दयाल ३, जलाला —रामजीलाल ३, भिवानी —फूलचन्द्र शर्मा ३, कमबा—रामलाल आर्य २, चिंताहरण आर्य ३ पचगामा —शम्भूदयाल २, टटेसर —सुधाकुमारी ३, एटा —सहदेव २, नागपुर —कमलाप्रसाद २ चन्द्रकुमार साहू १, फतहपुर शेखावाटी —लक्ष्मण दत्त पाठक १, पिसावा —मंगलदेव २, बारा—चन्द्र बिहारी २ आगरा (ताजगज)—मुन्नालाल ३, श्रीकुमार ३, बकानी परमानन्द २, रोहतक—उत्तमचन्द्र २, न्यू देहली (डी० ए० वी०)—दुर्गालाल २, रणवीरसिंह ३, ज्ञानवती २, ओमवती २ कृष्णानन्द ३ ब्यावर-सुन्दर स्वरूप २, वासुदेव २, जोधपुर-भवानीलाल माथुर १, गनेश लाल गौड़ २ बाबूलाल २ इन्दौर (सयोगितागज)—हरप्रसाद ३ श्रीकृष्ण २ गदपुरी—फूलचन्द्र २ काठ —वेदप्रकाश ३ बलवीरसिंह ३ कृष्णकुमार २ फुलैरा—विद्यावत ३ सिरोली—जयदेवप्रसाद २, वीरेन्द्रपाल २, कानपुर (आनन्द बाग)—उर्मिला प्रधान ३ जयपुर—अर्जुनलाल ३ रामधन शर्मा ३, सुन्दरलाल ३, रामपुर (कानपुर)—रमादेवी १, अमरोहा—भीमसेन ३ आगरा (नामनेर)—गनशीलाल ४ पूर्णचन्द्र १ बुलाकी दास १, रोशनलाल १, जयकुमार १, द्वारिकाप्रसाद १, नन्दकिशोर २, खुर्ई—चन्द्रभानप्रसाद २, काशी (बुलानाला)—नरेन्द्रसिंह ३, रामसेवक ०, खड़गपुर—के० वी० सुब्रमणियम ३, खारखया—भूदेव ३, ठाकुरद्वारा—भूपाल सिंह ३, केदारनाथ ३, देहली (सीताराम बाजार)—बुद्धराम ३, वेदव्रत ३, देवरिया—विजयकुमारी २, नूरपुर—उदयवीर १, नोनापुर—प्रभूदयालसिंह ४, कॉवीपुर दीनेश्वर प्रसाद २, रामेश्वरप्रसाद ३, बागपत—गजेसिंह ३, बासी—ठाकुरप्रसाद ३, बिजनौर—इन्द्रमन २, विष्णुदत्त ३, मगूसिंह ३, आशा देवी २, मशाराम३, प्रकाशवती ३, महेश्वर-कृष्णकुमार १, करुणाकर १, भवानी (जाट वैदिक स्कूल)-लक्ष्मीचन्द्र १, मैनपुरी-भगवानदास ३, मनीश चन्द्र २ रतलाम-पुष्पा भारद्वाज १ स्वरूपा भारद्वाज १, रमेशचन्द्र १, सरडा—भँवरलाल ४ हीरालाल २, रामलाल २, खुसरुपुर—रामेश्वरप्रसाद २, सूरजगढ़—नारायणप्रसाद ३, मालीराम ३ ईश्वरदत्त २, बेवर—रामानन्द २ कलकत्ता—रामप्रसाद ४ रामनरेश २ राजपाल ३ कानपुर (कालेज —शिवपूजनसिंह २ मुजफ्फर नगर (डी० ए० वी०)—बालकराम ३ महावीर सिंह ३।

(डा०) सूर्यदेव शर्मा,
साहित्यालंकार, सि० शास्त्री, एम० ए०
(त्रय), एल टी, डी० लिट
परीक्षा मन्त्री
भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, अजमेर

आर्य कुमार जगत्

राजस्थान प्रान्तीय आर्य कुमार सम्मेलन

दिनांक ६ १० मई १६४६ को सुजानगढ़, जिला बीकानेर में राजस्थान-प्रान्तीय आर्यकुमार सम्मेलन, परम पूज्य तपोनिधि वीतराग स्वामी स्वतानन्द जी महाराज के सभापतित्व में महान् समारोह के साथ सम्पन्न हुआ।

सम्मेलन में आर्य जगत् के प्रसिद्ध नेता एव विद्वान् पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा, श्री उमेशचन्द्र जी विद्यार्थी प्रधान मन्त्री भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद्, पं० महेन्द्र जी शास्त्री विद्यावाचस्पति, सिद्धान्त शिरोमणि तथा कु० मोहरसिंह जी आदि पधारे थे।

प्रान्त की लगभग सभी आर्यकुमार सभाओं ने प्रतिनिधियो ने सम्मेलन मे भाग लिया। ६ मई की रात्री को ७॥ से १०॥ तक सम्मेलन का खुला अधिवेशन हुआ। जिस मे निम्न प्रस्ताव स्वीकृत हुये। —

प्रस्ताव १ शोक-प्रस्ताव

"यह सम्मेलन आर्य जगत् क सर्व मान्य नेता पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज, प्रो० सुधाकर जी एम० ए०, भाई बन्सी लाल जी हैदराबाद (दक्षिण) स्वामी श्रद्धानन्दजी सरस्वती झज्झर, श्री अणचीदेवी जी सन्यासिनी रतनगढ़, प० विश्वभर नाथ जी पजाब, प० ज्ञानेन्द्र जी सिद्धान्त भूषण के स्वर्गवास पर शोक प्रकट करता हुआ ईश्वर से प्रार्थना करता है कि वह दिवंगत आत्माओं को शान्ति प्रदान करे।'

नोट —यह प्रस्ताव प्रधान जी की ओर से रखा गया।

प्रस्ताव २ "आर्य समाजों से अनुरोध'

"यह सम्मेलन प्रान्त की समस्त आर्य समाजो से निवेदन करता है कि वे अपने क्षेत्रो में आर्य कुमार सभाओं की स्थापना करें तथा प्रत्येक आर्य बन्धु अपने २ कुमारों को कुमार सभा मे भेजें।"

"राष्ट्रभाषा" प्रस्ताव ३

"यह सम्मेलन सविधान परिषद् के सदस्यों से अनुरोध करता है कि वे परिषद् के आगामी अधिवेशन मे आर्य भाषा अथवा सस्कृतनिष्ठ हिन्दी को देश की राष्ट्र भाषा और देव नागरी लिपि को ही राष्ट्र लिपि घोषित करे। इस विषय मे अब तक जो टालमटोल की नीति बरती जा रही है उस पर यह सम्मेलन घोर असन्तोष प्रकट करता है और आशा करता है कि इस बार इसका अन्तिम निश्चय करके सविधान परिषद् जनता के असतोष को दूर करेगी।"

प्रस्ताव ४ "बाल विवाह, दहेज प्रथादि के सम्बन्ध में"

यह सम्मेलन भारत सरकार से अनुरोध करता है कि वह विधान वा कानून द्वारा बाल्य विवाह और दहेज की हानिकारक प्रथाओं को सर्वथा बन्द करदे। वेदादि सत्य शास्त्रानुसार कन्या और युवक के विवाह की आयु कम से कम १६ और २४ की होनी चाहिये। वर्तमान विधान मे नवयुवको के लिये विवाह की कनिष्ठ आयु जो १८ रखी गई है इसको यह सम्मेलन प्रत्येक दृष्टि से सर्वथा अपर्याप्त समझता है। और भारत सरकार से सानुरोध निवेदन करता है कि कन्या के लिये न्यूनतम विवाह की आयु १६ और युवक के लिये २४ करदी जाए। दहेज की अत्यन्त घातक प्रथा को विधान द्वारा बन्द करना भी इस सम्मेलन की सम्मति मे अत्यावश्यक है।'

प्रस्ताव सख्या ५ देश का नाम'

"यह सम्मेलन भारतीय सविधान परिषद् से अनुरोध करता है कि वह देश का नाम करण

अति शीघ्र ही आगामी अधिवेशन में भारत वर्ष या भारत करे।'इण्डिया' नाम तो दासता सूचक है जो कि एक स्वतंत्र जन तंत्र राष्ट्र की शोभा नहीं दे सकता।"

प्रस्ताव सं० ६ 'रेडियो में वेद कथा,

यह सम्मेलन अखिल भारतीय रेडियो के अधिकारियों से अनुरोध करता है कि अन्य धार्मिक प्रवचनों के साथ प्रति सप्ताह रेडियो पर वेद कथा का भी अवश्य प्रबन्ध होना चाहिये। वेद ३३ कोटि भारतीय आर्य (हिन्दू) जनता का परम प्राचीन धर्म ग्रन्थ है। अत ईश्वरीय ज्ञान की रेडियो द्वारा उपेक्षा असह्य है। इस सम्मेलन का यह निश्चय है कि अखिल भारतीय रेडियो यदि भारत सरकार के आदेशों का पालन कर देश मे से भ्रष्टाचार एवं घूस खोरी, चोर बाजारी आदि का निराकरण करने में सहायक होना चाहता है तो वेद भगवान् के पवित्र सन्देश प्रति सप्ताह इस कार्य में पूर्ण सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

१० मई को श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति अध्यक्ष अखिल भारतीय जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ के सभापतित्व मे जाति भेद निवारक सम्मेलन हुआ जिस मे निम्न प्रस्ताव पास हुए—

प्रस्ताव ७ 'जाति भेद निवारण'

"इस सम्मेलन की निश्चित सम्मति है कि जन्म सिद्ध जाति भेद की प्रथा वेदादि सत्य शास्त्र विरुद्ध, तथा अत्यन्त हानिकारक है जिससे शुद्धि दलितोद्धार तथा संगठन के मार्ग में बड़ी बाधा पड़ती है। अत. यह सम्मेलन समस्त आर्य कुमारों से अनुरोध करता है कि वे जाति भेद के विरुद्ध न केवल प्रबल आन्दोलन करें प्रत्युत यह व्रत लें कि वे जाति बन्धन तोड़ कर ही केवल गुण-कर्म-स्वभावानुसार विवाह करेंगे। सब आर्यों से भी यह अनुरोध करता है कि वे 'जाति-भेद-निवारक-आर्य परिवार संघ' के सदस्य वा सहायक बन कर, इस 'जाति भेद निवारक आन्दोलन' को प्रबल बनायें।,

प्रस्ताव ८ "जातिवाचक नाम सम्बन्धी"

यह सम्मेलन राजस्थान के आर्य कुमारों तथा आर्य बन्धुओं से प्रार्थना करता है कि वे अपने २ नाम के आगे अपनी जन्म जाति के सूचक शब्द न लिखें और नही उन्हें अपनी २ जातीय सभाओं मे भाग लेना चाहिये।

प्रान्तीय परिषद् का निर्वाचन निम्न प्रकार हुआः—

१ प्रधान—श्री स्वामी व्रतानन्द जी महाराज आचार्य गुरुकुल चित्तौड़।
२. उप प्रधान—श्री गणेशीलालजी जोधपुर।
३ मन्त्री— " जीवानन्द जी 'आनन्द' सुजानगढ़।
४ उपमन्त्री " सोमदेव जी 'मधुप' विशनगढ़।
५ कोषाध्यक्ष " कन्हैयालाल जी सुजानगढ

अन्तरंग सदस्य—

६ श्री भवानीलाल जी 'भारतीय' जोधपुर।
७ " विनयचन्द्र जी छोटी सादड़ी।
८ " भारतेन्दुजी चित्तौड़।
६ " सत्यदेव जी विशनगढ़।
१० " चन्द्र विहारी जी शास्त्री, बारा।
११ " ओम्प्रकाश जी, शाहपुरा।

मन्त्री
राजस्थान प्रान्तीय आर्यकुमार परिषद्
सुजानगढ संयुक्त राजस्थान)

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
बलिदान भवन, देहली
२७-४-४६

यह बात तो सर्व सज्जनों पर विदित ही है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा आर्य समाज

आर्य जगत्

सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा के आवश्यक निश्चय

शोक प्रस्ताव

१ यह सभा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उप प्रधान तथा इस सभा के भू पूर्व सदस्य श्री प० विश्वम्भर नाथ जी के असामयिक निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती हुई उनके परिवार के प्रति समवेदना का प्रकाश करती है।

श्री प० जी पंजाब में आर्य सामाजिक प्रगतियों के एक मुख्य स्तम्भ थे। उनका प्राय समस्त जीवन आर्य समाज के अर्पण रहा। आर्य समाज के प्रति की गई उनकी सेवाएँ विविध और बहुमूल्य थी।

२ यह सभा हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के ७ वें अधिनायक और गुजरात प्रान्त में आर्य समाज के एक प्रमुख कार्य कर्ता श्री प० ज्ञानेन्द्र जी सिद्धान्त भूषण के असामयिक निधन को आर्य समाज की एक बहुत बड़ी क्षति समझती है और उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करती है।

३ यह सभा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पुराने अनुभवी और वयोवृद्ध कोषाध्यक्ष तथा इस सभा के भूत पूर्व सदस्य श्री ला० नोतन दास जी के निधन पर दुःख का प्रकाश करती हुई उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करती है।

४ यह सभा मद्रास के प्रसिद्ध आर्य श्री एम बा० शर्मा के असामयिक निधन पर दुःख प्रकट करता हुई उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करती है मद्रास में आर्य समाज का जीवन प्रदान करने में श्री शर्मा जी का विशेष हाथ था।

५ यह सभा इस सभा के भूतपूर्व प्रतिष्ठित सदस्य श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी सरस्वती की असामयिक मृत्यु पर खेद प्रकट करती है। श्री स्वामी जी आर्य समाज के अनन्य भक्त और पुराने कार्य कर्ता थे।

[पृष्ठ १८७ का शेष]

की मुख्य केन्द्रीय संस्था है और इसको अन्यान्य विधि से वैदिक धर्म के प्रचार में बहुत बड़ी राशि व्यय करनी पड़ती है और धनाभाव के कारण धर्मप्रचार को अधिक विस्तृत करने में बाधा होती है। सार्वदेशिक सभा के पास आय का कोई साधन नहीं है। प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं से जो पंचमांश प्राप्त होता है वह तो कार्यालय के आंशिक व्यय के लिए भी पर्याप्त नहीं होता अतः यह आवश्यक प्रतीत होता है कि प्रत्येक आर्य नरनारी को सार्वदेशिक प्रचार निधि में अपना कोई नियत वार्षिक दान देना चाहिये अपनी आर्थिक योग्यता के अनुसार आर्य गण १), ५), १०), २५), ५०), १००), २५०), ५००) या अधिक वार्षिक निश्चित राशि नियत कर दें तो सार्वदेशिक सभा वैदिक धर्म के प्रचार की प्रगति को तीव्र कर सकती है। इस निधि का उद्देश्य भारत और भारत के बाहर अन्य देशों में आवश्यकतानुसार प्रचारक भेज कर और प्रचार केन्द्र स्थापित करके वैदिक धर्म का प्रचार करना कराना होगा। आशा है कि आर्य गण इस अत्यन्त महत्वपूर्ण निधि की पूर्ति में अपने कर्तव्य का पालन करेंगे।

गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

आर्य महासम्मेलन कलकत्ता के निश्चय सं० १० के द्वारा नियुक्त उप समिति की रिपोर्ट पर जो कार्यालय मे प्राप्त हुई है विचार का विषय उपस्थित हुआ। यह विषय इस समय विचारार्थ लिया जाय या नहीं इस सम्बन्ध मे सम्मति लिये जाने पर ६ के विरुद्ध ६ के बहुमत से निश्चय हुआ कि इस विषय पर इसी समय विचार किया जाय। इस निश्चय के अनुसार श्री पं० रामदत जी संयोजक समिति द्वारा भेजी रिपोर्ट पर विचार आरम्भ हुआ।

समिति के निश्चय स० १ कि आर्य समाज सामूहिकरूप से राजनीति मे भाग न ले इस विषय पर उपस्थित सदस्यों के वक्तव्य हुए। सम्मति लेने पर १३ पक्ष मे, विरुद्ध २ के बहुमत से समिति का यह निश्चय स्वीकृत हुवा।

रिपोर्ट का दूसरा भाग इस प्रकार पेश हुआ "राजनैतिक वेदोक्त आदर्शों को दृष्टि मे रखते हुए तथा आर्य संस्कृति एवं आर्य सभ्यता से भारतीय राजनीति को अधिक से अधिक प्रभावित करने के लिये एक राजार्य सभा का निर्माण किया जाय। इस पर श्री पं० भीमसेन जी ने अपना निम्न लिखित सशोधन प्रस्तुत किया।

राजनीति को प्रभावित करने के लिये सार्वदेशिक सभा आर्यो को प्रेरणा करती है कि वे वैदिक संस्कृति के राजनैतिक आदर्शों के अनुसार विविध राजनैतिक संस्थाओं मे भाग लें।

संशोधन पर सम्मति लेने पर ४ के विरुद्ध ६ के मत से संशोधन गिर गया। श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी का निम्न लिखित प्रस्ताव श्री म० कृष्ण जी के अनुमोदन पर पेश हुआ।

समिति के प्रस्ताव के दूसरे भाग पर विचार होकर निश्चय हुआ कि आर्य महा सम्मेलन में प्रकाशित भावनाओं की पूर्ति के लिये आर्य पुरुष किसी प्रकार का सगठन बनाने मे स्वतन्त्र है।

सम्मति लिये जाने पर १२ पक्ष और १ विपक्ष से सम्मति आने पर यह प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हुआ।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली

दान आर्य समाज स्थापना दिवस

[गताङ्क से आगे]

१२) आर्य समाज बिरला लाइन देहली
।) श्री बालूराम भवानी घोष जी
५) आर्य समाज पथरगामा (संथाल परगना)
६) „ कीटगंज प्रयाग
१०) „ टमकौर (जयपुर)
२५) „ लश्कर (ग्वालियर)
२६।=) „ जौनपुर
३।) श्री विश्वेश्वरप्रसाद जी प्रधान आर्यसमाज पुरवा (उन्नाव)
२५) आर्य समाज मेरठ सिटी
७॥) „ अलवर राज्य
३।=) „ आरा (बिहार)
६) „ सुजानगढ़ (बीकानेर)
३०।) „ बार सलीज़गंज (गया)
१०) „ नीमचकैन्ट
७।=) „
७॥) „
२०) „ आर्य समाज पीलीभीत
१०) आर्य समाज सिटी गुलाब सागर जोधपुर
८॥=) „ बालनगीर (पटना स्टेट)
१७॥) „ शिकोहाबाद (मैनपुरी)
२॥) श्री स्वा० महेश्वरानन्द जी जमालपुर मुंगेर
६) आर्यसमाज छोटी सादड़ी (मेवाड़)
५) „ बावली (रोहतक)
७) „ बरबीघा (बिहार)
१०) फलावदा (मेरठ)
१०) „ भटपुरा पो० असमौली मुरादाबाद
११) „ कोटा (राजपूताना)
५०) श्री सीताराम जी मन्त्री आर्य समाज
६) आर्य समाज कार्वल (S K.)
११।) „ „ झालावाड़
१४) मंत्रिणी स्त्री आर्यसमाज मेरठ (बुढ़ानागेट)
२५) आर्य समाज साहिबगंज (S P)
४) „ „ अजीतमल (इटावा)
२०) „ „ „ हनम कोंडा (हैदराबाद)
३२) श्री पूर्ण चन्द्र जी

योग ४४८)
१०२॥) गत योग
५५७॥) सर्व योग

(क्रमश)

विविध दान

१०) श्री ला० सालिक चन्द्र जी मेरठ अपने सुपुत्र के विवाहोपलक्ष में
१०) „ ला० उमाशंकर जी अग्रवाल अजमेर अपनी सुपुत्री के विवाहोपलक्ष में

२०)
१०) गत योग
३०) (क्रमश)

इस वर्ष आर्यसमाज (स्थापना दिवस का कम से कम ६०००) सभा के कोष में पहुंचना चाहिए। जिन समाजों ने अपना भाग अभी तक नहीं भेजा है उन्हें भेजने में शीघ्रता करनी चाहिये। प्रत्येक आर्य समाज को इस निधि में धन भेजना अपना एक अत्यन्त आवश्यक कर्तव्य समझना चाहिए इस कार्य में जरा लापरवाही नहीं होनी चाहिये। अनुशासन की भी यही मांग है।

गंगा प्रसाद उपाध्याय
मंत्री
सार्वदेशिक सभा

दान दयानन्द पुरस्कार निधि

(गताङ्क से आगे)

१०) श्री चौ० प्रताप सिंह जी दिल्ली
५) „ हीरालाल जी M. Sc. इलाहाबाद
१०) „ ईश्वर प्रसाद जी „
५) „ विश्वेश्वर प्रसाद जी प्रधान आर्य समाज पुरवा (उन्नाव)
५) „ नारायण जी „ „ „ „
५) „ चुन्नी भाई जी आर्य सनखोली (पंचमहाल)
५) „ भगवान दास जी आर्य रौढ़िया (गोंडा)
५) „ मानी राम जी आर्य „ „ „
५) मदन जित जी आर्य फीरोजपुर शहर
१०) शिवराम जी आर्य अम्बाला
२०) „ छात्राएं तथा अध्यापिकाएं वैदिक कन्या पाठशाला आर्य समाज आबूरोड व अन्य
५) „ आर्य समाज अलवर
५) „ आर्य समाज पथर गामा (S P.)
५) „ जगदीश चन्द्र जी आर्य भवानांकला (मेरठ)
५) श्री शिव मूर्तिलाल महादेव प्रसाद जी
१०) „ अर्जुन आर्य समाज नीमच कैन्ट
१५) „ „ „ „
१००) श्री प्रभाकर जी राजा मंडी आगरा
५ श्री दयाल भीम भाई जी गुरुकुल सोनगढ़
५) आर्य समाज सोनगढ़ (सौराष्ट्र)
१०) श्री जगदीश प्रसाद बरली विलेज बम्बई १८
५) आर्य समाज सीपरी बाजार झांसी
४) श्री विद्या भूषण जी हिवर खेड़ रूपराव (अकोला)
१०) उपप्रधान जी आर्य समाज बावली (रोहतक)
१२॥) आर्य समाज शिकोहाबाद (मैनपुरी)
२॥) श्री स्वामी महेश्वरानन्द जी जमालपुर (मुंगेर)

१०१) श्री लाला लब्भूराम जी नैय्यड़ आनन्द आश्रम लुधियाना द्वारा संगृहीत-विवरण इस प्रकार है.—
२५) श्री० राय बहादुर जस्टिस रंगीलाल जी एम० ए० लुधियाना
५) श्री० पं० अर्जुन देव जी स्नातक रवि वर्मा स्टील वर्कस अम्बाला।
५) श्री० कुँवर श्यामलाल सिंह ऐडवोकेट रुड़की।
५) रायसाहिब पर्शराम जी रजिस्टर्ड इंजीनियर अम्बाला।
५) श्री० ला० बालकृष्ण जी मानकटाला वाल वीविंग लुधियाना।
५) बाबू कनकराम जी एडवोकेट मोगा।
५) चरणदास जी मांनी ८ पर्ल होजरी लुधियाना।
५) श्री० काशी राम जी चावला रजिस्टर्ड सुपरिन्टेन्डेन्ट लुधियाना।
५) श्री० पं० दुर्गा चरण जी प्रभाकर लुधियाना।
५) श्री० केवल कृष्ण जी बी० ए० एल० एल० बी० एक्जीक्यूटिव आफिसर।
५) श्री० मं० कृष्ण सिंह जी मगूं प्रेजीडेन्ट एम० सी लुधियाना।
५) „ ला० सहेलाराम जी सेखला रईस सूरजहल
५) „ ला० प्रेमनाथजी भल्ला रईस लुधियाना।
५) „ ला० कोटूराम थापर पैन्शनर इन्सपेक्टर लुधियाना।
३) पं० रामरक्खा मल जी बी० ए०
३) डा० रोशनलाल जी भारत मैडिकल हाल
२) ला० छज्जूराम जी रिटायर्ड ओवर सीयर
२) श्री० मेला राम जी रिटायर्ड ओवर सीयर।
२) „ जयराम दास जी सूद लुधियाना।

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिये प्राप्त दान

(२३-५-१६४६ तक)

१) श्री० सत्यदेव जी किशनगढ़ (जयपुर राज्य)

१) ,, घनश्यामसिंह जी आर्य सुजानगढ़ (राजपूताना)

५) ,, परशुराम देवीदत्त जी स्वर्णकार ,,

१) ,, गणेशीलाल जी द्वारा नगर आर्य समाज जोधपुर

२१) ,, पन्नाराम जी शर्मा सुजानगढ़

५१) ,, जोरावरमल जी जालान ,,

१०) ,, जीवनराम देवराम जी स्टोन मर्चेन्ट सुजानगढ़

५) ,, पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली

१) ,, पं० शान्तिस्वरूप जी वेदालंकार चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली

---

१) श्री भारत भूषण जी जवाहिर नगर देहली

१०) आर्य समाज साहिब गंज द्वारा

१०) आर्य समाज मुकेरिया (पूर्वी पजाब)

५) श्री सीताराम जी भगत

५) ,, वसन्त लाल सिंह जो

५) श्री विश्वेश्वर नाथ जी चौपड़ा

५) ,, रामजीदास जी शर्मा

१०) ,, रमेश चन्द्र जी जोशी वसौदा

४१५।) योग (क्रमश)

१०६५॥।≈) गत योग

१४८१॥।≈) सर्वयोग

सब दानियों को धन्यवाद। मंत्री

२) पं० धनपति जी आर्य समाज मौहल्ला बस्ता देहली

२) ,, सेवाराम जी मनेजिंग डाइरेक्टर चन्द्रप्रिंटिंग प्रेस श्रद्धानन्द बाजार देहली

२) " प्यारेलाल जी विग ऐडवर्ड नई देहली

५) ,, बालकृष्ण जी मालिक ज्ञानेन्द्र शू कं० चांदनी चौक देहली

१) ,, दीनानाथ जी परौठों वाली गली देहली

२५) कविराज हरनाम दास जी बी० ए० चादनी चौक देहली

१०) श्री नवनीतलाल जी ऐडवोकेट देहली

५) श्री अचरजलाल जी आर्य देहली

२) श्री भगवानदास जी आवन देहली

५) श्री चतुरसेन जी गुप्त शामली जिलामुजफ्फर नगर यू० पी०

२०),, श्री ला० रामगोपाल जी उप मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली

---

१७५ (क्रमश)

सब दाताओं को सभा की ओर से धन्यवाद इस निधि मे उदार दान देना प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है।

इस निधि का उद्देश्य देश देशान्तरों मे वैदिक धर्म के प्रचार की व्यवस्था कराना है।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित।

सभा विवरण अंक

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ३९ } जौलाई १९४९ ई० २००६ आषाढ़ दयानन्दाब्द १२८ { अङ्क ५

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् धाता विधाता भुवनस्य यस्पतिर्देवः सविताऽभिमातिषाहः ।
आदित्या रुद्रा अश्विनोभा देवाः पान्तु यजमानं निर्ऋथात् ॥

ऋग् १०।१२८।७

अर्थः—(धाता) सब का धारण पोषण करने वाला (विधाता) विशेष रूप से सब का धारक और न्यायकारी (य) (भुवनस्य पति) जो समस्त जगत् का स्वामी (सविता) सर्वोत्पादक (अभिमातिषाह) अभिमान करने वाले अन्तः शत्रु—काम क्रोध लोभ मोह आदि का विनाशक (देव) सर्व प्रकाशक परमेश्वर है वह तथा (आदित्या) सूर्य के समान तेजस्वी अज्ञानान्धकार विनाशक आदित्य ब्रह्मचारी (रुद्राः) दुष्टों को रुलाने वाले रुद्र ब्रह्मचारी (उभौ अश्विनौ) अध्यापक उपदेशक तथा (देवाः) अन्य सब सत्यनिष्ठ विद्वान् (यजमानम्) यज्ञ करने वाले की (निर्ऋथात्) अज्ञान, असत्यमय पापमार्ग और आपत्ति से (पान्तु) रक्षा करें ॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का

इकतालीसवां वार्षिक वृत्तान्त

(१९-२-४८ से २८-२-४९ तक)

शोक प्रस्ताव

वर्ष का कार्य विवरण देने से पूर्व यह प्रकट कर देना आवश्यक है कि इस वर्ष आर्य समाज को निम्न लिखित महानुभावों के वियोग की महती क्षति उठानी पड़ी।

१ श्री० प्रो० सुधाकर जी एम० ए०
२ ,, बा० श्यामसुन्दर लाल जी, मैनपुरी
३ ,, भाई बन्शीलाल जी, हैदराबाद
४ ,, प० राजाराम जी शास्त्री
५ ,, ,, महेन्द्र चन्द्र जी, बड़ौदा
६ ,, ,, ज्ञानेन्द्र जी सिद्धान्त भूषण नवसारी
७ ,, स्वा० श्रद्धानन्द जी
८ ,, प्रो० रामदेव जी, दिल्ली

निर्माण व्यवस्था

इस वर्ष इस सभा में गत वर्ष की नाई १५ प्रतिनिधि सभायें और नियम धारा ६ के अनुसार सभा से सीधे प्रतिनिधित्व प्राप्त करने वाली ६ आर्य समाजें सम्मिलित रहीं। वर्ष के अन्त में यह सभा प्रतिनिधि सभाओं और आर्यसमाजों के ६१ एवं १६ प्रतिष्ठित और आजीवन कुल ८० सदस्यों का समुदाय थी।

इस वर्ष २४-४-४८ की अन्तरंग के निश्चयानुसार श्री कविराज हरनामदास जी बी० ए० सभा के आजीवन सदस्य बने और क्रमशः २४।४।४८ व १३।२।४९ की अन्तरङ्ग के निश्चयानुसार गाजियाबाद तथा अलवर की समाजे सभा से सम्बद्ध हुई।

सभा के अधिकारी व अन्तरंग सदस्य

प्रधान १ श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
उपप्रधान २ ,, बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट आगरा
३ ,, माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त स्पीकर मध्यप्रदेश असेम्बली, दुर्ग
४ ,, पं० मिहिरचन्द्र जी धीमान् कलकत्ता
मन्त्री ५ ,, ,, गंगा प्रसाद जी उपाध्याय, एम० ए०
उप ,, ६ ,, ,, लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित देहली
कोषाध्यक्ष ७ ,, ला० नारायण दत्त जी देहली
८ ,, ला० हरशरणदास जी रईस, गाजियाबाद

२ श्री म० चमनलाल जी (सिन्ध)
३ श्री कु० चान्दकरण जी शारदा (राजस्थान)
४ श्री पं० दीनबन्धु जी शास्त्री (बंगाल)
५ ,, ,, प्रतापचन्द्र जी (बड़ौदा राज्य)
६ ,, प्रो० धर्मेन्द्रनाथ जी शास्त्री (समाजों के प्रतिनिधि)
७ ,, ,, गंगाप्रसाद जी रिटा० चीफ जज (आजीवन सदस्यों के प्रतिनिधि)
८ ,, ,, ज्ञानचन्द्र जी बी० ए० (पंजाब)
९ ,, ला० चरणदास जी ऐडवोकेट (पंजाब)
१० ,, चौ० जयदेव सिंह जी ,, (संयुक्त प्रान्त)
११ पं० रामदत्त जी शुक्ल ,, (,, ,,)
१२ ,, मदनमोहन जी सेठ (जनरल)

१३ ,, राजगुरु धुरेन्द्र जी शास्त्री ,,
१४ ,, देशराज चौधरी जी देहली ,,
१५ ,, म० कृष्ण जी बी ए० दिल्ली ,,
१६ ,, स्वा० वेदानन्द जी तीर्थ ,,
१७ ,, प० भीमसेन जी विद्यालंकार ,

उपसमितियां

गाजियाबाद भूमि

२४।४।४८ की अन्तरंग सभा मे आर्यनगर के प्लैन पर विचार होकर नगर की निम्न प्रकार योजना स्वीकृत हुई —

१ भूमि के प्लाट लीज पर दिये जाय बेचे न जाय।
२ यथा संभव आर्यो को ही दिये जांय।
३ नगर का नाम आर्यनगर रक्खा जाय।
४ लीज की शर्तें उप समिति निश्चित करे तथा यह ध्यान रक्खा जाय कि भूमि कर के अतिरिक्त वेद प्रचार के लिये सभा को धन-मिलेह्।
५ सभा की धन विनियोग उपसमिति अनुमति दे तो सभा का फालतू धन इस नगर में किराये के मकानों और दुकानों के निर्माण में लगाया जा सकता है।
६ श्री लाला हरशरणदास जी से प्रार्थना की जाय कि वे सड़क और सभा की भूमि के बीच की अपनी भूमि उचित मूल्य पर सभा को दे देवें जिससे यह भूमि भी सभा की योजना में सम्मिलित हो जाय।
७ इस योजना को क्रियान्वित करने के लिये निम्न लिखित उप समिति नियुक्त की जाय,

१ श्री लाला नारायणदत्त ज
२ श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय (संयोजक)
३ श्री लाला हरशरणदास ज
४ श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
५ श्री प० ज्ञानचन्द जी
६ श्री चौ० जयदेव सिंह जी
७ श्री देशराज चौधरी जी

८ इस समिति का नाम आर्य नगर निर्माण समिति होगा।
९ इस समिति को चित्र मे (Plan) परिवर्तन करने का अधिकार होगा।
१०. इस समिति को अपने में सदस्य तक बढ़ाने का भी अधिकार होगा।

२६।४।४८ की अन्तरंग सभा ने कार्यविभाजन करते समय इस उप समिति में श्री लाला चरणदास जी पुरी के नाम की वृद्धि की।

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में इस समिति की ५ बैठकें हुई प्लाटों की बिक्री की व्यवस्था हो रही है।

धन विनियोग उपसमिति

१ श्री लाला नारायण दत्त जी,
२ श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय (संयोजक)
३ श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
४ ,, पं० ज्ञानचन्द जी बी० ए०

इस वर्ष सभा का १०००००) एक लाख रुपया मकानों पर ऋणरूप में लगा। इस समय ऐसी राशि १४६०००) है।

आर्य समाज के उप नियमों की संशोधन उप समिति

१ श्री मदन मोहन जी सेठ
२ श्री पं० रामदत्त जी शुक्ल (सयोजक)
३ श्री पं० ज्ञानचन्द जी
४ श्री बा० पूर्ण चन्द जी
५ श्री चौ० जयदेव सिंह जी

यह समिति संशोधित मसविदा तय्यार करने के कार्य में संलग्न है। समिति के सदस्यों से संशोधन मांगे जा रहे हैं। कुछ सशोधन प्राप्त भी हो गये हैं। आशा है आगामी वर्ष इस कार्य में अच्छी प्रगति हो जायगी।

आर्य वीर दल उप समिति

१ श्री ला० नारायणदत्त जी (रक्ष सचिव)
२ ,, राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री (प्रधान सेनापति)
३ रिक्त स्थान (वीरांगना दल की सेनानी)
४ ,, पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
५ ,, प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
६ ,, चौ० जयदेवसिंह जी
७ ,, पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित
८ ,, ईश्वरदयालु जी (अधिष्ठाता, आर्य वीर दल सयुक्त प्रान्त)

श्री० ओम्प्रकाश जी त्यागी सहायक प्रधान सेनापति नियुक्त हुए।

आर्य वीर दल के कार्य की रिपोर्ट पृथक् अंकित है।

विद्यार्य सभा उप समिति

१ श्री प्रो० इन्द्र जी
२ श्री प० प्रियव्रत जी
३ श्री प्रो० धर्मेन्द्रनाथ जी
४ श्री प्रो० ताराचन्द्र जी
५ श्री मि० राजेन्द्र कृष्ण कुमार जी
६ श्री डा० सत्यप्रकाश जी
७ प० रामदत्त जी शुक्ल
८ श्रीमती लक्ष्मीदेवी जी
९ श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ
१० श्री पं० भीमसेन जी विद्यालंकार (संयोजक)

२४-४-४८ की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार उप समिति द्वारा भेजे हुए विद्यार्य सभा के संगठन पर के अन्तरंग सदस्यों आदि की सम्मति प्राप्त करके और उन सम्मतियों पर उप समिति मे विचार करके यह संगठन अन्तिम स्वीकृति के लिये पुनः सभा की अन्तरग में भेजा गया। अन्तरंग सभा ने अपनी २५-७-४८ की बैठक मे इसे अन्तिम रूप से स्वीकार कर दिया है। संगठन इस प्रकार है —

विद्यार्य सभा का संगठन

२५-७-४८ की सार्व० अन्तरंग सभा द्वारा स्वीकृत आर्य सम्मेलन देहली का निम्न लिखित प्रस्ताव पढ़ा गया।

आर्य समाज के विस्तृत और बहुविध शिक्षा सम्बन्धी कार्य को दृष्टि में रखते हुए यह सम्मेलन सार्वदेशिक सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करता है कि वह विद्यार्य सभा संगठित करने की

योजना करे जो आर्य समाज के शिक्षा सम्बन्धी कार्य में यथा सम्भव पारस्परिक सहयोग, समानता और आवश्यक सुधार लाने की चेष्टा करे और यत्न किया जाय कि यह विद्यार्य सभा भी विश्व में अखिल भारतीय दयानन्द पीठ का रूप धारण कर सके।

निश्चय हुआ कि तदनुसार विद्यार्य सभा का संगठन किया जाय।

१. इस सभा का नाम विद्याय सभा होगा।

२. क उद्देश्य, आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं में पारस्परिक सहयोग, समानता लाना और आवश्यक सुधार करना।
  ख आर्य विश्व विद्यालय की स्थापना करना।
  ग उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए देशकालिक अवस्था अनुसार आवश्यक प्रयत्न करना।

३ निर्माण—इस सभा के निम्न प्रकार सदस्य होंगे।

१ सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि ७
२ संयुक्त प्रान्त ,, २
३ पंजाब प्रान्त ,, २ अन्य सब-प्रान्त अथवा प्रदेश १-१

स्वीकृत शिक्षा संस्थाओं के

क स्नातक परीक्षा तक शिक्षा देने वाले गुरुकुल के प्रत्येक महाविद्यालय के २
ख अधिकारी परीक्षा तक देने वाले गुरुकुल के प्रत्येक महाविद्यालय का। १
ग प्रत्येक डिगरी कालेज का १
घ १० हाई स्कूलों के समुदाय का १
विद्यार्य सभा के उपर्युक्त सदस्यों द्वारा निर्वाचित ५
गुरुकुलों के रजिस्टर्ड स्नातक कालिजों के रजिस्टर्ड ग्रेजुएट २

नोट —प्रत्येक प्रतिनिधि को ५) वार्षिक शुल्क देना होगा—

अधिकारी

४ इस सभा के निम्नलिखित अधिकारी होंगे।
  १ प्रमुख (सार्वदेशिक सभा का प्रधान अपने पदाधिकार से) २ संचालक ३ प्रस्तोता ४ कोषाध्यक्ष।

ये अधिकारी निज अधिकार से कार्य कारिणी के सदस्य समझे जावेंगे।

कार्य कारिणी

५ अधिकारियों के अतिरिक्त कार्य कारिणी के ११ सदस्य होंगे जिन मे से कम से कम ८ शिक्षा विशेषज्ञ होंगे।

विविध

६ इस सभा के सदस्यों, अधिकारियों, तथा कार्य कारिणी के सदस्यों का चुनाव प्रति तीसरे वर्ष हुआ करेगा।

७ कार्य कारिणी का कोरम ५ और साधारण सभा का ११ होगा।

८ इस सभा का मुख्य कार्यालय देहली होगा

६ उपर्युक्त वैधानिक नियमों का संशोधन, परिवर्तन वा परिवर्धन तथा निर्माण करने का अधिकार विद्या सभा को होगा

इस योजना को क्रियान्वित किये जाने का यत्न हो रहा है। प्रान्तीय सभाओं से उनके

प्रतिनिधि सदस्यों के नाम तथा उनसे सम्बद्ध वा समर्थित शिक्षा संस्थाओं के नाम प्राप्त किये जा रहे हैं प्रसन्नता है अन्तरङ्ग सभा के निश्चयानुसार श्री प्रो० धर्मेन्द्रनाथ जी इस कार्य में अपना पूरा २ सहयोग दे रहे है।

पंजाब सहायता कार्य उप समिति

१ श्री ला० नारायण दत्त जी
२ ,, म० कृष्ण जी
३ ,, प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय
४ ,, पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित
५ ,, प० ज्ञानचन्द जी
६ ,, देशराज चौधरी जी (सयोजक)

गत वर्ष इस कार्य के लिए हमारे पास २६०६६) बचा था। इस वर्ष इस कार्य के लिये ३५३१) और प्राप्त हुआ और २४१६२) निम्न प्रकार व्यय हुआ —

१५०००) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा
५०००) आर्य अनाथालय पाटौदी हाउस देहली द्वारा
२१६२) सभा द्वारा

वर्ष के अन्त पर ५५४३) हमारे पास शेष था।

बंगाल सहायता निधि

इस समय विलोनिया और नागाफा (त्रिपुरा राज्य) इन दो केन्द्रों से प्रचार और सहायता कार्य हो रहा है। यह सभा बंगाल सहायता फण्ड से ५००) मासिक इन केन्द्रों के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा बगाल के द्वारा सहायता दे रही है।

नागाफा केन्द्र से पार्वत्य जातियो की रक्षा और सहायता का कार्य होता है। हमारा कार्य इस समय मुख्यतया रियॉक जाति मे हो रहा है। रियाकों की भाषा टिपरा भाषा कही जाती है। ये लोग बास के मकानों मे रहते हैं। नीचे के तल मे शूकर रहते है शूकर का मास खाते है। स्त्री, पुरुष बूढे बच्चे सभी मद्यपान करते है। ये लोग गगा, काली इत्यादि की पूजा करते और उन पर पशुओ की बलि चढ़ाते है। इनमे मुर्दों को जलाने का रिवाज है। श्राद्ध के दिन रिश्तेदार नातेदार तथा बिरादरी के लोग जमा होकर खूब शराब पीते है और मास का सेवन करते हैं। स्त्रियां भी शराब पीती और नृत्य करती हैं।

इन जातियों मे ईसाइयों का विशेष प्रचार है। प्रत्येक रियाक सरदार के घर पर मिशन वालों ने एक २ मिशनरी वेतन देकर रक्खा हुआ है, वह उनके बच्चों को पढाता, धर्मोपदेश करता और दवाई बाटता है।

इस राज्य मे ५० के लगभग ईसाई शिक्षक हैं। १०, १२ डाक्टर और ३-४ बडे पादरी है। १० वर्ष के काल में लगभग १०००० रियाक ईसाई बन चुके है।

यहॉ नवम्बर ४७ से ही हमारा नियमित प्रचार आरम्भ हो गया था, यहॉ एक प्रचारक १ चिकित्सक १ शिक्षक, तथा एक सेवक कार्य करते हैं। अब तक लगभग ५००० व्यक्तियों की चिकित्सा की गई है। हमारे प्रचार के फल स्वरूप रियॉक लोग ईसाइयों के जाल से सचेत होने लग गये है। रियॉक युवकों मे पढ़ने लिखने का भी प्रेम पैदा हो गया है तथा यज्ञोपवीत धारण करने और

यज्ञ करने की ओर रुचि बढ रही है। रात्रि पाठशालाओं की भी व्यवस्थ की हुई है। सरदारो के यहाँ रहने वाले ईसाई मिशनरी धीरे २ भाग रहे हैं। ईसाई प्रचारकों की सख्या मे वृद्धि की जा रही है। आर्य समाज को अपनी स्थिति की दृढ़ता के लिये विशेष यत्न करना होगा। इस राज्य में आर्य समाज के प्रचार की बहुत आवश्यकता है। यदि हमारा कार्य निरन्तर ५ वर्ष तक जारी रहा तो न केवल ईसाई बने हुए पर्वतीय भाई हिन्दू धम मे ही लौट आवेंगे अपितु ईसाई बनने का क्रम भी मन्द पड जायगा।

दूसरा बिलोनिया केन्द्र है जो इसी त्रिपुरा मे राज्य है। शिक्षक १ प्रचारक १ चिकित्सक १ दाई और एक सेवक नियुक्त हैं। इस केन्द्र से लगभग १०००० रोगियों की चिकित्सा हुई। ये रोगी प्राय पूर्वी पाकिस्तान के शरणार्थी थे जो बिलोनिया तथा आसपास के स्थानो मे आश्रय पाए हुए थे। नितान्त दरिद्र रोगियो का अनुपान तथा पथ्य के लिए भी सहायता दी गई। लगभग १०० विधवाओ और सधवाओं को वस्त्रो की सहायता दी गयी। कई बेकार व्यक्तियो को नकद सहायता देकर उन्हें धन्धों मे लगाया गया। अन्य प्रकार से भी इन शरणार्थियों को सहायता दी जाती रही। गत वर्षो मे बाढ आजाने के कारण अन्न कष्ट होने पर चावल इत्यादि अन्न भी वितरण किया गया। केन्द्रमे १ वाचनालय भी खुला हुआ है।

इन केन्द्रो का सचालन आर्य प्रतिनिधि सभा बगाल के द्वारा श्री पण्डित सदाशिव जी शर्मा क निरीक्षण मे हो रहा है।

पजाब और बंगाल की आपत्ति में आर्य समाज द्वारा हुए सहायता कार्य के पूर्ण विवरण के प्रकाशन की अत्यान्तावश्यकता अनुभव की जा रही है। यह कार्य सभा की विचार कोटि में है।

सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड

१ श्री प० इन्द्र जी
२ श्री प० गगा प्रसाद जीउपाध्याय (सयोजक)
३ श्री पं० रामदत्तजी शुक्ल
४ श्री प्रो० धर्मेन्द्र नाथ जी शास्त्री
५ श्री प्रताप चन्द्र पण्डित

इस समिति क २ बैठकें बुलाई गई परन्तु कोरम के अभाव मे न हो सकीं। सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड मे सार्वदेशिक सभा के वैधानिक अधिकार की सुरक्षा का प्रश्न सभा के सामने है। सभा के निर्देशानुसार श्री० प्रो० धर्मेन्द्रनाथ जी इस विषय में प्रयत्नशील हैं।

प्रचार प्रणाली में परिवर्तन विषयक

१ श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय
(सयोजक)
२ श्री प० भीमसेन जी
४ श्री प्रताप चन्द्र जी
५ श्री प० रामदत्तजी
६ श्री बा० पूर्णचन्द जी

इस समिति की १ बैठक हुई। समिति द्वारा भेजी हुई योजना पर सभा की २५-७-४८ को अन्तरग मे विचार होकर योजना आर्य समाजों मे प्रचारित की गई।

उपदेशक महाविद्यालय उप समिति

यह समिति गत वर्ष निम्न प्रकार नियुक्त हुई थी

१ श्री पं० रामदत्त जी शुक्ल (संयोजक)

२ ,, ,, भीमसेन जी विद्यालंकार ॄ

३ ,, ,, धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

४ ,, ,, प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति

५ , ,, गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

इस समिति ने अपनी योजना अन्तरंग सभा के विचार के लिये भेजी हुई है जिस पर शीघ्र विचार होने वाला है।

आर्य सम्मेलन के नियमों में संशोधन विषयक

आर्य म०सम्मेलन के नियमों में संशोधन का निश्चय सभा की १३ २ ४६ की अन्तरंग सभा की बैठक में हुआ था और इस कार्य के लिये निम्नलिखित उप समिति की नियुक्ति की गई थी -

१ श्री लाला नारायणदत्त जी

२ श्री म० कृष्ण जी

३ ,, , मिहिर चन्द्रजी धीमान्

४ ,, ,, रामदत्त जी शुक्ल

५ , ,, ज्ञानचन्द जी (संयोजक)

इस उप समिति ने संशोधित नियमों का ड्राफ्ट भेज दिया है जिस पर अन्तरंग सभा विचार करने वाली है।

पंजाब की सम्पत्ति

पश्चिमी पाकिस्तान मे आर्य समाज की संपत्ति के विषय मे आर्य महासम्मेलन कलकत्ता में निम्न लिखित निश्चय हुआ था—

"पश्चिमी पाकिस्तान में आर्य समाज की और आर्य संस्थाओं की करोड़ों रुपये की हानि हुई है जिसकी यथोचित रक्षा एवं क्षति पूर्ति होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त छूटे हुए धर्म मन्दिरों, शिक्षणालयों पुस्तकालयों तथा अन्य संस्थाओं के विषय में भी उचित कार्यवाही करनी है जो भारत सरकार और पाकिस्तान के स्तर से ही (गवर्नमैंट लेविलपर) हो सकती है न कि व्यक्तिगत प्रयत्नों से।

यह कार्य आर्य समाज के हित में ठीक २ हो सके इसके लिये यह सम्मेलन निम्नलिखित सज्जनों की एक समिति बनाता है —

१ श्री लाला देशबन्धु जी (संयोजक)

२ ,, लाला खुशहाल चन्द जी

३ ,, बख्शी टेकचन्द जी

४ ,, म० कृष्ण जी

५ , माननीय घनश्याम सिंह जी

सम्मेलन के अन्य निश्चयों के साथ २ इस निश्चय को सार्वदेशिक सभा अपनी १३ २ ४६ की अन्तरंग की बैठक मे सम्पुष्ट कर चुकी है और यह निश्चय नियमित रूप से संयोजक महोदय की सेवा में भेजा जा चुका है। विदित हुआ है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा,ने अपनी मांगें Claims गवर्नमेन्ट के पास भेज दिये हैं। हमने उनकी कापी मांगी है। अभी प्राप्त नहीं हुई है।

राजनीति

राजनीति के सम्बन्ध में अखिल भारतीय आर्य महा सम्मेलन कलकत्ता ने अपने नि० सं० १० के द्वारा निम्न लिखित प्रस्ताव स्वीकृत किया था।

(१) अखिल भारतीय आर्य महासम्मेलन, भारतवासियों को बधाई देता है कि उन्होंने राजनैतिक दासता के अभिशाप से मुक्ति पाकर स्वाधानता को प्राप्त कर लिया है। आर्य समाजों ने अपने देश के स्वातन्त्र्य युद्ध मे जो प्रशसनीय असाधारण भाग लिया है उस पर यह सम्मेलन उन्हे हार्दिक साधुवाद देता है।

(ख) यद्यपि स्वाधीनता प्राप्ति के साथ देश का जो विभाजन हुआ है उसे यह सम्मेलन अत्यन्त खेदजनक और आर्य विगर्हित तथा देश हित विरोधी समझता है, तब भी यह सन्तोष अनुभव करता है कि अपने भविष्य निर्माण का जो स्वतन्त्र अवसर मिला है उससे लाभ उठाकर भारतीय राष्ट्र न केवल अपनी ही सर्वतोमुखी उन्नति करने मे समर्थ होगा, कालान्तर मे अपनी खोई हुई एकता को भी प्राप्त कर लेगा।

(ग) इस अवसर पर यह सम्मेलन देशवासियों को यह चेतावनी देना चाहता है कि उन्होंने सत्य, अहिंसा, तप, धीरता, और सच्चरित्रतादि जिन गुणों की सहायता से स्वराज्य प्राप्त किया है उस की रक्षा दृढता से तभी हो सकेगी यदि राष्ट्र ने उन गुणों को पहले से भी अधिक धारण किया। अन्यथा यदि शक्ति प्राप्त होने पर उन गुणों की उपेक्षा कर दी तो सभावना है कि पूर्वापेक्षया भी अधिक कठोर दु ख उठाना पड़े।

(घ) किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र की रक्षा और उन्नति के लिये आवश्यक है कि उसका प्रत्येक नागरिक राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पूर्ण रूप से पालन करे, इस कारण यह सम्मेलन भारत के प्रत्येक आर्य नर नारी को आदेश देता है कि अपने देश की राजनीति में पूर्ण रूप से भाग ले, साथ ही यह बात उन्हें सदा ध्यान में रखनी चाहिये कि वे व्यवहार मे राजनैतिक वेदोक्त आदर्शों से अणुमात्र भी विचलित न हों।

(ङ) आर्य सस्कृति तथा आर्य सभ्यता की दृष्टि से वर्तमान राजनीति को अधिक से अधिक प्रभावित करने के साधनों पर विचार करने तथा आर्य समाज की राजनैतिक मांगों को अकित करने के लिये निम्न लिखित सज्जनों की समिति बनाई जाय जो ३ मास के अन्दर सार्वदेशिक सभा मे अपनी रिपोर्ट उपस्थित कर दे —

१ श्री पं० रामदत्त जी शुक्ल (सयोजक)
२. श्री प० भगवद्दत्त जी
३ श्री मिहिरचन्द जी धीमान्
४. श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी
५. श्री म० कृष्ण जी
६ श्री पं० विनायकराव जी विद्यालकार
७. श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
८. श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ
९ श्री कुंवर चान्दकरण जी शारदा
१०. श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार
११. श्री स्वामी अभेदानन्द जी
१२. श्री पं० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री

इसकी पूर्ण रिपोर्ट अभी तक अप्राप्त है।

आर्य महा सम्मेलन कलकत्ता

इस सभा की साधारण सभा ने अपने २५-४ ४८ के अधिवेशन में निश्चय किया था कि अखिल भारतीय आर्य महा सम्मेलन का अधिवेशन प्रतिवर्ष हुआ करे। इससे पूर्व यह अधिवेशन आवश्यकतानुसार हुआ करता था। तदनुसार आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल ने कलकत्ते में इस सम्मेलन को बुलाने का निमन्त्रण दिया जो २५ ७-४८ की अन्तरंग सभा की बैठक में स्वीकृत हुआ।

सम्मेलन ३१ दिसम्बर ४८ तथा १, २ जनवरी ४९ को कलकत्ता (बीडन पार्क) में श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त (स्पीकर लेजिस्लेटिव असेम्बली मध्यप्रदेश) की अध्यक्षता में स-समारोह हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन पश्चिमी बंगाल के गवर्नर, श्री डा० कैलाशनाथ जी काटजू द्वारा हुआ। सम्मेलन के लिये लगभग ३००० प्रतिनिधियों की नामावली प्राप्त हुई थी जिसमें से लगभग १००० प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। प्रतिनिधियों की संख्या और समारोह की दृष्टि से यह सम्मेलन आशातीत रूप से सफल रहा जिसके लिये मुख्यतया कलकत्ता के आर्य बन्धु बधाई के पात्र हैं। इस सम्मेलन में खिल भारतीय आर्य वीरदल की सेवा तथा प्रबंध व्यवस्था भी सराहनीय रही।

सम्मेलन में पास हुए प्रस्ताव इस प्रकार हैं

निश्चय संख्या १

शोक प्रस्ताव

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी

(क) यह सम्मेलन श्री पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी के निधन पर अत्यन्त शोक प्रकट करता है। पूज्य स्वामी जी महाराज ने अपने ५० वर्ष के कार्य काल में आर्य समाज की सर्वतोभावेन सेवा की और उसकी अवस्था को बहुत उन्नत किया। श्री स्वामी जी महाराज आर्य जगत् के प्राण थे। उनका प्रभाव असाधारण था। वे प्रौढ़ लेखक, प्रभावशाली वक्ता सफल नेता और उच्च कोटि के प्रबन्धक थे। उनके नेतृत्व में आर्य समाज को हैदराबाद दक्षिण और सिन्ध के सत्याग्रहों में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। आत्मदर्शन, उपनिषद् भाष्य आदि आदि उनकी चमत्कृत कृतियाँ आर्य जगत् को सदैव लाभ पहुचाती रहेंगी ऐसे सम्मान्य नेता के वियोग से समस्त आर्य जगत् दु खी है और ईश्वर से प्रार्थी है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

श्री पूज्य महात्मा गान्धी जी

(ख) यह महा सम्मेलन सत्य और अहिंसा के परमोपासक प्राचीन भारतीय आर्य संस्कृति के परम भक्त विश्ववन्द्य पूज्य महात्मा गान्धी जी की हत्या पर हार्दिक दु ख और रोष प्रकट करता है और उनके त्याग, तप, परोपकार, सर्वभूत दया, विश्व बन्धुत्व आदि गुणों एवं देश तथा समाज के उद्धार और विश्व शान्त्यर्थ की गयी बहुमूल्य सेवाओं के लिये उनके प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है।

श्री प्रो० सुधाकर जी

(ग) यह सम्मेलन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के भूतपूर्व मंत्री श्री सुधाकर जी एम० ए०

के निधन पर हार्दिक दुःख प्रकट करता है और उनके निधन को आर्य समाज की महती क्षति समझता है।

श्री प्रो० जी ने लगभग निरंतर ४ वर्ष तक सभा के मंत्री पद पर कार्य करते हुए विशेषत हैदराबाद सत्याग्रह के समय रक्षा मंत्री के रूप मे आर्य समाज की बहुत बड़ी सेवा की जिसके लिये आर्य जगत् उनका बहुत ऋणी है। उन्होंने अपने हिन्दी और अंगरेजी के साहित्य से आर्य समाज के गौरव को भी बढाया है। यह सम्मेलन कृतज्ञतापूर्ण भावा मे उनकी सेवाओं का स्मरण करता है।

अन्य आर्यपुरुष तथा नेता

(घ) यह सम्मेलन आर्य जाति तथा आर्य समाज के निम्न लिखित नेताओं तथा अन्य उत्साही कार्यकर्ताओं और देवियों के निधन पर दुःख प्रकाशित करते हुये उनकी आर्य जाति तथा आर्य समाज के प्रति की गई सेवाओ के लिए श्रद्धाजलि अर्पित करता तथा परमात्मा से दिवगत आत्माओं की सदगति के लिये प्रार्थना करता है।

१ श्री धा० श्याम सुन्दरलाल जी वकील मैनपुरी, २ श्री राजा ज्वालाप्रसाद जी, ३ श्री रासबिहारी तिवारी जी, ४ श्री प० चन्द्रगुप्त जी वेदालकार, ५ श्री पं० सिद्धगोपाल जी, ६ श्री मा० लक्ष्मण जी, ७ श्री प्रिंसिपल रामलाल जी, ८ श्री हरगोविन्द जी गुप्त, ९ श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी झज्झर, १० श्री स्वामी ईश्वरानन्द जी बिहार ११. श्री गोपीसिंह जी बिहार १२ श्री अर्जुनदेव जी लाहौर, १३ श्री भाई वशीलाल जी, १४ श्री प० राजाराम जी शास्त्री, १५ श्री पं० वजीरचन्द जी शर्मा, १६ श्री शहीद परमानन्द जी लाहौर, १७ श्री परमानन्दजी रामा क्वेटा, १८ श्री अमर चन्द जी शारदा अजमेर, १९ श्री प० महेन्द्रचन्द्र जी बड़ौदा २० श्री भाई परमानन्द जी, २१ श्री बालकृष्ण जी मुजे, २२ श्री नृसिंह चिन्तामणि केलकर, २३ श्रीमती सुभद्रा कुमारी जी चौहान, २४ श्री विष्णुदास जी बासल २५ श्री प० व्यासदेव जी शास्त्री २६ श्री स्वा० संतोषानन्द जी, २७ श्री प० भवानी प्रसाद जी।

श्री प० मदनमोहन जी मालवीय

(ङ) यह सम्मेलन महामना प०मदनमोहनजी मालवीय के निधन को देश और जाति की महती क्षति समझता है। श्री मालवीय जी देश के बहुमूल्य रत्न थे उन्होंने अपनी आभा से इस देश का बड़ा गौरव बढाया था। उन्होंने देश की अनथक सेवा की थी जो सदैव भारत के इतिहास मे गौरवान्वित रहेगी। अपने परम श्रद्धास्पद नेता के वियोग से सचमुच आर्य जाति आज अकिंचन है।

श्री सुभाषचन्द्र जी बोस

यह सम्मेलन देश-रत्न श्री सुभाषचन्द्र जी बोस के निधन पर हार्दिक दुःख का प्रकाश करता है। उनकी सेवाओं के लिए देशवासी सदैव उनके ऋणी रहेंगे।

निश्चय स० २

आर्य समाज के ध्येय की घोषणा

अनार्ष बुद्धि के कारण ससार की वर्तमान दशा अत्यन्त शोचनीय है, सर्वत्र असन्तोष, अशान्ति, वैर, विरोध, कलह और सन्ताप दृष्टिगोचर होते हैं जो प्रयत्न इस पारस्परिक

अविश्वास तथा द्वेष भाव आदि को दूर करने के लिये किये जा रहे हैं वे सब असफल से हो रहे हैं। इस परिस्थिति को अत्यन्त असन्तोष-जनक अनुभव करते हुये आर्य समाज निम्नलिखित घोषणा का जो उसके मन्तव्यों से व्यक्त होती है और जिसका आर्य समाज अब तक प्रचार करता रहा है, व्यापक प्रसार करना अपना कर्त्तव्य समझता है। आर्य समाज का दृढ विश्वास है कि सत्य सनातन सार्वभौम वैदिक धर्म के मुख्य सिद्धान्तों को समझ कर उन पर आचरण करने और वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था के आधार पर सामाजिक संगठन करने पर ही मानव समाज का कल्याण सम्भव है अन्यथा नहीं, क्योंकि वेद समस्त धर्मों और शास्त्रों का मूल है, अत उसकी आदर्श शिक्षाओं को समस्त समुचित उपायों से संसार में फैलाना विश्व शान्ति और कल्याण के लिये परमावश्यक है।

१ ईश्वर एक है, वह हम सब प्राणियों का पिता है, जीवों के पुरुषार्थ और ईश्वर की दया इन दोनों के सम्मिश्रण से ही संसार मे सुख की प्राप्ति हो सकती है अत प्रत्येक आर्य का कर्तव्य है कि वह पुरुषार्थ और ईश्वर विश्वास इन दोनो गुणों को भली प्रकार धारण करे।

२ मनुष्य जाति एक है, उसमें राष्ट्रीय साम्प्रदायिक जाति और रंग तथा अन्य संकुचित भावनाओं के आधार पर द्वेष पूर्ण तथा हिंसात्मक भेद-भाव करना संसार की अशान्ति का मुख्य कारण है, आर्यसमाज इस भेद भाव को दूर करना मुख्य कर्तव्य समझता है।

३. सच्ची नागरिकता का आधार वेद के आधार पर मनु महाराज के बताये हुये धृति, क्षमा आदि १० लक्षण तथा यम, नियमादि हो सकते हैं, इनके अपनाये बिना मनुष्य सच्चा नागरिक नहीं बन सकता अत प्रत्येक आर्य का इन लक्षणों को अपनाना, और प्रचार करना आवश्यक कर्तव्य है।

४. मनुष्य की सच्ची उन्नति आध्यात्मिक एव आधिभौतिक समृद्धि के समन्वय से ही हो सकती है अत आर्य समाज का उद्देश्य है कि जीवन के इन दोनों विभागों पर पूरा बल दिया जाय।

निश्चय सं० ३

भारतस्थ आर्य समाजों का भावी कार्यक्रम

यह सम्मेलन निश्चय करता है कि भारत में स्थित समस्त आर्य समाजों को अगले वर्षों मे निम्नलिखित कार्यों पर विशेष बल देना चाहिये—

१ समस्त आर्य समाजों की शक्ति को केन्द्रित करना।

२ ऐसे साधन उत्पन्न करना जिनसे आवश्यकता पड़ने पर समस्त समाज की संगठन शक्ति का सुगमता से लाभ उठाया जा सके।

३ समाज के प्रेस को शक्तिशाली बनाना।

४ समाज के मच को अधिक आदरणीय, गम्भीर, उत्तरदायित्वपूर्ण एवं संगठित बनाना।

५ ग्रामवासियों, कृषकों, श्रमजीवियों, विद्यार्थियों एवं महिलाओं में विशेष प्रचार तथा कार्यक्रम की व्यवस्था करना।

६ भारतवर्ष में जाति-पाँति, छूआछूत, मादक-द्रव्य सेवनादि को दूर करने के लिये व्यावहारिक उपाय सोचकर उन्हें क्रियात्मक रूप देना।

७. प्रत्येक आर्य में यह भावना जागृत करना

कि आश्रम व्यवस्थानुसार धर्मपूर्वक अपने परिवार और देश की आर्थिक व्यवस्था को उन्नत करना उसका कर्तव्य है।

८ वैदिक धर्म मनुष्य मात्र के लिये है। अत जो व्यक्ति या समूह वैदिक धर्म या वैदिक संस्कृति को अपनावें अथवा अपनाना चाहें उनकी शिक्षा और दीक्षा के सम्बन्ध मे उचित व्यवस्था करना तथा उनके साथ उदारतापूर्वक सामाजिक सद्व्यवहार के लिये परिस्थिति उत्पन्न करना जिस से उनको किसी कष्ट, असुविधा अथवा भेद भाव का अनुभव न हो।

९ समाज के नर नारियों में ऐसी भावना उत्पन्न करना जिससे उनको वैदिक शिक्षा पर चलते हुये वैयक्तिक तथा पारिवारिक सुख और शांति का अधिक से अधिक लाभ हो सके। इस उद्देश्य से यह सम्मेलन प्रत्येक आर्य समाज से अनुरोध करता है कि वह समाज मन्दिरों में दैनिक संध्या, वेद पाठ, हवन तथा सत्संग का आयोजन करे।

१०. वैदिक साहित्य की अभिवृद्धि, प्रचार और प्रसार का उचित प्रबन्ध करना।

११. देश की लौकिक राजनीति को आध्यात्मिकता से प्रभावित करने के लिए सनातन वैदिक राजनीति के सिद्धान्तों का प्रचार करना कराना।

१२, विदेश मे उच्चकोटि का साहित्य और प्रचारक भेज कर विदेशस्थ समाजों को उन्नतिशील बनाना, विदेश मे आर्य गौरव को स्थापित करना तथा नवीन आर्य समाजों की स्थापना द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार क्षेत्र को विस्तृत करना।

१३. नवयुवकों को अपनी ओर आकृष्ट करने तथा आर्य समाज की सदस्यता के योग्य बनाने के लिये आर्यकुमार सभाओं को पूर्णरूपेण सहयोग प्रदान करना।

निश्चय सं० ४

हिन्दू कोड बिल

आर्य समाज सामाजिक सुधार का सदा पक्षपाती रहा है, और रहेगा। स्त्रियों की अथवा अन्य किसी भी समुदाय की उन्नति, उनके विकास, और उनके उचित अधिकारों के लिए आर्यसमाज लड़ता रहा है, इस दृष्टि से यद्यपि हिन्दू कोड बिल के कुछ प्रावधानों की आर्य समाज पुष्टि करता है तथापि क्योंकि हिन्दू कोड बिल में ऐसे बहुत से गम्भीर प्रावधान हैं जो हिन्दू ला में मौलिक परिवर्तन करते हैं, इनका विरोध यद्यपि हिन्दू जनता कर रही है, इन प्रावधानों के लिए हिन्दू जनता की इस प्रकार सम्मति नहीं ली गई है, जिससे यह कहा जा सके कि इसमें उनकी सहमति है, और फिर हमारा शासन असाम्प्रदायिक है और अभी संविधान सभा ने यह निश्चय किया है कि भारतवर्ष में एक विधि व्यवहार संहिता हो (Uniform Civil Code) अत इस सम्मेलन की यह सम्मति है कि वर्तमान संविधान सभा को चाहिए कि वह अभी हिन्दू कोड बिल को पारित न करे।

निश्चय संख्या ५

पंजाब की सम्पत्ति

पश्चिमी पाकिस्तान में आर्य समाज की और आर्य समाज की संस्थाओं की करोड़ों रुपयों की हानि हुई है जिसकी यथोचित रक्षा एवं क्षतिपूर्ति होनी चाहिए, इसके अतिरिक्त छूटे हुए पवित्र

मन्दिरो, शिक्षणालयों, पुस्तकालयो तथा अन्य संस्थाओं के विषय मे भी उचित कार्यवाही करनी है, जो भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार के स्तर से ही (गवर्नमेंट लेबिल पर) हो सकती है न कि व्यक्तिगत प्रयत्नों से।

यह सब कार्य आर्य समाज के हित मे ठीक ठीक हो सके इसके लिए यह सम्मेलन निम्न लिखित सज्जनों की एक समिति बनाता है —

१ श्री लाला देशबन्धु जी (संयोजक)।
२ श्री बख्शी टेकचन्द जी।
३ श्री लाला खुशहाल चन्द जी।
४ श्री म० कृष्ण जी।
५ श्री माननीय घनश्यामसिंह जी गुप्त।

निश्चय संख्या ६

भारत के नये विधान में भारत के किसी भी सम्प्रदाय के लिए कोई किसी प्रकार की रियायत न रक्खी जाय, ब्रिटिश सरकार ने राज्य प्रबन्ध में सम्प्रदायों तथा मतों को पृथक् २ अधिकार दे रक्खे थे उसका भयङ्कर परिणाम देखा जा चुका है, अतएव अब स्वतन्त्र भारत मे किसी समुदाय के लिए सीटें और नौकरियाँ रिजर्व न की जावें और सबके लिये सम्मिलित निर्वाचन हो और नौकरियों में केवल योग्यता को समक्ष रखा जाय, तभी साम्प्रदायिकता का विष हमारे राष्ट्र से दूर हो सकेगा।

निश्चय संख्या ७

यत: भारतीय संस्कृति की आधार शिला संस्कृत साहित्य है, अत संस्कृत का अध्ययन प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य है, संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य की शिक्षा को भारतीय बालकों का हाई स्कूल कक्षा तक अनिवार्य किया जाय। यह सम्मेलन भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों से यह भी अनुरोध करता है कि वह प्रतिवर्ष अपने बजट मे संस्कृत भाषा के अमुद्रित ग्रन्थों के प्रकाशन के लिये समुचित राशि रक्खा करे

निश्चय संख्या ८

राष्ट्र भाषा और राज्य भाषा

अंग्रेजो की दासता से भारतवर्ष के मुक्त होने के पश्चात् अब यह प्राय निर्विवाद है कि अंग्रेजी भाषा के साम्राज्य का भी अन्त हो कर रहेगा, अंग्रेजी भाषा का स्थान राष्ट्र भाषा के रूप मे कौन सी भाषा ले यह प्रश्न अब केवल बौद्धिक विचार कोटि मे ही सीमित नहीं रह गया वरन अब तो वह स्वभावत क्रियात्मक महत्व का हो गया है, इस सम्मेलन की सम्मति मे प्रान्तों और विविध रियासतों की भाषायें तो उनकी अपनी प्रान्तीय भाषायें ही होगी, कम से कम उस काल तक जब तक कि राष्ट्र भाषा सर्वव्यापी न हो जावे।

केन्द्रीय शासन की भाषा तो हिन्दी और लिपि देवनागरी ही होनी चाहिए यह इस सम्मेलन की स्पष्ट सम्मति है। केन्द्र मे हिन्दी के साथ २ उर्दू भाषा और अरबी लिपि को रखने के लिए कोई भी कारण नहीं है। बङ्गाली, मराठी, तेलगू आदि अन्य प्रान्तीय भाषाओं की अपेक्षा उर्दू भाषा और अरबी लिपि की कोई विशेषता नहीं कि जिसके कारण वह उन भाषाओं की अपेक्षा हिन्दी के साथ केन्द्रीय शासन की भाषा स्वीकार की जावे, योग्यता जनसंख्या आदि की दृष्टि से तो बङ्गला, तेलगू आदि भाषाओं का स्थान आयेगा।

भाषा का प्रभाव किसी देश के निवासियो के

राष्ट्रीय विचारों पर, उनकी सस्कृति पर हुए बिना नहीं रह सकता, जिस भाषा की दृष्टि स्वदेश की ओर न होकर विदेश की ओर हो वह पृथक्त्व की भावना प्रेरित करती है, इस विचार से देखा जावे तो पाकिस्तान बनाने मे उर्दू भाषा और अरबी लिपि ने बौद्धिक पृष्ठ भूमि तैयार की इस से इन्कार नही किया जा सकता, परन्तु इन सब बातो को छोडकर केवल राष्ट्रीयता की दृष्टि से किंवा अन्य प्रान्तीय भाषाओं के साथ सहचारिता की दृष्टि स ही इस प्रश्न पर विचार करे तो भी यह स्पष्ट है कि राष्ट्र भाषा उर्दू या हिन्दुस्तानी और लिपि अरबी नहीं हो सकती वह हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि ही हो सकती है जो कि अन्य प्रान्तीय भाषाओं और लिपियों के निकटतम है।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि हमारा भाषा सस्कृतनिष्ठ हिन्दी होगी परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि जो शब्द विदेशी भाषाओ से हमारी भाषाओ मे आ गए हैं और वे हमारी भाषा का अङ्ग बन गए हैं, उनका निरर्थक बहिष्कार किया जाय हम अपनी भाषा को सम्पन्न बनाना चाहते हैं इसके लिए कोई बात हम ऐसी नहीं करेंगे जो इसमे बाधक हो।

निश्चय सख्या ६

षष्ठ आर्य महासम्मेलन की आज्ञ की यह सभा पश्चिमी बङ्गाल के माननीय मन्त्री श्री मोहनीमोहन बर्म्मन की निमम हत्या पर हार्दिक शोक प्रकट करती है परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि दिवङ्गत आत्मा को शान्ति था शोक सन्तप्त परिवार को इस वज्राघात क सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

[ख] यह सम्मेलन सर अकबर हैदरी गवर्नर आसाम की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट करता है।

निश्चय सख्या १०

राजनीति

क अखिल भारतीय आय महासम्मेलन, भारतवासियों को बधाई देता है कि उन्होने राज नैतिक दासता क अभिशाप से मुक्ति पाकर स्वाधीनता का प्राप्त कर लिया है आय समाजियों न अपने देश क स्वातन्त्र्य युद्ध मे जो प्रशसनीय भाग लिया है उस पर यह सम्मेलन उन्हें हार्दिक साधुवाद देता है।

ख यद्यपि स्वाधीनता प्राप्ति क साथ देश का जो विभाजन हुआ है उसे यह सम्मेलन अत्यन्त खेदजनक और आर्य विगर्हित तथा देश हित विरोधी समझता है, तब भी यह सन्तोष अनुभव करता है कि अपने भविष्य निर्माण का जो स्वतन्त्र अवसर मिला है उससे लाभ उठाकर भारतीय राष्ट्र न केवल अपनी ही सर्वतोमुखी उन्नति करने में समर्थ होगा कालान्तर में अपनी खोई हुई एकता को भी प्राप्त कर लेगा।

ग इस अवसर पर यह सम्मेलन देशवासियो को यह चेतावनी देना चाहता है कि उन्होंने सत्य, अहिंसा, तप धीरता और सच्चरित्रादि जिन गुणों की सहायता से स्वराज्य प्राप्त किया है उन की रक्षा दृढता से तभी हो सकेगी यदि राष्ट्र ने उन गुणों को पहले से भी अधिक धारण किया। अन्यथा यदि शक्ति प्राप्त होने पर उन गुणों की उपेक्षा कर दी तो सम्भावना है कि पूर्वापेक्षया भी

अधिक कठोर दु ख उठाने पड़ें ।

घ किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र की रक्षा और उन्नति के लिये आवश्यक है कि उसका प्रत्येक नागरिक राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों का पूर्ण रूप से पालन करे, इस कारण यह सम्मेलन भारत के प्रत्येक आर्य नर नारी को आदेश देता है कि अपने देश की राजनीति मे पूर्ण रूप से भाग ले, साथ ही यह बात उन्हें सदा ध्यान मे रखनी चाहिये कि वे व्यवहार में राजनैतिक वेदोक्त आदर्शों से अणुमात्र भी विचलित न हों ।

च आर्य सस्कृति तथा आर्य सभ्यता की दृष्टि से वर्तमान राजनीति को अधिक से अधिक प्रभावित करने के साधनों पर विचार करने तथा आर्य समाज की राजनैतिक माँगों को अङ्कित करने के लिए निम्न लिखित सज्जनों की समिति बनाई जाय जो ३ मास के अन्दर सार्वदेशिक सभा में अपनी रिपोर्ट उपस्थित कर दें—

१ श्री प० रामदत्त जी शुक्ल (सयोजक)
२ श्री प० भगवद्दत्त जी
३ श्री मिहिरचन्द जी धीमान्
४ श्री प० ज्ञानचन्द्र जी
५ श्री म० कृष्ण जी
६ श्री प० विनायकराव जी विद्यालंकार
७ श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
८ श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ
९ श्री कुवर चान्दकरण जी शारदा
१० श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार
११ श्री स्वामी अभेदानन्द जी
१२ श्री पं० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री

निश्चय संख्या ११

साहित्य सत्कारनिधि

आर्य समाज मे वैदिक सिद्धान्तों के प्रतिपादनार्थ और विरोधियों के आक्षेपों के समाधानार्थ निर्मित गवेषणा पूर्ण उच्चकोटि के प्रामाणिक ग्रन्थों की न्यूनता को दूर करने के लिये यह आवश्यक है कि लेखकों को पुरस्कार प्रदान करने की प्रथा को अपना कर साहित्य की सृजना और वृद्धि की जाय इसके लिये सार्वदेशिक सभा के अधिकार मे एक निधि "साहित्य सत्कार निधि" के नाम से स्थापित की जावे । धनी मानी, दानी महानुभावों को प्रेरणा की जावे कि वे अपने वा अपने किसी सम्बन्धी वा मित्र के नाम पर स्थिर पुरस्कार राशि की व्यवस्था करे । अन्य प्रकार से भी इस निधि में धन एकत्रित किया जावे ।

निश्चय सख्या १२

शुद्धि

(क) पाकिस्तान बनने के परिणाम स्वरूप जो भयङ्कर काण्ड हुये, उनमे एक यह भी है कि अनेक हिन्दू भाइयों और बहनों को अपना धर्म परिवर्तन करना पड़ा । इन भाई बहिनों को पुनः आर्य (हिन्दू) धर्म और समाज में लाने का कार्य आर्य समाज का मुख्य कर्तव्य है । आर्य समाज यह सदैव मानता रहा है कि धर्म और समाज का द्वार प्रत्येक धर्मावलम्बी के लिये खुला है जो कि स्वेच्छा से आना चाहें, इसलिये शुद्धि इसके कार्यक्रम का एक विशेष भाग रहा है। यह सम्मेलन समस्त आर्य पुरुषों, आर्य समाजों तथा आर्य प्रतिनिधि सभाओं को आदेश देता है कि

वर्तमान में इस कार्य को मुख्यता देकर इसकी ओर विशेष ध्यान रक्खें, जिससे कि वे अब तक के बिछुडे हुये भाई और बहिन जिन्हें आज तक किसी भी कारण धर्म परिवर्तन करना पडा है पुन अपने पूर्वजों के प्राचीन धर्म में आ जाये और उनसे किसी प्रकार क भेद भाव का व्यवहार न किया जाय।

(ख) अत यह सम्मेलन यह आदेश देता है कि आर्य समाज, तथा प्रतिनिधि सभाए अपने अपने यहा इस कार्य के लिये पूरा यत्न करें और अपने उपदेशको को इस काम मे अधिक समय लगाने क लिये नियुक्त करे, यह काम गभीरता और साहस क साथ और चुपचाप होना चाहिये और सब समाज अपने अपने यहा के काम का पूरा पूरा विवरण चाहे वह कितना भी स्वल्प हो प्रतिमास अपनी सभाओ को भेजती रहे।

(ग) बडे दु ख से कहना पडता है कि हमारी भारत सरकार अब तक भी पूर्व की भाति सदैव मुसलमानों को प्रसन्न रखन की नीति का अव लम्बन कर रही है जो कि न्याय पर आश्रित नही अत यह सम्मेलन सरकार से भी अत्यन्त प्रेम और आत्मीय भावना से प्रार्थना करता है कि वह शुद्धि के इस कार्य को असाम्प्रदायिक भावना से प्रेरित समझ कर इसमे हस्तक्षेप न करे, क्योंकि भारतवर्ष का भविष्य इस बात पर बहुत अशो में अवलम्बित है और लगभग डेढ करोड अन्य मतों मे गये भाई हमारे रक्त के सम्बन्ध से बन्धु हैं।

निश्चय सख्या १३

रेडियो

यह सम्मेलन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से अनुरोध करता है कि वह रेडियो विभाग क अधिकारियों से मिलकर ऐसी व्यवस्था करे कि जिससे प्रति सप्ताह वेद का पाठ तथा प्रवचन रेडियो पर हुआ करे जिससे लोगों म धार्मिक जागृति उत्पन्न हो सके इसके अतिरिक्त ऋषि दयानन्द के जन्म दिवस, ऋषि निर्वाणोत्सव, आर्य समाज स्थापना दिवस, श्रद्धानन्द बलिदान जयन्ती आदि पर्वो के अवसर पर रेडियो पर विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया जावे और इस माग का पूरा करने के लिए आर्य जगत् की ओर से प्रबल आन्दोलन भी किया जावे।

निश्चय सख्या १४

अस्पृश्यता निवारण

अस्पृश्यता [तथा छूतछात का] अन्त करन के लिये नये विधान मे जो नियम बनाया गया है उस पर आर्य समाज भारत विधान परिषद को हार्दिक धन्यवाद देता है। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द का और आर्य समाज के ७५ वर्षो का एक पवित्र परिश्रम आज सफल हुआ।

निश्चय स० १५

पूर्वी पजाब यूनिवर्सिटी

पूर्वी पजाब यूनिवर्सिटी ने अगरेजी भाषा को अनिवार्य बना दिया है परन्तु सस्कृत को वहाँ अनिवार्य नहीं रक्खा गया। यह आर्य महा सम्मेलन यूनिवर्सिटी के निश्चय से विरोध प्रकट करता है और बलपूर्वक यह माग करता है कि संस्कृत को अनिवार्य घोषित किया जाय।

निश्चय स० १६

हिन्दू विश्वविद्यालय काशी

यह सम्मेलन इस बात पर अत्यन्त आश्चर्य

प्रकट करता है वि काशी के हिन्दू विश्वविद्यालय के महाविद्यालय की पौरोहित्य कक्षा का द्वार केवल जन्म से ब्राह्मण कुलोत्पन्न पुरुषों के लिये ही खुला हुआ है अन्य कुलोत्पन्न पुरुषों तथा स्त्रियों के लिये वह बन्द है। यत्न करने पर भी उसे अन्यों क लिये नहीं खोला गया। यह सम्मेलन विश्वविद्यालय के अधिकारियों से अनुरोध करता है कि इन जाति भेद सूचक प्रतिबन्धों को तत्काल हटा देवे।

निश्चय स० १७

सेना में प्रचार की व्यवस्था

भारत सरकार के अधीन सैनिक केन्द्रों मे सनिकों के पूजा पाठ आदि के लिये मस्जिद, गुरुद्वारा तथा मन्दिर के लिये स्थान दिये जाते हैं। इसी प्रकार आर्यसामाजिक सैनिकों को आध्यात्मिक सत्सग लगाने के लिये स्थान मिलने चाहिए तथा उनमे आध्यात्मिकता का प्रचार करने के लिये आर्य पुरोहित नियत करने चाहिए।

निश्चय स० १८

गोरक्षा

'क'

गौ दूध देकर तृप्त करती है, बैल हल चला कर मनुष्य के लिये अन्नादि उपजाता है, भार ढोकर मनुष्य का उपकार करता है। गोबर एव गोमूत्र उत्तम खाद का काम करते हैं। गौ जाति से मनुष्य वा विशेषकर आर्य जाति का धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एव राष्ट्रीय सम्बन्ध है। अत गौओ की उन्नति तथा रक्षा के लिये यह सम्मेलन भारत सरकार तथा पश्चिमी बगाल सरकार से सानुरोध प्रार्थना करता है कि—

क गो हत्या सर्वथा, सर्वदा के लिये राज्य व्यवस्था द्वारा निषिद्ध एव दण्डनीय ठहराई जाय।

ख अपाहज, असमर्थ एव अशक्त गौओं के लिये गो सेवा सदन जारी किये जाए।

ग सर्वाङ्गी, हृष्ट पुष्ट एव स्वस्थ समर्थ सांडों के द्वारा गो वश के सुधार और उत्कर्ष के वैज्ञानिक साधनों की उन्नति की सामग्री प्रस्तुत करें।

घ गो वश की वृद्धि के लिये अत्यन्त आवश्यक चारे दाने की सुव्यवस्था के साथ साथ स्थान २ पर गोचर भूमि की भी अनिवार्य व्यवस्था की जाय।

ङ जो गो शालाए, गो सेवा, गो वश के सुधार एव शुद्ध घी,शुद्ध दूध की उत्पत्ति का प्रबन्ध करें, उन्हें सुविधाए प्रदान की जाए।

च बनस्पति, बनावटी घी के बनाने तथा बेचने पर प्रति बन्ध लगाया जाय। केवल बनस्पत तेल के रूप मे घी बन और बिक सके उसका उद्‌जनी करण (हाईड्रोजिनेशन) न किया जाय ताकि उसका घी का रूप न बन पावे और लोग उसे घी में न मिला सकें।

(ख)

गौओ की प्रयोजनीयता एवं महत्व को विचार कर देश की अनेक म्युनिसिपल कमेटियों तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डो ने अपनी सीमा के भीतर गो वध बन्द कर दिया है, यह सम्मेलन कलकत्ता म्युनिसिपल कारपोरेशन तथा पश्चिमी बगाल की उन म्युनिसिपल कमेटियों एवं डिस्ट्रिक्ट बोर्डों से जिन्होने अभी तक गो हत्या को बन्द नहीं किया है, अनुरोध करता है कि वे देश हित को दृष्टि मे रखते हुये अपनी अपनी सीमा के अन्दर गोवध पर प्रतिबन्ध लगावें।

(ग)

गोवंश के ह्रास के कारण हमारी हानि हो रही है, दूध, दधि, घृत आदि का मिलना प्राय दुर्लभ हो रहा है, मनुष्य जीवन के लिये इन पदार्थों की प्राप्ति के निमित्त गोरक्षा हमारे लिये एक अपरिहार्य काय है अत यह सम्मेलन जनता से बल पूर्वक अनुरोध करता है कि गोवंश के सुधार तथा गौ त्या रोकने के लिये निम्नलिखित कार्य का अनुष्ठान ध्यान से करें।

क गोवंश के सुधार के लिये उत्तम सांडों का ही प्रयोग करें।

ख गोवध द्वारा प्राप्त चमडे का व्यवहार सर्वथा बन्द कर दिया जाय।

ग गोवंश की रक्षा, उन्नति एवं सुधार के लिये सब प्रकार की सहायता एवं सहयोग देवें।

निश्चय संख्या १६

आर्य वीर दल

यह सम्मेलन भारतीय नवयुवको मे चारित्रिक निर्माण एवं सांस्कृतिक समुन्नति को ध्यान में रखते हुये आर्य वीर दल के विकास की आवश्यकता अनुभव करता है और समस्त प्रान्तीय व प्रादेशिक सभाओं तथा तत्सम्बन्धी समस्त आय संस्था ो से बलपूर्वक अनुरोध करता है कि वे आर्य वीर दल के संचालनार्थ सक्रिय सहयोग व सहायता प्रदान करें।

निश्चय संख्या २०

यह सम्मेलन विहार प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के निमन्त्रण को सधन्यवाद स्वीकार करते हुये, निश्चित करता है कि अखिल भारतीय आर्य महासम्मेलन का आगामी अधिवेशन बिहार प्रान्त में किया जाय।

इन प्रस्तावों को इस सभा की अन्तरंग सभा न अपनी १३-२-४६ की बैठक मे सम्पुष्ट किया। इनमे से कुछ के विषय मे आवश्यक कार्यवाही की जा चुकी है तथा कुछ के विषय में हो रही है।

साहित्य सत्कार निधि

इस निधि की स्थापना कलकत्ता आय महा सम्मेलन के नि० स० ११ के द्वारा उच्चकोटि के साहित्य की उत्पत्ति और वृद्धि के उद्देश्य से की गई है। इस निधि के धन से लेखकों को उन की उत्कृष्ट रचनाओं के लिये पुरस्कृत किया जाया करेगा। पुरस्कार के नियमों पर सभा विचार कर रही है। आशा है वे शीघ्र ही बन जायगे।

सम्प्रति सभा ने इस निधि के लिये १ लाख रुपया एकत्र करने का निश्चय किया है। इस सम्बन्ध मे आयसमाजों और आर्य जनता के नाम अपील प्रकाशित की जा चुकी है और धन भी आने लगा है। अब तक ४२५॥=) इस निधि में प्राप्त हुआ है।

अच्छा तो यह होता कि कोई एक दानी महानुभाव ही इस समस्त राशि को अपने वा अपने किसी निकटतम सम्बन्धी के नाम पर प्रदान करके यश के भागी बनते। धनी मानी महानुभावो का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया जा रहा है।

लुधियाना निवासी ी लब्भूराम जी नैयड़ और उनकी मित्र मण्डली इस काय मे विशेष रस ले रहे हैं आशा है उनकी मित्र मण्डली का इस निधि मे बहुत बड़ा भाग होगा

भूपाल स्टेट में सत्यार्थ प्रकाश के १४ वें समुल्लास पर प्रतिबन्ध और उसका निराकरण

सीहौर (भूपाल राज्य) के नाजिम गत कई वर्षोसे प्रति वर्ष आर्य समाज के उत्सव पर सत्यार्थ प्रकाश के १४वें समुल्लास के प्रवचन और व्याख्यान पर प्रतिबन्ध लगा दिया करते थे। इस वर्ष भी गत जून ४८ मे निम्नलिखित आज्ञा जारी करके उन्हों ने प्रतिबन्ध लगाया।

'अज अदालत डिस्ट्रिक्टमजिस्टेटी ज़िला मगरवत व इजलास मिया मुनव्वर मुहम्मद खा बी० ए० एल० एल बी० डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ज़िला मगरिव गवर्नमेन्ट भोपाल सीहौर दफा १३३।१४४ जाब्ता फौजदारी गवर्नमेन्ट भोपाल। बनाम, सेक्रेट्री आर्य समाज सीहौर।

आर्य समाज सीहोर मे सत्याथ प्रकाश के बाव १४ को पढा जाने वाला है या उसके मुतल्लिक तकरीर होने वाली है। चू कि इस वाव का मजमून दीगर मजाहिब की दिल आजारी का वाइस होकर फिरकेवाराना फिसाद और झगडे होने के नताइज पैदा हो सकते हैं नजर विरान दफा १३३।१४४ जाब्ता फौजदारी गवर्नमेन्ट भूपाल मौजूदा फिरकेवाराना फसाद के पेश नजर हुक्म दिया जाता है कि जल्सा आर्य समाज की किसी नशस्त मे इस वाव के मजामीन को न पढा जाय और न किसी तकरीर वगैरा के जरिये जेरे वहस लाया जाय।

आज हमारे हुक्म और मुहर अदालत से जारी हुआ मुवर्खा यकम जून ४८

द० डि० म० व नाजिम
सीहोर "

सीहोर आर्य समाज प्रतिवर्ष इस आज्ञा का प्रतिवाद भूपाल सरकार को भेज दिया करता था, यद्यपि प्रति वर्ष नियम रूप में इस आज्ञा के प्रचारित किये जाने का औचित्य उनकी समझ मे न आता था। इस वार इस अपमान जनक आज्ञा के आगे सिर झुकाना सीहोर के आर्यो के लिये असह्य हो गया फलत उन्होंने इस सभा तथा आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान को इस अनुचित आज्ञा को रद्द कराने के लिये जोरदार कार्यवाही करने की प्रेरणा की और आवश्यकतानुसार सत्याग्रह करने की अनुमति चाही।

सभा कार्यालय से २।।७।४८ को भूपाल सरकार को एक विशेष पत्र लिखा गया जिसमे इस अनुचित आज्ञा को रद्द करने की माग की गई और आर्य जगत् मे इस आज्ञा के कारण जो असन्तोष उत्पन्न हो रहा था उस से भी उन्हें अवगत करा दिया गया।

इधर आर्यप्रतिनिधि सभा राजस्थान ने एक तार जोरदार प्रतिवाद स्वरूप भूपाल के प्राइम-मिनिस्टर के पास भेजा। उस तार के उत्तर मे प्राइममिनिस्टर महोदय ने साम्प्रदायक शान्ति रक्षा की आड मे इस आज्ञा के औचित्य का प्रतिपादन किया। इस पर सार्वदेशिक सभा को इस विषय पर गभीरता पूवक विचार करने और तत्काल आवश्यक कार्यवाही का निश्चय करन के लिये वाधित होना पड़ा। इस विषय पर सभा की २४।७।४८ की अन्तरग मे विचार हुआ और भूपाल सरकार को इस आज्ञा का वापिस लेने के लिये २ मास की अवधि देने का निश्चय हुआ और यदि दो मास के भीतर यह आज्ञा वापिस

न ली आय तो अन्य उपायों का अवलम्बन करने का भी अधिकार सभा प्रधान को दे दिया गया।

३०।७ ४८ को एक विशेष पत्र के द्वारा सभा के इस निश्चय को भूपाल सरकार को सूचना दी गई और प्रेरणा की गई कि वे आज्ञा को शीघ्र से शीघ्र वापस लेकर अपनी भूल का प्रतिकार और आर्य समाज के प्रति न्याय करे।

भूपाल सरकार ने अपने पत्र सख्या ३६७१। २८।७।४८ के द्वारा सभा के २१ ७।४८ के पत्र की प्राप्ति स्वीकार करते हुए सूचना दी कि यह मामले पर विचार कर रही है और विचार के फल से सभा को शीघ्र अवगत किया जायगा। अन्तरग सभा के निश्चय तथा सभा व ३०।७।४८ के पत्र के उत्तर मे भूपाल सरकार ने अपने पत्र स० ४८७ ६६६।श्र १६ ८ तिथि २६।६।४८ के द्वारा सभा को सूचित किया कि डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट सीहौर ने प्रतिबन्ध पहले ही उठा लिया है और आर्य समाज सीहौर को इसकी सूचना दी जा चुकी है जिसकी प्राप्ति स्वीकार भी हो चुकी है। इस प्रकार अवाञ्छनीय प्रसग समाप्त हुआ। भूपाल सरकार की इस दूरदर्शिता पूर्ण कार्यवाही के लिए धन्यवाद दिया जाता है।

पुस्तक भडार, बिक्री

इस वर्ष इस विभाग मे श्री नारायण स्वामी जी कृत प्रश्न, केन, कठ और ऐतरेय उपनिषदों के नये संस्करण छपे।

इस वर्ष बिक्री का विवरण इस प्रकार है —

१२६।।।)।। मथुरा शताब्दी का स्टाक,
७१४)।। चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक निधि को पुस्तकें,
१२६३१)।। श्री नारायण स्वामी पुस्तक प्रकाशन निधि,
११५६।-) आर्यसाहित्य प्रकाशन निधि,
६४) सिन्धी सत्यार्थप्रकाश,

———
३३२४।≈)।।

प्रकाशन निधि से ६००) कार्यालय के लेखकों के वेतन के भागरूप मे लिया गया।

१-१२-४८ से सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड दिल्ली सोल एजेन्ट के रूप मे सभा की पुस्तकों की बिक्री कर रही है।

सार्वदेशिक पत्र

इस वर्ष भी पत्र का सम्पादन श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति ने किया। इस वर्ष चन्दे व विज्ञापन से ४६५७।।-)।। की आय तथा ७४१६), व्यय हुआ। घाटा २४६१।≈)६ रहा। गत वर्ष घाटा २४५४।≈) था। इस समय ग्राहक सख्या ८३० है। पत्र की ग्राहक सख्या बढ़ाये जाने का यत्न हो रहा है।

जैसा कि गत वर्ष की रिपोर्ट मे अङ्कित है कि दिल्ली के चीफ कमिश्नर ने श्री डा० सूर्यदेव जी द्वारा लिखित जनवरी ४८ के अङ्क में प्रकाशित एक लेख के सिलसिले मे पत्र से १०००)की जमानत मागी थी जो जमा करा दी गई थी। इस वर्ष २४-४ ४८ की अतरङ्ग सभा के नि० स० १४ के अनुसार जमानत विषयक चीफ कमिश्नर की आज्ञा के विरुद्ध शिमला हाई कोर्ट में अपील की गई। प्रसन्नता है कि अपील खर्चों सहित स्वीकृत हो गई। माननीय हाई कोर्ट का फैसला निम्न प्रकार है —

TRUE COPY

In the High Court of Judicature for the Province of the East Punjab at Simla

Criminal Original Side

Criminal Original No 4 of 1948

Present —

Dewan Ram Lal, Chief Justice,
Mr Justice Khosla and
Mr Justice Falshaw

Petition under section 23 of the Press (Emergency Powers), Act XVIII of 1931 for setting aside the order of the Chief Commissioner, Delhi, dated the 2nd March 1948 demanding a security of Rs 1000/- by virtue of Sub-section (3) of section V of the said Act

In the matter of the Hindi Monthly "Sarvadeshic" of Delhi and petition of Shri Raghunath Prasad Pathak son of Pandit Lal Mani, Publisher of the said monthly paper

Applicant

By Ch Roop Chand, Advocate

Respondent :

By S Harnam Singh, Advocate General

JUDGEMENT

There is an application under 23 of the Press (Emergency Powers), Act XXIII of the 1931 A security of Rs 1000/- was demanded from the Publisher of the Hindi Monthly known as "Sarvadeshic" of Delhi in respect of an article which appeared in the January issue of the said journal

We have been taken through the article by the learned Advocate General and we cannot see that it promotes feelings of enemity or hatred between different classes The learned Advocate General says that the article has a tendency to promote such feelings and does come within the section He has laid stress on the following passage —

'In view of the said two Mentalities we are constrained to say that if the above mentioned Muslim Mentality continue to exist, the Muslims of India * can in no way, live as true patriots like the Hindus. And if they cannot give up this Mentality and live as patriots in India, it is better both for them and us that they should go to Pakistan"

In our opinion a bare reading of the whole article amounts to more than this that the Muslims have propagated the two nation theory, but that such a theory cannot but have disastrous consequences in a secular State like India today If the Muslims still insist on the two nation thory they should migrate to a country like Pakistan, where this theory is said to fiourish In our view it is quite clear that there is neither a threat nor an attempt to promote any class feelings, but a mere expre-

ssion of what appears to us to be a truism In any event, the article does not appear to us to offend the provisions of the Press Act and in this view of the matter the application is allowed and this order demanding security is set aside with costs

Sd/ D Ram Lal
Sd/ G D- Khosla
Sd/ D. Falshaw,
Judges

2nd August 1948
Words 420
Fees -/15/-

True Copy
Sd/-
Supervisor Copy Branch,
J N V-8 48

Seal of the
East Punjab High Court

हैदराबाद में सहायता कार्य

इस वर्ष रजाकारों के भय से त्रस्त और उनके अत्याचारों से पीड़ित बहुसंख्यक आर्य (हिन्दू) नर, नारी हैद्राबाद राज्य से बाहर निकलने के लिये बाधित हो गये थे । गत मई, जून में ऐसे भाइयो ,की सख्या शोलापुर और उसके आस पास के क्षेत्रों मे हजारो तक पहुँच गई थी। हैद्राबाद राज्य के बहुत से आर्य भाइयों का रजाकारों द्वारा बध कर दिया गया था। बहुत से आर्यों को जेल मे बन्द कर दिया गया था। आर्यसमाजों मे ताले लग गये थे। कुछ समय के लिये राज्यों मे एक प्रकार से आर्य समाज का काम बन्द सा हो रखा था। जो कार्य कर्त्ता बचे थे उन्होंने शोलापुर आकर पीड़ितों की सेवा का शुभ कार्य हाथ मे लिया। इस कार्य को उन्होंने बड़ी लग्न और तत्परता से किया। हैद्राबाद राज्य में जैसे ही आर्य समाज के प्रति जनसाधारण की श्रद्धा और प्रेम है, इस सहायता और रक्षा कार्य से तो इनमे बहुत ही वृद्धि हुई। इस सभा ने आर्य समिति शोलापुर की प्रार्थना पर जो हैद्राबाद के आर्य भाइयों ने सहायता कार्य के लिये बनाई थ अपनी २५।७।४८ की अन्तरग सभा की बैठक के निश्चयानुसार १०००) की सहायता स्वीकार करके ५००) मासिक देना स्वीकार किया और सहायता जारी कर दी। इसके साथ ही स्व० भाई नशीलाल जी के परिवार को ३ वर्ष तक १००) मासिक सहायता देने का भी निश्चय किया गया। इस निश्चय पर भी कार्यवाही की जा रही है। उन्हीं दिनों हैद्राबाद मे आर्यसमाज की स्थिति का निरीक्षण करने के लिये सभा की ओर से श्री कु० चान्दकरण जी शारदा तथा श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी गये। उनकी इन यात्राओ का पीड़ित भाइयो पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा और आर्य समिति के कार्यकर्ताओं को बहुत प्रोत्साहन मिला

भारत सरकार की ओर से भेजी हुई सेनाओ द्वारा सितम्बर के पुलिस ऐक्शन के बाद सहायता और रक्षा का कार्य तो एक प्रकार से समाप्त हो गया था और प्रचार कार्य की उत्तरदायिता बहुत बढ गई थी। राज्य की परिवर्तित स्थिति में आर्य समाज के प्रचार की दृष्टि से कहा तक लाभ उठाया जाना और आर्य समाज के यश मे वृद्धि करना सम्भव है इसकी जाँच पड़ताल के लिये दिसम्बर मास में सभा मन्त्री हैदराबाद गए। उन्होंने अपनी विस्तृत रिपोर्ट कार्यालय में दी

जिसमें प्रचार विस्तार पर विशेष बल दिया गया था। श्री मन्त्री जी की प्रेरणा पर आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद ने प्रचार की एक विस्तृत योजना अपनी अंतरङ्ग सभा द्वारा स्वीकार करके इस सभा मे भेजी जिस पर इस सभा की १३।१।४९ की अतरङ्ग सभा की बैठक मे विचार हुआ और सभा ने ५००) मासिक की सहायता प्रचार कार्य के लिए जारी रखने का निश्चय कर दिया। यह सहायता उन्हें दी जा रही है।

रेडियो

अखिल भारतीय रेडियो पर आर्य समाज के प्रोग्राम के लिये यत्न करने पर भी अभीतक स्थान प्राप्त नही होसका है। इस व्यवस्था के लिये समय २ पर आर्य जगत् मे माग उठती रही है और रेडियो विभाग की एतद्विषयक नीति के प्रति असन्तोष भी व्यक्त किया जाता रहा है। कलकत्ता आर्य महासम्मेलन ने अपने निश्चय सख्या १३ के द्वारा इस सभा से अनुरोध किया था कि "रेडियो विभाग के अधिकारियो से मिल कर ऐसी व्यवस्था की जाय जिससे प्रति सप्ताह वेद पाठ, और प्रवचन रेडियो पर हुआ करे और ऋषि दयानन्द जन्मदिवस ऋषि निर्वाणोत्सव, आर्यसमाज स्थापना दिवस, श्रद्धानन्द बलिदान जयन्ती आदि पर्वो के अवसर पर रेडियो पर विशेष कार्यक्रम का आयोजन हुआ करे तथा इस माँग की पूर्ति के लिये प्रबल आन्दोलन किया जाय।" यह निश्चय रेडियो विभाग के अधिकारियो के पास यथा समय भेज दिया गया था। इस सम्बन्ध में इस सभा और रेडियो विभाग के उच्च अधिकारियो के मध्य पत्र व्यवहार जारी है। इस समय तक हमें यह सूचना प्राप्त हुई है कि भारत सरकार धार्मिक सस्थाओं के प्रोग्राम के विषय मे विचार कर रही है और अगला पत्र यथा समय भेजा जायगा।

शुद्धि

शुद्धि कार्य आर्यसमाज के कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग है और सदैव रहा है। इस वर्ष अलवर इत्यादि राज्यों मे इस कार्य की प्रगति को विस्तृत करने की आवश्यकता अनुभव होने पर सभा की ओर से महेन्द्रकुमार जी शास्त्री को १।५।४८ से उपदेशक पद पर नियुक्त करके भेजा गया। श्रद्धानन्द ट्रस्ट और आर्य धर्म सेवा सघ की ओर से भी १-१ प्रचारक की व्यवस्था की गई। वहाँ कार्य हो रहा है। कार्य को व्यवस्थित ढङ्ग से किये जाने के लिये सभा की १३ २ ४९ की अन्तरग ने श्री स्वामी वेदानन्द तीर्थ जी की अध्यक्षता मे एक समिति बनाई हुई है। इन क्षेत्रो मे कई प्रबल शक्तियाँ इस कार्य मे बाधक बनी और अब तो बहुत ही उग्र रूप मे बनी हुई है। उनपर कैसे विजय प्राप्त की जाय यह समस्या बड़े जटिल रूप मे सभा के सामने उपस्थित है। गत जुलाई मास मे पजाब गवर्नमेन्ट के निम्नलिखित पत्र से एक कठिनाई पर आंशिक रूप से सफलता प्राप्त की गई थी—

True Copy

From,

N R Sachdev, Esquire,
C I E., C.B.E., I.C.S.,
Chief Secretary to Government,
East Punjab.

To.

Shree Ganga Prasad Upadhyaya M A.

Secretary, Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha,

Shradhanand Balidan Bhawan,

Delhi

Memorandum No. 2760 ER-48/35606

Dated Simla E, the 3rd July 1948

Reference your letter No 608, dated the 6th May, 1948.

The East Punjab Government have issued instructions to all local officers that Muslims converted to Hinduism or any other faith who do not wish to go to Pakistan should be allowed to remain in East Punjab and should not be forcibly evacuated to West Punjab or other parts of Pakistan against their wishes.

S/d-

Superintendent Evacuation & Refugees

for Chief Secretary to Government, East Punjab.

6/7

परन्तु इतने पर भी समस्याओं का समाधान नहीं हो सका और किसी न किसी रूप में कठिनाइयाँ तद्वद् विद्यमान हैं।

सभा का प्रचार कार्य

इस वर्ष सभा का प्रचार कार्य मद्रास और उड़ीसा प्रान्त मे रहा। प्रचार केन्द्र तथा प्रचारकों के नाम इस प्रकार हैं —

मद्रास		प्रचारक
१ आन्ध्र	तनाली	श्री प० मदन मोहन जी विद्यासागर
२ तामिलनाड	तिन्नेवली	श्री प० नारायणदत्त जी सि० भूषण
३ दक्षिण कनारा	कार्कल	श्री पं० मञ्जुनाथ जी
४ ट्रावनकोर स्टेट	चेगानूर	श्री० एस देसाई बी०ए०
(उड़ीसा) ५ गंजाम	पुनसरा	श्री पं० बलराम जी सिद्धान्त भूषण
६ पटनास्टेट	बालगीर	श्री स्वामी धर्मानन्द जी

इन दोनों प्रान्तों के प्रचारकार्य के विवरण इस प्रकार हैं।

तामिलनाड

पं० नारायणदत्त जी मई सन् १९४८से यहा पर कार्य कर रहे हैं। मथुरा मे श्री एम० जे० शर्मा जी ने कुछ काल आर्य समाज का काम किया था। परन्तु इस समय वहा की अवस्था खराब है यहा कोई सत्सग (साप्ताहिक या मासिक) नहीं होता और नहो कोई चन्दा आदि देता है। श्रीमती सुखदा देवी जी अपने कुछ सहायकों के द्वारा कभी २ कोई कार्य आर्य समाज के नाम पर करती रहती हैं। इसके अलावा किसी उपदेशक ने स्थिर रूप से इन देशों मे काम नहीं किया है। कोई समाज अब तक नहीं है।

रामाधनपुरम मे हरिजनों की एक संस्था हिन्दू महाजन सभा है उनके बीचमे तथा बीलनेल्लौर मे प्रचार कार्य किया जा रहा है। रामाधनपुरम मे हरिजन स्त्रियों की समाज तथा रविवार पाठ

शाला भी प्रारम्भ कराई गई है। उनमे वैदिक सभ्यता और देश के प्रति श्रद्धाभक्त तथा प्रेम पैदा करने का प्रयत्न उपदेशादि के द्वारा किया जा रहा है। हरिजनों की बस्तियो मे ज नाकर कार्य करने के प्रोग्राम पर विचार हो रहा है।

आन्ध्र देश में प्रचार कार्य की रिपोर्ट

कनाला केन्द्र और मद्रास प्रान्त का आन्ध्र प्रदेश, मद्रास शहर से कलकत्ता लाइन पर वाल्टेयर विजगापट्टम तक, मद्रास बम्बई लाईन पर कड्या कुन्तकल तक। हैदराबाद रियासत का तेलगाना प्रान्त।

• ३ कोई नई समाज नहीं बनी।

४ साधारण अवस्था अच्छी नही, सिवा आर्य समाज कूचापूडी के कहीं पर भी नियमित कार्य न ीं।

५-६ इस वर्ष कुछ शुद्ध कार्य हुआ।

७ वैदिक सन्ध्य, शुद्ध संस्कार अन्त्येष्टि संस्कार प्रकाशित किये।

१० विवाह, गर्भाधान नाम करण मुण्डन अन्त्येष्टि संस्कार खूब कराये। इसी रूप मे इधर कार्य है। इस वर्ष प्रचार कार्य जरा ढीला रहा। इसका मुख्य कारण देश की अस्तव्यस्तता की परिस्थिति है।

इस वर्ष आंध्र आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना हुई।

प्रचार क्षेत्र दक्षिण कनारा, पुत्तूर, मंगलोर, कासरगोड, कार्कल)

समाज संख्या- ता० २८।२।४८ को मङ्गलौर, कार्कल मूडबिद्री, हीरियडक, उडुपी, इन स्थानों में ५ समाजें थीं।

नई समाजें—ता० २८।२।४९ तक उपरोक्त ५ समाजों के अलावा कोई नई स्थापित न होसकी।

समाजों की परिस्थिति—यहां के समाजों की परिस्थिति शैशवावस्था में है।

शुद्धि,—कार्कल समाज मन्दिर मे ता० २८।१।४८ के (दिन उडुपी तालुका अन्तर्गत) कोड नामक गाव की एक ईसाई स्त्री (सिल्वेसपिन्टो नामक की शुद्धि करके सुशीला देवी नाम रक्खा गया। तथा इस बारे मे प्रयत्न भी किया गया।

दलितोद्धार हरिजन विद्यार्थियों को उपदेश देना, अस्पृश्यता निवारण पर यथावकाश वाद-विवाद शंका समाधानादि मौखिक तथा कार्यरूप मे प्रचार किया गया।

साहित्य - कोई नया साहित्य तैयार न हो सका किन्तु जो पूर्व प्रकाशित हुई कन्नड, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषा की पुस्तकें मंगवाकर ५०० से अधिक वितरण की गई।

वेदप्रचार निधि--(कुल १५) वेदप्रचार निधि मे विविध वैदिक संस्कारों में दान सार्वदेशिक सभा के नाम पर संग्रह किया गया।

ट्रावनकोर प्रचार

इस समय ट्रावनकोर मे ५ आर्य समाज हैं। जिनमे लडकों और लड़किया के लिये धार्मिक क्लास लगती और प्रति रविवार को साप्ताहिक सत्संग होते हैं।

हरिजन सेन्टर—१ हरिजन सेन्टर है जिसमे २ प्रचारक काम करते है।

आर्य समासद—४०० के लगभग हैं।

प्रकाशन—४ ट्रैक्ट मलयालम में छपे ३ पुस्तकें छपीं, ५ पुस्तकें छपाने को तैयार हैं।

पुस्तक विक्री चेंगानुर सभा—२०० ० ट्रैक्ट बिके, १५००० पुस्तकें मुफ्त वितरण भी किये। १०० पुस्तकें लायब्रेरी में।

हिन्दी संस्थायें—५ चल रही हैं जिनमें १५० लड़के व लड़कियां पढ़ती हैं। चेंगानुर में एक आर्य कन्या पाठशाला है। जिसमें ५० लड़कियां पढ़ती हैं।

उच्च शिक्षा—५ लड़के शोलापुर भेजे गये।

संथाल प्रचार

छोटा नागपुर केन्द्र से आर्य प्रतिनिधि सभा विहार के तत्वावधान में संथालों तथा आदि वासियों में प्रचार कार्य हो रहा है। इस कार्य को श्री राम प्रसाद जी भूतपूर्व M L A तथा श्री रामकृष्ण जी सहाय बार ऐट ला रांची तथा प० हरि नारायन जी शर्मा बड़े उत्साह से कर रहे हैं। इस समय ३ मिडल और ५ प्राइमरी स्कूल तथा ३० रात्रि पाठशालायें चल रही हैं। बिहार सरकार ने बिहार सभा को इस वर्ष २५००) की सहायता इसी कार्य के लिये दी है। इस सभा की ओर से भी ३०) बिहार सभा को दिए गए हैं।

दान

इस वर्ष श्री प० जगन्नाथ जी शर्मा राम नगर दिल्ली निवासी ने अपना ५००० का जीवन बीमा की पालिसि (Pos l L fe s ir e) इस सभा के नाम में दान की। सभा की अन्तरंग सभा ने अपनी २४।४।४८ की बैठक में इस दान को स्वीकार किया। इस दान के लिए दानी महोदय धन्यवाद के पात्र हैं। इस राशि में से दानी की इच्छानुसार २०००) साधु आश्रम, पुल काली नदी (अलीगढ़) को दिए जायेंगे।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की जायदाद व सम्पत्ति

सार्वदेशिक बलिदान भवन

सभा के पास देहली में २ भवन सार्वदेशिक और बलिदान भवन हैं। सार्वदेशिक भवन १६५) और बलिदान भवन का सबसे नीचे का भाग अर्थात् दुकान १७।।) मासिक किराये पर चढ़ी हुई हैं। ५०) मासिक सभा कार्यालय से किराया लिया जाता है। बलिदान भवन के म्यूनिसिपल टैक्सों पर ५७८।-) व्यय हुआ।

गाजियाबाद भूमि

देहली से मेरठ और गाजियाबाद से मेरठ जाने वाली सड़कों के बीच में यह भूमि स्थित है। यह ४२ बीघे १८ बिस्वे है और १० ०) में क्रय की गई थी।

श्रद्धानन्द नगरी भवन

श्रद्धानन्द नगरी देहली में इस सभा के आधीन श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित २ भवन हैं। १ आर्य समाज मंदिर। १ पाठ शाला भवन। इन दोनों की लागत ६,६३) है।

समयपुर पाठशाला

देहली के निकट ग्राम समयपुर में इस सभा के तत्वावधान में एक दलितोद्धार पाठशाला

[शेष पृष्ठ २२१ पर]

साहित्य समीक्षा

"कल्याण" पत्र का उपनिषदङ्क

गीता प्रेस गोरखपुर का कल्याण' मासिक पत्र अपने अनेक विशेषाङ्कों के कारण प्रसिद्ध है। इस उपनिषदङ्क मे भी ५४ उपनिषदो का अनुवाद तथा उनमे कइयों की व्याख्या की गई है जिससे इसके सम्पादकों का विशेष परिश्रम निस्सन्देह सूचित होता है। उपनिषदो के अर्थ या व्याख्या के अतिरिक्त उपनिषदों के सम्बन्ध मे अनेक विद्वानों के लेख भी जो अपने अपने सम्प्रदाय की दृष्टि से लिखे गये हैं इस मे प्रकाशित किये गये हैं। यद्यपि हम उन लेखों मे प्रकाशित अनेक विचारों को वेद विरुद्ध और युक्ति हीन समझते हैं तथापि उनसे भिन्न २ सम्प्रदायों के दृष्टिकोण का ज्ञान अवश्य होता है। 'उपनिषदों का तत्त्व' इस शीर्षक के श्री स्वामी करपात्री जी के लेख के 'यद्यपि उपनिषद् वेद शार्ष या वेद सार हैं तथापि वे वेद से पृथक् नहीं। अत व वे भी परमेश्वर के निश्वासभूत तथा अनादि ही हैं सर्वज्ञ परमेश्वर की बुद्धि और प्रयत्न का उपयोग उपनिषदो का अर्थ निर्णय करने मे ही होता है। इत्यादि वाक्य सर्वथा अशुद्ध हैं। ऐसे ही अन्य लेखो कई स्थल हैं जिनकी उत्तरदायता सम्पादकों ने भी अपने ऊपर नहीं ली। अत उनका विस्तार से निर्देश करना अनावश्यक है। उपनिषदङ्क के प्रकाशित करने का मुख्य उद्देश्य बताते हुये सम्पादक महानुभावों ने ठीक ही लिखा है कि "मनुष्य जीवन का चरम और परम उद्देश्य है—अखण्ड पूर्ण आनन्द तथा सनातन शान्त रूप भगवान् को प्राप्त करना। हमारे उपनिषद् इसी परम लक्ष्य के स्वरूप तथा उसकी प्राप्ति के विविध अनुभवपूर्ण साधनों का उपदेश करते हैं। हम भारत य आज इस अपने घर के दिव्य परमोज्ज्वल प्रकाश को छोड कर अज्ञानान्धकार के नाश के लिए दूसरों की टिमटमाते चिराग पर मुग्ध हुए जा रहे हे। हमारा यह मोह दूर हो। हम उपनिषदों का किसी अश मे यत्किंचित् परिचय प्राप्त कर सकें इसी उद्देश्य से 'उपनिषदङ्क' के प्रकाशन का हमारा यह क्षुद्र प्रयास है।"

जहाँ हम सम्पादक महानुभाव के इस उद्देश्य की उत्तमता, उनके लेख समहादि मे किए हुए अति परिश्रम और 'हम लोग अपना अयोग्यता वश गहरे गोते लगाने मे असमर्थ ही रहे' हमारी असमर्थता अयोग्यता और नीचता भी कम नहीं है" इत्यादि शब्दों द्वारा सूचित उनकी नम्रता तथा निरभिमानिता की अत्यन्त प्रशंसा करते हैं वहाँ हम यह लिखे बिना नहीं रह सकते कि उन्होंने इस समह मे विवेकशीलता को विशेष स्थान नहीं दिया जिससे इस अङ्क के द्वारा भ्रम, मिथ्या विश्वास तथा सकुचित साम्प्रदायिकता फैलने की भी पर्याप्त सम्भावना है। सम्पादक महानुभावों ने स्वय भी लिखा है "प्रधान उपनिषदें श्वेताश्वतर और कौषीतकी को मिला कर १२ हैं। वस्तुत श्वेताश्वतर सहित जिसे समहात्मक ग्रंथ कहा जा सकता है वे ११ ही हैं। इन्हें वेद तथा ऋषियों के अनुभव पर आश्रित गम्भीर आध्यात्मिक ज्ञान का भण्डार कहना उचित ही है किन्तु राम तापनी, गोपाल तापनी, सीतोपनिषत्

श्री राधोपनिषत्, श्री रामोपनिषत्, श्री कृष्णोपनिषत्, गणपत्युपनिषत्, वासुदेवोपनिषत् इत्यादि साम्प्रदायिक लोगों के बनाये छोटे मोटे ग्रन्थों को उपनिषत् मानना तथा उन को भी आर्ष उपनिषदों में गणना करना हमें सुवर्ण और मट्टी को एक कोटि में रखने के समान प्रतीत होता है जिस से सामान्य पाठकों को अवश्य भ्रम होने की संभावना है और साधारण कई विद्वानो की श्रद्धा ऐसी उपनिषदाभासों को देख कर उपनिषदों में कम होने की भी सम्भावना हो सकती है। यदि वर्तमान काल मे उपनिषदों के नाम से उपलब्ध सभी ग्रन्थों का परिचय देना ही उद्देश्य था तो अल्लोपनिषदादि का भी उल्लेख किया जा सकता था, इन का उल्लेख करते हुए भी इन के विवेचन से यह स्पष्ट करने की आवश्यकता थी कि वस्तुतः इन की आर्ष उपनिषदों मे गणना नहीं हो सकती। ये साम्प्रदायिक लघुग्रन्थ हैं जिन्हों ने प्रामाणिकता पाने के लिये उपनिषदों का नाम रख लिया। आशा है इस उपनिषदङ्क के सम्पादक महानुभाव इस पर गम्भीरता से विचार करेंगे और यदि उचित समझें तो ऐसा स्पष्टीकरण कर देंगे अन्यथा ऐसे संग्रह से उपनिषदों का गौरव सामान्य शिक्षित जनता की दृष्टि में गिरने की संभावना हमें प्रतीत होती है। सम्पादकों के भूरि परिश्रम और नम्रता का हम पुनः अभिनन्दन करते हैं।

[पृष्ठ २१६ का शेष]

चल रही है। पाठशाला का व्यय देहली डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की २०) मासिक की सहायता और पाठशाला की अपनी भूमि की आय से चलता है। पाठशाला के नाम ६० बीघे कच्ची जमीन तथा १३००) की लागत के अपने भवन हैं। एक कुआ पाठशाला में और एक भूमि में बना हुआ है।

वैदिक आश्रम ऋषिकेश

इस आश्रम की भूमि तथा उस पर के मकानों का मूल्य १४०००) है और यह सभा की सम्पत्ति है। यह आश्रम प्रबन्ध के लिये वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के अधीन किया हुआ है।

शोलापुर समाज मन्दिर

शोलापुर में सभा के मूल्य पर लगभग ६०० वर्ग गज भूमि समाज मन्दिर के लिये ८६२२) में क्रय की गई है।

जोधपुर की सम्पत्ति

जोधपुर मे निम्न सम्पत्ति सभा के नाम में दर्ज है :—

(१) ३५६५ गज भूमि सर प्रताप हाई स्कूल के सामने श्री रणछोड़दास के मन्दिर के पास।
(२) आर्य श्मशान २७१२ गज भूमि।
(३ गुरुकुल मारवाड़ मंडोर ७ मकान २५३३६ वर्गगज कुल भूमि।
(४) गौशाला मारवाड़ मंडोर। १ कोठरी। चारा डालने की ४ कोठरी व २ बाड़े। भूमि ३०००० गज।

[बैलेंस शीट आदि का विवरण अगले अङ्क में देखिए।]

सत्यमेव जयते:—

यह बडे हर्ष की बात है कि हमारा राष्ट्रीय भारत सरकार ने अपनी मुद्रा के नीचे सत्यमेव जयते' इस सुन्दर संस्कृत वाक्य को जो अथर्ववेदीय मुण्डकोपनिषत् का है (माण्डूक्य का नहीं जैसा कि कुछ पत्रों मे प्रकाशित हुआ है) देवनागरी लिपि मे अङ्कित करने का घोषणा की है। हम इस निश्चय और घोषणा का हार्दिक अभिनन्दन करते है क्योकि इससे एक उत्तम आदर्श के स्मरण के अतिरिक्त भारत सरकार का संस्कृत और देवनागरी लिपि के प्रति क्रियात्मक प्रेम प्रकट होता है। यह वाक्य केवल महात्मा गान्धी जी को ही प्रिय न था प्रत्युत महर्षि दयानन्द जी के इतने अधिक प्रिय था कि उन्होने सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका मे उन्होने लिखा —

'जो कोई सात्विक ... हृदय मे धर प्रवृत्त होता है उनसे सत्य ... होकर अनेक प्रकार दुःख ... है। परन्तु 'सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयान।" अर्थात् सर्वदा सत्य का विजय और असत्य का पराजय और सत्य से ही विद्वानो का मार्ग विस्तृत होता है, इस दृढ निश्चय के अवलम्बन से आप्त लोग परोपकार करने से उदासीन कभी सत्यार्थ प्रकाश करने से नहीं हटते।

जो भारत सरकार अब तक संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि को अपनाने मे कुछ संकोच कर रही थी उसकी उपयुक्त घोषणा स्वयं सत्य के विजय का प्रबल प्रमाण है।

बम्बई प्रदेश में आर्य वीर दल पर अनुचित प्रतिबन्ध:—

गत २० मई को बम्बई सरकार ने एक आदेश निकाल कर आजाद हिन्द दल, आर्य वीर दल, राष्ट्र सेवा समिति, स्वस्तिक स्वयं सेवक दल, सिक्ख नौजवान दल, लोक सेवा दल आदि ८ संस्थाओं पर सैनिक तथा सामूहिक कवायद करने शिविर लगाने पोल सैनिक वेष धारण करने आदि विषयक प्रतिबन्ध लगा दिये हैं जो सारे बम्बई प्रान्त मे नहीं किन्तु उस मे विलीन बड़ौदा, कोल्हापुर आदि कुछ प्रदेशों पर लागू होंगे। बम्बई सरकार ने जिन अन्य संस्थाओं पर यह प्रतिबन्ध लगाया है उनके विषय में सम्पूर्ण परिचय न होने के कारण कुछ लिखना हमें उचित नहीं प्रतीत होता किन्तु जहाँ तक आर्य वीर दल का सम्बन्ध है हम पूर्ण निश्चय के साथ कह सकते हैं कि यह प्रतिबन्ध सर्वथा अनावश्यक और अनुचित है क्योंकि आर्य वी

दल एक असाम्प्रदायिक सांस्कृतिक संस्था है जो नवयुवकों में त्याग, सेवा और देश भक्ति की भावना को भरता है और जिसने आज तक कभी देशहित विरोधी, साम्प्रदायिकता वर्धक तथा देशद्रोहात्मक कार्य नहीं किया। हमें इसके लिये अपनी ओर से कोई प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती क्योंकि जब गत वर्ष बिहार प्रान्तार्गत साहेब गंज के एक अधिकारी ने आर्य वीर दल पर प्रतिबन्ध लगाया तो बिहार की सरकार ने उस आदेश को रद्द कर दिया और इस विषय में १५ अप्रैल को बिहार धारा सभा में श्री ब्रजलाल दोकानिया के प्रश्न का उत्तर देते हुये कर तथा वन विभाग मन्त्री माननीय श्री कृष्ण वल्लभ सहाय ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि 'साहेब गंज के सब डिवीजनल अफसर ने आर्य वीर दल को विघटित कर देने का आदेश इस लिये दिया था कि उन्होंने समझा था कि यह दल साम्प्रदायिक और अर्ध सैनिक संस्था है। **किन्तु सरकार यह स्वीकार करती है कि यह संस्था विशुद्ध सामाजिक और धार्मिक है तथा राजनीति से उसे किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है।"**

एक सरकार की आर्य वीर दल के सम्बन्ध में यह स्पष्ट घोषणा होते हुये बम्बई सरकार का अन्य संस्थाओं के साथ किसी भ्रम वा सन्देह वश उस पर भी कुछ प्रदेशों में प्रतिबन्ध लगा देना सर्वथा अनुचित तथा अविवेक पूर्ण था इसमें हमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं। सार्वदेशिक सभा की ओर से इस विषय में बम्बई सरकार के गृहमन्त्री माननीय श्री मुरार जी देसाई को पत्र भेजा जा चुका है और इस समाचार से सारे आर्य जगत् में जो क्षोभ उत्पन्न हो गया है उसका निर्देश करते हुये उन से अविलम्ब इस अनुचित आदेश को लौटाने का अनुरोध किया गया है। इस टिप्पणी को लिखते समय (६ जून तक) उनका उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। कुछ दिन और प्रतीक्षा के पश्चात् यदि इस अनुचित प्रतिबन्ध को न हटा दिया गया तो सार्वदेशिक सभा तथा आर्य वीर दल समिति को भावी उपाय का निश्चय करना पड़ेगा जिससे इसके हटाने में सफलता हो किन्तु हमें विश्वास है कि बम्बई सरकार के बुद्धिमान् अधिकारी ऐसी अवाञ्छनीय स्थिति उत्पन्न न होने देंगे तथा इस भ्रमवश लगाये गये प्रतिबन्ध को हटा कर आर्य जनता के घोर असंतोष और क्षोभ को दूर कर देंगे।

भूपाल में केन्द्रीय शासनः—

यह प्रसन्नता की बात है कि १ जून से भारत सरकार ने भूपाल का शासन अपने हाथ में ले लिया है तथा उसे चीफ कमिश्नर का प्रान्त बना कर श्रीयुत बैनर्जी नामक एक अनुभवी शासक को वहां भेज दिया है। हैदराबाद दक्षिण की तरह भूपाल में भी हिन्दुओं की संख्या मुसलमानों की अपेक्षा बहुत अधिक थी तथापि वहां कट्टर मुस्लिम साम्प्रदायिकता का सदा प्राधान्य रहा यहां तक कि भूपाल में आर्यसमाज की स्थापना खुले तौर पर करना असम्भवप्राय जान कर वैदिक धर्म के प्रेमियों ने 'आर्य मित्र सभा' के नाम से सभा स्थापित कर रक्खी थी जिसे अब इस सन्तोष जनक परिवर्तन के होते ही नियमपूर्वक आर्य समाज नाम दे दिया गया है। कुछ वर्ष पूर्व बेगम

के राज्य मे तो वहा शुद्धि पर भी भयङ्कर प्रतिबन्ध था। आर्य भाषा व संस्कृतनिष्ठ हिन्दी की घोर अवहेलना की जाती थी तथा उर्दू को ही शिक्षा का माध्यम तथा न्यायालय का भाषा घोषित किया गया हुआ था। आय हिन्दू जनता पर अनेक प्रकार के अत्याचार प्रगट वा गुप्त रूप मे किये जाते थे। सीहोर (भूपाल राज्यान्तर्गत) में गत कई वर्षो से आय समाज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर सत्यार्थ प्रकाश के चतुदश समु लास के पाठ तथा तद्विषयक व्याख्यानों पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता थाजो विशेष आन्दोलन करने पर कुछ मास पूर्व हटाया गया था। हमे निश्चय है कि नये शासन में इस प्रकार का साम्प्रदायिक पक्षपात सूचक अन्याय पूर्ण व्यवहार न रहेगा। श्रीयुत बनर्जी ने शासन भार सभालते ही जो उर्दू के साथ २ हिन्दी को अदालती भाषा स्वीकार करने की आज्ञा प्रचलित की है वह सन्तोष जनक है यद्यपि वह पर्याप्त नहीं न्याय की माग, प्रबल बहुसख्या की दृष्टि से यही है कि हिन्दी को ही अदालती भाषा तथा शिक्षा के माध्यम के रूप मे स्वीकृत किया जाए उर्दू को नहीं। आशा है शीघ्र ही इस आशय की घोषणा कर दी जायगी। हम भारत सरकार का इस बुद्धिमत्ता पूर्ण कदम उठाने पर पुनः हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। भूपाल मुस्लिम लीगी षड्यन्त्रों तथा अन्य ऐसी योजनाओंका प्रबल केन्द्र था यह सर्व विदित है।

मृत मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित करने के निन्दनीय प्रयत्न जारी:—

यद्यपि भारत और पाकिस्तान के रूप मे देश का शोचनीय विभाजन हो जाने के पश्चात् साधारणतया यह समझा जाता है कि अब मुस्लिम लीग मृतप्राय हो गई और कई स्थानों पर उस की शाखा को भङ्ग किया गया है तथापि प्राप्त विश्वसनीय समाचारों से प्रतीत होता है कि लखनऊ तथा अन्य अनेक भारतान्तर्गत स्थानों मे मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित करने का षड्यन्त्र किया जा रहा है। जिससे भारत सरकार को सचेत रहने की आवश्यकता है। भारत मे अनेक स्थानों पर मुस्लिम लीग ने राजनीति से प्रथक रहने का जो निश्चय किया था उसे भी परिवर्तित कराने का प्रयत्न हो रहा है। लखनऊ इस विषयक षड्यन्त्र का मुख्य केन्द्र बताया जाता है जहां महमूदाबाद के राजमहल मे अनेक गुप्त बैठकें की गई हैं जिनमे स सम्बन्ध मे विचार किया गया है। मौलाना जमालुद्दीन ने इन बैठकों में यह स्पष्टतया कहा है कि 'वे अब भी दो राष्ट्रों के सिद्धान्त मे विश्वास रखते हैं और कालान्तर मे मुस्लिम लीग भारत मे पुन शक्ति प्राप्त करेगी।" साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के अन्त करने विषयक जो अभिनन्दीय प्रस्ताव माननीय सरदार पटेल ने गत मई मास में भारतीय विधान परिषद् मे रखा उसके विरोध मे मुस्लिम लीगी इस्माइल आदि ने कहा कि साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और पृथक् निर्वाचन प्रणाली आदि को जारी रक्खा जाय जिस पर सरदार पटेल ने सिंह गर्जना करते हुए कहा था कि 'यदि भारत में अब भी ऐसे तत्त्व हैं जो दो राष्ट्रों के सिद्धान्त में विश्वास करते हैं तब मैं उन्हें यही सलाह दूंगा कि वे भारत छोड कर अपने पहले साथियों के मार्ग का अनुसरण करें और पाकिस्तान मे मिलने वाले

आनन्द का उपभोग करें। जो पृथक् प्रतिनिधित्व चाहते हैं उनके लिए भारत में कोई स्थान नहीं।" जहां हम माननीय सरदार पटेल की इस घोषणा का स्वागत और हार्दिक अभिनन्दन करते हैं वहां साथ ही इनका तथा अन्य अधिकारियों का ध्यान मृतप्राय मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित करने के इन निन्दनीय षड्यन्त्रों की ओर आकृष्ट करते हुए निवेदन करते हैं कि वे इन उपद्रवियों को कठोर दण्ड देकर उचित शिक्षा दें। सचमुच ऐसे देश-द्रोही लोगों के लिए जो अब भी भारत में मुस्लिम लीगी शासन के स्वप्न लेते हैं भारत में कोई स्थान न होना चाहिए।

पश्चिमी पाकिस्तान में गोवध निषेध:—

इस समाचार को जान कर किसको प्रसन्नता न होगी कि 'पश्चिमी पंजाब की सरकार ने अपने प्रान्त में उपयोगी, दुधारू और एक निश्चित आयु के पशुओं का वध कानूनन बन्द कर दिया है।" जो मतान्ध मुसलमान हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाते हुए भी गोवध करने में कभी संकोच न करते तथा कई स्थानों पर खुले तौर पर ऐसा करके अनेक उपद्रव मचा देते थे वही अब आर्थिक तथा आरोग्य की दृष्टि से गाय तथा अन्य दुधारू पशुओं की उपयोगिता को अनुभव करके इस प्रकार के कानून बनवा रहे हैं यह हर्ष की बात है। हमें दुःख इस बात का है कि हमारी सरकार अभी तक इस विषय में विचार ही कर रही है और उसने जनता की इस विषयक प्रबल तथा न्याय संगत मांग को पूरा करने का संभवतः कुछ मुसलमानों की अप्रसन्नता के भय से साहस नहीं किया जब कि पश्चिमी पंजाब की पाकिस्तानी सरकार ने ऐसा करके एक प्रशंसनीय कार्य किया है चाहे उसका उद्देश्य कुछ भी हो हमारी सरकार के लिए वस्तुतः यह लज्जा की बात है कि वह ऐसे अत्यावश्यक विषयों का निश्चय करने और उनको क्रियात्मक रूप देने में कई बार इतना विलम्ब कर देती है जिससे जनता के असन्तोष की भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। राष्ट्र भाषा और राष्ट्र लिपि के प्रश्न पर भी ऐसा ही विलम्ब कर जनता को असन्तुष्ट कर रही है जिसके सम्बन्ध में भारतीय विधान परिषद् को इस अधिवेशन में हिन्दी और देवनागरी लिपि के पक्ष में घोषणा अवश्य ही कर देनी चाहिए। हम भारत सरकार के माननीय प्रमुख कर्णधारों से सानुरोध निवेदन करते हैं कि वे अब पश्चिमी पाकिस्तान की सरकार का अनुसरण कर के ही सही, जनता की प्रबल मांग का आदर करते हुए गोवध निषेध का कानून अविलम्ब जारी कर दें।

मद्रास धारा सभा में दहेज निषेधक बिल

मद्रास की धारा सभा के सदस्य श्री चिरबन बाबू ने उस सभा में एक बिल (विधेयक) प्रस्तुत करने की सूचना दी है जिसका उद्देश्य दहेज की घातक प्रथा का अन्त करना है। इस के द्वारा दहेज की मांग करना तथा इस मांग को पूरा करना निषिद्ध ठहराया जायगा। जो वर इस नियम का उल्लङ्घन करेगा उसे ६ मास तक की सजा अथवा ७०००) का आर्थिक दण्ड (जुर्माना) दिया जायगा। माता-पिता, संरक्षक अथवा अन्य जो कि उनके स्थानापन्न होंगे उन्हें इस नियम का उल्लङ्घन करने पर २ वर्ष तक की जेल यात्रा अथवा प्राप्त दहेज की राशि जितना आर्थिक दण्ड दिया जा सकेगा।

हम इस अत्यन्त उपयोगी बिल का हार्दिक समर्थन करते हैं। सुधारकों के निरन्तर प्रयत्न कर रहा भी यह दुख की बात है शिक्षा युक्त भी निरन्तर पूर्वक दहेज मांगने की घातक प्रथा बढ़ती जा रही है जिसके कारण बड़ी बड़ी आयु तक अनेक सुशिक्षिता कन्याओं के विवाह नहीं हो पाते तथा अनेक परिवारों का नाश हो जाता है इस घातक कुप्रथा का अन्त करना अत्यावश्यक है। हम आशा करते हैं कि मद्रास धारासभा के सदस्य इस उपयोगी बिल का हार्दिक समर्थन करेंगे। अन्य प्रान्तीय विधान सभाओं को भी ऐसे कानून बनाकर पीडित जनता के दुख दूर करना चाहिए।

एक आर्य विद्वान् का निधन

हमें यह लिखते हुए अत्यन्त खेद होता है कि सत्यार्थप्रकाश के संस्कृत अनुवादक और प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान पं० शंकरदेव जी पाठक व्याकरणतीर्थ का ज्वर बीमारी के कारण ४ जून १९५४ को सायंकाल के लगभग ५ बजे गुरुकुल वृन्दावन में ५७ वर्ष की आयु में देहान्त हो गया।

पं० जी की शिक्षा गुरुकुल वृन्दावन में हुई थी और वहीं १९१९ से अबतक अध्यापन कार्य करते चले आ रहे थे। पं० जी गुरुकुल की केवल ७ वीं श्रेणी तक पढ़ पाये थे जबकि नेत्र विकार के कारण उन्हें नियमित अध्ययन छोड़ देना पड़ा और वे गुरुकुल के तत्कालीन मुख्याधिष्ठाता श्री स्व० पूज्य नारायण स्वामी जी द्वारा गुरुकुल की सेवा में ले लिये गये थे। व्याकरण और महाभाष्य उनके मुख्य विषय थे। इन दोनों विषयों में उनकी योग्यता असाधारण और प्रतिभा स्पर्धा के योग्य थी। वे निरन्तर कई वर्ष तक महाविद्यालय की श्रेणियों को इन दोनों विषयों को बड़ी योग्यता पूर्वक पढ़ाते रहे थे सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद जिसकी प्रायः सभी संस्कृत के प्रमुख २ आर्य विद्वानों ने शैली, मौलिकता और भाषा की दृष्टि से सराहना की है, इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि संस्कृत साहित्य में भी उनकी गति [illegible] उनकी अन्तिम यह कार्य ही [illegible] योग्यता को सदैव प्रकाश में रखेगा। आर्य समाज के उन जैसे व्याकरण के पण्डित पर गौरव था और वे एक देन थे। दुर्भाग्यसे हम उस देन से सहज ही वंचित हो गए।

गत अप्रैल मास में वृन्दावन जाने का अवसर मिलने पर हम उनसे गुरुकुल में उनके निवास स्थान पर मिले थे यद्यपि उस समय उनका जीवन धागे पर झूल रहा था फिर भी यह आशा न थी कि यह धागा इतना कच्चा सिद्ध होगा और प्रभु इच्छा के सामने उन के परिवार को इतना जल्दी झुकना पड़ जायगा।

बिजनौर जिले में शायद उन्हीं का पहला अन्तर्जातीय और अन्तर्प्रान्तीय विवाह था जो यवतमाल (नासिक निवासी श्री [illegible] जी की छोटी बहिन श्रीमती [illegible] जी के साथ हुआ था। सन् १९१९ में जन्मके देहात कस्बे के ब्राह्मण परिवार में इसप्रकार के विवाह का होना कितना साहसिक और प्रतिक्रिया पूर्ण कार्य हो सकता है इसकी इस समय सहज ही कल्पना की जा सकती है। उनका यह विवाह सम्बन्ध आर्य-समाज की एक ठोस सेवा समझी जा सकती है इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

श्री पं० जी अपने पीछे विधवा पत्नी ३ सुयोग्य पुत्र और भरा पूरा परिवार छोड़ गये हैं इस दुखद अवसर पर हम उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते हैं। उनके छोटे भाई रघुनाथ प्रसाद जी पाठक को हम क्या कहें? इस समय हमारे भाव उनके भावों के साथ हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि वह दिवंगत आत्मा को सद्गति और शान्ति एवं उनके परिवार को इस महान् दुख को सहन करने की क्षमता प्रदान करे।

सार्वदेशिक के ग्राहकों से निवेदन

निम्नलिखित ग्रा.कों का चन्दा जुलाई मास के साथ समाप्त होता है। इन प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल ही मनीआर्डर द्वारा भेज दें अन्यथा उनकी सेवा में आगामी अङ्क वी० पी० से भेजा जायगा। धन प्रेषण दशा में ३०।७।४६ तक कार्यालय में पहुँच जाना चाहिये कृपया अपने मित्रों को ग्राहक बनाइये।

ग्राहक सं० — पता

४८ श्री मन्त्री जी आर्य समाज नयाबास दिल्ली
५७ „ „ , सानु…नार लु…ना
६८ „ बुद्धसिंह जी बजाज शेरकोट जिला बिजनौर
११० „ तुलसीराम जी मिश्र आर्य समाज मोईवाडा परेल बम्बई
१३२ „ शिवपूजन सिंह जी कुशवाहा कानपुर
१५२ „ मन्त्री जी आर्य समाज कुचामनसिटी मारवाड़
१६४ „ हरबक्शसिंह जी मैनेजर प्रभावती वाचनालय रीवा राज्य
१६५ „ त्रिभुवन दास जी वर्मा पाटना गुजरात नार्थ
४५८ „ बा० दयानन्द जी हीवेट रोड इलाहाबाद
४६ „ मन्त्री जी आर्य समाज बढ़न जिला बस्ती
४७७ „ अमरपाल सिंह जी आर्य फाजपुर दिल्ली
४८८ „ मन्त्री जी आर्य समाज बारां कोटा राजपूताना
४६७ „ रामदेव प्रसाद जी आर्य मनसातल्ला तेलनीवाड़ा हुगली
५०३ „ नारायणसिंह जी, मानसिंह जी आर्य ग्राम कस्बबारी जिला अलीगढ़
५०४ „ मन्त्री जी आर्य समाज दीवान हाल दिल्ली
५११ „ ला० श्यामलाल जी, अमरसिंह मु० हरिकाल जा० गाजियाबाद मेरठ
५१२ „ चौ० सूरजसिंह जी गाजयाबाद मेरठ
५१३ „ बी० ऐस० मोहन गाजियाबाद मेरठ
५१४ „ ताराचन्द जिन्दासिंह जी अढ़ती गाजियाबाद मेरठ
५१५ „ ला० प्यारेलाल जी, रामरत्नपाल प्यारे लाल पन्सारी गाजियाबाद
५१६ „ अम्बाराम जगजीवन दास जी मोदी बड़ौदा स्टेट
५२२ „ मन्त्री जी आर्य समाज हिन्डौन जयपुर राज्य
५२३ „ „ „ रामपुर मन्हारान जिला सहारनपुर
५ ४ „ बाबूराम जी आर्य ग्राम नरऊ पो० हबारा बुलन्दशहर
५२६ „ हरप्रसादसिंह जी त्रिवेदी वैद्य हरि आरोग्य भवन गजपुर जि० गोरखपुर
५४२ „ भगवानदास वोहिया जिला गोन्डा
५४८ „ आदित्यराम कन्हीदास जी उपाध्याय सारंग पालज
६४३ „ सीताराम जी आर्य शिल्पी फैतफुल गंज कानपुर

दान सूची दयानन्द पुरस्कार निधि

१००) श्री मन्त्री जी आर्य समाज टबोरा ईस्ट अफ्रीका
५) श्री अ र० सी० शास्त्री गार्ड मधुपुर सन्थाल परगना
१०) ,, महेशलाल जी आर्य विहारशरीफ पटना
१५) ,, रणजीतलाल जी कोतवाली जयपुर
५) ,, मथुरा प्रसाद जी अमरोहा मुरादाबाद
१०) ,, मन्त्री जी आर्य समाज जनौपुर
४३॥), ,, ,, आ० स० सीसामऊ कानपुर

१८८॥)

१४८३।=) गतयोग

१६७१॥=) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

दानसूची स्थापना दिवस

५) आर्य समाज बवेर (मैनपुरी)
८) ,, ,, राय बरेली
१५) ,, ,, मौरवी सौराष्ट्र
९८॥।),, ,, टबोरा
१५) ,, ,, फरमाना रोहतक
५) ,, ,, गाजीपुर
१०) ,, ,, बलसिया
२०) ,, ,, खुर्जा
१०) ,, ,, ग्वालियर
१५) ,, ,, फगवाड़ा
५) ,, ,, मेरठ
१९॥) राम प्रकाश हसनपुर मुरादाबाद
२५) आर्य समाज बीकानेर
५) श्रीमती रूपवती जी वर्मा द्वारा रायबहादुर लाल वर्मा ओवरसियर हरदोई

२५६।)

४५७॥।) गतयोग

७१३॥।) सर्वयोग

२०) गुप्त दान
२) श्री दामोदर भंडारी व्यापारी कार्यक S K.

२२)

३०) गतयोग

५२) सवयोग

क्रमशः

दान दाताओं को धन्यवाद

मन्त्री

सार्वदेशिक सभा

इस वर्ष आर्यसमाज (स्थापना दिवस का कम से कम ६०००) सभा के कोष में पहुंचनी चाहिए। जिन समाजों ने अपना भाग अभी तक नहीं भेजा है उन्हें भेजने मे शीघ्रता करनी चाहिये। प्रत्येक आर्य समाज को इस निधि में फण्ड भेजना अपना एक अत्यन्त आवश्यक कर्तव्य समझना चाहिए इस कार्य में जरा लापरवाही नहीं होना चाहिए। अनुशासन की भी यही माँग है।

गंगाप्रसाद उपाध्याय

मन्त्री

सार्वदेशिक सभा

दान सूची

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

[गतांक से आगे]

७) श्री प० धर्मदेव जी द्वारा
६) ,, ,, ,,
२) ,, पीताम्बर जी शर्मा अलीगढ़
४६) ,, प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति द्वारा
१०) ,, ,, ,, ,,
२३) ,, ,, ,, ,,
१) ,, पं० शिवचन्द जी गुप्त दिल्ली
२५) ,, मनोहर जी विद्यालङ्कार खारी बावली दिल्ली
१५) अमरनाथ जी बेलीराम अमरनाथ चादनी चौक दिल्ली
१) ,, क्षितीशकुमार जी वेदालंकार अर्जुन प्रेस दिल्ली
२) ,, कृष्ण चन्द जी विद्यालंकार
२) ,, सुदर्शनलाल जी चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस दिल्ली
६॥) ,, मन्त्री जी आर्य समाज महरौली दिल्ली
११) ,, कृष्णगोपाल जी करोल बाग दिल्ली

१६६॥)
१७५) गतयोग

३४१॥)

(क्रमशः)

श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी श्री डा० राजेन्द्र बाबू से मिले

पाकिस्तान को भेजी जाने वाली अछूत देवियों के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण वार्तालाप

कल २१ ।४९ को सायंकाल ५ बजे श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी के नेतृत्व में एक शिष्ट मंडल श्री डा० राजेन्द्र प्रसाद जी से मिला शिष्ट मंडल में देहलवी जी के अतिरिक्त श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी आर्य सेवक श्री ला० राम गोपाल जी स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा, श्री ला० केदारनाथ जी प्रधान आर्य समाज दी (हाल दिल्ली, गृहस्वामी श्री गिरधारीलाल जी आदि ने राजेन्द्र बाबू के सामने विकट समस्या रक्खी जो पुलिस द्वारा पाकिस्तान को भेजी जाने वाली मुस्लिम स्त्रियों के सम्बन्ध में जनता की चर्चा बनी हुई है। शिष्ट मण्डल के सदस्यों ने बताया कि मुस्लिम देवियों के बहाने उन हिन्दू महिलाओं को भी बलपूर्वक पाकिस्तान भेजा जा रहा है जो प्रारम्भ से हिन्दू हैं और जिन के विवाह को भी लगभग १५ वर्ष हो चुके हैं। इन के अतिरिक्त यह भी बताया गया है कि जो महिलाएँ पाकिस्तान नहीं जाना चाहतीं और जो यहाँ अपने घरों में घुल मिल गई हैं जिनके बच्चे भी हो चुके हैं ऐसी देवियों को अनिच्छा से बलपूर्वक उनके घरों से निकाल कर पाकिस्तान भेज देना कहाँ का न्याय है? श्री देहलवी जी ने कुछ इस्लामी सिद्धान्तों के सम्बन्ध में भी श्री राजेन्द्र बाबू को अवगत किया।

श्री डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने बड़ी सावधानी से बातचीत सुनी और पूर्ण रूपेण विचार करने का वचन दिया।

सार्वदेशिक सभा के उपमन्त्री श्री लाला रामगोपाल जी ने अलवर में शुद्ध हुए मेवों को सर्वोदय समाज वालों द्वारा पुनः इस्लाम में दीक्षित करने के घृणित प्रचार के सम्बन्ध में बताया। श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने इस सम्बन्ध में श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति प्रधान सार्वदेशिक सभा से विस्तृत वार्तालाप की इच्छा प्रकट की।

सार्वदेशिक पुस्तकालय दिल्ली

(सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड पटोदी हाउस दिल्ली,)

विक्रयार्थ पुस्तक सूची

वेद (मूल)

ऋग्वेद ४) अथर्व वेद ३)
यजुर्वेद १) सामवेद १)
,, गुटका १॥)

महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ

(वैदिक यन्त्रालय अजमेर द्वारा प्रकाशित)

(१) ऋग्वेद भाष्य ६ भाग मे (पहला भाग छोड कर) ४४)
(२) यजुर्वेद भाष्य चार भागा म सम्पूर्ण २०)
(३) यजुर्वेद भाषा भाष्य ५)
(४) सत्यार्थ प्रकाश १॥)
(५) संस्कार विधि ॥।)
(६) पच महायज्ञविधि -)॥
(७) आर्याभिविनय ।-)
(८) संस्कृत वाक्य प्रबोध =)॥
(९) व्यवहार भानु -)॥
(१०) आर्योद्देश्य रत्न माला ॥
(११) ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका १)
(१२) गो करुणा निधि =)॥

महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज कृत ग्रन्थ

उपनिषद् १ ईश ।=) (२) केन ॥
(३) कठ ॥) (४) प्रश्न ।=)
(५) मुण्डक ।=) (६) माडूक्य =)
(७) ऐतरेय ।) (८) तैत्तिरीय ॥।)
(९) विद्यार्थी जीवन रहस्य ॥)
(१०) योग रहस्य १)
(११) मृत्यु परलोक १।)
(१२) प्राणायाम विधि =)
(१३) कथा (माला महात्मा नारायण स्वामी जी की कथाओ के आधार पर) ॥।)

श्री स्वामी वेदानन्दतीर्थ जी महाराज कृत ग्रन्थ

राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन १)
नैमित्तिक वैदिक पाठ ।)
स्वाध्याय सुमन २॥)

स्वामी ब्रह्ममुनि जी (प० प्रियरत्न जी आर्ष) द्वारा कृत ग्रन्थ

(१) यम पितृ परिचय २)
(२) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र २)
(३) वैदिक ज्योति शास्त्र १॥)
(४) वेद मे दो बडी वैज्ञानिक शक्तिया १)
(५) विमान शास्त्र ।=)॥

प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत ग्रन्थ

(१) आस्तिकवाद ३) (५) मैं और मेरा
(२) जीवात्मा ४) भगवान १।)
(३) शाकर भाष्यालोचन ५)
(४) हम क्या खाए १।)

आर्य समाजो मे प्रतिदिन उपयोग की पुस्तकें

(१) पंच यज्ञ पद्धति १।)
प० भवानी प्रसाद कृत
(२) आर्य मन्तव्य गुटका ।)
(३) आर्य डायरेक्टरी ।)
(४) आर्य विवाह एक्ट व्याख्या ।)
(५) आर्य समाज का परिचय ≡)

भाद्रपद सं० २००६ वि० | सम्पादक— | मूल्य स्वदेश ५)
अगस्त १९४९ ई० | श्री प० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार | विदेश १० शि०

विषय सूची

संख्या | पृष्ठ

रेडियो पर वेद प्रवचनादि विषयक आन्दोलन

यह प्रसन्नता की बात है कि सार्वदेशिक सभा के आदेशानुसार प्राय सभी आर्य समाजों ने रेडियो विभाग के अधिकारियो के पास इस आशय के प्रस्ताव स्वीकृत करके भेजे है कि रेडियो पर वेद का पाठ और प्रवचन सप्ताह मे एक बार अवश्य होना चाहिये। जिन समाजो ने अब तक ऐसे प्रस्ताव न भिजवाए हों उन्हें भी तुरन्त अखिल भारतीय रेडियो के स्टेशन डायरैक्टर नई देहली के नाम अवश्य भिजवा देना चाहिये। इसका यथेष्ट परिणाम अवश्य होगा। मेरे नाम इस विषय में स्टेशन डाईरैक्टर महोदय की ओर से ३०–६–४६ का पत्र आया है जिस मे इस निर्देश के लिये धन्यवाद देते हुए कि रेडियो पर वेद प्रवचन प्रति सप्ताह हुआ करे यह लिखा है कि भारत-सरकार सम्प्रति इस विषय पर गम्भीरता से विचार कर रही है। इस बीच मे मेरे अतिरिक्त श्री प० रामचन्द्रजी देहलवी, श्री प० हरिदत्त जी शास्त्री सप्ततीर्थ, श्री पं० सोमदत्त जी विद्यालङ्कार तथा अन्य अनेक आर्य विद्वानो को रेडियो विभाग के अधिकारियों ने पत्र लिखकर मिलने तथा ध्वनि परीक्षा के लिये निमन्त्रित किया है।

प्रयाग (इलाहाबाद) रेडियो स्टेशन से भी स्वस्तिवाचन के मन्त्रो के पाठ आदि की अनुमति मिल चुकी है ऐसा ज्ञात हुआ है। आशा है आर्यो की उचित माग की पूर्ति अब अति शीघ्र होगी।

ध० दे०

॥ ओ३म् ॥

* सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ३१ | अगस्त १९४९ ई० २००६ श्रावण दयानन्दाब्द १२८ | अङ्क ६

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् पश्चात्पुरस्तादधरादुतोत्तरात् कविः काव्येन परि पाहि राजन् ।
सखा सखायमजरो जरिम्णे अग्ने मर्तां अमर्त्यस्त्वं नः ॥

ऋग्वेद १० । ८७ । २१

शब्दार्थ —(राजन् अग्ने) हे सब के राजा ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! (कविः) क्रान्तदर्शी तत्वज्ञानी तू (काव्येन) यथार्थ ज्ञान के द्वारा (पश्चात्) पश्चिम (पुरस्तात्) पूर्व (अधरात्) दक्षिण (उत) और (उत्तरात्) उत्तर दिशा से (नः) हमारी (परिपाहि) सब प्रकार रक्षा कर । (तू) (अजर) वृद्धावस्थादि विकार रहित सदा एक रस या अपरिवर्तन शील (जरिम्णे) वृद्धावस्था पर्यन्त उत्तम जीवन व्यतीत करने के लिये (अमर्त्य) अमर तू (मर्तान् न) हम मनुष्यों की (परिपाहि) सब भाँति रक्षा कर ।

विनय—हे परमात्मन ! तुम सर्वज्ञ हो । हमें सच्चा ज्ञान दे कर तुम ही हमारी वास्तविक रक्षा करते हो इस लिए हमारी तुम से यही प्रार्थना है कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण सब दिशाओं में तुम हमारी सदा रक्षा करो । तुम अजर अमर हमारे सच्चे मित्र हो । हम तुम्हारी मित्रता में सदा निर्भय और निश्चिन्त हो कर दीर्घ परोपकार मय जीवन व्यतीत करें ॥

श्रावणी उपाकर्म और वेद प्रचार:—

श्रावणी उपाकर्म का पर्व इस वर्ष श्रावण शुक्ल पूर्णिमा तदनुसार ८ अगस्त १९४९ को मनाया जावेगा जिस के विषय में एक विज्ञप्ति सार्वदेशिक सभा कार्यालय से सब आर्य समाजों को भेजी जा चुकी है। श्रावणी उपाकर्म का मुख्य सन्देश वैदिक स्वाध्याय मे आर्यो को प्रवृत्त करने का है। इस दिन प्राचीन काल मे वेद के स्वाध्याय को विशेष रूप से प्ररम्भ किया जाता था। चारों वेदों के प्रारम्भ और अन्त के मन्त्रों का उस दिन के विशेष यज्ञ मे उच्चारण किया जाता है और यज्ञोपवीत परिवर्तन भी किया जाता है जिससे यज्ञोपवीत द्वारा सूचित वेदाध्यय नादि कर्तव्यों का फिर से स्मरण किया जाए। यज्ञोपवीत के ३ सूत्रों द्वारा सूचित शारीरिक, वाचिक, मानसिक पवित्रता, शारीरिक मानसिक आत्मिक शक्तियों के सम विकास, ज्ञान कर्म भक्ति के समन्वय, देव ऋण, पितृ ऋण, ऋषि ऋण से मुक्त होने के दृढ सकल्प, ज्ञान कम तथा भक्ति के प्रतिपादक वेदों के अध्ययन तथा दम, दान, दयादि अनेक कर्तव्यों के पालन का सब आर्य नर नारियों को यज्ञोपवीत धारण करते हुए दृढ निश्चय करना चाहिये। यह खेद की बात है कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढना पढाना, सुनना सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।' इस आर्यसमाज के ३य नियम को सिद्धान्त रूप से स्वीकार करते हुए भी बहुत से आर्य वैदिक स्वाध्याय नियम पूर्वक नहीं करते जिस से वे उस पवित्र ज्ञान तथा आनन्द से वञ्चित रह जाते हैं जो वेदों के नियमित स्वाध्याय से प्राप्त होता है। हमारा समस्त आर्य नर नारियो से अनुरोध है कि वे श्रावणी उपाकर्म पर्व को मनाते हुए कम से कम १ वेद मन्त्र के प्रतिदिन अर्थ सहित अध्ययन का व्रत ग्रहण करे। ऐसा करने से उन्हें अत्यन्त लाभ होगा तथा उन के ज्ञान की क्रमश वृद्धि होती जायगी। श्रावणी पर्व के अवसर पर ही हैदराबाद सत्याग्रह स्मारक दिवस मनाया जाता है जिस के कार्यक्रम की सूचना देते हुए सभा की विज्ञप्ति में लिखा है कि 'एक व्याख्यान कराया जाए जिस मे इन वीरों ने जिस प्यारे वैदिक धर्म के लिये अपने प्राणों की आहुति दी उस का ससार के कोने २ मे प्रचार करने के लिये अपील की जाए और धन सग्रह करके सार्वदेशिक सभा को सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिये भेजा जाए। प्रत्येक नर नारी का कर्तव्य है कि इस दिन वैदिक धर्म के देश देशान्तरों प्रचार के लिये अधिक से अधिक धन प्रदान करें। आर्य समाजें सार्वदेशिक

वेद प्रचार निधि की सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र सार्वदेशिक सभा कार्यालय से मंगवा लें और उन्हें भर कर दान राशि सहित सभा कार्यालय में भिजवा दें।' हम इस कर्तव्य की ओर भी सब सब आर्यो का ध्यान आकृष्ट करना अपना कर्तव्य समझते हैं। देश के स्वतन्त्र होने पर तो यह अत्यावश्यक हो गया है कि हम अपने पवित्र सार्वभौम धर्म तथा संस्कृति का संदेश संसार के कोने २ मे फैलाए जिस से शान्ति का साम्राज्य सर्वत्र स्थापित हो जाए। इस पुण्य कार्य की पूर्ति सब आर्यो के सक्रिय सहयोग के बिना नहीं हो सकती अतः समस्त आर्य नर नारियों को सार्वदेशिक वेद प्रचार निध्यर्थ उदार सहायता अविलम्ब भेजनी और अन्यों से भिजवानी चाहिये। सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र की १ प्रति पाठक 'सार्वदेशिक' के इसी अंक मे अन्यत्र देखेंगे जो समाजो को भी भेजी जा चुकी है। हम आशा करते हैं कि सब आर्य प्रतिदिन वैदिक स्वाध्याय का व्रत लेते हुए वेद प्रचारार्थ उदार सहायता भेज कर पुण्य के भागी बनेंगे ऐसा करने से ही इस महत्त्व पूर्ण आर्य पर्व का मनाना सफल हो सकेगा।

अन्धविश्वास के कारण पैशाच कार्यः—

मद्रास से प्राप्त निम्न समाचार 'वीर अर्जुन' के २५ जुलाई के अङ्क तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित हुआ है कि '२१ जुलाई को इस प्रकार का स्वप्न आने पर कि देवता ने उसके लड़के की बलि माँगी है, श्री कान्ति मुत्थु कोप डर ने अपने पञ्चवर्षीय पुत्र का कालूकारा ग्राम में एक गंडासे से सिर काट डाला।

मिथ्या विश्वास एक मनुष्य को अन्धा बना कर किस प्रकार के क्रूर पैशाच कार्य उस से करा देते हैं इसका यह एक भयङ्कर उदाहरण है। यह अत्यन्त दुःख की बात है कि अब भी हमारे देश के अनेक ग्राम वासी ऐसे मिथ्या विश्वासों मे ग्रस्त हैं।

'अधिक मछली पकड़ो और खाओ' का अधार्मिक आन्दोलनः—

भारत सरकार के वर्तमान कर्णधार पूज्य महात्मा गान्धी जी जैसे अहिंसा के परमोपासक के नाम की दुहाई देते हुए कभी नहीं थकते किन्तु हमे यह देख कर दुःख होता है कि कई बार वे ऐसी २ योजनाए प्रस्तुत करते हैं जो महात्मा गान्धी जी के अहिंसा सिद्धान्त के सर्वथा विरुद्ध होती हैं। उदाहरणार्थ गत मास खाद्य विषयक विषम समस्या के समाधान के लिये भारत सरकार की ओर से एक योजना की घोषणा की गई है जिस में कहा गया है कि भारत मे अब प्रति वर्ष ३½ लाख टन मछली पकड़ी जाती है। इस संख्या को ५ वर्षो मे २० गुणा अर्थात् ७० लाख टन कर दिया जाए। इस में प्रारम्भिक व्यय २ करोड़ रु० होगा और आगे जैसे २ काम बढ़ेगा कई करोड़ रु० लगेंगे। इस कार्य के लिये बम्बई में एक केन्द्रीय अनुसन्धानशाला स्थापित की जायगी। कलकत्ता मद्रास और कालीकट मे प्रादेशिक संस्थाएं बनेगी। भारत के समग्र समुद्री किनारे पर (जो ३२०० मील लम्बा है) मछली पकड़ने के स्टेशनो का शृङ्खला भी फैला दी जाएगी।' इस योजना के पूरा होने से देश के प्रत्येक

नगर व ग्राम में मछलियां सुलभ हो जाएगी और घर घर में मछली ही मछली दिखाई देगी। भारत के माननीय शासक प्रमुख (गवर्नर-जनरल) श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य जी ने इस विषय में भाषण प्रसारित करते हुए कहा कि देश में अन्न की समस्या विकट है। लोगों को उचित है कि अण्डों की वृद्धि के लिये खूब मुर्गियां पालें और घरों में हौज बना कर मछलियों की वृद्धि करें। इत्यादि

इस मे सन्देह नहीं कि देश की भोजन समस्या इस समय अत्यन्त विकट है और उसके समाधान के लिये सब उचित योजनाओं को शीघ्र कार्य में परिणत करना चाहिये किन्तु इस का यह अर्थ कदापि न होना चाहिये कि भारत सरकार महात्मा गांधी जी द्वारा अभिमत अहिंसा की दुहाई देते हुए और इसे अपने इस पवित्र देश की संसार का विशेष देन बताते हुए मछली अण्डे आदि अभक्ष्य पदार्थों के सेवन में जनता को प्रवृत्त तथा प्रोत्साहित करे। "आहार शुद्धौ सत्त्व शुद्धि, अन्न मयं हि सौम्य मन" जैसा अन्न वैसा मन इत्यादि वचनों के अनुसार मछली आदि पदार्थों से भारतीयों का मन भी दूषित हुए बिना न रहेगा। इस लिये भारत सरकार की इस योजना को हम सर्वथा अनुचित समझते हैं जिसका प्रबल विरोध धार्मिक संस्थाओं की ओर से होना चाहिये। जिस मछली के भक्षण के विषय में मनु आदि धर्म शास्त्रकारों ने लिखा है कि मत्स्यादः सर्वमांसाद-स्तस्मान्मत्स्यान् विवर्जयेत्।" (मनुस्मृति ५।१५) अर्थात् मछली का खाने वाला सब मांसों के खाने वाले के समान पाप भागी है अतः मछली का सेवन न करना चाहिये उस के सेवन का भारत सरकार की ओर से प्रोत्साहित किया जाना कभी उचित नहीं कहा जा सकता। हां अन्य समुचित समस्त उपायों से भारत सरकार खाद्य समस्या के समाधान की जो योजनाएं बनाए उन में जनता को पूर्ण सहयोग देना चाहिए।

हिन्दुस्तानी समर्थकों के नये पैंतरे:—

भारत की राष्ट्रभाषा संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही हो सकती है इस विषय पर हम इन स्तम्भों मे तथा अन्य लेखों द्वारा कई बार प्रकाश डाल चुके है। 'हमारी राष्ट्रभाषा और लिपि' नाम से मेरी इस विषय की पुस्तक भी सार्वदेशिक सभा की ओर से प्रकाशित की जा चुकी है किन्तु खेद है कि "हिन्दुस्तानी" के समर्थक अपने पैंतरे बदल २ कर राष्ट्रभाषा की समस्या के समाधान में विलम्ब कर रहे हैं। अभी पिछले दिनों हरिजन (अंग्रेजी) के २४ जुलाई के अङ्क में तथा अन्यपत्रों में श्री काका कालेलकर, श्री विनोबा भावे तथा श्री किशोरी लाल मश्रूवाला के नाम से राष्ट्रभाषा के विषय में एक संयुक्त वक्तव्य अपील के रूप में प्रकाशित हुआ है जो इस सम्पादकीय टिप्पणी को लिखते समय हमारे सन्मुख है। इस में उन्हों ने मुख्यतया निम्न सुझाव प्रस्तुत किये हैं:—

(१) समस्त भारत के लिये एक सामान्य भाषा वा राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है वह अंग्रेजी नहीं हो सकती।

(२ उस भाषा का नाम केन्द्र में सरकारी व अधिकृत रूप मे हिन्दुस्तानी हो चाहे उसे प्रचलित भाषा में अथवा किसी प्रान्त वा प्रदेश में हिन्दी — नाम से भी कह दिया जाय इन दोनों में से किसी भी नाम के अनधिकृत रूप में (Non officially) प्रयोग पर कोई आपत्ति वा समालोचना नहीं होनी चाहिये।

(३) उस का व्याकरण और वाक्य रचना देहली और उस के निकटवर्ती भागों मे बोली जाने वाली भाषा के सदृश हो। संस्कृत फारसी और अरबी क कठिन व्याकरण और शैली के रूपों का परित्याग किया जाय। विदेशी शब्दो क बहिष्कार की नीति न हो विशेषत उन शब्दों के जो सामान्य वा पारिभाषिक शब्द के रूप मे प्रच लित हो गये है।

(४) नये शब्द जहा क सम्भव हो प्रान्तीय भाषाओं से लिये जाए। शुद्ध विदेशीय उत्पत्ति के शब्दों का भी बहिष्कार न किया जाय। इस पर भी जिन बहुसंख्यक शब्दों के निर्माण की आवश्यकता हो उन्हें संस्कृत से लिया जाय किन्तु सरलता का विशेष ध्यान रक्खा जाय।

राष्ट्र भाषा की मुख्य लिपि नागरी स्वीकृत की जाए और सरकारी कार्यों के लिए केन्द्र मे उसी का प्रयोग किया जाए। अन्त प्रान्तीय व्यवहार के लिये भी उस को काम में लाया जाय किन्तु उर्दू के आवेदन पत्र भी स्वीकार किये जाए और सरकारी सूचनाए, घोषणाए तथा वक्तव्यादि जिनका जनता से सम्बन्ध हो नागरी और उर्दू दोनों लिपियों में प्रकाशित किये जाएँ।

श्री कालेलकर आदि ने संविधानपरिषत् के सदस्यों तथा भारतीय राष्ट्र से इन प्रस्तावों को स्वीकृत करने का अनुरोध किया है।

हमने इस संयुक्त वक्तव्य को बहुत ध्यान पूर्वक पढ़ा किन्तु हमें खेद है कि इस के कई अंशों से हम सहमत नहीं हो सकते। अमजी राष्ट्र भाषा नही हो सकती इस मे तो कोई मत भेद हो नहीं किन्तु संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त, मध्य भारत, राजस्थान, विन्ध्य और मत्स्य प्रदेश तथा एक सीमा तक पूर्वी पंजाब जिस हिन्दी भाषा को राज भाषा घोषित कर चुके हैं, जिस को समझने और बोलने वालों की संख्या समस्त देश में सबसे अधिक ८० प्रतिशतक के लग भग है, जिसका समस्त प्रान्तीय भाषाओं क साथ संस्कृत के द्वारा निकट सम्बन्ध है उस हिन्दी भाषा को अधिकृत रूप मे (officially) राष्ट्रभाषा न मानते हुए हिन्दुस्तानी नामक कल्पित, निश्चित व्याकरण वा साहित्य शून्य भाषा को राष्ट्र भाषा घोषित करना और हिन्दी को केवल गौण रूप से राष्ट्र-भाषा के रूप मे स्वीकार करना कभी भ न्याय संगत नहीं माना जा सकता। इस का एक मात्र उद्देश्य भारत मे अल्पसंख्यक मुसलमानों को सन्तुष्ट करना प्रतीत होता है किन्तु ऐसे प्रयत्न बडे भयङ्कर तथा सर्वथा असफल सिद्ध हो चुके हैं। पाकिस्तान का निर्माण भी ऐसी मुस्लिम सन्तोषिणी नीति का परिणाम स्वरूप था ऐसा भी कहा जा सकता है। सत्य, न्याय तथा जनमत की माग यही है कि हिन्दी को ही राष्ट्र भाषा के रूप में शीघ्र घोषित किया जाए इस प्रकार के प्रस्ताव से जनता के असन्तोष को दूर

करना सर्वथा असम्भव है। सब भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा और अरबी, फारसी आदि विदेशी भाषाओं को एक ही कोटि मे रखना भी सर्वथा अनुचित है। दिल्ली और उसके निकट वर्ती प्रदेशों की भाषा में भी यदि मुस्लिम सम्पर्क से उर्दू फारसी भाषा के शब्दों का अनुचित मिश्रण हो गया है तो उसे ही राष्ट्र भाषा का माप दण्ड मान लेना और साहित्यिक भाषा मे भी उस मे व्यवहार चलाने का यत्न कैसे उचित हो सकता है? वस्तुत संस्कृत से ही नये शब्दो का निर्माण सुगमता से हो सकता है और ऐसा करने से समस्त प्रान्तीय भाषा भाषी भी उन शब्दों को अनायास समझ सकेंगे क्योंकि उन भाषाओं मे ७० से ६० प्रतिशतक संस्कृत शब्द विद्यमान हैं। नागरी लिपि को अधिकृत रूप से राष्ट्र लिपि स्वीकार करते हुए भी उर्दू लिपि की गौण रूपेण स्वीकृति और समस्त सरकारी सूचनाओं और घोषणाओं के नागरी और उर्दू दोनों लिपियो मे प्रकाशित करने की बात भी सर्वथा न्याय विरुद्ध, पक्षपात विशेष सूचक और अपव्यय वर्धक है। कोई कारण नही कि समस्त देशवासी जो भारत के देशभक्त नागरिक बन कर रहना चाहते हैं राष्ट्र लिपि नागरी को क्यों न सीखें? प्रान्तीय भाषाओं से भी विशेषता देते हुए उर्दू लिपि मे समस्त सरकारी सूचनाओ और घोषणाओं के प्रकाशन पर क्यों व्यर्थ व्यय किया जाय? क्या यह स्पष्ट नहीं प्रतीत होता कि अल्पसंख्यक मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिये ही यह प्रस्ताव किया जा रहा है? हमें तो माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद जी का यह कथन भी मान्य नहीं प्रतीत होता कि हिन्दी और हिन्दुस्तानी का भेद नाम मात्र है वास्तविक नहीं। श्री काका कालेलकर ने कुछ मास पूर्व एक लेख में स्पष्ट स्वीकार किया था कि हिन्दुस्तानी से उन का तात्पर्य सरल उर्दू से है। उर्दू की शैली, साहित्यिक कल्पनाएं तथा अन्य आदर्श संस्कृत निष्ठ हिन्दी से अनेक अंशों मे सर्वथा भिन्न है। उन के अन्तर की वास्तविकता से हम आंखें नहीं मूंद सकते। अत संविधान परिषत् के समस्त सदस्यो से हम पुन सानुरोध निवेदन करना चाहते हैं कि वे 'हिन्दुस्तानी' नामक कल्पित भाषा के चक्कर मे न पड कर संस्कृत निष्ठ हिन्दी को राष्ट्र भाषा तथा देवनागरी-लिपि को राष्ट्र लिपि घोषित करवाने मे विलम्ब न करें अन्यथा उन के प्रति जनता के असन्तोष मे वृद्धि होती जाएगी।

वृद्ध और विषम विवाहों पर रोक अत्यावश्यक: —

आर्य समाज दीवान हाल देहली ने अपने एक विशेष अधिवेशन में निम्न प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत करके हमारे पास प्रकाशनार्थ भेजा है —

'आर्य समाज दीवान हाल का यह अधिवेशन कई विधानशास्त्रियों एवं राजकीय उच्च पदों पर विराजमान महानुभावों में होने वाले वृद्ध एवम् अनमेल विवाहो को बडी चिन्ता और दुःख के साथ देखता है। इस प्रकार के विवाहों से जहाँ नारीजाति के साथ घोर अन्याय होता है वहाँ राष्ट्रीय जीवन का भी ह्रास होता है। आर्य समाज सदा से ही ऐसे वृद्ध और

अनमेल विवाहों का घोर विरोध करता रहा है। अत: अपना कर्तव्य समझते हुवे आर्य समाज का यह अधिवेशन इस प्रकार के विवाहों को सर्वथा अनुचित और हानिकारक समझता है और सरकार से अनुरोध करता है कि ऐसे विवाहों की रोक थाम के लिये उचित पग उठाये क्योंकि सामान्य जनता के चारित्रिक जीवन पर इसका अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता।" हम आर्य-समाज दीवान हाल के इस प्रस्ताव का प्रबल समर्थन करते हुए भारत सरकार से अनुरोध करते हैं कि बाल्यविवाह की तरह ऐसे वृद्ध और विषम विवाहों पर भी वह रोक लगाए। गत मास सुप्रसिद्ध व्यक्तियों मे से दो ने संविधान परिषत् के सदस्य श्री बालकृष्ण जा शर्मा नवीन और मद्रास के अब्राह्मणवर्ग के नेता श्री राम स्वामी नायकर ने लगभग ५५ और ७२ वर्ष की आयु मे २२ और ३९ वर्ष का युवातयों के साथ विवाह करके एक अत्यन्त अनुचित उदाहरण जनता के सन्मुख रक्खा है। ऐसे विषम और वृद्ध विवाह बढते चले जा रहे है तथा भारत सरकार के अधिकारियों और अन्य प्रतिष्ठित महानुभावों के इस प्रकार करने से सर्व साधारण मे भी वैसी प्रवृत्ति होना उत्पन्न स्वाभाविक है जो अवस्था नितान्त अवाञ्छनीय है। खेद है कि श्री ठाकुरदास भार्गव आदि के इस विषयक प्रस्ताव अभी तक धारा सभा में स्वीकृत नहीं किये गये। जनता को इस विषयक आन्दोलन तब तक जारी रखना चाहिये जब तक यह कानून का रूप न ग्रहण कर ले। विधुरों के कन्याओं के साथ विवाह पर भी रोक अवश्य होनी चाहिये। प्रतिष्ठित महानुभाव ही यदि जनता के सन्मुख बुरे उदाहरण प्रस्तुत करने लगें तो जनता का चरित्र कैसे उन्नत हो सकता है?

डा० राधाकृष्ण की रूस में नियुक्ति:—

भारत के जगद्विख्यात दार्शनिक तथा प्रतिभा-शाली वक्ता श्री डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् की मास्को (रूस) में राजदूत के रूप में जो नियुक्ति भारत सरकार की ओर से घोषित की गई है उस से हमें विशेष प्रसन्नता नहीं हुई क्योंकि हमारे अपने विचार में तो डा० राधाकृष्ण जैसे सुयोग्य व्यक्ति के लिये उपयुक्त स्थान भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री का पद है न कि एक राजदूत का पद। जहाँ श्रीमती विजय लक्ष्मी जैसी राजनीति विशारदा अनुभव शालिनी देवी सफल नहीं हो सकीं वहां एकान्त प्रिय सुप्रसिद्ध विचारक डा० राधाकृष्णन् जैसे शिक्षा वैज्ञानिक राजनीतिक दृष्टि से सफल हो जाएंगे इस में हमें सन्देह है तथापि जब स्वयं डा० राधाकृष्णन् जी ने सोच विचार के पश्चात् इस पद पर नियुक्ति के लिए अपनी अनुमति दे दी है तो इस पर आपत्ति उठाना उचित नहीं प्रतीत होता। रूस के लोग भारतीय संस्कृति तथा साहित्य में रुचि दिखा रहे हैं तथा वहां वेद, रामायण, महाभारत आदि के अनुवाद हो रहे हैं। डा० राधाकृष्णन् जसे विद्वान के राजदूत बनने से यदि इस सांस्कृतिक अनुशीलन की प्रगति तीव्र हो सके और भारत तथा रूस के मध्य अधिक सौहार्द स्थापित हो सके तो यह हम सब के लिये हर्ष की बात होगी।

स्व० श्री अमृत राय जीः—

हमें पाठकों को यह सूचित करते हुये अत्यन्त दु ख होता है कि गत १४ जुलाई को पजाब आर्य प्रति निधि सभा के उपप्रधान और पंजाब प्रान्त के एक अत्यन्त उत्साही अनुभवी आर्य कार्य कर्ता श्री अमृत राय जी का आकस्मिक शोक जनक देहावसान हो गया है। वे भी स्व० श्री नोतनदास जी और प० विश्वम्भरनाथ जी की तरह पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के मुख्य-स्तम्भों मे से थे। उनके देहावसान से पंजाब प्रतिनिधि सभा की जो क्षति हुई है उसकी पूर्ति बड़ी कठिन है। हम उनके सुपुत्र श्री प० अर्जुनदेव जी विद्यालङ्कारादि तथा उनके परिवार के अन्य सब सदस्यों के साथ प्र० सभा की ओर से हार्दिक समवेदना तथा सहानुभूति प्रकट करते हुए भगवान् से दिवगत पवित्र आत्मा की सद्गति के लिये प्रार्थना करते हैं।

घ० दे०

अलवर में शुद्ध हुए मेवों के शिष्ट मण्डल की
श्री डा० राजेन्द्र प्रसाद् जी से भेट

दिल्ली, जुलाई २८

अलवर मे शुद्ध हुवे मेवों की कुछ दिनों से यह शिकायत चली आती है कि वहा के कुछ मुसल-मान सर्वोदय समाज के कार्यकताओ के साथ आकर अनुचित रीति से उन पर फिर मुसलमान होने का दबाव डालते हैं और कहते हैं कि हम श्री प० जवाहरलाल जी नेहरू के भेजे हुए है। उनका हुक्म है कि तुम फिर मुसलमान हो जाओ। सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में इस प्रकार की बहुत सी शिकायते आई हैं। २६ जुलाई को अलवर के शुद्ध हुये मेवो का एक शिष्ट मण्डल मौखिक रूप से अपनी शिकायतों को सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के समक्ष प्रस्तुत करने के लिये दिल्ली मे आया। और दोपहर को १॥ बजे से लेकर लगभग ४ बजे तक श्री प्रधान जी से बात चीत करता रहा। श्री प्रधान जी ने उनके बयान लिखित रूप मे लिये। २८ जुलाई को प्रात काल ९ बजे यह शिष्ट मण्डल श्री सभा प्रधान जी के साथ माननीय डा० राजेन्द्रप्रसाद जी प्रधान सर्वोदय समाज की सेवा मे उपस्थित हुआ। श्री मान्य डा० जी ने सब की शिकायतो को बहुत धैर्य पूर्वक सुना और उनसे प्रश्नोत्तर भी किये। साथ मे यह सान्त्वना दी कि यदि सर्वोदय समाज के कार्यकर्ताओं की कोई भूल होगी तो वे उसका प्रतिकार करेगे। उन्होंने यह भी कहा कि प्रत्येक को अपनी इच्छा के अनुसार बिना किसी दबाव के धर्म के अवलम्बन करने का अधिकार है और किसी को दबाव नहीं डालना चाहिये। यदि आप अपनी इच्छा से शुद्ध हुये हैं तो दृढता पूर्वक रहिये और किसी के दबाव में मत आइये। श्री प० नेहरू जी ने किसी आदमी को दबाव डालने के लिये वा मुसलमान बनने की प्रेरणा करने के लिये नही भेजा।

गगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

शेष-पत्र (बैलैन्स शीट) २८ फरवरी १९४९

निधियाँ तथा दातव्य

स्थिर निधियाँ

वेद प्रचार ५०००)
देश देशान्तर प्रचार ५०००)
भारतीय स्टेट फण्ड ५०००)
रक्षा निधि २५०००)
सार्वदेशिक भवन २४.००)
वैदिक आश्रम ऋषिकेश १४०००)
शहीद परिवार सहायता १५००)
आर्य साहित्य प्रकाशन ११७५०)
चन्द्र भानु वेदमित्र स्मारक ५०००)
गंगाप्रसाद गढवाल प्रचार २०००)
शिवलाल वेद प्रचार ६५०)
ढोढाराम चूडामणि वेद प्रचार ५०१)
होमा महतो सुन्दर देवी
वेद प्रचार १००) २४८५०१)

विशेष निधियां

दलितोद्धार ३०००)
सूद ,, ,, ,, २२१≡)६ ३२२१≡)६
दयानन्द आश्रम २२५०)
सूद ,, ,, ८१।≡)१ २३३१।≡)१
श्रद्धानन्द नगरी भवन ६६६२)
सूद शहीद परिवार
सहायता ५५)
"गंगाप्रसाद गढ़वालप्रचार ११२॥≈)१२३८३।)१०

सम्पत्ति तथा प्राप्तव्य

भूमि और भवन

बलिदान भवन देहली २६२००)
सार्वदेशिक ,, ,, २४५००)
केशव आर्य हाई स्कूल हैदराबाद २५०००)
वैदिक आश्रम ऋषिकेश १४०००)
श्रद्धानन्द नगरी आर्य
समाजभवन ३९१६)
,,-पाठशाला भवन २७०७) ६६६३)
शोलापुर समाज भूमि ८९२२॥≈)
४२३३)६
गाजियाबाद भूमि १०९५१८॥≈)६

इनवेस्टमेन्ट्स

प्रताप बैंक लि० चाँदनी
चौक दिल्ली F D ३००००)
सेन्ट्रल बैंक दिल्ली ३००००)
,, कैश सर्टिफिकेट्स ६०००९।)
डिबेन्चर्स मोहनी सुगर
मिल्स कलकत्ता ३०००)
शेयर्स सार्वदेशिक प्रकाशन
लि० दिल्ली ५१३०)
आर्य साहित्य मंडल
लि० अजमेर २०)
ओरियन्टल बीमा कं० १४२५-)
आर्य कोआप्रेटिव बैङ्क
लि० आगरा ३५०) १२९९३४।-)

रिलीफ निधियां

बंगाल पीड़ित सहायता १०५२४५॥)३
पंजाब ,, ,, ,, ५५४३।)७ ११०७८८॥)१०

दक्षिण भारत प्रचार निधियां

केशव आर्य हाई स्कूल २५०००)
शोलापुर आर्य समाज
मन्दिर १५०००)
हैदराबाद मन्दिर निर्माण ५०५४।≈)६
तिन्ने वल्ली प्रचार २१६६।–)८ ४७२५०॥ २

विदेश प्रचार निधियां

अमेरिका प्रचार ४४२६)
विरला विदेश प्रचार १३०००)
बगदाद फण्ड १२७२) १८७०१)

धार्मिक पुस्तक प्रचार निधियां

श्री नारायण स्वामी पुस्तक
प्रकाशन ४६६६)
चन्द्र भानु वेदमित्र ५५८४)
आर्य साहित्य प्रकाशन ३७३४)
पुरानी पुस्तको का स्टाक ३४५)
नकद आर्य साहित्य
प्रकाशन ७८७≡)६
,, पुरानी पुस्तकों का २६१)६ १०७८।)६ १५४०७।)६

रिजर्व निधियाँ

फर्नीचर २६१७।≡)
स्थिर पुस्तकालय ४८७१॥≈)६ ७४८६।–)६

विविध निधियाँ

सत्यार्थ प्रकाश रक्षा २००००)
सिंधी सत्यार्थ प्रकाश ६६४६।≡)

सुरक्षित ऋण

पटौदी हाउस ट्रस्ट ३४७७५)
अन्य १४६६००) १८१६७५)

फर्नीचर

गत शेष-पत्र के
अनुसार २३७१।≡)
घिसाई कम की गई १५१।≡) २२२०)

स्थिर पुस्तकालय

गत शेष पत्र के
अनुसार ४५३०≈) ६
इस वर्ष की वृद्धि ५०५–) ५०३५≡)८

बिक्री की पुस्तकें

पुरानी पुस्तकों का
स्टाक ३४५)
स्टाक सिंधी सत्यार्थ-
प्रकाश ४८७२)
स्टाक चन्द्रभानु वेद मित्र
प्रकाशन निधि ५१६२ –)६
,, आर्य साहित्य प्रकाशन
निधि ३७३४)
,, नारायण स्वामीपुस्तक
प्रकाशन निधि ६२६४॥≡)६
प० ओंकार दत्त पुस्तक
प्रकाशन ३६०) २१५६८।–)६

प्राप्तव्य

आर्य प्रतिनिधि सभा
संयुक्त प्रान्त २५३३॥≡)११
सूद प्राप्तव्य ५४७१॥≡)३

दयानन्द समैपुर पाठशाला ५४६।।।=)
प० ओंकारदत्त पुस्तक प्रकाशन
स्टाक ३६०
नकद १८३।—)३ ५४३।—)३
टंकारा आर्य समाज मंदिर
फण्ड ३५३—)
दयानन्द पुरस्कार निधि ४६५।।=)
आर्य महासम्मेलन
कलकत्ता ११२।।।=)
३१६७१≡)३
स्टाफ प्रोवीडेन्ट फण्ड ७३०३।≡) ३८६७४।।=)३

धरोहर

आर्य समाज कराची ११४१८।—)१
,, ,, अहमदपुर शरकिया ६००)
परोपकारिणी सभा मौरीशस २६४)
आर्य प्रतिनिधि सभा ,, ,, ३००)
आर्य समाज बालनगीर
(उड़ीसा) ७५)
जाति भेद निवारक सघ १०)
आर्य मित्र प्रकाशन लि०
लखनऊ २५)
पटौदी हाउस ट्रस्ट ६२।।।=)
किराया मकान ११२७।।)
सार्वदेशिक पत्र
जमानत १०००)
जमानत सम्बन्धी व्यय २७६—)६ १२७६—)६
आर्य धर्म सेवा सघ ४००) १०८१२।)८
दिल्ली

पेशगियां

आर्य प्रतिनिधि सभा
बगाल १०६१२।।)६
,, ,, ,, सिंध ७८१३)
श्री पं० मदन मोहन विद्यासागर जी
तनाली (पुस्तक प्रकाशन
के लिये) ५००)
श्री माधव बारियर जी
प्रधान आर्य सभा
केरल चेंगानूर ,, १५०)
श्री प० ज्ञान चन्द जी
बी० ए० ७००)
,, स्वामी अभेदानन्द जी
पटना ६०)
बिजली कम्पनी दिल्ली
(डिपोजिट) ४८)
सभा कर्मचारियों को
प्रोवीडेन्ट से ४८५।।) २०३६६)६
स्टाक कागज ३७५)

बैंकों में चलत

१७२०८≡)
पंजाब नैशनल बैंक ३१८२।)७
प्रताप बैंक लि० दिल्ली २८५५०।—)१०

आर्य नगर गाजियाबाद	२६३००)		पंजाब नैशनल बैंक		
सभा कर्मचारी	१८≡)७		(सेविंग एकाउन्टस)	७३०३।≡)	५६२४४।)५
विविध	२४९०॥)६	४१६२३॥≡)२	इन्वेस्ट		
			श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त	५७=)९	
			श्री पं० नारायणदत्त जी उपदेशक	१००)	
			दिल्ली कार्यालय	५००)	६५७=९
			आय व्यय खाता		
			गत शेष पत्र के अनुसार	२५९५॥≡८	
					६४॥)३
			इस वर्ष का अधिक व्यय		२६६०।≡)११
सर्व योग		५४११२०–)३	सर्व योग		५४११२०–)३

हमारी आज की रिपोर्ट के अधीन प्रमाणित

वास्ते जगदीश प्रसाद एण्ड कम्पनी

(ह०) जगदीश प्रसाद

बी० ए० बी० कौम (बम्बई)

जी० डी० ए० आर० ए०,

रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्टस एण्ड आडीटस

चावनी चौक देहली

४-४-१९४९

(ह०) रघुनाथ प्रसाद पाठक
एकाउन्टेन्ट

(ह०) नारायण दत्त
कोषाध्यक्ष

(ह०) गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री

(ह०) इन्द्र विद्यावाचस्पति
प्रधान

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

आय-व्यय चित्र १३ फरवरी १६४८ से २८ फरवरी १६४६ तक

पंचमांश (प्रान्तीय सभाओं से)

इस वर्ष का २६४४≡)

गत वर्षो का संयुक्त प्रान्त

की सभा से प्राप्तव्य ३३८३॥≡)११

६३२७॥=)११

दशांश (सम्बद्ध समाजो से) ५ ७॥≡) ६

६६२५॥=)८

दान

दानस्थापना दिवस १४५८॥)

विविध ५२१।– १०

शुद्धि कार्यार्थ १५२। ७१३२–)१०

दान दक्षिण भारत प्रचारार्थ

श्री सेठ जुगलकिशोरजी विरला से ८००)

अन्यो से १२५) ६२५)

सूद तथा किराया मकान

बैंकों तथा सम्पत्ति से १३३८५)

विविध निधियों को दिया २०६२)

११२६३)

सूद रक्षा निधि १०००)

„ देश देशान्तर प्रचार १५००) १३७६३)

२३७७६)६

आय से अधिक व्यय ८७४३≡)

कार्यालय

वेतन ६२५०॥–)६

सार्वदेशिक पत्र व

प्रकाशन निधियों से प्राप्त १२००) ५०५०॥–)६

प्रोवीडेन्ट फण्ड ५३८।=)३

५५८६≡)६

एलाउन्स श्री मन्त्री जी १४५०) १०३६≡)६

मीटिंग व्यय ५८४॥≡)६

मार्ग व्यय अन्तरंग सदस्य ७०१॥≡)

व्यय राजार्य सभा ५०॥) १३२७।=)६

कार्यालय का विविधव्यय ४४७८≡)३

घिसाई फर्नीचर १५१ ≡ ४६२६॥=)३

व्यय बलिदान भवन ५२२–)

„ सार्वदेशिक भवन ७२≡) ५६४≡)

स्थिर पुस्तकालय ५००)

लोहारू मन्दिर सहायता १०००) १५००)

प्रचार-व्यय

दक्षिण भारत ४२५६॥≡

शुद्धि १२४६॥=

उड़ीसा १८०४।≡)६

हिन्दी भाषा आन्दोलन

सहायता ३५५॥≡)

साहित्य वितरण १४५॥≡)६ ७८१२॥≡)३

सार्वदेशिक पत्र

व्यय छपाई कागज डाक व्यय आदि तथा

वेतन सम्पादक व लेखक ७४ ६ ३

आय ग्राहक व विज्ञापन ४६५७॥)६ २४६१।≡)६

		आर्य वीर दल	
		संगठन व्यय	३०४५।=)३
		हैदराबाद पीड़ित सहायता	
		व्यय ५०८६॥=)	
		दान से प्राप्त ९८९॥)६	४०९७=)६
	योग ३२५१९≡)६		योग ३२५१९≡)६
		विविध निधियों से लिया गया	
		सूद बिरला विदेश प्रचार १९५०)	
		,, शहीद परिवार सहायता २३५॥=)	
		उचन्त १२५६॥≡)६	
		सत्यार्थ प्रकाश रक्षा निधि ५१३७—)३	८६७८।=)६
अधिक व्यय	८७४३≡)	अधिक व्यय की राशि शेष-पत्र में गई	६४॥।)३
	योग ८७४३≡)		योग ८७४३≡)

हमारी आज की रिपोर्ट के अधीन प्रमाणित

वास्ते जगदीश प्रसाद एण्ड कम्पनी

(ह०) जगदीश प्रसाद

बी० ए बी० कौम (बम्बई)

जी० डी० ए० आर० ए०,

रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्टस एँड आडीटर्स

चादनी चौक देहली

४-४-१९४९

(ह०) रघुनाथ प्रसाद पाठक — एकाउन्टेन्ट

(ह०) नारायण दत्त — कोषाध्यक्ष

(ह०) गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए० — मन्त्री

(ह०) इन्द्र विद्यावाचस्पति — प्रधान

इदन्न मम

[लेखक—आचार्य प० चन्द्रकान्तजी वेदवाचस्पति गुरुकुल सूपा, नवसारी]

—❧—

ग ५ो महायुद्ध के परिणाम स्वरूप ससार मे साम्यवाद समाजवाद अपनी जडे अधिक मजबूत जमा चुका है। देखते देखते हिन्दुस्तान की सीमाओं पर चीन सा विशाल देश साम्यवाद के पजे में जकडा जा चुका है ब्रह्म देश पर पजा जम रहा है सदेह नहीं कि पूर्वी बगाल आसाम उडीसा और मद्रास में भी यह अपना पैर फलाने लगे। भारत जैसे धर्म प्रधान देश मे साम्यवाद न फल एतदर्थ हमे जनता मे यज्ञ की भावना फैलाकर इसे रोकना चाहिये। वेदादि सच्छास्त्रों मे स्थूल यज्ञ की अपेक्षा मानसिक यज्ञ का विशेष महत्त्व दिया गया है इस बात की उपेक्षा हो जाने से ही यज्ञो मे पशुवध होने लगा। वास्तव मे वेद धर्म तथा शाखा रूप सब मतों मे तत्त्वत यज्ञो मे पशु वध को स्थान नहीं है। यज्ञ का प्रयोजन पाशविक भावों को दूर करने के लिये है यज्ञ श्रेष्ठ कर्म होने से कर्म के फल के साथ लगे हुए राग द्वेष रूपी पशु का नाश न हो तब तक यह अपूर्ण है। प्रत्येक कर्म के साथ मै और मेरा लगा हुआ है, यदि यह हटकर "न मैं" न मेरा" हो जावे तब कर्म मार्ग की सफलता है। कर्म अनिवार्य है परन्तु वह ऐसा होना जो बन्धन मे न डाले। यज्ञ रूपी कर्म बन्धन से मुक्त करता है "यज्ञार्थात कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽय कर्मबन्धन"। इस यज्ञ कर्म का विरोध न वेद करते है न उपनिषद्। यजुर्वेद के ३९ अध्यायों मे भिन्न भिन्न राष्ट्र विधायक यज्ञ बताये गये हैं परन्तु अन्तिम ४० वे अध्याय मे औपनिषदिक अध्यात्म विद्या बताइ गई है— "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध कस्य स्विद्धनम्" सब करो लेकिन त्याग पूर्वक करो। खूब धन कमाओ पर यह न समझो कि यह मेरा है। धन लक्ष्मी पवित्र वस्तु है पर इतना ममत्व ही दुख एव नाश का मूल है। प्राचीन समय मे वही राजा चक्रवर्ती समझा जाता था जो कि १ वर्षो के बाद सर्व मेध यज्ञ करके अपना सारा धन प्रजा के हित मे लगा कर खाली हो जाता था। क्या ऐसी दशा म गरीबी, हडताल, दुर्भिक्ष हो सकते थे क्या एसी दशा म आज का भौतिक साम्यवाद फैल सकता था? यज्ञ का अर्थ ही Sacrifice अर्थात् त्याग है। साधारण देवयज्ञ मे कुण्ड मे घी की आहुति देने के बाद यज्ञ शेष के रूप मे घृतबिन्दु पानी मे डालते हुए कहा जाता है— 'इदम् अग्नये इदम् न मम", "इद वायवे इद न मम"। यज्ञ की सात्त्विक भावना यह है कि ध्येय सिद्धि क लिये सङ्कल्पाग्नि जला कर उसमे सर्वस्व समर्पित करना चाहिये। अपने अस्तित्व को टिकाये रखने के लिए जो कुछ धन वस्त्रादि प्राप्त किया जाय उसे भी 'इद न मम' कहकर यज्ञ शेष के रूप मे भगवान् के चरणो मे, जनता जनार्दन की सेवा में रख देना चाहिये। जब मैं और मेरा न रहा तब राग द्वेषादि पशु भाव कैसे रह सकते है? अन्त में इसलिये यज्ञ

के 'इदन्नमम बोला जाता है और यजुर्वेद का अन्तिम अध्याय 'ईशा वास्यमिद सर्व' से शुरू किया गया है।

अभी कुछ समय से भारत प्रसिद्ध वेदाचार्य प० सातवलेकर जी के गुजरात मे आने के बाद हमने गुरुकुल सूपा, हथुका, तथा नवनारी मे वृहद् यज्ञ की आयोजना करवाई 'त्रयो धर्म स्कन्धा यज्ञोऽध्ययन दान च के अनुसार यज्ञको केन्द्र मे रख कर हमारी नम्र सम्मति मे आर्य जगत् को धर्म प्रचार की प्रणाली मे परिवर्तन करके यज्ञ को केन्द्र स्थान मे रख धर्म प्रचार करना चाहिये। आज साम्यवाद तथा जडवाद की जो भयकर लहरे उठ रही है इसके सामने यज्ञ की अग्नि प्रचलित करनी चाहिये। स्थूल दृष्टि से भी यज्ञ मे डाला गया हुत द्रव्य सूक्ष्म होकर रोग कीटाणुओ का नाश करके हवा शुद्ध करता है—वातावरण को पवित्र बनाना है। Prevention is better than cure (प्रक्षालनाद्धि पकस्य दूरादस्पर्शन वरम्) के अनुसार रोग को पहले से रोकना है। इसमे सर्व हित नही तो क्या है ?

कुछ राष्ट्रवादियो ने हमें कहा कि भयंकर महँगी और गरीबी मे इतना पैसा क्यों हवन मे बरबाद कर रहे हो ? हमारा उनसे नम्र निवेदन है कि मन्दिर और मस्जिदो मे लाखों रुपया क्यो बरबाद किया जा रहा है ? स्मारक और मूर्त्तियो के पीछे करोडो रुपये की होली क्यों खेली जा रही है ? पयाप्त से अधिक सम्मान मिल जाने पर भी नेताओ के सत्कार मे बार बार हजारो रुपये क्या खर्च किये जाते हे ? देशभक्तो की जयन्तिया की पक्तियो पर हजारों हार क्यों बिगाडे जाते है यदि इनके पीछे भावना है तो यज्ञ के पीछे ता सर्व मेध की महान् भावना छिपी हुई है। "इदन्नमम" का त्याग मन्त्र गूज रहा है। आजकल की खराब अवस्थाओ मे भी भारत की सस्कृति हा ऐसी है जो यजमान को अपनी बहुमूल्य प्रिय वस्तु को धूम और राख बनते हुए देखकर भी प्रसन्न रखती है। राजनैतिक स्वतन्त्रता का प्रतीक यदि चर्खा हो तो सास्कृतिक स्वतन्त्रता का प्रतीक यज्ञ होगा। आओ आज हम "इदन्नमम" रूपी यज्ञ ध्रुव का जाप करके आत्म कल्याण करे।

[हम सुयोग्य लेखक महोदय के विचारों से सर्वथा सहमत है। शुद्ध भावना से विना आडम्बर के किया हुआ यज्ञ वस्तुत धर्म प्रचार का सर्वोत्तम साधन है ऐसा हमारा अनुभव सिद्ध विचार है—सम्पादक सा० दे०]

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र

(इसे भर कर दान राशि सहित तुरन्त भेजिये और अन्य मित्रो से भी भिजवाइये।)

सेवा में,

श्री मन्त्री जी

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा,

बलिदान भवन, देहली

श्रीयुत मन्त्री जी, नमस्ते !

देश देशांतरों मे सार्वभौम वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति के प्रचार की व्यवस्था के उद्देश्य मे स्थापित सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि की योजना को मैं अत्यावश्यक और उपयुक्त समझता हू और इस पुण्यकार्य की सहायतार्थ ... रु० की राशि तथा/अथवा ... रु० के वार्षिक दान की प्रतिज्ञा करता हूँ। यह राशि आप की सेवा मे ... द्वारा भेजी जा रही है।

भवदीय

नाम—

पूरा पता—

तिथि—

ज्ञान, भक्ति और कर्म

[लेखक—पूज्यपाद श्री महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज 'यज्ञ भवन' जवाहर नगर, देहली]

"यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे" यह एक प्रसिद्ध उक्ति है। जो ब्रह्माण्ड मे है वही शरीर मे है। ससार मे हम देखते है जल बहुत है और हमारे शरीर के अन्दर भी जल है परन्तु अल्पमात्र। इसी प्रकार विशाल पृथिवी का अश हमारे भीतर विद्यमान है। अग्नि वायु आदि भी क्रमश अशमात्र शरीर मे उपस्थित हैं और शरीर का कोई भी भाग ऐसा नहीं कि जिस मे ये पाचो भूत विद्यमान न हों। प्रभु की लीला बडी अदभुत है इसने महान् तत्त्वों को अल्प मात्र शरीर मे भर दिया। यह सब कुछ होते हुवे भी हमारे अन्दर एक और ऐसी शक्ति है जो सर्वत्र परिपूर्ण है। पाव के नख से शिर की शिखा तक हमारे राम २ के अन्दर परमेश्वर परिपूर्ण रूप से व्यापक है। परमेश्वर अश मात्र मे नही। भूत अश मात्र मे हैं। और फिर विलक्षण बात यह है कि जल अग्नि आदि अपने सर्व गुणो सहित शरीर मे उपस्थित नहीं हैं। जल का गुण है शान्त परन्तु मेरे भीतर का जल मुझे शान्त नहीं कर रहा मुझे ठण्डक के लिये और जल का प्रयोग करना पडता है। अग्नि अन्दर है परन्तु वह प्रकाश का गुण अन्दर नहीं है। वायु अन्दर है, यदि वायु के सारे गुण अन्दर होते तो बाहर का वायु मुझे लेने की आवश्यकता न पडती। दूसरी अद्भुत लीला यह कि अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, आकाश का अश मात्र हमारे अन्दर रखा। अग्नि की एक छोटी सी चिंगारी यदि शरीर को स्पर्श कर जाय तो तुरत अनुभव होता है कि हम जल गये। वर्षा की एक बिन्दु आ पडे तो झट कह उठता हूँ कि वर्षा आ गई। परन्तु वह भगवान् जो परिपूर्ण रूप से अपना अनन्त शक्तियो सहित हमारे अन्दर मौजूद है उस भगवान् का मुझे भान होता ही नहीं। पूजा करता हूँ तप करता हूँ, यज्ञ करता हूँ, सध्या करता हूँ तो भी भान नही होता। जल की बूद तो अनुभव करा देती है परन्तु प्रभु का भान नहीं होता। कारण?

इस रहस्य को समझने के लिये यह जीव मनुष्य देह मे आया। महर्षि स्वामी दयानन्द ने लिखा 'सब सत्य विद्या और विद्या से जो पदार्थ जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।" यदि मैं ने विद्या अथवा पदार्थ को प्राप्त करके उसके मूल तत्त्व परमेश्वर को नहीं समझा तो मेरी विद्या व्यर्थ है। जब मैंने परमेश्वर की एक अथवा अनेक विद्याओं को प्राप्त कर लिया और व्यर्थ कर दिया तो मेरा जीवन व्यर्थ गया। यदि प्राप्त करके किसी विद्या को सार्थक कर दिया तो जीवन सफल हो गया। परमेश्वर और हमारे मध्य मे एक आवरण है जो हमें नही जानने देता। धन मे सामर्थ्य नहीं जो उस आवरण

को हटा सके । बड़े २ मल्ल योधा सैंडो आदि शारीरिक बल से इस परदे को न हटा सके । हिटलर जैसा वीर सैनिक भी असमर्थ रहा अन्त उसका यह हुआ कि पिस्तौल उसे मुख के अन्दर रखना पड़ा । महान् राजे महाराजे इस परदे को न हटा सके । जिनकी वाणी मात्र से संसार भयभीत हो जाता है, वे भी सफलता न प्राप्त न कर सके । वह ऐसी वस्तु नहीं जो कठिन हो । उसका न माप है न परिमाण और न ही भार, परन्तु वह हम से हटाई नहीं जाती, कितनी आश्चर्य है । इसका कारण ?

सिनेमा के अन्दर एक व्यक्ति भगवान् राम का पाट अदा करने आये, वैसी की वैसी वेष भूषा है, जनता ने देखा और कहा कि राम आ गये परन्तु नमस्कार किसी ने नहीं की । अन्दर से आवाज आती है कि यह राम नहीं । परन्तु एक घण्टे में जो पार्ट उसने अदा किया, उससे लोगों की अश्रुधाराएं बह निकलीं और रोमाञ्च खड़े हो गये । इतना प्रभावित होते हुवे भी नमस्कार किसी ने न की । कारण ? वह तो गोविन्द राम खोम्चा वेचने वाला था, वह एक घण्टे के लिए कृत्रिम राम बना था, चौबीस घण्टे राम नहीं रहा । इसलिये उसको किसी ने नमस्कार नहीं किया । हमारी पूजा चाहे जप हो चाहे पाठ, कुछ भी हो, सब गोविन्द राम के पार्ट के समान है । पूजा पाठ छूटते ही अथवा समाप्त होते ही वही दुकानदारी, वही छल वही कपट सब चलता है, असत्य बोलते हैं । मैंने क्या किया ? सिनेमा का पार्ट अदा किया । यदि पूजा करता तो जिस प्रकार अग्नि के स्पर्श करते ही मुझे चौंक जाना पड़ता है । हमें परमात्मा का स्पर्श होता तो उसका कारण एक मात्र यही है । उसके अन्दर राम की भक्ति जो लोगों को उपदेश देता था, स्वयं न थी, इस लिये प्रभाव न पड़ा, उसने दिल से पार्ट अदा नहीं किया वह बना राम परन्तु उदर पूर्ति के लिये सब कुछ किया । जिस भाव से उसने किया था उसको दाम मिल गये । यदि वस्तुत वह इस भाव से करता कि मैं राम ही हूं तो लोग उसके पास स्वयं खिंचे आते । परमेश्वर की लीला अद्भुत है परन्तु हम समझ नहीं पाते । जाते २ मैंने बाजार में सुन्दर पीला आम देखा खरीद लिया । आम का ज्ञान किसने कराया ? छिल्के ने, कि यह सन्तरा नहीं, अनार नहीं, आडू नहीं, सेब नहीं, आम है । हम को कैसा प्यारा है ? छिल्का उतार कर फेंक दिया ज्ञान का मूल्य तो इतना ही रहा । अब वह रस जो हम ने लेना था ले लिया तो जिह्वा पर रस जाते ही भगवान् की लीला का गुण गाया कि कितना मीठा रस है । जिसके आश्रित रस था उसको भी फेंक दिया । परन्तु जिसका मूल्य जाना वह अन्दर ले लिया । वह था रस ।

तीन विद्याएं अथवा मार्ग

संसार में तीन ही चीजें हैं उन्हें विद्या कहो अथवा मार्ग कहो एक ही है । एक है ज्ञान दूसरी है भक्ति तीसरा है कर्म । आम की काष्ठ, मूल आदि सब व्यर्थ । एक आम का रस था जिसको हम ने ग्रहण किया । ये सब शुभ कर्म भक्ति को पैदा करने के लिये हैं । आम में छिल्का ज्ञान कराने वाला, रस भक्ति का

स्वाद चखाने वाला और गुठली जिस के आश्रित रस है, वह कर्म की याद दिलाने वाली है। रस कब पैदा होगा जिस समय गुठली को भूमि के अन्दर डाल दिया मानो अपने आप को अर्पण कर दिया। गुठली रूप कर्म ने भूमि रूपी माता की शरण में अपने आप को अर्पण कर दिया। गुठली गुठली रह जाती यदि अर्पण न करती। जड़ (मूल) बनी, सफेद अंगूरी बनी कोंपल बनी, तन्ना बना, अपने भार, आकार तथा गुण सबको मिटा दिया पृथ्वी को समर्पण कर दिया। कोई रङ्ग न रखा सब का मिटा दिया पर बढाया सब प्रकार के रङ्गों को। डण्डी बनी, शाखा रङ्ग धारण किया, पत्ते बने हरे रङ्ग के, फल लगा, छिल्का पहले हरा फिर पकता गया पीला बनता गया। रस बना लाल। फल पका, गोल बना। जब तक सख्त है कठोर है रस नहीं आता। ज्यों ज्यों बढता जाता है, रस आता जाता है। जब सूर्य ने छिल्के को पीला कर दिया, रस अन्दर से पक गया, आम नम्र हो गया तो नम्रता तब आई जब रस पका जब तक कठोरता रही, न रस पका न नम्रता आई। जब हम रस को चूसते हैं तो रस मुख, ओष्ठों, डाढी तथा वस्त्रों पर टपकता है वह सारे शरीर को सिञ्चित कर देता है। जहाँ यह रस जायगा वहाँ वहाँ से सुगन्ध आयगी और जहाँ वस्त्र पर दाग लग जायगा वहाँ वह प्रकट करेगा कि आम का रस टपका है। ठीक इसी प्रकार भक्ति रस सारे शरीर को न केवल सिञ्चित कर देता है अपितु अपनी गन्ध से ससार को भक्ति और प्रेम का सन्देश दे रहा होता है। इस लिए ऋषि दयानन्द ने कहा —

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव॥ य० अ० ३० मं० ३

कि हे सवित देव ! मेरे समस्त दुर्गुण जो मुझे मनुष्य नहीं बनने देते और जो मुझ से पतित करते हैं उनको दूर करो और उनके स्थान पर जो अच्छे गुण कर्म स्वभाव हैं (यह आप ही जानते हैं मैं नहीं जानता) मुझे प्राप्त कराओ। उत्तम गुण कर्म स्वभाव कौनसे हैं कि जिनके धारण करने से मैं पापों से बच जाऊँ। इनके विस्तार की न करते हुवे ऋषि ने साधन बता दिया कि प्रत्येक शुभ कार्य के करते समय अपने आप को प्रभु के लिए समर्पण कर दो, उससे डरो, जितेन्द्रिय बलवान् वीर आदित्य ब्रह्मचारी होते हुवे कि जिसने शास्त्रार्थ मे अनेकों महारथियों को परास्त किया, प्रति क्षण उस महान् पिता से डरता रहा और वेदभाष्य करते समय अनन्य श्रद्धा का परिचय दिया कि प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में उस परम पिता की सहायता, मार्ग प्रदर्शन तथा आशीर्वाद का आश्रय 'विश्वानि देव सवितर्दुरितानि,— इस मन्त्र को लिख तथा सम्मुख रख कर चाहता रहा। ज्वाला प्रसाद, भीम सेन जी को वेद भाष्य लिखाते, कहीं अड़चन पड जाती तो रुकवा देते, उठकर प्रभु चरणों मे जा, समाधिस्थ हो मार्ग प्रदर्शन तथा आदेश चाहते। प्रकाश हो जाने पर अनेकों बार आकर पहिला लिखा कटवा देते और नवीन भाव तथा अर्थ लिखाते। इस लिए कि कहीं अभिमान न हो जाय, सदा उस प्रभु की चरण शरण में झुकते और उसी का

ही आश्रय लेते। कहा वह प्रभु वाणी से नहीं मिल जाता वह तो समर्पण करने से ही प्राप्त होगा। आगे चलकर कहा कि वह ही (हिरण्यगर्भ समवर्त्ताग्र भूतस्य जात पतिरेक आसीत्—) एक पति था दूसरा नहीं। हमें विश्वास धन पर है, जन पर है, बुद्धि पर है परमेश्वर पर नहीं। जब परमात्मा पर विश्वास न रहा, वह दूर चला गया तो सम्पत्ति आदि का भी स्थान न रहा जब वह पास है तो यह सब कुछ प्राप्त है। जब तक वालक माता का दूध पीता है, दांत नहीं है। तब तक उसे माता का ही दूध प्यारा है और उसे केवल माता का ही आश्रय है। जब दांत निकले तो माता के दूध पर सन्तोष न रहा, अन्य पदार्थों को खाना और उन पर आश्रित होना आरम्भ कर दिया। माता ने रस लगा कर दूध को बन्द कर दिया। ठीक इसी प्रकार जिस समय भगवान् का भक्त पूर्ण रूपेण उस प्रभु पर आश्रित है, तो परमात्मा ही उसके योग क्षेम के उत्तर दाता है, वह विषय वासनाओं से पृथक् रहता है परन्तु जब वह विषय वासनाओं मे लग जाता है तो भगवान् अपने रस दूध को बन्द कर देता है। जिस प्रभु ने इस सारे ब्रह्माण्ड को, पृथिवी तथा द्युलोक को बिना सहारे थामा हुआ है, उस पर विश्वास न करके उसे छोड देंगे तो आनन्द कहां से आएगा आनन्द तो तब आयगा जब हम "कस्मै देवाय हविषा विधेम" उस सुख स्वरूप परमात्मा, की सकल उत्तम सामग्री से भक्ति विशेष करेंगे, रस की प्राप्ति होगी, सुख मिलेगा। इस लिए आवश्यक है कि हम भगवान् को स्पर्श करे अथवा भगवान् हमे स्पर्श करे। भगवान् को हम योगाभ्यास द्वारा बुलाए। यजुर्वेद के अध्याय ११-१२ के भाष्य मे ऋषि ने लिखा कि "उस का साक्षात् तो नाड़ियों के द्वारा समाधिस्थ होने से हो सकता है, चक्षु आदि इन्द्रियों से नहीं क्योंकि इन्द्रियो के गोलक तो बाहर को खुलते हैं। कठोपनिषद् में लिखा।

पराञ्चि खानि व्यतृणत्स्वयम्भू ।

कि उस स्वयम्भू परमात्मा ने इन्द्रियों का संबन्ध बाहर के विषयो से रखा। अत आवश्यकता है भगवान् को छूने की, भगवान् छुयेगा तो तब नाड़ियों से मलदोष निकल जायगा इसलिए कहा कि अति प्रेम से भक्ति विशेष किया करे।

हवन कुण्ड सामने रखा है, उसमे अग्नि जल रही है मानो अग्नि लोहे को स्पर्श कर रही है, लोहा गर्म हो जायगा परन्तु वह अग्नि नहीं बनेगा। परन्तु जब लोहे को अग्नि के अन्दर डाल दिया तो जहां वह लोहा अग्नि समान लाल हो जायगा वहां वह प्रकाशमान भी हो जायगा। तो स्पर्श तब ही हो सकता है जब अपने आपको अग्नि रूप प्रभु के अर्पण कर देंगे। योग क्या है? अपने आपको प्रभु से जोड देना। योगाभ्यास से ही ज्ञान प्राप्त होगा परन्तु उसके अन्दर रस तब तक नहीं आयगा जब तक परमात्मा के अन्दर अपने आपको समर्पण न करें।

सारांश

ज्ञान पहचान के लिये है, भक्ति रस के लिये है और कर्म बढ़ने के लिये है। भगवान् करे कि हमारी समझ मे आये कि ऋषि दयानन्द ने क्या लिखा, कहा कि "यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्यु" परमात्मा के आश्रित होना अमृत सुख को प्राप्त करना है और उससे मुख मोडना मृत्यु का अवलम्बन करना है। इस लिये मनुष्य यदि आत्मिक शक्ति और सम्पत्ति को प्राप्त करना चाहता है तो उसे ज्ञान, भक्ति औरकर्म का आश्रय लेना चाहिये क्योंकि भक्ति के बिना कोई भी मनुष्य ज्ञान और कर्म का रस पान नहीं कर सकता और शक्ति को प्राप्त नहीं कर सकता, प्रभु की भक्ति ही आत्मा की शक्ति और सम्पत्ति है।

गृहस्थ जीवन को सुखी बनाने के सुनहरा नियम

[२]

[लेखक—श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक]

मनुष्य के भीतर के सर्वोत्तम तत्त्व को विकसित करने का अचूक उपाय यह है कि उसके अच्छे कार्यों का समुचित आदर और उसको अधिक से अधिक प्रोत्साहित किया जाय। स्त्रियों के साथ व्यवहार करने मे इस उपाय का उपयोगिता मे जरा भी सन्देह नहीं है।

प्रत्येक पुरुष मे यश और कीर्ति की स्वाभाविक इच्छा होती है। स्त्रिय मे तो यह इच्छा अत्यन्त प्रबल रूप मे होती है। इस इच्छा की पूर्ति न होने के कारण स्त्रियां पागल तक हो जाती हैं। अमेरिका के प्रसिद्ध डाक्टरों ने अपने प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर बतलाया है कि बहुत से व्यक्ति अपने सुख स्वप्नो की पूर्ति के लिए जो वास्तविकता से परिपूर्ण कठोर जगत् में पूरे नहीं हो पाते, पागल बन सकते हैं।

पागलो के चिकित्सालय के एक प्रसिद्ध डाक्टर एक देवी के उदाहरण से इस स्थापना की सम्पुष्टि करते हुए कहते है —

"मेरे यहा एक देवी की चिकित्सा हो रही है, जिसका विवाह दु खदायी सिद्ध हुआ। वह प्रेम की, भोग विलास का, बच्चो और सामाजिक गौरव की बड़ी भूखा थी। परन्तु जीवन ने उस की समस्त आशाओं पर पानी फेर दिया उसका पति उसे प्यार न करता था। उसके कोई बच्चा भी न था। समाज मे उसकी कोई स्थिति न थी फलत वह पागल हो गई। उसने अपने पागलपन के काल्पनिक जगत् मे अपने पति को तलाक दे डाला और वह अपने को कुमारी कहने लग गई। अब उसका विश्वास हो गया है कि उसका विवाह एक सम्भ्रान्त अंग्रेज परिवार मे हुआ है। बच्चों के सम्बन्ध मे उसकी कल्पना बड़ी विचित्र है। उसको ऐसा लगता है मानो वह प्रत्येक रात मे एक बच्चे को जन्म देती है। जब मैं प्रतिदिन उसको देखने जाता हूँ तो वह कहने लगती है 'डाक्टर पिछली रात को मेरे एक बच्चा हुआ है।"

पति पत्नी को अन्य व्यक्तियों द्वारा समादृत होने की चिन्ता किये बिना एक दूसरे का आदर और सम्मान अवश्य करना चाहिये। होली वुड (Holly wood) की एक प्रसिद्ध अभिनेत्री ने ब्राइसन नाम के एक सज्जन से विवाह किया। होली वुड और विवाह, इन दोनों का कोई संगति नहीं है इनमे इतना ही वैपरीत्य है जितना पूर्व और पश्चिम मे। इस क्षेत्र की देवी से विवाह करना बहुत बड़ा जोखिम मोल लेना होता है। यह अभिनेत्री होली वुड की शान समझी जाती थी जिसके अभिनयों की सर्वत्र चर्चा होती थी। विवाह कर लेने के पश्चात् उसने अपने त्याग को वैवाहिक सुख और शान्ति के मार्ग का रोड़ा न बनने दिया। उसका पति कहा करता था। यद्यपि मेरी पत्नी को अब रंगमंच की प्रशंसा प्राप्त नही है तथापि मेरा

आदर और मेरी प्रशंसा प्राप्त है।" यदि स्त्रियों को अपने वैवाहिक जीवन में सुख और प्रसन्नता प्राप्त करना अभीष्ट हो तो उनको अपने पति का आदर प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये। यदि इस आदर मे वास्तविकता होगी तो पति को भी सुख मिलेगा।

स्त्रियाँ सम्मान की पात्र और पूजा की अधिकारिणी होती हैं, ऐसी उक्तियाँ भारतीय नारी के प्रति व्यवहार की विशिष्ट मर्य्यादाएँ हमारे सामने उपस्थित करती हैं। परमात्मा को धन्यवाद है कि ये मर्य्यादाएँ समष्टि रूप से अभी तक अपनी विशिष्टता को अधिकांश मे स्थिर रखे हुये हैं।

सुग्रीव ने महारानी सीता की खोज करने का राम को वचन दिया हुआ था। बालिवध के बाद पत्नी प्राप्त कर लेने पर वह प्रमाद वश अपने वचन को भूल गया। उसको सचेत करने के लिये राम ने लक्ष्मण को उसके पास भेजा। सुग्रीव को अपने अपराध और लक्ष्मण के क्रोध का ज्ञान था अतः लक्ष्मण के सामने जाने की हिम्मत न हुई उससे क्षमा मागने के लिये अपनी पत्नी को भेजा। वह जानता था कि राम लक्ष्मण नारी-सत्कार की आर्य-मर्य्यादा का उल्लंघन न करेंगे। उसका उपाय काम कर गया। जब तारा (सुग्रीव की पत्नी) लक्ष्मण के सामने आई तो वे शान्त हो गए।

प्रायः स्त्रियों की प्रवृत्ति होती है कि दूसरों की दृष्टि में उनका खाना पीना, ओढ़ना-पहनना और रहन सहन अच्छा और ऊंचा जँचे। वे हाट बाजार में चलेंगी या अपनी सखी सहेलियों में बैठेंगी तो उनकी दृष्टि प्रायः अपने कपड़ों, आभूषण और बनाव शृङ्गार पर ही रहेगी। मनुष्यों को स्त्रियों के सुघड़ बनने के यत्नों की प्रशंसा करनी चाहिए। इस प्रशंसा का बड़ा व्यापक प्रभाव होता है। यदि कोई पुरुष स्त्री सड़क पर किसी दूसरे पुरुष और स्त्री से मिलते हैं तो स्त्री प्रायः दूसरे पुरुष की ओर नहीं देखती उसकी दृष्टि दूसरी स्त्री के कपड़ों पर केन्द्रित रहता है। पुरुष के लिए यह बतलाना कठिन हो सकता है कि ५, ६ वर्ष पूर्व उसने कौन २ कपड़े पहने थे परन्तु स्त्रियां अपने जीवन के ४०-५० वर्ष पूर्व के पहने हुए कपड़ों को सुगमता से बता सकती हैं। पुरुषों को नारी स्वभाव की इस विलक्षणता को अनुभव करना चाहिए। फ्रांस के उच्च वर्ग के लड़कों को देवियों के फ्राक तथा अन्य वस्त्रों की प्रतिदिन सायंकाल को कई कई बार प्रशंसा करने की शिक्षा दी जाती है। ऐसा अकारण ही नहीं होता।

स्त्रियों के वस्त्राभूषणों की सराहना करने के साथ २ उनकी पाक क्रिया और गृह-प्रबन्ध की भी यथोचित प्रशंसा होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में एक बड़ी मनोरञ्जक कहानी है। यह सच्ची नहीं है परन्तु इससे शिक्षा बड़ी उत्तम मिलती है। एक बार एक किसान की स्त्री ने दिन भर के कठोर परिश्रम के बाद लौटे हुए अपने परिवार के पुरुष वर्ग के सामने भोजन के स्थान में सूखी घास का ढेर लगा दिया। जब क्रोध से भरे हुए पुरुषों ने उससे कहा कि क्या तू पागल हो गई है तो उस देवी ने उत्तर दिया "मैं कैसे जानूं तुमने

[शेष पृष्ठ २५६ पर]

अध्यात्म सुधा

उद्बोधन

१ इधर उधर क्यों भटके रे नर !
गंगा अन्दर बहती है ।
प्रेममयी आनन्दमयी मा
तेरे भीतर रहती है ॥

२ रत्न तुझे अनमोल मिला है
क्या इसको यों खोएगा ?
बेच इसे कौडी के दामों
पीछे से तू रोएगा ।

३ जाग जाग ऐ प्रिय बतला दे
कब तक ऐसे सोएगा ?
अपनी सारी सुख सम्पति से
खो कर क्या कर धोएगा ?

४ कस्तूरी मृग ज्यों अज्ञानी
निशिदिन भागा जाता है ।
परिमल भीतर भरा हुआ है
इसका पता न पाता है ॥

५ इसी अज्ञता में वह अपने
कभी प्राण को देता है ।
ऐसी ही तेरी गति होगी
जो हरि नाम न लेता है ॥

६. लौकिक विषयों में फंस कर तू
क्या जाने क्या है आनन्द ?
क्षणिक सुखों में भूल गया है
निज स्वरूप को ऐ मतिमन्द ॥

७. अन्दर गोते लगा देख नर
फिर क्या क्या गुल खिलते हैं ।
कैसे अद्भुत हीरे अपने
अन्दर तुझ को मिलते हैं ॥

८. उनको पाकर फिर तू सचमुच
ही निहाल हो जाएगा ।
उनके बिन लखपति हो कर भी
भिखमंगा रह जाएगा ॥

९ खोल खोल अब अपनी आंखें
मुख से ओ३म् ओ३म् तू बोल ।
पी ले ओ म् अमृत का प्याला
इस में सन्मति रस को घोल ॥

१० सन्त जनों की संगति में आ
इस में नहिं कुछ लगता मोल ।
ज्ञान कुञ्जिका कर में लेकर
उससे सारे ताले खोल ॥

११ सफल बना मानव जीवन को
औरों का करके उपकार ।
शाश्वत सुख आनन्द शान्ति को
पाना अपना लक्ष्य विचार ॥

१२ छोड़ काम को क्रोध लोभ को
जो हैं तीन नरक के द्वार ।
शान्ति मूल का नित चिन्तन कर
शान्ति न दे अध्रुव संसार ॥

१३ पृथिवी जल के वायु अग्नि के
गुण तो तू ने जान लिये ।
इन से नानाविध सुखदायक
पैदा हैं सामान किये ॥

१४ पर नहिं अपने को पहचाना
तभी ठोकरें खाता है ।
व्याकुल तू दर दर फिरता है
नीचे गिरता जाता है ॥

१५. उठ जा अब आलस्य त्याग दे
प्यारे अपने को पहचान ।
आत्मा अजर अमर अविनाशी
अपने को निश्चय से जान ॥

१६. परमात्मा को अपनी माता
पिता मित्र तू रक्षक मान ।
उस को पूर्ण समर्पण करने
से नर होगा तब कल्याण ॥

धर्म देव विद्यावाचस्पति

मनुस्मृति और शूद्र

[श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली]

हम गत लेख मे बता चुके हैं कि शूद्र वे है जिन को अयोग्यता वश या तो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य बनने की प्रतिज्ञा का साहस नहीं हुआ या प्रयत्न करने पर भी आन्तरिक दुर्बलताओं के कारण वे बन नही सके। और शुभ उनका शूद्र ही रह जाना पड़ा। जो अनुत्तीर्ण हुये परीक्षार्थियों की दशा होती है वही उनकी हुई। इसलिए शूद्रों का वर्ण धर्म मे सब से निचला होना स्वाभाविक है। यह न्याय या अत्याचार नहीं है और न इनका दोष स्मृतिकार के माथे है।

परन्तु वर्तमान हिन्दू जाति इन नीचे लिखी बातो मे अवश्य दोषी है —

(१) वर्णों को जन्म के आधार पर मान कर वरण करने की स्वतन्त्रता नही दी गई। इस से जन्म पर आधारित सैकडो जातियां और उप जातिया भारतवर्ष मे उत्पन्न हो गई। इन के गुण कर्म वा स्वभाव कुछ भी हो इन को अपनी पुरानी जात के नाम से पुकारा गया।

(२) पहले वर्ण गुण कर्म और स्वभाव के अनुसार थे और व्यक्तियो का मान भी उन्ही के अनुकूल था। अब इन जातियों में नीच ऊच की कल्पित मर्य्यादा स्थापित हो गई और गुण-हीन व्यक्तियों की भी यदि वे उच्च जाति के हुये तो प्रतिष्ठा हुई और नीच जाति के गुणवान् व्यक्तियों को भी नीच समझा गया।

(३) पचासों व्यवसाय करने वाली वैश्यों जातियों को शूद्र समझ लिया गया।

(४) व्यवसाय जातिया से सदैव के लिए सम्बद्ध हो गये। व्यक्तियो को नये व्यवसाय करने या सीखने की स्वतन्त्रता न दी गई।

(५) ब्राह्मणों के अतिरिक्त सब को वेद पढने से रोका गया और शूद्रों को तो पढाया ही नहीं गया।

(६) शूद्रों में कुछ जातिया अस्पृश्य समझी जाने लगा। उन को नगर से बाहर घर दिये

[शेष पृष्ठ २५४ का]

आज इस बात को देखा है। मै २० वष से तुम्हारा खाना बना रही हूँ परन्तु तुमने आज तक यह कभी नहीं कहा कि हम घास नहीं खा रहे हैं।'

जारकालीन रूस मे नियम था कि मास्को और सेंटपीटर्स वर्ग के कुलीन लोग बढिया खाना खाने के बाद पाचक को बुलवाने के लिए आग्रह किया करते थे जिससे वे उसकी प्रशसा कर सके। घर के भीतर इस नियम का पालन क्यो न किया जाय? परन्तु आजकल होता क्या है! जरा जरा सी त्रुटि पर स्त्री की आलोचना प्रत्यालोचना होती है और उस के गुणों पर मौन धारण कर लिया जाता है। यह न भुला देना चाहिए कि स्त्री कितनी ही छोटी वा नगण्य क्यों न हो पुरुष के सुख के लिए उसका बहुत बडा महत्व होता है। गृहस्थ जीवन को सुखी बनाने का तीसरा नियम यह है कि सच्ची प्रशसा करने से मत चूको।

गए। कुओं और तालाबों पर पानी भरने और मन्दिरों आदि पवित्र स्थानों में जाने से रोका गया। उनको अच्छे उद्योग करने की भी आज्ञा न दी गई। यह यत्न किया गया कि उनकी सन्तान कभी भी उभरने न पावे। यह मनु का अभिप्राय कदापि न था। उन्होंने कहीं यह नहीं कहा कि जाति जन्म परक है। उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि।

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
(१०। ६५)

अथात् शूद्र ब्राह्मण हो सकता है और ब्राह्मण शूद्र। शूद्र ब्राह्मण तो तभी होगा जब उसे पढने पढ़ाने की आज्ञा होगी।

यह ठीक है कि शूद्र जब तक अपढ और अनाडी है उस का मान नहीं हो सकता। और न होना चाहिये। ससार भर के किसी देश या जाति में गुणहीनों के मान का प्रश्न नहीं उठता। परन्तु इसका यह अथ नहीं कि गुणहीनों को छुआ न जाय या उनके उन्नति के मार्ग अवरुद्ध कर दिये जायँ, वा उनके साधारण भोजन छादन का प्रबन्ध न हो।

यदि आज कल की बहुत सी जातियों को जो कृषि, पशुपालन आदि वैश्य कार्य करती हैं और जिनको शूद्र समझा जाता है शूद्रों की कोटि से निकाल दिया जाय और वैश्यों की कोटि में रख दिया जाय तो केवल वही शूद्र कहलाने के योग्य रह जायगे जो उन्नति शील नहीं हैं और जिनको आज कल की भाषा में कुली कहते हैं। यह कुली लोग क्या करके रोजी कमावें? क्योंकि समाज मुफ्त तो किसी को भी खिलाना नहीं चाहेगा। इन के लिये वही काम है जो मनु जी ने लिखा है अर्थात् —

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभु कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णाना शुश्रूषामनुसूयया॥
(I ६।६१)

विप्राणां वेदविदुषा गृहस्थानाम यशस्विनाम्।
शुश्रूषैव तु शूद्रस्य धर्मो नैश्रेयस पर॥
(६ २१६। ३३४)

अर्थात् उच्च वर्णो की सेवा करे। सेवा का अर्थ यह है कि व्यक्तियों को अपने जीवन के सधारण काम करने या उन वर्णो के विशेष काम करने में सहायता दी जाय। साधारण दैनिक काम ये हैं झाड़ू लगाना, पानी खींचना, लकड़ी चीरना, या इसी प्रकार के छोटे बडे काम करना। वर्ण सम्बन्धी विशेष काम हैं-ब्राह्मणों का पुस्तक आदि को संभाल कर रखना था उठाकर इधर उधर ले जाना, यज्ञ के पात्रों को शुद्धता पूर्वक माजना, पाठशालाओं में ब्रह्मचारियों की छोटे मोटे कार्यो में सहायता करना। क्षत्रियों के शस्त्र आदि उठाना, लेजाना या साफ करना। उनके घोडे आदि की रखवाली करना। वैश्यों के खेती बाड़ी व्यापार, कला कौशल आदि में वह काम करना जिस में विशेष बुद्धि की अपेक्षा नहीं है।

मनु इस विषय मे दो शब्द कहते हैं। प्रथम श्लोक में 'अनसूयया' शब्द पड़ा है अर्थात् डाह न करना चाहिये। जो भृत्य डाह करेगा वह न अपने लिये भला न स्वामी के लिए। कल्पना कीजिये कि आप रेल से उतरते हैं और अप बहुमूल्य वस्त्र कुली के सिर पर रख देते हैं।

यदि कुली भला है तो उसे आपके बहुमूल्य वस्त्रों से क्या काम ? वह तो मजदूरी लेगा और बस। परन्तु यदि वह डाह करता है तो जी में कहेगा, इस के पास ऐसे उत्तम कपडे और मेरे पास एक कुरता भी नहीं", इसी प्रकार यदि वह पाचक है तो स्वामी को खिलाते समय जी में कुढ़ता जायगा कि स्वामी ऐसे माल खाता है और मेरे नसीब मे नहीं। कुढ़ते कुढ़ते यदि जा मे चोरी या छल कपट आ गया तो फिर तो नीचता का ठिकाना ही नही। जिन देशों मे छूत छात या शूद्र आदि जातियो की प्रथा नहीं है वहा भी कुली तो हैं ही। वह भी तो 'असूया' बुरी समझी जायगा।

दूसरे श्लोक मे मनु ने उन शूद्रों के लिए उपदेश दिया है जिन मे उन्नति करने की लालसा बनी हुई है। यह लालसा उनकी तभी पूरी हो सकती है जब उच्च कोटि के ब्राह्मणों और यशस्वी गृहस्थियों के सम्पर्क मे आवे इससे उनकी शूद्रता में कमी होगी और शनै २ वे अपनी नीच गति से छुटकारा पाकर ऊंचा उठ सकेंगे।

भृत्यों के पालन पोषण के विषय मे मनु का नीचे का "श्लोक विचारणीय है

देवतातिथिभृत्यानां पितृणामात्मनश्च य ।
न निर्वपति पञ्चानामुच्छ्वसन्न स जीवति ॥
(३।५३।७२)

अर्थात् भृत्यों का पालन पोषण उतना ही आवश्यक है जैसा अतिथि या माता पिता का। भृत्यो को माता पिता की कोटि मे लाकर मनु ने गृहस्थों के भृत्यों के प्रति कर्त्तव्यों का गौरव बताया है।

यह ठीक है कि आजकल जो मनुस्मृति पाई जाती है उस मे शूद्रों को सदा नीच रखने, उन से बचने, उनको कठोर दण्ड देने विषयक कई श्लोक है। जैसे —

३।१४-१७, ४।६१, ४।२२३, ५।८६२, ८।११३-११४ ८।२७०,७१,७२, ८।२७६-८५, ८।३७४, ८।४१३-४१४, ६।१५७, १०।५१-५२, १०।६४, १०।१२६,

परन्तु थोडा सा भी प्रसङ्ग, शब्द विन्यास, परापर सम्बन्ध, विषय आदि पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि मनु महाराज के अभिप्राय के विरुद्ध इन को किसी समय मिला दिया गया है। उदाहरण के लिए अध्याय ३ के श्लोक १६ में शौनक और भृगु की सम्मति देकर अपने कथन की पुष्टि की गई है। शौनक कौन थे और भृगु कौन और क्या वह मनु से पहिले हुये यह सब बातें मीमांसनीय हैं। क्योंकि मनु स्मृति ही भृगु संहिता कहलाती है क्योंकि मनु के शिष्य भृगु ने इस को श्लोकबद्ध किया है। फिर भृगु लिखित श्लोकों में भृगु की साक्षी का कोई अर्थ नहीं है। प्रतीत होता है कि शूद्रों की नीचता सिद्ध करने के लिए शौनक और भृगु के नाम की दुहाई देने के लिये किसी ने ये श्लोक मिला दिये।

४थ अध्याय का ६१वां श्लोक इतना बुरा नहीं है। यह नहीं कह सकते कि यह क्षेपक है या नहीं इस मे शूद्र राजा के राज्य में बसने का निषेध है। यदि यहाँ शूद्र का अर्थ जन्म परक शूद्र है तो अवश्य क्षेपक होगा

क्योंकि यह सिद्धान्त मनु को अभिमत नहीं है। परन्तु यदि इस का अर्थ अज्ञानी मूर्ख राजा है तो उचित ही है। क्योंकि कभी २ अर्थ मर्यादा के शिथिल हो जाने पर क्षत्रिय राजा का शूद्रत्व को प्राप्त हुआ पुत्र भी राजा बना दिया जाता है और उसके राज्य काल में अन्याय और अत्याचार की सम्भावना अधिक होती है।

१० वे अध्याय का ६५ वां श्लोक तो यों कहना चाहिये कि धींगाधींगी से मिलाया गया है। और पाठकों की आंखों में धूल डाली गई और इसका मुख्य प्रयोजन अगले श्लोक के प्रभाव को नष्ट करना मात्र है।

परन्तु मनु के इन प्रक्षिप्त श्लोकों को देखने और उनकी पिछली अन्य स्मृतियों से तुलना करने से यह विदित होता है कि आगे चलकर शूद्रों पर भयानक बाधायें लगाई गई हैं शूद्रों की वर्तमान दशा के लिये यही स्मृतियां उत्तर दात्री हैं। और मनुस्मृति में क्षेपकों की भरमार भी इनही स्मृतिकारों या उन्हीं के सदृश विचार रखने वालों ने की है।

मनु के अनुसार शूद्र नीच अवश्य है। परन्तु जन्म के कारण नहीं अपितु अपने अज्ञान के कारण। अज्ञान और अज्ञानी को उच्च या ज्ञानी तथा ज्ञानियों के समकक्ष बताना किस के हाथ में है? जिसको मानवी प्रकृति नीच कहे वह तो नीच है ही। परन्तु मनु की उनके साथ सहानुभूति है। वह यह तो चाहते हैं कि ज्ञानी अज्ञानियों के सम्पर्क में आकर स्वयं न बिगड़ जाएं जैसा बहुधा हुआ करता है। और इसी लिये उन्हों ने शूद्रों को द्विजों से अलग रखने के लिए कुछ मर्यादायें बांध दी हैं। परन्तु वे मर्यादायें भयानक नहीं हैं और न उस प्रकार की हैं जैसी पंचम आदि जातियों के लिये आज कल के हिन्दू समाज में पाई जाती हैं। मनु को शूद्र के शूद्र होने पर शोक अवश्य है परन्तु यह शोक समवेदना का पर्याय हो गया है। वह शूद्र को अध्ययन और शुभकर्म आदि के सभी अवसर देने को तय्यार हैं जिनके द्वारा शूद्र ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सके। देखो श्लोक १०। ६५। यदि शूद्र को द्विजों के अधिकार नहीं दिये गये तो इसलिए कि वे अनधिकार चेष्टा करके समाज को कहीं बिगाड़ न डालें। क्या किसी देश या जाति की कोई व्यवस्था भी ऐसी हो सकती है जिस में अकुशल को कुशल पद पर बिठाल कर काम को दुर्व्यवस्थित कर दिया जाय। जो लोग मनु पर इस प्रकार का पक्षपात का दोष लगाते हैं वे शूद्र का वर्तमान जन्मपरक अर्थ ही ले बैठते हैं। और यह उनके मन में ब्राह्मणों और धर्म शास्त्रों के प्रति किसी न किसी कारण घृणा बिठाल दी गई है अतः वे अच्छी से अच्छी बात के भी बुरे अर्थ ले लेते हैं। यदि किसी अशिक्षित पुरुष से कहा जाय कि तुम विद्वानों की सेवा किया करो उन के सम्पर्क में रहने से तुमको उसी प्रकार फल मिलेगा जैसे एक मिट्टी के ढेले को गुलाब के पास रहने से उस में गुलाब की सुगन्ध बस जाती है तो इस में न तो विद्वानों के लिए पक्षपात है और न गुलाब के लिये। इस में तो अशिक्षित तथा मिट्टी के ढेले का ही

मद्र अभिप्रेत है। इसी प्रकार नीचे के श्लोक भी मनु ने शूद्रों के हित के लिए ही लिखे हैं—

शूद्रस्तु वृत्तिमाकांक्षन् क्षत्रमाराधयेद्यदि ।
धनिनं वाप्युपाराध्य वैश्य शूद्रो जिजीविषेत् ॥
(१०।४५।१२१)

अर्थात् शूद्र आदि धन चाहे तो किसी क्षत्रिय या वैश्य की सेवा करे। इस में तो कोई आपत्ति जनक बात है नहीं, यह तो धन प्राप्ति का साधन बताया गया।

परन्तु

स्वर्गार्थमुभयार्थं वा विप्रानाराधयेत्तु स'।
जातं* ब्राह्मणशब्दस्य सा ह्यस्य कृतकृत्यता।

जिस शूद्र को लोक परलोक दोनों सुधारने की इच्छा हो वह ब्राह्मणों की सेवा करे। ब्राह्मण का सेवक कहलाना ही उनकी सफलता की कुंजी है।

जिनकी आँखों पर वर्तमान समाज के अत्याचारों की ऐनक लगी हुई है वे इसको भी ब्राह्मणों का पक्षपात कहेंगे। परन्तु बात तो यह ठीक ही है। ब्राह्मणों के सेवकों को पुस्तक चर्चा विद्या चर्चा, धर्म चर्चा, से ही काम पड़ता है। एक याज्ञिक ब्राह्मण के घर मे यज्ञ पात्र धोने वाला चाकर अच्छे २ पढे लिखों से अधिक यज्ञ के विषय में जान जाता है। ब्राह्मण की पोथिया ढोने वाला शूद्र पोथियों को अधिक पहचानता है। ब्राह्मण के घर में जो धम चर्चा होती रहती है उस का बहुत सा अंश उस भृत्य के मस्तिष्क मे भी बैठ जाता है। परन्तु हो वह मनु का अभिप्रत गुण कर्म स्वभावनुसार ब्राह्मण, न कि आजकल स्टेशन पर पानी पिलाने वाला पीरबवर्ची भिश्ती खर"।

फिर कहा है—

विप्रसेवैव शूद्रस्य विशिष्ट कर्म कीर्त्यते।
यदतोऽन्यद्धि कुरुते तद्भवत्यस्य निष्फलम् ॥
(१०।४७।१२३)

शूद्र का विशेष कर्म विप्र सेवा है यदि इससे अन्य कोई काम करना है तो निष्फलता प्राप्त होती है।

इस का सीधा अर्थ यह है कि रोटी तो शूद्र को अन्य काम करने से भी मिल जायगी परन्तु स्वर्गार्थ अर्थात् आत्मिक विकास के काम भ तो इस का कोई उपयोग न होगा।

परन्तु यदि कोई शूद्र द्विजों की सेवा करता है तो द्विजों का भी उसके प्रति एक महान् कर्त्तव्य है जो अगले श्लोक मे दिया हुआ है—

प्रकल्प्या तस्य तद्वृत्ति स्वकुटुम्बाद् यथार्हत।
शक्तिं चावेक्ष्य दाक्ष्यं च भृत्याना च परिग्रहम् ॥
(१०-४८-१२४)

उस शूद्र की जीविका का प्रबन्ध उन द्विजों को कर देना चाहिये। अपने परिवार की हैसियत के अनुसार शक्ति को देखकर नौकर की याग्यता और उसके घर के खर्चे को देखकर।

इस का तात्पर्य यह है कि उत्तरदायित्व केवल शूद्र पर ही नहीं है अपितु द्विजों पर भी है। शूद्र उसी समय द्विजों की सेवा कर सकेगा जब द्विज उसके पालन पोषण का भार अपने ऊपर लेवें। इक तरफा डिग्री नहीं है। मनु के देखने से एक और बात स्पष्ट हो जाती

---

* तस्माज् जातो ब्राह्मणाश्रितोऽयमिति शब्दो यस्य। शाकपार्थिवादित्वात् समासः—इति कुल्लूक ॥

है बहुत से अपराधों का दण्ड शूद्रों के लिये इतना नहीं है जितना द्विजों के लिये। क्योंकि दण्ड तो अपराधी के ज्ञान के अनुसार ही होना चाहिये। छ मास का बच्चा यदि किसी की दाढ़ी पकड़ कर खींच ले तो उसको अशिष्टता का दण्ड नहीं मिलता क्योंकि बच्चे को ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार धर्म और कर्त्तव्यों की सूक्ष्म प्रकृतियों को प्राय शूद्र नहीं समझ सकते अत उनका उत्तर—दायित्व भी कम रक्खा गया है जैसे —

न शूद्रे पातक किंचिन्न च सस्कारमर्हति।
नास्याधिकारो धर्मेऽस्ति न धर्मात् प्रतिषेधनम्॥
(१० ५०-११२)

जिन पातकों का द्विजों के लिगे उल्लेख है और जिसके लिये बड़े कठोर प्रायश्चित्त रूपी संस्कारों का प्रस्ताव किया गया है वह शूद्रों के लिये नहीं है उनको न धर्म का अधिकार है न धर्म से प्रतिषेध है।

इस का तात्पर्य यह है कि शूद्र को ज्ञानाभाव के कारण बहुत सी बातों का उत्तरदाता नहीं ठहराया गया और इसलिये उस के लिये कड़े प्रायश्चित का भी विधान नहीं। उदाहरण के लिए यदि कोई ब्राह्मण सुरापान करे तो घोर पाप है और उसका प्रायश्चित करना चाहिये। परन्तु यदि उसका नौकर भी अपने मालिक की देखा देखी सुरा चख ले तो उसको क्षमा करना चाहिये क्योंकि उसकी समझ में आचार शास्त्र की बारीकियां नहीं आतीं। पैर में कंकड़ चुभ जाने से उतनी हानि नहीं होती जितनी आँख में चुभ जाने से होती है अत आँख को पैर की अपेक्षा कंकड़ से बचने की अधिक आवश्यकता है। ब्राह्मण तो समाज की आंख है। औ शूद्रों के सुरापान से समाज को वह हानि नहा जो एक ब्राह्मण के सुरापान से है।

अब यहाँ एक बात का विचार और करना है। इस युग में जिसको हम आज कल की भाषा मे कलियुग कह सकते हैं और जिस का विस्तार आज से लौट कर कई सहस्र वर्ष तक जाता है हिन्दू समाज में शूद्रों की एक निचली कोटि बन गई और बड़ी जात वालों की ऊंचा। इन को सीम यें जन्म के आधार पर निश्चित और पक्की हा गई ऊंची जात वा ों ने नाचा जात वा ों को उभरने का अवसर नहीं दिया आर उन पर अत्याचार भी किये गये। उन अत्याचारों को शास्त्र सम्मत बताने के लिये शास्त्रों और इतिहासों मे मिलावट भी बहुत की गई। ैसे रामायण मे लिखा गया कि रामचन्द्र ने शूद्रक नामक तपस्वी को केवल इस लिये प्राण दण्ड दिया कि वह शूद्र था और तपस्या करता था क्योंि शूद्र क लिय तपस्या करना पाप है। इसा प्रकार वृद्ध गौतम स्मृति मे लिखा गया कि जो शूद्र वेद वाणी को र्न ले उसके कान में सीसा गम करके डाल दिय जाय। इसी प्रकार दक्षिण में शूद्रों को उन मार्गों पर चलने का भी अधिकार न दिया जिस पर ब्राह्मण आदि चल सकते हैं

इन अत्याचारों को शूद्र लोग उस समय तक सहते रहे जब तक उन के जी में यह बात जमी रही कि परमात्मा ने हमारे पिछले जन्म के कुकर्मों के बदले शूद्र की योनि दी है और इस ज म में इस का कोई उपाय नहीं है। परन्तु यह भावना

बनावटी होने से अधिक नहीं चल सकती थी। परिणाम यह हुआ कि प्रथम तो महात्मा बुद्ध ने वैदिक शास्त्रो को एक ओर रखकर ऊंच नीच हटाने का प्रचार किया। परन्तु कई कारणों से जब बौद्ध मत का ह्रास हुआ तो शूद्रो की पुरानी दुरवस्थिति फिर ज्यों की त्यो कायम रही। इस शताब्दी मे सब से पहले ऋषि दयानन्द थे जिन्होने वैदिक साहित्य की इस लिए छान बीन की कि यह तो पता चल जाय कि हमारी वर्तमान कुरीतियो के लिए कितने जिम्मेवर हैं हमारे शास्त्र और कितनी हमारी अपनी मूर्खता। इस प्रकार का विचार स्वामी दयानन्द से पहिले किसी को नहीं सूझा था। यह तो बहुत से सुधारक स्वीकार करते थे कि कुरीतियो को दूर करना चाहिये परन्तु उनकी समझ मे यह बात नहीं आती थी कि शास्त्रो को मानते हुए कुरीतिया कैसे दूर हो सकती है। यह कहने का साहस किसी को भी नहीं हुआ कि हमारे धर्म ग्रन्थो म भी मिलावट है और इसे दूर करना चाहिये। अत स्वामी दयानन्द ने यह प्रस्ताव किया कि मौलिक वैदिक वर्ण व्यवस्था की स्थापना की जाय जिसमे सब को उन्नति करने का समान अधिकार है।

इस काम को आर्य समाज ने उठाया। परन्तु समय की परिस्थिति को देख कर धीरे से। आर्य समाज के गुरुकुल आदि मे शूद्र बच्चो को प्रविष्ट किया गया। अन्य स्थानो पर खुल्लम खुल्ला शूद्रो को वेद पढने यज्ञ करने आदि की आज्ञा दी गई और जो ब्राह्मणेतर उन्नति कर गये उनको ब्राह्मणोचित उपाधि भी दी गई। परन्तु यह काम चला धीरे धीरे। क्योकि इसके चलाने वाले थोडे से आर्य समाज के सदस्य ही थे।

इसी बीच मे कुछ ईसाइयों अथवा पाश्चात्य राजनीतिज्ञो की कूटनीति ने इस आन्दोलन का दूसरा रूप धारण किया। पहिले दक्षिण मे और फिर उत्तरी भारत मे भी दलित जातियों ने एक राजनैतिक मण्डल बनाकर अपने अधिकारो की माग की। उनको यह सुझाया गया (जो सरासर गलत था) कि आर्य लोग बाहर से आये और उन्होने प्राचीन आदिम निवासियो को पराजित करके गुलाम बना लिया। इस आन्दोलन को राजनीतिज्ञ मुसलमानो, अंगरेजों, ईसाइयों सब का आशीर्वाद प्राप्त हो गया। क्योकि इससे हिन्दुओ मे विभाजन होकर उनकी निर्बलता सदा के लिए स्थिर हो सकती थी। दूसरी चाल यह थी कि यदि यह दलित जातियां हिन्दू शास्त्रो से मुह मोड ले तो उनके अपने धर्मशास्त्रो के अभाव मे उनका ईसाई या मुसलमान होना सुगम था। इस तूफान से बचने के लिए आर्य समाज ने अपनी शक्ति के अनुसार बहुत हाथ पैर मारे और किसी हद तक अश तक सफल भी हुये। परन्तु इनका सब से अच्छा और तीव्र गति वाला उपाय महात्मा गांधी ने सोच निकाला। उन्होने सब दलितों को 'हरिजन' शब्द से सबोधित किया और अस्पृश्यता के विरुद्ध आन्दोलन किया। दलितो मे भंगी सब से नीच समझे जाते थे। अत महात्मा गाधी ने दिल्ली मे एक भंगी कालोनी बसाई और स्वय उनके बीच मे जाकर रहे। इस से उच्च जातियो के दृष्टि-कोण मे बड़ा परिवर्तन हुआ और दलित जातियों को भी उभरने का साहस हुआ।

अब प्रश्न यह है कि इस आन्दोलन को देखे मनुस्मृति के मौलिक उपदेशो तथा वर्ण व्यवस्था का क्या मूल्य है।

यह ठीक है कि इस युग मे दलित वर्ग के उठाने के लिए जितने प्रयास हुए हैं उनमे महात्मा गाँधी का प्रयास सब से अधिक सफल हुआ है। महात्मा गाधी स्वय विद्युत्पुज थे और उनके सम्पर्क मे आते ही लोगों मे विद्युद् धारा बहने लगती थी। परन्तु इस आन्दोलन को अभी तीन दशक भी नहीं हुय। यह देखना है कि इस का समाज पर स्थायी प्रभाव क्या पडेगा।

यह व्यवस्था अत्यन्त चमकोली होने पर भी इस मे एक त्रुटि है जो मानव धर्म शास्त्र प्रत पादित वर्णव्यवस्था क द्वा। हा दूर हों स ती है। शनै शनै हरिजन शब्द उसी प्रकार जन्म परक होता जा रहा है जो गुण कर्म और स्वभाव के आधार पर नहीं अपितु जन्म के आधार पर अपने नैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक अधिकारों की माँग करता है। इस का परिणाम आगे चल कर यह होगा कि हिन्दू जाति जात पॉत के चक्कर से बच नहीं सकेगी। यह दूसरी बात है कि आज की निम्न जातियाँ उच्च हो जाय और उच्च जातियाँ निम्न। प्रश्न तो व्यक्तियों के वैयक्तिक स्वातत्र्य का है। वह समस्या इसी प्रकार रहेगी।

इस का एक मात्र उपाय यह है कि मनुस्मृति के प्रक्षिप्त स्थलों‡ को सदा के लिये निकाल देना चाहिये और समाज की व्यवस्था ऐसी करनी चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्रता पूर्वक अपने लिये अपना वर्ण वरण करसके और उसकी योग्यता प्राप्त करके उस पर चल सके।

(गंगाप्रसाद उपाध्याय)

‡ मैने दस बारह वर्ष हुय एक मनुस्मृति छापी थी जिस मे से समस्त प्रक्षिप्त स्थल निकाल दिये गय हैं वह कला प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई है।

आप समझे नहीं

कलकत्ता सम्मेलन के प्रस्ताव और सार्वदेशिक सभा की स्वीकृति के अनुसार मैं ने दयानन्द पुरस्कार निधि के लिये सार्वदेशिक पत्र में एक लाख रुपये के लिये एक अपील निकाली थी और सभा के प्रधान जी ने भी इस अपील पर बल दिया था। परन्तु जनता ने उस ओर ध्यान नहीं दिया। जो धन एक मास में आ जाना चाहिये था वह कई मास में भी न आया। अब तक २०२५) वसूल हुये है अर्थात् ६७६ ७५) शेष रहे। यदि यहीं गति रही तो १६ वर्ष चाहिये अर्थात् मेरे दूसरे जन्म में। यह भी कठिन ही है क्योंकि मन्दगति को लोग भूल भी जाते हैं। नये नये फण्ड प्रतिदिन उठते है और अधूरे रह जाते है। मुझे प्रतीत होता है कि आप इस योजना को समझे नहीं। सार्वदेशिक पत्र के एक सहस्र से अधिक ग्राहक हैं और लगभग पाच सहस्र तो पढ़ने वाले होंगे। यदि यही पांच पाच रुपये भी भेजते तो २५ सहस्र हो जाते परन्तु जब तक महत्त्व समझ में न आवे कोई धन नहीं दे सकता। साहित्य एक सूक्ष्म वस्तु है। वह कितनी ही आवश्यक क्यों न हो उसमें अन्य अपीलो के समान चमक दमक नहीं। बच्चे को पैसे दो तो वह खिलोना खरीदता है पुस्तक नही क्योंकि पुस्तक उस के लिये खिलौने स आवश्यक नहीं। संसार में आधिपत्य है सूक्ष्म विचारों का। वही सब से बलवान है। विचारों का साधन हैं साहित्य परन्तु सूक्ष्म विचारों को बहुत कम लोग समझते हैं। जो सोसायटी साहित्य की महिमा को नहीं समझती वह अधिक दिन तक जीवित नहीं रह सकती। आर्य समाज ने सब कुछ किया परन्तु साहित्य नही बढ़ाया। अत समाज पीछे पड़ गया। पढे लिखे लोग विदेशो में तो क्या इस देश मे भी स्वामी दयानन्द या आर्य समाज को नहीं जानते। आज लाखों की सम्पत्ति हम से छिन गई। वह थी ईटों के रूप में। यदि लाखों का साहित्य होता और वह छिन भी जाता तो हम लाभ में होते। आज हमारे नेताओं और जन साधारण दोनों का ध्यान चमक दमक की ओर है। साहित्य को तो अनावश्यक समझते हैं। यही कारण है कि दयानन्द पुरस्कार निधि का भविष्य साहस नहीं बढा रहा और मैं सोच रहा हूँ कि आर्य समाज का क्या बनेगा। हमारी सैंकड़ों संस्थायें हैं जिनका भार हम उठाते हैं परन्तु हमारे छात्र बाहर का साहित्य पढ़ते हैं। हमने उच्च कोटि का साहित्य नहीं बनाया। हम विदेशों में उपदेशक भेजना चाहते हैं। बिना साहित्य के उनका काम स्थायी कैसे होगा यह प्रश्न कोई सोचता ही नहीं।

कुछ लोग शायद पूछे कि दयानन्द पुरस्कार निधि से साहित्य की वृद्धि कैसे होगी। इससे तो केवल पुरस्कार दिया जायगा। यदि ऐसी शका किसी ओर से उठती है तो मैं कहूँगा कि समाज मे सूक्ष्म विचारों को समझने की बहुत कमी है। हम दो हजार रुपये वार्षिक का एक पुरस्कार देकर बीसियों लेखकों और प्रकाशकों को प्रोत्साहित करेंगे और दस पन्द्रह वर्ष में पचासों उच्चकोटि की पुस्तकें बाजार में मिलने लगेंगी। यह है इस योजना का महत्व। समाज की ओर से सैकड़ों छोटी बड़ी प्रगतियां चल रही हैं जिन मे लाखों का व्यय होता है। मै तो ऐसा अनुभव कर रहा हूँ कि सब से अधिक महत्व रखने वाली योजना है 'दयानन्द पुरस्कारनिधि' सब आवश्यक कामों को छोड़ कर पहले इसे पूरा करना चाहिये। देखू इस लेख का क्या असर होता है। कोई इस को पढ़ता भी है या नहीं।

गंगाप्रसाद उपाध्याय

वैदिक साहित्य और अन्य मतावलम्बी

[ले०—श्री डा० सूर्यदेवजी शर्मा सिद्धान्त शास्त्री साहित्यालङ्कार, एम ए (त्रय) एम एल डी लिट् अजमेर]

वैदिक साहित्य का भडार प्राय अनन्त और अमूल्य है। मानव सृष्टि के आरभ से ले कर अब तक आर्य और अनार्य जिन विद्वानों ने भी उस साहित्य सिंधु मे अवगाहन किया वे उस पर मुग्ध हुए बिना नही रहे। अरब देश के इतिहास प्रसिद्ध यात्री अलबरूनी ने जब भारत मे आकर सस्कृत साहित्य का अध्ययन किया तो वह वैदिक साहित्य और गीता की प्रशसा किये बिना न रह सका। प्रसिद्ध मुगल सम्राट अकबर के मत्री सूफी विद्वान् अबुल फैजी ने सामनाथ और काशी म सस्कृत का अध्ययन कर कई वैदिक ग्रन्थो का फारसी मे अनुवाद किया और फिर सम्राट् शाहजहा का ज्येष्ठ पुत्र दारा शिकोह तो उपनिषदों की कीर्ति सुनकर उनके अध्यात्म ज्ञान से इतना प्रभावित हुआ कि उसने कई उपनिषदों का अनुवाद फारसी भाषा मे स्वय किया और कराया। उसी फारसी अनुवाद का फ्रासीसी भाषा में अनुवाद किया गया जिसकी एक प्रति जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० शोपन हावर को देखने को मिली जिसने उसे अध्ययन करके उपनिषदों के विषय में अपनी सम्मति इस प्रकार प्रकट की—

"In the whole world there is no study so elevating as that of the Upanishads It has been the solace of my life, and it will be the solace after my death'

अर्थात् समस्त विश्व मे जीवन को ऊँचा उठाने वाला उपनिषदों के अध्ययन के समान कोई दूसरा अध्ययन नहीं। उनसे मेरे जीवन को शान्ति मिली है और उन्हीं से मुझे मृत्यु में भी शान्ति मिलेगी।' आगे चलकर शोपनहावर फिर लिखता है कि "उपनिषदो मे जो सिद्धान्त और विचार हैं वे अपौरुषेय ही हैं। वे जिस मस्तिष्क की उपज है उसे निरा मनुष्य कहना कठिन है"

(Almost superhuman conceptions whose Originators can hardly be said to be mere men)

एक और जर्मन विद्वान् प्रो० मैक्समूलर ने तो अपने जीवन के ४७ वर्ष वैदिक साहित्य के अध्ययन मे ही लगाये और वेदो और दर्शनों पर नए ग्रथ लिखे। वह जर्मनी मे उत्पन्न हुआ और ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सर्विस मे इगलैंड मे वैदिक साहित्य का अध्ययन करता रहा। अपने अध्ययन के फलस्वरूप उसने लिखा था—

The Rig Veda is the oldest book in the library of the world"

अर्थात् ससार के पुस्तकालय मे ऋग्वेद सब से प्राचीन ग्रथ है। ऋग्वेद के सपादन की भूमिका में उसने अपना परिचय देते लिखा था—

शार्मण्यदेश जातेन श्रीगोतीर्थनिवासिना।

मोक्षमूलरभट्टेन ग्रन्थोऽयं सम्पादित ॥

अर्थात् शार्मण्य देश (जर्मनी) मे उत्पन्न हुए गोतीर्थ (Oxford) में निवास करने वाले पं० मोक्षमूलर के द्वारा इस ग्रंथ का संपादन किया गया है। वेद, उपनिषद्, दर्शन, आर्य सस्कृति, भारत देश के सम्बन्ध में मोक्षमूलर के उदात्त उद्गार उसकी अन्तिम पुस्तक India . What Can it Teach us ? (भारत हमें क्या सिखा सकता है ?) मे हमें स्थान २ पर मिल सकते हैं।

जर्मनी के एक और विद्वान् डयूसेन साहब जो अपने को देवसेन शर्मा कहा करते थे, ने वैदिक साहित्य का मूल संस्कृत मे अध्ययन किया और फिर एक पुस्तक लिखी जिसका नाम है Expositions of the Upnishads and Vedas" उसमें उन्होंने लिखा है "Vedic philosophical conceptions are unequalled in India and perhaps they are so in the whole world" अर्थात् "वैदिक साहित्य में जो दार्शनिक विचार हैं वे भारत में तो अद्वितीय हैं ही, सम्भवत समस्त विश्व में भी अतुलनीय हैं।"

इसी प्रकार एक और प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् फ्रैडरिक श्लेगल ने लिखा है " Even the loftiest philosophy of the Europeans appears in comparison with the abundant light of spritual idealism like a feeble Promethean spark in the full flood of the heavenly glory of the noon day sun-faltering and feeble and ever ready to be extinguished "अर्थात् पूर्वीय आदर्शवाद के प्रचुर प्रकाश पुंज की तुलना में यूरोप वासियों का उच्चतम तत्व ज्ञान ऐसा प्रतीत होता है जैसे मध्याह्न सूर्य के व्योम व्यापी प्रताप की पूर्ण प्रखरता में टिमटिमाती हुई अनिल शिखा की कोई आदिम किरण जिसकी अस्थिर और निस्तेज ज्योति शीघ्र बुझने के निकट हो।

इसी प्रकार Path of Peace ग्रथ के लेखक आयरिश विद्वान् डा० जेम्स कजिन्स तथा अनेक फ्रांसीसी और अंग्रेज विद्वानों ने वैदिक साहित्य की प्रशंसा के गीत गाये हैं और तत्व ज्ञान और आध्यात्मिक विवेचन की प्रशसा की है किन्तु यह सब कुछ प्रशंसा करते हुए भी ये पाश्चात्य विद्वान् कुछ बातों मे अपने भिन्न मत रखते हैं जो आर्य समाज के सिद्धान्त से मेल नही खाते। वह मत वैषम्य मुख्यत तीन बातों मे है —

१—वेदों की अपौरुषेयता

२—वेद, उपनिषद्, दर्शन आदि का रचना काल

३—वेदों में इतिहास

उपर्युक्त सिद्धान्तों मे से दूसरे और तीसरे पर जो हमारा और पाश्चात्य विद्वानों का मतभेद है उसका आधार पाश्चात्यों द्वारा प्रथम सिद्धान्त की अमान्यता है। यदि वे हमारी तरह वेदों को अपौरुषेय मान लें तो दूसरे और तीसरे सिद्धान्तों में भी मतभेद क्या रह सकता है? यदि वेद ईश्वरीय ज्ञान के रूप मे अपौरुषेय हैं तो ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के आदि मे प्रकट होना ही चाहिए अत वेद की रचना काल का फिर कोई प्रश्न ही नहीं उठ सकता अभी तो किसी पाश्चात्य विद्वान् ने वेदों का रचना काल ईसा से १५०० वर्ष पूर्व

माना है। किसी ने २००० वर्ष पूर्व और किसी ने २५०० वर्ष पूर्व।

इसी प्रकार वेदों मे मानवीय इतिहास का प्रश्न भी नहीं उठ सकता यदि हम वेदों को सृष्टि के आदि मे उत्पन्न हुआ माने क्योंकि सृष्टि रचना के बाद मानव समाज और राष्ट्र बनता है तब उसका इतिहास लिखा जाता है। जब सृष्टि के आदि में ही वेद उत्पत्ति हो तो उसमे बाद को होने वाले मनुष्यों का इतिहास कैसे आ सकता है।

किन्तु इन सब भ्रान्त धारणाओं का निराकरण करने का उत्तरदायित्व यदि किसी पर है तो वह वेद को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक और उसके अध्ययन को अपना परम धर्म मानने वाले आर्य विद्वानो पर है। विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों मे "चक्षु सम्पन्न पुरुष देखेंगे कि भारत का ब्रह्म ज्ञान समस्त पृथ्वी का धर्म बनने लगा है "तथा शोपनहावर के शब्दों मे "It is destined sooner or later to become the faith of the world" अर्थात् "वैदिक ज्ञान ही देर या सबेर से सम्पूर्ण विश्व का धर्म होगा यह निश्चित है।" क्या हमारे आर्य विद्वान् भी इस दिशा में द्रुततर कदम बढायेंगे और सब मानवों को वेद पथ का पथिक बनावेंगे ?

साहित्य समीक्षा

हमारी राष्ट्र भाषा और लिपि—लेखक प० धर्मदेव विद्यावाचस्पति प्रकाशक — मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली। मूल्य ४ आने।

लेखक ने राष्ट्र भाषा की आवश्यकता को प्रतिपादित करते हुए कुछ कसौटियाँ बताई हैं और बगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी, मारवाड़ी, आसामी, उड़िया, कन्नड, तिलगू, तामिल और मलयालम भाषाओं के उद्धरण देकर यह सिद्ध किया गया है कि सस्कृत निष्ठ हिन्दी ही राष्ट्र भाषा की कसौटियों पर खरी उतर सकती है। हिन्दुस्तानी की ओट मे किस प्रकार उर्दू का प्रचार किया जा रहा है यह सप्रमाण सिद्ध किया है। इस विषय में गाधी जी के नाम का दुरुपयोग करने वालों का भी भ्रम निवारण करके देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता पर सुन्दर प्रकाश डाला है। पुस्तक की उपादेयता और लोक प्रियता इसी से स्पष्ट है कि स्वल्प काल में ही उसका दूसरा संस्करण निकल गया है।

क्षितीश विद्यालङ्कार सम्पादक
'वीर अर्जुन' (साप्ता०)

उन्नति—सम्पादिका—श्रीमती उमा बख्शी जी बी० ए० प्रभाकर १६६। २०-१ सदाशिव तिलकरोड पूना २। वार्षिक मूल्य ६) अर्ध वार्षिक ३॥) १ प्रति २ आ०।

यह आर्य भाषा (हिन्दी) का साप्ताहिक पत्र गत वैशाखी से पूना से प्रकाशित हो रहा है। इस के प्रारम्भिक विज्ञापन मे कहा गया था कि 'सभ्यता, नीति, धर्म तथा सामाजिक कर्तव्य का प्रतीक 'उन्नति' वैशाखी के शुभ अवसर पर हिन्दी भाषा में आ रहा है। श्रेष्ठ मानवता, प्राचीन आदर्श तथा आधुनिक युग के सतुलन व सांस्कृतिक, राजनैतिक और धार्मिक विचार धाराओं का गम्भीर अध्ययन इसमे रहेगा।' इत्यादि

इस समालोचना को लिखते समय (८ जून) तक 'उन्नति' के ६ अङ्क प्रकाशित हो चुके है जिनमे धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयों पर उत्तम लेख और कविताएं प्रकाशित हुई हैं। हमे जिस बात से विशेष प्रसन्नता हुई वह यह है कि एक विदुषी आधुनिक महिला द्वारा सम्पादित होने पर भी इसमें स्त्रियों की स्थिति पर विचार भारतीय संस्कृति की दृष्टि से किये गये हैं और आजकल के फैशन, पाश्चात्य सभ्यता के अन्ध अनुसरण मे अविवाहिता रह कर फैशनो में मस्त रहना इत्यादि कुप्रवृत्तियों की निन्दा की गई है। २३ मई के अङ्क में प्रकाशित श्रीमती शकुन्तला का 'नारी और अविवाहित जीवन' शीर्षक लेख हमें बहुत पसन्द आया जिसमें उन्होंने लिखा है कि 'जब नारी ने सीधा ही योरपियन सभ्यता का अनुकरण करना आरम्भ करदिया तो फिर सादगी और तपस्या का जीवन कहां? ⋯⋯ एक ओर फैशन और दूसरी ओर तपस्या ये दो विपरीत सीमाये हैं जो निभ नहीं सकतीं। दूसरी बात यह है कि स्त्री बिना पुरुष और पुरुष बिना स्त्री का जीवन अधूरा है। हां, यदि नारी इन प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन करती हुई भी अविवाहित जीवन बिताने पर

आरूढ़ हो तो उसे अपना जीवन सादा, पवित्र, परोपकारी व तपस्यामय बनाना चाहिये और Simple living and high thinking ही ऐसी अवस्था मे उसका लक्ष्य होने में उसके लिए कल्याणकारी हो सकता है। भोगवाद का वातावरण, फैशन परस्ती और अनुचित अधिकार की भावना उसे उसके लक्ष्य से दूर जा गिराएगी' इत्यादि। अन्य लेख तथा कविताएँ भी प्राय बड़ी उत्तम हैं। "भारत का नूतन वर्ष।' इस शीर्षक से फलित ज्योतिष के आधार पर जो भविष्य बताया जा रहा है हमें उसकी उपयोगिता और यथार्थता मे बड़ा सन्देह है। इससे मिथ्या विश्वास और भय की वृद्धि की सम्भावना अधिक है। अन्त मे हम 'उन्नति' का फिर हार्दिक स्वागत करते है।

प्रकाश की ओर—श्री नलिनी कान्त गुप्त अनुवादक—पं० जगन्नाथ जी वेदालंकर, सम्पादक—डा० इन्द्रसेन जी, प्रकाशक—अदिति कार्यालय श्री अरविन्दाश्रम पाण्डिचेरी मूल्य ॥)

यह पुस्तक सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी के मन्त्री श्री नलिनी कान्त गुप्त के अंग्रेजी ग्रन्थ Towards light का आर्यभाषानुवाद है। इसमें प्रेम और अभीप्सा, भगवान् और उसकी सहायता, इच्छा और प्रायश्चित्त, सौन्दर्य और आनन्द, कुछ परम रहस्य, माया का अन्त इन शीर्षकों से आध्यात्मिक विषयों पर प्रकाश डाला गया है। इस आध्यात्मिक प्रकाश के विषय में ही कहा है कि 'एक प्रकाश है जिस के सन्मुख अन्य सब प्रकाश अन्धकार हैं। एक बल है जिसके सन्मुख अन्य सब बल निर्बलता है। एक आनन्द है जिसके सन्मुख अन्य सब आनन्द वेदना है।"

दिव्य प्रेम और मानव प्रेम का भेद बतलाते हुये इस पुस्तक में ठीक ही लिखा है कि "दिव्य प्रेम में अनासक्ति का तत्त्व होता है जो मानव प्रेम में नहीं होता। अनासक्ति का तत्त्व ही प्रेम को प्रगाढ़ता प्रदान करता है क्योंकि वही प्रेम को शुद्ध करता है।' जो भगवान् का विशेष प्रिय बनने की अभीप्सा करता है उस से पूर्ण और परम विशुद्धि और पवित्रता की माग की जाती है।" यह सूत्र भी हमें बहुत अच्छा लगा। "भगवान् तुम से कभी परे नही हटता। वास्तव मे तुम ही उस से परे हटते हो और फिर इसके विपरीत कल्पना करते हो।" यह उक्ति कितनी यथार्थ है।

इस प्रकार इस छोटी सी पुस्तक मे पाये जाने वाले प्राय सूत्र जहा हम बहुत अच्छे और मननीय लगे हैं वहाँ 'परमरहस्य' इस शीर्षक के नीचे कुछ ऐसे वचन हैं जिन से हम सहमत नहीं हो सके और जो हमें सर्वथा अस्पष्ट तथा भ्रम जनक प्रतीत हुये हैं। उदाहरणार्थ निम्न वाक्यों को उद्धृत किया जा सकता है—

(१) भगवान् अनन्त हैं, अत वे सान्त भी हैं।
(२) सान्तता अनन्त के अनन्त रूपों में से एक है।
(३) भगवान् की विभक्त आत्माओं के बहुत्व से ही यह सृष्टि बनी है।
(४) जड़ प्रकृति अनन्ततया विभक्त एवम् अनन्ततया स्थूली कृत आत्मा ही है।

(५) दो सीमावर्ती तथा विरोधी ध्रुवों पर दो चेतनाए विद्यमान हैं एक आत्मा की तथा दूसरी जड प्रकृति की। दोनो स्थिति शील हैं।

अद्वैत वेदान्त की दृष्टि से शायद ये वचन ठीक हों पर हमें तो वैदिक तत्त्वज्ञान की दृष्टि से वे यथार्थ नहीं प्रतीत होते। यदि लेखक का तात्पर्य इन शब्दों से कुछ और था तो उन्हें अधिक स्पष्ट कर देना अच्छा होता। केवल परम रहस्य कह देने से काम नहीं चल सकता। 'माया का जन्म' इस शीर्षक लेख में भी 'परन्तु कहीं, ईश्वसत्ता के किसी उस पूर्ण ज्योति, उस पूर्ण आनन्द, उस शक्ति के सन्मुख पर्दा पड़ने दिया गया।' इत्यादि वाक्यों से हम सर्वथा असहमत हैं और इन्हें वेद तथा तर्क विरुद्ध समझते हैं।

पृष्ठ ४८ पर 'धर्म, मत निम्नतर देवताओ की पूजा है' यहा धर्म शब्द का प्रयोग हमें यथार्थ नहीं प्रतीत होता। धम तो एक ईश्वर की ही पूजा करना सिखाता है।

इस प्रकार इस उत्तम निर्देश और भाव पूर्ण पुस्तक में हमे कई स्थल भ्रम जनक प्रतीत हुए। इन का उचित संशोधन कर देने से पुस्तक सब अध्यात्म माग के पथिकों और जिज्ञासुओं के लिये अधिक उपयोगी बन सकेगी ऐसा हमारा विचार है। ध० दे०

देहाती इलाज—लेखक—प० रामेश जी वेदी आयुर्वेदालङ्कार गुरुकुल कागडी पृष्ठ ७२ मूल्य १)

यह अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है जिस मे सर्व साधारण के लाभ के लिये सब प्रसिद्ध रोगों की सुलभ वस्तुओं से चिकित्सा बताई गई है। प्रत्येक घर में इसकी १ प्रति रहनी चाहिये।

वैदिक स्वप्न विज्ञान—लेखक—श्री प० भगवद्दत्त जी वेदालङ्कार, प्रकाशक—श्री मुख्याधिष्ठाता जी गुरुकुल कांगडी पृष्ठ २७० मूल्य २)

इस पुस्तक के लेखक श्री प० भगवद्दत्त जी वेदालङ्कार गुरुकुल कागडी विश्व विद्यालय के सुयोग्य स्नातक है जो गत अनेक वर्षो से वैदिक अनुसन्धान कार्य में तत्पर है। स्वप्न का विषय एक अत्यन्त मनोरञ्जक और मनोवैज्ञानिक तथा ब्रह्मचर्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण विषय है जिस पर इस पुस्तक में अनेक वैदिक सूक्तों की अनुसन्धान पूर्ण व्याख्या करते हुए तथा उपनिषदों के वचनों को उद्धृत करते हुए प्रकाश डाला गया है। ब्रह्मचय तथा वीर्य रक्षा के लिए स्वप्नों से होने वाली हानियों को समझना तथा उनके निवारणार्थ उपाय जानना अत्यन्त आवश्यक है। वेदो और उपनिषदों के आधार पर इस सम्बन्ध मे बडे उपयोगी निर्देश इस पुस्तक में दिये गये हैं जिससे इसकी व्यावहारिक उपयोगिता की भी वृद्धि हुई है। पुस्तक सब के लिए उपयोगी तथा उपादेय है। सुयोग्य लेखक महोदय का प्रयत्न और प्रकार अभिनन्दनीय है। हम आशा करते हैं कि वेदिक विज्ञान के अन्य अङ्गों पर भी इसी प्रकार विचार करके वे जनता को लाभ पहुचाएगे

"यदि जाग्रद् यदि स्वप्न एनासि चकृमा वयम्।'
सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वंहस ॥

इस यजुर्वेद २०।१६ के मन्त्र विवरण मे पृ० २४६-२४७ में लेखक महोदय ने सूर्य का अर्थ भौतिक सूर्य मानकर जो यह लिखा है कि 'यजु० २०।१६

[शेष पृष्ठ २७१ पर]

आर्य कुमार जगत्

जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ

की ओर से

शीघ्र ही

त्रैमासिक "अन्तर्जातीय विवाह" पत्रिका

का प्रकाशन

उक्त पत्रिका २०×३० अठपेजी साइज के १२ पृष्ठों में निकलेगी जिसमें वैदिक वर्ण व्यवस्था वर्तमान जाति बन्धन आदि विषयों पर लेख संघ तथा उसकी शाखाओं के समाचार और सूचनाएं, संघ के सदस्यों के विवाह योग्य वर कन्याओं आदि की सूची तथा परिचय आदि निकला करेंगे।

पत्रिका का वार्षिक मूल्य सर्व साधारण से एक रुपया मात्र संघ के सहायकों से बारह आने तथा सदस्यों से केवल आठ आने होगा। समस्त आर्य पुरुषों तथा आर्य समाजों से निवेदन है कि इस पत्रिका के ग्राहक बनने की कृपा करें।

भद्रसेन
संचालक

[२७० का शेष]

में भी सूर्य से स्वप्नादि दोषों को दूर करने की प्रार्थना मिलती है।" हम उसे यथार्थ नहीं समझते। वहां प्रार्थना प्रकरण में 'सूर्य' से सर्व-प्रकाशक परमेश्वर का ही ग्रहण हमें उचित प्रतीत होता है। सम्पूर्णतया यह पुस्तक अत्युत्तम है।

धर्मदेव वि० वा०

परीक्षाओं की नवीन पाठविधि

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की सिद्धान्त-शास्त्री, भास्कर, रत्न आदि परीक्षाओं की नवीन पाठविधि छप कर तैयार हो गई है वह केन्द्रों को भेजी जा रही है। जो सज्जन अपने यहां इन धार्मिक परीक्षाओं का केन्द्र स्थापित करना चाहें वे निम्न पते से पाठविधि तथा नियमावली मुफ्त मंगा लें। परीक्षाएं जनवरी के अन्त मे होंगी। गत वर्ष इन परीक्षाओं में ५००० से अधिक छात्र सम्मिलित हुए थे।

निवेदक—
डा० सूर्यदेव शर्मा
एम ए, डी लिट्
परीक्षा मन्त्री,
भारतीय आर्य कुमार परिषद्, अजमेर

... ...

बाल विनय

जब मेरा दिल होता उदास
तब मैं जाता नदी के पास।
वहां जाके है होता करुणा भास
तब बुद्धि में होता है विकास।
फिर आएं चाहे दुख पचास
पर मैं नहिं देता ध्यान खास
प्रभु मुझ को रखो अपने ही पास
मैं चाहता हूं तेरी हा आस॥

भारत भूषण जवाहिर नगर, दिल्ली
(आयु १० वर्ष

महा पुरुषों की दिव्यवाणी

श्री अरविन्द के कुछ वचन

[सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी के १५ अगस्त को ७८ वें जन्म दिवस के उपलक्ष्य में डा० इन्द्रसेन जी एम० ए० पी० एच० डी द्वारा संगृहीत]

"दिव्य जीवन को पाने के लिए आरोहण करना, यही है मनुष्य की यात्रा, कार्यों का कार्य, उसका वरणीय यज्ञ। एक मात्र यही मनुष्य का ससार मे असली काज है, इसी मे ही उसकी सत्ता की सार्थकता है।"

❀ ❀

यज्ञ का लक्ष्य है उच्च या दिव्य सत्ता को जीतना, और निम्न या मानवीय सत्ता को इस दिव्य सत्ता से युक्त कर देना तथा इसके नियम और सत्य के अधीन कर देना।

❀ ❀

ऋषियो ने तर्क के बल पर, विद्या का प्रसार करके, प्रेरणा के स्रोत में प्रवाहित होकर उपनिष्दुक्त ज्ञान को नहीं प्राप्त किया था, बल्कि मन की जिस निभृत कोठरी के गुप्त स्थान मे सम्यक् ज्ञान को चाबी लटक रही है, योग के द्वारा अधिकारी होकर, उसी कोठरा मे प्रवेश कर उन्होंने उस चाबी को प्राप्त किया था तथा वे अज्ञात ज्ञान के विशाल राज्य के राजा हुए थे।

❀ ❀

ओम् एक विशेष मत्र है, ब्रह्म चेतना को उसके चारों प्रदेशों मे — तुरीय से लेकर बाह्य या स्थूल स्तर तक मे — प्रकट करने वाला ध्वनि-प्रतीक है .. अतएव मत्र का प्रथम परिणाम होना चाहिये चेतना का एक परम चैतन्य के प्रति खुल जाना जिससे कि वह (चेतना) सभी जड़ पदार्थो मे आन्तरिक सत्ता मे और अति भौतिक लोकों मे, उपस्थित कारण-स्तर मे जो इस समय हमारे लिये अतिचेतन (Superconscient) है, उसी एक चैतन्य को देखने और अनुभव करने लगे और अन्तिम परिणाम होना चाहिये समस्त वैश्व सत्ता से ऊपर सर्वोच्च उन्मुक्त परात्परता।

❀ ❀

वैयक्तिक तथा सामाजिक तौर पर, मनुष्य की पूर्णता की अन्तिम और एकमात्र आशा आध्यात्मिकता ही है, वह आध्यात्मिकता नही जो अपना पृथक् सन्तोष पाने के लिये पृथ्वी से तथा इसके कार्यो से मुह मोड लेती है किन्तु वह बृहत्तर आध्यात्मिकता जो पृथ्वी और उसके कार्यो को स्वीकार करता है और उन्हें पूर्णता तथा कृतार्थता प्राप्त कराती है।

❀ ❀

वेद मानवता का उच्च अभीप्सामय सगीत है, उसकी ऋचाएं मानव आत्मा द्वारा अपने अमर आरोहण मे गाये गये गान समृद्ध महाकाव्य के प्रसंग हैं।

❀ ❀

ऋषि सूक्त का नैयक्तिक रूप न स्वय निर्माता नहीं था, वह तो द्रष्टा था एक सनातन सत्य का और एक अपौरुषेय ज्ञान का।

❀ ❀

वेद की व्याख्या के विषय मे, मेरा पूरा विश्वास है कि (चाहे अन्तिम पूर्ण व्याख्या कुछ भी हो) दयानन्द उसके सत्य सूत्रों के प्रथम आविष्कर्त्ता के तौर पर सदा आदृत किये जायेंगे।

❀ ❀

योग की प्रक्रिया यह है कि मानव आत्मा को चेतना की उस अहमन्य अवस्था से जो वस्तुओं की बाह्य प्रतीतियो और उनके आकर्षणों में ग्रस्त रहती है, पराङमुख करके उस उच्चतर अवस्था की ओर अभिमुख कर दे जिसमे कि पर त्पर और विराट ईश्वर अपने आपको व्यक्तिमय साचे मे उडेल सके और उसे रूपातरित कर सके।

❀ ❀

जितना ही अधिक तुम यह अनुभव कर सकोगे कि मिथ्यापन तुम्हारा अपना अश नहीं है और यह तुम्हारे पास बाहर से आया है, उतना ही अधिक इसका त्याग करना तथा इसे अस्वीकार करना तुम्हारे लिये सुगम हो जायगा।

❀ ❀

अपनी कमजोरियों और कुप्रवृत्तियों को पहचानना और उनसे निवृत्त होना यही मुक्ति की ओर जाने का मार्ग है।

❀ ❀

बाह्य अवस्थाओं की अपेक्षा एक आध्यात्मिक वातावरण अधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि कोई इसे प्राप्त कर सके और साथ हो अपने श्वास लेने के लिये वहा अपना निजी आध्यात्मिक वायुमण्डल उत्पन्न कर सके और उसमें रह सके तो यह उन्नति के लिये ठीक अवस्था होगी।

❀ ❀

श्रद्धा, भगवान् पर भरोसा, भागवत शक्ति के प्रति आत्म-समर्पण और आत्मदान, ये आवश्यक और अपरिहार्य हैं। परन्तु ईश्वर पर भरोसा करने के बहाने आलस्य और दुर्बलता को नहीं आने देना चाहिये। इस श्रद्धा और भरोसे के साथ साथ अनथक अभीप्सा और भागवत सत्य के मार्ग मे आने वाली रुकावटों का निरन्तर त्याग, ये भी चलते रहना चाहियें।

❀ ❀

योग मे आन्तर विजय के द्वारा ही बाह्य विजय हुआ करती है।

❀ ❀

योग साधन करने का अर्थ यही है कि साधना करने वाला समस्त आसक्तियों पर विजय पाने तथा केवल भगवान् की ओर ही अभिमुख होने का सकल्प रखता है।

❀ ❀

हर प्रकार के अतिरंजित आत्महीनता के भाव से अपने आपको मुक्त करो और पाप, कठिनाई अथवा विफलता के ख्याल से उदास हो जाने की अपनी आदत को छोड दो। इन विचारो से वस्तुत कोई लाभ नहीं होता, बल्कि ये भयानक विघ्न हैं और प्रकृति में बाधा डालते हैं।

❀ ❀

यदि तुम योग करना चाहते हो तो तुमको सभी बातों में चाहे वे छोटी हों या बडी अधिकाधिक यौगिक भाव धारण करना चाहिये। हमारे मार्ग में यह यौगिक भाग विषयों का जबरदस्ती निग्रह करके नहीं, किन्तु इनके सम्बन्ध मे अनासक्ति और समता रख कर धारण किया जाता है।

❀ ❀

इस बात का प्रतीत होना कि अमुक वस्तु रसनेन्द्रिय के लिये सुखकर है कोई बुरी बात नहीं है, पर उस वस्तु के लिये कामना या लिप्सा नहीं होनी चाहिये, उसके प्राप्त होने

पर न तो हर्षोल्लास होना चाहिये और न उसकी अप्राप्ति से किसी प्रकार की अप्रसन्नता या खेद।

❀ ❀

कामावेग का प्राण और शरीर पर जो आक्रमण होता है इससे साधक को एकदम अलग रहना होगा कारण-जब तक वह कामावेग को नहीं जीत लेता तब तक उसके शरीर में भागवत आनन्द का संस्थापन नहीं हो सकता।

❀ ❀

यह ठीक है कि काम का बाह्य क्रिया मे तो निग्रह किया जाय पर दूसरी तरह से उसमे लिप्त रहा जाय तो इससे शारीरिक उपद्रव और दिमागी कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती है पर यदि इस पर प्रभुत्व स्थापन करने और इसका सयम करने के लिये सच्चा आध्यात्मिक प्रयत्न किया जाता है तो मैं नही समझता कि कामवासना के इस सयम से कभी हानि होता है।

❀ ❀

इसका (कामवासना का) पूर्ण त्याग करो परन्तु न इससे सघष करके नही, बल्कि इससे अपना सम्बन्ध विच्छेद करके, अपने आपको इससे अनासक्त करके और इसको अपनी स्वाकृति देने से इनकार करके।

❀ ❀

कामुकता एक विकार अथवा अधोगति है जो प्रेम के आधिपत्य की स्थापना मे रुकावट डालती है।

❀ ❀

जीवन और शक्ति का स्रोत भौतिक नही, आत्मिक है। किन्तु वह आधार या नींव जिस पर कि जीवन और शक्ति स्थित है और काम करते हैं भौतिक है। • भौतिक को आत्मिक तक उठा ले जाना ही ब्रह्मचर्य है।

❀ ❀

हम ब्रह्मचर्य के द्वारा 'तपस' 'तेजस्' 'विद्युत्' और 'ओजस्' के भण्डार को जितना अधिक दा सके उतना ही हम अपने आपको सम्पूर्ण शक्ति से भरपूर कर सकेंगे, शरीर, हृदय, मन और आत्मा के कार्यों को करने के लिये शक्ति से भरपूर हो सकेंगे।

❀ ❀

प्रत्येक धर्म ने मानवजाति को कुछ सहायता पहुँचाई है। पैगनिज्म (एक प्राचीन बहुदेवपूजक मत) ने मनुष्य के अंदर सौन्दर्य के प्रकाश को विकसित किया है, उसके जीवन की विशालता और उच्चता को बढ़ाया है और बहुमुखी पूर्णता के उसके उद्देश्य को उन्नत किया है। ईसाइयत ने उसे दिव्य प्रेम और दयालुता व सहृदयता का कुछ दर्शन कराया है। बौद्ध मत ने उसे अधिक ज्ञानी, अधिक विनीत और अधिक पवित्र होने का उत्कृष्ट मार्ग दिखाया है। यहूदी मत और इस्लाम ने उसे धार्मिक भाव से क्रिया मे सच्चे होना और ईश्वर के प्रति उत्कट भक्ति वाला होना सिखाया है। हिन्दूधर्म ने उसके आगे बडी से बडी और गहरी से गहरी आध्यात्मिक सभावनाओ को खोल दिया है। एक बड़ा काम सिद्ध हो जाता यदि सब ईश्वर—दर्शन आपस मे प्रेम से मिल जाते और अपने आपको एक दूसरे के प्रतिरूप कर लेते। पर बौद्धिक सिद्धांतवादिता और साम्प्रादायिक अहकार उस मे बाधक हैं।

❀ ❀

आज हमे ससार मे जो परिवर्तन दिखाई देते हैं वे अपने आदर्श और उद्देश्य म बौद्धिक नैतिक और ~ तक ह। आध्यात्मिक क्रान्ति अपने अवसर की प्रतीक्षा मे है, और इस बीच मे वह केवल कहीं कहीं अपनी लहरो को उछालती है जब तक वह नही आ जाता दूसरी क्रान्तियों का मतलब समझ मे नही आ सकता और तब तक वर्तमान की घटनाओ की सब व्याख्याएँ और मनुष्य के भविष्य-दर्शन के सब प्रयत्न व्यर्थ की चाजे हैं। क्योंकि उस आध्यात्मिक क्रान्ति के स्वरूप, शक्ति और परिणाम ही हमारी मानव जाति के अग्रिम चक्र को निश्चित करेंगे।

दानसूची सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

१५—७—४८ तक प्राप्त राशियां

५१) श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति वीर अर्जुन देहली
१) ,, मुकुन्दराम जी रोशनपुर शाहबाद
२) ,, ईश्वर दयालु जी बिजनौर
१) ,, रामरक्खा जी गुरुकुल कांगड़ी
१) ,, सत्यदेव जी विद्यालंकार ,,
१) ,, अनन्तानन्द जी विद्यालंकार ,,
१) ,, ओम्प्रकाश जी ,, ,,
१) ,, सुरेशचन्द्र जी ,, ,,
१) ,, स्वामी रामानन्द जी ,, ,,
२) ,, वेणीप्रसाद जी जिज्ञासु गुरुकुल कांगड़ी
५) ,, दयासिंह टेलरमास्टर फीरोजपुर झिरका
५) , नोतनदास जी ,,
२) ,, देवकीनन्दन जी ,,
१) ,, लालचन्द्र जी गुरुकुल कांगड़ी
१) ,, जयदेव जी वेदालंकार ,,
३) ,, भक्त सुन्दरदास जी वानप्रस्थ ज्वालापुर
३) ,, डा० धर्मवती जी बम्बई
१) ,, वेणी प्रसाद जी कनखल
१०) ,, भक्त ओमानन्द जी ज्वालापुर
२५) ,, चौधरी प्रतापसिंह जी ज्वालापुर
१०) डा० लालचन्द्र जी वानप्रस्थाश्रम ,,
१००) ,, सेठ ईश्वरी प्रसाद जी बंगलौर सिटी
२५) ,, श्री गिरधारीलाल जी Minister Excise Department लखनऊ
१२) श्री पं० रामनारायण जी मिश्र काशी

२६५)
३४१॥) गत योग

६०६॥) सर्व योग क्रमशः

(दान दाताओं को धन्यवाद)

इस निधि में उदार सहायता देना और अन्यों से दिलाना प्रत्येक नर नारी का आवश्यक धार्मिक कर्तव्य है। इसका उद्देश्य देश देशान्तरों में वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रचार की समुचित व्यवस्था कराना है।

धर्मदेव वि० वा०
स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

स्थापना दिवस

२५) बनवारीलाल जी साहिब गंज सन्थाल परगना
५) प्रधान आर्य समाज रियासी काश्मीर
१५) मंत्री आर्य समाज सागर सी० पी०
२५) मन्त्री आर्य समाज नारनौल पटियाला
७॥।=) मन्त्री आर्य समाज फीरोजपुर झिरका
५=) ,, ,, ,, लालकुर्ती मेरठ

८३)
८१३॥।) गत योग

८९६॥।) सर्व योग (क्रमशः)

दयानन्द पुरस्कार निधि

५) श्री छोटेलाल जी अमरोहा

५) ,, रामजीदास जी रोड Inspector P. W. D. लुधियाना

५) ,, हरधारालाल जी क्लाथ मरचेन्ट ,,

५) ,, राय बहादुर डा० हरप्रसाद जी पेन्शनर भेरा

५) ,, रामस्वरूप जी थापर रईस लुधियाना

५) ,, अमरनाथ जी सूद ,,

५) ,, राय सन्तराम सैनी एम० ए० नई दिल्ली

५) ,, चिन्ताराम जी थापर Municipal Commissioner लुधियाना

५) ,, मास्टर सन्तराम जी बी० ए० आर्य हाई स्कूल लुधियाना

५) ,, ब्रजभूषण जी बी० ए० नई देहली।

५) ,, राय कुन्दनलाल जी बी ए. कुन्दन कुछ फैक्टरी लुधियाना

५) ,, राय चम्पालाल जी बी० ए० इन्जीनियर ,,

५) ,, किशनचन्द जी एम ए. एल एल. बी. वकील ,,

५) ,, हरीराम जी महिन्द्रा ,, ,, ,,

५) ,, चन्द्रप्रकाश जी मॉकी बी० ए० एल० एल० बी० लुधियाना

५) ,, ब्रजमोहन जी M/s कन्हैयालाल बंशीलाल ,,

५) ,, मेरीराम जी S/o डा० दौलतराम जी सूद ,,

५) ,, हंसराज जी ठंडा बी० ए० सेन्डीकेट होजरी ,,

५) ऋषिराम जी आईस मरचेन्ट मोगा

४) उग्रसेन जी Pensioner पोस्टमास्टर लुधियाना

२) ,, चि० विजयकुमार C/o बाबू हरनामसिंह जी ,,

५) ,, गंगाधर जी प्रधान आर्य समाज हिंडोन

५) ,, रामजीलाल जी , ,,

५) ,, जौहरीलाल जी मोदी , ,,

५) ,, पूरनमल जी ,, ,,

५) ,, मांगीलाल जी ,, ,,

५) ,, प्रह्लाद जी मन्त्री ,, ,,

५) ,, रामदयाल जी कोषाध्यक्ष ,, ,,

५) ,, गणेशीलाल जी ,, ,,

दान दाताओं को धन्यवाद

इस वर्ष आर्य समाज स्थापना दिवस का कम से कम ६०००) सभा के कोष में पहुँचना चाहिए। जिन समाजों ने अपना भाग अभी तक नहीं भेजा है उन्हें भेजने में शीघ्रता करनी चाहिये। प्रत्येक आर्य समाज को इस निधि में धन भेजना अपना एक अत्यन्त आवश्यक कर्तव्य समझना चाहिए। इस कार्य में ज़रा लापरवाही नहीं होनी चाहिए। अनुशासन की भी यही माँग है।

गंगाप्रसाद उपाध्याय एम. ए.

मन्त्री

सार्वदेशिक सभा

....

५) ,, शान्तिस्वरूप जी ,, ,,
२) ,, गोर्धनलाल जी प्रधान ,, ,,
१) ,, भोरीराम जी ,, ,,
२५) ,, विश्वमित्र जी एडवोकेट इलाहाबाद
२५) ,, जगनन्दनलाल जी ,, ,,
१००) ,, मती रत्नकुमारी जी एम० ए०
स्त्री समाज अतरसुइया
५) ,, राजाराम जी ठठेरी बाजार ,,
५) विष्दयाल जी सेठ ,,
५) ,, रामनारायण जी ,
५) श्रीमती करुणाराज देवी जी ,,
१०) , गार्गी देवी जी ,,
५) ,, मालती देवी जी ,,
५) श्री रायबहादुर हरप्रसाद जी भेडा
५) ,, पारवती देवी जी भेडा
५) श्री गुरुदत्तामल ३८ दयानन्द नगर
अमृतसर
५) ,, बृजलाल जी ,,
१०) कर्मचन्द्र जी २०।५१ लोधी रोड नई दिल्ली
१०) श्रीमती चन्द्रकुमारी जी अमृतसर
११) श्री मन्त्री जी आर्य समाज लक्ष्मणसर

३९१)
१६७१।≈) गत योग

२०६६।≈) सर्व योग
दान दाताओं को धन्यवाद (क्रमश

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री सार्वदेशिक सभा

• •• •

सार्वदेशिक के ग्राहकों से निवेदन

निम्नलिखित ग्राहकों का चन्दा अगस्त मास के साथ समाप्त होता है । अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल ही मनीआर्डर द्वारा भेज दें अन्यथा उनकी सेवा में आगामी अंक वी० पी० से भेजा जायगा । धन प्रत्येक दशा में ३०।७।४९ तक कार्यालय में पहुँच जाना चाहिये ।कृपया अपने मित्रों को भी ग्राहक बनाइये ।—मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें ।

ग्राहक संख्या	पता
९	श्री चुनीभाई जी आर्य सनसोली
२४	,, मन्त्री जी आर्य समाज हिवडखेड रूपराव
३८	,, ,, कोटा (राजपुताना)
३९	,, रामावतार प्रसाद जी बलभद्रपुर गोशाला के पास
४८	,, रमेश्वर प्रसाद महेन्द्र कुमार जी कलकत्ता
५४.	,, मन्त्री जी आर्य समाज सीपरीबाजार झाँसी
५८	,, ,, ,, अलीगढ़ यू० पी०
६०	,, राजेन्द्र जी नगाइच पाडा अतरौली
६१	,, मन्त्री जी आर्यकुमार सभा सीताराम बाजार देहली
६३	,, ,, आर्य समाज कमाठीपूरा बम्बई ८
१००	,, मन्त्री जी आर्य समाज देवास इन्दोर
१०४	,, गुर्जरहा पोस्ट दिवियापुर इटावा
१ २	,, ,, आर्य समाज गंगाधर सौराष्ट्र
११३	,, अमरनाथ जी शर्मा अड्डा कपूरथला जालन्धर
११५.	,, मन्त्री जी आर्यसमाज औरैया जि० इटावा
१७०	,, मन्त्री जी आर्य समाज शाहाबाद इटावा
१७२	,, शिवनारायण जी आर्य सभा फतहपुर यू० पी०
१७३.	,, आर्य समाज सीहोर (मन्त्री जी)
१७७.	,, माधवेन्द्र जी शास्त्री घी कांटा बड़ौदा
१७८.	,, मन्त्री जी आर्य समाज केकड़ी
२८०	,, मन्त्री जी आर्य समाज दक्षिण कलकत्ता
५२५.	,, मन्त्री जी आर्य समाज कांठ
५२७	,, विश्राम भाई जी एफ पटेल जागपुरा जिला सूरत
५२८	,, दशनलाल जा नवल किशोर रोड लखनऊ
५३०	,, नारायण सिंह जी वर्मा मु० बहरोली पोस्ट खजुहा फतेहपुर
५३१.	,, मन्त्री जी आर्य समाज सिमरिया पोस्ट मांठ जिला झाँसी
५३२.	,, पुस्तकाध्यक्ष जी डी ए० वी० ज ट कालिज जिला मेरठ
५३४.	,, मुसईराम नन्हकूराम रानो क सराय आजमगढ
५३५.	श्रीमती कान्तारानी जी द्वारा रामेश्वर जी किचनर रोड नई दिल्ली
५३८	आर्य समाज चित्रगुप्त गज लश्कर
५४४,	श्री गेन्दालाल जी आर्य धर्मपुरी धार
५४५.	,, अकबर सिंह जी मुन्शी दुर्ग सी० प०
५५४.	,, विश्वनाथ सिंह जी गारुलिया २४ परगना
५६२.	,, बा० गुरुप्रसाद सिंह जी आर्य न मल्स पटना
५६३.	,, बालेश्वरप्रसाद जी आर्यसमाज नसीराबाद

व्यवस्थापक सार्वदेशिक पत्र दिल्ली

Red No 159

वैदिक संस्कृति विषयक अपूर्व ग्रन्थ

Vedic Culture

लेखक

श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०

प्राक्कथन लेखक

श्री डाक्टर गोकुल चन्द जी नारंग एम. ए. पी. एच. डी.

अंग्रेजी जानने वाले विद्वानों के लिये यह अपूर्व खोलने वाला ग्रन्थ है।

अवश्य पढ़िये और इसको विद्वानों की भेंट कीजिये।

इसमें आर्य समाज का गौरव बढ़ा। बढ़िया सुन्दर अपटू—डेट गट—अप

मूल्य ३॥

मिलने का पता —

सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड

पाटोदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली।

राष्ट्र रक्षा

के

वैदिक साधन

राष्ट्र रक्षा ही आज भारत वासियों के सामने मुख्य विषय है। भारत की नवजात स्वतन्त्रता की जड़ कैसे पाताल तक गहरी जम जाय यही हमारी मुख्य समस्या है। इसके अचूक साधन वेद के आधार पर श्री स्वामी वेदानन्दतीर्थ जी महाराज की ओजस्विनी लेखनी से लिखी गई इस पुस्तक में पढ़िये।

पुस्तक की महत्व पूर्ण प्रस्तावना

भारत सरकार के धर्म (Law) मन्त्री माननीय श्री० डा० बी० आर अम्बेडकर ने लिखी है। इससे पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ जाती है। मूल्य १) मात्र

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र

वर्ष ६ } सितम्बर १९४९ ई० ६ भाद्रपद दयानन्दाब्द १२५ { अङ्क ७

वैदिक-प्रार्थना

ओ३म् ॥ यद्विद्वांसो यदविद्वांस एनांसि चकृमा वयम् ।

यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत विश्वे देवाः सजोषसः ॥ अथर्ववेद

शब्दार्थ—(वयम्) हम (विद्वांस) जानते हुए अथवा (अविद्वांस) न जानते हुए (यत् यत्) जो (एनांसि चकृम) पाप करते हैं (विश्वे देवा) हे सत्यनिष्ठ विद्वानो (यूयम्) तुम (सजोषस) प्रीति और सेवाभाव से युक्त हो कर (न) हम (तस्मात्) उस पाप समुदाय से (मुञ्चत) छुड़ाओ ।

विनय—हे सत्यनिष्ठ ज्ञानियो हम अज्ञानवश अथवा जानते बूझते हुए भी लोभादिवश अनेक प्रकार के पापकर्मों को कर बैठते हैं । आप से हमारी प्रार्थना है कि आप उत्तम उपदेश देकर हमें ऐसा दृढ़ और ज्ञानी बनाएं जिससे हम बड़ी से बड़ी आपत्ति और बड़े से बड़े प्रलोभन के आने पर भी कभी पाप में प्रवृत्त न हों । आप प्रेम और सेवाभाव को धारण करते हुए लोगों को सदा पाप मार्ग से हटाते रहें ।

वैदिक धर्म और विश्वशान्ति

माननीय मावलकर जी के प्रशंसनीय विचार

भारतीय राष्ट्र ससत् (पार्लियामेट) के अध्यक्ष माननीय श्रीगणेश वासुदेव मानवलङ्कर जी ने पिछले दिना अहमदाबाद मे वैदिक मन्दिर का उदघाटन करते हुए निम्नलिखित विचार प्रकट किये —

भारत अपनी प्राचीन सस्कृति व दृष्टिकोण पर दृढ रह कर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध व विश्वशाति स्थापित करने की दिशा मे ससार का नेतृत्व कर सकता है? **ससार मे वैदिक धर्म सबसे पुराना धर्म है।** तथा उपनिषद् और गीता म उसका समावेश है। ससार शाति का इच्छुक है परन्तु वह शाति को शस्त्रास्त्र के द्वारा प्राप्त करना चाहता है। शाति तभी प्राप्त हो सकती है जब कि आप लोग ससार को उसी दृष्टिकोण से देखो जिस से आप अपनी आत्मा को देखते है।

माननीय मावलकर जी ने इन शब्दो के द्वारा जो भाव प्रकट किये है वे सर्वथा प्रशंसनीय और यथार्थ है। उपनिषदे 'वाग्विवृताश्चवेदा (मुडक) "एव वा अरे अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद् यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदसामवेदोऽथर्व वेद। (बृहदा०) इत्यादि वचनो द्वारा वेदो को ईश्वरीय ज्ञान मानती हैं और उनकी आध्यात्मिक शिक्षाओ की व्याख्या करती है। गीता तो 'सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दन। पार्थो वत्स सुधीर्भोक्ता दुग्ध गीतामृत महत्॥

इस सुप्रसिद्ध वचन के अनुसार उपनिषद रूपी गौवा का दूध है जिसके दोहन वाले श्री कृष्ण महाराज है। गीता म भी कर्म ब्रह्मोद्भव विद्धि ब्रह्माक्षर समुद्भवम्॥' (गीता अ ३।)

इत्यादि श्लोको द्वारा वेद को अविनाशी परमेश्वर का दिया ज्ञान माना गया है। ऐसी अवस्था म माननीय मालवङ्कर जी का यह कथन ठीक ही है कि उपनिषद् और गीता का सनातन वैदिक धर्म के प्रतिपादक ग्रन्थो म समावेश है। वेदो की शिक्षा सब प्राणियो को आत्मवत् तथा मित्र की दृष्टि से देखने की है जिस के लिये

'यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मान ततो न विचिकित्सति॥
यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानत।
तत्र को मोह क शोक एकत्वमनुपश्यत॥

(यजु० ४०। ६। ७)

"मित्रस्याहंचक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।"(यजु ३६।१८) इत्यादि सेकडों मन्त्रों को उद्धृतकिया जा सकता है। वेद की संस्कृति को ही 'सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा" (यजु० ७।१४) इत्यादि शब्दो मे सबसे श्रेष्ठ और सारे संसार के लिये वरणीय अथवा ग्रहण करने योग्य बताया गया है क्योंकि उसी से सारे विश्व का कल्याण हो सकता है तथा सर्वत्र शान्ति की स्थापना हो सकती है। अतः माननोय मावलङ्कर जी का यह कथन कि 'भारत अपनी प्राचीन संस्कृति व दृष्टि कोण पर दृढ रहकर अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध व विश्वशान्ति स्थापित करने की दिशा में संसार का नतृत्व कर सकता है।" सर्वथा उचित ही है। इस सत्य सनातन वैदिक धर्म और संस्कृति का सर्वत्र देश देशान्तरों में प्रचार हो इसके लिये समस्त आर्यों को संगठित प्रयत्न करना चाहिये तथा पूर्ण आर्थिक तथा अन्य विध सहयोग देकर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की आर्थिक स्थिति को ऐसा उत्तम बनाना चाहिये जिससे वह 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' केवैदिक आदेश का पालन कराने मे समर्थ हो सके।

आर्यसमाज का विदेश प्रचार

हमारे सहयोगी, पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के साप्ताहिक मुखपत्र "आर्य" के (जिसके पुन प्रकाशन पर हम विशेषप्रसन्नता प्रकट करते है) सुयोग्य सम्पादक श्री प भीमसेन जी विद्यालंकार ने ६ भाद्रपद २००६ के अङ्क मे उपर्युक्त शीर्षक से एक सम्पादकीय टिप्पणी देते हुए लिखा है कि —'परतन्त्र भारत मे आर्य समाज के लिए विदेश प्रचार के लिए प्रचारक भेजना कठिन था। इसमे कई प्रकार की दिक्कते थीं परन्तु अब वे दिक्कते दूर हो गई है। स्वतन्त्र भारत के आर्य समाजो के प्रचारक भी स्वाभिमान के साथ विदेशा मे वैदिक संस्कृति का सन्देश सुना सकते है। इस समय संसार के सभ्य राष्ट्र भी संसार म शक्ति सम्पन्न होते हुए भी शान्ति स्थापना मे असमर्थ है कारण यह है कि शस्त्र शक्ति द्वारा शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। नैतिक शक्ति अथवा आध्यात्मिक भावनाओं को उन्नत करके ही संसार के मनुष्य मात्र को शान्ति की ओर ल जाया जा सकता है। सदियों बाद ऋषि दयानन्द वैदिक धर्मको देश देशान्तरो म फैलाने का सन्देश लेकर आए थे। उनके उत्तराधिकारियो को भारत म अंग्रेजी राज्य के कारण स्वदेश तथा विदेश मे वैदिक धर्म प्रचार मे सुविधाएं प्राप्त न थीं। अब सार्वदेशिक सभा को चाहिये कि वह आर्य समाज के विद्वानो को इस दिशा म प्रेरित करे। अपनी ओर से विदेशों मे मौखिक तथा लेखबद्ध साहित्य द्वारा वैदिक धर्म की, दस नियमो के आधार पर, प्रचार की योजना करे। आशा है सार्वदेशिक सभा के अधिकारी इस ओर ध्यान देंगे।

हम श्री प० भीमसेन जी के विचारो से पूर्ण तया सहमत है तथा उनका पूर्ण समर्थन करते है। साथ ही हम आर्य जनता को सूचित करना चाहते हैं कि सार्वदेशिक सभाका ध्यान विदेशो मे प्रचार की ओर भी है और वह चाहती है कि शीघ्र से शीघ्र सुयोग्य प्रचारक भेज कर विदेशो मे वैदिक धर्म और संस्कृति का शान्तिदायक सन्देश पहुँचाया जाए।

गुरुकुल कांगडी विश्व विद्यालय के एक

सुयोग्य स्नातक जो आर्य भाषा, संस्कृति और अंगरेजी के बहुत अच्छे तथा प्रभावशाली वक्ता है प्रचारार्थ अमेरिका जाने को उत्सुक है। उन्होंने मेरे प्रश्न के उत्तर में ७-६-४६ के पत्र द्वारा पटना से सूचित किया है कि 'अमेरिका जाने का मेरा विचार स्थिर है तथा सुनिश्चित है।' ३ वर्ष तक वे अमेरिका में रह कर प्रचार करने के लिये उद्यत है जिसका व्यय उन्होंने ७० हजार के लगभग बताया है। एक और सज्जन जिन्होंने ६ वर्ष देव बन्द में रह कर अरबी फारसी का बड़ा अच्छा अभ्यास किया है तथा जो मुस्लिम साहित्य के उत्तम ज्ञाता है ईरान, अरब आदि की ओर जाने को उत्सुक है और ७६ ७-४६ को इस आशय का सार्वदेशिक सभा कार्यालय में आवेदन पत्र दे चुके हैं। अन्य भी विद्वानों को तय्यार किया जा सकता है किन्तु जब तक आर्य जनता का सक्रिय सहयोग सार्वदेशिक सभा की आर्थिक स्थिति को उन्नत करने और उसे सुयोग्य प्रचारकों को आर्थिक चिन्ता से मुक्त करके विदेशों में वैदिक धर्म का सन्देश पहुँचाने विदेश भेजने के योग्य बनाने में न हो तब तक मनोमोदकों से काम नहीं चल सकता। इसी उद्देश्य से सार्वदेशिक सभा ने 'सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि' की योजना बनाई है जिसके लिये आर्य जनता का दान प्राप्त हो रहा है किन्तु उद्देश्य की महत्ता और व्यय की प्रचुरता को दृष्टि में रखते हुए वह बहुत ही कम है। हम सत्य सनातन धर्म और संस्कृति के प्रेमी समस्त आर्य नर नारियों का ध्यान पुनः इस अत्यावश्यक कार्य की ओर आकृष्ट करते हुए निवेदन करते है कि वे अपनी उदार दान राशि सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिये अविलम्ब सार्वदेशिक सभा कार्यालय में भिजवाएं तथा अन्यों को भी इसके लिये प्रेरित करें। कुछ न कुछ वार्षिक दान तो प्रत्येक आर्य से अवश्य ही इस महत्वपूर्ण कार्यार्थ लिया जाए ऐसा उस योजना में कहा गया है। धनी दानी आर्य सज्जनों को इस पवित्र कार्य में उदार सहायता देकर पुण्य और यश के भागी बनना चाहिये तथा सभा को सुयोग्य प्रचारकों को अति शीघ्र विदेश भिजवाने में समर्थ बनाना चाहिये।

कुछ अविवेकी अकालियों का घोर निंदनीय कार्य:—

श्री वेद प्रकाश जी मन्त्री आर्यसमाज पटियाला ने सूचित किया है कि

"६ अगस्त को जब श्री म० कृष्ण जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब धुरी में आर्य हाई स्कूल का उद्घाटन करने के विचार से ट्रेन ३ ३० पर से गुजरने वाले थे, तब अकालियों का एक भीड़ ने प्लेटफार्म पर पहुंच कर 'आर्यसमाज मुरदाबाद म० कृष्ण मुरदाबाद, प्रताप मुरदाबाद, पंजाबी का दुश्मन मुरदाबाद के नारे लगाये। वे आर्य वीरों के हाथ से 'ओ३म्' के झंडे छीन कर पांव तले रौंधने लगे, उन्होंने दलपति म० प्रभुदयाल जी की गांधी टोपी सिर से उतार कर अपमान किया और कई आर्यवीरों को शारीरिक चोटें पहुँचाई।

इस अत्यन्त निन्दनीय कार्य के विरोध में पटियाला देहली, जींद तथा अन्य नगरों के निवासियों ने सार्वजनिक सभाएं करके प्रस्ताव भिजवाये हैं जिन में मतान्ध अकालियों के ऐसे कृत्य की घोर निन्दा की गई है। आज ही श्री मन्त्री जी आर्य-

समाज पटियाला का सार्वदेशिक सभा काय। लय मे २२ ८-४६ का पत्र प्राप्त हुआ है जिस म उन्होंने लिखा है कि 'यहा तो सिक्ख भाई मुस्लिम लीग की तरह उद्दण्डता कर रहे है। उन के जलसों मे ये नारे लगाए जाते है "थल्ला मेरी जुत्ती दा जवाहर पुत्ता कुत्ती दा।" हिन्दू अखबार मुरदाबाद, पटल जवाहर मुर्दाबाद आदि।

यह विश्वास करना कठिन है कि कोई इतना अविवेक और उद्दण्डता पूर्ण कार्य कर सकता और ऐसे निन्दनीय—देश नताओं के प्रति घोर तिरस्कार सूचक और अपशब्द पूर्ण नारे खुले तौर पर लगाने का दुस्साहस कर सकता है किंतु यह समाचार विश्वस्तसूत्र से प्राप्त हुआ है अत इस पर अविश्वास नहीं किया जासकता। जिन अकालिया ने ऐसे निन्दनीय कार्य किये है वे घोर अपराधी है और अधिकारियो का कर्तव्य है कि उन्हे अपने इस अपराध के लिये घोर दण्ड दे जिस से भविष्य म किसी को ऐसे नीच कार्य करने और अपशब्दपूर्ण नारे लगाने का दुस्साहस न हो। इस विषय में किसी प्रकार का भी शिथिलता दिखाना अपराधिया के साहस को बढ़ाना होगा। हम पटियाला पूर्वी पजाब और केन्द्रीय सरकार के मान्य अधिकारियो का ध्यान भी इन कुकृत्यो की ओर आकृष्ट करते हुए उनसे अपराधिया को कठोर दण्ड दिलाने का अनुरोध करते हैं।

एक राजदूत का असङ्गत प्रलापः—

समाचार पत्रों से यह जानकर हमे अत्यन्त खेद और आश्चर्य हुआ कि स्विटजरलैण्ड मे स्थित भारतीय राजदूत श्री धीरजलाल देसाई ने रोम के पोप के साथ बात चीत करते हुए इस आशय के शब्द कहे —

"महात्मा गान्धी से हमने परमात्मा की एक मात्र पूजा और धर्म की उच्चता व श्रेष्ठता का पाठ सीखा है। गान्धी जी की भांति हमारा भी यह विश्वास हो गया है कि यदि भगवद् गीता की समस्त प्रतियां जला दी जाए तो क्या भय! जब तक कि हम हजरत ईसा मसीह के पहाड़ी उपदेश से लाभ उठा सकते हैं।

श्री धीरजलाल देसाई ने यदि इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया तो उनको सिवाय प्रलाप तथा चाटु कारिता (खुशामद) के और कुछ नहीं कहा जा सकता। पूज्य महात्मा गान्धी जी ने कभी इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग न किया था और गीता के प्रति वे बड़ा आदर प्रकट करते तथा उसके कुछ श्लोको का तो प्रति दिन प्रार्थना सभाओं मे पाठ कराते थे। उनके साथ भी श्री देसाई ने घोर अन्याय किया है। भारतीय राजदूतो का विदेशो मे इस प्रकार अनुत्तरदायित्व पूर्ण, असङ्गत प्रलाप न केवल उन्हे भारतीय जनता की दृष्टि मे गिरा देगा प्रत्युत अन्य विदेशी विद्वान् भी जो गीता की शिक्षाओं को अत्युत्तम समझते है भारतीय राजदूत और उनको नियुक्त करने वाली भारतीय सरकार के प्रति हीन भावना रखने लगेंगे। अत श्री देसाई के इस असङ्गत और अनुत्तरदायित्व पूर्ण सभाषण की घोर निन्दा करते हुए जिससे समस्त आर्य जनता के हृदय को आघात पहुंचा है, हम भारत सरकार से अनुरोध करते है कि भविष्य मे राजदूतो की नियुक्ति मे वे बहुत अधिक सावधानी से काम ले और श्री देसाई को उचित भर्त्सना करें जिस से ऐसी घटनाओं के कारण भारत का अपमान न होने पाए।

श्री अरविन्द के नाम का नोबल पुरस्कार के लिए प्रस्ताव

हमे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि चाइलो की कवि सम्राज्ञा पर्लबक न जगद्विख्यात योगी, तत्वज्ञाना और जबराइल हिस्ट्रीला और अमरीका की कविसम्राज्ञी कवि श्री अरविन्द जी का (जिनके विषय मे श्री डा० इन्द्रसन जी एम ए पी एच डी का एक विचारपूर्ण लेख पाठक 'सार्वदेशिक' के इस अङ्क म पाठक अन्यत्र पाएगे) नाम १९५० के साहित्य मे सर्वोत्कृष्ट रचनार्थ नोबल पुरस्कार के लिए प्रस्तुत किया है। हम इस प्रस्ताव को सर्वथा उचित समझते है। श्री अरविन्द जी के प्राय सभी ग्रन्थो को पढने का सौभाग्य हमे प्राप्त हुआ है और हम निसकोच कह सकते हैं कि वे न केवल आध्यात्मिक अनुभूति की दृष्टि से बिना साहित्य की दृष्टि से भी अत्यन्त उच्च है। नोबल पुरस्कार भारतीयों मे से अभी तक केवल स्व० श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर (साहित्यार्थ) और श्री सी वी रामन को (विज्ञानार्थ) प्राप्त हो चुका है। यदि श्री अरविन्द जी को उनकी साहित्यिक उत्कृष्ट रचनाओ पर यह पुरस्कार दिया जाए तो यह न केवल उनका वैयक्तिक रूप से प्रत्युत आर्यावर्त का ही मान करना होगा। हमे आशा है नोबल पुरस्कार समिति एसा ही उचित निर्णय करेगी।

राष्ट्रभाषा का प्रश्न विचित्र स्थिति मे:—

गत ६, ७ अगस्त को अखिल भारतीय हिन्दीसाहित्य सम्मलन की ओर से देहली प्रांतीय हिन्दी साहित्यसम्मेलन के तत्वावधान मे कान्स्टीट्यूशन क्लब नई देहली मे जो राष्ट्रभाषा व्यवस्थापरिषत् का अधिवेशन हुआ और जिस मे बगाली, गुजराती, मराठी, उडिया, आसामी, नैपाली, कन्नड, तिलगू, मलयालम, तामिल, पजाबी, सिंधी, उर्दू, हिंदी आदि भाषाओं के सौ के लगभग प्रकाड पडितो ने राष्ट्रभाषा विषयक अपने विचार प्रकट करते हुए सर्वसम्मति से निश्चय किया कि—

"भारतीय सविधान मे भारतसङ्घ की राष्ट्रभाषा जिसकी लिपि देवनागरी होगी स्वीकृत की जाए।"

मद्रास विश्वविद्यालय के डा० कुन्हनराजा एम० ए० पी० एच० डी० (मलयालयम भाषा) ने यह प्रस्तावरखा और प्रयाग विश्वविद्यालय मे उर्दू फारसी विभाग के अध्यक्ष डा० सय्यद मुहम्मद हाफिज एम० ए० पी एच० डी० मद्रास विश्वविद्यालय के सस्कृत विभागाध्यक्ष डा०वी० राघवन (तामिल) प्रो० नीलकठ शास्त्री (तामिल) डा० गोडावर्मा एम० ए० पी० एच० डी (ट्रावनकोर विश्वविद्यालय) प्रो० चन्द्रहास एम० ए० महाराज कालेज अर्नाक्युलम्(मलयालम प्रो० नागप्पा एम० ए० (मेसूर विश्वविद्यालय कन्नड) आध्र विश्वविद्यालय के तिलगू प्रोफेसर श्री सोमयाजी, विजय वाडा के श्री० जी० बी० सुब्बाराव सम्पादक गोष्ठी (तिलगू) डा० सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय (बगाला) श्री सजनी कान्त दास मन्त्री बगीय साहित्य परिषत् कलकत्ता, उत्कल विश्वविद्यालय कटक के उडिया साहित्य के प्रोफेसर श्री आर्त वल्लभ महन्ती, प्रो० जगद्धर जेडू श्रीनगर (काश्मीरी) श्री यशवन्तराव दाते, श्री प० श्रीपाद दामोदर जी सातवलेकर और श्रीमती कमला बाई किबे (मराठी) श्री सूर्यविक्रम (नैपाली) श्री नीलमणि फूकन (आसामी) श्री गोहल सिंह चीफ जज भू० पू० भापसित

मणिपुर साहित्य परिषत् (मणिपुरी) स्वामी अमृतानन्द जी (नैपाली) आदि सुयोग्य महानुभावों ने अत्यन्त विद्वत्ता पूर्ण, युक्तियुक्त सार गर्भित भाषणो द्वारा उसका समर्थन किया जिस के पश्चात् सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। हमे उस परिषत् मे स्वागत समिति के सदस्य के रूपमे सम्मिलित होने और इन विद्वानो के सार गर्भित प्रभावशाली भाषणो को सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था अत हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि इन सब विद्वानो ने (जिन्हे अपने विचार प्रकट करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई थी) एकमत से संस्कृत निष्ठ हिन्दी और देव नागरी लिपि को ही राष्ट्र लिपि घोषित करने के योग्य पाया पर साथ ही सम्पूर्ण परिस्थित को ध्यान मे रखते हुए उन्होने दूसरे प्रस्ताव द्वारा यह भी निश्चय किया कि —

"यह राष्ट्र की प्रतिष्ठा के अनुरूप होगा कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अगरेजी के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग तुरन्त किया जाए और केन्द्रीय तथा अन्तर प्रान्तीय कार्यो मे अगरेजी के स्थान पर हिन्दी क्रमश किन्तु निश्चित रीति से प्रतिष्ठित की जाए परन्तु इस परिवर्तन कार्य मे १० वर्ष से अधिक समय न लगाया जाए।' इत्यादि

हमारे विचार मे तो यह १० वर्ष का समय भी अधिक था तथापि सर्वसम्मत निश्चय हो सके इसके लिये ऐसा समझौता करना ही उचित समझा गया था, हमे आशा थी कि सब प्रान्तीय भाषाओं के उच्च कोटि के धुरन्धर विद्वानो के इस सर्व समस्त निर्णय के पश्चात् (क्योकि इन विशेषत दाक्षिणात्यो के विरोध की ही प्राय चर्चा हिन्दी विरोधियो की ओर से की जाती थी, राष्ट्रभाषा विषयक समस्या का पूर्ण समाधान हो जाएगा और हमारे मान्य देशनेता भी अविलम्ब ऐसी घोषणा करने को उद्यत हो जाएगे किन्तु हमे यह जान कर दु ख हो रहा है कि अभी हमारी दास मनो वृत्ति बहुत कुछ पूर्ववत् बनी हुई है। अब मसविदा समिति ने जो प्रस्ताव इस सम्बन्ध मे बना कर कांग्रेस विधान परिषत दल के सन्मुख विचारार्थ रखा है (जिसपर इस टिप्पणी को २४ अगस्त को लिखते समय तक निर्णय नहीं हो पाया) वह अत्यन्त विचित्र तथा हमारे विचार मे तो अनक अशो मे अस्वीकरणीय है। उसके मुख्याश निम्न है।

(१) नागरी हिन्दी राष्ट्रभाषा होगी (२) १५ वर्ष तक सारा केंद्रीय, अत प्रांतीय तथा प्रांतो मे कानून निर्माण व आदेश सम्बंधी कार्य अगरेजी मे ही होता रहेगा (३) अंक वही प्रयुक्त किए जाएगे जो इस समय अगरेजी मे प्रयुक्त किये जाते हैं (४) प्रति ५ वे वर्ष एक कमीशन हिंदी की प्रगति पर रिपोर्ट देगा जिस पर ३० सदस्यो की पार्लियामेन्टरी कमेटी विचार करेगी (५) राज्य के निर्देशक सिद्धातो मे हिंदी की उन्नति और विकास के लिये कहने वाली धारा जोड़ दी जायगी (६) अध्यक्ष किसी कार्य विशेष के लिये १५ वर्ष से पूर्व भी हिंदी के प्रयोग का आदेश दे सकगा। (७) अध्यक्ष के आदेश पर प्रात को अपने पर्याप्त निवासियों की भाषा का भी द्वितीय प्रातीय राज-भाषा का स्थान देना पडेगा।"

इनमे से प्रथम अश कि 'नागरी हिंदी राष्ट्रभाषा होगी, प्रशसनीय और हर्ष जनक है किंतु आगे के अशों को पढने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि इसका वस्तुत मूल्य बहुत कम है हा, राज्य के निर्देशक सिद्धातो मे हिंदी की उन्नति और

।वक्‍स की प्रतिपादिका धारा को जोड देना अवश्य अभिनन्दनीय है। यद्यपि ज्ञात हुआ है कि मान्य प्रधानमन्त्री श्री प० जवाहरलाल जी इसको हटवाना चाहते है। शेप अनेक अश हमारी मानसिक दासता के ही परिचायक हैं। अगरेजी अको मे ही ऐसी कौनसी विशेषता है जो हिन्दी मे भी उनका प्रयोग आवश्यक समझा जाए। प्रति पचवे वर्ष कमीशन की नियुक्ति भी जैसे कि माननीय सरदार पटेल ने अपने लिखित सदेश मे बताया अनावश्यक है। पार्लियामेंट की ए स मति उस कार्य को समय २ पर कर सकती है। ५ वर्ष तक अगरेजी को ही राष्टभाषा के रूप मे स्वीकार करना दास मनोवृत्ति की परा काष्ठा है। उसके स्थान मे तो अधिक से अधिक १० वर्ष के भीतर जैसे कि सरदार पटेल ने भी कहा है। हिंदी का राजकीय कामो मे क्रमिक प्रवेश कराकर उसे वस्तुत अगरेजी का स्थान लेने योग्य बनाया जा सकता है। इसका अन्तिम अश तो अत्यत आक्षेप योग्य है जिसका तात्पर्य उर्दू को युक्तप्रातादि से पृष्ठद्वार से प्रवेश कराने का प्रतीत होता है। इस प्रकार की विघटक प्रवृत्तियो का समर्थन राष्ट्रीय भावना और एकता के लिये घातक सिद्ध होगा। जब युक्तप्रात, विहार, राजस्थान, मध्यभारत, मध्य-प्रात आदि मे हिंदी को राजभाषा घोषित किया जा चुका है तब अन्त प्रातीय पत्र व्यवहार एक विदेशी भाषा द्वारा करने के लिये उन्हे विवश करना कितना अनुचित है। अत हमारा सविधान परिषद् के सदस्यो से अनुरोध है कि वे इन आक्षेप योग्य अशो को प्रस्ताव मे से निकालने पर बल दे और सीधे शब्दो मे सस्कृतनिष्ठ हिंदी और देवनागरी लिपि को ही राष्ट्र भाषा और राष्ट्रलिपि के रूप मे घोषित कराए अन्यथा हमे निश्चय है कि जनता उनका बिल्कुल साथ न देगी और उनके प्रति असतोष बढता जायेगा। देश का नाम आर्यावर्त —

हम अन्यत्र प्रकाशित श्री शिवचन्द्र जी के इस विचार से सर्वथा सहमत है कि हमारे देश का सर्वोत्तम और प्राचीन नाम आर्यावर्त है और उसे ही स्वीकार कराने के लिये सब आर्यो को प्रबल आन्दोलन करना चाहिये। यह प्रसन्नता की बात है कि राष्ट्रीय महासभा के प्रधान डा० सीतारमैय्या ने भी देश के लिये आर्यावर्त और भाषा के लिये आर्य 'भाषा' के प्रयोग का समर्थन किया है।

—धर्मदेव विद्यावाचस्पति

शीर्षक है "On a certain Blindness in Human Beings" अर्थात मानव प्राणियों में एक अन्धापन के विषय पर"

अपनी पत्नी के प्रति व्यवहार में इस अन्धता का जैसा बुरा परिचय मिलता है वैसा शायद ही अन्यत्र मिल सके। बहुत से व्यक्ति दूसरों के प्रति व्यवहार में सौजन्य की साक्षात मूर्ति जान पड़ते हैं, परन्तु अपनी पत्नियों पर कुत्तों की नाईं भौंकते हैं। उनको यह ज्ञात होता प्रतीत नहीं होता कि पत्नी भी मानव प्राणी है और उसका भी कोई महत्त्व है। पत्नी का महत्व तुर्गनेव के हृदय से प्रच्छिन्न। ये महानुभाव साधारण व्यक्ति न थे। अपितु रूस के एक अत्यन्त प्रतिभावान उपन्यास कार थे जिनकी प्रतिभा का संसार भर में यशोगान होता था।

अपने हृदय के उद्गारों को वे इस प्रकार व्यक्त करते हैं —

I would give up all my genius and all my books if there were some woman somewhere who cared whether or not I came home late for dinner

अर्थात् यदि कहीं कोई ऐसी देवी हो जो इस बात का ध्यान रखा करे कि मैं खाना खाने घर पर देर में आता हूँ या समय पर तो उसके लिए मैं अपनी प्रतिभा और समस्त पुस्तकों का परित्याग कर सकता हूँ।

तुर्गनेव एकान्त प्रिय व्यक्ति थे। उनके इन शब्दों से यह प्रतिध्वनित हो रहा है कि जिन साधारण व्यक्तियों का गृहस्थ जीवन सुखमय है वे एकान्त में रहने वाले प्रतिभाशाली व्यक्तियों से अधिक सुखी और शान्त होते हैं। यदि ऐसे साधारण व्यक्ति की पत्नी हर स्थिति में सन्तुष्ट रहे तो समझो वह पुरुष के लिए एक रत्न है।

जो लोग स्त्री-स्वभाव को भली भाँति जानते होते हैं यदि वे पत्नी की प्रबन्ध पटुता की उसके मुँह पर प्रशंसा कर दे तो वे उससे एक २ पाई निकलवा लेते हैं। यदि वे उसको यह कह दे कि अमुक समय उसने जो साड़ी पहनी थी उसे पहन कर वह बहुत सुन्दर लगती है तो हो नही सकता पत्नी नई साड़ी की फरमाइश कर सके। मनुष्य यह जानता है कि उसके प्रेम का एक चुम्बन पत्नी को अन्धा और स्नेहालिंगन मूक बना सकता है।

इसी प्रकार जो पत्नी पुरुष-स्वभाव की बारीकियों से परिचित होती है वह पुरुष के उपर्युक्त व्यवहारों को खूब समझती है। वह उस पर क्रोध करना वा उससे घृणा करना नहीं जानती क्योंकि यदि वह ऐसा करेगी तो घर की ही हानि होगी जो सुपत्नी के लिए असह्य होगा।

अतः गृहस्थ जीवन की सुख वृद्धि के लिए चौथा सुनहरा नियम यह है कि सभ्य और शिष्ट बनो।

———

आर्य सृष्टिक्रम की वैज्ञानिकता

(ले —आचार्य प गमानन्द शास्त्री महोपदेशक पटना

मामा न । लोगा की पसा धारणा ह कि सब म सारिक पदार्थ पृथ्वी जल तेज वायु आकाश इन पाच तत्वा स बन हुए ह और शास्त्रकार भी एसा मानते ह ? वतमान वज्ञानिक इनको तत्व नहा मानते। इसका वास्तविक रहस्य क्या ह यह जानने के लिये विद्वान लेखक का लेख मनन करने योग्य ह। सुतरा इस पर विचार कर।

—सम्पादक मा

संसार की प्रत्येक जाति के धार्मिक ग्रन्थों में सृष्टि उत्पत्ति का क्रम दर्शाया गया है किन्तु वर्तमान युग म वह केवल बुढिया दादी की ही किस्सा रह गया है। आर्य शास्त्र म भी सृष्टि का क्रम निरूपित किया गया है जिसे देखकर आधुनिक जगत् आश्चर्य चकित ह। पहले लोगों ने इस भी मनघडन्त कहा किन्तु ज्यों ज्यों समय बीतता जा रहा है इसकी सार्थकता सिद्ध होती जा रही ह। सृष्टिका क्रम ही नहीं अपितु इसकी अवधि भी आधुनिक विज्ञान स सच्ची प्रतीत हो रही ह। अब तक कहते हैं कि इस सृष्टि को हुए दो अरब वर्ष के करीब हो गया है।

यह निर्णय बहुत विवाद के पश्चात प्राय सर्व सम्मत हुआ ह। अन्यथा भिन्न भिन्न विद्वानों ने समय २ पर अलग २ अवधि का निरूपण किया जो काल क्रम म गलत सिद्ध होगया। लेकिन आर्य ऋषियों ने एक ही बार उसका निर्णय किया जिसे दैनिक सङ्कल्प में रखा कि —

तत्र प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीय परार्धे श्वेतवराह कल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे एक विंशतितमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे

इत्यादि जिसे प्रत्येक आर्य पुरोहित पढता है। महा प० राहुलसांकृत्यायन ने लिखा है कि हिन्दुओं की यह गणना यद्यपि सत्य है तथापि इसका आधार वैज्ञानिक नहीं अपितु अटकल पच्चू है। (विश्व की रूपरेखा)

लेकिन राहुल जी का कथन सत्य नहीं प्रतीत होता है। आर्यों का सृष्टिकाल निर्णय अटकल पच्चू नहीं है अपितु व्यवस्थित और वैज्ञानिक है। उन्होंने सूक्ष्मकाल (त्रुटि) प्राण से लेकर स्थूलकाल युगों का निरूपण बहुत ही बुद्धिपूर्वक किया है। हमको इस लघुकाय लेख म काल पर विचार नहीं करना है यहां तो सृष्टि क्रम का निरूपण करना है। तैत्तिरीय उपनिषद म लिखा है —

तस्माद्वा एतस्मात् आकाशः सभृतः आकाशाद् वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी

इत्यादि। अर्थात् सर्व प्रथम उस आदि शक्ति परमात्मा की इच्छा से आकाश आकाश से वायु वायु से अग्नि, अग्नि स आप् और आप् म

* पहले—प्रोफसर नाथचाक—३० करोड, प्रोफेसर रेड ७ करोड प्रोफेसर हक्सेले एक अरब वर्ष, आधुनिक विज्ञानवेत्ता दो अरब ६ करोड इत्यादि।

पृथिवि उत्पन्न हुई। लगभग उसी तरह का निरूपण सांख्या ने भी किया है। प्राय प्रत्येक आर्य शास्त्र इसी का निरूपण करते हैं। तुलसीकृत रामायण में भी लिखा है कि—

> चिति जल, पावक गगन, समीरा।
> पचतत्व यह रचित शरीरा॥

यहां क्रम तो नहीं बताया गया है लेकिन इन्हें ही तत्व माना गया है।

आधुनिक वैज्ञानिक इस अतथ्य बताते हैं। उनका कहना है कि वायु, जल, अग्नि मौलिक पदार्थ नहीं अपितु सायोगिक है जैसा—आक्सीजन और नाईट्रोजन के सयोग से वायु और हाईड्रोजन और आक्सीजन के सयोग मे जल पैदा होता है। इसलिये ये सृष्टि के मूलतत्व नहीं हो सकते, क्याकि मूलतत्व वही हो सकता है जिसकी स्वतन्त्र सत्ता हो।

तैत्तिरीयोपनिषद का भी क्रम ऐसा ही है अत स्वभावत यह आक्षेप उस पर भी होना है। आधुनिक टीकाकारों ने इधर ध्यान नहीं दिया है उन्होंने केवल शब्दों का ही अनुवाद किया है, वह भी अनुवाद अव्यवस्थित प्रतीत होता है। यहां पर विचारना चाहिये कि इस उपनिषद् वाक्य का वास्तविक अर्थ क्या हुआ।

इसके लिये वैदिक शब्दों पर ध्यान देना होगा। यह सत्य है कि आज वैदिक परम्परा नष्ट हो गयी है। यह परम्परा आज से नहीं ऋषि दयानन्द के शब्दों में ५ हजार वर्ष पहले से ही बिगडी हुई है। महर्षि पतञ्जलि कहते है —

इह पुरा कल्पे ब्राह्मणा कृतोपनयना आचार्य कुल गत्वा व्याकरण स्म अधीयते तेभ्यो नादानु प्रदानज्ञेभ्यो वैदिका शब्दा उपदिश्यन्ते तदद्यत्व नहि, इदानीं त्वरितमव वेद वक्तारो भवन्ति। वेदान्नो वैदिका शब्दा सिद्धा लोकाच्च लौकिका तस्मादनर्थक व्याकरणम् इति तेभ्यो विप्रतिपन्न बुद्धिभ्य सुहृद्भूत्वा आचार्य इद शास्त्र मन्वाचष्टे इमानि प्रयोजनानि इति अध्यय व्याकरणम्'।

अर्थात्—ऋषि कहते है कि पहले के जमाने में ब्रह्मचारी उपनीत होकर गुरुकुल मे पढने के लिये जाते थे आचार्य उन्हें शब्द शास्त्र का ज्ञान करा कर तब वेदों की शिक्षा देते थे, लेकिन इस समय तो जल्दी ही वेद के वक्ता हो जाते है। ऋषि ने यह वाक्य आज से ?१ हजार वर्ष पहले लिखा था। किन्तु आज तो आकाश और पाताल का अन्तर हो गया है। इस समय तो किसी प्रकार का भी वेदो का अध्ययन अध्यापन लुप्त प्राय है। ऐसी स्थिति मे वेदो के अर्थ करने के लिये निरुक्त का ही आश्रय लेना पडेगा कि—ऋषियो के चले जाने पर तर्क ही ऋषि का कार्य करेगा। अत तर्क का आश्रय लेकर वैदिक वाक्यों का अर्थ करना पडेगा।

आधुनिक वैज्ञानिक कहते है कि हम परमाणुओं का भी विभाजन कर सकते है। जैसा वैशेषिको का सिद्धान्त है कि परमाणु गुण वाले है (यूनानी परमाणुवादी नहीं) वैज्ञानिक भी कहते है। हां, परमाणुओं में भी गुण होता है जैसे—हाईड्रोजन, आक्सीजन के परमाणु अलग अलग गुण मात्रा वाले है। वैज्ञानिको के विभाजन के बाद प्रोटोन और इलक्ट्रोन का पता चला उन्होंने कहा कि ऋणात्मक और धनात्मक विद्युत के सयोग से परमाणु टिके हुये है। मूल

पदार्थों के परमाणुओं का अस्तित्व भी इलक्ट्रोन की संख्या पर ही अवलम्बित है।

तब पहले यही निश्चय हुआ कि इलक्ट्रोन और प्रोटोन ही सृष्टि के हेतु है। किन्तु वैज्ञानिकों को यह बात खटकी। उन्होंने कहा कि सृष्टि की व्याख्या इन्हीं दोनों से नहीं हो सकती अतः इसके अनन्तर कुछ और होना चाहिये इसलिये उन्होंने न्यूट्रोन का पता चलाया। तब यह निश्चय हुआ कि सृष्टि के कारण इलक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन है जिनसे परमाणु बनते हैं। कपिल ऋषि भी तीन कारण लिखते हैं—सत्वगुण (प्रोटोन) रजोगुण (इलक्ट्रोन) और तमोगुण (न्यूट्रोन) है, ये सृष्टि की अवस्था में सम थे। आकाश की कोई पृथक सत्ता नहीं उसे हम (Ether) ईथर कह सकते है। शास्त्रकार कहते हैं कि आकाश से वायु उत्पन्न हुआ। वायु का अर्थ हवा नहीं अपितु 'गति' अर्थ होता है। (वा गति गन्धनयो) धातु से वायु शब्द निष्पन्न होता है। योगी अरविन्द लिखते है—

It is Vedic epithet of the God Vayu who representing the divine Principle in the life energy प्राण (Prana) Extends himself in Matter and vivifies its forms

Isha Upanishad

यहाँ पर योगी अरविन्द के वाक्य को उद्धृत करने का तात्पर्य यह है कि—वैदिक वायु शब्द का अर्थ केवल हवा नहीं है।

पहले पहल जो (Vital energy) गति हुई उसी का नाम वायु है। वायु से अग्नि की उत्पत्ति हुई, वहां इलक्ट्रोन (विद्युत् कण) से संबोधित किया गया है। इलक्ट्रोन के कणों की न्यूनता और अधिकता से तत्व (Elements) की उत्पत्ति हुई जो संख्या में १०० है। इन्हीं को आप् कहा गया है। आप् का अर्थ व्यापक होता है लेकिन लौकिक संस्कृत में इसका अर्थ जल होता है। वेद में आप् का अर्थ केवल जल ही नहीं होता है। शत पथ ब्राह्मण मे लिखा 'आपो ह इदमग्रे सलिलम' यहां पर आप् को सलिल अवस्था मे बिखरा हुआ कहा गया है। सरति रसम् इति सलिलम्' कहा गया है। अगर आप् का अर्थ जल ही होता तो सलिल क्यों कहा गया। श्री अरविन्द घोष लिखते है—

The difficulty only arises because the true Vedic sense of the word had been forgotten and it came to be taken as referring to the fourth of the five elemental states of Matter the liquid. Such a reference would be entirely irrelevant to context. But the waters otherwise called the seven stream or the seven fostering cows are the Vedic Symbol for the seven cosmic Principles and their activities

Isha Upanishad

यहां पर श्री अरविन्द घोष यह स्वीकार करते है कि आप शब्द का वैदिक अर्थ लोगों को विदित नहीं है। वे भी इसका दूसरा ही अर्थ करते है जो स्थानाभाव से यहां उल्लेखनीय नहीं है। तात्पर्य यह है कि 'आप' का अर्थ (Elements) तत्व हुआ। उसी आप् से पृथिवी (प्रथनात् पृथिवी उच्यते) अर्थात् विस्तारमय जगत् की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार ऋषियों का क्रम बुद्धिपूर्वक ठहरता है, जिसे हम अज्ञानता में नहीं जान पाते है। इसके लिये हमें पर्याप्त अनुसंधान करना होगा। मैंने थोडा सा केवल निदर्शन किया है। विद्वान् पाठक इस पर पूर्ण विचार कर अपनी सम्मति प्रकाशित करेंगे।

आर्य वीर की वाणी से—

बढ़ आर्य वीर ! बढ़ आर्य वीर

रचयिता—श्री भीष्मसिंह चौहान "भीष्म" "साहित्यालंकार"
नगर नायक आर्य वीर दल, ग्वालियर-नगर।

पथभ्रष्ट युवक तर समक्ष
साम्राज्यवाद का लिये पक्ष।
करके निश दिन बहु गुप्त कार्य,
कर रहे नष्ट निज देश आर्य।
अविलम्ब चलाओ ज्ञान-तीर
बढ़ आर्य वीर ! बढ़ आर्य वीर।

अंतर मे इनके आज व्याप्त,
होगी नहि निज संस्कृति प्राप्त।
ऋषि थे साधारण एक व्यक्ति,
थी उनमे कुछ भी नहीं शक्ति।
हम एक मात्र है आज वीर
बढ़ आर्य वीर ! बढ़ आर्य वीर।

यह एक तंत्र के परिचायक
जनता के बनते अधिनायक।
अरि ने खेले जब कृत्य-गुप्त
हो गई अचानक शक्ति लुप्त।
लखि यह नेत्रों स बहा नीर,
बढ़ आर्य वीर ! बढ़ आर्य-वीर।

अतएव वीर ! तुम रहो सजग
पीछे न हटाना यह दृढ पग।
जन-जन की तुम पर आज दृष्टि
होगी तुमसे निर्माण सृष्टि।
प्रतिबन्ध रहित हो आर्य वीर,
बढ़ आर्य वीर। बढ़ आर्य वीर।

आर्य्य समाज का साहित्यिक प्रोग्राम

लेखक—श्री प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

मैं बहुत दिनो से आर्य्य सामाजिक जगत का ध्यान साहित्य की पूर्ति की ओर आकर्षित करता आ रहा हूँ। परन्तु उसमे कुछ सफलता नहीं हुई है। सभाओ के पास तो और कामो की इतनी भरमार है कि साहित्य के मुख्य काम की ओर ध्यान देना ही कठिन है। व्यक्तियो मे बहुत से प्रशसनीय काम कर रहे है। परन्तु उनको साधन नहीं मिलते। जो कुछ किया जा रहा है वह योजना-बद्ध न होने से अधिक उपयोगी नहीं हो रहा है। अत मैं एक विस्तृत योजना बनाकर प्रस्तुत कर रहा हूँ। जो इसको अच्छी समझे वे अपना लेवे।

मैं आर्य्य-समाज के उच्च साहित्य के तीन विभाग करना चाहता हूँ —

(१) आर्षग्रन्थो की शुद्धि।

(२) ऋषि दयानन्द के मतव्यो के विषय मे हिन्दी मे ग्रन्थ।

(३) विदेशोपयोगी साहित्य।

१:—आर्षग्रन्थो की शुद्धि

आर्षग्रन्थो का एक बहुत बडा जगड्वाल है। हमारे लिये यही समझना कठिन है कि कौन प्राचीन ग्रन्थ आर्ष है कौन अनार्ष। यह काम रिसर्च का है और होता रहेगा। मैं इस लेख मे रिसर्च के सम्बन्ध मे कुछ नहीं कहना चाहता। तात्कालिक अत्यन्त आवश्यकता है।

ऋषि दयानन्द ने साहस करके सस्कृत साहित्य रूपी बन के झाड-झङ्कार को साफ किया हमारे विद्वान भी कुछ साहस से काम ले और और आवश्यक ग्रन्थो का परिशोधन करे।

(१) गृह्यमत्रो का निर्दयता के साथ सशोधन होना चाहिये और शीघ्र ही कुछ प्रसिद्ध यज्ञो और इष्टियो की पद्धति बना देनी चाहिये। यह नहीं सोचना चाहिये कि जब कोई ऋषि उत्पन्न होगा तो वह बनायेगा।

(२) मनुस्मृति रामायण और महाभारत का परिशोधित रूप प्रकाशित होना चाहिये। मैंने मनुस्मृतिका एक ऐसा सस्करण अपनी बुद्धिके अनुसार छापा था। मै महाभारत और रामायण का भी ऐसा सस्करण चाहता था। परन्तु मै अब इस काम को न कर सकूँगा। कोई और सज्जन इसको अपने हाथ मे ले। ये पुस्तके चार सौ पाँचसौ पृष्ठ से अधिक न हो। आख्यायिकाये छोड़ दी जावे। पौराणिकपना बिल्कुल न रहे। ऐसा प्रतीत होना चाहिये कि ये इतिहास की पुस्तके हैं और गप्पाष्टक से बिल्कुल साफ है। इस समय ये पुस्तके चू चू का मुरब्बा बनी हुई हैं।

महाभारत के वे अश जिन को नीति कहते है, इतिहास से अलग करके छापे जावे। इस विभाग मे काफी

२:—ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ

सत्यार्थप्रकाश को शोधकर उसके प्रत्येक समुल्लास के पैराग्राफ अलग कर देने चाहिये। विराम या पेराग्राफ लगाने का यह अर्थ नहीं है कि उनके ग्रन्थों में काट छांट की जा रही हो। यह अति आवश्यक है।

ऋषि के ५१ मन्तव्यों की व्याख्या बनाकर लगभग पच्चास ग्रन्थ हर मन्तव्य पर नई शैली से लिखने चाहियें जिससे वर्तमान पठित जनता उनको समझ सके और उनकी ओर आकर्षित हो सके। यह काम भिन्न भिन्न विद्वान अलग अलग बांट लें। यदि मुझको कहा जायगा तो मैं रूप रेखा बना दूंगा और यथाशक्ति सम्पादन भी कर सकूंगा। यह ग्रन्थ ३०० पृष्ठ के लगभग के होने चाहिये। इन ग्रन्थों में आकाश पाताल की बातें न हों सर्वसाधारण के उपयोगी जमीन की बातें होनी चाहिये।

लगभग बीस ऐसे ग्रन्थ बनने चाहिये जिन में ऋषि के सम्मानित सद्‌गुणों के ग्रहण करने में लोगों को जो व्यावहारिक कठिनाइयां होतीं हैं उनपर प्रकाश डाला जाय। इतना कहना काफी नहीं है कि तुम ब्रह्मचारी रहो। साधारण तया मनुष्य को व्यभिचार से युद्ध करने में क्या कठिनाइयां आती है उन पर विचार करके पाठकों की सहायता करनी चाहिये।

३:—विदेशोपयोगी साहित्य

अंगरेज चले गये परन्तु अंगरेजी का महत्व अभी पचास साल तक रहेगा। कम से कम बीस साल तो अवश्य ही। अतः लिये अंगरेजी की पूर्ण सहायता लेनी चाहिये।

अंग्रेजी का एक सत्यार्थप्रकाश का संस्करण उस रूप में होना चाहिये जैसा बाइबिल का है। यह अमेरिका में छापा जाय तो अच्छा होगा। मैंने जो अंगरेजी का अनुवाद छापा है उसमें पैराग्राफ तो कर दिये हैं परन्तु इन्डेक्स नहीं बना सका। आपने देखा होगा कि बाइबिल के हाशिये पर ऐसे संकेत रहते हैं। यह बनाया जा सकता है।

पाश्चात्य देशों की अभिरुचि और मनोवृत्ति को ध्यान में रखकर वैदिक सिद्धान्तों पर नये ढंग की पचास पुस्तकें तैयार करानी चाहिये। या तो आर्य विद्वान स्वयं करें। या अच्छे अंग्रेजी लेखकों की सेवाओं को क्रय करें, पुस्तकों का फ्रेंच, जर्मन और रूसी भाषा में भी अनुवाद होना चाहिये।

भारत की नई स्वतन्त्रता के कारण दिल्ली में अन्यान्य देशों के लोग आते रहते हैं। वे यह जानना चाहते हैं कि भारतीय संस्कृति क्या है। अतः इस विषय पर दो एक अच्छी किताबें होनी चाहियें। लखनऊ, पटना, कलकत्ता, दिल्ली, जालन्धर, नागपुर, मद्रास तथा बम्बई की आर्यसमाज को चाहिये कि वे अपने पास से पैसे खर्च करके अपने स्थानिक धारासभाओं के सदस्यों तथा राजदूतों तक इनकी कापियां पहुँचा देवें।

कुछ व्यक्ति भी इस काम में इस प्रकार सहायता दे सकते हैं कि वे या तो स्वयं पुस्तक खरीद कर किसी एक या दो व्यक्तियों तक पहुँचा देवें। या सार्वदेशिक सभा में पुस्तक की

उनकी ओर से उस पुस्तक को किसी मुख्य व्यक्ति को समर्पण कर देवे। वैदिकधर्म मे प्रचार का यह सबसे अच्छा साधन होगा।

हर एक आर्य्य भाई या बहिन को चाहिये कि अपनी शक्ति के अनुसार छोटी या बडी कोई पुस्तक खरीद करके किसी दूसरे व्यक्ति को भेट कर देवे।

साहित्य के विषय मे पार्टीबाजी या धडे बन्दी से काम नहीं लेना चाहिये और न साहित्य को अपनी पार्टी या अपनी सस्था की उन्नति का संकुचित साधन बनाना चाहिये। साहित्यकार सब एक हैं चाहे वे किसी पार्टी के क्यों न हों। भिन्न भिन्न सस्थाओ के पास साहित्य के लिये यदि कुछ धन हो तो कोई सगठित उपयोग होना चाहिये। आपाधापी नहीं होनी चाहिये।

—※—

—※—

संन्यास पूर्ण वैदिक है

(लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक)

आजकल आर्य जगत् मे वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम की बडी अवहेलना की जा रही है और वह आर्यसमाज के कुछ प्रमुख व्यक्तियो द्वारा कोई वानप्रस्थ के विरुद्ध आन्दोलन करते है कि वानप्रस्थ आवश्यक नही है और कोई सन्यास को अवैदिक बतलाते हैं। ऐसे सज्जन तो यहा तक आन्दोलन करते देखे गये कि सन्यास के चिह्न कमडलु काषाय वस्त्र आदि शङ्कराचार्य के समय से चले, इतिहास में मे सन्यासी का नाम नहीं, वेद मे सन्यास का विधान नहीं यहा सन्यास या सन्यासी शब्द नहीं है इत्यादि प्रचार किया जा रहा है। यह हो सकता है ऐसे महानुभाव वानप्रस्थ और सन्यास की ओर चलने मे अपने को असमर्थ समझते हो परन्तु उक्त सिद्धान्त की अवहेलना रूप प्रचार कुछ आर्यसमाज के प्रमुख व्यक्तियो द्वारा होना सर्वथा अवाञ्छनीय और अनुचित है। अस्तु। हमे इस लेख मे केवल सन्यास के सम्बन्ध मे कहना है। सन्यास के सम्बन्ध मे पूर्वपक्ष के प्रश्न या आक्षेप है जो कि पुन क्रमश नीचे दर्शाए जाते है।

पूर्वपक्ष—

१—कमडलु, काषाय वस्त्र (गेरुए वस्त्र) मुडन आदि सन्यास के चिह्न शङ्कराचार्य के समय से चले, पुरातन नही है।

२—इतिहास मे सन्यासी का नाम नहीं आता पहिले सन्यासी नही होते थे।

३—वेद मे सन्यास का विधान नहीं क्योकि वहा सन्यास या सन्यासी शब्द नहीं अत सन्यास अवैदिक है।

विवेचन—

१—"कमडलु पात्र, काषाय वस्त्र मुडन आदि सन्यास के चिह्न शङ्कराचार्य के समय से चले पुरातन नहीं हैं" यह कथन असत्य है कारण कि मनुस्मृति आदि प्राचीन धर्म शास्त्रो मे इन चिह्नो का विधान किया गया है देखिये—

अलाबु दारु पात्र चमृण्मय वैदल तथा।
एतानि यतिपात्राणि मनु स्वायम्भुवोऽब्रवीत्॥
(मनु० अ० ६।५४

अर्थात्—तुम्बी, काष्ठपात्र, मिट्टी का या बास का बना पात्र सन्यासी का होना चाहिये।

तथा—

कपाल वृक्षमूलानि कुचैलमसहायता।
(मनु० अ० ६।४४)

यहा कपाल अर्थात्—खप्पर भी सन्यासी का पात्र बतलाया। है

और भी

क्लृप्तकेश नखश्मश्रु पात्री दडी कुसुम्भवान्।
(मनु० अ ६।५२)

अर्थात्—सन्यासी केश कटाए रहे मुडन कराए रहे, कमडलु आदि विशेष पात्र दड और काषाय वस्त्र धारण करे †

† इतिहास मे राज व्यक्तियो द्वारा कारण वशात् साधु अवस्था व्यतीत करते समय काषाय वस्त्र धारण करने का वर्णन आता है जैसे नल के वियोग से दमयन्ती ने काषाय वस्त्र धारण किया था "तत काषायवसना जटिल मलपङ्किनी, दमयन्ती महाराज बाहुक वाक्य मब्रवीत।
(महाभारत वन पर्व नलोपा० अ० ४४।६)

बौधायन धर्मसूत्र मे भी कहा है—

न चात ऊर्ध्वं शुक्ल वासो धारयेत्।

(बौधायन धर्म० २।१०।३६)

अर्थात्—सन्यास ले लेने पर पुन शुक्ल श्वेत वस्त्र न धारण करे उक्त रगे वस्त्र ही धारण करे।

१—'पहिले सन्यासी नही होते थे क्योकि इतिहास मे सन्यासी का नाम नही आता" इतिहास म सन्यासी का नाम न आने से पहिले सन्यासी नहीं होते थे यह कल्पना करना ठीक नहीं कारण कि इतिहास तो राजाओं क हुआ करते है सन्यासियो के नहीं, पुन उनके नाम आने का बिना विशेष घटना के क्या प्रसङ्ग।

(ख) याज्ञवल्क्य के सन्यासग्रहण की चर्चा बृहदारण्यकोपनिषद् मे विद्यमान है ही "मैत्रेयीति होवाच याज्ञवल्क्य प्रव्रजिष्यन् वा अरेऽहमस्मात्स्थानादस्मि हन्त तेऽनया कात्यायन्यान्त करवाणीति"

(बृहदारण्यको० ६।५।२)

याज्ञवल्क्य न मत्रेयी से कहा कि मत्रेयी मै सन्यास लेने वाला हू तेरा इस कात्यायनी से सम्पत्ति सम्बन्धी बटवारा करदू' उक्त वचन म प्रव्रजिष्यन शब्द "यदहरेव विरजेत् तदहरेव प्रव्रजद् वनाद्वा गृहाद्वा ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत्" इस ब्राह्मण वचन मे दिए 'प्रव्रजेत्' के समान है तथा मनुस्मृति के सन्यास विधान प्रकरण मे आए 'प्रव्रजन् प्रव्रजेत्' 'प्रव्रजति' शब्दों से तुलना रखता है—

भिक्षाबलि परिश्रान्त प्रव्रजन् प्रेत्य वर्धते।
आत्मन्यग्नीन् समारोप्य ब्राह्मण प्रव्रजेद्गृहात्।
यो दत्त्वा सर्वभूतेभ्य प्रव्रजत्यभय गृहात्।

(मनु० अ० ६।३४ ३८ ३६)

(ग) वादी की कल्पना है पहिले सन्यासी नहीं होते थे परन्तु महाभाष्यव्यकरण से तो स्त्रिया भी सन्यासिनी हुआ करती थीं यह सिद्ध होता है, वहा कहा है

शङ्करा नाम प्रव्राजिका आसीत

(महा भाष्य० ३।२।१४)

शङ्करा नाम की सन्यासिनी थी।

(घ) भगवद्गीता महाभारत इतिहास का अङ्ग है उस मे सन्यास का वर्णन आता है— सन्यासेनाधिगच्छति।

(भगवद्गीता अ १८ ४६

(ङ) और फिर इतिहास धर्मशास्त्र नहीं होता है जो उस मे सन्यासी का नाम आना चाहिए। जबकि धर्मशास्त्र मे सन्यास का विधान है तब यह कल्पना करना कि सन्यासी नहीं होते थे नितान्त अनुचित है। मनु धर्मशास्त्र और बौधायन धर्मशास्त्र के प्रमाण पीछे दिए जा चुके है। ब्राह्मण ग्रन्थों मे सन्यास का विधान है ही

'यदहरेव विरजेत तदहरेव प्रव्रजेद वनाद्वा गृहाद्वा ब्रह्मचर्यादेव वा प्रव्रजेत्'

अन्य प्रमाण आगे भी आने वाले है।

३—"वेद मे सन्यास का विधान नही क्योकि वहा सन्यास या सन्यासी शब्द नहीं अत सन्यास अवैदिक है" यह कथन भी यथार्थ नहीं है। जबकि हम आर्यसमाजियों का आदर्श आचार्य ऋषि दयानन्द है। वह संन्यास का विधान करता है, और उसे वैदिक बतलाता है, देखिये ऋषि के निम्न वचन।

सत्यार्थप्रकाश मे—

"सन्यास लेवे और वेदों मे भी (ब्राह्मणस्य विजानत) इत्यादि पदों से सन्यास का विधान है"

(सत्यार्थप्रकाश पचम समु

वेदभाष्य मे—

(अमाम) विद्या विज्ञान योग व्यायिनाम्
(यतानाम्) सन्यासिनाम दयानन्द
ऋ० १।५८।६)

(ग) यदि कोई यह कहे कि दयानन्द की बात नही मानते वेद म ही दिखलाओ सन्यास का विधान। ऐसे महानुभावो को भी हम बतलाना चाहते है कि वद म सन्यासी का पर्याय यति शब्द और सन्यासवृत्ति का वर्णन तो आया है देखिये—

अपामर्थं यतीना ब्रह्मा भवति सारथि
(ऋ १।१५८।६)

यहा सन्यासी का पर्याय यति शब्द मन्त्र मे स्पष्ट है, सन्यासी को यति कहते है अब यह देखे—

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा।
(मनु० अ० ६।८७)

यहा मनु ने आश्रमों का क्रमश वर्णन करते हुए सन्यासी के स्थान मे यति शब्द रखा है। इसी प्रकार का कालाग्निरुद्रोपनिषद् मे भी कहा है—

ब्रह्मचारी गृहस्थो वानप्रस्थो यतिर्वा।
(कालाग्निरुद्रोप० ७)

तथा—

वानप्रस्थशतमेकेन यतिना तत्समम्।
(नृसिंहपूर्वतापन्युपनिषद ५।१)

सो वानप्रस्थ के समान एक सन्यासी है यह दिखलाने को सन्यासी के स्थान मे यति शब्द प्रयुक्त है। इस प्रकार सन्यासी का पर्याय यति शब्द होने और उसके वेद मे आ जाने से सन्यास का विधान सिद्ध हुआ†।

† यदि कोई महानुभाव यह कहने लगे कि सन्यासी का पर्याय 'यति' शब्द वेद मे आया सन्यासी शब्द क्यो नहीं आया? इसके उत्तर म हमे यह कहना है चतुर्थाश्रमी (सन्यासी) को वेद की भाषा म 'यति' कहते है। केवल वेद ही मे नहीं किन्तु मनुस्मृति जैसे प्राचीन धर्मशास्त्र म भी चतुर्थाश्रमी (सन्यासी) को विशेषत 'यति' नाम से कहा है, वहा सन्यास विधान प्रकरण म चतुर्थाश्रमी को एक स्थान पर भिक्षु और छ स्थानों पर यति नाम दिया है, सन्यासी नाम तो एक बार भी वहा नहीं आया। उक्त सन्यास प्रकरण मे मनु ने 'परिव्रजेत्, सन्यसेत्' क्रियाओ का प्रयोग किया है 'परिव्रजेत्' क्रिया को को लकर चतुर्थाश्रमी का जैसे परिव्राजक नाम "मस्करमस्करिणौ वेणु परिव्राजकयो" (अष्टा० ६।१।१५४) हुआ एवं 'सन्यसत्' क्रिया को लकर सन्यासी नाम भी दिया जासकता है परन्तु चतुर्थाश्रमी का परिव्राजक या सन्यासी नाम आंशिक नाम है मौलिक नाम 'यति' ही है यह मनु के शिष्टाचार से स्पष्ट होता है। उसके पश्चात् उपनिषदो मे अधिक करके तो वही मौलिक नाम 'यति' आता है हा किसी किसी उपनिषद् मे आंशिक नाम 'सन्यासी' भी आता है—

सन्यासी योगी चात्मयाजी च। (मैत्र्युपनिषद ६।१०)

उक्त उपनिषद् का काल आज से लगभग सोलह सहस्र वर्ष पूर्व का है, उस समय का उत्तरायण दैत्र मघा नक्षत्र से धनिष्ठा नक्षत्र के अर्द्ध भाग तक बतलाया है जिसका समय आज से १६ सहस्र वर्ष पूर्व होता है विशेष विवरण देखो हमारी "वैदिक ज्योतिष शास्त्र' पुस्तक क ध्रुव प्रकरण मे पुन भगवद्गीता मे सन्यासी नाम आया। पश्चात् चिह्नो को लकर चतुर्थाश्रमी को अन्य साहित्य मे 'भ डी द डी' आदि अवर कोटि के आंशिक नाम भी दिए गए। परन्त

और भी लीजिए वेद मे सन्यासवृत्ति का वर्णन—

पित्वो भिक्षेत वयुनानि विद्वानासाविवास-न्नदितिमुरुष्येत् ।

(ऋ० १।१५२।६)

मन्त्र मे कहा है कि "अदिति अर्थात् मुक्ति को जो प्राप्त करना चाहे वह ऐसा ज्ञान-विज्ञानों वेदशास्त्रो को जानने वाला विद्वान् 'पित्व' अन्न की भिक्षा करे।' विद्वान् होकर भिक्षा करना सन्यासी का काम है सन्यास वृत्ति है। अब यह देखे—

वृत्ते शराव सम्पाते भिक्षा नित्य यतिश्चरेत्। (मनु० अ० ६,५६

यतयो हि भिक्षार्थं ग्राम प्रविशन्ति ।

(अरण्योपनिषद् ५)

यादृच्छिको भवेद् भिक्षु (परमहसो० ३)

यतिर्यादृच्छिको भवेत्

(गौडपादीयकारिका २)

उक्त मनु आदि के वचनों मे भिक्षा करना यति को कहा है सन्यासी को यति कहते हैं यह भी अनेक प्रमाणों से बताया जा चुका है तब उपर्युक्त "पित्वो भिक्षेत वयुनानि विद्वान्' वेद मन्त्र मे भिक्षा वृत्ति का विधान सन्यासी का विधान है अत वेद मे संन्यास सिद्ध हुआ एवं सन्यास वैदिक है अवैदिक नहीं। अब अन्त मे ऐसे वेद मन्त्र को प्रस्तुत करते हैं जिसमे चारों आश्रमों का सङ्केत मिलता है—

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभाया यदिन्द्रिये ।

यदेनश्चकृमा वय तदववयजामहे ॥

(यजु० ३।४५)

इस मत्र मे ग्रामे, अरण्ये, सभायाम्, इन्द्रिये, मे प्रत्येक के साथ यत् शब्द पृथक् २ होने से और सप्तमी विभक्ति मे प्रत्येक पाठ होने से ये चारों पृथक् पृथक् मर्यादाए है यह स्पष्ट होता है वे मर्यादाए है आश्रम सम्बन्धी, अर्थात् इन्द्रिये यत्' इन्द्रिय सयम—ब्रह्मचर्य मे जो 'ग्रामे यत्' ग्राम मे गृहस्थ मे जो 'अरण्ये यत्' वन मे वानप्रस्थ मे जो सभायाम यत्' सभा मे-सत्सङ्ग मे सन्यास कर्त्तव्य मे जो हम मृत से पाप कर बैठे उस पर हम पश्चात्ताप करे। मन्त्र मे सन्यास कर्तव्य का सभा शब्द से द्योतन किया है कारण कि ब्रह्मचारी की गुरुकुल मे, गृहस्थ की ग्राम मे वानप्रस्थ की वन मे, जीवन चर्या चलती है परन्तु सन्यासी का जीवन इन मे से किसी भी एक स्थान मे नहीं व्यतीत होता वह तो जनता को सत्सङ्ग सम्मेलन का लाभ पहुँचाया करता है अत मन्त्र मे 'सभायाम् सभा मे' ऐसा कहा गया है।

इत्यलम् विद्वद्वर्येषु किं बहुना।

❀ राष्ट्रीय-संगीत ❀

कवयिता—श्री बालमुकुन्द जी मिश्र साहित्यालङ्कार।

जागा आर्य-स्थान हमारा, जागा आर्य-स्थान !
मेरी भारत-भूमि श्री पर झुकते हैं भगवान।
भारत मा की सतति हम है पावन-महा-महान्॥
जागा आर्य-स्थान !

हम-सा बल है-जग मे किसका? हम सब से बलवान्।
लूटने देंगे कभी न अपना चिर-संचित-सन्मान॥
जागा आर्य-स्थान !

भारत की संस्कृति मे बसता, है, मानव-कल्याण,
जय-जय आर्यस्थान, जयति-जय, जय-जय आर्य स्थान,
जागा आर्यस्थान !

हम-से ही विज्ञान ग्रहणकर, जगत बना विद्वान्,
चरण-धूलि इस धरती की ले, हुआ विश्व धनवान्,
जागा आर्यस्थान !

शस्य-श्यामला मातृ-भूमि की, रखनी हमको आन,
संघर्षों की बलिवेदी पर, होना है बलिदान,
जागा आर्यस्थान !

युग गति के स्यंदन पर चढना, देने युग की तान,
यह वीरों की कर्म भूमि है प्यारा आर्यस्थान,
हमारा प्यारा आर्यस्थान !

मृत्यु के पश्चात् जीव की गति

अर्थात् पुनर्जन्म का पूर्वरूप

आर्य विद्वानो के विचारार्थ

[लेखक —श्री प गङ्गाप्रसाद जी एम ए० रार्य निवृत्त मुख्य न्यायाधीश टिहरी—जयपुर]

१ सृष्टि का उद्देश्य

ईश्वर ने सृष्टि क्यो रची यह एक बडा गूढ प्रश्न है साधारणतया यह उत्तर दिया जाता है कि जीवो के कर्मो का फल देने के लिये ईश्वर सृष्टि रचना करता है। यजुर्वेद के नीचे लिखे मन्त्र से इस की पुष्टि भी होती है—

सपर्यागाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर शुद्धमपाप विद्धम्। कविर्मनीषी परिभू स्वय भूर्याथा तथ्यतोऽ र्थान् व्यदधा च्छाश्वतीभ्य समाभ्य ।(यजु०४०।८)

अर्थ—जो सब के ऊपर है, सब ससार के रचने वाला है, शरीर रहित है, छिद्र आदि रहित है, नस नाडी के बन्धन मे नहीं आता शुद्ध है पापसे रहित है सर्वज्ञ है, मनस्वी है, सब को वश मे रखता है, अपने आप है। उसने प्रजा रूपी सब जीवो को-जो अनादि है उनके कर्मो के अनुसार न्याय पूर्वक फल का विधान किया है।

२ पुनर्जन्म का अभिप्राय

परन्तु जीवो को कर्मो का फल देने का अभिप्राय केवल न्याय करना नहीं है। मुख्य उद्देश्य जीवो का उद्धार करना है कि अविद्या व बुरे कर्मो का त्याग करके और विद्या की प्राप्ति तथा अच्छे कर्म करके प्रत्येक जीव शनै शनै अपनी आत्मिक उन्नति करे और अन्त मे परमपद वा मोक्ष का अधिकारी हो जाय। इस आत्मिक विकास का मुख्य साधन *पुनर्जन्म* है जैसा [illegible] योगी अरविन्द जी ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ लाइफ डिवाइन मे लिखा है—

"Rebirth is an indispensable machinery for the working of a spiritual evolution It is the only possible effective condition the obvious dynamic process of such a manifestation in the material universe" (Life Divine Vol ii Part ii p 703)

अर्थ—पुनर्जन्म आत्मिक विकास के लिये अनिवार्य्य साधन है प्राकृतिक जगत् मे ऐसे प्रकाशन का यही सफल कार्य्य मार्ग है।

पुनर्जन्म एक बहुत विस्तृत और महत्वपूर्ण विषय है। मैं पुनर्जन्म सबन्धी केवल एक विषय पर इस लेख मे विचार करना चाहता हूँ, अर्थात् यह कि मृत्यु के पश्चात् जीव तुरन्त ही नया शरीर धारण कर लेता है या पहले किसी आवान्तर लोक या दशा मे रहता है, और पीछे गर्भ मे जाता है।

३ मृत्यु के पश्चात जीव की दशा

साधारण लोग यही मानते हैं कि मृत्यु के पीछे तुरन्त ही जीव दूसरे शरीर मे चला जाता है। परन्तु शास्त्र आदि के विचार से दूसरा मत सिद्ध होता है, अर्थात् यह कि मृत्यु के समय जीव केवल *स्थूल शरीर* को छोडता है और *सूक्ष्म शरीर* के साथ अन्य लोक मे रह कर उसका सशोधन करता है जिससे उसके पिछले जन्म के वे भाव जो बेकार हो गये है दूर हो जाय और वह नये

६—तुलनात्मक चित्र

३+१ शरीर	अवस्था पाद व मात्रा			५ कोश	७ लोक	थियोसफी के ७ तत्व	अरविन्द घोषके शब्द	साख्य के २५ तत्व	
	३+१ अवस्था	आत्मा के ४ पाद	४ मात्रा						
स्थूल शरीर	१ जागृत	वैश्वानर वा विश्व (विराट्)	अ	१ अन्नमय	१ भू	भौतिक Physical { स्थूल शरीर + आकाशिक शरीर	Physical	२०—२४ पंचभूत	पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश
सूक्ष्म वा लिंग शरीर	२ स्वप्न	२ तैजस (हिरण्य गर्भ)	उ	२ प्राणमय ३ मनोमय ४ विज्ञानमय	२ भुव ३ स्व ४ मह	२ प्राणमय Astral ३ मनोमय Mental (अशुद्ध मनस् Lower manas शुद्ध मनस् Higher manas ४ विज्ञानमय Buddhi	2 Vital 3 Mental 4 Supramental ५ सत् ६ चित ७ आनन्द	१५—१९ पंच कर्मेन्द्रिय १०—१४ पंच ज्ञानइन्द्रिय ५—९ पंच तन्मात्र २—३ महान बुद्धि अहङ्कार (मन)	हस्त, पाद, वाणी, पायु, उपस्थ चक्षु, श्रोत्र, नासिका, रसना, त्वचा रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द
३ कारण शरीर	३ सुप्त	३ प्राज्ञ (ईश्वर)	म	५ आनन्दमय	५ जन ६ तप ७ सत्यम	५ आनन्दमय Nirvanic pure Nirvanic		१ मूल प्रकृति	
४ तुरीय शरीर	४ तुरीय	४ अमात्र (अनिर्वचनीय)	ॐ	आत्मा	परमात्मा	8 Maha Pari Nirvanic Transcendental	Transcendental	२५ पुरुष (जीवात्मा तथा परमात्मा)	

जन्म के लिये अधिक उपयोगी बन जाय।

थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना सन् १८७५ ई० मे अमरीका मे हुई थी। आरम्भ मे कई वर्ष तक वह ऋषि दयानन्द को अपना "परम गुरु* (Supreme Teacher) मानती थी और आर्य्य समाज की शाखा रूप मानी जाती थी।

४ थियोसोफिकाल सोसायटी व श्री अरविन्द

पीछे कुछ मतभेद पाया जाने से ऋषि दयानन्द ने आर्य्य समाज के साथ उसका सम्बन्ध तोड दिया। फिर भी उक्त सोसायटी के बहुत से सिद्धान्त आर्य्य समाज से मिलते हैं। उसकी शाखा भारतवर्ष के बहुत स्थानो मे है और भारत के बाहर अन्य देशो मे भी है। उस सोसायटी के साहित्य मे इस विषय पर जिस पर मैं इस लेख मे विचार करना चाहता हूँ बहुत आन्दोलन किया गया है और उसका वही मत है जिसकी ओर पैरा ३ मे सकेत किया गया है।

श्री अरविन्द जी ने भी जो पाडीचेरी के प्रसिद्ध योगी है अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ (Divine Life) मे जिसका हवाला पैरा २ मे भी दिया गया यही मत प्रकट किया है।

थियोसोफिकल सोसाइटी व श्री अरविन्द ने पूर्वोक्त सिद्धान्त की जो व्याख्या की है उसका आधार बहुत अंश मे उपनिषदों की *तीन शरीर व पचकोष* सम्बन्धी शिक्षा है जिस की माडूक्य उपनिषद् व *तैत्तिरीय* उपनिषद् मे विशेष रूप से व्याख्या है। इसलिए उचित मालूम होता है कि *तीन शरीर* व *पचकोष* का प्रारम्भ ही मे सक्षेप से वर्णन कर दिया जाय।

५ तीन शरीर व पंचकोष

पचकोश ये है।

(१) *अन्न मय कोश* जिसको स्थूल शरीर भी कहते है। इसका *अन्न मय* नाम इसलिए है कि उसकी रक्षा *अन्न* के विना नहीं हो सकती।

(२) *प्राणमय कोश* जिसमे पच प्राण रहते है।

(३) *मनोमय कोश* जिसमे मन व कर्मेन्द्रिया रहती है।

(४) *विज्ञानमय कोश* जिसमे बुद्धि व ज्ञानेन्द्रिया रहती है।

नोट—ये ३ कोश अर्थात् प्राणमय, मनोमय व विज्ञान मय मिलकर *सूक्ष्म शरीर* कहलाते है।

(५) *आनन्द मय कोश* जिसमे जीवात्मा निवास करता है। इसको *कारण शरीर* कहते है।

इस प्रकार ३ शरीरो मे ५ कोशों का निवास है।

मैंने अपनी *पचकोश* नामक पुस्तक मे एक तुलनात्मक चित्र दिया है जिसमे उपर्युक्त ३

---

*थि० सो० का Theosophist नामक मासिक पत्र प्रकाशित होता है। पहले वर्ष में व दूसरे वर्ष के भी कुछ भाग मे उसके मुख पत्र Title page पर सोसायटी के अधिकारियो के नाम इस प्रकार छपते थे।

1 Pt Dayanand Saraswati Swami Supreme Teacher and Guru
2 Col H S Olcott—President
3 Madame H P Blavatsky Secretary

अर्थात्

(१) प० दयानन्द सरस्वती स्वामी—परम शिक्षक व गुरु।
(२) कर्नल हेनरी एस आलकट—प्रेजीडेंट।
(३) मैडम एच पी ब्लावेट्स्की मन्त्री।

सोसायटी का नाम इस प्रकार लिखा जाता था।

Theosophical Society of the Arya Samaj of Aryavarta

अर्थात् आर्य्यावर्तीय आर्य्य समाज की थियोसोफिकल सोसायटी।

शरीर व ५ कोष तथा माडूक्य उपनिषद् के ४ पाद व ४ मात्रा व थियोसोफिकल सोसायटी के ७ तत्व व सप्तलोक दिये हैं और सांख्य दर्शन के २४ तत्वो को भी समन्वय करके दिखलाया है। उस चित्र को यहा भी देना लाभ दायक होगा इसलिये नीचे दिया जाता है—

जिस प्रकार मनुष्य के शरीर मे पचकोष है इसी प्रकार ब्रह्माड मे *लोक* है वेदान्त का एक प्रसिद्ध वाक्य है 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' अर्थात् जैसी रचना *पिण्ड* (*मनुष्य के देह*) मे है वैसी ही *ब्रह्माण्ड* मे है अग्रेजी मे मनुष्य के शरीर को (microcosm) कहते है जिसका अर्थ है (micro) छोटा (cosm) जगत् जैसे देह के ५ कोश एक दूसरे के भीतर और एक दूसरे से सूक्ष्म है ऐसे ही लोक है अर्थात् स्थूल जगत् के भीतर *प्राणमय* लोक है और उससे सूक्ष्म है *मनोमय* लोक प्राणमय लोक के भीतर और उससे सूक्ष्म तर है। इसकी व्याख्या विस्तार के साथ *तैत्तिरीयोपनिषद* की ब्रह्मवल्ली मे की गई है। ३ शरीर व उसके साथ ३ अवस्था (जागृत, स्वप्न सुषुप्ति) व ४ मात्रा व पादो की व्याख्या माण्डूक्योऽपनिषद् मे है।

७ थियोसोफिकल सोसायटी व श्रीअरविन्द घोष के साहित्य, उपनिषद्, तथा अन्य साहित्य के मनन से मृत्यु के पश्चात जीव की गति का रूप निम्न प्रकार पाया जाता है—

७ मृत्यु के पश्चात जीव की गति

मृत्यु के समय जीव केवल स्थूल शरीर (Gross Body) को छोडता है, जो अग्नि मे जला दिया जाता है या पृथ्वी मे गाड दिया जाता है अथवा जल मे बहा दिया जाता है। पारसी लोग उसको मांसा हारी पक्षियों के खाने के लिए एकनिर्दिष्ट स्थान मे छोड देते है। इस प्रकार उसके सब भाग पच भूतों मे मिल जाते हैं जिन से वह बना था। जीव सूक्ष्म शरीर के साथ (जिस मे कारण शरीर भी है) चला जाता है।

८ स्थूल शरीर

इस स्थूल शरीर मे मुख्य भाग जिसको असली Gross Body *स्थूल शरीर* Dense body कहना चाहिये पृथ्वी, जल, अग्नि व वायु इन ४ तत्वो से बना है, और एक भाग केवल *आकाश* तत्व का है जो *पाच भौतिक* स्थूल शरीर का भाग होते हुए भी आखो वा अन्य बाह्य इन्द्रियो से नहीं दीखता। मृत्यु के समय वह स्थूल शरीर से निकल कर उसके समीप ही बना रहता है और उसके साथ

९ आकाशिकशरीर

Etherial Body

ही शमशान को जाता है वहा वह शरीर के साथ अग्नि मे भस्म हो जाता है, । यदि शरीर पृथ्वी मे गाडा जाय तो वह कब्र मे बना रहता है और लगभग १० दिन मे शरीर के सड जाने पर धीरे धीरे नष्ट होता है। मृत शरीर को जमीन मे गाडने की अपेक्षा अग्नि मे जलाना उत्तम है इसकी इस बात से भी पुष्टि होती है कि आकाशिक शरीर Etherial body की कबर मे सडन से दुर्गति नहीं होती और उसका शीघ्र ही छुटकारा हो जाता है।

१० सूक्ष्म शरीर के साथ जीव का प्राणमयलोक में जाना

मृत्यु के पश्चात् जीव सूक्ष्म शरीर के साथ (जिस मे कारण शरीर भी है। *प्राण मय लोक* मे रहता है, यह स्थूल जगत् ही के सदृश है, परन्तु सूक्ष्म होनेसे हमारी स्थूल इन्द्रिये उसको नहीं देख सकती

उसको प्राण मय लोक इस लिये कहते हैं कि वह उसी प्रकार प्राण तत्व से बना है जैसा कि स्थूल जगत् पंच भूतों से बना हुआ है। थियो० सो० के साहित्य में इसका नाम *काम लोक* (अर्थात् इच्छाओं का लोक) व Astral World है। इस लोक में जीव के रहने का उद्देश्य यह है कि जीव में जो बुरी इच्छायें है वे दूर होकर उसके प्राण मय कोश की शुद्धि हो जाय। इस लोक में जीव कितने समय तक रहे इसकी कोई अवधि नहीं। यह उसकी आत्मिक दशा पर निर्भर है। यहां उसकी उसके पुराने सम्बन्धी वा परिचित जीवात्माओं से जिनका उस समय उस लोक में निवास हो भेंट होती है।

इस लोक की ७ श्रेणियां हैं जिनमें पहली २ श्रेणियां नीचे दर्जे की हैं जिनमें नीच दशा के जीव जाते है, इन २ श्रेणियों को *नरक* भी कह सकते है। शेष ५ श्रेणियों में भी जो ऊपर की श्रेणियां हैं वे उन्नत दशा के जीवों के लिये है। शेष साधारण के लिये।

इस लोक में जीव की स्थिति समाप्त होने पर उसका प्राण मय कोश वहीं नष्ट होकर प्राण तत्व में इस प्रकार मिल जाता है जैसे कि भौतिक शरीर नष्ट होने पर पंच भूतों में मिल जाता है।

११ प्राण मय लोक से जीव का मनोमय लोक Mental World में जाना

यदि किसी जीव को प्राण मय लोक से आगे जाने की आवश्यकता नहीं तो वह मनोमय लोक को नहीं जाता।

श्री अरविन्द ने यही माना है—

If the development of mind were insufficient, it is possible that it would not be able to go consciously beyond the vital level returning from its vital heavens or purgatories to the earth

(Divine Life u Volume II P 774)

(अर्थात्) यदि आत्मिक उन्नति पर्याप्त नहीं तो यह संभव है कि जीव प्राण मय लोक से आगे नहीं जा सकेगा और वह शोधन स्थानों Purgatories से पृथ्वी लोक को लौट आवेगा।

श्री ऐनी बेसेंट ने भी लिखा है—

A spiritually advanced man who has purified his astral body merely passes through Kamaloka without delay the astral body disintegrating with extreme swiftness (Ancient wisdom P 817

(अर्थ) जिस मनुष्य की आत्मिक उन्नति हो गई और जिसने प्राणमय शरीर को शुद्ध कर लिया है वह काम लोक में केवल होता हुआ बिना देरी लगे लौट आता है और प्राण मय कोश बड़ी शीघ्रता से नष्ट हो जाता है।

जिस जीव को प्राणमय लोक से आगे जाना है उस की प्राणमय कोश नष्ट होने पर *मनोमय* लोक में जागृति होती है जिस को थियो० सो० साहित्य में Dev Dham अर्थात् देवस्थान कहते है। वह काम लोक से बहुत उन्नत दशा का है उस को *स्वर्ग लोक* भी कह सकते हैं। इस लोक में भी ७ श्रेणियां है। ऊपर की श्रेणियां निचली श्रेणियों से श्रेष्ठ है (इस लोक में जीव के रहने का मुख्य उद्देश्य

अपने मन व विचारों को शुद्ध करना और नये शरीर के लिये (जो पुनर्जन्म से उस को मिलगा एक नया *मनोमय* कोश तय्यार करना है। इस मे निवास करने के लिये भी कोई अवधि नियत नहीं। प्रत्येक जीव को अपनी पिछली आत्मिक दशा और नवीन जन्म के लिये उपयोगी सूक्ष्म शरीर की तय्यारी की आवश्यकता के अनुसार रहना होता है।

१२ प्राणमय लोक व मनोमय लोक का वर्णन

प्राणमय लोक वा काम लोक का वर्णन श्री ऐनी बीसेंट कृत Ancient Wisdom के अ० ० व ३ म सविस्तर किया गया है और मनोमय लोक Mental Plane का वर्णन अ० ४ मे विस्तार के साथ है। श्री अरविन्द कृत Divine—Life की जिल्द २ के अ० , २१, २२, २३, व २४ म इन का वर्णन है, उस मे छोटी छोटी बातों का इतना विस्तार नहीं जितना श्री ऐनी बीसटकृत Ancient Wisdom मे पाया जाता है। श्री अरविन्द के लिखने के ढग से यह विदित होता है कि उन्होंने जो कुछ लिखा वह अपने अनुभव से नहीं किन्तु दार्शनिक नीतिस विज्ञान व तर्क के आधार पर लिखा परन्तु श्री ऐनीबीसेंट के लिखने की शैली से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने जो लिखा अपने (व श्री मैडमब्लैवेटस्की आदि विशेषज्ञों के) अनुभव के आधार पर लिखा है श्री बसेंट के अलावा सोसायटी के अन्य विद्वानों का भी यह दावा रहा है कि उन को ऐसे लोकों के देखने की दिव्य शक्ति Astral vision प्राप्त थी। श्रीलेडबीटर Leadbeater जी बहुत समय तक श्री ऐनीबेसट के साथ सोसायटी के उपप्रधान रहे इस दिव्य शक्ति के द्वारा सोसायटी के महात्माओं का (जिन का वे तिब्बत के पहाड़ों मे Astral State दिव्य दशा म निवास मानते है) दर्शन करके उनका विस्तृत वर्णन Mahatma & the Path नामक पुस्तक मे किया है। इसी शक्ति के द्वारा उन्होंने एक पुस्तक Inner World म मगल Mars Mercury बुद्ध व शुक्र Venus ग्रहों का बड़ा रोचक वर्णन लिखा है।

१३ मनोमय लोक से जीव का गर्भ में जाना

उपर्युक्त लोकों म प्राणमय कोश व मनो मय कोश की शुद्धि हो जाने के बाद जीव अपने सूक्ष्म शरीर के साथ (जिस मे कुछ संशोधन व परिवर्तन हुए है। और कारण शरीर के साथ जो मोक्ष की प्राप्ति तक सदा उसके साथ रहता है अपने गुण व कर्मों के अनुसार दूसरा देह धारण करने के लिये गर्भ मे जाता है। यहा उस का केवल नया *स्थूल शरीर* ही (आकाशिक शरीर के साथ) नहीं बनता, किन्तु *सूक्ष्म शरीर* भी बहुत कुछ नये प्रकार से बनता है यह सब रचना कारण शरीर के आधार पर होती है जिसमे जीव के सब पूर्व जन्म जन्मान्तरों के संस्कार रहते हैं। इस शरीर रचना का वर्णन बड़े रोचक प्रकार से (Ancient wisdom के अ० ७ Reincarnation) मे किया गया है।

१४. गर्भ में सूक्ष्म शरीर भी नया बनता है

पुनर्जन्म के समय जीव के साथ उसका पुराना सूक्ष्म शरीर जैसा पहले जीवन म था वैसा ही नहीं जाता।

इस बात को श्री अरविन्द ने भी स्पष्ट रीति से माना है और प्राणमय लोक व मनोमय लोकों में जीव के रहने का मुख्य उद्देश्य यही बतलाया है कि इन कोषों की शुद्धि द्वारा सूक्ष्म शरीर नये देह व नये जीवन के लिये अधिक उपयोगी बन जाय व लिखते है —

At each stage he would exhaust & get rid of the fraction of former personality structure temporary & superficial that belonged to the past life he would cast off his mind sheath & life sheath as he has already cast off his body sheath But the essence of the personality and its mental vital physical experiences would remain in latent memory or as a dynamic potency for the future (Life Divine II II 773 774)

अर्थात्—हर एक स्थान में जाव, अपने सूक्ष्म शरीर के उस भाग को छोड देता है जो अस्थायी था और पिछले जन्म से सम्बन्ध रखता था अब बेकार हो गया था। वह अपने 'मनोमय' कोश को फैंकता है। प्राणमय कोश को फेंकता है जैसे कि वह 'अन्नमय' को फैंक चुका। परन्तु इन प्राणमय व मनोमय कोशों के अनुभव संस्कार रूप से सूक्ष्म शरीर में पुरानी स्मृति वा भावी शक्ति के रूप में बने रहेंगे। क्रमश

मनुस्मृति और स्त्रियां

(लेखक—श्रीगङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम०ए०)

(गताङ्क से आगे)

समाज संघटन के विधान के साथ ही साथ समाज में स्त्रियों का क्या स्थान है यह भी प्रश्न उठता है। परन्तु स्त्रियों के विषय मे प्रश्न उठाने से पूर्व यह समझ लेना चाहिये कि जिस प्रकार समाज मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र का वर्गीकरण होता है उसी प्रकार स्त्री और पुरुष का नहीं होता। स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध अन्य वर्गों के सम्बन्ध से भिन्न है, यह विशेष सम्बन्ध है जिसको अटूट माना गया है। 'विवाह' का अर्थ ही है विशेष सम्बंध (वि+वाह), यहा उपसर्ग 'वि' बडा महत्वपूर्ण है और यदि इस पर विशेष ध्यान न दिया जाय तो समाज के निर्माण मे गड़बड होने की आशङ्का है।

यों तो यदि मनुष्य जाति के दो विभाग कर दिये जावे, एक स्त्री और दूसरा पुरुष और फिर उन दोनों के वर्णानुकूल चार चार विभाग किये जाय तो मनुष्य जाति आठ भागों में विभाजित हो जायगी परन्तु ऐसा नहीं है। क्षत्रिय और ब्राह्मण अलग अलग रह सकते हैं परन्तु स्त्री पुरुष नहीं, भाई भाई अलग रह सकते हैं परन्तु स्त्री पुरुष नहीं, इसी सम्बन्ध मे ऋग्वेद मे कहा है —

इहैवस्त मावियौष्ट विश्वमायुर्व्यश्नुतम ॥

(ऋग्वेद १०-८५-४२)

"तुम दोनो अपने घर मे ही रहो। अलग मत हो। पूरी आयु को प्राप्त होओ।"

इसलिये स्त्री पुरुष को 'दम्पती' (पत्नी च पतिश्च पती, दमस्य पती दम्पती) अर्थात् घर का संयुक्त मालिक कहा गया।

यदि एक जाति और दूसरी जाति मे युद्ध छिड जाय, यदि एक मनुष्य समूह दूसरे मनुष्य के विरुद्ध लडपडे तो कुछ दिन तक निर्वाह हो सकता है परन्तु यदि स्त्री और पुरुष मे वैमनस्य हो जाय तो परिवार एक क्षण के लिये भी न चल सके। अत जहा यह प्रश्न उठता है कि समाज मे स्त्री का क्या स्थान है वहा वास्तविक प्रश्न तो यह है कि स्त्री और पुरुष का परस्पर सम्बन्ध क्या है ?

स्त्री और पुरुष का भेद ब्राह्मण और क्षत्रिय के समान कल्पित, समाज-निर्धारित या राज्य निर्धारित नहीं है। यह स्वाभाविक और प्राकृतिक है।

जिस प्रकार मनु ने कहा कि —

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मण श्चैति शूद्रताम्।

(१०-६५)

अर्थात् "शूद्र ब्राह्मण हो जाता है और ब्राह्मण शूद्र"। उसी प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि —

"स्त्री प्राप्नोति पुरुषत्व स्त्रीत्वमेति तथा पुमान्"

स्त्री पुरुष हो जाती है और पुरुष स्त्री,

इससे पाया जाता है कि प्रकृति ने स्वयं स्त्री और पुरुष का स्थान अलग २ नियत कर दिया है और उनका परस्पर सम्बन्ध भी, इसलिये जब तक उन दोनों का व्यवहार प्रकृति के इस विधान के अनुकूल रहेगा काम चलता रहेगा।

उस मे भेद आते ही गडबड हो जायगी।

प्रकृति ने स्त्री और पुरुष को साथ रहने के लिये बनाया है अत वे एक दूसरे के पूरक हैं। बिना एक के दूसरा अधूरा है। इसी लिये वैदिक साहित्य मे स्त्री को पुरुष की अर्द्धाङ्गिनी कहा है। अर्द्धाङ्गिनी का क्या अर्थ है? किसी चीज के दो हिस्सो को आधा आधा तो तब कहेंगे जब वे दोनों हिस्से बराबर हों। परन्तु अत्यन्त बराबरी तो असम्भव है। कहीं तो भेद होगा। कुछ तो पहचान होगी। एक कान दूसरे कान के बराबर होता है। फिर भी उनके स्थानो म भेद होता है। उतना भेद नहीं जितना नाक और कान म। परन्तु इतना भेद अवश्य है कि एक दाहिना कान है और दूसरा बाया, एक का मुह पश्चिम को है तो दूसरे का पूर्व का, फिर भी वे दोनो कान बराबर हैं। है इस वाक्य का पूरा अर्थ समझ लीजिये तभी इस प्रश्न को समझ सकेंगे।

हा! तो स्त्री और पुरुष एक शरीर के हा दो आधे आधे अङ्ग है, बराबर है। फिर भी भेद है, स्त्री को पुरुष का वामाङ्ग कहते है। पुरुष दक्षिणाङ्ग है।

यहा प्रश्न यह है कि यह दक्षिण और वाम का भेद क्यों? हम यहा शरीर शास्त्र और प्राणिशास्त्र की जटिलताओं में न पडते हुये यही कहेंगे कि इसका उत्तर प्रकृति माता से पूछिये। उसने ऐसा ही बनाया है और स्त्रियो की धृष्टता या पुरुषो की नम्रता इसको दूर नहीं कर सकती।

जब हमने कहा कि स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं तो इसका अर्थ यह था कि स्त्री में कुछ त्रुटि थी और इस लिये उसको पुरुष पूरक की आवश्यकता पडी। और पुरुष म कुछ त्रुटि थी इसलिये उसे स्त्री पूरक की आवश्यकता पडी। इन मे से किसी को भी आत्म पूर्णता प्राप्त नहीं है। इसलिये उनमे एक दूसरे को आकर्षित करने की नैसर्गिक प्रवृत्ति है।

स्त्रियो को वामाङ्ग कहना उनका अनादर या अपमान नहीं है। यह नैसर्गिक सचाई है। आदि सृष्टि से आज तक किसी युग किसी देश अथवा किसी जाति की स्त्रियां अपने पुरुषो का दक्षिणाङ्ग नहीं बनसकी। एक दो अपवाद को छोडकर किसी स्त्री ने कभी वामाङ्ग से दक्षिणाङ्ग बनने का यत्न नहीं किया। करती भी क्यो? नैसर्गिक प्रवृत्ति ही न थी अपवादों का तो प्रश्न ही अलग है। उनमे सर्वतन्त्र सिद्धान्त की सिद्धि ही होती है। एक दो अपवाद को छोडकर ससार के सभी मनुष्य दाहिने हाथ से क्यों लिखते और दाहिने हाथ से क्यो भोजन करते है? दाहिना हाथ बामहस्त की अपेक्षा क्यो बलशाली होता है? कुछ तो कहेंगे कि स्वभाव पडगया है। परन्तु यह कोई उत्तर नहीं है। आरम्भ से ही मनुष्य जाति ने यह स्वभाव क्यो डाल लिया? पैर से ही क्यो चलते हैं? सिरसे क्यो नहीं चलते? इसका क्या यही उत्तर है कि स्वभाव पड गया है यदि सिर से चलने का हमारे आदिम पुरुष स्वभाव डालते तो क्या वैसा स्वभाव हो जाता?

तो क्या जैसे बाया हाथ दाहिने की अपेक्षा निर्बल होता है उसी प्रकार स्त्री भी पुरुष की अपेक्षा निर्बल होती है? मैं कहूगा "अवश्य, सत्य यही है। अपवादो को छोडकर।" समस्त स्त्री जाति से मिलकर समस्त पुरुष जाति से शारीरिक बल [illegible] है। [illegible]

कोई स्त्री बहुत बलवती होती है तो उसको कहते भी हैं "मरदानी औरत।" और यदि कोई निर्बल पुरुष होता है तो उसे 'जैनाना मर्द' कहकर पुकारते है, शब्दो का यह प्रयोग आकस्मिक नहीं, अपितु नैसर्गिक प्रवृत्ति का, बोधक है।

एक और युक्ति लीजिये, प्राय ससार की सभी स्त्रिया जब अपने लिये वर खोजती है तो उनकी यही इच्छा होती है कि वर उनकी अपेक्षा शरीर और बुद्धि मे अधिक होना चाहिये विद्योत्तमा और कालिदास का उदाहरण जगत् प्रसिद्ध है। कोई स्त्री नहीं चाहती किउसे उस से निर्बल और उससे मूर्ख वर मिले। पुरुष भी अपने से अधिक बलवती स्त्री से विवाह करने मे घबराते हैं। क्यों? इसलिये कि प्रत्येक स्त्री समझती है कि मुझ मे शारीरिक बल की कमी हैं। इसकी पूर्ति के लिये बलवान् पूरक चाहिये।

इसी लिये स्त्रियो पुरुषों के सरक्षण की अपेक्षा रखती हैं, मनुजी ने लिखा है —

पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति॥
(९-३ ३)

"कुमार अवस्था मे पिता रक्षा करता है। यौवन मे पति, बुढ़ापे मे पुत्र रक्षा करते हैं। स्त्री बिना रक्षक के छोडने के योग्य नहीं है।"

इस श्लोक पर आधुनिक युक मे मनु जी की बहुत गालिया मिली हैं, कि उन्होंने स्त्रियों को कभी स्वतन्त्र होना लिखा ही नहीं। इस प्रकार तो स्त्री आयु भर दासी रहती हैं। परन्तु मनु को इस प्रकार दोष देने वाले श्लोक के आशय को

आशय टपकता है 'रक्षति' शब्द श्लोक मे तीन बार आया है, इसलिए कि स्त्री की रक्षा का भार किसी को तो सोपा ही जायगा। स्त्री ससार के गु डों से स्वय अपनी रक्षा नहीं कर सकती, उसीप्रकार जेसे स्वर्ण या बहुमूल्य रत्न स्वय अपनी रक्षा नही कर सकते। पिता, पति और पुत्र से अधिक कौन ऐसा उचित पुरुष था जिसको यह भार सौपा जाता। स्वर्ण की बहुमूल्यता ही उसके स्वातन्त्र्य मे बाधक है और स्त्री की मृदुता, कोमलता, सौन्दर्य आदि। किसी उर्दू के कवि ने लिखा है —

हुस्न की इक अजीब इल्लत है।
जिसने डाली नजर बुरी डाली॥

गुलाब की रक्षा के लिये ईश्वर काटे उत्पन्न करता है। क्योंकि कोई गुलाब —

"नहि स्वातंत्र्यमर्हति"

इसी लिए तो मनु जी कहते है —

अस्वतत्रा स्त्रिय कार्या पुरुषै स्वैर्दिवा निशम्।
विषयेषु च सज्जन्त्य सस्थाप्या आत्मनोवशे॥
(९-२-२)

अर्थात् पुरुषो को चाहिये कि अपनी स्त्रियो के सरक्षण से कभी वे असावधान न रहें। और उनको अरक्षित न छोडें। यदि वह विषयों मे फसने लगे तो उनको बचावें।

कालेऽदाता पिता वाच्यो वाच्यश्चानुपयन् पति।
मृते भर्तरि पुत्रस्तु वाच्यो मातुर रक्षिता॥
(९-४-४)

अर्थात् जो पिता समय आने पर अपनी पुत्री का विवाह नहीं करता या जो पति समय आने पर अपनी स्त्री को सन्तुष्ट नहीं करता या पति

करता, इन तीनों को निन्दनीय या दण्डनीय समझना चाहिये।

सूक्ष्मेभ्योऽपि प्रसङ्गेभ्य स्त्रियो रक्ष्या विशेषत ।
द्वयोर्हि कुलयो शोकमावहेयुररक्षिता ॥
(९ ५-५)

विशेष कर सूक्ष्म प्रसंगो से तो स्त्रियों की रक्षा करनी ही चाहिये, इधर उधर पैर फिसल जाने पर दोनों कुलों को शोक होता है।

इमं हि सर्ववर्णानां पश्यन्तो धर्ममुत्तमम्।
यतन्ते रक्षितु भार्यां भर्तारो दुर्बला अपि॥
(९-६ ६)

सब वर्णों के, इस उत्तम धर्म को जानने वाले कमजोर पति भी अपनी स्त्री की रक्षा करने का यत्न करते हैं।

स्वा प्रसूतिं चरित्रं च कुलमात्मानमेवच।
स्वं च धर्मं प्रयत्नेन जायां रक्षन् हि रक्षति॥
(९-७ ७)

अपनी सन्तान, अपना चरित्र, अपना, कुल, अपनी आत्मा, अपने धर्म इन सब की वही रक्षा करता है जो अपनी पत्नी की प्रयत्न पूर्वक रक्षा करता है।

इन श्लोकों से पता चलता है कि मनु जी मानवी प्रकृति का कितना सूक्ष्म ज्ञान रखते थे और जो स्त्री और पुरुष क्षणिक आवेश में आकर मिथ्या स्वातंत्र्य प्राप्त करने के लिये मनु जी पर दोष लगाते हैं वह कितना अनर्थ करते हैं और स्वयं अपनी मानसिक वृत्तियों से वे कितने अनभिज्ञ हैं। हर एक पुरुष को यह अच्छा लगता है कि मकान को ताला लगाना न पडे, चौकीदार रखना न पडे, अपने माल की रक्षा की चिन्ता उसे न करनी पडे। परन्तु यह तो असंभव है कि उसके धन को अरक्षित पा कर चोर न ले जावे या डाकुओं के मुह में पानी न भर आवे।

स्त्रिया स्वभाव से ही कोमल मन और कोमल शरीर की होती हैं। चतुर से चतुर स्त्री भी धूर्तों पर विश्वास करलेती है या भय भीत हो जाती है। गुडों के जालों से बचना स्त्रियो के लिये अत्यन्त कठिन है। अत उनके सरक्षकों का कर्त्तव्य है कि वे अपनी देवियों की रक्षा का भार अपने ऊपर लवें और समाज तथा राज्य उनको इस कर्तव्य के पालन करने के लिये बाध्य करे। आजकल नई रोशनी की युवतिया स्वतन्त्रता चाहती हैं। परन्तु समाज की वास्तविक दशा को परखने वाले बता सकते है, कि यह स्वतंत्रता इनको कितनी महगी पडती है, और कभी कभी तो वह असाध्य रोग हो जाती है। स्त्री की आख उस समय खुलती है जब उसके पास बचने का कोई उपाय नहीं रहता और वह न केवल वर्त्तमान अपितु अपना भविष्य भी खो बैठती है। यदि आरम्भिक स्वतन्त्रता किसी स्त्री को आयु भरके लिये दास बनादे तो वह स्वतन्त्रता नहीं है। जो स्त्रिया पिता, पति और पुत्र के सरक्षण को 'दासता' के नाम से पुकारती है, वह अपने स्वजनो के संरक्षण को खोकर दुष्ट, दुराचारी, क्रूर और निर्दयी लोगो की सदा के लिये दासी बन जाती हैं। गुलाब को काटे कितने ही बुरे क्यो न लगे परन्तु गुलाब के जीवन की रक्षा के लिये वे बडे आवश्यक हैं। उनको काटा मत कहो। उनको रक्षक कहो। (क्रमश)

अगले अक मे देखो

श्री अरविन्द आश्रम तथा श्री माताजी

(लेखक—श्री डा० इन्द्रसेन जी एम० ए० पी एच० डी० स [illegible] तथा श्री अरविन्द आश्रम पाण्डिचेरी

१ श्री अरविन्द एक समय राष्ट्रनेता थे, आज गुह्यवेत्ता और योगी है। उनके राष्ट्रीय कार्य को जनता समझ पाती है, परन्तु आध्यात्मिक कार्य को एक भावना के आधार पर मान लेती है तथा उनके ग्रन्थों के लिये, जिन्होने भारतीय संस्कृति का संसार भर मे आदर बढाया है, गर्व अनुभव करती है।

२ एक गुह्यवेत्ता के आध्यात्मिक कार्य को समझना, अवश्य ही, कठिन है। कारण कि यह कार्य ही बहुत भिन्न शैली का है। हम वैज्ञानिक अनुसंधान की मर्यादा को काफी हद तक समझते है। हम जानते हैं कि उसके लिये समय चाहिये सुभीता चाहिये, एकांत तटस्थ भाव चाहिये। इसी लिये हम एक अनुसंधनालय का काम एक विश्वसनीय उच्च कोटि के वैज्ञानिक की देखरेख मे छोड देते हैं और गवेषणा के फल की धीरज से प्रतीक्षा करते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान के विषय को हम जानते है, परन्तु उसके अनेक उपायों और शैलियों को हम समझने का यत्न भी नहीं करते। उन्हे हम विशेषज्ञ वैज्ञानिक का क्षेत्र स्वीकार करते हैं। श्री अरविन्द के कार्य को हमे इसी तरह से समझने का यत्न करना होगा।

३ श्री अरविन्द जब विदेश मे शिक्षा समाप्त कर चौदह वर्ष के बाद भारत लौटे तो उन्हे [illegible] इच्छा हुई। उन्होंने संस्कृत सीखी और प्राचीन भारतीय साहित्य पढना शुरू किया। उन्होंने शीघ्र ही अनुभव किया कि योग और आध्यात्मिकता भारत का अद्वितीय विशेषता है और वे योग की ओर क्रियात्मक रूप मे आकर्षित अनुभव करने लगे। ब्रह्म तेज उन्हें एक सत्य वस्तु प्रतीत हुई और वे इसके उत्कट जिज्ञासु हो गये। १९०८ के एक वर्ष के कारावास मे उन्हे कुछ विशेष अनुभूतिया हुई जिन्होंने उन्हे योग मे पूर्णतया प्रवृत्त हो जाने की प्रेरणा दी और १९१० मे वे राजनीतिक उलझनों से अलग पांडचेरी मे आकर रहने लगे और निजी साधना मे निमग्न हो गये। उन दिनो यदि कोई योग का जिज्ञासु उनसे योगदीक्षा और सहायता मागता तो वे उसे कह दिया करते कि किसी के आत्म विकास की जिम्मेवारी अत्यन्त कठिन चीज है, मै इसके लिये तैयार नहीं। १९२२ मे देशबन्धु चित्तरंजनदास ने उन्हे एक पत्र द्वारा पुन राष्ट्रीय क्षेत्र मे आने के लिये आहूत किया। उसके उत्तर मे उन्होंने कहा था कि "मैं यह अधिकाधिक स्पष्ट रूप मे देख रहा हूँ कि मानव जाति जिस व्यर्थ के घेरे मे सदा से चक्कर काट रही है उसमे से मनुष्य तब तक कदापि बाहर नहीं निकल सकता जब तक वह अपने आपको ऊ चा उठाकर एक नये आधार

मे बतलाया था कि यह आधार आध्यात्मिक है तथा उसको सम्पूर्ण शक्ति को संचालित करने का विकास साधन करना मेरा उद्देश्य है। १६०० मे आश्रम नहीं था। आश्रम तब खुला जब श्री अरविन्द को १६०६ मे सिद्धि प्राप्त हुई और उन्होंने अपना आध्यात्मिक कार्य शुरू किया। १६०६ की २४ नवम्बर के दिन कई महत्त्वपूर्ण घटनाएं घटीं। श्री अरविन्द ने सिद्धि उपलब्ध की, उन्होंने आश्रम खोला और वे एकांत मे चले गये। यदि हम यह स्मरण रखे कि श्री अरविन्द एक अत्यन्त उच्च कोटि की आध्यात्मिक शक्ति-वास्तविक ब्रह्म तेज, के जिज्ञासु थे तो ऊपर की घटनाओं से केवल यही परिणाम निकाल सकता है कि श्री अरविन्द का एकान्त उनके कार्य की अवस्था है। एक पत्र में उन्होने लिखकर बतलाया भी था कि आश्रम उनका प्रथम दायित्व है। इस दायित्व को व कैसे निभा सकते है यह भौतिकवादी के लिये समझना तो असंभव है, अध्यात्म परम्परा वाले सामान्य भारतीय के लिये भी कठिन है, क्योंकि इस कोटि को आध्यात्मिक शक्ति का अनुभव अत्यन्त असाधारण है। परन्तु आश्रम के जीवन, संचालन का मूल मन्त्र यही है। यही है वह शक्ति जो साधको को उनके अन्दर प्रेरणा और अभीप्सा प्रदान करती है और वे अपनी अपनी जिज्ञासा तथा तन्मयता के अनुसार अपना आन्तरिक विकास लाभ करते है। बाह्य प्रतिबन्ध आश्रम के जीवन मे, वास्तव मे हैं ही बहुत कम। जो लोग अपना धनादि समर्पित करते हैं वे किसी नियम के कारण नहीं समय व्यक्ति को अलगपना, पृथक् निजी जीवन, भारी लगन लगता है और उसे आनन्द ही अपने छोटे व्यक्तित्व का बड़े व्यक्तित्व मे लय कर देने मे आता है। परन्तु धन देना आसान है। अपने आप को देना कठिन है। अपनी अहङ्कारमयी इच्छाओं से अनासक्त होना और उन्हें समर्पित करना, इसके कष्ट और आनन्द को गम्भीर साधक ही धीरे धीरे जान पाता है दुनिया को आश्चर्य होता है कि कितने साधकों ने अपना सब कुछ श्री अरविन्द आश्रम को दे दिया है साधको के भाव मे उन्हें जो मिला है शायद वही ज्यादा निवास करता है।

४ श्री अरविन्द का उद्देश्य है मानव प्रकृति को समूल रूपान्तरित करना। इसके लिये आश्रम उनका क्षेत्र और अनुसधानालय है। जिस श्रेणी का रूपान्तर वे चाहते हैं उसके लिये अतिमानसिक (Supramental) आध्यात्मिक शक्ति का अवतरण साधित करना अनिवार्य है। वह शक्ति ही मानव स्तर पर उतर कर मानव-प्रकृति बदल सकती है। श्री अरविन्द हम बार बार बतलाते है और उसका अवतरण सिद्ध करना ही उनके ध्यान और एकाग्रता का प्रधान विषय है। परन्तु यह शक्ति उतर अच्छे आधारो मे ही सकती है। इसलिये साथ साथ मानव आधारो को भी उत्तरोत्तर तैयार करना है। प्रत्यक्ष ही, योग के ऐसे अनुसधानालय के लिये एक निजी वातावरण चाहिये और यदि उसे अपने काम मे सफल होना है तो वह अपनी शक्ति लोकोपकार तथा अन्य किसी भी ओर अपने काम से नहीं लगा

से स्वार्थपूर्ण और सहानुभूति-विहीन प्रतीत हो सकता है। परन्तु वास्तव मे, जिस विषय पर आश्रम मे अत्यन्त एकाग्रता से काम हो रहा है उसका लक्ष्य अचिंत्य मानव हित संपादित करना है।

५ श्री अरविन्द के योग के उद्देश्य को अन्य शब्दों मे अपरा प्रकृति को परा प्रकृति मे परिवर्तित करने की योजना भी कह सकते है। प्रत्यक्ष ही, यह आध्यात्मिक आदर्श हमारे मध्यकालीन आदर्श मे भिन्न है। यह संसार समाज को अनिवार्य रूप से दुःखमय मान उन्हें छोड़ नहीं देना चाहता। यह हिमालय की कंदरा मे निजी शांति नहीं मांगता। यह तो उपनिषदों के भाव मे सर्व खल्विदं ब्रह्म, 'यह सारा जगत् निश्चय ही ब्रह्ममय है" को हार्दिक रूप मे अंगीकार करना है और जीवन के सब व्यवहार में आओ समता लाओ प्रेरणा चरितार्थ करना चाहता है। ऐसे सर्वांगीण आदर्श का धन संपत्ति तथा जीवन के अन्य भौतिक उपकरणों के आध्यात्मिक प्रयोग का अभ्यास करना होगा न कि उनका त्याग। श्री अरविन्द बार बार अपने ग्रन्थों मे जतलाते हैं कि जो अध्यात्मवाद जीवन से भय खाता है, भौतिक उपकरणों के प्रति त्याग द्वारा समता और शांति खोजता है वह एक अत्यन्त अपूर्ण आदर्श है तथा वह जगत् को सुधारने मे उसे बदलने मे तो सफल हो ही नहीं सकता। वास्तव मे, हमारे राज-पाट खोने मे और दास बनने मे इस मनोवृत्ति का हाथ था और यदि अब नव प्राप्त स्वाधीनता को हमने उचित रूप में अधिकृत करना है तो यह अनुभव नैतिक जीवन मे उच्चतम आध्यात्मिक उपलब्धि संभव ही नहीं बल्कि यह वहीं प्राप्त होनी चाहिये अन्यथा जगत् का न सुधार होगा न विकास।

६ आश्रम के कार्य और विकास के साथ श्री माता जी का व्यक्तित्व घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। पर यह जान वही पाते है जो एक बार आश्रम आ चुके है। बाहर माताजी प्रायः अपरिचित ही है। कारण, उन्होंने श्री अरविन्द के कार्य मे अपने आपको इस तरह लीन कर रखा है कि अपना नाम का उल्लेख कहीं होने ही कम देती है। माताजी भारत मे १९१४ मे आईं। परन्तु उससे पहले उनके लिखे हुए तीन ग्रन्थ उनकी उस समय की असाधारण आध्यात्मिक जिज्ञासा तथा प्राप्ति को प्रकट करते है। उस समय के उनके लेख, वक्तव्य और उपदेश उनके ओज, तेज और कार्य क्षेत्र के विस्तार को बराबर जतलाते हैं। यूरोप मे, रहते हुए उन्होंने प्रधान रूप से वहीं के गुह्यवेत्ताओं की साधन का अनुसरण किया था। एक बार अफरीका के अलजीरिया प्रदेश मे भी आपने कुछ काल तक एक विशेष साधना की थी, परन्तु आपकी आध्यात्मिक जिज्ञासा अत्यन्त विशाल थी और आप अधिकाधिक विकास की अभीप्सु रहती थीं। उन्हीं दिनों की एक पुस्तक मे, आत्म-चिन्तन के प्रकरण मे, लिखा है, "मैं जान गई हूँ मुझे इस चरितार्थता को साधित करने के लिये अति लम्बे ध्यान-चिन्तन की आवश्यकता होगी। यह उनमे से एक चीज है जिनकी आशा मैं अपनी भारत-यात्रा से करती हूँ।"

७ इसके अतिरिक्त भी आपकी उस समय की पुस्तकों मे भारत सम्बन्धी अनेक बड़े सुन्दर

८ भारत मे आकर श्री अरविन्द से भेट करके आपको अपूर्व सतोष हुआ और उनके आदेशानुसार साधना मे प्रवृत्त हो गई। उन्हीं १९१४ के दिनों मे आपने अनुभव किया कि ऐसे महापुरुष के विचार ससार को मिलने चाहिये और आपने "आर्य" पत्रिका के प्रकाशन का प्रबन्ध किया, जिसके लिये ही श्री अरविन्द ने धारावाही रूप मे वे सब ग्रन्थ लिखे थे जो आज जगद् विख्यात हो रहे हैं और भारत के अपूर्व आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार कर रहे है। इनमे से अनेक ग्रन्थों का श्री माताजी ने स्वय फ्रेंच मे अनुवाद किया है। जो फ्रेंच क्षेत्रो मे उसी ज्ञान का विस्तार कर रहे है।

९ माताजी पहले से ही एक विशेष आध्यात्मिक आदर्श के लिये कार्य कर रही थीं। वह आदर्श उनकी एक प्रार्थना मे यू व्यक्त हुआ है, "हे प्रभु, शक्ति प्रदान कर कि मैं इस दिव्य प्रेम से जो शक्तिशाली है, असीम है, अथाह है, सभी कर्मों और क्रियाओं मे तथा सत्ता के सभी क्षेत्रों मे आत्मसात् हो जाऊ।" एक और प्रार्थना मे एक वाक्य है —

'क्या यह बाह्य जीवन, हर दिन और हर क्षण की चेष्टा ध्यान और चिन्तन की घडियों के अनिवार्य पूरक नहीं है?" (१९१२) बार बार उनकी प्रार्थना पूर्ण रूपातर की है, ऐसे रूपांतर की जिसमे सपूर्ण जीवन, ध्यान और चिन्तन तथा सामान्य व्यवहार, सब एक भगवान् की प्रेरणा को अभिव्यक्त करने लगे। उन्हे कुछ घण्टों की समाधि अभीष्ट न थी। उन्हे अभीष्ट था मन, प्राण और शरीर का पूर्ण रूपातर, अपने जीवन मे भागवत अभिव्यक्ति पूर्ण और प्रत्यक्ष होजाय।

१० भारत वर्ष मे आकर उन्होने देखा कि श्री अरविन्द ठीक इसी आदर्श के लिये, उसी पूर्ण रूपातर के लिये यत्नशील हैं। उन्होंने अनुभव कर लिया कि उनके कार्य का क्षेत्र भारत है और वह श्री अरविन्द के साथ। इधर श्री अरविन्द ने यह स्पष्ट स्वीकार किया है कि उनकी यौगिक शैली के विकास मे उन्हे माताजी से विशेष सहायता प्राप्त हुई है। उन्होने माताजी की अलजीरिया की साधना का विशेषता मानी है तथा अपने कार्य मे उनका सहयोग दैवी सयोग स्वीकार किया है। अपनी व्यक्तिगत साधना के विकास के बारे मे लिखते हुए उन्होने एक जगह कहा है "मैंने १९०४ मे बिना गुरु के योग साधना शुरू की। १९०८ मे मैंने एक मरहठा गुरु से महत्वपूर्ण सहयोग्यता प्राप्त की और मुझे अपनी साधना का आधार प्राप्त हो गया। परन्तु उसके बाद जब तक श्री माताजी नहीं आ गई मुझे किसी से कुछ सहायता प्राप्त नहीं हुई।"

११ श्री माताजी का भारत मे आकर श्रीअरविन्द की साधना मे सम्मिलित होना, निश्चय ही एक महान् घटना थी जिसका महत्व हम, जैसे श्री अरविन्द के कार्य के फल हमारे सामने आयेगे धीरे धीरे समझेंगे। हम कह चुके हैं कि श्री अरविन्द को १९२६ मे सिद्धि प्राप्त हुई और उन्होंने अपने आध्यात्मिक कार्य का आरम्भ किया। वे एकात मे पूर्ण एकाग्रता से जिस शक्ति तक वे स्वयं आरोहण कर चुके थे उसे सामान्य स्तर पर लाने मे लग गये। इधर उस शक्ति के अवरोहण अथवा अवतरण के लिये मानो साधकों मे उपयुक्त आधार तैयार करने के कार्य को व्यावहारिक रूप मे माताजी ने सभाला। ऐसे

प्रचार से दूसरों के प्रति अन्याय करता है तथा किसी उपकारी व्यक्ति के लिये विपरीत भावी बनाने से कृतघ्नता का दोषी बनता है, इन सबसे व मुक्त रहतीं। और यदि माताजी अब पैंतीस वर्ष से श्री अरविन्द के कार्य की अनथक सहयोगिनी होने पर भी, उनके लिये फ्रांस की जन्मी विदेशी हैं तो श्री अरविन्द तो उनके अपने हैं, जो परम देशभक्त है, महायोगी तथा हैअपनेआश्रम क लिये पूरी जिम्मेवारी लेते है। उनकी जो माताजी के प्रति भावना है उसे वे जरा विचारतीं तो भी व माताजी के व्यक्तित्व के सबन्ध मे ऐसी भल न करतीं। और यदि वे माताजी के फ्रेंच साहित्य से जो भारतीय सस्कृति की सेवा हुई है उसे ही याद करती तो भी वे ऐसे भावो को व्यक्त करने से बच जाती, जिनसे विचारवान व्यक्ति को पीछे पश्चाताप होता है।

आपको माताजी के टेनिस और पिंगपाग खेलने से भी कष्ट हुआ है परन्तु इन तथा अन्य खेलो का आश्रम मे कैसे और क्यों विकास हुआ है यह उन्हे पता नही। पहले आश्रम म बच्चे नहीं लिये जाते थे युवक और युवतिया भी कम थीं। लगभग पाच वर्ष हुए श्री अरविन्द और माताजी ने व्यक्तियों को बच्चो के साथ भी आश्रम मे प्रविष्ट होने की आज्ञा दी। इसी सवध मे स्कूल खुला और उनके लिये खेलन के भी प्रबन्ध हुए। तीन वर्ष के अन्दर ही लडके लडकियों की सख्या ? के लगभग होगई और फिर इनके उचित विकास के लिय सब प्रकार के सुभीते पैदा किये गये। माता जी ने जो पहले आश्रम के मकान से बहुत वर्षो तक कभी बाहर नहीं गई थीं, अब रोज खेल के मैदानों मे जाना शुरू किया। वहा जाकर खेलों मे स्वय हिस्सा लेना तथा हर प्रकार से बच्चो का उत्साहित करना शुरू किया। इस समय खेल विभाग मे बच्चों के अलावा सौ से ऊपर बडे भी हैं और माताजी इसे अपने समय के लगभग तीन घन्टे रोज देता है, और वहा अपूर्व वातावरण पैदा हो गया है। कुछ ही दिन हुए एक खेल प्रति योगिता की सूचना के शब्द थे "निन्यानवे साल से नीचे के सभी इसमे भाग ले सकते हैं।" इस खेल विभाग के आधारभूत आध्यात्मिक विचारो को श्रीअरविन्द ने विस्तृत लेखो मे समझाया है। जो इस आयोजना को अच्छी तरह समझना चाहे वे आश्रम की शारीरिक शिक्षण पत्रिका देख सकते हैं।

(१४) यह पृष्ठिका जानकर शायद हमारी लेखिका बहिन अनुभव करे कि काश हमारे स्कूलो कालिजो के आचार्य और अध्यापक विद्यार्थियों के जीवन मे इसी प्रकार घुलमिल सका करे।

(१५) हमारी बहिन को इससे भी बडा कष्ट हुआ है कि माता जी की सेवा मे अनको स्त्रिया आगे पीछे रहती है। वास्तव मे कुछ तो हमारी बहिन को वस्तुस्थिति का पता नहीं और कुछ आध्यात्मिक एव धार्मिक जीवन की मर्यादा का पता नहीं। जीवन विकास मे सेवा और भक्ति का क्या स्थान है इसके लिये उनमे भावना ही प्रतीत नहीं होती। माता जी पहले वर्षों अपना सारा काम अपने हाथों करती रही है और अब भी वे जितना काम करती हैं वहसर्वथा अचिंत्य है। वास्तव

मे यह जितना काम इतनी स्त्रियो को दिया हुआ है यह प्राय उनकी प्रार्थना पर दिया हुआ है तथा उनकी सेवा और भक्ति को स्वीकार करने के रूप मे उन्हे दिया हुआ है और यह उनकी साधना की आवश्यकताओ की दृष्टि से ही इतना बढा हुआ भी है न कि माता जी के लिये।

१६-जिस आश्रम की तरती का ('समझो कि मा हर जगह मौजूद है और यही समझकर बोली, सोचो और चलो") हमारी बहिन को शिकायत है वह भी, वास्तव मे, आध्यात्मिक उपस्थिति की अनवरत भावना बनाने के लिये एक प्रेरणा है। निश्चय ही सामान्य रूप मे साधक लोग आश्रम मे न भय से रह रहे है, न मजबूरी से। जिस आनन्द भाव को व अपने मे परिवर्द्धित कर रहे है उस व ठीक समय पर मानवमात्र को देने की आशा करते है। आश्रम के पास बहुत जायदाद है यह शिकायत तो अत्यन्त ओछी और द्वेष पूर्ण है। क्या आश्रम जायदाद का व्यापार करता है या उसका किराया खाता है या उसने अनुचित उपायो से उसे प्राप्त किया हुआ है? जैसे कोई सस्था विकसित होगी उसे मकानो की जरूरत पडगी ही और वास्तव मे आश्रम के पास आवश्यकता से बहुत कम मकान हैं।

१७—लेखिका बहिन भारतीय होते हुए भी आध्यात्मिक जीवन शैली से कितनी अपरिचित है, इससे आश्चर्य होता है। वास्तव मे उनका सारा दृष्टिकोण और भाव कुछ वैसा सा है जैसा हम आश्रम मे रहते हुए नगरस्थ साम्यवादियो का अनुभव करते है। 'पांडिचेरी को आश्रम से कोई लाभ नहीं, 'आश्रमवासी मजे से रहने वाले रईस है' तथा 'आश्रम के बच्चे मस्त रहते है।' ये सब उन्हीं के भाव हैं। घोर दु ख की बात है, इन बहिन को 'बच्चो का मस्त होना' अखरता है। यदि बहिन इसी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व कर रही है तो, निश्चय ही, आश्रम के आध्यात्मिक कार्य को अवगत करना उनके लिये सभव न होगा। यह लेख एक और तरह से भी सदेह जनक है। 'विश्वमित्र' और 'अर्जुन' का हिन्दी लेख (अरविन्द आश्रम मे माता जी) नेशनल प्रेस सिंडीकेट (बम्बई) द्वारा प्रसारित एक अग्रेजी लेख का स्वतन्त्र-सा उलथा है। हिन्दी लेख की लेखिका सुशीला जोगलकर है, अग्रेजी के लेखक एक जगह (स्वतन्त्र, मद्रास) सुमित्र दिये है, एक और जगह (इडिया, बम्बई) कुछ भी नहीं। शीर्षक दोनो जगह अलग अलग है। हम समझते हैं कि श्री अरविन्द आश्रम जैसी प्रामाणिक सस्था के बारे मे कुछ आलोचनात्मक लेख प्रकाशित करने के लिये सबन्धित पत्रकारो को यह पडताल कर लेना आवश्यक था कि लेखक शुद्ध आशय से तथ्यो के आधार पर जनता के हित के लिये लेख प्रस्तुत कर रहा है। हम आशा करते हैं कि स बन्धित पत्रो न लेखो को प्रकाशित करने से पहले यथा सभव होशियारी बरती होगी परन्तु अब अधिक तथ्यो के प्रकाश मे वे अपना मत ज्यादा अच्छी तरह बना सकेंगे। हमने अनुभव करते हुए भी कि उक्त लेख साम्यवादी प्रेरणा से प्रेरित हुआ प्रतीत होता है तथा वह कई नामो तथा उपनामों और विभिन्न शीर्षको के हेर फेर मे प्रकट हुआ है इसके आरोपो को तटस्थ रूप मे लेकर अपने समाधान देने का यत्न किया है।

आश्रम का राजनीति से क्या सबंध है इस विषय पर हमें अभी और बतलाना है। आलोच्य लेख का आशय यह है कि आश्रम मानो फ्रेंच सरकार की खुशामद करता है और भारत विरोधी दृष्टिकोण रखता है। यह वास्तव में, अत्यन्त अन्याय पूर्ण आरोप है यदि श्री अरविन्द भारत भक्त है तो उनका आश्रम, श्री माताजी तथा साधक भारत विरोधी नहीं हो सकते। भारत की अखण्डता के विषय पर श्री अरविन्द ने अपने १५ अगस्त, १९४७ के सदेश में अपूर्व बल दिया था। उन्होंने कहा था—"जैसे भी हो विभाजन दूर होना ही चाहिये और होगा ही। क्योंकि इसके बिना भारत के भावी विकास को हानि पहुँच सकती है, वह खण्डित भी हो सकता है। और ऐसा किसी हालत में नहीं होना चाहिये।" श्री माताजी ने ३ जून, १९४७ के केबिनेट मिशन के प्रस्तावों को रेडियो पर सुना और अपनी गभीर अनुभूति को इन शब्दों में व्यक्त किया—

"भारतीय स्वाधीनता को सगठित करने में जो कठिनाइयां है उन्हें हल करने के लिये हमारे सामने एक प्रस्ताव रखा गया है। और उसे तीव्र खिन्नता तथा आशका पूर्वक स्वीकार किया जा रहा है। परन्तु क्या तुम जानते हो यह प्रस्ताव हमारे सामने रखा ही क्यों गया है? हमारे आपस के झगड़ों की मूर्खता को हमे जतलाने के लिये। और क्या तुम जानते हो कि हमे यह स्वीकार क्यों करना पड़ रहा है? इस लिये कि हम अपने आपको अपने झगड़ो की मूर्खता जतला सकें।" (अदिति अगस्त १९४७)

इन शब्दों में जो देश के लिये मार्मिक वेदना है उसको अनुभव करके कोई साहसी ही उनकी लेखिका को भारत विरोधिनी कह सकेगा।

परन्तु स्वाधीनता उपलब्ध हो जाने पर माता जी की कृतज्ञता पूर्ण प्रार्थना थी—

"हे हमारी मात, हे भारत की आत्मा, मात, जिसने घोरतम अवसाद के समय भी अपने बच्चों का साथ कभी नहीं छोड़ा उस समय भी नहीं जब वे तेरे आदेश से विमुख हुए

सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी

अन्य प्रभुओं की सेवा स्वीकार की और तेरी अवहेलना की। हमें प्रेरित कर कि हम सदा महान आदर्शों के पक्ष में रहे और अध्यात्म-मार्ग की नेत्री तथा सब जातियों की मित्र और सहायिका के रूप में तेरी सच्ची छवि मनुष्यों को दिखावें।"

(अदिति नवम्बर १९४७)

परन्तु, निश्चय ही, आश्रम कोई राष्ट्रवादी सस्था भी नही है। आश्रम भारत की सनातन आध्यात्मिक परम्परा का एक आधुनिक केन्द्र है।

यहा श्री अरविन्द के पथप्रदर्शन मे मानव सस्कृति के नवनिर्माण का आयोजन है, इस समय तक की मानव सस्कृतियो का उचित समन्वय करने का यत्न है, अथवा एक उच्च आध्यात्मिक शक्ति के मध्यम से मानव प्रकृति के रूपातर का पुरुषार्थ है। ऐसा केन्द्र अन्तर्राष्ट्रीय होगा, जहा कई भाषाए सुनाई देगी तथा जीवन के कई वेश दिखाई देगे। परन्तु आन्तरिक भावना मे सब मे एक ही, कम अथवा अधिक, भगवान् की प्राप्ति तथा आत्मोपलब्धि की अभीप्सा होगी, गीता और उपनिषद् तथा सामान्य भारतीय आध्यात्मिक परम्परा के लिये मान मिलेगा। आश्रम की भाषा फ्रेंच नहीं है, अन्त प्रान्तीय भाषा सामान्यत हिन्दी है आश्रम का कोई दल धारा सभा मे भी नहीं है। परन्तु यदि कोई धारासभा के सदस्य तथा फ्रेंच सरकार के अधिकारी श्री अरविन्द और माताजी के लिये भक्ति रखते है। और आश्रम मे आते जाते हा और इससे कोई अपने अनुमान लगाने लगे तो उसके लिये वह स्वतन्त्र है। पूछने पर श्री अरविन्द तथा माता जी किसी विशेष अवस्था मे राजनीतिक विषय पर परामर्श भी द सकते है, परन्तु यह परामर्श, कभी भारत के लिये अहित कर हो सकता है यह अकल्पनीय है। व्यवहार मे आश्रम किसी राजनीतिक दल का कभी पोषक नहीं हुआ। श्री अरविन्द आश्रम अपने आध्यात्मिक ध्येय से च्युत नहीं हो सकता। आदर्श के रूप बेशक उनसब राजनीतिक दृष्टिकोणों को, जो व्यक्ति और समाज के आध्यात्मिक विकास के लिये उपयोगी है, समन्वयात्मक भाव मे यहां मान दिया जाता है।

आश्रम हर प्रकार से एक आध्यात्मिक अनुसधानालय ह और इसकी जीवन शैली निश्चित ही, अपने ढग की है। इसके त्यौहार अपने है तथा उनके मनाने की शैली भी अपनी है। चार दर्शन दिनो (२१ फर्वरी, २४ अप्रैल, १५ अगस्त और २४ नवम्बर) के अतिरिक्त यहा दुर्गाष्टमी, विजयदशमी (दसहरा) महाकाली दिवस (दिवाली), महालक्ष्मी दिवस (शरत् पूर्णिमा), २५ दिसबर तथा पहली जनवरी अपने आध्यात्मिक महत्व की दृष्टि से मनाये जाते हैं। परन्तु इन दिनो भी आश्रम का सामान्य जीवन बराबर चलता रहता है। फर्क इतना ही पडता है कि दर्शन के दिन बहुत से आगन्तुक होते है और श्री अरविन्द के दर्शन प्राप्त होते हैं और बाकी दिनो पर रात्रि के नौ बजे के करीब श्री माताजी के विशेष आशीर्वाद तथा कभी २ प्रेरणा रूप कुछ वचन प्राप्त होते है। रजोगुणी ढंग के उल्लासपूर्ण त्यौहार साधना के ही अनुकूल नहीं। कभी साधक की मृत्यु पर भी आश्रम मे कोई हलचल नहीं दिखाई देती उसके लिये मौन प्रार्थना ही उसकी सच्ची सेवा मानी जाती है। आश्रम को जाचते हुए यह अनिवार्य रूप से याद रखने की आवश्यकता है कि यह एक शुद्ध आध्यात्मिक केन्द्र है जो सामान्य सामाजिक तथा राजनीतिक त्यौहारो और प्रगतियों मे अपनी अभीप्सा और प्रार्थना से चाहे सम्मिलित हो जाय, परन्तु उसके रजोगुणी आवेशात्मक भाव से इसे तटस्थ रहना होगा।

श्री अरविन्द को, अपन आध्यात्मिक कार्य मे प्रवृत्त हुए आज ३६ वर्ष होते हैं। इस बीच उन्हे देशबधु चित्तरंजनदास न बुलाया, विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर और ला० लाजपतराय यहा आकर स्वयं उनसे मिल गए, तथा एक दो बार उन्हे काग्रेस के राष्ट्रपति पद के लिये भी निमंत्रित किया गया, परन्तु वे अपने कार्य का महत्त्व जानते हुए उसे छोड़न को तैयार नहीं हुए। आश्चर्य होता है, कैसे कोई यह कल्पना भी कर सकता है कि श्री अरविन्द पांडिचेरी की राजनीति मे अपना समय लगायेंगे। श्री अरविन्द और श्री माताजी अपूर्व एकाग्रता तथा अचिंत्य विश्वास से अपन आध्यात्मिक कार्य मे तल्लीन है। व किसी दूसरे काम मे उतनी ही रुचि रखते प्रतीत होते हैं जितनी कि वह उनके काममें सहायक है अथवा अनिवार्य है। मेरे देशवासी भाई बहिन देश और ससार के हित साधक इस महत कार्य के फल को धीरज से प्रतीक्षा करे, कम से कम इसके सबध में अपनी भावना विचार पूर्वक बनाए।

——०——

साहित्यसमीक्षा

(समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तकादि की २ प्रतियां भेजनी चाहिये ।)

सत्य का सैनिक—लेखक —श्री नारायण प्रसाद 'विन्दु'

प्रकाशक—श्री करसनदास विल २१२ टरी फोर्ट बम्बई मूल्य २) ।

श्री नारायण प्रसाद जी 'विन्दु' श्री अरविन्दाश्रम पॉडीचेरी के साधक हैं। उन्होंने सर्वसाधारण जनता मे अध्यात्मिक रुचि उत्पन्न करने और आध्यात्म मार्ग मे आने वाली कठिनाइयो तथा उनसे पार होने के साधनो का परिचय कराने के लिये इस नाटक की रचना की है। भाषा, भाव, शैली, गीत इत्यादि प्रत्येक दृष्टि से यह अध्यात्मिक नाटक हम बहुत ही उत्तम और रोचक लगा है। इसमे जो गीत स्थान स्थान पर दिये गये है उनसे तो इसकी उपयोगिता बहुत अधिक बढ गई है। पुस्तक के अन्त मे सुप्रसिद्ध सगीतज्ञ श्री दिलीप कुमार राय कृत उनका अंग्रेजी अनुवाद भी दे दिया गया है जो अत्युत्तम है।

जगन्माता के प्रति भक्ति भाव से ओत प्रोत निम्न गीत कितना सुन्दर है ?

हर स्वर मेरा उच्चार करे,
हर सॉस यही झकार करे।
मेरा हर रोम पुकार करे,
मैं तेरा मॉ मैं तेरा ॥
मन मृदग के सब तालो मे,
हृत्तन्त्री के सब तारो मे।
पुन यही एक गुजार करे,
मैं तेरा मॉ मैं तेरा ॥
चरणो मे आवेदन मेरा
टूटे मॉ ! सीमा का घेरा।
पुलकित हो सजल पुकार करे,
मैं तेरा मॉ मैं तेरा ॥

कितने हृदय के अन्तस्तल मे निकली हुई यह प्रार्थना है ?

साधना का मार्ग कितना कठिन है तथा इस मे कितनी वीरता की आवश्यकता है इसका कितना सुन्दर चित्रण निम्न गीत मे श्री नारायण प्रसाद जी ने किया है।

तुमतो चले हो युद्ध मे जय प्राप्त करने को यहा।
भगवान के आह्वान पर निर्भय विचरने को यहा॥
शिवसत्य के हितप्राणका बलिदान देनको यहा।
होने अमर करने समर औ देखने प्रभु को यहा॥
हे वीर साधन मार्ग पर, कसके कमर आगे बढो।
मन के खुले मैदान मे, होकर खडे खुलकर लडो॥
है चाह जीवनमे अगर कुछकर दिखाने की भला।
निर्भीक हो रिपु से कहो सकल्प की ज्वाला जला॥
आधी चले पत्थर पडे, धरती फटे बिजली गिरे।
बरसे प्रलयकी आग गरजे काल कलि हमला करे
हे वीर साधन मार्ग पर कसके कमर आगे बढो।
मन के खुले मैदान मे, होकर खडे खुल कर लडो॥

अन्य गीत भी इतने ही भाव पूर्ण, सरल और प्रभावोत्पादक हैं। हमे विश्वास है कि यह आध्यात्मिक नाटक अध्यात्ममार्ग के पथिको के

लिये बड़ा उपयोगी तथा सहायक सिद्ध होगा।

सिख और यज्ञोपवीन—*लेखक श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी प्रकाशक—सम्राट ग्रन्थ प्रकाशन विभाग पहाड़ी धीरज देहली। मूल्य ≡)*

इस २५ पृष्ठ की पुस्तिका में श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने ग्रन्थ साहेब, जन्म साखी, नानक प्रकाश, गुरु मत निर्णय सागर, गुरु विलास, विचित्र नाटक इत्यादि सिक्खों के प्रामाणिक ग्रन्थों के वचन अर्थसहित दे कर यह सिद्ध किया है कि श्री गुरु नानक देव जी, गुरु हरगोविन्द जी, गुरु तेगबहादुर जी और गुरु गोविन्द सिंह जी आदि सिक्ख गुरु यज्ञोपवीत पहनते थे तथा गुरु मत निर्णय सागर पृष्ठ ४६५ के अनुसार जब श्री गुरु गोविन्द सिंह जी से यह प्रश्न किया गया कि 'जनेऊ पावने समय आगे सिर मुंडावन की रीति थी। अब सिक्ख रोकते हैं क्या हुक्म" इस पर श्री गुरु गोविन्द सिंह जी ने उत्तर दिया कि सहज धारी के बेटे का कैंची से रीति करो, केस धारी के बेटे को दही से केसी असनान (स्नान) कराओ ॥'

जनेऊ समय—

इस प्रकार दशम गुरु जी की आज्ञा सब सिखों को यज्ञोपवीत धारण की है।

आदि ग्रन्थ साहेब के दइया कपाह सतोष सूत जत गंढी सत वट' इत्यादि जिन वचनों का यह तात्पर्य कई सिख भाई निकालते हैं कि इन से सूत इत्यादि के यज्ञोपवीत का निषेध है उनका निर्मल सन्त पंडित तारासिंह जी के निम्न वचन उद्धृत करते हुए बताया गया है कि—

'आदि ग्रन्थ साहिब के वचन जो निंदा परक प्रतीत होते हैं तिनका तात्पर्य दइया कपाह सतोख सूत आदि पाठसे कहे जनेऊ की स्तुति मे है तथा ज्ञान रूप यज्ञोपवीत की स्तुति में है, इसकी निन्दा मे नहीं।"

इसी व्याख्या के समर्थन में 'यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति' (ऋग्वेद) न लिगं धर्म कारणम् (मनु) आदि को भी लेखक महोदय ने उद्धृत किया है जो ठीक ही है।

भाई दयासिंह जी, भाई प्रल्हाद सिंह जी आदि के जिन रहत नामों में यज्ञोपवीत धारण का निषेध हैं उनकी अप्रामाणिकता और नवीनता को प्रबल प्रमाणों से सिद्ध किया गया है। इस प्रकार यह पुस्तिका प्रत्येक सिख तथा आर्य (हिन्दू) के लिये उपयोगी है। इसको सिख भाई यदि निष्पक्षपात होकर पढ़ें तो उनके अनेक भ्रम दूर हो सकते हैं और हिन्दू सिख एकता की वृद्धि में भी यह सहायक हो सकती है। श्रीस्वामी जी का इस विषयक परिश्रम अत्यन्त प्रशंसनीय है।

आर्य पंचांग—*सम्पादक—पं० शिवानन्द जी प्राप्ति स्थान—आर्य पंचांग कार्यालय शाहदरा देहली। मूल्य ॥=)*

नामकरणादि संस्कारों तथा पर्वों के अवसर पर पञ्चांग की आवश्यकता आर्यों को भी पड़ती है। प्रचलित पञ्चांगों में फलित ज्योतिष के नाम से अनेक मिथ्या विश्वास व भ्रान्तियां जनता के हृदय में उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है। इस पञ्चांग में इस प्रकार की भ्रान्तियों का दिग्दर्शन कराते हुए फलित ज्योतिष की निस्सारता को संक्षेप से दिखाया गया है। आर्य पर्वों की सम्पूर्ण सूची, १६ वैदिक संस्कारों के नाम तथा उनके कराने का समयादि आर्य समाज के धर्म वीरों की तिथि सहित नामावली, भारत सरकार और पूर्वी पंजाब की छुट्टियां इत्यादि विवरण और स्थान २ पर योग दर्शन, मनुस्मृति

गीतादि के उद्धरणों से पचाग की उपयोगिता मे प्रशसर्न य वृद्धि हुई है। आशा है इसे अपना कर ज्योतिष प्रेमी आर्य सम्पादक महोदय का उत्साह बढायेगे जिससे अगल सस्करण में वे फलित ज्योतिष की निस्सारता आदि पर अधिक प्रकाश डाल सके जैसे कि उन्होंन विचार प्रकट किया है, शीघ्रता नन्थ छापे का अशुद्धियो को दूर कर सके तथा अन्य प्रकार से इसको अधिक उपयोगी बना सके।

गुरुकुल पत्रिका—सम्पादक—*श्री प० सुखदेव जी विद्यावाचस्पति और प० रामेश जी वेदी आयुर्वेदालकार गुरुकुल विश्वविद्यालय कागडी जला सहारनपुर युक्त प्रान्त वार्षिक मूल्य ४) १ प्रति का ।=)।*

गत भाद्रपद २००४ से यह गुरुकुल पत्रिका मासिक रूप म गुरुकुल विश्वविद्यालय कागडा से प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका का उद्देश्य इसके व्यवस्थापक श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने प्रथम अक मे निम्न शब्दों मे प्रकट किया "गुरुकुल के जो आधारभूत सिद्धान्त हैं उनके प्रकाशन और प्रचार के लिये तथा जिस भारतीय सस्कृति की पृष्ठभूमि पर गुरुकुल खडा है उसकी विशद व्याख्या के लिये 'गुरुकुल पत्रिका" का आयोजन किया गया। गुरुकुल आन्दोलन और गुरुकुल सम्बन्धी गाथा की मासिक प्रगति भी इसम रहा करगी।' इस समय तक इस पत्रिका के ११ अक निकल चुके हैं जो इस समालोचना को लिखते समय हमारे सन्मुख है। निसन्देह पत्रिका म श्री प इन्द्रजी विद्यावाचस्पति, डा० रघुवीर जी एम० ए० पी० एच० डी, स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक, श्री कन्हैयालाल माणिकलाल जी मुन्शी, राजा महेन्द्र प्रताप जी इत्यादि अनेक सुप्रसिद्ध महानुभावो के शिक्षा, भारतीय सस्कृति, राष्ट्र भाषा आदि विषयक उत्तम लेख है। पौष २००४ का अङ्क अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की पुण्यस्मृति में श्री श्रद्धानन्द विशेषाङ्क के रूप मे निकाला गया जिस मे स्व कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर, श्री प रामनारायण जी मिश्र, डा० सत्यप्रकाश जी डी एस सी श्री आत्माराम गोविन्द खर श्री जमुनादास महता तथा अनेक सुयोग्य स्नातकों द्वारा समर्पित श्रद्धाजलियो का सग्रह किया गया। अन्य अङ्को मे भी विचारोत्पादक सामग्री पाठको को देने का अभिनन्दनीय प्रयत्न किया गया है। हम अपनी मातृसस्था का इस पत्रिका का हार्दिक अभिनन्दन करते है और आशा करते है कि यह गुरुकुल विश्वविद्यालय के गौरव के अनुरूप और भी अधिक उन्नत रूप मे जनता की सेवा करती रहेगी। ध द

आरोग्य—*स पा—श्री विट्ठल दास मोदी आरोग्य कार्यालय गोरखपुर वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति का मूल्य ।=)*

जैसे कि नाम से ही स्पष्ट है यह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी मासिक पत्र है जिस मे आरोग्य और प्राकृतिक चिकित्सा विषयक उत्तम लेख रहते हैं। इस समालोचना को लिखते समय 'आरोग्य' का अगस्त १६४६ का अङ्क हमारे सन्मुख है। इस मे श्री विनोबा भावे का आरोग्य विज्ञान, श्रीमती सरोजिनी देवी विशारदा का 'गर्भवती स्त्री इतना तो जाने' श्री विट्ठलदास जी मोदी सम्पादक का 'स्वप्न दोष से मुक्ति की सरल रीति श्री राधाकृष्ण बजाज मन्त्री गोसेवा सङ्घ वर्धा का 'दूध से अच्छा छाछ' श्रीमती प्रभावती देवी का शिशुओं के पेट का दर्द' श्री फतेहचन्द शर्मा का 'अपेंडिसाइटिस से मुक्ति' इत्यादि लेख विशेष उत्तम और उपयोगी हैं। इस पत्र के कई अन्य अङ्क भी हम ने देखे और उन्हे उपयोगी पाया है। हम आशा करते हैं कि इस पत्र से युवक युवतिया तथा अन्य सब स्वास्थ्य प्रेमी लाभ उठायेंगे।

ध देव

योगिराज श्रीकृष्ण सन्देश

(कवयिता—श्री प० रुद्र मित्र जी शास्त्री विद्यावारिधि)

कर्म योग का सार यही है

कभी न रुकना, बढ़ते रहना जने जीवन का प्यार यही है।

जब जीवन जड़ बन जाता है।
जीव अचेतन कहलाता है।
गति हीन चेतना हीन विश्व।
वैभव हीन मृत-सा भाता है॥

उस समय अलौकिक पुरुष एक।
आता है जग मे जान डालने।
निष्प्राण धमनियों मे फिर से।
उच्छ्वास प्रबल प्रिय प्राण डालने॥

नित्य निरन्तर चलने वाला, सार रूप ससार यही है॥

चुप होकर बैठे रहना ही,।
ज्ञान नहीं है भक्ति नहीं है।
जग से हट बनवास अरे।
वैराग्य नहीं है मुक्ति नहीं है।

संयम शील निग्रही कर्म रत।
गृही तपस्वी कहलाता है।
दोषी वनवासी बन कर भी।
काम राग मे फस जाता है॥

निष्काम कर्म करते रहना। वास्तविक मुक्ति का द्वार यही है॥

ज्ञान हीन है कर्म व्यर्थ सेव।
कर्म हीन है ज्ञान निरर्थक।
ज्ञान कर्म सम नर जीवन यह।
बन जाता है सुखद सार्थक।

ममता मोह स्वार्थ त्याग से।
मानव मानव बन जाता है।
कर्म वासना परित्याग से।
योगी योगी कहलाता है॥

कर्म योग है शास्त्र अनूठा, सुख सरिता की धार यही है॥

अर्जुन जब रण मे घबराया।
मन में ममता मोह समाया।
है बन्ध्य गुरु मित्र बन्धु मम।
बरबस माया मे लपटाया है।

दूर किया अज्ञान अन्धेरा।
सोते से फिर उसे जगाया।
क्षण भंगुर नश्वर जगती की।
ममता माया मोह नशाया॥

हृदय हुआ निर्भ्रान्त स्फूर्त, मृत मानव का उपचार यही है॥

दे संस्मृति चेतना, पार्थ को।
उठा दिया उपदेश सुना कर।
रण आंगन मे खड़ा कर दिया।
गीता का सन्देश सुना कर॥

गीतामृत का पान करा कर।
युद्ध भूमि मे बढ़ा दिया।
अमर बना कमलेश धनजय।
विश्व विजेता बना दिया॥

Dr. Pattabhi Commends "Aryavarta" as Country and "Aryan" as Language-

"I have read your little pamphlet with great interest, and I wonder why the name "Aryavarta" should not be used and the language itself called as "Aryan so as to eliminate all the controversies of the day But we must take note of the realities of the world while trying to introduce the ideals However, you have made a beginning and I dare say sooner or later your suggestion will take shape , writes Dr B Pattabhi Sitaramaya president of the Indian National Congress, in a letter te Pandit S Chandra, Former Assistant Secretary of the International Aryan league, Delhi, who has addressed a lengthy printed circular letter of eight pages to all the members of the Constituent Assembly of India, appealing to them to adopt "Aryavarta in the constitution, as the future name of the country

In the course of the circular letter, pandit Chandra, while giving genesis of the suggested names of the country says that the names India and Hindustan were given by foreign rulers and invaders The Bharat or Bharatvarsha was named after the name of a ruler But Aryavarta was called from times immemorial and this name is found in all the ancient literature and scriptures with its significant and beautiful meanings, such as land of the noble and the righteous people He has quoted several authorities supporting the ethical interpretation of Aryavarta and also its boundary ocean

Comparing Aryavarta with other suggested names, Pandit Chandra says that it will always be inspiring and will instil in the people of the country a sense to develop all those noble qualities and virtues that are required and expected of an Arya There are no nobler words, in the history of mankind, than Arya and Aryavarata used for a man and a country In view of the universal and cosmopolitan character of the meanings of these words, the South Indians or the Dravidians should also not hesitate to adopt these words Even in the international world, the name Aryavarta will command respect, as it did in the ancient days If there is any word which can stand not only in comparison to Pakistan, but far ahead in grandeur and splendour in its ethical sense, it is only "Aryavarta" and certainly not any of the other three names, referred to above

Pandit Chandra further says that if our country wants to revive the venerable position of becoming the spiritual leader of the world, the name Aryavarta will certainly be one of the main factors and sources, leading to that end, and therefore, he has appealed to the members of the Constituent Assembly to restore the ancient glorious name and undo the great wrong done to our Nation and country by interested pople both foreigners and our

ग्राहकों के नाम सूचना

निम्न लिखित ग्राहकों का चन्दा सितम्बर मास के साथ समाप्त होता है। अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल ही मनीआर्डर द्वारा भेज दे अन्यथा आगामी अक उनकी सेवा मे वी पी द्वारा भेजा जायगा। धन प्रत्येक दशा में ३०।६।४६ तक कार्यालय मे पहुँच जाना चाहिये। कृपया अपने ५ मित्रों को भी ग्राहक बनाइये। मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक सख्या अवश्य लिखे।

ग्राहक सख्या	पता
१०	मन्त्री जी, आर्य समाज ग्वालियर सिटि
२५	,, ,, जौनपुर यू० पी०
४६	श्री छोगालाल ज्ञानराम जी, परशूराम क्षेत्र पिन्डवारा
६२	मन्त्री जी आर्य समाज पोर बन्दर काठियावाड
६४	श्री देवीदास धनीलाल जी आर्य जहागीराबाद, बुलन्द शहर
६५	श्री मन्त्री जी आर्य समाज पुस्तकालय लौहड बाजार भिवानी
६६	श्री प० पन्नालाल रामनारायण जी नेत्र वैद्य हिंगोली दक्षिण
६७	श्री मन्त्री जी आर्य समाज बारिकपुर २० न० बजाज मुहल्ला २४ परगना
६६	श्री मन्त्री जी आर्य समाज कालपी जिला उरई
७०	श्री राना शिवरत्न सिंह जी पनी फतेहपुर शहर
७१	श्री नरेन्द्र सिंह जी यादव ओम् भंडार मैनपुरी
१०२	श्री मन्त्री जी आर्य समाज भागलपुर बिहार
११४	श्री डा० कमल सिंह जी देवास गैट उज्जैन मालवा
११७	श्री मन्त्री जी आर्य समाज मीनमाल मारवाड
११६	श्री पन्ना लाल जी मुतहदी बाजार जौनपुर
१२२	श्री मन्त्री जी आर्य समाज सोनाफलिया सूरत सिटि
१२५	श्री पं० जनार्दन जी शर्मा आर्य, गाजियागाजीपुर
१२८	श्री राम स्वरूप जी पैनशनर सूबेदार मैनपुर
१४४	त्रिवेदी प० नर्मदा शंकर जी जिज्ञासु गुरुकुल सूपा नवसारी
२६५	श्री मन्त्री जी आर्य समाज दमोह मध्य प्रान्त
३१७	श्री ,, ,, नीमच छावनी
३५६	श्री वेद रत्न जी गौतम सीसामऊ कानपुर
५०२	श्री कन्हैयासिंह जी वैद्य स्थान जल्लावाद १० सिन्धौली सीतापुर
५३६	श्री वि० दामोदर जी भडारी जो कार्कल साउथ कनारा
५४०	श्री एस० एस करन्जे जमीदार मूड विद्री साउथ कनारा
५४१	श्री एन० जी० राव प्रोफेसर बम्बई
५४३	श्री मैनेजर, राय साहब रामचन्द्र वाचनालय महू मध्य भारत
५४७	श्री कविराज हरनामदास जी बी० ए० दिल्ली
५४६	श्री मन्त्री जी आर्य समाज तिर्वा फतेहगढ
५५०	श्री धर्म मित्र जी वानप्रस्थी आर्य समाज फरीदकोट
५५१	श्री मन्त्री जी आर्य समाज बढहल गज गौरखपुर
५५२	श्री बिहारीलाल जी डायज स्क्वायर नई दिल्ली
५५६	श्री राजेशचन्द्र जी मुरादाबाद
५६१	श्री मन्त्री जी आर्य समाज भईवरा जौनपुर
६०६	श्री रामरूप मण्डल फेतिया खड्गपुर

सूची सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

१५—८—१९४९ तक प्राप्त दान

१८)	योग उन दान दाताओ का जिन्होंने ५) से कम दान दिया है।
५)	श्री शिवचरण लाल जी मेरापो पो० कु दर की (मुरादाबाद)।
६)	,, पुरुषोत्तम लाल जी अमृतसर।
१५)	,, मेलाराम जी देहरादून।
१५)	मंत्री आ० समाज यवतमाल (मध्यप्रदेश)।
७।=)	मत्री आ० समाज जबलपुर।
२५)	,, जगन्नाथ जी गुप्त कोतवाल बाजार मद्रास।
५)	,, गुरुदत्त जी गौतम बिडला मिल सब्जी मडी देहली।
५०)	,, मैजर रामचन्द्र जी नई देहली।
११)	,, लाला बुद्धिप्रकाश जी देहली।
५)	,, कृष्ण चन्द्र जी देहली।
११)	,, दीनानाथ गोपाल गज।
१७३।=)	योग
६०६॥)	गतयोग
७७९॥।=)	
२५) ❋	
८०४॥।=)	सर्व योग

(क्रमश)

❋ बनवारी लाल जी साहिब गज सन्थाल का यह दान भूल से आ० स० स्थापना दिवस की दान सूची मे अगस्त मास मे छप गया है। पाठक गण नोट कर ले, अब यह धन सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि मे दिखा दिया गया है।

दान दाताओं को धन्यवाद—

देशदेशान्तरों मे सार्वभौम वैदिक धर्म प्रचार और वैदिक संस्कृति के प्रचार की समुचित व्यवस्था कराने के उद्देश्य से आयोजित इस सार्वदेशिक वेदप्रचार निधि मे उदार सहायता देना प्रत्येक आर्य नर नारी का धार्मिक कर्तव्य है। श्रावणी पर्व के अवसर पर सार्वदेशिक सभा की ओर से जो विज्ञप्ति सब आर्य समाजों को भेजी गई थी उस मे अन्य कार्यक्रम के साथ यह आदेश दिया गया था कि इस सार्वदेशिक वेदप्रचार निधि के लिये अधिकतम सहायता सब नर नारियों से प्राप्त कर के उसे सभा कार्यालय मे अविलम्ब भिजवा देना चाहिये। आशा है सब आर्यसमाजों ने इस आदेश का पालन किया होगा जिन्हों ने न किया हो उन्हें चाहिये कि अब भी इसे अपने सदस्यों तथा सहायकों से प्राप्त करके सभा कार्यालय मे भिजवा दे। इस पुण्य कार्य मे प्रमाद व विलम्ब न करना चाहिये।

धर्मदेव विद्या वाचस्पति

दान सूची स्थापना दिवस

५) मन्त्री आर्य समाज अतरौली अलीगढ़

२५) मन्त्री ,, ,, महू छावनी (मध्य प्रदेश)

२) मन्त्री आर्य समाज सनौता (मेरठ)

३२)

८६६ ।।।)

६२८ ।।।)

७५) बनवारी लाल जी साहिब गंज के जो सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिए आए थे, भूल से अगस्त के सार्वदेशिक में स्थापना दिवस की दान सूची मे दिखाये गए हैं, पाठकगण इसे नोट करलें।

६०३ ।।।) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद,
जिनका भाग अभी तक अप्राप्त है
वे कृपया शीघ्र भेजें।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक सभा

दान सूची दयानन्द पुरस्कार निधि

५) श्री किशोरचन्द्र जी किशोर लुधियाना।

५) ,, गुरदत्तमल जी दयानन्द नगर।

५) ,, ब्रजलाल जी दयानन्द नगर।

१०) ,, कर्मचन्द्र जी नई देहली।

१०) श्रीमती चन्द्रकुमारी जी अमृतसर।

—x—

११) मंत्री आर्य समाज लक्ष्मणसर।
५) श्री टेकचन्द जी प्रधान आ० स०। डलहौजी
५) ,, तुलसीदास जी आ० स० मोईवाड़ा परेल बम्बई १२।
१०) छज्जूराम जी अग्रवाल जगाधरी।
२०) ,, मंत्री आ० स० छावनी महू।
१०) ,, ,, आ० स० झज्जर रोड रोहतक।
५) ,, वेद प्रकाश जी
१०१)
२०२५।=) गत योग
२१२६।=)
५१०१
७२२७।=)

५०००) श्री अमृतधारा ट्रस्ट देहरादून
१०१) आ० समाज लातूर (हैदराबाद राज्य)

—×—

दान शुद्धि प्रचारार्थ

१००) श्री सेठ जुगल किशोर जी बिड़ला देहली।
१००)
१६३) गत योग
२६३) सर्वयोग

—×—

विविध दान सूची

५) मंत्री आ० स० हिन्डौन जयपुर राज्य (विवाहोपलक्ष्य मे)
५)
५२) गत योग
५७) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद

गंगा प्रसाद उपाध्याय
मंत्री
सार्वदेशिक सभा

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र

(इसे पढकर दान राशि कृपया शीघ्र सभा कार्यालय मे भेजिये और अन्यों से भिजवाइये ।

सेवा में,

श्री मन्त्री जी

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा,

बलिदान भवन, देहली

श्रीयुत मन्त्री जी, नमस्ते !

देश देशांतरों में सार्वभौम वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति के प्रचार की व्यवस्था के उद्देश्य से स्थापित सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि की योजना को मै अत्यावश्यक और उपयुक्त समझता हू और इस पुण्यकार्य की सहायतार्थ रु०की राशि

तथा

अथवा रु० के वार्षिक दान को प्रतिज्ञा करता हू । यह राशि आप की सेवा में भेजी जा रही है ।

भवदीय

ह०

नाम—

पूरा पता—

तिथि—

आर्यनगर ग़ाजियाबाद

अब तक जिन प्लाटों के पट्टों की रजिस्ट्री हुई है उनकी (पट्टे दारों के नाम सहित) तालिका

क्रम सं०	नाम पट्टे दार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
१.	श्री बनारसीदास शैदा, हैडमास्टर, एस आर हाई स्कूल पटियाला,	२६३	२७२ २ वर्गगज
२	श्री पिन्डीदास जी ज्ञानी, मैनेजर आर्य प्रेस, दुर्ग्याणा अमृतसर	२४०	२७२ २
३.	,, गोविन्दराम जी पोस्ट मास्टर, पुराना किला नई देहली	२१२	१३७
४.	,, विपिन चन्द्र जी, ३२ प्रेम हाउस, कैनाट प्लेस नई देहली	१३२	१२८
५.	,, नूतन दास जी, क्लर्क, ग्रिन्डले बैंक, केनाट प्लेस नई देहली	२४२	२७२ २
६.	,, गगा राम जी, ०।० क्वाटर न० २ माता सुन्दरी प्लेस नई देहली	२४३	२७२ २
७.	,, कृष्णप्रकाश जी मेहता, पी. डी. ओ. रिजर्व बैंक आफ इन्डिया, चांदनी चौक देहली	२४४	२७२.२
८.	,, मूलनारायण जी मेहता क्वाटर न० ई० २ माता सुन्दरी प्लेस नई देहली	२४५	२७२.२
९.	,, चन्द्रभानु जी एक्सचेन्ज सेंट्रल डिपार्टमेन्ट, रिजर्व बैंक, आफ इन्डिया देहली	२२२	२७२.२
१०	,, भगवानदास जी, असिस्टेन्ट सुपरवाइजर मिलिटरी डेरी फार्म	२२३	२७२.२

क्रम सं०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
११	पं बुलाकीराम जी स्यालकोट वाले टेन्ट न० १६ बी, कोटला फीरोजशाह दिल्ली	२०२	१३७,,
१२.	श्री. सुरेन्द्रनाथ जी टिकट क्लेक्टर, ई० आई० आर अमरोहा मुरादाबाद,	१५४	१७२-२
१३	,, प्रेमचन्द्र जी ग्राम बढौली फतेहखा पो० कोल जि० अलीगढ़	१२६	१११
१४	,, कृष्णदयाल जी डाइरेक्टर, रमिंगटन रोड, इन्शोरेन्शन ई० पी डी० कश्मीरी गेट देहली	१६३	२७२-२
१५.	,, प्रीतमचन्द्र जी आर्य ३२२बेगम बाग शालीमार हौज़री मेरठ	२०६	२४६
१६	,, रायासहब द्वारकादास जी, रकाब गंजरोड़ न० ८ नई देहली	१६०	२७२-२
१७	,, सत्यपाल जी द्वा० रायसाहब द्वारका दास मानकटलताला ४१ राम नगर देहली	१८९	२७२-२
१८.	श्री दयाराम जी शास्त्री डी० ए० वी० हाई स्कूल नई दिल्ली	२०७	२७२ २
१९.	,, ज्ञानचन्द्र जी का० नं० ५७ सी तुर्कमान गेट दिल्ली	२७२	२७२-२
२०	,, सोहनसिंह ठेकेदार, नया मारकेट करौल बाग देहली	२६७	२७२ २
२०	श्री जगन्नाथ जी, आसिस्टेन्ट कन्ट्रोलर आफ़िसर रेलव जयपुर	२६४	२७२-२
२२.	,, सत्यपाल जी,		

क्रम सं०	नाम पट्टे पार पूरे पते सहित	प्लाट सं०	क्षेत्रफल
	C/O लाल चन्द्र कशमीरी लाल वटाला (गुरदासपुर)	२२५	२७२-२
२३.	,, कश्मीरीलाल जी लालचन्द्र काशमीरी लाल वटाला जि० गुरदासपुर	२२४	२७२-२
२४	ब० शालिग्राम जी, २६ टेलीग्राफ स्कायर नई देहली	२६६	२७२-२
२५	,, महाराज दास जी, c/o Indian Standard Institution ब्लाक न० ११ Old Secret ariat न० २	२४८	२७२-२
२६.	,, दीवानचन्द्र जी, आर्य नगर लक्ष्मणभवन, पहाड़ गंज देहली	१३०	१२८
२७.	,, सत्येन्द्र नाथ c/oIndian Michinery सेल्स को ओपरेटिव, नया बाजार देहली	१५५	२७२-२
२८.	,, रघुनाथप्रसाद जी पाठक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली	२०३	१३७
२९	,, श्री शशिभूषण केन डवलपमेन्ट आफिस सीतापुर	२०४	१४६
३०.	,, श्रीमती जानकी देवी जी, गुरुकुल वृन्दावन (मथुरा)	१७१	२७२-२
३१.	श्री सुरेशचन्द्र जी % श्री मती जानकी देवी जी, गुरुकुल वृन्दावन मथुरा,	६०	२७२०२
३२.	,, सतीशचन्द्र जी % श्रीमती जानकीदेवी गुरुकुल वृन्दावन (मथुरा)	११६	१११
३३.	श्रीमती सुखदादेवी जी	१७२	२७२०२

क्रम सं०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
	गर्वनमेंट गर्ल्स स्कूल बड़ौत (मेरठ)		
३४.	,, टेकचन्द जी आर्य प्रधान आर्य समाज बैलून	२११	१३७ वर्गगज
	गुरदासपुर,		
३५.	,, विष्णुदास जी बर्तन फरोश, गल्ला मंडी, गंगानगर बीकानेर स्टेट,	७४	२८५
३६	,, बख्शी खुशहाल जी, आर्य पी० टी० आई० अमृत हायर स्कूल रोहाना (मुजफ्फरनगर)	८२	२७२.२
३७	,, योगेन्द्र जी सुपुत्र ला० टेकचन्द जी बैलून डलहौजी	२३६	२७२.२
३८	,, केशवचन्द जी c/o प० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक, सार्वदेशिक सभा देहली,	१२५	१११
३९.	,, शेरमल जी नैय्यर Q. No 57 तुर्कमानगेट, देहली,	२७१	२७२.२
४०.	,, श्रीमती शांति रानी कपूर धर्म पत्नी श्री किशोरी लालजी हैड ड्राफ्ट मेन, रेलवे वर्कशाप बीकानेर	२५१	२७२.२
४१.	श्री० कस्तूरीलाल जी कपूर हैड ड्राफ्टमेन, रेलवे वर्कशाप बीकानेर	२५२	२७२.२
४२.	,, विश्वनाथ कुमार,जी ८, रकाबगंज रोड, नई देहली,	१८८	२७२.२
४३.	,, सोमनाथ गोपाल जी आर्य, न० ११ एडवर्डस्कायर नई देहली,	१४७	२७२.२

क स	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट सं०	क्षेत्रफल
	गली नं० २३ लेडी हार्डिंग रोड नई देहली	४२	२७६
६८	श्री हरप्रकाश सिन्धवानी, Ministry of Education Govt of India New Delhi	४१	२७६
६९	श्री शान्तिदेवी जी धर्मपत्नी गनपतलाल जी कविराज गली न० २३ लेडी हार्डिग रोड नई देहली	४४	१६२ वर्गगज
७०	श्री शिवदेवी जी धर्म पत्नी श्री अनन्तराम जी आर्य गली न० ७ सत्य नगर करौल बाग देहली	४५	८४
७१	श्री आशानन्द जी भजनोपदेशक आर्य्य समाज नयावास देहली	१६२	१६७
७२	,, वेदप्रकाश जी आर्य्यवीर, मैनेजर वेहजिल लेबोरेटरी	४६	२७०,२
७३	,, केप्टिन हरिकिशन जी आर्य, भल्ला मेडिकल हाल के ऊपर देहली शाहदरा	४७	२७२२,
७४	,, हरिकिशन पुरी खत्री, रेलवे क्लीअरिंग एकान्ट आफिस किशनगंज देहली	११३	१११
७५	,, शान्तिदेवी धर्मपत्नी श्री जी पुरी हरिकिशन रेलवे क्लीअरिंग आफिस किशनगज देहली	११०	१११
७६	,, लभ्भूराम जी फैज बाजार कूचा परमानन्द म० नं० ४८६४ दरियागज देहली	१०२	१११
७७	,, हरनामसिंह जी अरोड़ा, देवनगर गर्व० क्वाटर नं० १६ डी० करौल बाग देहली	०८०	२७२२
७	,, श्रीमती तेजकौर जी धर्म पत्नी हरनामसिंह जी अरोड़ा देवनगर गर्व० क्वाटर नं० १६ डी करौल बाग	१०४	१११

क्रम सं०	पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट सं०	क्षेत्रफल
	देहली		
७९	,, बलराज वर्मा दीनानाथ क्वाटर नं० ८ चन्द्रावल रोड सब्जी मंडी देहली	१२३	१११
८०	,, कसतूरी लाल जी दीनानाथ क्वाटर नं० ८ चन्द्रावल रोड सब्जीमंडी देहली	११४	१११
८१	श्री रामलाल जी वन्धवान s/o श्री अर्जुनसिंह जी रेलवे क्लीअरिंग आफिस देहली	१११	१११ वर्गगज़
८२	श्रीमती रामरती जी धर्मपत्नी स्वर्गीय सीताराम भाई प्लेट न० ६ जापानी बिल्डिंग रोशनआरा रोड देहली	११६	११६
८३	श्री वेदप्रकाश जी ए० एस कपूर एकाउन्टेन्ट बैंक आफ बीकानेर लि० चाँदनी चौक देहली	११५	१११
८४	श्रीमती जयन्तीदेवी जी c/o डा० केदारनाथ जी शर्मा डाक्टर लेन, नई देहली	४८	२७२.२
८५	श्रीमती कुसमलतादेवीजी c/o डा० केदारनाथ शर्मा डाक्टर लेन नई देहली	४९	२७२.२
८६	श्री नरेन्द्र नाथ शर्मा सुपुत्र श्री डा० केदारनाथ जी डाक्टर लेन, नई देहली	५०	२७२.२
८७	श्री डा० केदारनाथ शर्मा नई देहली	५१	२७२.२
८८	श्री हेमचन्द्र जी शर्मा ८, टोडरमल लेन नई देहली	५२	२७२.२
८९	श्री रामजीदास जी कूचा परमानन्द दरियागंज देहली	११०	१११

स०	पट्टेदार पते सहित	प्लाट सं०	क्षेत्रफल
६०.	श्री० गिरधारीलाल जी %बख्शी किशोरी लाल जी नूरपूर (कांगड़ा)	७८	७८५
६१.	श्री० तारचन्द्र जी, ५७ कोटला रोड नई देहली	२७४	२७२ २
६२.	श्री जीवनलाल जी डगाल डिप्टी असिस्टेन्ट, कन्ट्रोल आफ एकान्ट, Air Force, ४८ कोटला रोड नई देहली	२७५	२७२.२
६३	श्री जयगोपाल जी मानकताला, %श्री रायसाहब द्वारका दास जी मानकताला ४१, राम नगर देहली	२७३	२७२.२
६४.	श्री हरप्रकाश जी सुपुत्र ला० बख्शीराम जी अहलूवालिया चूनामण्डी पहाड़गंज देहली	२८१	२७२ २

आर्य नगर का निर्माण शीघ्र हो

गाजियाबाद भूमि के प्लाटों की अब तक लगभग ११० रजिस्ट्रिया हो चुकी हैं, परन्तु कार्यालय को ६४ की सूची मिल सकी है, जो प्रकाशित की जा रही हैं। हम चाहते हैं कि आर्य नगर का शीघ्र से शीघ्र निर्माण हो जाय। हमारा विचार है कि सितम्बर के मध्य मे हम समस्त पट्टेदारों को बलिदान भवन (दिल्ली) मे बुला कर नगर निर्माण की योजना पर परस्पर विचार विमर्श करें। इस बीच मे पट्टेदार महोदयों से प्रार्थना है कि वे अपने २ निर्देश सभा कार्यालय मे भिजवा दे।

गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।

—— ० ——

आर्य समाजों की दैनिक उपयोग की वस्तुएँ

❀ आर्य सत्संग पद्धति ❀

इस पुस्तक में सार्वदेशिक सभा द्वारा निश्चित की हुई पद्धति के अनुसार दैनिक सध्या हवन, प्रार्थना मंत्र, स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरण, पाक्षिक यज्ञ, ऋग्वेद का अन्तिम (संगठन) सूक्त, कवितामय अनुवाद सहित, साप्ताहिक सत्संग विधि के अलावा प्रभु भक्ति के अत्युत्तम ५० भजन भी दिये गये है। बढ़िया कागज पर छपी ६४ पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य ।=) मात्र।

❀ नित्य कर्म विधि ❀

सध्या, हवन, प्रार्थना मंत्र, स्वस्ति वाचन, शान्ति प्रकरण, बृहत् हवन आदि की सब विधि दी गई है। मूल्य =)॥ मात्र।

❀ आर्य भजन माला ❀

आर्य समाज के प्रसिद्ध ७ कवियो के बनाये सुन्दर भाव पूर्ण प्रभु भक्ति के शुद्ध हिन्दी के भजनो का अपूर्व संग्रह। लगभग ६४ पृष्ठ की सुन्दर कागज पर छपी पुस्तक का मूल्य ।) मात्र।

❀ ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त ❀

आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संगों के अन्त मे सर्वत्र इस सूक्त पाठ करना आवश्यक है। बढ़िया कागज पर दोरंगी छपाई मे कवितामय अनुवाद सहित। प्रत्येक आर्य पुरुष को घर मे लगाना चाहिये मूल्य)॥ प्रति, २॥) सैकड़ा

❀ आर्य समाज के प्रवेश-पत्र तथा रसीद बुके ❀

आर्य समाज के नियमो सहित, बढ़िया बैंक पेपर पर छपे १०० फार्मों की जिल्द का मूल्य १॥) मात्र १०० रसीदो की जिल्द का मूल्य १॥) मात्र।

❀ ओ३म् पताकायें ❀

संस्कारो, यज्ञो, उत्सवों तथा आर्य गृहो की सजावट के लिये। साइज ४ ७"। १०० पताकाओ की रस्सी समेत लडी का मूल्य १॥) मात्र।

❀ मांस मदिरा निषेध ❀

इस पुस्तक के लेखक आर्य समाज के सुप्रसिद्ध सन्यासी स्वामी स्वतत्रानन्द जी महाराज है और इसकी भूमिका श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज ने लिखी है। इस पुस्तक मे वेद, मनुस्मृति आदि शास्त्रों के उद्धरण तथा महर्षिदयानन्द, सिख गुरुओ तथा अन्य भक्तो के निषेधात्मिक वचन दिये है। प्रचारार्थ बढ़िया कागज पर २६ पृष्ठ की पुस्तिका का मूल्य केवल =) रखा गया है।

पता:—सार्वदेशिक पुस्तकालय पाटौदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली।

मुद्रक तथा प्रकाशक:—श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक

भाद्रपद सं० २००६ वि०
सितम्बर १९४९ ई०

सम्पादक—
श्री पं० धर्मदेव सिद्धान्तालंकार विद्यावाचस्पति

मूल्य स्वदेश २)
विदेश १० शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म्

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र

वर्ष ~६ } सितम्बर १९४९ वि० ~ ६ भाद्रपद दयानन्दाब्द १२५ { अङ्क ७

वैदिक-प्रार्थना

ओ३म् ॥ यद्विद्वांसो यदविद्वांस एनांसि चकृमा वयम् ।

यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत विश्वे देवाः सजोषसः ॥ अथर्व०

शब्दार्थ—(वयम्) हम (विद्वांस) जानते हुए अथवा (अविद्वांस) न जानते हुए (यत् यत) जो (एनांसि चकृम) पाप करते हैं (विश्वे देवा) हे सत्यनिष्ठ विद्वानो (यूयम्) तुम (सजोषस) प्रीति और सेवाभाव से युक्त हो कर (न) हम (तस्मात्) उस पाप समुदाय से (मुञ्चथ) छुडाओ ।

विनय—हे सत्यनिष्ठ ज्ञानियो ! हम अज्ञानवश अथवा जानते बूझते हुए भी लोभान्विश अनेक प्रकार के पापकर्मों को कर बैठते है। आप से हमारी प्रार्थना है कि आप उत्तम उपदेश देकर हमे ऐसा दृढ और ज्ञानी बनाए जिससे हम बडी से बडी आपत्ति और बडे से बडे प्रलोभन के आने पर भी कभी पाप मे प्रवृत्त न हों। आप प्रेम और सेवाभाव को धारण करते हुए लोगों को सदा पाप मार्ग से हटाते रहे।

वैदिक धर्म और विश्वशान्ति

माननीय मावलंकर जी के प्रशंसनीय विचार

भारतीय राष्ट्र ससत् (पार्लियामेट) के अध्यक्ष माननीय श्रीगणेश वासुदेव मानवलङ्कर जी ने पिछले दिनों अहमदाबाद मे वैदिक मन्दिर का उद्घाटन करते हुए निम्नलिखित विचार प्रकट किये —

भारत अपनी प्राचीन सस्कृति व दृष्टिकोण पर दृढ रह कर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध व विश्वशाति स्थापित करने की दिशा मे ससार का नेतृत्व कर सकता है? ससार मे वैदिक धर्म सबसे पुराना धर्म है। तथा उपनिषद् और गीता मे उसका समावेश है। ससार शाति का इच्छुक है परन्तु वह शाति को शस्त्रास्त्र के द्वारा प्राप्त करना चाहता है। शाति तभी प्राप्त हो सकती है जब कि आप लोग ससार को उसी दृष्टिकोण से देखो जिस से आप अपनी आत्मा को देखते है।"

माननीय मावलकर जी ने इन शब्दो के द्वारा जो भाव प्रकट किये हैं वे सर्वथा प्रशंसनीय और यथार्थ हैं। उपनिषदे 'वाग्विवृताश्चवेदा' (मुण्डक) "एवं वा अरे अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद् यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदसामवेदोऽथर्ववेद। (बृहदा०) इत्यादि वचनों द्वारा वेदो को ईश्वरीय ज्ञान मानती हैं और उनकी आध्यात्मिक शिक्षाओं की व्याख्या करती हैं। गीता तो 'सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दन। पार्थो वत्स सुधीर्भोक्ता दुग्ध गीतामृत महत्॥

इस सुप्रसिद्ध वचन के अनुसार उपनिषद् रूपी गौवों का दूध है जिसके दोहने वाले श्री कृष्ण महाराज है। गीता मे भी 'कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षर समुद्भवम्॥ "(गीता अ० ३।)" इत्यादि श्लोकों द्वारा वेद को अविनाशी परमेश्वर का दिया ज्ञान माना गया है। ऐसी अवस्था मे माननीय मालवङ्कर जी का यह कथन ठीक ही है कि उपनिषद् और गीता का सनातन वैदिक धर्म के प्रतिपादक ग्रन्थों मे समावेश है। वेदों की शिक्षा सब प्राणियों को आत्मवत् तथा मित्र की दृष्टि से देखने की है जिस के लिये

'यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति॥
यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानत।
तत्र को मोह क शोक एकत्वमनुपश्यत॥

(यजु० ४०।६।७)

"मित्रस्याहृचक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।"(यजु० ३६।१८) इत्यादि सैकड़ों मन्त्रों को उद्धृतकिया जा सकता है। वेद की सस्कृति को ही 'सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा" (यजु० ७।१४)

इत्यादि शब्दों मे सबसे श्रेष्ठ और सारे ससार के लिये वरणीय अथवा ग्रहण करने योग्य बताया गया है क्योंकि उसी से सारे विश्व का कल्याण हो सकता है तथा सर्वत्र शान्ति की स्थापना हो सकती है। अत माननीय मावलङ्कर जी का यह कथन कि 'भारत अपनी प्राचीन सस्कृति व दृष्टि कोण पर दृढ रहकर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध व विश्वशान्ति स्थापित करने की दिशा मे ससार का नेतृत्व कर सकता है।" सर्वथा उचित ही है। इस सत्य सनातन वैदिक धर्म और सस्कृति का सर्वत्र देश देशान्तरों मे प्रचार हो इसके लिये समस्त आर्यों को सगठित प्रयत्न करना चाहिये तथा पूर्ण आर्थिक तथा अन्य विध सहयोग देकर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की आर्थिक स्थिति को ऐसा उत्तम बनाना चाहिये जिससे वह 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' केवैदिक आदेश का पालन कराने मे समर्थ हो सके।

आर्यसमाज का विदेश प्रचार

हमारे सहयोगी, पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के साप्ताहिक मुखपत्र "आर्य" के (जिसके पुन प्रकाशन पर हम विशेष प्रसन्नता प्रकट करते है) सुयोग्य सम्पादक श्री प० भीमसेन जी विद्या लंकार ने ६ भाद्रपद २००६ के अङ्क मे उपर्युक्त शीर्षक से एक सम्पादकीय टिप्पणी देते हुए लिखा है कि —'परतन्त्र भारत मे आर्य समाज के लिए विदेश प्रचार के लिए प्रचारक भेजना कठिन था। इसमे कई प्रकार की दिक्कते थीं परन्तु अब वे दिक्कते दूर हो गई हैं। स्वतन्त्र भारत के आर्य समाजों के प्रचारक भी स्वाभिमान के साथ विदेशों मे वैदिक सस्कृति का सन्देश सुना सकते हैं। इस समय ससार के सभ्य राष्ट्र भी ससार म शक्ति सम्पन्न होते हुए भी शान्ति स्थापना मे असमर्थ है कारण यह है कि शस्त्र शक्ति द्वारा शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। नैतिक शक्ति अथवा आध्यात्मिक भावनाओं को उन्नत करके ही ससार के मनुष्य मात्र को शान्ति की ओर ले जाया जा सकता है। सदियो बाद ऋषि दयानन्द वैदिक धर्मको देश देशान्तरों मे फैलाने का सन्देश लेकर आए थे। उनके उत्तराधिकारियो को भारत मे अग्रेजी राज्य के कारण स्वदेश तथा विदेश मे वैदिक धर्म प्रचार मे सुविधाए प्राप्त न थीं। अब सार्वदेशिक सभा को चाहिये कि वह आर्य समाज के विद्वानो को इस दिशा मे प्रेरित करे। अपनी ओर से विदेशों मे मौखिक तथा लेखबद्ध साहित्य द्वारा वैदिक धर्म की, दस नियमो के आधार पर, प्रचार की योजना करे। आशा है सार्वदेशिक सभा के अधिकारी इस ओर ध्यान देंगे।

हम श्री प० भीमसेन जी के विचारो से पूर्ण तया सहमत है तथा उनका पूर्ण समर्थन करते है। साथ ही हम आय जनता को सूचित करना चाहते हैं कि सार्वदेशिक सभाका ध्यान विदेशों मे प्रचार की ओर भी है और वह चाहती है कि शीघ्र से शीघ्र सुयोग्य प्रचारक भेज कर विदेशा मे वैदिक धम और सस्कृति का शान्तिदायक सन्देश पहुँचाया जाए।

गुरुकुल कागडी विश्व विद्यालय के एक

सुयोग्य स्नातक जो आर्य भाषा, संस्कृति और अंगरेजी के बहुत अच्छे तथा प्रभावशाली वक्ता हैं प्रचारार्थ अमेरिका जाने को उत्सुक है। उन्होने मेरे प्रश्न के उत्तर मे ७१-६-४९ के पत्र द्वारा पटना से सूचित किया है कि "अमेरिका जाने का मेरा विचार स्थिर है तथा सुनिश्चित हे।" ३ वर्ष तक वे अमेरिका मे रह कर प्रचार करने के लिये उद्यत हैं जिसका व्यय उन्होंने ७७ हजार के लगभग बताया है। एक और सज्जन जिन्होन १० वर्ष देव बन्द मे रह कर अरबी फारसी का बडा अच्छा अभ्यास किया है तथा जो मुस्लिम साहित्य के उत्तम ज्ञाता हैं ईरान, अरब आदि की ओर जाने को उत्सुक हैं और २६-७-४९ को इस आशय का सार्वदेशिक सभा कार्यालय मे आवेदन पत्र दे चुके हैं। अन्य भी विद्वानो को तय्यार किया जा सकता है किन्तु जब तक आर्य जनता का सक्रिय सहयोग सार्वदेशिक सभा की आर्थिक स्थिति को उन्नत करने और उसे सुयोग्य प्रचारकों को आर्थिक चिन्ता से मुक्त करके विदेशों मे वैदिक धर्म का सन्देश पहुँचान विदेश भेजने के योग्य बनाने मे न हो तब तक मनोमोदको से काम नहीं चल सकता। इसी उद्देश्य से सार्वदेशिक सभा ने 'सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि' की योजना बनाई है जिसके लिये आर्य जनता का दान प्राप्त हो रहा है किन्तु उद्देश्य की महत्ता और व्यय की प्रचुरता को दृष्टि मे रखते हुए वह बहुत ही कम है। हम सत्य सनातन धर्म और संस्कृति के प्रेमी समस्त आर्य नर नारियो का ध्यान पुन इस अत्यावश्यक कार्य की ओर आकृष्ट करते हुए निवेदन करते है कि वे अपनी उदार दान राशि सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिये अविलम्ब सार्व देशिक सभा कार्यालय मे भिजवाए तथा अन्यो को भी इसके लिये प्रेरित करे। कुछ न कुछ वार्षिक दान तो प्रत्येक आर्य से अवश्य ही इस महत्वपूर्ण कार्यार्थ लिया जाए ऐसा उस योजना मे कहा गया है। धनी दानी आर्य सज्जनों को इस पवित्र कार्य मे उदार सहायता देकर पुण्य और यश के भागी बनना चाहिये तथा सभा को सुयोग्य प्रचारकों को अति शीघ्र विदेश भिजवाने मे समर्थ बनाना चाहिये।

कुछ अविवेकी अकालियो का घोर निदनीय कार्य:—

श्री वेद प्रकाश जी मन्त्री आर्यसमाज पटियाला ने सूचित किया है कि

"६ अगस्त को जब श्री म० कृष्ण जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब धुरी मे आर्य हाई स्कूल का उद्घाटन करने के विचार से ट्रेन ३ ३० पर से गुजरने वाले थे, तब अकालियो की एक भीड ने प्लैटफार्म पर पहुच कर 'आर्यसमाज मुरदाबाद म० कृष्ण मुरदाबाद, प्रताप मुरदाबाद, पजाबी का दुश्मन मुरदाबाद के नारे लगाये। वे आर्य वीरो के हाथ से 'ओ३म्' के झडे छीन कर पाव तले रौंधने लगे, उन्होंने दलपति म० प्रभुदयाल जी की गाधी टोपी सिर से उतार कर अपमान किया और कई आर्यवीरो को शारीरिक चोटे पहुँचाई।

इस अत्यन्त निन्दनीय कार्य के विरोध मे पटियाला देहली, जींद तथा अन्य नगरो के निवासियों ने सार्वजनिक सभाए करके प्रस्ताव भिजवाये है जिन मे मनान्ध अकालियो के ऐसे कृत्य की घोर निन्दा की गई है। आज ही श्री मन्त्री जी आर्य-

समाज पटियाला का सार्वदेशिक सभा कार्यालय मे २२ ८-४६ का पत्र प्राप्त हुआ है जिस मे उन्होंने लिखा है कि 'यहा तो सिक्ख भाई मुस्लिम लीग की तरह उद्दण्डता कर रहे है। उन के जलसों मे ये नारे लगाए जाते हैं "थल्ला मेरी जुत्ती दा जवाहर पुत्ता कुत्ती दा।" हिन्दू अखबार मुरदाबाद, पटेल जवाहर मुर्दाबाद आदि।"

यह विश्वास करना कठिन है कि कोई इतना अविवेक और उद्दण्डता पूर्ण कार्य कर सकता और ऐसे निन्दनाय—देश नेताओ के प्रति घोर तिरस्कार सूचक और अपशब्द पूर्ण नारे खुल तौर पर लगान का दुस्साहस कर सकता है किंतु यह समाचार विश्वस्तसूत्र से प्राप्त हुआ है अत इस पर अविश्वास नहीं किया जासकता। जिन अकालयो ने ऐसे निन्दनीय कार्य किये हैं वे घोर अपराधी है और अधिकारियों का कर्तव्य है कि उन्हे अपने इस अपराध के लिये घोर द ड दे जिस से भविष्य मे किसी को ऐसे नीच कार्य करने और अपशब्दपूर्ण नारे लगाने का दुस्साहस न हो। इस विषय मे किसी प्रकार की भा शिथिलता दिखाना अपराधियो के साहस को बढाना होगा। हम पटियाला पूर्वी पजाब और केन्द्रीय सरकार के मान्य अधिकारियो का ध्यान भी इन कुकृत्यों की ओर आकृष्ट करते हुए उनसे अपराधियो को कठोर द ड दिलाने का अनुरोध करते हैं।

एक राजदूत का असङ्गत प्रलापः—

समाचार पत्रो से यह जानकर हमें अत्यन्त खेद और आश्चर्य हुआ कि स्विटजरलेण्ड मे स्थित भारतीय राजदूत श्री धीरजलाल देसाई ने रोम के पोप के साथ बात चीत करते हुए इस आशय के शब्द कहे —

"महात्मा गान्धी से हमने परमात्मा की एक मात्र पूजा और धर्म की उच्चता व श्रेष्ठता का पाठ सीखा है। गान्धी जी का भाति हमारा भी यह विश्वास हो गया है कि यदि भगवद् गीता की समस्त प्रतिया जला दी जाए तो क्या भय। जब तक कि हम हजरत ईसा मसीह के पहाडी उपदेश से लाभ उठा सकते हैं।'

श्री धीरजलाल देसाई ने यदि इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया तो उनको सिवाय प्रलाप तथा चाटु कारिता (खशामद) के और कुछ नही कहा जा सकता। पू य महात्मा गान्धी जी न कभी इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग न किया था और गीता के प्रति वे बडा आदर प्रकट करते तथा उसके कुछ श्लोको का तो प्रति दिन प्रार्थना सभाओ मे पाठ कराते थे। उनके साथ भा श्री देसाई ने घोर अन्याय किया है। भारतीय राजदूतो का विदेशो मे इस प्रकार अनुत्तर दायित्व पूर्ण, असङ्गत प्रलाप न केवल उन्हे भारतीय जनता की दृष्टि मे गिरा देगा प्रत्युत अन्य विदेशी विद्वान् भी जो गीता की शिक्षाओ को अत्युत्तम समझते है भारतीय राजदूत और उनको नियुक्त करन वाली भारतीय सरकार के प्रति हीन भावना रखने लगेंगे। अत श्री देसाइ के इस असङ्गत और अनुत्तरदायित्व पूर्ण सभाषण की घोर निन्दा करते हुए जिससे समस्त आर्य जनता के हृदय को आघात पहु चा है, हम भारत सरकार से अनुरोध करते है कि भविष्य मे राजदूतो की नियुक्ति मे व बहुत अधिक सावधानी से काम ले और श्री देसाई को उचित भर्त्सना करें जिस से एसी घटनाओ के कारण भारत का अपमान न होने पाए।

श्री अरविन्द के नाम का नोबल पुरस्कार के लिए प्रस्ताव

हमे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि चाइलो की कवि सम्राज्ञी पर्लबक न जगद्वि ख्यात योगी, तत्वज्ञानी और जबराइल हिस्ट्रीला और अमरीका की कविसम्राज्ञी कवि श्री अरविन्द जी का (जिनके विषय मे श्री डा० इन्द्रसन जी एम ए पी एच डी का एक विचारपूर्ण लख पाठक 'सार्वदेशिक' के इस अङ्क म पाठक अन्यत्र पाएगे) नाम १९५० के साहित्य मे सर्वोत्कृष्ट रचनार्थ नोबल पुरस्कार के लिए प्रस्तुत किया है। हम इस प्रस्ताव को सर्वथा उचित समझते हैं। श्री अरविन्द जी के प्राय सभी ग्रन्थो को पढने का सौभाग्य हमे प्राप्त हुआ है और हम निसकोच कह सकते हे कि वे न केवल आध्यात्मिक अनुभूति की दृष्टि से बिना साहित्य की दृष्टि से भी अत्यन्त उच्च हैं। नोबल पुरस्कार भारतीयों मे से अभी तक केवल स्व श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर (साहित्यार्थ) और श्री सी वी रामन् को (विज्ञानार्थ) प्राप्त हो चुका है। यदि श्री अर-विन्द जी को उनकी साहित्यिक उत्कृष्ट रचनाओं पर यह पुरस्कार दिया जाए तो यह न केवल उनका वैयक्तिक रूप से प्रत्युत आर्यावर्त का ही मान करना होगा। हमे आशा है नोबल पुर स्कार समिति एसा ही उचित निर्णय करेगी।

राष्ट्रभाषा का प्रश्न विचित्र स्थिति मे:—

गत ६ ७ अगस्त को अखिल भारतीय हिन्दीसाहित्य सम्मेलन की ओर स देहली प्रातीय हिन्दी साहित्यसम्मेलन के तत्वावधान मे कास्टीच्यूशन क्लब नई देहली मे जो राष्ट्रभाषा व्यवस्थापरिषत् का अधिवेशन हुआ और जिस मे बंगाली, गुजराती, मराठी, उडिया, आसामी, नैपाली, कन्नड, तिलगू, मलयालम, तामिल, पजाबी, सिंधी, उर्दू, हिंदी आदि भाषाओं के सौ के लगभग प्रकाड पडितों ने राष्ट्रभाषा विषयक अपन विचार प्रकट करते हुए सर्वसम्मति से निश्चय किया कि—

"भारतीय सविधान मे भारतसङ्घ की राष्ट्रभाषा जिसकी लिपि देवनागरी होगी स्वीकृत की जाए।'

मद्रास विश्वविद्यालय के डा० कुन्ननराजा एम० ए० पी० एच० डी० (मलयालयम भाषा) ने यह प्रस्ताव रखा और प्रयाग विश्वविद्यालय मे उर्दू फारसी विभाग के अध्यक्ष डा० सय्यद मुहम्मद हाफिज एम० ए० पी एच० डी० मद्रास विश्वविद्यालय के सस्कृत विभागाध्यक्ष डा०वी० राघवन् (तामिल) प्रो० नीलकठ शास्त्री (तामिल) डा० गोडावर्मा एम० ए० पी० एच० डी० (ट्रावनकोर विश्वविद्यालय) प्रो० चन्द्रहासन् एम० ए० महाराज कालेज अर्नाक्युलम्(मलयालम् प्रो० नागप्पा एम० ए० (मैसूर विश्वविद्यालय कन्नड) आध्र विश्वविद्यालय के तिलगू प्रोफेसर श्री सोमयाजी, विजय वाडा के श्री० जी० वी० सुब्बाराव सम्पादक गोष्ठी (तिलगू) डा० सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय (बगाली) श्री सजनी कान्त दास मन्त्री बगीय साहित्य परिषत् कलकत्ता, उत्कल विश्वविद्यालय कटक के उडिया साहित्य के प्रोफेसर श्री आर्त वल्लभ महन्ती, प्रो० जगद्धर जैडू श्रीनगर (काश्मीरी) श्री यशवन्तराव दाते, श्री प० श्रीपाद दामोदर जी सातवलेकर और श्रीमती कमला बाई किबे (मराठी) श्री सूर्य विक्रम (नैपाली) श्री नीलमणि फूकन (आसामी) श्री गोहल सिह चीफ जज भू० पू० मापसित

मणिपुर साहित्य परिषत् (मणिपुरी) स्वामी अमृतानन्द जी (नैपाली) आदि सुयोग्य महानुभावों ने अत्यन्त विद्वत्ता पूर्ण, युक्तियुक्त सार गर्भित भाषणों द्वारा उसका समर्थन किया जिस के पश्चात् सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। हमे उस परिषत् मे स्वागत समिति के सदस्य के रूपमे सम्मिलित होने और इन विद्वानों के सार गर्भित प्रभावशाली भाषणों को सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था अत हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि इन सब विद्वानो ने (जिन्हे अपने विचार प्रकट करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई थी) एकमत से सस्कृत निष्ठ हिन्दी और देव नागरी लिपि को ही राष्ट्र लिपि घोषित करने के योग्य पाया पर साथ ही सम्पूर्ण परिस्थित को ध्यान मे रखते हुए उन्होने दूसरे प्रस्ताव द्वारा यह भी निश्चय किया कि —

"यह राष्ट्र की प्रतिष्ठा के अनुरूप होगा कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अगरेजी के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग तुरन्त किया जाए और केन्द्रीय तथा अन्तर प्रान्तीय कार्यों मे अगरेजी के स्थान पर हिन्दी क्रमश किन्तु निश्चित रीति से प्रतिष्ठित की जाए परन्तु इस परिवर्तन कार्य मे १० वर्ष से अधिक समय न लगाया जाए।' इत्यादि

हमारे विचार में तो यह १० वर्ष का समय भी अधिक था तथापि सर्वसम्मत निश्चय हो सके इसके लिये ऐसा समझौता करना ही उचित समझा गया था, हमे आशा थी कि सब प्रान्तीय भाषाओ के उच्च कोटि के धुरन्धर विद्वानो के इस सर्व समस्त निर्णय के पश्चात् (क्योंकि इन विशेषत दाक्षिणात्यों के विरोध की ही प्राय चर्चा हिन्दी विरोधियों की ओर से की जाती थी, राष्ट्रभाषा विषयक समस्या का पूर्ण समाधान हो जाएगा और हमारे मान्य देशनेता भी अविलम्ब ऐसी घोषणा करने को उद्यत हो जाएगे किन्तु हमे यह जान कर दु ख हो रहा है कि अभी हमारी दास मनो वृत्ति बहुत कुछ पूर्ववत् बनी हुई है। अब मसविदा समिति ने जो प्रस्ताव इस सम्बन्ध मे बना कर कांग्रेस विधान परिषत् दल के सन्मुख विचारार्थ रखा है (जिसपर इस टिप्पणी को २४ अगस्त को लिखते समय तक निर्णय नहीं हो पाया) वह अत्यन्त विचित्र तथा हमारे विचार मे तो अनेक अशो मे अस्वीकरणीय है। उसके मुख्याश निम्न है।

(१) नागरी हिन्दी राष्ट्रभाषा होगी (२) १५ वर्ष तक सारा केद्रीय, अत प्रातीय तथा प्रांतों मे कानून निर्माण व आदेश सम्बधी कार्य अगरेजी मे ही हाता रहेगा (३) अक वही प्रयुक्त किए जाएगे जो इस समय अगरेजी मे प्रयुक्त किये जाते हैं (४) प्रति ५ वे वर्ष एक कमीशन हिंदी की प्रगति पर रिपोर्ट देगा जिस पर ३० सदस्यों की पार्लियामेटरी कमेटी विचार करेगी (५) राज्य के निर्देशक सिद्धातो मे हिंदी की उन्नति और विकास के लिये कहने वाली धारा जोड़ दी जायगी (६) अध्यक्ष किसी कार्य विशेष के लिये १५ वर्ष से पूव भी हिंदी के प्रयोग का आदेश दे सकेगा। (७) अध्यक्ष के आदेश पर प्रात को अपने पर्याप्त निवासियो की भाषा को भी द्वितीय प्रातीय राज-भाषा का स्थान देना पडेगा।"

इनमे से प्रथम अश कि 'नागरी हिंदी राष्ट्र-भाषा होगी, प्रशसनीय और हर्ष जनक है किंतु आगे के अशों को पढने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि इसका वस्तुत मूल्य बहुत कम है हा, राज्य के निर्देशक सिद्धातों में हिंदी की उन्नति और

विकास की प्रतिपादिका धारा को जोड देना अवश्य अभिनन्दनीय है। यद्यपि ज्ञात हुआ है कि मान्य प्रधानमन्त्री श्री प० जवाहरलाल जी इस को हटवाना चाहते हैं। शेष अनेक अंश हमारी मानसिक दासता के ही परिचायक हैं। अंगरेजी अंकों में ही ऐसी कौनसी विशेषता है जो हिन्दी में भी उनका प्रयोग आवश्यक समझा जाए। प्रति पचवें वर्ष कमीशन की नियुक्ति भी जैसे कि माननीय सरदार पटेल ने अपने लिखित सन्देश में बताया अनावश्यक है। पार्लियामेंट की सम्मति उस कार्य को समय २ पर कर सकती है। १५ वर्ष तक अंगरेजी को ही राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना दास मनोवृत्ति की पराकाष्ठा है। उसके स्थान में तो अधिक से अधिक १० वर्ष के भीतर जैसे कि सरदार पटेल ने भी कहा है। हिंदी का राजकीय कामों में क्रमिक प्रवेश कराकर उसे वस्तुत अंगरेजी का स्थान लेने योग्य बनाया जा सकता है। इसका अन्तिम अंश तो अत्यन्त आक्षेप योग्य है जिसका तात्पर्य उर्दू को युक्तप्रातादि से पृष्ठद्वार से प्रवेश कराने का प्रतीत होता है। इस प्रकार की विघटक प्रवृत्तियों का समर्थन राष्ट्रीय भावना और एकता के लिये घातक सिद्ध होगा। जब युक्तप्रांत, विहार, राजस्थान, मध्यभारत, मध्यप्रांत आदि में हिंदी को राजभाषा घोषित किया जा चुका है तब अन्तर्प्रांतीय पत्र व्यवहार एक विदेशी भाषा द्वारा करने के लिये उन्हें विवश करना कितना अनुचित है। अत हमारा सविधान परिषद् के सदस्यों से अनुरोध है कि वे इन आक्षेप योग्य अंशों को प्रस्ताव में से निकाल कर बल दें और सीधे शब्दों में संस्कृतनिष्ठ हिंदी और देवनागरी लिपि को ही राष्ट्र भाषा और राष्ट्रलिपि के रूप में घोषित कराएं अन्यथा हमें निश्चय है कि जनता उनका बिल्कुल साथ न देगी और उनके प्रति असतोष बढता जायेगा। देश का नाम आर्यावर्त —

हम अन्यत्र प्रकाशित श्री शिवचन्द्र जी के इस विचार से सर्वथा सहमत हैं कि हमारे देश का सर्वोत्तम और प्राचीन नाम आर्यावर्त है और उसे ही स्वीकार कराने के लिये सब आर्यों को प्रबल आन्दोलन करना चाहिये। यह प्रसन्नता की बात है कि राष्ट्रीय महासभा के प्रधान डा० सीतारमैय्या ने भी देश के लिये आर्यावर्त और भाषा के लिये आर्य 'भाषा' के प्रयोग का समर्थन किया है।

—धर्मदेव विद्यावाचस्पति

नाच उठे प्रभु तेरी अद्भुत, लीला लख कर मन मेरा ।
नत हो जाता तेरे चरणों में, श्रद्धा से मस्तक मेरा ॥
हिम से आवृत पर्वत सारे, तेरी महिमा गाते हैं ।
कल कल करते नाद नदी नद तेरे गुण गण गाते हैं ॥

ग्रह शशि सुरभित सुमन सितारे तेरे बन्दी बने हुए ।
तेरी तरफ इशारे करते तेरा बोध कराते हैं ॥
कोकिल कू कू कलरव करती, तेरी याद दिलाती है ।
हरी भरी लहराती धरती, तेरा स्मरण कराती है ॥

जिधर दृष्टि को डालूँ हमता उसी वस्तु को पाता हूँ ।
तेरे सम्मुख नम्र भाव से मोहन सीस नमाता हूँ ॥
यही चाहता मेरे अन्दर गङ्गा नित ही बहती हो ।
मङ्गलमयि माता की प्रतिमा मेरे हिय में रहती हो ॥

निर्भय होकर विचरूँ जग में बनूँ लाडला माता का ।
प्यारा पुत्र बनूँ मैं निशिदिन दुःखहरण सुख दाता का ॥
बनूँ तेज का पुञ्ज पाप की राशि भस्म मैं कर डालूँ ।
प्रभो ! शक्ति दो शाश्वत सुख आनन्द शान्ति को मैं पा लूँ ॥

गङ्गातट
१३—६—१९४९

धर्मदेव विद्यावाचस्पति

गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रति महात्मा गाँधी जी की अटल श्रद्धा और गुरुकुल प्रेम

(ला० श्री लब्भराम जी नय्यड आनन्द आश्रम लुध्याना)

महात्मा गांधी जी का आशीर्वाद—

आज तो मेरे मन में ऐसा प्रतीत होता है कि साधु वास्वानी के जैसे मैं भी प्रणाम करके बैठ जाऊं। पर यों हर किसी की नकल नहीं कर सकता। अनुकरण भी स्वाभाविक होना चाहिए इससे मुझे तो जो कहना है वह कह ही दूंगा।

कोई ४ वर्ष पुरानी बात है गुरुकुल कांगड़ी का रजत जयन्ती के शुभ अवसर पर महात्मा गांधी जी स्वयम् पधारे थे। आपकी जो श्रद्धा स्वामी श्रद्धानन्द जी के लिए थी और जो प्रेम गुरुकुल विश्व विद्यालय कांगड़ी के प्रति था वह महात्मा गांधी जी के निम्न लिखित भाषण के एक एक शब्द से टपकता है। आशा है गुरुकुल प्रेमी अब भी इससे लाभ उठायेंगे।

स्वामी जी को जिन्दा रहना है तो तब होगा जब हम उनकी सच्ची विरासत मिटाने की कोशिश करेंगे। अगर्चे यह सच्ची बात तो यह है कि हमारी कोशिशों से भी उनकी देह का नाश होने का नहीं है जब तक यह गुरुकुल कायम है जब तक एक भी स्नातक गुरुकुल की सेवा करता है तब तक स्वामी जी जीते हैं। स्वामी जी का शरीर तो किसी दिन गिरने को था ही पर स्वामी जी का सब से बड़ा काम गुरुकुल है। उन्होंने अपनी सारी शक्ति इस में लगा दी थी। इस पैदा करने में उन्होंने अधिक से अधिक तपश्चर्या की थी। तुम ने सत्य की प्रतिज्ञा ली है अगर तुम अपने वचन का पालन करोगे तो किसी की हिम्मत नहीं कि वह गुरुकुल को मिटा दे। पर गुरुकुल को चिरस्थायी रखने के लिये उस वीरता ब्रह्मचर्य और क्षमा की जरूरत है जो हमने उनके जीवन में देखी। वीरता का लक्षण क्षमा और ब्रह्मचर्य और वीर्य का संयम

है। वीरता और वीर्य की रक्षा स तुम देश और धर्म की पूरी पूरी रक्षा कर सकोगे। मैं जानता हूं कि यह काम मुश्किल है। तुम्हारे यहां के बहुत से विद्यार्थियों के पत्र मरे पास पडे हुए हैं। कोई मेरी स्तुति करता ह तो कोई गाली देते है। स्तुति तो नाकाम चीज है। उसका असर मेरे ऊपर नहीं होता। परन्तु जब विद्यार्थी चिढ कर गाली देते हैं तो मुझे चिन्ता होती है। क्योंकि क्रोध से वीर्य का नाश होता है। स्वामी जी के सामने मैंने ब्रह्मचर्य की व्याख्या रक्खी थी और वे मेरे साथ सहमत थे किसी स्त्री का मलिन स्पर्श न करने में ही ब्रह्मचर्य नहीं होता है, ब्रह्मचर्य वहां से जरूर होता है। पर क्षमा की पराकाष्ठा ब्रह्मचर्य का लक्षण है। पिछले साल स्वामी जी जब टकारा से पीछे लौटते समय मुझसे मिलने गये थे तो उन्होंने मुझे कहा कि 'हिन्दू धर्म की रक्षा नीति से ही सम्भव है। अगर तुम वैदिक आचार और विचार की रक्षा करना चाहते हो तो यह बात याद रखो कि तुम्हे पग पग पर रुपये मिल जायगे, मगर ब्रह्मचर्य का, नीति का पाया यहां पर न होगा तो तुम्हारा कुल मिट्टी म मिल जायगा। इस भूमि के तो आत्मा नही है, इसकी आत्मा तुम्हीं हो। अगर तुम आत्मबल खो दोगे और 'उदरनिमित्त बहुकृत वेष' जैसे बन जाओगे तो तुम्हारी सारी शिक्षा बेकार जायगा। मैं आज तुम्हारे आगे चखा और खादी की बात करने नहीं आया हूं तुम्हारा पहला काम ब्रह्मचर्य और नीतिमत्ता का क्षमा का है। उसे भूल जाओगे तो स्वामी जी का काम कायम नहीं रहेगा। अब्दुलरशीद की गोली से स्वामी जी का क्या हुआ? व तो उस गोली से ही अमर हुए।

स्वामी जी का दूसरा काम अछूतोद्धार था। जिन शब्दों मे मालवीय जी ने खादी की वकालत की, मैं नहीं कर सकता पर इतना जरूर कहूंगा कि अगर हम हमेशा गरीबों और अछूतों का फिक्र रखेंगे तो खादी से अलग नहीं रह सकते। अगर किसी अमली काम म वीर्य की रक्षा का उपयोग करना हो तो खादी से बढकर दूसरा कोई काम नहीं है। खादी के कार्य के साथ मैं स्वामी जी का नाम नहीं जोडना चाहता, क्योंकि उनका मुख्य काम यह नहीं था पर तुम स्नातक विदेशी कपडे से अपना शरीर सजाने का विचार न करोगे पर अपने गरीबों और अछूतों की रक्षा के लिए केवल खादी ही धारण करोगे।

ईश्वर तुम सब के ब्रह्मचर्य और सत्य तथा प्रतिज्ञाओं की रक्षा करे गुरुकुल का कल्याण करे और स्वामी जी का हर एक काम परमात्मा चालू रक्खे।

गृहस्थ जीवन की सुख-वृद्धि के सुनहरे नियम

लेखक—श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक

गृहस्थ जीवन का सुख वृद्धि के लिए परमावश्यक है कि वर और वधू हर प्रकार से एक दूसरे के उपयुक्त हो और उनमे सहृदयता और शिष्टता कूट २ कर भरी हो। नववधुएँ जितनी बाहर वालो के प्रति शिष्ट होती है उतनी अपने पतियो और सम्बन्धियो के प्रति शिष्ट हों तो गृहस्थो की सुख समृद्धि का ठिकाना न रहे।

अशिष्टता कैंसर के सदृश होती है जो प्रेम और सौख्य को धीरे २ चट कर जाती है। इस बुराई को जानते हुए भी लोग अपने घर वालो के प्रति उतने शिष्ट नहीं होते जितने अपने मित्रों और परिचितो के प्रति होते है। हम अपने किसी परिचित व्यक्ति अथवा मित्र के पत्र को बिना उसकी अनुमति के खोलने की कल्पना नहीं कर सकते। उनकी गुप्त बातों को जानने की ओर जरा भी ध्यान नही देते परन्तु अपने घर वालो और सम्बन्धियो को उनकी छोटी २ भूलो पर अपमानित करने में नहीं चूकते। कैसी विडम्बना है! जितनी अशिष्ट अपमानजनक और घाव करने वाली बाते हमे अपने सबधियो और घर वालो से सुननी पडती है उतनी बाहर वालों से नहीं।

"शिष्टता हृदय का वह गुण होता है जो बाग के टूटे फूटे दरवाजो को न देखकर उसके फूलो को देखता है। विवाह के लिए शिष्टता उतनी ही आवश्यक है जितनी मोटर के लिए तेल।"

ऐसे भी श्रेष्ठ व्यक्ति होते है जो अपने दुख और क्षोभ को चुपचाप पी जाते और अपने परिवार के किसी व्यक्ति पर प्रकट नहीं होने देते। वे अपने हृदय की अत्यधिक धवलता से दुख और रोष की काली रेखाओं को छुपा देते है।

परन्तु ऐसे व्यक्ति विरले ही होते है। साधारण व्यक्तियों का व्यवहार उनसे सर्वथा भिन्न होता है। आफिस मे काम खराब होने, अफसरो द्वारा फटकार पडने वा दूकान पर सौदा बिगड जाने इत्यादि पर उनके शिर मे पीडा होने लग जाती है और वे घर जाने के लिए उतावले हो जाते है। घर पहुँचकर वे आराम नहीं करते प्रत्युत अपने क्रोध को अपनी पत्नियों पर उतार डालते है।

हालैंड मे प्रत्येक व्यक्ति दिन भर के काम से लौटने पर घर मे प्रवेश करने से पूर्व अपने जूते ड्योढी के बाहर निकाल देता है। इसका अभिप्राय यह है कि वे लोग दिनभर के कष्टो को घर के बाहर ही छोड देते है। संस्कृत साहित्य मे वर्णित व्यवहार का आदर्श यह है कि जिस प्रकार किसी व्यक्ति को मान अपमान, सुख दुख, हानि लाभ आदि की अनुभूति होती है उसी प्रकार दूसरो को भी होती है। अतः दूसरो के साथ व्यवहार मे इस आदर्श को सामने रखते हुए, उनके भावो का पूरा २ ध्यान रक्खा जाना चाहिए। इसके विरुद्ध आचरण करना एक प्रकार का अन्धापन माना जाता है। विलियम जेम्स नामक अंग्रेजी के एक लेखक ने इस विषय पर एक बहुत उत्तम निबन्ध लिखा है उसका

शीर्षक है "On a certain Blindness in Human Beings" अर्थात् मानव प्राणियों के एक अन्वेषन के विषय पर"

अपनी पत्नी के प्रति व्यवहार मे इस अधता का जैसा बुरा परिचय मिलता है वैसा शायद ही अन्यत्र मिल सके। बहुत से व्यक्ति दूसरों के प्रति व्यवहार मे सौजन्य की साक्षात् मूर्ति जान पडते है, परन्तु अपनी पत्नियों पर कुत्तो की नाई भाकते है। उनको यह ज्ञात होता प्रतीत नहीं होता कि पत्नी भी मानव प्राणी है और उसका भी कोई महत्त्व है। पत्नी का महत्व तुर्गनेव के हृदय से पूछिए। ये महानुभाव साधारण व्यक्ति न थे। अपितु रूस के एक अत्यन्त प्रतिभावान उपन्यास कार थे जिनकी प्रतिभा का ससार भर मे यशोगान होता था।

अपने हृदय के उद्गारों को वे इस प्रकार व्यक्त करते है —

"I would give up all my genius and all my books, if there were some woman somewhere who cared whether or not I came home late for dinner

अर्थात् यदि कहीं कोई ऐसी देवी हो जो इस बात का ध्यान रखा करे कि मैं खाना खाने घर पर देर मे आता हूँ या समय पर तो उसके लिए मैं अपनी प्रतिभा और समस्त पुस्तकों का परित्याग कर सकता हूँ।

तुर्गनेव एकान्त प्रिय व्यक्ति थे। उनके इन शब्दो से यह प्रतिध्वनित हो रहा है कि जिन साधारण व्यक्तियो का गृहस्थ जीवन सुखमय है व एकान्त मे रहने वाले प्रतिभाशाली व्यक्तियो से अधिक सुखी और शान्त होते हैं। यदि ऐसे साधारण व्यक्ति की पत्नी हर स्थिति मे सन्तुष्ट रहे तो समझो वह पुरुष के लिए एक देन है।

जो लोग स्त्री-स्वभाव को भलीभाँति जानते होते हैं यदि वे पत्नी की प्रबन्ध पटुता की उसके मुँह पर प्रशसा कर दे तो वे उससे एक २ पाई निकलवा लेते है। यदि वे उसको यह कह दे कि अमुक समय उसने जो साडी पहनी थी उसे पहन कर वह बहुत सुन्दर लगती है तो हो नहीं सकता पत्नी नई साड़ी की फरमाइश कर सके। मनुष्य यह जानता है कि उसके प्रेम का एक चुम्बन पत्नी को अन्धा और स्नेहालिंगन मूक बना सकता है।

इसी प्रकार जो पत्नी पुरुष-स्वभाव की बारीकियो से परिचित होती है वह पुरुष के उपर्युक्त व्यवहारो को खूब समझती है। वह उस पर क्रोध करना वा उससे घृणा करना नहीं जानती क्योंकि यदि वह ऐसा करेगी तो घर की ही हानि होगी जो सुपत्नी के लिए असह्य होगा।

अत गृहस्थ जीवन की सुख वृद्धि के लिए चौथा सुनहरा नियम यह है कि सभ्य और शिष्ट बनो।'

आर्य सृष्टिक्रम की वैज्ञानिकता

(ले —आचार्य प रामानन्द शास्त्री महोपदेशक पटना

सामान्यतः लोगों की ऐसी धारणा है कि सब सांसारिक पदार्थ पृथ्वी जल, तेज वायु आकाश इन पांच तत्वों से बने हुए हैं, और शास्त्रकार भी ऐसा मानते हैं पर वर्तमान वैज्ञानिक इनको तत्व नहीं मानते। इसका वास्तविक तात्पर्य क्या है यह जानने के लिये विद्वान् लेखक का लेख मनन करने योग्य है। विद्वान् इस पर विचार करें।

—सम्पादक सा

संसार की प्रत्येक जाति के धार्मिक ग्रन्थों में सृष्टि उत्पत्ति का क्रम दर्शाया गया है किन्तु वर्तमान युग में वह केवल बुढिया दादी का ही किस्सा रह गया है। आर्य शास्त्र में भी सृष्टि का क्रम निरूपित किया गया है जिसे देखकर आधुनिक जगत् आश्चर्य चकित है। पहले लोगों ने इसे भी मनघडन्त कहा, किन्तु ज्यों ज्यों समय बीतता जा रहा है इसकी सार्थकता सिद्ध होती जा रही है। सृष्टि का क्रम ही नहीं अपितु इसकी अवधि भी आधुनिक विज्ञान से सच्ची प्रतीत हो रही है। वैज्ञानिक कहते हैं कि इस सृष्टि को हुए दो अरब वर्ष के करीब हो गया है।

यह निर्णय बहुत विवाद के पश्चात् प्राय सब सम्मत हुआ है*। अन्यथा भिन्न भिन्न विद्वानों ने समय २ पर अलग २ अवधि का निरूपण किया जो काल क्रम से गलत सिद्ध होगया। लेकिन आर्य ऋषियों ने एक ही बार इसका निर्णय किया उसे दैनिक सङ्कल्प में रखा कि —

तत्र प्रवर्त्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीय परार्धे श्वेतवराह कल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे एक त्रिंशतितमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे"

इत्यादि जिसे प्रत्येक आर्य पुरोहित पढता है। महा पण्डित राहुलसांकृत्यायन ने लिखा है कि हिन्दुओं की यह गणना यद्यपि सत्य है तथापि इसका आधार वैज्ञानिक नहीं अपितु अटकल पच्चू है"। (विश्व की रूपरेखा)

लेकिन राहुल जी का कथन सत्य नहीं प्रतीत होता है। आर्यों का सृष्टिकाल निर्णय अटकल पच्चू नहीं है अपितु व्यवस्थित और वैज्ञानिक है। उन्होंने सूक्ष्मकाल (त्रुटि) प्राण से लेकर स्थूलकाल युगों का निरूपण बहुत ही बुद्धिपूर्वक किया है। हमको इस लघुकाय लेख में काल पर विवाद नहीं करना है, यहां तो मुझे क्रम का निरूपण करना है। तैत्तिरीय उपनिषद में लिखा है —

तस्माद्वा एतस्मात् आकाशः सम्भृतः आकाशाद् वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी

इत्यादि। अर्थात् सर्व प्रथम उस आदि शक्ति परमात्मा की इच्छा से आकाश, आकाश से वायु वायु से अग्नि, अग्नि से आप् और आप् से

* पहले—प्रोफेसर नीथचाफ=३५ करोड, प्रोफेसर रेड ५० करोड प्रोफेसर हक्सेले एक अरब वर्ष, आधुनिक विज्ञानवेत्ता एक अरब ६० करोड इत्यादि।

पृथिवी उत्पन्न हुई। लगभग उसी तरह का निरूपण सांख्य ने भी किया है। प्राय प्रत्येक आर्य शास्त्र इसी का निरूपण करते हैं। तुलसीकृत रामायण मे भी लिखा है कि—

क्षिति जल, पावक गगन समीरा।
पचतत्व यह रचित शरीरा ॥

यहा क्रम तो नहीं बताया गया है लेकिन इन्हे ही तत्व माना गया है।

आधुनिक वैज्ञानिक इसे असत्य बताते है। उनका कहना है कि वायु, जल, आदि मौलिक पदार्थ नहीं अपितु सायोगिक है जैसा—आक्सीजन और नाईट्रोजन के सयोग से वायु और हाईड्राजन और आक्सीजन के सयोग से जल पैदा होता है। इसलिये ये सृष्टि के मूलतत्व नहीं हो सकते, क्योंकि मूलतत्व वही हो सकता है जिसकी स्वतन्त्र सत्ता हो।

तैत्तिरीयोपनिषद् का भी क्रम ऐसा ही है, अत स्वभावत यह आक्षेप उस पर भी होता है। आधुनिक टीकाकारो ने इधर ध्यान नहीं दिया है उन्होने केवल शब्दो का ही अनुवाद किया है, वह भी अनुवाद अव्यवस्थित प्रतीत होता है। यहा पर विचारना चाहिये कि इस उपनिषद् वाक्य का वास्तविक अर्थ क्या हुआ।

इसके लिये वैदिक शब्दो पर ध्यान देना होगा। यह सत्य है कि आज वैदिक परम्परा नष्ट हो गयी है। यह परम्परा आज से नही ऋषि दयानन्द के शब्दो मे ५ हजार वर्ष पहले से ही बिगडी हुई है। महर्षि पतञ्जलि कहते है — 'इह पुरा कल्पे ब्राह्मणा कृतोपनीता आचार्य कुल गत्वा व्याकरण स्म अधीयते तेभ्यो नादानु प्रदानज्ञे भ्यो वैदिका शब्दा उपदिश्यन्ते, तदद्यत्वे नहि, इदानीं त्वरितमेव वेद वक्तारो भवन्ति। वेदान्नो वैदिका शब्दा सिद्धा लोकाच्च लौकिका तस्मादनर्थक व्याकरणम् इति तेभ्यो विप्रतिपन्न बुद्धिभ्य सुहृद्भूत्वा आचार्य इद शास्त्र मन्वाचष्टे इमानि प्रयोजनानि इति अध्येय व्याकरणम्'।

अर्थात्—ऋषि कहते है कि पहले के जमाने मे ब्रह्मचारी उपनीत होकर गुरुकुल मे पढने के लिये जाते थे आचार्य उन्हे शब्द शास्त्र का ज्ञान करा कर तब वेदो की शिक्षा देते थे, लेकिन इस समय तो जल्दी ही वेद के वक्ता हो जाते है। ऋषि ने यह वाक्य आज से २½ हजार वर्ष पहले लिखा था। किन्तु आज तो आकाश और पाताल का अन्तर हो गया है। इस समय तो किसी प्रकार का भी वेदों का अध्ययन अध्यापन लुप्त प्राय है। ऐसी स्थिति मे वेदों के अर्थ करने के लिये निरुक्त का ही आश्रय लेना पडेगा कि—ऋषियों के चले जाने पर तर्क ही ऋषि का कार्य करेगा। अत तर्क का आश्रय लेकर वैदिक वाक्यो का अर्थ करना पडेगा।

आधुनिक वैज्ञानिक कहते है कि हम परमाणुओं का भी विभाजन कर सकते है। जैसा वैशेषिको का सिद्धान्त है कि परमाणु गुण वाले है (यूनानी परमाणवादी नहीं) वैज्ञानिक भी कहते है। हा, परमाणुओं मे भी गुण होता है जैसे—हाईड्रोजन, आक्सीजन के परमाणु अलग अलग गुण मात्रा वाले है। वैज्ञानिको के विभाजन के बाद प्रोटोन और इलक्ट्रोन का पता चला उन्होने कहा कि ऋणात्मक और धनात्मक विद्युत् के सयोग से परमाणु टिके हुये हैं। मल

पदार्थों के परमाणुओं का अस्तित्व भी इलेक्ट्रोन की सख्या पर ही अवलम्बित है।

तब पहले यही निश्चय हुआ कि इलक्ट्रोन और प्रोटोन ही सृष्टि के हेतु है। किन्तु वैज्ञानिकों को यह बात खटकी। उन्होने कहा कि सृष्टि की व्यारया इन्हीं दोनों से नहीं हो सकती अत इसके अनन्तर कुछ और होना चाहिये इसलिये उन्होने न्यूट्रोन का पता चलाया। तब यह निश्चय हुआ कि सृष्टि के कारण इलक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन है जिनसे परमाणु बनते है। कपिल ऋषि भी तीन कारण लिखते है —सत्वगुण (प्रोटोन) रजोगुण (इलकट्रोन) और तमोगुण (न्यूट्रोन) है ये सृष्टि की अवस्था म सम थे। आकाश की कोई प्रथक सत्ता नहीं, उसे हम (Ether) ईथर कह सकते है। शास्त्रकार कहते हैं कि आकाश से वायु उत्पन्न हुआ। वायु का अर्थ हवा नही अपितु 'गति' अर्थ होता है। (वा गति गन्ध नयो) धातु से वायु शब्द निष्पन्न होता है। योगी अरविन्द लिखते हैं —

> It is Vedic epithet of the God Vayu, who representing the divine Principle in the life energy प्राण (Prana) Extends himself in Matter and vivifies its forms
>
> Isha Upanishad

यहाँ पर योगी अरविन्द के वाक्य को उद्धृत करने का तात्पर्य यह है कि —वैदिक वायु शब्द का अर्थ केवल हवा नहीं है।

पहले पहल जो (Vital energy) गति हुई उसी का नाम वायु है। वायु से अग्नि की उत्पत्ति हुई, वही इलक्ट्रोन (विद्युत् कण) से सबोधित किया गया है। इलेक्ट्रोन के कणों की न्यूनता और अधिकता मे तत्व (Elements) की उत्पत्ति हुई जो सख्या मे १०० हैं। इन्हीं को आप् कहा गया है। आप् का अर्थ व्यापक होता है लेकिन लौकिक सस्कृत मे इसका अर्थ जल होता है। वेद मे आप् का अर्थ केवल जल ही नहीं होता है। शत पथ ब्राह्मण मे लिखा 'आपो वा इदमग्रे सलिलम्" यहा पर आप् को सलिल अवस्था मे बिखरा हुआ कहा गया है। 'सृपति रसम् इति सलिलम्" कहा गया है। अगर आप् का अर्थ जल ही होता तो सलिल क्यो कहा गया। श्री अरविन्द घोष लिखते है —

> The difficulty only arises because the true Vedic sense of the word had been forgotten and it came to be taken as referring to the fourth of the five elemental states of Matter the liquid Such a reference would be entirely irrelevant to context But the waters otherwise called the seven stream or the seven fostering cows are the Vedic Symbol for the seven cosmic Principles and their activities
>
> Isha Upanishad

यहा पर श्री अरविन्द घोष यह स्वीकार करते है कि आप शब्द का वैदिक अर्थ लोगा को विदित नहीं है। वे भी इसका दूसरा ही अर्थ करते हैं जो स्थानाभाव से यहां उल्लेखनीय नही है। तात्पर्य यह है कि 'आप का अर्थ (Elements) तत्व हुआ। उसी आप् से पृथिवी (प्रथनात पृथिवी उच्यते) अर्थात विस्तारमय जगत् की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार ऋषियों का क्रम बुद्धिपूर्वक ठहरता है, जिसे हम अज्ञानता से नहीं जान पाते है। इसके लिये हमे पर्याप्त अनुसधान करना होगा। मैंने थोडा सा केवल निदर्शन किया है। विद्वान् पाठक इस पर पूर्ण विचार कर अपनी सम्मति प्रकाशित करेंगे।

आर्य वीर की वाणी से—

बढ़ आर्य वीर ! बढ़ आर्य वीर !!

रचयिता—श्री भीष्मसिंह चौहान "भीष्म" "साहित्यालंकार"
नगर नायक आर्य वीर दल, ग्वालियर-नगर।

पथभ्रष्ट युवक तेरे समक्ष,
साम्राज्यवाद का लिये पक्ष।
करके निशि-दिन बहु गुप्त-कार्य,
कर रहे नष्ट निज देश-आर्य।

अविलम्ब चलाओ ज्ञान-तीर,
बढ आर्य वीर ! बढ आर्य वीर।

अंतर मे इनके आज व्याप्त,
होगी नहिं निज-संस्कृति प्राप्त।
ऋषि थे साधारण एक व्यक्ति,
थी उनमे कुछ भी नहीं शक्ति।

हम एक मात्र है आज वीर,
बढ आर्य-वीर ! बढ आर्य वीर।

यह एक तंत्र के परिचायक
जनता के बनते अधिनायक।
अरि ने खेले जब कृत्य-गुप्त,
हो गई अचानक शक्ति लुप्त।

लखि यह नेत्रों स बहा नीर,
बढ आर्य वीर ! बढ आर्य-वीर।

अतएव वीर ! तुम रहो सजग,
पीछे न हटाना यह दृढ पग।
जन-जन की तुम पर आज दृष्टि,
होगी तुमसे निर्माण सृष्टि।

प्रतिबन्ध रहित हो आर्य वीर,
बढ़ आर्य वीर। बढ आर्य वीर !

आर्य्य समाज का साहित्यिक पुरोगाम

लेखक—श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

मैं बहुत दिनों से आर्य्य सामाजिक जगत का ध्यान साहित्य की पूर्ति की ओर आकर्षित करता आ रहा हूँ। परन्तु उसमे कुछ सफलता नही हुई है। सभाओं के पास तो और कामो का इतनी भरमार है कि साहित्य के मुख्य काम की ओर ध्यान देना ही कठिन है। व्यक्तियो मे बहुत से प्रशसनीय काम कर रहे है। परन्तु उनको साधन नहीं मिलते। जो कुछ किया जा रहा है वह योजना-बद्ध न होने से अधिक उपयोगी नहीं हो रहा है। अत मैं एक विस्तृत योजना बनाकर प्रस्तुत कर रहा हूँ। जो इसको अच्छी समझे वे अपना लेवे।

मैं आर्य्य समाज के उच्च साहित्य के तीन विभाग करना चाहता हूँ —

(१) आर्षग्रन्थो की शुद्धि।

(२) ऋषि दयानन्द के मतव्यो के विषय मे हिन्दी मे ग्रन्थ।

(३) विदेशोपयोगी साहित्य।

१:—आर्षग्रन्थों की शुद्धि

आर्षग्रन्थो को एक बहुत बडा जगड्वाल है। हमारे लिये यही समझना कठिन है कि कौन प्राचीन ग्रन्थ आर्ष है कौन अनार्ष। यह काम रिसर्च का है और होता रहेगा। मैं इस लेख मे रिसर्च के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहता। मैं तो यहाँ वह पुरोगाम रखना चाहता हूँ जिसकी तात्कालिक अत्यन्त आवश्यकता है।

ऋषि दयानन्द ने साहस करके संस्कृत साहित्य रूपी वन के झाड झङ्खार को साफ किया हमारे विद्वान भी कुछ साहस से काम ले और और आवश्यक ग्रन्थो का परिशोधन करे।

(१) गृह्यसूत्रों का निर्दयता के साथ संशोधन होना चाहिये और शीघ्र ही कुछ प्रसिद्ध यज्ञो और इष्टियो की पद्धति बना देनी चाहिये। यह नहीं सोचना चाहिये कि जब कोई ऋषि उत्पन्न होगा तो वह बनायेगा।

(२) मनुस्मृति रामायण और महाभारत का परिशोधित रूप प्रकाशित होना चाहिये। मैंने मनुस्मृतिका एक ऐसा संस्करण अपनी बुद्धिके अनुसार छापा था। मैं महाभारत और रामायण का भी एसा सस्करण चाहता था। परन्तु मै अब इस काम को न कर सकूँगा। कोई और सज्जन इसको अपने हाथ मे ले। ये पुस्तके चार सौ पाँचसौ पृष्ठ से अधिक न हो। आख्यायिकाये छोड़ दी जावे। पौराणिकपना बिल्कुल न रहे। ऐसा प्रतीत होना चाहिये कि ये इतिहास की पुस्तके है और गपाष्टक से बिल्कुल साफ है। इस समय ये पुस्तके चूं चूं का मुरब्बा बनी हुई है।

महाभारत के वे अश जिन को नीति कहते है, इतिहास से अलग करके छापे जावे। इस विभाग मे अभी इतना ही कार्य होना चाहिये। जब इतना हो जाय तब आगे बढ़ना चाहिये।

२:—ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ

सत्यार्थप्रकाश को शोधकर उसके प्रत्येक समुल्लास के पैराग्राफ अलग कर देने चाहिये। विराम या पैराग्राफ लगाने का यह अर्थ नहीं है कि उनके ग्रन्थों मे काट-छाट की जा रही हो। यह अति आवश्यक है।

ऋषि के ५१ मन्तव्यो की कोटिया बनाकर लगभग पच्चीस ग्रन्थ हर मन्तव्य पर नई शैली मे लिखने चाहियें जिससे वर्तमान पठित जनता उनको समझ सके और उनकी ओर आकर्षित हो सके। यह काम भिन्न भिन्न विद्वान अलग-अलग बाट ले। यदि मुझको कहा जायगा तो मैं रूप रेखा बना दूगा और यथाशक्ति सम्पादन भी कर सकूंगा। यह ग्रन्थ ३०० पृष्ठ के लगभग के होने चाहियें। इन ग्रन्थो मे आकाश पाताल की बाते न हो सर्वसाधारण के उपयोगी जमीन की बाते होनी चाहिये।

लगभग बीस ऐसे ग्रन्थ बनने चाहिये जिनमे ऋषि के सम्मानित सद्गुणो के ग्रहण करने मे लोगो को जो व्यावहारिक कठिनाइया होती हैं उनपर प्रकाश डाला जाय। इतना कहना काफी नहीं है कि तुम ब्रह्मचारी रहो। साधारणतया मनुष्य को व्यभिचार से युद्ध करने मे क्या कठिनाइया आती है उन पर विचार करके पाठको की सहायता करनी चाहिये।

३:—विदेशोपयोगी साहित्य

अंगरेज चले गये परन्तु अंगरेजी का महत्व अभी पचास साल तक रहेगा। कम से कम बीस साल तो अवश्य ही। अत दूसरे देशों तक अपनी आवाज पहुँचाने के लिये अंगरेजी की पूर्ण सहायता लेनी चाहिये।

अंग्रेजी का एक सत्यार्थप्रकाश का संस्करण उस रूप मे होना चाहिये जैसा बाइबिल का है। वह अमेरिका मे छापा जाय तो अच्छा होगा। मैंने जो अंगरेजी का अनुवाद छापा है उसमे पैराग्राफ तो कर दिये है परन्तु इन्डेक्स नही बना सका। आपने देखा होगा कि बाइबिल के हाशिये पर ऐसे सकेत रहते है। यह बनाया जा सकता है।

पाश्चात्य देशो की अभिरुचि और मनोवृत्ति को ध्यान मे रखकर वैदिक सिद्धातो पर नये ढग की पचास पुस्तके तैयार करानी चाहिये। या तो आर्य्य विद्वान् स्वय करें। या अच्छे अंग्रेजी लेखको की सेवाओं को क्रय करें, पुस्तकों का फ्रेंच, जर्मन और रूसी भाषा मे भी अनुवाद होना चाहिये।

भारत की नई स्वतन्त्रता के कारण दिल्ली मे अन्यान्य देशो के लोग आते रहते है। वे यह जानना चाहते हैं कि भारतीय सस्कृति क्या है। अत इस विषय पर दो एक अच्छी किताबे होनी चाहिये। लखनऊ, पटना, कलकत्ता, दिल्ली, जालन्धर, नागपुर, मद्रास तथा बम्बई की आर्य्यसमाज को चाहिये कि वे अपने पास मे पैसे खर्च करके अपने स्थानिक धारासभाओं के सदस्यों तथा राजदूतो तक इनकी कापिया पहुँचा देवें।

कुछ व्यक्ति भी इस काम मे इस प्रकार सहायता दे सकते है कि वे या तो स्वयं पुस्तक खरीद कर किसी एक या दो व्यक्तियों तक पहुँचा देवे। या सार्वदेशिक सभा मे पुस्तक की कीमत भेजकर सभा को प्रेरणा करे कि वह

उनकी ओर से उस पुस्तक को किसी मुख्य व्यक्ति को समर्पण कर देवे। वेदिकधर्म मे प्रचार का यह सबसे अच्छा साधन होगा।

हर एक आर्य्य भाई या बहिन को चाहिये कि अपनी शक्ति के अनुसार छोटी या बडी कोई पुस्तक खरीद करके किसी दूसरे व्यक्ति को भेट कर देवे।

साहित्य के विषय मे पार्टीवाजी या धडे बन्दी से काम नही लेना चाहिये और न साहित्य को अपनी पार्टी या अपनी सस्था की उन्नति का सकुचित साधन बनाना चाहिये। साहित्यकार सब एक हैं चाहे वे किसी पार्टी के क्यो न हों। भिन्न भिन्न सस्थाओ के पास साहित्य के लिये यदि कुछ धन हो तो कोई सगठित उपयोग होना चाहिये। आपाधापी नही होनी चाहिये।

संन्यास पूर्ण वैदिक है

(लेखक—श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक)

आजकल आर्य जगत् मे वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम की बडी अवहेलना की जा रही है और वह आर्यसमाज के कुछ प्रमुख व्यक्तियो द्वारा कोई वानप्रस्थ के विरुद्ध आन्दोलन करते है कि वानप्रस्थ आवश्यक नहीं है और कोई सन्यास को अवैदिक बतलाते है। ऐसे सज्जन तो यहा तक आन्दोलन करते देखे गये कि सन्यास के चिह्न कमडलु काषाय वस्त्र आदि शङ्कराचार्य के समय से चले, इतिहास मे सन्यासी का नाम नहीं, वेद मे सन्यास का विधान नहीं वहा सन्यास या सन्यासी शब्द नहीं है इत्यादि प्रचार किया जा रहा है। यह हो सकता है ऐसे महानुभाव वानप्रस्थ और सन्यास की ओर चलने मे अपने को असमर्थ समझते हो परन्तु उक्त सिद्धान्त की अवहेलना रूप प्रचार कुछ आर्यसमाज के प्रमुख व्यक्तियो द्वारा होना सर्वथा अवाछनीय और अनुचित है। अस्तु। हमे इस लेख मे केवल सन्यास के सम्बन्ध मे कहना है। सन्यास के सम्बन्ध मे पूर्वपक्ष के प्रश्न या आक्षेप है जोकि पुन क्रमश नीचे दर्शाए जाते है।

पूर्वपक्ष—

१—कमडलु, काषाय वस्त्र (गेरुए वस्त्र) मुडन आदि सन्यास के चिह्न शङ्कराचार्य के समय से चले, पुरातन नहीं है।

२—इतिहास मे सन्यासी का नाम नहीं आता पहिले सन्यासी नहीं होते थे।

३—वेद मे सन्यास का विधान नहीं क्योंकि वहा सन्यास या सन्यासी शब्द नहीं अत सन्यास अवैदिक है।

विवेचन—

१—"कमडलु पात्र, काषाय वस्त्र मुडन आदि सन्यास के चिह्न शङ्कराचार्य के समय से चले पुरातन नहीं हैं" यह कथन असत्य है कारण कि मनुस्मृति आदि प्राचीन धर्म शास्त्रों मे इन चिह्नो का विधान किया गया है देखिये—

अलाबु दारु पात्र चमृण्मय वैदल तथा।
एतानि यतिपात्राणि मनु स्वायम्भुवोऽब्रवीत्॥
(मनु० अ० ६।५४

अर्थात्—तुम्बी, काष्ठपात्र, मिट्टी का या बास का बना पात्र सन्यासी का होना चाहिये।

तथा—

कपाल वृक्षमूलानि कुचैलमसहायता।
(मनु० अ० ६।४४)

यहा कपाल अर्थात्—खप्पर भी सन्यासी का पात्र बतलाया। है

और भी

क्लृप्तकेश नखश्मश्रु पात्री दण्डी कुसुम्भवान्।
(मनु० अ० ६।५२)

अर्थात्—सन्यासी केश कटाए रहे मुडन कराए रहे, कमडलु आदि विशेष पात्र दड और काषाय वस्त्र धारण करे

† इतिहास मे राज व्यक्तियो द्वारा कारण वशात् साधु अवस्था व्यतीत करते समय काषाय वस्तु धारण करने का वर्णन आता है जैसे नल के वियोग मे दमयन्ती ने काषाय वस्त्र धारण किया था "तत काषायवसना जटिल मलपङ्किनी, दमयन्ती महाराज बाहुक वाक्य मब्रवीत्।
(महाभारत वन पर्व, नलोपा० अ० ४४।६)

बौधायन धर्मसूत्र मे भी कहा है—

न चात ऊर्ध्वं शुक्ल वासो धारयेत्।

(बौधायन धर्म० २।१०।३६)

अर्थात्—सन्यास ले लेने पर पुन शुक्र-श्वेत वस्त्र न धारण करे, उक्त रगे वस्त्र ही धारण करे।

२—"पहिले संन्यासी नही होते थे क्योकि इतिहास मे संन्यासी का नाम नहीं आता" इतिहास मे सन्यासी का नाम न आने से पहिले सन्यासी नहीं होते थे यह कल्पना करना ठीक नहीं कारण कि इतिहास तो राजाओं के हुआ करते है संन्यासियो के नही, पुन उनके नाम आने का बिना विशेष घटना के क्या प्रसङ्ग।

(ख) याज्ञवल्क्य के सन्यासग्रहण की चर्चा बृहदारण्यकोपनिषद् मे विद्यमान है ही "मैत्रेयीति होवाच याज्ञवल्क्य प्रव्रजिष्यन् वा अरेऽहमस्मात्स्थानादस्मि हन्त तेऽनया कात्यायन्यान्त करवाणीति"

(बृहदारण्यको० ६।५।२)

याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा कि मैत्रेयी मैं सन्यास लेने वाला हू तेरा इसकात्यायनी से सम्पत्ति सम्बन्धी बटवारा करदू" उक्त वचन मे 'प्रव्रजिष्यन्' शब्द "यदहरेव विरजेत् तदहरेव प्रव्रजेद् वनाद्वा गृहाद्वा ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत्" इस ब्राह्मण वचन मे दिए 'प्रव्रजेत्' के समान है तथा मनुस्मृति के संन्यास विधान प्रकरण मे आए 'प्रव्रजन्-प्रव्रजेत्' 'प्रव्रजति' शब्दों से तुलना रखता है—

भिक्षाबलि परिश्रान्त प्रव्रजन् प्रेत्य वर्धते।
आत्मन्यग्नीन् समारोप्य ब्राह्मण प्रव्रजेद्गृहात्।
यो दत्वा सर्वभूतेभ्य प्रव्रजत्यभय गृहात्।

(मनु० अ० ६।३४ ३८ ३६)

(ग) वादी की कल्पना है पहिले सन्यासी नहीं होते थे परन्तु महाभाष्यव्यकरण से तो स्त्रिया भी सन्यासिनी हुआ करती थीं यह सिद्ध होता है, वहा कहा है

"शङ्करा नाम प्रव्राजिका आसीत"

(महा- भाष्य० ३।२।१४)

शङ्करा नाम की सन्यासिनी थी।

(घ) भगवद्गीता महाभारत इतिहास का अङ्ग है उस मे सन्यास का वर्णन आता है—

सन्यासेनाधिगच्छति।

(भगवद्गीता अ० १८ ४६

(ङ) और फिर इतिहास धर्मशास्त्र नहीं होता है जो उस मे सन्यासी का नाम आना चाहिए। जबकि धर्मशास्त्र मे सन्यास का विधान है तब यह कल्पना करना कि सन्यासी नही होते थे नितान्त अनुचित है। मनु धर्मशास्त्र और बौधायन धर्मशास्त्र के प्रमाण पीछे दिए जा चुके है। ब्राह्मण ग्रन्थो मे सन्यास का विधान है ही

"यदहरेव विरजेत् तदहरेव प्रव्रजेद् वनाद्वा गृहाद्वा ब्रह्मचर्यादेव वा प्रव्रजेत्"

अन्य प्रमाण आगे भी आने वाले है।

३—"वेद मे सन्यास का विधान नही क्योंकि वहा सन्यास या सन्यासी शब्द नहीं अत संन्यास अवैदिक है" यह कथन भी यथार्थ नहीं है। जबकि हम आर्यसमाजियो का आदर्श आचार्य ऋषि दयानन्द है। वह संन्यास का विधान करता है और उसे वैदिक बतलाता है, देखिये ऋषि के निम्न वचन।

सत्यार्थप्रकाश मे—

"सन्यास लेवे और वेदो मे भी (ब्राह्मणस्य विजानत) इत्यादि पदों से सन्यास का विधान है"

(सत्यार्थप्रकाश पचम समु

वेदभाष्य मे—

(अमाम्) विद्या विज्ञान योग व्यायिनाम् (यतानाम्) सन्यासिनाम" दयानन्द ऋ० ८।५८।६)

(ख) यदि कोइ यह कह कि दयानन्द की बात नही मानते वेद म ही दिखलाओ सन्यास का विधान। ऐसे महानुभावो को भी हम बतलाना चाहते है कि वेद मे सन्यासी का पर्याय यति शब्द और सन्यासवृत्ति का वर्णन तो आया ह, देखिये—

असामर्थ्य यतीना ब्रह्मा भवति सारथि

(ऋ ८।१५८।६)

यहा सन्यासी का पर्याय यति शब्द मन्त्र मे स्पष्ट ह, सन्यासी को यति कहते हैं अब यह देखे—

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा ।

(मनु० अ० ६।८७)

यहा मनु ने आश्रमों का क्रमश वर्णन करते हुए सन्यासी के स्थान मे यति शब्द रखा है। इसी प्रकार का कालाग्निरुद्रोपनिषद् मे भी कहा है—

ब्रह्मचारी गृहस्थो वानप्रस्था यतिर्वा ।

(कालाग्निरुद्रोप० ९)

तथा—

वानप्रस्थशतमेकेन यतिना तत्समम् ।

(नृसिंहपूर्वतापन्युपनिषद ५।८)

सौ वानप्रस्थ के समान एक सन्यासी है यह दिखलाने को सन्यासी के स्थान मे यति शब्द प्रयुक्त है। इस प्रकार सन्यासी का पर्याय यति शब्द होने और उसके वेद मे आ जाने से सन्यास का विधान सिद्ध हुआ † ।

† यदि कोई महानुभाव यह कहने लगे कि सन्यासी का पर्याय 'यति' शब्द वेद मे आया सन्यासी शब्द क्यो नहीं आया ? इसके उत्तर म हमे यह कहना है चतुर्थाश्रमी (सन्यासी) को वद की भाषा म 'यति' कहते है। केवल वेद ही मे नहीं किन्तु मनुस्मृति जैसे प्राचीन धर्मशास्त्र मे भी चतुर्थाश्रमी (सन्यासी) को विशेषत यति' नाम से कहा ह, वहा सन्यास विधान प्रकरण म चतुर्थाश्रमी को एक स्थान पर भिक्षु और छ स्थानों पर यति नाम दिया है, सन्यासी नाम तो एक बार भी वहा नहीं आया। उक्त सन्यास प्रकरण म मनु ने 'परिव्रजेत्, सन्यसेत्' क्रियाओ का प्रयोग किया है 'परिव्रजेत्' क्रिया को को लेकर चतुर्थाश्रमी का जैसे परिव्राजक नाम "मस्करमस्करिणौ वेणु परिव्राजकयो ' (अष्टा० ६।१।१५४) हुआ एवं 'सन्यसत्' क्रिया को लकर सन्यासी नाम भी दिया जासकता ह परन्तु चतुर्थाश्रमी का परिव्राजक या सन्यासी नाम आंशिक नाम हे मौलिक नाम 'यति' ही ह यह मनु के शिष्टाचार से स्पष्ट होता है। उसके पश्चात् उपनिषदो मे अधिक करके तो वहा मौलिक नाम 'यति' आता है हा किसी किसी उपनिषद् मे आंशिक नाम सन्यासी' भी आता है—

सन्यासी योगी चात्मयाजी च । (मैत्र्युपनिषद ६।१०)

उक्त उपनिषद् का काल आज से लगभग सोलह सहस्र वर्ष पूर्व का है, उस समय का उत्तरायण क्षेत्र मघा नक्षत्र से धनिष्ठा नक्षत्र के अर्द्ध भाग तक बतलाया है जिसका समय आज से १६ सहस्र वर्ष पूर्व होता है विशेष विवरण देखो हमारी "वैदिक ज्योतिष शास्त्र" पुस्तक के ध्रुव प्रकरण मे पुन भगवदगीता मे सन्यासी नाम आया। पश्चात् चिह्नो को लेकर चतुर्थाश्रमी को अन्य साहित्य मे 'मुडी दडी' आदि अवर कोटि के आंशिक नाम भी दिए गए। परन्तु भीतर सयमन करने वाला अथात् बाहिरी स्थान बाहिरी व्यक्ति से अपने को हटाकर रखने वाला 'यति' नाम चतुर्थाश्रमी का मौलिक नाम है सो यह 'यति' मौलिक नाम वेद म आया है।

और भी लीजिए वेद मे सन्यासवृत्ति का वर्णन—

पित्वो भिक्षेत वयुनानि विद्वानासाविवास न्नदितिमुरुष्येत् ।

(ऋ० १।१५२।६)

मन्त्र मे कहा है कि 'अदिति अर्थात् मुक्ति को जो प्राप्त करना चाहे वह ऐसा ज्ञान-विज्ञानी वेदशास्त्रो को जानने वाला विद्वान् पित्व' अन्न की भिक्षा करे।" विद्वान् होकर भिक्षा करना सन्यासी का काम है सन्यास वृत्तिहै। अब यह देखे—

वृत्ते शराव सम्पाते भिक्षा नित्यं यतिश्चरेत्। (मनु० अ० ६,५६

यतयो हि भिक्षार्थ ग्राम प्रविशन्ति ।

(अरण्योपनिषद् ५)

याद्दच्छिको भवेद् भिक्षु (परमहसो० ३)

यतिमाद्दच्छिको भवेत्

(गौडपादीयकारिका ७)

उक्त मनु आदि के वचनो मे भिक्षा करनायति को कहा है सन्यासी को यति कहते है यह भी अनेक प्रमाणो से बताया जा चुका है तब उपर्युक्त "पित्वो भिक्षेत वयुनानि विद्वान्" वेद मन्त्र मे भिक्षा वृत्ति का विधान सन्यासी का विधान है अत वेद मे सन्यास सिद्ध हुआ एव सन्यास वैदिक है अवैदिक नहीं। अब अन्त मे ऐसे वेद मन्त्र को प्रस्तुत करते हैं जिसमे चारो आश्रमों का सङ्केत मिलता है—

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभाया यदिन्द्रिये ।
यदेनश्चकृमा वय तदववयजामहे ॥

(यजु० ३।४५)

इस मत्र मे ग्रामे, अरण्ये, सभायाम्, इन्द्रिये, मे प्रत्येक के साथ यत् शब्द पृथक् २ होने से और सप्तमी विभक्ति मे प्रत्येक पाठ हाने मे ये चारो पृथक् पृथक् मर्यादाए है यह स्पष्ट होता है वे मर्यादाए है आश्रम सम्बन्धी, अर्थात् इन्द्रिये यत्' इन्द्रिय संयम—ब्रह्मचर्य मे जो 'ग्रामे यत्' ग्राम म गृहस्थ मे जो 'अरण्ये यत्' वन मे वानप्रस्थ मे जो सभायाम यत् सभा मे-सत्सङ्ग मे-संन्यास कर्तव्य मे जो हम मल मे पाप कर बैठे उस पर हम पश्चात्ताप करे। मन्त्र मे सन्यास कर्तव्य का सभा शब्द मे द्योतन किया है कारण कि ब्रह्मचारी की गुरुकुल मे, गृहस्थ की ग्राम मे वानप्रस्थ की वन मे, जीवन चर्या चलती है परन्तु सन्यासी का जीवन इन मे से किसी भी एक स्थान मे नहीं व्यतीत होता वह तो जनता को सत्सङ्ग सम्मेलन का लाभ पहुँचाया करता है अत मन्त्र मे 'सभायाम सभा मे' ऐसा कहा गया है।

इत्यलम् विद्वद्वर्येषु किं बहुना ।

कवयिता—श्री बालमुकुन्द जी मिश्र साहित्यालङ्कार।

जागा आर्य-स्थान हमारा, जागा आर्य-स्थान !
मेरी भारत-भूमि श्री पर झुकते हैं: भगवान।
भारत मां की संतति हम है पावन-महा-महान्॥

जागा आर्य-स्थान !

हम-सा बल है-जग मे किसका ? हम सब से बलवान्।
लूटने देंगे कभी न अपना चिर-संचित-सन्मान॥

जागा आर्य-स्थान !

भारत की संस्कृति मे बसता, है, मानव-कल्याण,
जय-जय आर्यस्थान, जयति-जय, जय-जय आर्य स्थान,

जागा आर्यस्थान !

हम-से ही विज्ञान ग्रहणकर, जगत बना विद्वान्,
चरण-धूलि इस धरती की ले, हुआ विश्व धनवान्,

जागा आर्यस्थान !

शस्य-श्यामला मातृ-भूमि की, रखनी हमको आन,
मघर्षों की बलिवेदी पर, होना है बलिदान,

जागा आर्यस्थान !

युग-गति के स्यंदन पर चढ़ना, टेने युग की तान,
यह वीरों की कर्म-भूमि है प्यारा आर्यस्थान,

हमारा प्यारा आर्यस्थान !

मृत्यु के पश्चात् जीव की गति

अर्थात् पुनर्जन्म का पूर्वरूप

आर्य विद्वानों के विचारार्थ

[लेखक —श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० कार्य निवृत्त मुख्य न्यायाधीश टिहरी—जयपुर]

१ सृष्टि का उद्देश्य

ईश्वर ने सृष्टि क्यो रची यह एक बडा गूढ प्रश्न है साधारणतया यह उत्तर दिया जाता है कि जीवो के कर्मों का फल देने के लिये ईश्वर सृष्टि की रचना करता है। यजुर्वेद के नीचे लिखे मन्त्र से इस की पुष्टि भी होती है—

सपर्यागाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।(यजु०४०।८)

अर्थ—जो सब के ऊपर है, सब संसार के रचने वाला है, शरीर रहित है, छिद्र आदि रहित है, नस नाडी के बन्धन मे नहीं आता, शुद्ध है, पापसे रहित है, सर्वज्ञ है, मनस्वी है, सब को वश मे रखता है, अपने आप है। उसने प्रजा रूपी सब जीवों को-जो अनादि है उनके कर्मो के अनुसार न्याय पूर्वक फल का विधान किया है।

२ पुनर्जन्म का अभिप्राय

परन्तु जीवों को कर्मो का फल देने का अभिप्राय केवल न्याय करना नहीं है। मुख्य उद्देश्य जीवो का उद्धार करना है कि अविद्या व बुरे कर्मो का त्याग करके और विद्या की प्राप्ति तथा अच्छे कर्म करके प्रत्येक जीव शनै शनै अपनी आत्मिक उन्नति करे और अन्त मे परमपद वा मोक्ष का अधिकारी हो जाय। इस आत्मिक विकास का मुख्य साधन *पुनर्जन्म* है जैसा [illegible] योगी अरविन्द जी ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ लाइफ डिवाइन मे लिखा है—

"Rebirth is an indispensable machinery for the working of a spiritual evolution It is the only possible effective condition, the obvious dynamic process of such a manifestation in the material universe" (Life Divine, Vol ii, Part ii, p 703)

अर्थ—पुनर्जन्म आत्मिक विकास के लिये अनिवार्य्य साधन है प्राकृतिक जगत् मे ऐसे प्रकाशन का यही सफल कार्य्य मार्ग है।

पुनर्जन्म एक बहुत विस्तृत और महत्वपूर्ण विषय है। मै पुनर्जन्म सबन्धी केवल एक विषय पर इस लेख मे विचार करना चाहता हूँ, अर्थात् यह कि मृत्यु के पश्चात् जीव तुरन्त ही नया शरीर धारण कर लेता है या पहले किसी आवान्तर लोक या दशा मे रहता है, और पीछे गर्भ मे जाता है।

३ मृत्यु के पश्चात जीव की दशा

साधारण लोग यही मानते हैं कि मृत्यु के पीछे तुरन्त ही जीव दूसरे शरीर मे चला जाता है। परन्तु शास्त्र आदि के विचार से दूसरा मत सिद्ध होता है, अर्थात् यह कि मृत्यु के समय जीव केवल *स्थूल शरीर* को छोडता है और *सूक्ष्म शरीर* के साथ अन्य लोक मे रह कर उसका संशोधन करता है जिससे उसके पिछले जन्म के वे भाव जो बेकार हो गये है दूर हो जाय और वह नये

६—तुलनात्मक चित्र

३+१ शरीर	अवस्था पाद व मात्रा			५ कोश	७ लोक	थियोसफी के ७ तत्व	अरविन्द घोषके शब्द	साख्य के २४ तत्व	
	१+१ अवस्था	आत्मा के ४ पाद	४ मात्रा						
स्थूल शरीर	१ जागृत	वैश्वानर वा विश्व (विराट्)	अ	१ अन्नमय	१ भू	भौतिक Physical { स्थूल शरीर + आकाशिक शरीर	Physical	२०–२४ पंचभूत	प्रथिवी जल अग्नि वायु आकाश
सूक्ष्म वा लिंग शरीर	२ स्वप्न	२ तैजस (हिरण्य गर्भ)	उ	२ प्राणमय ३ मनोमय ४ विज्ञानमय	२ भुव ३ स्व ४ मह	२ प्राणमय Astral ३ मनोमय Mental (अशुद्ध मनस् Lower manas शुद्ध मनस् Higher manas ४ विज्ञानमय Buddhi	2 Vital 3 Mental 4 Supramental ५ सत् ६ चित ७ आनन्द	१५–१९ पंच कर्मेन्द्रिय १०–१४ पंच ज्ञानइन्द्रिय ५–९ पंच तन्मात्र २–४ महान बुद्धि अहङ्कार (मन)	हस्त, पाद, वाणी, पायु, उपस्थ चक्षु, श्रोत्र, नासिका, रसना, त्वचा रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द
३ कारण शरीर	३ सुप्त	३ प्राज्ञ (ईश्वर)	म	५ आनन्दमय	५ जन ६ तप ७ सत्यम्	५ आनन्दमय Nirvanic pure Nirvanic		१ मूल प्रकृति	
४ तुरीय शरीर	४ तुरीय	४ अमात्र (अनिर्वचनीय)	ॐ	आत्मा	परमात्मा	8 Maha Pari Nirvanic Transcendental	Transcendental	२५ पुरुष (जीवात्मा तथा परमात्मा)	

जन्म के लिये अधिक उपयोगी बन जाय।

थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना सन् १८७५ ई० में अमरीका में हुई थी। आरम्भ में कई वर्ष तक वह ऋषि दयानन्द को अपना "परम गुरु* (Supreme Teacher) मानती थी और आर्य्य समाज की शाखा रूप मानी जाती थी।

४ थियोसोफिकल सोसायटी व श्री अरविन्द

पीछे कुछ मतभेद पाया जाने से ऋषि दयानन्द ने आर्य्य समाज के साथ उसका सम्बन्ध तोड़ दिया। फिर भी उक्त सोसायटी के बहुत से सिद्धान्त आर्य्य समाज से मिलते हैं। इसकी शाखा भारतवर्ष के बहुत स्थानों में है और भारत के बाहर अन्य देशों में भी है। इस सोसायटी के साहित्य में इस विषय पर जिस पर मैं इस लेख में विचार करना चाहता हूँ बहुत आन्दोलन किया गया है और उसका वही मत है जिसकी ओर पैरा ३ में संकेत किया गया है।

श्री अरविन्द जी ने भी जो पांडीचेरी के प्रसिद्ध योगी हैं अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ (Divine Life) में जिसका हवाला पैरा २ में भी दिया गया यही मत प्रकट किया है।

थियोसोफिकल सोसाइटी व श्री अरविन्द ने पूर्वोक्त सिद्धान्त की जो व्याख्या की है उसका आधार बहुत अंश में उपनिषदों की तीन शरीर व पंचकोष सम्बन्धी शिक्षा है जिस की माण्डूक्य उपनिषद् व तैत्तिरीय उपनिषद् में विशेष रूप से व्याख्या है। इसलिए उचित मालूम होता है कि तीन शरीर व पंचकोष का प्रारम्भ ही में संक्षेप में वर्णन कर दिया जाय।

५ तीन शरीर व पंचकोष

पंचकोश ये हैं।

(१) *अन्न मय कोश* जिसको स्थूल शरीर भी कहते हैं। इसका *अन्न मय* नाम इसलिए है कि उसकी रक्षा *अन्न* के बिना नहीं हो सकती।

(२) *प्राणमय कोश* जिसमें पंच प्राण रहते हैं।

(३) *मनोमय कोश* जिसमें मन व कर्मेन्द्रिया रहती हैं।

(४) *विज्ञानमय कोश* जिसमें बुद्धि व ज्ञानेन्द्रिया रहती है।

नोट—ये ३ कोश अर्थात् प्राणमय, मनोमय व विज्ञान मय मिलकर *सूक्ष्म शरीर* कहलाते हैं।

(५) *आनन्द मय कोश* जिसमें जीवात्मा निवास करता है। इसको *कारण शरीर* कहते हैं।

इस प्रकार ३ शरीरों में ५ कोशों का निवास है।

मैंने अपनी पंचकोश नामक पुस्तक में एक तुलनात्मक चित्र दिया है जिसमें उपर्युक्त ३

---

*थि० सो० का Theosophist नामक मासिक पत्र प्रकाशित होता है। पहले वर्ष में व दूसरे वर्ष के भी कुछ भाग में उसके मुख पत्र Title page पर सोसायटी के अधिकारियों के नाम इस प्रकार छपते थे।

1 Pt Dayanand Saraswati Swami Supreme Teacher and Guru

2 Col H S Olcatt—President

3 Madame H P Blavatsky Secretary

अर्थात्

(१) पं० दयानन्द सरस्वती स्वामी—परम शिक्षक व गुरू।

(२) कर्नल हेनरी एस आलकट—प्रेजीडेंट।

(३) मेडम एच पी ब्लावेट्स्की मन्त्री।

सोसायटी का नाम इस प्रकार लिखा जाता था।

Theosophical Sociaty of the Arya Samaj of Aryavarta

अर्थात् आर्य्यावर्तीय आर्य्य समाज की थियोसोफिकल सोसायटी।

शरीर व ५ कोष तथा माडूक्य उपनिषद् के ४ पाद व ४ मात्रा व थियोसोफिकल सोसायटी के ७ तत्व व सप्तलोक दिये है और साख्य दर्शन के २४ तत्वो को भी समन्वय करके दिखलाया है। उस चित्र को यहा भी देना लाभ दायक होगा इसलिये नीचे दिया जाता है—

जिस प्रकार मनुष्य के शरीर मे *पचकोष* है इसी प्रकार ब्रह्माड मे *लोक* है वेदान्त का एक प्रसिद्ध वाक्य है "यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे अर्थात् जैसी रचना *पिण्ड* (*मनुष्य के देह*) मे है वैसी ही *ब्रह्माण्ड* मे है अग्रेजी मे मनुष्य के शरीर को (microcosm) कहते हैं जिसका अर्थ है (micro) छोटा (cosm) जगत् जैसे देह के ५ कोश एक दूसरे के भीतर और एक दूसरे से सूक्ष्म हैं ऐसे ही *लोक* है अर्थात् स्थूल जगत् के भीतर *प्राणमय* लोक है और उससे सूक्ष्म है *मनोमय* लोक प्राणमय लोक के भीतर और उससे सूक्ष्म तर है। इसकी व्याख्या विस्तार के साथ *तैत्तिरीयोपनिषद* की ब्रह्मवल्ली मे की गई है। ३ शरीर व उसके साथ ३ अवस्था (जागृत, स्वप्न सुषुप्ति) व *४* मात्रा व पादो की व्याख्या माण्डूक्योऽपनिषद् मे है।

७ थियोसोफिकल सोसायटी व श्रीअरविन्द घोष के साहित्य, उपनिषद्, तथा अन्य साहित्य के मनन से मृत्यु के पश्चात् जीव की गति का रूप निम्न प्रकार पाया जाता है—

७ मृत्यु के पश्चात जीव की गति

मृत्यु के समय जीव केवल स्थूल शरीर (Gross Body) को छोडता है, जो अग्नि म जला दिया जाता है या पृथ्वी मे गाड दिया जाता है अथवा जल मे बहा दिया जाता है। पारसी लोग उसको मासा हारी पक्षियों के खाने के लिए एकनिर्दिष्ट स्थान मेछोड देते हैं। इस प्रकार उसके सब भाग पच भूतों मे मिल जाते हैं जिन से वह बना था। जीव सूक्ष्म शरीर के साथ (जिस मे कारण शरीर भी है) चला जाता है।

८ स्थूल शरीर

इस स्थूल शरीर मे मुख्य भाग जिमको असली GrossBody *स्थूल शरीर* Dense body कहना चाहिये पृथ्वी, जल, अग्नि व वायु इन ४ तत्वों से बना है, और एक भाग केवल *आकाश* तत्व का है जो *पाच भौतिक* स्थूल शरीर का भाग होते हुए भी आखा वा अन्य बाह्य इन्द्रियो से नहीं दीखता। मृत्यु के समय वह स्थूल शरीर से निकल कर उसके समीप ही बना रहता है और उसके साथ

९ आकाशिकशरीर

Etherial Body

ही शमशान को जाता है वहा वह शरीर के साथ अग्नि में भस्म हो जाता है,। यदि शरीर पृथ्वी मे गाडा जाय तो वह कर मे बना रहता है और लगभग १० दिन मे शरीर के सड जाने पर धीरे धीरे नष्ट होता है। मृत शरीर को जमीन मे गाडन की अपेक्षा अग्नि मे जलाना उत्तम है इसकी इस बात से भी पुष्टि होती है कि आकाशिक शरीर Etherial body की कबर मे सडने से दुर्गति नहीं होती और उसका शीघ्र ही छुटकारा हो जाता है।

१० सूक्ष्म शरीर के साथ जीव का प्राणमयलोक में जाना

मृत्यु के पश्चात् जीव सूक्ष्म शरीर के साथ (जिस मे कारण शरीर भी है। *प्राण मय लोक* मे रहता है, यह स्थूल जगत् ही के सदृश है, परन्तु सूक्ष्म होनेसे हमारी स्थूल इन्द्रियें उसको नहीं देख सकती

उसको प्राण मय लोक इस लिये कहते है कि वह उसी प्रकार प्राण तत्व से बना है, जैसा कि स्थूल जगत पच भूतो से बना हुआ है। थियो० सो० के साहित्य मे इसका नाम *काम लोक* (अर्थात इच्छाओं का लोक) व Astial World है। इस लोक मे जीव के रहने का उद्देश्य यह है कि जीव मे जो बुरी इच्छाये है वे दूर होकर उसके प्राण मय कोश की शुद्धि हो जाय। इस लोक मे जीव कितने समय तक रहे इसकी कोई अवधि नहीं। यह उसकी आत्मिक दशा पर निभर है। यहा उसकी उसके पुराने सम्बन्धी वा परिचित जीवात्माओ से जिनका उस समय उस लोक मे निवास हो भेट होती है।

इस लोक की ७ श्रेणिया है जिनमे पहली २ श्रेणिया नीचे दर्जे की हैं जिनमे नीच दशा के जीव जाते है, इन २ श्रेणियो को *नरक* भी कह सकते है। शेष ५ श्रेणियो मे भी जो ऊपर की श्रेणिया है वे उन्नत दशा के जीवो क लिये हैं। शेष साधारण के लिये।

इस लोक मे जीव की स्थिति समाप्त होने पर उसका प्राण मय कोश वहीं नष्ट होकर प्राण तत्व मे इस प्रकार मिल जाता है जेसे कि भौतिक शरीर नष्ट होने पर पच भूतों मे मिल जाता है।

११ प्राण मय लोक से जीव का मनोमय लोक Mental World में जाना

यदि किसी जीव को प्राण मय लोक से आगे जाने की आवश्यकता नहीं तो वह मनोमय लोक को नहीं जाता।

श्री अरविन्द ने यही माना है—

If the development of mind were insufficient, it is possible that it would not be able to go consciously beyond the vital level returning from its vital heavens or purgatories to the earth

(Divine Life ii Vol ii ii P 774)

(अर्थात्) यदि आत्मिक उन्नति पर्याप्त नहीं तो यह सभव है कि जीवप्राण मय लोक से आगे नहीं जासकेगा और बड़े शोधन स्थानों Purgtaories से पृथ्वी लोक को लौट आवेगा।

श्री ऐनी बैसेंट ने भी लिखा है—

A spiritually advanced man who has purified his astral body merely passes through Kamaloka without, delay the astral body disintegrating with extreme swiftness (Ancient wisdom P 817

(अर्थ) जिस मनुष्य की आत्मिक उन्नति हो गई और जिस ने प्राणमय शरीर को शुद्ध कर लिया है वह काम लोक मे केवल होता हुआ विना देरी लगे लौट आता है और प्राणमय कोश बडी शीघ्रता से नष्ट हो जाता है।

जिस जीव को प्राणमय लोक से आगे जाना है उस की प्राणमय कोश नष्ट होने पर *मनोमय* लोक म जागृति होती है जिस को थिसो० सो० साहित्य मे Dev Dham अर्थात् देवस्थान कहते है। वह काम लोक से बहुत उन्नत दशा का है उस को *स्वर्ग लोक* भी कह सकते हैं। इस लोक मे भी ७ श्रेणिया हैं। ऊपर की श्रेणिया निचली श्रेणियो से श्रेष्ठ है (इस लोक मे जीव के रहने का मुख्य उद्देश्य

अपने मन व विचारों को शुद्ध करना और नये शरीर के लिये (जो पुनर्जन्म से उस को मिलगा एक नया मनोमय कोश तय्यार करना है। इस मे निवास करने के लिये भी कोई अवधि नियत नहीं। प्रत्येक जीव को अपनी पिछली आत्मिक दशा और नवीन जन्म के लिये उपयोगी सूक्ष्म शरीर की तय्यारी की आवश्यकता के अनुसार रहना होता है।

१२ प्राणमय लोक व मनोमय लोक का वर्णन प्राणमय लोक वा काम लोक का वर्णन श्री एनी बीसेंट कृत Ancient Wisdom के अ० ३ व ४ में विस्तार किया गया है और मनोमय लोक Mental Plane का वर्णन अ० ४ में विस्तार के साथ है। श्री अरविन्द कृत Divine—Life की जिल्द १ के अ० १, २१, २२, २३, व २४ में इन का वर्णन है, उस मे छोटी छोटी बातों का इतना विस्तार नहीं जितना श्री एनी बीसेंटकृत Ancient Wisdom में पाया जाता है। श्री अरविन्द के लिखन के ढग से यह विदित होता है कि उन्होंने जो कुछ लिखा वह अपने अनुभव से नहीं किन्तु दार्शनिक ग्रन्थ व विद्वानों के तर्क के आधार पर लिखा परन्तु श्री एनी बीसेंट के लिखने की शैली से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने जो लिखा अपने (व श्री मेडम ब्लैवेटस्की आदि विशेषज्ञों के) अनुभव के आधार पर लिखा है श्री बसन्ट के अलावा सोसायटी के अन्य विद्वानों का भी यह दावा रहा है कि उन को ऐसे लोकों के दर्शन की दिव्य शक्ति Astral vision प्राप्त थी। श्रीलेडबीटर Leadbeater जी बहुत समय तक श्री एनीबेसन्ट के साथ सोसायटी के उपप्रधान रहे इस दिव्य शक्ति के द्वारा सोसायटी के महात्माओं का (जिन को वे तिब्बत के पहाड़ों में Astral State दिव्य दशा में निवास मानते है) दर्शन करके उनका विस्तृत वर्णन Mahatma & the Path नामक पुस्तक में किया है। इसी शक्ति के द्वारा उन्होंने एक पुस्तक Inner World में मंगल Mars, Mercury बुद्ध व शुक्र Venus ग्रहों का बड़ा रोचक वर्णन लिखा है।

१३ मनोमय लोक से जीव का गर्भ में जाना उपर्युक्त लोकों में प्राणमय कोश व मनोमय कोश की शुद्धि हो जाने के बाद जीव अपने सूक्ष्म शरीर के साथ (जिस में कुछ संशोधन व परिवर्तन हुए हैं। और कारण शरीर के साथ जो मोक्ष की प्राप्ति तक सदा उसके साथ रहता है अपने गुण व कर्मो के अनुसार दूसरा देह धारण करने के लिये गर्भ में जाता है। वहां उस का केवल नया स्थूल शरीर ही (आकाशिक शरीर के साथ) नहीं बनता, किन्तु सूक्ष्म शरीर भी बहुत कुछ नये प्रकार से बनता है यह सब रचना कारण शरीर के आधार पर होती है जिसमें जीव के सब पूर्व जन्म जन्मान्तरो के संस्कार रहते है। इस शरीर रचना का वर्णन बड़े रोचक प्रकार से (Ancient wisdom के अ० ७ Reincarnation) में किया गया है।

१४. गर्भ में सूक्ष्म शरीर भी नया बनता है पुनर्जन्म के समय जीव के साथ उसका पुराना सूक्ष्म शरीर जैसा पहले जीवन में था वैसा ही नहीं जाता।

इस बात को श्री अरविन्द ने भी स्पष्ट रीति से माना है और प्राणमय लोक व मनोमय लोकों में जीव के रहने का मुख्य उद्देश्य यही बतलाया है कि इन कोषों की शुद्धि द्वारा सूक्ष्म शरीर नये देह व नये जीवन के लिये अधिक उपयोगी बन जाय वे लिखते है —

At each stage he would exhaust & get rid of the fraction of former personality structure temporary & superficial that belonged to the past life he would cast off his mind sheath & life sheath as he has already cast off his body sheath But the essence of the personality and its mental vital physical experiences would remain in latent memory or as a dynamic potency for the future (Life Divine II ii 773 774)

अर्थात्—हर एक स्थान में जीव अपने सूक्ष्म शरीर के उस भाग को छोड देता है जो अस्थायी था और पिछले जन्म से सम्बन्ध रखता था अब बेकार हो गया था। वह अपने मनोमय कोश को फैंकता है। प्राणमय कोश को फेंकता है जैसे कि वह 'अन्नमय' को फैंक चुका। परन्तु इन प्राणमय व मनोमय कोशों के अनुभव संस्कार रूप से सूक्ष्म शरीर में पुरानी स्मृति या भावी शक्ति के रूप में बने रहेंगे। क्रमश

मनुस्मृति और स्त्रियां

(लेखक—श्रीगङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम०ए०)

(गताङ्क से आगे)

समाज सघटन के विधान के साथ ही साथ समाज मे स्त्रियो का क्या स्थान है यह भी प्रश्न उठता है। परन्तु स्त्रियो के विषय मे प्रश्न उठाने से पूर्व यह समझ लेना चाहिये कि जिस प्रकार समाज मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र का वर्गीकरण होता है उसी प्रकार स्त्री और पुरुष का नहीं होता। स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध अन्य वर्गो के सम्बन्ध से भिन्न है, यह विशेष सम्बन्ध है जिसको अटूट माना गया है। विवाह का अर्थ ही है विशेष सम्बध (वि+वाह), यहा उपसर्ग 'वि' बडा महत्वपूर्ण है और यदि इस पर विशेष ध्यान न दिया जाय तो समाज के निर्माण मे गडबड होने की आशङ्का है।

यों तो यदि मनुष्य जाति के दो विभाग कर दिये जावे, एक स्त्री और दूसरा पुरुष और फिर उन दोनो के वर्णानुकूल चार चार विभाग किये जाय तो मनुष्य जाति आठ भागो मे विभाजित हो जायगी परन्तु ऐसा नहीं है। क्षत्रिय और ब्राह्मण अलग अलग रह सकते है परन्तु स्त्री पुरुष नहीं, भाई भाई अलग रह सकते हैं परन्तु स्त्री पुरुष नहीं, इसी सम्बन्ध मे ऋग्वेद मे कहा है —

इहैवस्त मावियौष्ट विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ॥

(ऋग्वेद १०-८५-४२)

"तुम दोनो अपने घर मे ही रहो। अलग मत हो। पूरी आयु को प्राप्त होओ।"

इसलिये स्त्री पुरुष को 'दम्पती' (पत्नी च पतिश्च पती, दमस्य पती दम्पती) अर्थात् घर का सयुक्त मालिक कहा गया।

यदि एक जाति और दूसरी जाति मे युद्ध छिड जाय, यदि एक मनुष्य समूह दूसरे मनुष्य के विरुद्ध तडपडे तो कुछ दिन तक निर्वाह हो सकता है परन्तु यदि स्त्री और पुरुष म वमनस्य हो जाय तो परिवार एक क्षण के लिये भी न चल सके। अत जहा यह प्रश्न उठता है कि समाज मे स्त्री का क्या स्थान है वहा वास्तविक प्रश्न तो यह है कि स्त्री और पुरुष का परस्पर सम्बन्ध क्या है ?

स्त्री और पुरुष का भेद ब्राह्मण और क्षत्रिय के समान कल्पित, समाज-निर्धारित या राज्य निर्धारित नहीं है। यह स्वाभाविक और प्राकृतिक है।

जिस प्रकार मनु ने कहा कि —

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मण श्चैति शूद्रताम्।

(१०-६५)

अर्थात् "शूद्र ब्राह्मण हो जाता है और ब्राह्मण शूद्र"। उसी प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि —

"स्त्री प्राप्नोति पुरुषत्व स्त्रीत्वमेति तथा पुमान्"

स्त्री पुरुष हो जाती है और पुरुष स्त्री,

इससे पाया जाता है कि प्रकृति ने स्वय स्त्री और पुरुष का स्थान अलग २ नियत कर दिया है और उनका परस्पर सम्बन्ध भी, इसलिये जब तक उन दोनों का व्यवहार प्रकृति के इस विधान के अनुकूल रहेगा काम चलता रहेगा।

उस मे भेद आते ही गडबड हो जायगी।

प्रकृति ने स्त्री और पुरुष को साथ रहने के लिये बनाया है अत वे एक दूसरे के पूरक हैं। बिना एक के दूसरा अधूरा है। इसी लिये वैदिक साहित्य मे स्त्री को पुरुष की अर्द्धाङ्गिनी कहा है। अर्द्धाङ्गिनी का क्या अर्थ है? किसी चीज के दो हिस्सों को आधा आधा तो तब कहेंगे जब वे दोनों हिस्से बराबर हों। परन्तु अत्यन्त बराबरी तो असम्भव है। कहीं तो भेद होगा। कुछ तो पहचान होगी। एक कान दूसरे कान के बराबर होता है। फिर भी उनके स्थानों मे भेद होता है। उतना भेद नहीं जितना नाक और कान मे। परन्तु इतना भेद अवश्य है कि एक दाहिना कान है और दूसरा बाया, एक का मुह पश्चिम को है तो दूसरे का पूर्व को, फिर भी वे दोनों कान बराबर ही है, इस वाक्य का पूरा अर्थ समझ लीजिये तभी इस प्रश्न को समझ सकेंगे।

हा! तो स्त्री और पुरुष एक शरीर के ही दो आधे आधे अङ्ग है बराबर हैं। फिर भी भेद है, स्त्री को पुरुष का वामाङ्ग कहते हैं। पुरुष दक्षिणाङ्ग है।

यहा प्रश्न यह है कि यह दक्षिण और वाम का भेद क्यो? हम यहा शरीर शास्त्र और प्राणिशास्त्र की जटिलताओं मे न पडते हुये यही कहेंगे कि इसका उत्तर प्रकृति माता से पूछिये। उसने ऐसा ही बनाया है और स्त्रियो की धृष्टता या पुरुषो की नम्रता इसको दूर नहीं कर सकती।

जब हमने कहा कि स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं तो इसका अर्थ यह था कि स्त्री मे कुछ त्रुटि थी और इस लिये उसको पुरुष पूरक की आवश्यकता पडी। और पुरुष में कुछ त्रुटि थी इसलिये उसे स्त्री पूरक की आवश्यकता पडी। इन मे से किसी को भी आत्म पूर्णता प्राप्त नहीं है। इसलिये उनमे एक दूसरे को आकर्षित करने की नैसर्गिक प्रवृत्ति है।

स्त्रियो को वामाङ्ग कहना उनका अनादर या अपमान नही है। यह नैसर्गिक सचाई है। आदि सृष्टि से आज तक किसी युग किंवा देश अथवा किसी जाति की स्त्रिया अपने पुरुषो का दक्षिणाङ्ग नहीं बनसकी। एक दो अपवाद को छोडकर किसी स्त्री ने कभी वामाङ्ग से दक्षिणाङ्ग बनने का यत्न नही किया। करती भी क्यो? नैसर्गिक प्रवृत्ति ही न थी, अपवादों का तो प्रश्न ही अलग है। उनसे सर्वतन्त्र सिद्धान्त की सिद्धि ही होती है। एक दो अपवाद को छोडकर ससार के सभी मनुष्य दाहिने हाथ से क्यो लिखते और दाहिने हाथ से क्यो भोजन करते है? दाहिना हाथ वामहस्त की अपेक्षा क्यो बलशाली होता है? कुछ तो कहेंगे कि स्वभाव पडगया है। परन्तु यह कोई उत्तर नहीं है। आरम्भ से ही मनुष्य जाति ने यह स्वभाव क्या डाल लिया? पैर से ही क्यो चलते हैं? सिरसे क्या नहीं चलते? इसका क्या यही उत्तर है कि स्वभाव पड गया है, यदि सिर से चलने का हमारे आदिम पुरुष स्वभाव डालते तो क्या वैसा स्वभाव हो जाता?

तो क्या जैसे बाया हाथ दाहिने की अपेक्षा निर्बल होता है उसी प्रकार स्त्री भी पुरुष की अपेक्षा निर्बल होती है? मैं कहूगा "अवश्य, सत्य यही है। अपवादो को छोडकर।" समस्त स्त्री जाति से मिलकर समस्त पुरुष जाति से शारीरिक बल मे कम है। यदि

कोई स्त्री बहुत बलवती होती है तो उसको कहते भा है 'मरदानी औरत।' और यदि कोई निर्बल पुरुष होता है तो उसे जनाना मर्द कहकर पुकारते है, शब्दो का यह प्रयोग आकस्मिक नहीं अपितु नैसगिक प्रवृत्ति का बोधक है।

एक और युक्ति लीजिये, प्राय ससार की सभी स्त्रिया जब अपने लिये वर खोजती है तो उनकी यही इच्छा होती है कि वर उनकी अपेक्षा शरीर और बुद्धि मे अधिक होना चाहिये विद्योत्तमा और कालिदास का उदाहरण जगत् प्रसिद्ध है। कोई स्त्री नहीं चाहती किउसे उस से निर्बल और उससे मूर्ख वर मिले। पुरुष भी अपने से अधिक बलवती स्त्री से विवाह करने मे घबराते है। क्यो ? इसलिये कि प्रत्येक स्त्री समझती है कि मुझ मे शारीरिक बल की कमी है। इसकी पूर्ति के लिये बलवान् पूरक चाहिये।

इसी लिये स्त्रियो पुरुषो के सरक्षण की अपेक्षा रखती है, मनुजी ने लिखा है —

पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति ॥
(६ ३ ३)

"कुमार अवस्था मे पिता रक्षा करता है। यौवन मे पति, बुढापे मे पुत्र रक्षा करते हैं। स्त्री बिना रक्षक के छोडने के योग्य नहीं है।

इस श्लोक पर आधुनिक युक मे मनु जी की बहुत गालिया मिली है, कि उन्होने स्त्रियों को कभी स्वतन्त्र होना लिखा ही नहीं। इस प्रकार तो स्त्री आयु भर दासी रहती है। परन्तु मनु को इस प्रकार दोष देने वाले श्लोक के आशय को नहीं समझते, क्या पुत्री पिता की दासी है या माता पुत्र की। मनु जी के श्लोक से यह आशय टपकता है 'रक्षति' शब्द श्लोक मे तीन बार आया है, इसलिए कि स्त्री की रक्षा का भार किसी को तो सौपा ही जायगा। स्त्री ससार के गु डों से स्वय अपनी रक्षा नहीं कर सकती, उसीप्रकार जसे स्वर्ण या बहुमूल्य रत्न स्वय अपनी रक्षा नहीं कर सकते। पिता, पति और पुत्र से अधिक कौन ऐसा उचित पुरुष था जिसको यह भार सौपा जाता। स्वर्ण की बहुमूल्यता ही उसके स्वातत्र्य मे बाधक है और स्त्री की मृदुता, कोमलता, सौन्दर्य आदि। किसी उर्दू के कवि ने लिखा है —

हुस्न की इक अजीब इल्लत है।
जिसने डाली नजर बुरी डाली ॥

गुलाब की रक्षा के लिये ईश्वर काटे उत्पन्न करता है। क्योंकि कोई गुलाब —

" नहि स्वातंत्र्यमर्हति "

इसी लिए तो मनु जी कहते है —

अस्वतत्रा स्त्रिय कार्या पुरुषै स्वैर्दिवा निशम्।
विषयेषु च सज्जन्त्य सस्थाप्या आत्मनोवशे ॥
(६-२--)

अर्थात् पुरुषों को चाहिये कि अपनी स्त्रियो क सरक्षण से कभी वे असावधान न रहें। और उनको अरक्षित न छोडें। यदि वह विषयों में फंसने लगे तो उनको बचावे।

कालऽदाता पिता वाच्यो वाच्यश्चानुपयन् पति।
मृते भर्तरि पुत्रस्तु वाच्यो मातुर रक्षिता॥
(६-४-४)

अर्थात् जो पिता समय आने पर अपनी पुत्री का विवाह नहीं करता या जो पति समय आने पर अपनी स्त्री को सन्तुष्ट नहीं करता या पति के मरने पर पुत्र अपनो माता की रक्षा नहीं

करता, इन तीनो को निन्दनीय या दण्डनीय समझना चाहिये।

सूक्ष्मेभ्योऽपि प्रसङ्गेभ्य स्त्रियो रक्ष्या विशेषत ।
द्वयोर्हि कुलयो शोकमावहेयुररक्षिता ॥
(९ ५ ५)

विशेष कर सूक्ष्म प्रसगो से तो स्त्रियो की रक्षा करनी ही चाहिये, इधर उधर पैर फिसल जाने पर दोनों कुलों को शोक होता है।

इमं हि सर्ववर्णाना पश्यन्तो धर्ममुत्तमम्।
यतन्ते रक्षितु भार्यां भर्तारो दुर्बला अपि॥
(९-६ ६)

सब वर्णों के, इस उत्तम धर्म को जानने वाले कमजोर पति भी अपनी स्त्री की रक्षा करने का यत्न करते हैं।

स्वा प्रसूतिं चरित्रं च कुलमात्मानमेवच।
स्व च धर्मं प्रयत्नेन जाया रक्षन हि रक्षति॥
(९ ७ ७)

अपनी सन्तान, अपना चरित्र, अपना, कुल, अपनी आत्मा, अपने धर्म इन सब की वही रक्षा करता है जो अपनी पत्नी की प्रयत्न पूर्वक रक्षा करता है।

इन श्लोकों मे पता चलता है कि मनु जी मानवी प्रकृति का कितना सूक्ष्म ज्ञान रखते थे और जो स्त्री और पुरुष क्षणिक आवेश में आकर मिथ्या स्वातंत्र्य प्राप्त करने के लिये मनु जी पर दोष लगाते हैं वह कितना अनर्थ करते हैं और स्वय अपनी मानसिक वृत्तियों से वे कितने अनभिज्ञ हैं। हर एक पुरुष को यह अच्छा लगता है कि मकान को ताला लगाना न पडे, चौकीदार रखना न पडे अपने माल की रक्षा की चिन्ता उसे न करनी पडे। परन्तु यह तो असभव है कि उसके धन को अरक्षित पा कर चोर न ले जावे या डाकुओं के मुह मे पानी न भर आवे।

स्त्रिया स्वभाव से ही कोमल मन और कोमल शरीर की होती है। चतुर से चतुर स्त्री भी धूर्तों पर विश्वास करलेती है या भय भीत हो जाती है। गु डो के जालो से बचना स्त्रियों के लिये अत्यन्त कठिन है। अत उनके सरक्षकों का कर्त्तव्य है कि वे अपनी देवियो की रक्षा का भार अपने ऊपर लवे और समाज तथा राज्य उनको इस कर्तव्य के पालन करने के लिये बाध्य करे। आजकल नई रोशनी की युवतिया स्वतत्रता चाहती है। परन्तु समाज की वास्तविक दशा को परखने वाले बता सकते हैं, कि यह स्वतंत्रता इनको कितनी महगी पडती है, और कभी कभी तो वह असाध्य रोग हो जाती है। स्त्री का आख उस समय खुलती है जब उसके पास बचने का कोई उपाय नहीं रहता और वह न केवल वर्त्तमान अपितु अपना भविष्य भी खो बैठती है। यदि आरंभिक स्वतत्रता किसी स्त्री को आयु भरके लिये दास बनादे तो वह स्वतंत्रता नहीं है। जो स्त्रिया पिता, पति और पुत्र के सरक्षण को 'दासता' के नाम से पुकारती हैं, वह अपने स्वजनो के संरक्षण को खोकर दुष्ट, दुराचारी, क्रूर और निर्दयी लोगों की सदा के लिये दासी बन जाती हैं। गुलाब को काटे कितने ही बुरे क्यों न लगे परन्तु गुलाब के जीवन की रक्षा के लिये वे बडे आवश्यक हैं। उनको काटा मत कहो। उनको रक्षक कहो। (क्रमश)

अगले अक मे देखो

श्री अरविन्द आश्रम तथा श्री माताजी

(लेखक—श्री डा० इन्द्रसेन जी एम० ए० पी एच० डी० सपादक अदिति श्री अरविन्दाश्रम पांडीचेरी)

१ श्री अरविन्द एक समय राष्ट्रनेता थे, आज गुह्यवेत्ता और योगी है। उनके राष्ट्रीय कार्य को जनता समझ पाती है, परन्तु आध्यात्मिक कार्य को एक भावना के आधार पर मान देती है तथा उनके ग्रन्थो के लिये, जिन्होने भारतीय सस्कृति का ससार भर मे आदर बढाया है, गर्व अनुभव करती है।

२ एक गुह्यवेत्ता के आध्यात्मिक कार्य को समझना, अवश्य ही, कठिन है। कारण, कि यह कार्य ही बहुत भिन्न शैली का है। हम वैज्ञानिक अनुसधान की मर्यादा को काफी हद तक समझते है। हम जानते हैं कि उसके लिये समय चाहिये, सुभीता चाहिये, एकात तटस्थ भाव चाहिये। इसी लिये हम एक अनुसधनालय का काम एक विश्वसनीय उच्च कोटि के वैज्ञानिक की देखरेख मे छोड़ देते है और गवेषणा के फल की धीरज से प्रतीक्षा करते है। वैज्ञानिक अनुसधान के विषय को हम जानते है, परन्तु उसके अनेक उपायो और शैलियों को हम समझने का यत्न भी नहीं करते। उन्हे हम विशेषज्ञ वैज्ञानिक का क्षेत्र स्वीकार करते हैं। श्री अरविन्द के कार्य को हमे इसी तरह से समझने का यत्न करना होगा।

३ श्री अरविन्द जब विदेश में शिक्षा समाप्त कर चौदह वर्ष के बाद भारत लौटे तो उन्हें भारतीय सस्कृति का ज्ञान प्राप्त करने की तीव्र इच्छा हुई। उन्होने सस्कृत सीखी और प्राचीन भारतीय साहित्य पढना शुरू किया। उन्होने शीघ्र ही अनुभव किया कि योग और आध्यात्मिकता भारत की अद्वितीय विशेषता है और वे योग की ओर क्रियात्मक रूप मे आकर्षित अनुभव करने लगे। ब्रह्म तेज उन्हें एक सत्य वस्तु प्रतीत हुई और वे इसके उत्कट जिज्ञासु हो गये। १९०८ के एक वर्ष के कारावास मे उन्हे कुछ विशेष अनुभूतिया हुई जिन्होने उन्हे योग मे पूर्णतया प्रवृत्त हो जाने की प्रेरणा दी और १९१० मे वे राजनीतिक उलझनो से अलग पाडचेरी मे आकर रहने लगे और निजी साधना मे निमग्न हो गये। उन दिनो यदि कोई योग का जिज्ञासु उनसे योगदीक्षा और सहायता मागता तो वे उसे कह दिया करते कि किसी के आत्म-विकास की जिम्मेवारी अत्यन्त कठिन चीज है, मै इसके लिये तैयार नहीं। १९२० मे देशबन्धु चित्तरंजनदास ने उन्हे एक पत्र द्वारा पुन राष्ट्रीय-क्षेत्र मे आने के लिये आहूत किया। उसके उत्तर मे उन्होंने कहा था कि "मैं यह अधिकाधिक स्पष्ट रूप मे देख रहा हूँ कि मानव जाति जिस व्यर्थ के घेरे मे सदा से चक्कर काट रही है उसमे से मनुष्य तब तक कदापि बाहर नहीं निकल सकता जब तक वह अपने आपको ऊंचा उठाकर एक नये आधार पर प्रतिष्ठित नहीं कर लेता।" उन्होंने आगे पत्र

मे बतलाया था कि यह आधार आध्यात्मिक है तथा उसकी सपूर्ण शक्ति को सचालित करने का विकास साधित करना मेरा उद्देश्य है। १६२० मे आश्रम नहीं था। आश्रम तब खुला जब श्री अरविन्द को १६२६ म सिद्धि प्राप्त हुई और उन्हाने अपना आध्यात्मिक कार्य शुरू किया। १६२६ की २४ नवम्बर के दिन कई महत्वपूर्ण घटनाए घटी। श्री अरविन्द ने सिद्धि उपलब्ध की, उन्हाने आश्रम खोला और वे एकात मे चले गये। यदि हम यह स्मरण रखे कि श्री अरविन्द एक अत्यन्त उच्च कोटि की आध्यात्मिक शक्ति वास्तविक ब्रह्म तेज, के जिज्ञासु थ तो ऊपर की घटनाओ से कवल यही परिणाम निकाल सकता ह कि श्री अरविन्द का एकान्त उनके कार्य की अवस्था ह। एक पत्र मे उन्होने लिखकर बतलाया भी था कि आश्रम उनका प्रथम दायित्व ह। इस दायित्व को व कैसे निभा सकते है यह भौतिकवादी के लिये समझना तो असभव है, अध्यात्म परम्परा वाले सामान्य भारतीय के लिये भी कठिन है, क्योकि इस कोटि की आध्यात्मिक शक्ति का अनुभव अत्यन्त असाधारण है। परन्तु आश्रम के जीवन सचालन का मूल मन्त्र यही है। यही ह वह शक्ति जो साधकों को उनके अन्दर प्रेरणा और अभीप्सा प्रदान करती हे और वे अपनी अपनी जिज्ञासा तथा तन्मयता के अनुसार अपना आन्तरिक विकास लाभ करते है। बाह्य प्रतिबन्ध आश्रम के जीवन मे, वास्तव मे है ही बहुत कम। जो लोग अपना धनादि समर्पित करते हैं वे किसी नियम के कारण नहीं, बल्कि आध्यात्मिक जिज्ञासा के विकास में एक समय व्यक्ति को अलगपना, पृथक् निजी जीवन, भरी लगन लगता ह और उसे आनन्द ही अपने छोटे व्यक्तित्व को बड व्यक्तित्व म लय कर देने म आता ह। परन्तु धन देना आसान है। अपने आप को देना कठिन ह। अपनी अहकारमयी इच्छाओ स अनासक्त होना और उन्हे समर्पित करना, इसक कष्ट और आनन्द को गम्भीर साधक ही धीर धीर जान पाता ह दुनिया को आश्चर्य होता ह कि जितने साधको ने अपना सब कुछ श्री अरविन्द आश्रम को द दिया ह साधको के भाव म उन्ह जो मिला ह शायद वही ज्यादा निवास करता है।

४ श्री अरविन्द का उद्देश्य है मानव प्रकृति को समूल रूपान्तरित करना। इसके लिये आश्रम उनका क्षेत्र और अनुसधानालय है। जिस श्रेणी का रूपान्तर वे चाहते हैं उसके लिये अतिमानसिक (Supramental) आध्यात्मिक शक्ति का अवतरण साधित करना अनिवार्य है। वह शक्ति ही मानव स्तर पर उतर कर मानव प्रकृति बदल सकती है। श्री अरविन्द हमे बार बार बतलाते है और उसका अवतरण सिद्ध करना ही उनके ध्यान और एकाग्रता का प्रधान विषय है। परन्तु यह शक्ति उतर अच्छे आधारो मे ही सकता है। इसलिये साथ साथ मानव आधारो को भी उत्तरोत्तर तैयार करना है। प्रत्यक्ष ही, योग के ऐसे अनुसधानालय के लिये एक निजी वातावरण चाहिये और यदि उसे अपने काम मे सफल होना है तो वह अपनी शक्ति लोकोपकार तथा अन्य किसी भी ओर अच्छे काम मे नहीं लगा सकता। अत सामान्य दृष्टि को वह आसानी

से स्वार्थपूर्ण और सहानुभूति विहीन प्रतीत हो सकता है। परन्तु वास्तव मे, जिस विषय पर आश्रम मे अत्यन्त एकाग्रता से काम हो रहा है उसका लक्ष्य अचिंत्य मानव हित सपादित करना है।

५—श्री अरविन्द के योग के उद्देश्य को अन्य शब्दों मे अपरा प्रकृति को परा प्रकृति म परिवर्तित करने की योजना भी कह सकते हैं। प्रत्यक्ष ही, यह आध्यात्मिक आदर्श हमारे मध्यकालीन आदर्श मे भिन्न है। यह ससार समाज को अनिवार्य रूप से दुःखमय मान उन्हे छोड नहीं देना चाहता। यह हिमालय की कदरा मे निजी शाति नहीं मागता। वह तो उपनिषदों के भाव म सर्वं खल्विदं ब्रह्म, 'यह सारा जगत् निश्चय ही ब्रह्ममय है" को हार्दिक रूप मे अंगीकार करना है और जीवन के सब व्यवहार मे ब्राह्मी समता ब्राह्मी प्रेरणा चरितार्थ करना चाहता है। ऐसे सर्वांगीण आदर्श का धन सपत्ति तथा जीवन के अन्य भौतिक उपकरणों के आध्यात्मिक प्रयोग का अभ्यास करना होगा न कि उनका त्याग। श्री अरविन्द बार बार अपने ग्रन्थों में जतलाते है कि जो अध्यात्मवाद जीवन से भय खाता है, भौतिक उपकरणो के प्रति त्याग द्वारा समता और शाति खोजता है वह एक अत्यन्त अपूर्ण आदर्श है तथा वह जगत् को सुधारने मे उसे बदलने मे तो सफल हो ही नहीं सकता। वास्तव मे, हमारे राज पाट खोने मे और दास बनने म इस मनोवृत्ति का हाथ था और यदि अब नव प्राप्त स्वाधीनता को हमने उचित रूप मे अधिकृत करना है तो यह अनुभव करना होगा कि जगत और सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन मे उच्चतम आध्यात्मिक उपलब्धि सभव ही नहीं बल्कि यह वहीं प्राप्त होनी चाहिये अन्यथा जगत् का न सुधार होगा न विकास।

६ आश्रम के कार्य और विकास के साथ श्री माता जी का व्यक्तित्व घनिष्ठ रूप से जुडा हुआ है। पर यह जान वही पाते है जो एक बार आश्रम आ चुके हैं। बाहर माताजी प्राय अपरिचित ही हैं। कारण उन्होंने श्री अरविन्द के कार्य मे अपने आपको इस तरह लीन कर रखा है कि अपना नाम का उल्लेख कहीं होने ही कम देता है। माताजी भारत मे १६१४ मे आई। परन्तु उससे पहले उनके लिखे हुए तीन ग्रन्थ उनकी उस समय की असाधारण आध्यात्मिक जिज्ञासा तथा प्राप्ति को प्रकट करते है। उस समय के उनके लेख, वक्तव्य और उपदेश उनके ओज, तेज और कार्य क्षेत्र के विस्तार को बराबर जतलाते है। यूरोप म रहते हुए उन्होंने प्रधान रूप से वहीं के गुह्यवेत्ताओ की साधना का अनुसरण किया था। एक बार अफरीका के अलजीरिया प्रदेश मे भी आपने कुछ काल तक एक विशेष साधना की थी, परन्तु आपकी आध्यात्मिक जिज्ञासा अत्यन्त विशाल थी और आप अधिकाधिक विकास की अभीप्सु रहती थीं। उन्हीं दिनो की एक पुस्तक मे, आत्म चिन्तन के प्रकरण मे, लिखा है, "मैं जान गई हूँ मुझे इस चरितार्थता को साधित करने के लिये अति लम्बे ध्यान चिन्तन की आवश्यकता होगी। यह उनमे से एक चीज है जिनकी आशा मैं अपनी भारत यात्रा से करती हूँ।"

७ इसके अतिरिक्त भी आपकी उस समय की पुस्तकों मे भारत सम्बन्धी अनेक बडे सुन्दर और मधुर उल्लेख हैं।

८ भारत मे आकर श्री अरविन्द से भेट करके आपको अपूर्व सतोष हुआ और उनके आदेशानुसार साधना मे प्रवृत्त हो गई। उन्ही १६१४ के दिनो मे आपने अनुभव किया कि ऐसे महापुरुष के विचार ससार को मिलने चाहिये और आपने 'आर्य'' पत्रिका के प्रकाशन का प्रबन्ध किया, जिसके लिये ही श्री अरविन्द ने धारावाही रूप मे वे सब ग्रन्थ लिखे थे जो आज जगद् विख्यात हो रहे हैं और भारत के अपूर्व आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार कर रहे है। इनमे से अनेक ग्रन्थो का श्री माताजी ने स्वय फ्रेंच मे अनुवाद किया है। जो फ्रेंच क्षेत्रो मे उसी ज्ञान का विस्तार कर रहे है।

६ माताजी पहले से ही एक विशेष आध्यात्मिक आदर्श के लिये कार्य कर रही थीं। वह आदर्श उनकी एक प्रार्थना मे यू व्यक्त हुआ है, "हे प्रभु, शक्ति प्रदानकर कि मैं इस दिव्य प्रेम से जो शक्तिशाली है, असीम है, अथाह है, सभी कर्मों और क्रियाओ मे तथा सत्ता के सभी क्षेत्रो मे आत्मसात् हो जाउ।' एक और प्रार्थना मे एक वाक्य है —

'क्या यह बाह्य जीवन, हर दिन और हर क्षण की चेष्टा ध्यान और चिन्तन की घडियो के अनिवार्य पूरक नहीं हैं ?" (१६१२) बार बार उनकी प्रार्थना पूर्ण रूपातर की है, ऐसे रूपांतर की जिसमे संपूर्ण जीवन, ध्यान और चिन्तन तथा सामान्य व्यवहार, सब एक भगवान् की प्रेरणा को अभिव्यक्त करने लगे। उन्हे कुछ घण्टों की समाधि अभीष्ट न थी। उन्हे अभीष्ट था मन, प्राण और शरीर का पूर्ण रूपातर, अपने जीवन तथा मनुष्य मात्र के सामान्य जीवन मे, जिससे भागवत अभिव्यक्ति पूर्ण और प्रत्यक्ष होजाय।

१० भारत वर्ष मे आकर उन्होंने देखा कि श्री अरविन्द ठीक उसी आदर्श के लिये, उसी पूर्ण रूपातर के लिये यत्नशील है। उन्होने अनुभव कर लिया कि उनके कार्य का क्षेत्र भारत है और वह श्री अरविन्द के साथ। इधर श्री अरविन्द ने यह स्पष्ट स्वीकार किया है कि उनकी यौगिक शैली के विकास मे उन्हे माताजी से विशेष सहायता प्राप्त हुई है। उन्होंने माताजी की अलजीरिया की साधना की विशेषता मानी है तथा अपने कार्य मे उनका सहयोग दैवी सयोग स्वीकार किया है। अपनी व्यक्तिगत साधना के विकास के बारे मे लिखते हुए उन्होंने एक जगह कहा है "मैंने १६०४ में बिना गुरु के योग साधना शुरू की। १६०८ मे मैंने एक मरहठा गुरु से महत्वपूर्ण सहयोग्यता प्राप्त की और मुझे अपनी साधना का आधार प्राप्त हो गया। परन्तु उसके बाद जब तक श्री माताजी नहीं आ गई मुझे किसी से कुछ सहायता प्राप्त नहीं हुई।"

११ श्री माताजी का भारत मे आकर श्रीअरविन्द की साधना मे सम्मिलित होना, निश्चय ही एक महान् घटना थी जिसका महत्व हम, जैसे श्री अरविन्द के कार्य के फल हमारे सामने आयेगे धीरे धीरे समझेगे। हम कह चुके हैं कि श्री अरविन्द को १६२६ मे सिद्धि प्राप्त हुई और उन्होंने अपने आध्यात्मिक कार्य का आरम्भ किया। वे एकात मे पूर्ण एकाग्रता से जिस शक्ति तक वे स्वयं आरोहण कर चुके थे उसे सामान्य स्तर पर लाने मे लग गये। इधर उस शक्ति के अवरोहण अथवा अवतरण के लिये मानो साधकों में उपयुक्त आधार तैयार करने के कार्य को व्यावहारिक रूप में माताजी ने संभाला। ऐसे

अपूर्व आध्यात्मिक सहयोग के बल पर ही श्री अरविन्द आश्रम का कार्य चल रहा है। आज इसे अच्छी अवस्था में देख कर बहुत बार लोग कल्पना भी नहीं कर पाते कि माताजी ने किस परिश्रम से इसे विकसित किया है। आज आश्रम को साधन प्राप्त हो जाते है, परन्तु लम्बे वर्षों तक जो यहां आर्थिक कष्ट रहा है वह साधारण रूप में ही आज स्मरण नहीं आता। यह तो ठहरे सामान्य प्रबन्ध के उतार-चढाव। इनसे कहीं अधिक कठिन काम उनरा के जीवन

श्री अरविन्दाश्रम की "माता जी"

की जिम्मेवारी लेना, कई सौ पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों की आध्यात्मिक मां बनना। एक कुटुम्बपति अपने तीन-चार-पांच प्राणियों का देख-भाल में किस कदर व्यग्र हो जाता है। और वह उनका सामान्यतया स्थूल-सा प्रबंध ही करता है। यहां आन्तरिक भाव-भावनाओं को विकसित करना है और कुटुम्ब है कई सौ व्यक्तियों का। इसके लिये कैसा धीरज चाहिये, कितनी महानभूति और प्रेम, कैसी शक्ति और ज्ञान!

श्रीमाता जी के व्यक्तित्व के इस पक्ष को बिना उनके सम्पर्क मे आये मनुष्य नहीं जान पाता। दूर के सबंध में हम उनके बाह्य रूप और पहरावे आदि को ही देख सकते है उनके आतरिक व्यक्तित्व को उनकी कृपा को, उनके प्रेम को उनके हितभाव को, उनकी आत्मिक विकास प्रेरित करने की शक्ति को हम अनुभव नहीं कर पाते।

कुछ आश्चर्य नहीं जो दूर का सबंध रहते हम माता जी के व्यक्तित्व को यथार्थ रूप में अनुभव न कर पाये। हाल में ही 'विश्वमित्र' 'अर्जुन और आर्यप्रकाश में एक श्री अरविन्द आश्रम तथा आदि माताजी सबंधी आलोचनात्मक लेख बहिन सुशीला जोगलकर के नाम से प्रकाशित हुआ है। इन बहिन ने माताजी के पहरावे आदि से विशेष कष्ट माना है। सामान्यत हम समझते है कि जब तक कोई हमारी मध्ययुगीन परम्परा की शैली का दण्ड-कमण्डलु धारी सन्यासी न हो तब तक वह आध्यात्मिक व्यक्ति ही नहीं। इसी लिए हम में से अनेक यह भी मानते है कि भारत के बाहर भी कोई आध्यात्मिक पुरुष नहीं हो सकता। बाह्य जीवन के अनेक अभ्यास वास्तव मे, देश देश की अपनी २ परम्पराओं और परिपाटियों मे संबन्ध रखते है। यदि हम उनका यथार्थ मर्यादा और सीमा को नहीं समझेंगे तो हम किसी व्यक्तित्व के मर्म को उसके भिन्न बाह्य अभ्यासों के कारण अनुभव करने में विफल हो जायेंगे।। इन बहिन को माताजी की अन्तश्चेतना को भी तो कभी स्पर्श करने का यत्न करना चाहिये था और यदि उन्होंने ऐसा किया होता तो जो असत्य बोलने में मनुष्य अपने प्रति अन्याय करता है, अशुद्ध

प्रचार से दूसरों के प्रति अन्याय करता है तथा किसी उपकारी व्यक्ति के लिये विपरीत भावी बनाने से कृतघ्नता का दोष बनता है, इन सबसे वे मुक्त रहतीं। और यदि माताजी अब पतीस वर्ष से श्री अरविन्द के कार्य की अनथक सहयोगिनी होने पर भी, उनके लिये फ्रांस की जन्मी विदेशी है तो श्री अरविन्द तो उनके अपने है, जो परम देशभक्त है, महायोगी तथा हैअपनेआश्रम के लिये पूरी जिम्मेवारी लेते है। उनकी जो माताजी के प्रति भावना है उसे वे जरा विचारतीं तो भी वे माताजी के व्यक्तित्व के सबन्ध मे ऐसी भूल न करतीं। और यदि वे माताजी के फ्रेंच साहित्य से जो भारतीय संस्कृति की सेवा हुई है उसे ही याद करती तो भी वे ऐसे भावो को व्यक्त करने से बच जातीं, जिनसे विचारवान व्यक्ति को पीछे पश्चाताप होता है।

आपको माताजी के टेनिस और पिंगपांग खेलने से भी कष्ट हुआ है परन्तु इन तथा अन्य खेलो का आश्रम मे कैसे और क्यो विकास हुआ है यह उन्हे पता नही। पहले आश्रम मे बच्चे नहीं लिये जाते थे युवक और युवतिया भी कम थीं। लगभग पाच वर्ष हुए श्री अरविन्द और माताजी ने व्यक्तियों को बच्चो के साथ भी आश्रम मे प्रविष्ट होने की आज्ञा दी। इसी संबंध मे स्कूल खुला और उनके लिये खेलने के भी प्रबन्ध हुए। तीन वर्ष के अन्दर ही लड़के लड़कियों की सख्या २०० के लगभग होगई और फिर इनके उचित विकास के लिये सब प्रकार के सुभीते पैदा किये गये। माता जी ने जो पहले आश्रम के मकान से बहुत वर्षो तक कभी बाहर नहीं गई थीं, अब रोज खेल के मैदानों मे जाना शुरू किया। वहा जाकर खेलो मे स्वय हिस्सा लेना तथा हर प्रकार से बच्चो को उत्साहित करना शुरू किया। इस समय खेल विभाग मे बच्चों के अलावा सौ से ऊपर बडे भी है और माताजी इसे अपने समय के लगभग तीन घन्टे रोज देती है, और वहा अपूर्व वातावरण पैदा हो गया है। कुछ ही दिन हुए एक खेल प्रतियोगिता की सूचना के शब्द थे "निन्यानवे साल से नीचे के सभी इसमे भाग ले सकते है।" इस खेल विभाग के आधारभूत आध्यात्मिक विचारो को श्रीअरविन्द ने विस्तृत लेखो मे समझाया है। जो इस आयोजना को अच्छी तरह समझना चाहे वे आश्रम की शारीरिक शिक्षण पत्रिका देख सकते हैं।

(१४) यह पृष्ठिका जानकर शायद हमारी लेखिका बहिन अनुभव करे कि काश हमारे स्कूलो-कालिजो के आचार्य और अध्यापक विद्यार्थयो के जीवन मे इसी प्रकार घुलमिल सका करे।

(१५) हमारी बहिन को इससे भी बडा कष्ट हुआ है कि माता जी की सेवा मे अनेको स्त्रिया आगे पीछे रहती है। वास्तव मे कुछ तो हमारी बहिन को वस्तुस्थिति का पता नही और कुछ आध्यात्मिक एव धार्मिक जीवन की मर्यादा का पता नही। जीवन-विकास मे सेवा और भक्ति का क्या स्थान है इसके लिये उनमे भावना ही प्रतीत नहीं होती। माता जी पहले वर्षो अपना सारा काम अपने हाथो करती रही है और अब भी वे जितना काम करती है वहसर्वथा आश्चर्य है। वास्तव

मे यह जितना काम इतनी स्त्रियो को दिया हुआ है यह प्राय उनकी प्रार्थना पर दिया हुआ है तथा उनकी सेवा और भक्ति को स्वीकार करने के रूप मे उन्हे दिया हुआ हे और यह उनकी साधना की आवश्यकताओ की दृष्टि से ही इतना बढा हुआ भी है न कि माता जी के लिये।

१६-जिस आश्रम की तरती का ('समझो कि मा हर जगह मोजूद ह आर यही समझकर बोली, सोचो और चलो') हमारी बहिन को शिकायत है वह भी, वास्तव मे, आध्यात्मिक उपस्थिति की अनवरत भावना बनाने के लिये एक प्रेरणा है। निश्चय ही सामान्य रूप मे साधक लोग आश्रम मे न भय से रह रहे है, न मजबूरी से। जिस आनन्द भाव को वे अपने मे परिवद्धित कर रहे है उसे वे ठीक समय पर मानवमात्र को देने की आशा करते है। आश्रम के पास बहुत जायदाद हे' यह शिकायत तो अत्यन्त ओछी और द्वेष पूर्ण है। क्या आश्रम जायदाद का व्यापार करता हे या उसका किराया खाता है या उसने अनुचित उपायो से उसे प्राप्त किया हुआ है? जैसे कोई सस्था विकसित होगी उसे मकानो की जरूरत पडेगी ही और वास्तव मे आश्रम के पास आवश्यकता से बहुत कम मकान हैं।

१७—लेखिका बहिन भारतीय होते हुए भी आध्यात्मिक जीवन शैली से कितनी अपरिचित है, इससे आश्चर्य होता है। वास्तव मे उनका सारा दृष्टिकोण और भाव कुछ वैसा-सा हे जेसा हम आश्रम मे रहते हुए नगरस्थ साम्यवादियों का अनुभव करते है। 'पाडिचेरी को आश्रम से कोई लाभ नहीं, 'आश्रमवासी मजे से रहने वाले रईस है' तथा 'आश्रम के बच्चे मस्त रहते है।' ये सब उन्हीं के भाव हैं। घोर दुख का बात है, इन बहिन को 'बच्चो का मस्त होना' अखरता है। यदि वहिन इसी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व कर रही है तो, निश्चय ही, आश्रम के आध्यात्मिक कार्य को अवगत करना उनके लिये सभव न होगा। यह लेख एक और तरह से भी सदेह जनक है। 'विश्वमित्र' और 'अर्जुन' का हिन्दी लेख (अरविन्द आश्रम मे माता जी) नेशनल प्रेस सिंडीकेट (बम्बई) द्वारा प्रसारित एक अग्रेजी लेख का स्वतन्त्र-सा उलथा हे। हिन्दी लेख की लेखिका सुशीला जोगलकर है, अग्रेजी के लेखक एक जगह (स्वतन्त्र, मद्रास) सुमित्र दिये है, एक और जगह (इडिया, बम्बई) कुछ भी नहीं। शीर्षक दोनो जगह अलग अलग है। हम समझते है कि श्री अरविन्द आश्रम जसी प्रामाणिक सस्था के बारे मे कुछ आलोचनात्मक लेख प्रकाशित करने के लिये सबन्धित पत्रकारों को यह पडताल कर लेना आवश्यक था कि लेखक शुद्ध आशय से तथ्यो के आधार पर जनता के हित के लिये लेख प्रस्तुत कर रहा है। हम आशा करते हैं कि सबन्धित पत्रो ने लेखों को प्रकाशित करने से पहले यथा सभव होशियारी बरती होगी परन्तु अब अधिक तथ्यो के प्रकाश मे वे अपना मत ज्यादा अच्छी तरह बना सकेंगे। हमने अनुभव करते हुए भी कि उक्त लेख साम्यवादी प्रेरणा से प्रेरित हुआ प्रतीत होता है तथा वह कई नामो तथा उपनामो और विभिन्न शीर्षको के हेर फेर मे प्रकट हुआ है इसके आरोपो को तटस्थ रूप मे लेकर अपने समाधान देने का यत्न किया है।

आश्रम का राजनीति से क्या सबध है इस विषय पर हमे अभी और बतलाना है। आलोच्य लेख का आशय यह है कि आश्रम मानों फ्रच सरकार की खुशामद करता है और भारत विरोधी दृष्टिकोण रखता है। यह वास्तव मे, अत्यन्त अन्याय पूर्ण आरोप है यदि श्री अरविन्द भारत भक्त है तो उनका आश्रम, श्री माताजी तथा साधक भारत विरोधी नहीं हो सकते। भारत की अखण्डता के विषय पर श्री अरविन्द ने अपने १५ अगस्त, १९४७ के सन्देश मे अपूर्व बल दिया था। उन्होंने कहा था—"जैसे भी हो विभाजन दूर होना ही चाहिये और होगा ही। क्योंकि इसके बिना भारत के भावी विकास को हानि पहुँच सकती है, वह खण्डित भी हो सकता है। और ऐसा किसी हालत मे नहीं होना चाहिये।" श्री माताजी ने ३ जून, १९४७ के केबिनेट मिशन के प्रस्तावो को रेडियो पर सुना और अपनी गभीर अनुभूति को इन शब्दो मे व्यक्त किया —

'भारतीय स्वाधीनता को सगठित करने मे जो कठिनाइया है उन्हे हल करने के लिये हमारे सामने एक प्रस्ताव रखा गया है। और उसे तीव्र खिन्नता तथा आशका पूर्वक स्वीकार किया जा रहा है। परन्तु क्या तुम जानते हो यह प्रस्ताव हमारे सामने रखा ही क्यो गया है? हमारे आपस के झगडों को मूर्खता को हमे जतलाने के लिये। और क्या तुम जानते हो कि हमे यह स्वीकार क्यों करना पड रहा है? इस लिये कि हम अपने आपको अपने झगडों की मूर्खता जतला सके।" (अदिति अगस्त १९४७)

इन शब्दो मे जो देश के लिये मार्मिक वेदना है उसको अनुभव करके कोई साहसी ही उनकी लेखिका को भारत विरोधिनी कह सकेगा।

परन्तु स्वाधीनता उपलब्ध हो जाने पर माता जी की कृतज्ञता पूर्ण प्रार्थना थी —

"हे हमारी माता, हे भारत की आत्मा, माता, जिसने घोरतम अवसाद के समय भी अपने बच्चो का साथ कभी नहीं छोडा उस समय भी नहीं जब वे तेरे आदेश से विमुख हुए

सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी

अन्य प्रभुओं की सेवा स्वीकार की और तेरी अवहेलना की। हमे प्रेरित कर कि हम सदा महान् आदर्शों के पक्ष मे रहे और अध्यात्म-मार्ग की नेत्री तथा सब जातियो की मित्र और सहायिका के रूप मे तेरी सच्ची छवि मनुष्यों को दिखावे।"

(अदिति नवम्बर १९४७)

परन्तु, निश्चय ही, आश्रम कोई राष्ट्रवादी सस्था भी नहीं है। आश्रम भारत की सनातन आध्यात्मिक परम्परा का एक आधुनिक केन्द्र है।

यहा श्री अरविन्द के पथप्रदर्शन मे मानव सस्कृति के नवनिर्माण का आयोजन है, इस समय तक की मानव सस्कृतियो का उचित समन्वय करने का यत्न है, अथवा एक उच्च आध्यात्मिक शक्ति के मध्यम से मानव प्रकृति के रूपातर का पुरुषार्थ है। ऐसा केन्द्र अन्तर्राष्ट्रीय होगा, जहा कई भाषाए सुनाई देगी तथा जीवन के कई वेश दिखाई देगे। परन्तु आन्तरिक भावना मे सब मे एक ही, कम अथवा अधिक, भगवान् की प्राप्ति तथा आत्मोपलब्धि की अभीप्सा होगी, गीता और उपनिषद् तथा सामान्य भारतीय आध्यात्मिक परम्परा के लिये मान मिलेगा। आश्रम की भाषा फ्रेंच नहीं है, अन्त प्रान्तीय भाषा सामान्यत हिन्दी है आश्रम का कोई दल धारा सभा मे भी नहीं है। परन्तु यदि कोई धारासभा के सदस्य तथा फ्रेंच सरकार के अधिकारी श्री अरविन्द और माताजी के लिये भक्ति रखते है। और आश्रम मे आते जाते हो और इससे कोई अपने अनुमान लगाने लगे तो उसके लिये वह स्वतन्त्र है। पूछने पर श्री अरविन्द तथा माता जी किसी विशेष अवस्था मे राजनीतिक विषय पर परामर्श भी द सकते है, परन्तु यह परामर्श, कभी भारत के लिये अहित कर हो सकता है यह अकल्पनीय है। व्यवहार मे आश्रम किसी राजनीतिक दल का कभी पोषक नहीं हुआ। श्री अरविन्द आश्रम अपने आध्यात्मिक ध्येय से च्युत नहीं हो सकता। आदर्श के रूप बेशक उनसब राजनीतिक दृष्टिकोणों को, जो व्यक्ति और समाज के अध्यात्मिक विकास के लिये उपयोगी है, समन्वयात्मक भाव मे यहा मान दिया जाता है।

आश्रम हर प्रकार से एक अध्यात्मिक अनुसधानालय है और इसकी जीवन शैली निश्चित ही, अपने ढग की है। इसके त्यौहार अपने है तथा उनके मनाने की शैली भी अपनी है। चार दर्शन दिनो (२१ फर्वरी, २४ अप्रैल १५ अगस्त और २४ नवम्बर) के अतिरिक्त यहा दुर्गाष्टमी, विजयदशमी (दसहरा) महाकाली दिवस (दिवाली), महालक्ष्मी दिवस (शरत् पूर्णिमा), २५ दिसबर तथा पहली जनवरी अपने आध्यात्मिक महत्व की दृष्टि से मनाये जाते है। परन्तु इन दिनो भी आश्रम का सामान्य जीवन बराबर चलता रहता है। फर्क इतना ही पडता है कि दर्शन के दिन बहुत से आगन्तुक होते हैं और श्रीअरविन्द के दर्शन प्राप्त होते हैं और बाकी दिनों पर रात्रि के नौ बजे के करीब श्री माताजी के विशेष आशीर्वाद तथा कभी २ प्रेरणा रूप कुछ वचन प्राप्त होते हैं। रजोगुणी ढग के उल्लासपूर्ण त्यौहार साधना के ही अनुकूल नहीं। कभी साधक की मृत्यु पर भी आश्रम मे कोई हलचल नहीं दिखाई देती उसके लिये मौन प्रार्थना ही उसकी सच्ची सेवा मानी जाती है। आश्रम को जाचते हुए यह अनिवार्य रूप से याद रखने की आवश्यकता है कि यह एक शुद्ध आध्यात्मिक केन्द्र है जो सामान्य सामाजिक तथा राजनीतिक त्यौहारों और प्रगतियो मे अपनी अभीप्सा और प्रार्थना से चाहे सम्मिलित हो जाय, परन्तु उसके रजोगुणी आवेशात्मक भाव से इसे तटस्थ रहना होगा।

श्री अरविन्द को अपने आध्यात्मिक कार्य में प्रवृत्त हुए आज ३६ वर्ष होते हैं। इस बीच उन्हें देशबन्धु चित्तरंजनदास ने बुलाया, विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर और ला० लाजपतराय यहां आकर स्वयं उनसे मिल गए तथा एक दो बार उन्हें कांग्रेस के राष्ट्रपति पद के लिये भी निमंत्रित किया गया, परन्तु वे अपने कार्य का महत्त्व जानते हुए उसे छोड़ने को तैयार नहीं हुए। आश्चर्य होता है, कैसे कोई यह कल्पना भी कर सकता है कि श्री अरविन्द पांडिचरी की राजनीति में अपना समय लगायेंगे। श्री अरविन्द और श्री माताजी अपूर्व एकाग्रता तथा अचिंत्य विश्वास से अपने आध्यात्मिक कार्य में तल्लीन हैं। वे किसी दूसरे काम में इतनी ही कांच रखते प्रतीत होते हैं जितनी कि वह उनके इसमें सहायक हैं अथवा अनिवार्य है। मेरे देशवासी भाई बहिन देश और संसार के हित मार्ग इस महत् कार्य के फल को धारण से अनिच्छा करें कम से कम इसके संबंध में अपनी भावना विचार पूर्वक बनाएं।

साहित्यसमीक्षा

(समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तकादि की २ प्रतियां भेजनी चाहिये ।)

सत्य का सैनिक—लेखक —श्री नारायण प्रसाद 'बिन्दु'

प्रकाशक—श्री अरविन्द सर्किल ३२ रैम्पार्ट रो, फोर्ट बम्बई, मूल्य २) ।

श्री नारायण प्रसाद जी 'विन्दु' श्री अरविन्दाश्रम पॉडीचेरी के साधक हैं। उन्होंने सर्वसाधारण जनता मे अध्यात्मिक रुचि उत्पन्न करने और आध्यात्म मार्ग मे आने वाली कठिनाइयो तथा उनसे पार होने के साधनो का परिचय कराने के लिय इस नाटक की रचना की है। भाषा, भाव, शैली, गीत इत्यादि प्रत्येक दृष्टि से यह अध्यात्मिक नाटक हमें बहुत ही उत्तम और रोचक लगा है। इसमे जो गीत स्थान स्थान पर दिये गये है उनसे तो इसकी उपयोगिता बहुत अधिक बढ गई है। पुस्तक के अन्त मे सुप्रसिद्ध सगीतज्ञ श्री दिलीप कुमार राय कृत उनका अग्रेजी अनुवाद भी दे दिया गया है जो अत्युत्तम है।

जगन्माता के प्रति भक्ति भाव से ओत प्रोत निम्न गीत कितना सुन्दर है ?

हर स्वर मेरा उच्चार करे,
हर सॉस यही झकार करे।
मेरा हर रोम पुकार करे,
मैं तेरा मॉ मैं तेरा ॥
मन मृदग के सब तालो मे,
हृत्तन्त्री के सब तारो मे।
धुन यही एक गु जार करे,
मैं तेरा मॉ मै तेरा ॥
चरणो मे आवेदन मेरा,
टूटे मॉ ! सीमा का घेरा।
पुलकित हो सकल पुकार करे,
मैं तेरा मॉ मैं तेरा ॥

कितने हृदय के अन्तस्तल से निकली हुई यह प्रार्थना है ?

साधना का मार्ग कितना कठिन है तथा उस मे कितनी वीरता की आवश्यकता है इसका कितना सुन्दर चित्रण निम्न गीत मे श्री नारायण प्रसाद जी ने किया है।

तुमतो चले हो युद्ध मे जय प्राप्त करने को यहा।
भगवान के आह्वान पर निर्भय विचरने को यहा॥
शिवसत्य के हितप्राणका बलिदान देनेको यहा।
होने अमर करने समर औ देखने प्रभु को यहा॥
हे वीर साधन मार्ग पर, कसके कमर आगे बढो।
मन के खुले मैदान मे, होकर खडे खुलकर लडो॥
है चाह जीवनमें अगर कुछकर दिखाने की भला।
निर्भीक हो रिपु से कहो सकल्प की ज्वाला जला॥
आधी चले पत्थर पडे, धरती फटे बिजली गिरे।
बरसे प्रलयकी आग गरजे काल कलि हमला करे
हे वीर साधन मार्ग पर कसके कमर आगे बढो।
मन के खुले मेदान मे, होकर खडे खुल कर लडो॥

अन्य गीत भी इतने ही भाव पूर्ण, सरल और प्रभावोत्पादक हैं। हमे विश्वास है कि यह आध्यात्मिक नाटक अध्यात्ममार्ग के पथिकों के

लिये बडा उपयोगी तथा सहायक सिद्ध होगा।

सिख और यज्ञोपवीत—*लेखक श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी प्रकाशक—सभाद ग्रन्थ प्रकाशन विभाग पहाडी धीरज देहली। मूल्य ≡)*

इस ८४ पृष्ठ की पुस्तिका मे श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने ग्रन्थ साहेब, जन्म साखी, नानक प्रकाश, गुरु मत निर्णय सागर, गुरु विलास, विचित्र नाटक इत्यादि सिक्खो के प्रामाणिक ग्रन्थो के वचन अर्थसहित दे कर यह सिद्ध किया है कि श्री गुरु नानक देव जी, गुरु हरगोविन्द जी, गुरु तेगबहादुर जी और गुरु गोविन्द सिंह जी आदि सिक्ख गुरु यज्ञोपवीत पहनते थे तथा गुरु मत निर्णय सागर पृष्ठ ४९४ के अनुसार जब श्री गुरु गोविन्द सिंह जी से यह प्रश्न किया गया कि ' जनेऊ पावने समय आगे सिर मुडावन की रीति थी। अब सिक्ख रोक्ते है क्या हुकम इस पर श्री गुरु गोविन्द सिंह जी ने उत्तर दिया कि सहज धारी के बेटे का कैची से रीति करो, केस धारी के बेटे को दही से केसी असनान (स्नान) कराओ ॥'

जनेऊ समय—

इस प्रकार दशम गुरु जी की आज्ञा सब सिखो को यज्ञोपवीत धारण की है।

आदि ग्रन्थ साहेब के दइया कपाह सतोप सत जत गढी सत बट' इत्यादि जिन वचनो का यह तात्पर्य कई सिख भाई निकालते हैं कि इन से सूत इत्यादि के यज्ञोपवीत का निषेध है उनका निर्मल सन्त पंडित तारासिंह जी के निम्न वचन उद्धृत करते हुए बताया गया है कि—

'आदि ग्रन्थ साहिब के वचन जो निंदा परक प्रतीत होते हैं तिनका तात्पर्य दइया कपाह सतोख सूत आदि पाठसे कहे जनऊ की स्तुति मे है तथा ज्ञान रूप यज्ञोपवीत की स्तुति मे है, इसकी निन्दा मे नहीं।'

इसी व्याख्या के समर्थन मे 'यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति' (ऋग्वेद) न लिंगं धर्म कारणम् (मनु) आदि को भी लेखक महोदय ने उद्धृत किया है जो ठीक ही है।

भाई दयासिंह जी, भाई प्रहलाद सिंह जी आदि के जिन रहत नामो मे यज्ञोपवीत धारण का निषेध है उनकी अप्रामाणिकता और नवीनता को प्रबल प्रमाणो से सिद्ध किया गया है। इस प्रकार यह पुस्तिका प्रत्येक सिख तथा आर्य (हिन्दू) के लिये उपयोगी है। इसको सिख भाई यदि निष्पक्षपात होकर पढे तो उनके अनेक भ्रम दूर हो सकते हैं और हिन्दू सिख एकता की वृद्धि मे भी यह सहायक हो सकती है। श्रीस्वामी जी का इस विषयक परिश्रम अत्यन्त प्रशसनीय है।

आर्य पचाग—*सम्पादक प० शिवानन्द जी*

प्राप्ति स्थान—*आर्य पचाग कार्यालय शाहदरा देहली। मूल्य ॥=)*

नामकरणादि सस्कारो तथा पर्वो के अवसर पर पञ्चाग की आवश्यकता आर्यों को भी पडती है। प्रचलित पञ्चागो मे फलित ज्योतिष के नाम से अनेक मिथ्या विश्वास व भ्रान्तिया जनता के हृदय मे उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है। इस पञ्चाग मे इस प्रकार की भ्रान्तियों का दिग्दर्शन कराते हुए फलित ज्योतिष की निस्सारता को सक्षेप से दिखाया गया है। आर्य पर्वों की सम्पूर्ण सूची, १६ वैदिक सस्कारों के नाम तथा उनके कराने का समयादि, आर्य समाज के धर्म वीरो की तिथि सहित नामावली, भारत सरकार और पूर्वी पजाब की छुट्टिया इत्यादि विवरण और स्थान २ पर योग दर्शन, मनुस्मृति

गीतादि के उद्धरणों से पचाग की उपयोगिता मे प्रशासर्न य वृद्धि हुई है। आशा है इसे अपना कर ज्योतिष प्रेमी आर्य सम्पादक महोदय का उत्साह बढायेगे जिससे अगल सस्करण म वे फलित ज्योतिष की निस्मारता आदि पर अधिक प्रकाश डाल सके जेसे कि उन्होने विचार प्रकट किया है, शीघ्रता जन्य छापे का अशुद्धियो को दर कर सके तथा अन्य प्रकार से इसको अधिक उपयोगी बना सके।

गुरुकुल पत्रिका—सम्पादक—*श्री प० सुखदेव जी विद्यावाचस्पति और प० रामेश जी वेदी आयु-र्वेदालकार गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगडी ज्वाला सहारनपुर युक्त प्रान्त वार्षिक मूल्य ४) १ प्रति का ।=)।*

गत भाद्रपद २००४ से यह गुरुकुल पत्रिका मासिक रूप मे गुरुकुल विश्वविद्यालय कागडी से प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका का उद्देश्य इसके व्यवस्थापक श्री प० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने प्रथम अक मे निम्न शब्दो मे प्रकट किया "गुरुकुल के जो आधारभूत सिद्धान्त हैं उनके प्रकाशन और प्रचार के लिये तथा जिस भारतीय सस्कृति की पृष्ठभूमि पर गुरुकुल खडा है उसका विशद व्याख्या के लिये 'गुरुकुल पत्रिका" का आयोजन किया गया। गुरुकुल आन्दोलन और गुरुकुल सम्बन्धी कार्यो की मासिक प्रगति भी इसमे रहा करेगी।" इस समय तक इस पत्रिका के ११ अक निकल चुके हैं जो इस समालोचना को लिखते समय हमारे सन्मुख हैं। निसन्देह पत्रिका में श्री प० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति, डा० रघुवीर जी एम० ए० पी० एच० डी०, स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक, श्री कन्हैयालाल माणिकलाल जी मुन्शी, राजा महेन्द्र प्रताप जी इत्यादि अनेक सुप्रसिद्ध महानुभावो के शिक्षा, भारतीय सस्कृति, राष्ट्र भाषा आदि विषयक उत्तम लेख है। पौष २००४ का अङ्क अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की पुण्यस्मृति मे श्री श्रद्धानन्द विशेषाङ्क के रूप मे निकाला गया जिस मे स्व कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर, श्री प० रामनारायण जी मिश्र, डा० सत्यप्रकाश जी डी एस सी श्री आत्माराम गोविन्द खेर, श्री जमुनादास महता तथा अनक सुयोग्य स्नातको द्वारा समर्पित श्रद्धाजलियों का सग्रह किया गया। अन्य अङ्को म भी विचारोत्पादक सामग्री पाठको को देन का अभिनन्दनीय प्रयत्न किया गया है। हम अपना मातृसस्था का इस पत्रिका का हार्दिक अभिनन्दन करते है और आशा करत है कि यह गुरुकुल विश्वविद्यालय के गौरव के अनुरूप और भी अधिक उन्नत रूप म जनता का सेवा करती रहेगी। ध दे

आरोग्य—*स पा—श्री विट्ठल दास मोदी आरोग्य कार्यालय गोरखपुर वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति का मूल्य ।=)*

जेसे कि नाम से ही स्पष्ट है यह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी मासिक पत्र है जिस मे आरोग्य और प्राकृतिक चिकित्सा विषयक उत्तम लेख रहते हैं। इस समालोचना को लिखते समय 'आरोग्य' का अगस्त १६४६ का अङ्क हमारे सन्मुख है। इस मे श्री विनोबा भावे का आरोग्य विज्ञान, श्रीमती सरोजिना देवी विशारदा का 'गर्भवती स्त्री इतना तो जान' 'श्री विट्ठलदास जी मोदी सम्पादक का 'स्वप्न दोष से मुक्ति की सरल रीति' श्री राधाकृष्ण बजाज मन्त्री गोसेवा सङ्घ वर्धा का 'दूध से अच्छा छाछ' श्रीमती प्रभावती देवी का 'शिशुओ के पेट का दर्द' श्री फतेहचन्द शर्मा का 'अपेडिसाइटिस से मुक्ति' इत्यादि लेख विशेष उत्तम और उपयोगी है। इस पत्र के कई अन्य अङ्क भी हम ने देखे और उन्हे उपयोगी पाया हैं। हम आशा करते हैं कि इस पत्र से युवक युवतिया तथा अन्य सब स्वास्थ्य प्रेमी लाभ उठाएंगे।

ध देव

योगिराज श्रीकृष्ण सन्देश

(कवयिता—श्री प० रुद्र मित्र जी शास्त्री विद्यावारिधि)

कर्म योग का सार यही है

कभी न रुकना, बढ़ते रहना जने जीवन का प्यार यही है।

जब जीवन जड़ बन जाता है।
जीव अचेतन कहलाता है।
गति हीन चेतना हीन विश्व।
वैभव हीन मृत-सा भाता है॥

उस समय अलौकिक पुरुष एक।
आता है जग मे जान डालने।
निष्प्राण धमनियों मे फिर से।
उच्छ्वास प्रबल प्रिय प्राण डालने॥

नित्य निरन्तर चलने वाला, सार रूप संसार यही है॥

चुप होकर बैठे रहना ही,।
ज्ञान नहीं है भक्ति नहीं है।
जग से हट बनवास अरे।
वैराग्य नहीं है मुक्ति नहीं है।

सयम शील निग्रही कर्म रत।
गृही तपस्वी कहलाता है।
दोषी वनवासी बन कर भी।
काम राग मे फंस जाता है॥

निष्काम कर्म करते रहना। वास्तविक मुक्ति का द्वार यही है॥

ज्ञान हीन है कर्म व्यर्थ सेव।
कर्म हीन है ज्ञान निरर्थक।
ज्ञान कर्म सम नर जीवन यह।
बन जाता है सुखद सार्थक।

ममता मोह स्वार्थ त्याग से।
मानव मानव बन जाता है।
कर्म वासना परित्याग से।
योगी योगी कहलाता है॥

कर्म योग है शास्त्र अनूठा, सुख सरिता की धार यही है॥

अर्जुन जब रण में घबराया।
मन मे ममता मोह समाया।
है वध्य गुरु मित्र बन्धु मम।
बरबस माया मे लपटाया है।

दूर किया अज्ञान अन्धेरा।
सोते से फिर उसे जगाया।
क्षण भगुर नश्वर जगती की।
ममता माया मोह नशाया॥

हृदय हुवा निर्भ्रान्त स्फूर्त्त, मृत मानव का उपचार यही है॥

दे संस्मृति चेतना, पार्थ को।
उठा दिया उपदेश सुना कर।
रण आगन मे खड़ा कर दिया।
गीता का सन्देश सुना कर॥

गीतामृत का पान करा कर।
युद्ध भूमि मे बढा दिया।
अमर बना कमलेश धनंजय।
विश्व विजेता बना दिया॥

योगीश्वर श्री कृष्ण चन्द्र का, बड़ा अतुल उपकार यही है॥

Dr. Pattabhi Commends "Aryavarta" as Country and "Aryan" as Language-

"I have read your little pamphlet with great interest, and I wonder why the name "Aryavarta" should not be used and the language itself called as "Aryan so as to eliminate all the controversies of the day But we must take note of the realities of the world while trying to introduce the ideals However, you have made a beginning and I dare say sooner or later your suggestion will take shape , writes Dr B Pattabhi Sitaramaya president of the Indian National Congress, in a letter te Pandit S Chandra, Former Assistant Secretary of the International Aryan league, Delhi, who has addressed a lengthy printed circular letter of eight pages to all the members of the Constituent Assembly of India, appealing to them to adopt "Aryavarta in the constitution, as the future name of the country

In the course of the circular letter, pandit Chandra, while giving genesis of the suggested names of the country says that the names India and Hindustan were given by foreign rulers and invaders The Bharat or Bharatvarsha was named after the name of a ruler But Aryavarta was called from times immemorial and this name is found in all the ancient literature and scriptures with its significant and beautiful meanings, such as land of the noble and the righteous people He has quoted several authorities supporting the ethical interpretation of Aryavarta and also its boundary in the extreme south touching the ocean

Comparing Aryavarta with other suggested names, Pandit Chandra says that it will always be inspiring and will instil in the people of the country a sense to develop all those noble qualities and virtues that are required and expected of an Arya There are no nobler words, in the history of mankind, than Arya and Aryavarata used for a man and a country In view of the universal and cosmopolitan character of the meanings of these words, the South Indians or the Dravidians should also not hesitate to adopt these words Even in the international world, the name Aryavarta will command respect, as it did in the ancient days If there is any word which can stand not only in comparison to Pakistan, but far ahead in grandeur and splendour in its ethical sense, it is only "Aryavarta" and certainly not any of the other three names, referred to above

Pandit Chandra further says that if our country wants to revive the venerable position of becoming the spiritual leader of the world, the name Aryavarta will certainly be one of the main factors and sources, leading to that end, and therefore, he has appealed to the members of the Constituent Assembly to restore the ancient glorious name and undo the great wrong done to our Nation and country by interested pople both foreigners and our own

ग्राहकों के नाम सूचना

निम्न लिखित ग्राहकों का चन्दा सितम्बर मास के साथ समाप्त होता है। अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल ही मनीआर्डर द्वारा भेज दें अन्यथा आगामी अक उनकी सेवा मे वी पी द्वारा भेजा जायगा। धन प्रत्येक दशा में ३०।६।४९ तक कार्यालय मे पहुँच जाना चाहिये। कृपया अपने ५ मित्रों को भी ग्राहक बनाइये। मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक सख्या अवश्य लिखे।

ग्राहक सख्या पता

१० मन्त्री जी, आर्य समाज ग्वालियर सिटि
२५ ,, ,, जौनपुर यू० पी०
४६ श्री छोगालाल ज्ञानराम जी, परशूराम क्षेत्र पिन्डवारा
६२ मन्त्री जी आर्य समाज पोर बन्दर काठियावाड
६४ श्री देवीदास धनीलाल जी आर्य जहागीरा-वाद, बुलन्द शहर
६५ श्री मन्त्री जी आर्य समाज पुस्तकालय लौहड बाजार भिवानी
६६ श्री पं० पन्नालाल रामनारायण जी नेत्र वैद्य हिंगोली दक्षिण
६७ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बारिकपुर २० न० बजाज मुहल्ला २४ परगना
६९ श्री मन्त्री जी आर्य समाज कालपी जिला उरई
७० श्री राना शिवरत्न सिंह जी पनी फतेहपुर शहर
७१ श्री नरेन्द्र सिंह जी यादव ओम् भडार मैनपुरी
१०२ श्री मन्त्री जी आर्य समाज भागलपुर विहार
११४ श्री डा० कमल सिंह जी देवास गेट उज्जैन मालवा
११७ श्री मन्त्री जी आर्य समाज मीनमाल मारवाड़
११९ श्री पन्ना लाल जी सुतहदी बाजार जौनपुर
१२२ श्री मन्त्री जी आर्य समाज सोनाफलिया सूरत सिटि
१२५ श्री पं० जनार्दन जी शर्मा आर्य, गाजियावाद

ग्राहक संख्या पता

१२८ श्री राम स्वरूप जी पैनशनर सूबेदार मैनपुर गाजीपुर
२४४ त्रिवेदी प० नर्मदा शंकर जी जिज्ञासु गुरुकुल सूपा नवसारी
२६५ श्री मन्त्री जी आर्य समाज दमोह मध्य प्रान्त
३१७ श्री ,, ,, नीमच छावनी
३५६ श्री वेद रत्न जी गौतम सीसामऊ कानपुर
५०२ श्री कन्हैयासिंह जी वैद्य स्थान जल्लावाद १० सिन्धौली सीतापुर
५३९ श्री वि० दामोदर जी भडारी जो कार्कल साउथ कनारा
५४० श्री एस० एस करन्जै जमीदार मूड विडी साउथ कनारा
५४१ श्री एन० जी० राव प्रोफेसर बम्बई
५४३ श्री मैनेजर, राय साहब रामचन्द्र वाचनालय मह्मू मध्य भारत
५४७ श्री कविराज हरनामदास जी बी० ए० दिल्ली
५४९ श्री मन्त्री जी आर्य समाज तिर्वा फतेहगढ़
५५० श्री धर्म मित्र जी वानप्रस्थी आर्य समाज फरीदकोट
५५१ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बढहल गज गोरखपुर
५५२ श्री बिहारीलाल जी डायज स्क्वायर नई दिल्ली
५५६ श्री राजेशचन्द्र जी मुरादावाद
५६१ श्री मन्त्री जी आर्य समाज भईवरा जौनपुर
६०९ श्री रामरूप मण्डल फेतिया खड़गपुर मंलौर

सूची सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

१५—८—१६४६ तक प्राप्त दान

१८) योग उन दान दाताओ का जिन्होने ५) से कम दान दिया है।
५) श्री शिवचरण लाल जी मेरापो पो० कुदर की (मुरादाबाद)।
६) ,, पुरुषोत्तम लाल जी अमृतसर।
१५) ,, मेलाराम जी देहरादून।
१५) मंत्री आ० समाज यवतमाल (मध्यप्रदेश)।
७।=) मत्री आ० समाज जबलपुर।
२५) ,, जगन्नाथ जी गुप्त कोतवाल बाजार मद्रास १
५) ,, गुरुदत्त जी गौतम बिड़ला मिल सब्जी मंडी देहली।
५०) ,, मैजर रामचन्द्र जी नई देहली।
११) ,, लाला बुद्धिप्रकाश जी देहली।
५) ,, कृष्ण चन्द्र जी देहली।
११) ,, दीनानाथ गोपाल गज।
१७३।=) योग
६०६॥) गतयोग
७७६॥।=)
२५) ❀
८०४॥।=) सर्व योग (क्रमश)

❀ बनवारी लाल जी साहिब गज सन्थाल का यह दान भूल से आ० स० स्थापना दिवस की दान सूची मे अगस्त मास मे छप गया है। पाठक गण नोट कर ले, अब यह धन सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि मे दिखा दिया गया है।

दान दाताओ को धन्यवाद—

देशदेशान्तरों मे सार्वभौम वैदिक धर्म प्रचार और वैदिक सस्कृति के प्रचार की समुचित व्यवस्था कराने के उद्देश्य से आयोजित इस सार्वदेशिक वेदप्रचार निधि मे उदार सहायता देना प्रत्येक आर्य नर नारी का धार्मिक कर्तव्य है। श्रावणी पर्व के अवसर पर सार्वदेशिक सभा की ओर से जो विज्ञप्ति सब आर्य समाजों को भेजी गई थी उस में अन्य कार्यक्रम के साथ यह आदेश दिया गया था कि इस सार्वदेशिक वेदप्रचार निधि के लिये अधिकतम सहायता सब नर नारियो से प्राप्त कर के उसे सभा कार्यालय मे अविलम्ब भिजवा देना चाहिये। आशा है सब आर्यसमाजों ने इस आदेश का पालन किया होगा जिन्हों ने न किया हो उन्हे चाहिये कि अब भी इसे अपने सदस्यों तथा सहायकों से प्राप्त करके सभा कार्यालय मे भिजवा दे। इस पुण्य कार्य मे प्रमाद व विलम्ब न करना चाहिये।

धर्मदेव विद्या वाचस्पति
स मन्त्री सार्वदेशिक सभा

दान सूची स्थापना दिवस

४) मन्त्री आर्य समाज अतरौली अलीगढ

२५) मन्त्री ,, ,, महू छावनी (मध्य प्रदेश)

७) मन्त्री आर्य समाज सनौता (मेरठ)

३७)

८९६ ।।।)

९२८ ।।।)

७५) वनवारी लाल जी साहिब गज के जो सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिए आए थे, भूल से अगस्त के सार्वदेशिक में स्थापना दिवस की दान सूची मे दिखाये गए हैं, पाठकगण इसे नोट करले।

९०३ ।।।) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद,
जिनका भाग अभी तक अप्राप्त है
वे कृपया शीघ्र भेजे।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक सभा

दान सूची दयानन्द पुरस्कार निधि

५) श्री किशोरचन्द्र जी किशोर लुधियाना।

५) ,, गुरदत्तमल जी दयानन्द नगर।

५) ,, ब्रजलाल जी दयानन्द नगर।

१०) ,, कर्मचन्द्र जी नई देहली।

१०) श्रीमती चन्द्रकुमारी जी अमृतसर।

—x—

११) मन्त्री आर्य समाज लक्ष्मणसर।
५) श्री टेकचन्द जी प्रधान आ० स०। डलहौजी
५) , तुलसीदास जी आ० स० भोईवाडा परेल बम्बई १२।
१०) छज्जूराम जी अग्रवाल जगाधरी।
२०) ,, मन्त्री आ० स० छावनी महू।
१०) ,, ,, आ० स० झज्जर रोड रोहतक।
५) ,, वेद प्रकाश जी
१०१)
७०२५।=) गत योग
२१२६।=)
५१०१
७२२७।=)

५०००) श्री अमृतधारा ट्रस्ट देहरादून
१०१) आ० समाज लातूर (हैदराबाद राज्य)

—x—

दान शुद्धि प्रचारार्थ

१००) श्री सेठ जुगल किशोर जी बिड़ला देहली।
१००)
१६३) गत योग
२६३) सर्वयोग

—x—

विविध दान सूची

५) मंत्री आ० स० हिन्डौन जयपुर राज्य (विवाहोपलक्ष्य में)
५)
५२) गत योग
५७) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद

गंगा प्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक सभा

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र

(इसे पढकर दान राशि कृपया शीघ्र सभा कार्यालय मे भेजिये और अन्यो से भिजवाइये ।

सेवा में,

श्री मन्त्री जी

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा,

बलिदान भवन, देहली

श्रीयुत मन्त्री जी, नमस्ते !

देश देशांतरो में सार्वभौम वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति के प्रचार की व्यवस्था के उद्देश्य से स्थापित सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि की योजना को मै अत्यावश्यक और उपयुक्त समझता हू और इस पुण्यकार्य की सहायतार्थ रु०की राशि

तथा
अथवा रु० के वार्षिक दान को प्रतिज्ञा करता हू । यह राशि आप की सेवा मे भेजी जा रही है ।

भवदीय

ह०

नाम—

पूरा पता—

तिथि—

आर्यनगर ग़ाजियाबाद

अब तक जिन प्लाटों के पट्टों की रजिस्ट्री हुई है उनकी (पट्टेदारों के नाम सहित) तालिका

क्रम सं०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
१.	श्री बनारसीदास शैदा, हैडमास्टर, एस आर हाई स्कूल पटियाला,	२६३	२७२ २ वर्गगज
२	श्री पिन्डीदास जी ज्ञानी, मैनेजर आर्य प्रेस, दुर्ग्याणा अमृतसर	२४७	२७२ २
३.	,, गोविन्दराम जी पोस्ट मास्टर, पुराना किला नई देहली	२१२	१३७
४.	,, विपिन चन्द्र जी, ३२ प्रेम हाउस, कैनाट प्लेस नई देहली	१३२	१२८
५.	,, नूतन दास जी, क्लर्क, ग्रिन्डले बैंक, केनाट प्लेस नई देहली	२४२	२७२ २
६.	,, गगा राम जी, c/o क्वाटर न० २ माता सुन्दरी प्लेस नई देहली	२४३	२७२ २
७.	,, कृष्णप्रकाश जी मेहता, पी डी ओ रिजर्व बैंक आफ इन्डिया, चादनी चौक देहली	२४४	२७२ २
८	, मूलनारायण जी मेहता क्वाटर न० ई० २ माता सुन्दरी प्लेस नई देहली	२४५	२७२ २
६	,, चन्द्रभानु जी एक्सचेन्ज सेंट्रल डिपार्टमेन्ट, रिजर्व बैंक, आफ इन्डिया देहली	२२२	२७२ २
१०	,, भगवानदास जी, असिस्टेन्ट सुपरवाइजर मिलिटरी डेरी फार्म मेरठ छावनी	२२३	२७२ २

क्रम सं०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
११.	पं बुलाकीराम जी स्यालकोट वाले टेन्ट न० ६६ बी, कोटला फीरोजशाह दिल्ली	२०२	१३७,,
१२	श्री. सुरेन्द्रनाथ जी टिकट क्लेक्टर, ई० आई० आर अमरोहा मुरादाबाद,	१५४	२७२-२
१३	,, प्रेमचन्द्र जी ग्राम वढौली फतेहखा पो० कोल जि० अलीगढ़	१२६	१११
१४	,, कृष्णदयाल जी डाइरेक्टर, रमिगंटन रोड, इन्शोरेन्शन ई० पी डी० कश्मीरी गेट देहली	१६३	२७२-२
१५	,, प्रीतमचन्द्र जी आर्य ३२२वेगम बाग शालीमार हौजरी मेरठ	२०६	१४६
१६	,, रायसहव द्वारकादास जी, रकाव गंजरोड़ न० ८ नई देहली	१६०	२७२-२
१७	,, सत्यपाल जी 810 रायसाहव द्वारका दास मानकटलतला ४१ राम नगर देहली	१८६	२७२-२
१८.	श्री दयाराम जी शास्त्री ठी० ए० वी० हाई स्कूल नई दिल्ली	२०७	२७२ २
१६	,, खानचन्द्र जी का० नं० ५७ सी तुर्कमान गेट दिल्ली	२७२	२७२-२
२०	,, सोहनसिंह ठेकेदार, नया मारकेट करौल बाग देहली	२६७	२७२ २
२०	श्री जगन्नाथ जी, आस्सिटेन्ट कन्ट्रोलर आफिसर रेलव जयपुर	२६४	२७२-२
२२.	,, सत्यपाल जी,		

क्रम स०	नाम पट्टेपार पूरे पते सहित	प्लाट सं०	क्षेत्रफल
	c/o लाल चन्द्र कशमीरी लाल बटाला (गुरदासपुर)	२२५	२७२-२
२३.	,, कश्मीरीलाल जी लालचन्द्र काशलीरी लाल बटाला जि० गुरदासपुर	२२४	२७२-२
२४	प० शालिग्राम जी, २६ टेलीग्राफ स्कायर नई देहली	२६६	२७२-२
२५	,, महाराज दास जी, c/o Indian Standaid Institution ब्लाक न० ११ Old Secret ariat न० २	२४८	२७२-२
२६.	,, दीवानचन्द्र जी, आर्य नगर लक्ष्मणभवन, पहाड़ गज देहली	१३०	१२८
२७.	,, सत्येन्द्र नाथ c/oIndian Michinery सेल्स को ओपरेटिव, नया बाजार देहली	१५५	२७२-२
२८.	,, रघुनाथप्रसाद जी पाठक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली	२०३	१३७
२६	,, श्री शशिभूषण केन डवलपमेन्ट आफिस सीतापुर	२०४	१४६
३०.	,, श्रीमती जानकी देवी जी, गुरुकुल वृन्दावन (मथुरा)	१७१	२७२-२
३१.	श्री सुरेशचन्द्र जी % श्री मती जानकी देवी जी, गुरुकुल वृन्दावन मथुरा,	६०	२७२०२
३२.	,, सतीशचन्द्र जी % श्रीमती जानकीदेवी गुरुकुल वृन्दावन (मथुरा)	११६	१११
३३.	श्रीमती सुखदादेवी जी	१७२	२७२०२

क्रम सं०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
	गवर्नमेंट गर्ल्स स्कूल बड़ौत (मेरठ)		
३४	,, टेकचन्द जी आर्य प्रधान आर्य समाज बैलून डलहौजी गुरदासपुर,	२११	१३७ वर्गगज
३५	,, विष्णुदास जी बर्तन फरोश, गल्ला मंडी, गंगानगर बीकानेर स्टेट,	७४	२८५
३६	,, बख्शी खुशहाल जी, आर्य पी० टी० आई० अमृत हायर स्कूल रोहाना (मुजफ्फरनगर)	८२	२७२.२
३७	,, योगेन्द्र जी सुपुत्र ला० टेकचन्द जी बैलून डलहौजी	२३६	२७२.२
३८	,, केशवचन्द जी c/o पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक, सार्वदेशिक सभा देहली,	१२५	१११
३९	,, शेरमल जी नैय्यर Q. No 57 तुर्कमानगेट, देहली,	२७१	२७२.२
४०.	,, श्रीमती शांति रानी कपूर धर्म पत्नी श्री किशोरी लालजी हैड ड्राफ्ट मेन, रेलवे वर्कशाप बीकानेर	२५१	२७२.२
४१	श्री० कस्तूरीलाल जी कपूर हैड ड्राफ्टमेन, रेलवे वर्कशाप बीकानेर	२५२	२७२.२
४२.	,, विश्वनाथ कुमार,जी ८, रकाबगंज रोड, नई देहली,	१८८	२७२ २
४३	,, सोमनाथ गोपाल जी आर्य, नं० ११ एडवर्डस्क्वायर नई देहली,	१४७	२७२.२

क्रम स०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट संख्या	क्षेत्रफल
४४	,, नित्यस्वरूप जी आर्य १५२/२ मंदिरवाली गली सिद्धिपुरा देहली,	५६	२७२.२
४५.	,, ब्रह्मानन्द जी पो० वाक्स २४२, १०६ नया बाजार देहली,	१४६	२७२.२
४६	,, श्रीमती कौशल्यादेवी जी आर्या c/o मोहनलाल जी मन्थ नं० ६३ पीन्डरा रोड नई देहली	७६	१८५ वर्गगज़
४७.	श्री इन्द्रसैन जी वर्मा आर्य नं० ६६ हरिसदन दरियागंज देहली,	७७	२८५
४८.	,, कृष्णलाल जी आर्य, Claims Inspector, ई० पी० रेलवे गाजियाबाद	१३१	१२८
४६.	,, प्रमोदचन्द्र जी आर्य, ३२ प्रेम हाउस केनाट सरकस नई देहली,	१२८	१११
५०	,, शिवचन्द्र जी c/o सार्वदेशिक सभा नयाबाजार देहली,	५३	२७२०,२
५१.	,, बालदिवाकर जी हंस c/o श्रीमती रामप्यारीदेवी, आर्य अनाथालय, पाटोदी हाउस दरियागंज देहली,	२६६	२७२०,२
५२	श्रीमती प्रेमलता जी c/o बी एम धर्मवीर जी नं० ३८८२ नीलकंठ स्ट्रीट दरियागंज देहली	७५	२८५
५३	श्री विनोद कुमार जी ३२ प्रेम हाउस नई देहली	१२७	१११
५४	श्री चिरंजीलाल जी c/o प्रेमनाथ जो आर्य १०, माता सुन्दरी प्लेस नई देहली	२८२	२७२-२
५५	श्री अनन्तराम जी, ७, सत्य नगर करौल बाग देहली	४३	२७६

क्रम सं०	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट स०	क्षेत्रफल
५६	श्री विद्यासागर जी, घर न० ३५२१ ६ कूचा कलकत्तियान किला भगियाना, अमृतसर	३८	२७६ वर्गगज
५७	श्री हरनामदेव जी शास्त्री, c/o डा० D N शर्मा M B B S सदर बाजार देहली	२३६	२७२ •
५८	श्री सरदारचन्द्र जी, ५७८३ शोरा कोठी पहाड़ गज देहली	२४०	२७२ २
५६	श्री पृथ्वीराज जी ५७८ ३ शोरा कोठी पहाड़गज, दिल्ली	२४१	२७२ २
६०	श्री ओ३म्प्रकाश जी सुपुत्र ला० दीवानचन्द्र शर्मा शर्मा एण्ड सस नया बाजार देहली	३६	२७६
६१	श्री दीवानचन्द्र हरगोपाल आर्य शर्मा शर्मा शर्मा एण्ड सन्स, नया बाजार देहली	४०	२७६
६२	श्री इन्द्रदत्त जी आर्य, मकान म० १८०० मोहल्ला शाह गज देहली	१२०	२११
६३	श्रीमती लज्जावती जी न० ६३८ शिवाजी स्ट्रीट आर्य समाज रोड करौल बाग देहली	३२	२५६
६४	श्री ज्ञानचन्द्र जी, विडनपुरा No 26 करौल बाग देहली	३३	२५६
६५	श्री विश्वभरदास जी मकान न० ६३८ शिवाजी स्ट्रीट आ० स० रोड करौल बाग देहली	३७	२७६
६६	श्री कर्मसिंह वल्द पूर्णानन्द जी, कुन्दनलाल मैदा वालों का मकान म० १०८६ कूचा धर्मपुरा देहली	५४	२७२-२
६७	श्री कविराज गनपतलाल जी		

क स	नाम पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट स०	क्षेत्रफल
	गली नं० २३ लेडी हार्डिंग रोड नई देहली	४२	२७६
६८	श्री हरप्रकाश सिन्धवानी, Ministry of Education Govt of India New Delhi	४१	२७६
६६	श्री शान्तिदेव। जो धर्मपत्नी गनपतलाल जी कविराज गली न० २३ लेडी हार्डिंग रोड नई देहली	४४	१६२ वर्गगज
७०	श्री शिवदेवी जी धर्म पत्नी श्री अनन्तराम जी आर्य गली न० ७ सत्य नगर करौल बाग देहली	४५	८४
७१	श्री आशानन्द जी भजनोपदेशक आर्य्य समाज नयावास देहली	१६२	१६७
७२	,, वेदप्रकाश जी आर्य्यवीर, मैनेजर वेहजिल लेवोरेटरी शाहदरा देहली	४६	२७२,२
७३	,, केप्टिन हरिकिशन जी आर्य, भल्ला मेडिकल हाल के ऊपर देहली शाहदरा	४७	२७२२,
७४	,, हरिकिशन पुरी खत्री, रेलवे क्लीअरिंग एकान्ट आफिस किशनगंज देहली	११३	१११
७५	,, शान्तिदेवी धर्मपत्नी श्री जी पुरी हरिकिशन रेलवे क्लीअरिंग आफिस किशनगज देहली	११२	१११
७६	,, लब्भूराम जी फैज बाजार कूचा परमानन्द म० नं० ४८६४ दरियागज देहली	१२२	१११
७७	,, हरनामसिंह जी अरोडा, देवनगर गर्व० क्वाटर नं० १६ डी० करौल बाग देहली	२८०	२७२२
७८	,, श्रीमती तेजकौर जी धर्म पत्नी हरनामसिंह जी अरोड़ा देवनगर गर्व० क्वाटर न० १६ डी करौल बाग	१२४	१११

	देहली		
७६	,, बलराज वर्मा दीनानाथ क्वाटर नं० ८ चन्द्रावल रोड सब्जी मंडी देहली	१२३	१११

क्रम सं०	पट्टेदार पूरे पते सहित	प्लाट स०	क्षेत्रफल
८०	,, कसतूरी लाल जी दीनानाथ क्वाटर नं० ८ चन्द्रावल रोड सब्जीमंडी देहली	११४	१११
८१	श्री रामलाल जी वन्धवान s/oश्री अर्जुनसिंह जी रेलवे क्लीअरिंग आफिस देहली	१११	१११ वर्गगज
८२	श्रीमती रामरती जी धर्मपत्नी स्वर्गीय सीताराम भाई प्लेट नं० ६ जापानी बिल्डिंग रोशनआरा रोड देहली	११६	११६
८३	श्री वेदप्रकाश जी ए० एस कपूर एकाउन्टेन्ट बैंक आफ बीकानेर लि० चाँदनी चौक देहली	११५	१११
८४	श्रीमती जयन्तीदेवी जी c/o डा० केदारनाथ जी शर्मा डाक्टर लेन, नई देहली	४८	२७२.२
८५	श्रीमती कुसमलतादेवीजीc/oडा० केदारनाथ शर्मा डाक्टर लेन नई देहली	४६	२७२.२
८६	श्री नरेन्द्र नाथ शर्मा सुपुत्र श्री डा० केदारनाथ जी डाक्टर लेन, नई देहली	५०	२७२.२
८७	श्री डा० केदारनाथ शर्मा नई देहली	५१	२७२.२
८८	श्री हेमचन्द्र जी शर्मा ८, टोडरमल लेन नई देहली	५२	२७२.२
८६	श्री रामजीदास जी कूचा परमानन्द दरियागंज देहली	११०	१११

स०	पट्टेदार पते सहित	प्लाट सं०	क्षेत्रफल
६०	श्री० गिरधारीलाल जी ०/० वख्शी किशोरी लाल जी नूरपुर (कांगड़ा)	७८	२८५
६१	श्री० तारचन्द्र जी, ४२ कोटला रोड नई देहली	२७४	२७२ ७
६२	श्री जीवनलाल जी डगाल डिप्टी असिस्टेन्ट, कन्ट्रोल आफ एकान्ट, Air Force, ४८ कोटला रोड नई देहली	७७५	२७७.२
६३	श्री जयगोपाल जी मानकताला, %श्री रायसाहब द्वारका दास जी मानकताला ४१, राम नगर देहली	७७३	७७२ २
६४	श्री हरप्रकाश जी सुपुत्र ला० वख्शीराम जी अहलू वालिया चूनामण्डी पहाड़गंज देहली	७८१	७७२ २

आर्य नगर का निर्माण शीघ्र हो

गाजियाबाद भूमि के प्लाटो की अब तक लगभग ११० रजिस्ट्रिया हो चुकी हैं, परन्तु कार्यालय को ६४ की सूची मिल सकी है, जो प्रकाशित की जा रही हैं। हम चाहते हैं कि आर्य नगर का शीघ्र से शीघ्र निर्माण हो जाय। हमारा विचार है कि सितम्बर के मध्य मे हम समस्त पट्टेदारों को बलिदान भवन (दिल्ली) मे बुला कर नगर निर्माण की योजना पर परस्पर विचार विमर्श करें। इस बीच मे पट्टेदार महोदयों से प्रार्थना है कि वे अपने २ निर्देश सभा कार्यालय मे भिजवा दे।

गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए०

मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।

—— o ——

मुद्रक तथा प्रकाशक:—श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक

मुद्रित—सार्वदेशिक प्रेस, पाटौदी हाउस देहली मे।

कार्तिक स० २००६ वि० नवम्बर अक्टूबर १९४९ ई०	सम्पादक— श्री प० धर्मदेव सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति	मूल्य स्वदेश ५) विदेश १० शि०

ओ३म

विषय—सूची

मध्य भारत आर्यप्रतिनिधि सभा के सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा की २८।८।४६ की बैठक का निश्चय (सं० ४)

विज्ञापन का विषय स० ४, मध्य भारत आर्यप्रतिनिधि सभा विषयक श्री प० धर्मपाल जी विद्यालंकार की २०।७।४६ की रिपोर्ट जो उन्होने इन्दौर जाकर तय्यार की थी, प्रस्तुत होकर पढी गई। निश्चय हुआ कि मध्य भारत आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना यह सभा स्वीकार करती है और यह भी निश्चय करती है कि उक्त सभा का नियमित और वैधानिक रूप मे सगठन हो जाने और सब प्रकार से नियमित आवेदन पत्र प्राप्त होने पर उक्त सभा के इस सभा मे प्रवेश पर विचार किया जाय।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २९ } नवम्बर १९४९, कार्तिक २००६ वि०, दयानन्दाब्द १२५ { अङ्क ८

॥ ओ३म् ॥

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् शचीव इन्द्र पुरुकृद् द्युमत्तम तवेदिदमभितश्चेकिते वसु। अत संगृभ्याभिभूत आभर मा त्वायतो जरितु काममूनयी ॥ ऋग्वेद १।५३।३

शब्दार्थ —हे (शचीव) सर्वशक्तिमन् (पुरुकृत्) बडे इस जगत् के बनाने वाले (द्युमत्तम) अत्यन्त तेजस्वी (इन्द्र) परमेश्वर (अभित) चारों ओर (इदम्) यह (तव) तेरा (वसु) ऐश्वर्य वा महिमा है इस बात को (चेकिते) मैं अच्छी प्रकार जान गया हूँ। (अभिभूते) हे विघ्नों को दूर हटाने वाले (अत) इस ऐश्वर्य में से (संगृभ्य) लेकर जितना योग्य है उतना (आभर) मुझे दे दे (त्वायत) तेरी कामना करने वाले (जरितु) मुझ भक्त की (कामम्) इच्छा को (मा ऊनयी) अपूर्ण मत रख।

पद्यानुवाद —हे सर्वशक्ति शाली, अद्भुत जगत् के माली।
प्रभु विघ्नवृन्द हारी, महिमा यह सब तुम्हारी ॥
यह मैं समझ गया हूँ, तेरा ही बन गया हूँ।
जो चाहे धन मुझे दे, इच्छा को पूर्ण कर दे ॥
मैं चाहता तुझे हूँ, ध्याता सदा तुझे हूँ।
जगदीश दीप्तिवाले, निज ज्योति को जगादे ॥

सम्पादकीय

आर्य परिवार न होने का भयंकर परिणाम: -

हम 'सार्वदेशिक' के सम्पादकीय स्तम्भ तथा अन्य लेखों मे इस बात पर सदा बल देते रहे हैं कि वैदिक धर्म के वास्तविक प्रचार और आर्यसमाज की यथार्थ उन्नति के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि प्रत्येक आर्य अपने परिवार को आर्यत्व के वैदिक आदर्शों पर चलाने का सदा प्रयत्न करे। जब तक इस प्रकार आर्यों का पारिवारिक जीवन वैदिक आदर्शों के अनुकूल नहीं बनता तब तक उनकी सन्तान का वैदिक धर्म और सस्कृति से प्रेम नहीं हो सकता। यह जो शिकायत प्राय सुनने मे आती है कि बडे २ आर्य नेताओ, प्रचारकों और कार्य कर्ताओं की भी सन्तानों मे वैदिक धर्म और आर्यसमाज के प्रति निष्ठा नहीं दिखाई देता इस का अधिकतर कारण आर्यपरिवारों की न्यूनता ही है। परिवार आर्य न होने का कितना भयङ्कर दु खदायी परिणाम हो सकता है इसके लिये हम सार्वदेशिक के एक अत्यन्त उत्साही और श्रद्धालु आर्य ग्राहक का ८-८-४९का निम्न पत्र उद्धृत किये बिना नहीं रह सकते। वे सज्जन सम्पादक 'सार्वदेशिक' को लिखते हैं—

"सेवा में सूचित करता हू कि इस मास मे 'सार्वदेशिक' का मासिक अक तो मिला इस के लिये धन्यवाद। पर अत्यन्त दु ख के साथ लिखना पडता है कि इस मास की पत्रिका पढने का मुझे सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। कारण यह है कि—हमारी स्त्री आर्यसमाज की कट्टर शत्रु है। उसने हमारे चारों वेद, हवनकुण्ड और इस मास का 'सार्वदेशिक' फाड़कर समाप्त कर दिया है। एक सनातनी हिन्दू स्त्री का अत्याचार भयानक है। अतएव आप से प्रार्थना है कि इस मासका सार्वदेशिक पत्र जो भेजा था वही अक पुन वी० पी० द्वारा भेजने का कष्ट करें और वह भी अति शीघ्र क्योंकि बिना आर्यसमाज का समाचार पढ़े चैन नहीं मिलता। मरना भी है तो हमें आर्यसमाज के लिये॥ इत्यादि। इस पत्र के लेखक महोदय का आर्यसमाज के प्रति प्रेम रेखाकिन शब्दों से स्पष्ट है किन्तु परिवार आर्य न होने के कारण जो मानसिक वेदना उन्हें उठानी पड रही है वह भी पत्र के एक एक शब्द से प्रकट है। ऐसे महानुभावों से हमारी पूर्ण सहानुभूति है। उनकी अवस्था वस्तुत दयनीय है किन्तु हमारा उन से तथा अन्य सब आर्यों से अनुरोध है कि वे अपने परिवार को आर्य बनाने का प्रेम और धैर्य पूर्वक निरन्तर प्रयत्न करते रहें। विचारों मे घोर वैषम्य होने पर पारिवारिक जीवन में माधुर्य रहना असम्भव हो जाता है। यदि किसी कारण से गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करते समय विचार साम्य की ओर ध्यान न दिया गया हो तथापि प्रारम्भ के वर्षों मे उचित शिक्षा, प्रेममय आलाप तथा सत्सङ्गादि द्वारा विचारों में समता लाने का अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। इस कर्तव्य की उपेक्षा का न केवल वैयक्तिक रूप से भयकर परिणाम होता है किन्तु सन्तान पर विपरीत परिणाम होने से आर्यसमाज की वास्तविक उन्नति मे भी अवश्य बाधा पड़ती है। जाति

भेद निवारक आर्य परिवार संघ की स्थापना प्रधानतया आर्यों का ध्यान इस कर्तव्य की ओर आकृष्ट करने के लिये ही की गई थी। आशा है सब सुधार प्रेमी उदारचित्त आर्यों का क्रियात्मक पूर्ण सहयोग उसे अवश्य प्राप्त होगा।

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि विषयक एक भ्रमः—

'सार्वदेशिक' के गत कुछ अंकों में हम आर्य नर-नारियों का ध्यान सार्वदेशिक वेद-प्रचार निधि की सहायता की ओर आकृष्ट करते रहे हैं। हमें यह देखकर दुःख होता है कि इस के सम्बन्ध में कई महानुभावों को भ्रम हो गया है। वे यह समझ बैठे हैं कि इस निधि का उद्देश्य विदेशों में प्रचार तक ही सीमित है और इस भ्रम में वे इसकी समालोचना में प्रवृत्त हो गए हैं। ऐसे महानुभावों में से एक हमारे उत्साही मित्र, आर्यसमाज दीवान हाल के अन्तरङ्ग-सदस्य श्री डा० नन्दलालजी हैं जिन्होंने इस भ्रम में ही एक लम्बा चौड़ा लेख हमारे पास प्रकाशनार्थ भेजा है। खेद है कि स्थानाभाव से हम इस सम्पूर्ण लेख को प्रकाशित करने में असमर्थ हैं किन्तु निम्न अंश को भ्रमजनक समझ कर निवारण करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। माननीय डा० जी लिखते हैं —

"वैसे तो चिर काल से मेरी इच्छा थी कि आर्य समाज के प्रति कुछ लिखूं परन्तु जब आर्य सार्वदेशिक सभा के एक उच्च अधिकारी से यह जान पड़ा कि एक बड़ी राशि और वह भी विदेश में प्रचारार्थ एकत्रित की जा रही है तो मैंने उसे सुअवसर समझ अपने मन्तव्य को कार्यान्वित करने की ठानी। मैं सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना करूंगा कि जबतक उन्हें किसी दूसरे देश से प्रचारार्थ प्रार्थना पत्र न आए वह वहां प्रचारार्थ किसी भाई को न भेजे। भारत में एकत्रित धन को अमेरिका आदि देशों में वेद प्रचार के लिए भी व्यय करने का समय अभी नहीं आया और नहीं कभी भविष्य में होगा। आश्चर्य है कि वर्तमान राज्याधिकारी तो यहां से पाश्चात्य सभ्यता को हटाने का नाम तक नहीं लेते और आपको विदेश की चिन्ता हो रही है। क्या भारत के ३५ करोड़ नर-नारी आर्य बन चुके हैं? क्या इस देश में प्रचार की आवश्यकता इतनी कम हो गई है कि विदेश में प्रचार की तैयारी कर रहे हो? इत्यादि"

लेख के शेष भाग में आर्यों का ध्यान वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवन को उन्नत और वैदिक आदर्शानुकूल बनाने की ओर आकृष्ट किया गया है और इस विषयक त्रुटियों का निर्देश किया गया है जिससे हम अधिकांश में सहमत हैं किन्तु उपर्युक्त विचार में यह भ्रान्ति कार्य कर रही है कि 'सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि' का उद्देश्य केवल विदेशों में प्रचार कराना है। हमने तथा सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों ने सदा यही कहा है कि इस निधि का उद्देश्य देश में और देशान्तरों में वैदिक धर्म के प्रचार की समुचित व्यवस्था कराना है। अपने देश में अब वैदिक धर्म के प्रचार की आवश्यकता नहीं रही ऐसा न किसी उत्तरदायित्व पूर्ण व्यक्ति ने कहा और न कहेगा। उत्तर भारत के अतिरिक्त दक्षिण भारत, उड़ीसा आसाम आदि में तो प्रचार के क्षेत्र को विस्तृत

करने की आवश्यकता को सभी अनुभव करते हैं और इस निधि का एक बड़ा भाग उन प्रदेशों मे प्रचारार्थ व्यय करने का विचार है किन्तु साथ ही देश के स्वतन्त्र होने पर (जिसका लेखक महोदय ने बार २ उल्लेख किया है) हम कूपमण्डूक बन के भी नहीं रह सकते। जिस प्रकार हमारी सरकार विदेशों मे अपने राजदूत भेज रही है इसी प्रकार वहा अपने सार्वभौम धर्म और सस्कृति के सन्देशहर सुयोग्य अनुभवी प्रचारकों को भेजना भी हमें अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए। इस उत्तरदायित्व और कर्तव्य की पूर्ति के लिये हमे विदेश वासियों के प्रार्थना पत्रो की भी प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं। वे हमारे धर्म और सस्कृति के महत्त्व को अभी कहा इतने समझने लग गए है कि वे स्वय इस विषय मे उत्सुकता प्रकट करेंगे? अत हमारा समस्त आर्य नरनारियों से पुन अनुरोध है कि 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के पवित्र वैदिक सदेश को क्रियात्मक रूप देन के लिए सार्वदेशिक सभा द्वारा आयोजित इस निधि मे उदार सहायता पहुँचाना वे अपना कर्तव्य समझे केवल समालोचना से काम नहीं चल सकता।

माननीय प्रधान मन्त्री जी की अमेरिका यात्रा

भारत के माननीय प्रधान मन्त्री श्री प० जवाहर लाल जी का अमेरिका मे सर्वत्र अभूतपूर्व भव्य स्वागत किया जा रहा है यह समाचार जान कर हमे बडी प्रसन्नता होती है यद्यपि देश की वर्तमान सकटमय परिस्थिति मे जब कि शरणार्थियों के पुनर्निवास, काश्मीर इत्यादि की समस्याए विकट रूप मे उपस्थित हैं उनका विदेश मे अधिक समय लगाना अवश्य अखरता है, तथापि उनके उच्च व्यक्तित्व के प्रति मान से भारत का भी मुख उज्ज्वल होता है इसमे सन्देह नहीं। कोलम्बिया विश्वविद्यालय में दीक्षान्त समारोह के समय माननीय प्रधान मंत्री जी ने जो भाषण विश्वशांति इत्यादि के सबन्ध मे १७ अक्तूबर को दिया वह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण था। उसमे उन्होने बताया कि 'भारत की शातिमय क्राति का एक पाठ है जिसे आज की बृहत्तर विश्व समस्याओं को हल करने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। उसमे उन्होने यह भी बताया कि भारत ने सिद्धान्तों को राष्ट्र हितो से समन्वित कर दिया है और उस नीति के प्रमुख उद्देश्य निम्न है —

१—शान्ति का मार्ग किसी बडी शक्ति या शक्तियों के दल के साथ सम्मिलित होकर नहीं, बल्कि प्रत्येक मतभेद पूर्ण या झगडेके मामले मे स्वतन्त्र रूप से सोच विचार कर खोजा जाए। २—गुलाम लोगो की मुक्ति, ३ राष्ट्रीय व व्यक्तिगत दोनो प्रकार की स्वतन्त्रता को स्थिर रखना, ४—रग भेद की नीति को समाप्त करना और ५—अभाव, बीमारी और अज्ञान का अन्त करना जिन का सामना आज विश्व की एक बडी जन सख्या को करना पड रहा है। युद्ध के कारणों पर विचार प्रकट करते हुए उन्हों ने उन्हे दूर करने के उपायो पर भी महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला। हम अपने माननीय प्रधान मन्त्री जी की इस अमेरिका यात्रा में पूर्ण सफलता चाहते हुए यह अवश्य आशा करते हैं कि वे किसी प्रकार का भी ऐसा कोई आश्वासन न देंगे जिस से भारतकी स्वाधीनता में अणुमात्र

भी भङ्ग पड़े यद्यपि "अत्यादर शङ्कनीय" इस राजनैतिक सिद्धान्त के अनुसार हमें सन्देह है कि अमेरिका के अनेक व्यवसायी उन की यात्रा से अनुचित व्यवसायिक लाभ उठाना चाहते है॥

पूर्वी पंजाब के शासन की अव्यवस्था तथा भाषा समस्याः—

पूर्वी पंजाब मन्त्रिमण्डल मे जो परिवर्तन थोड़े २ मासों के अन्तर से बार २ हो रहे है उन्हें देखकर किसे दुःख न होगा? जिन डा० गोपीचन्द्र भार्गव पर पहले पूर्ण विश्वास का प्रस्ताव स्वीकृत कर के कांग्रेस असेम्बली पार्टी का नेता बनाया गया उन्ही पर कुछ दिनो मे अविश्वास का प्रस्ताव ला कर उन्हें गिराया गया और श्री भीम सेन सच्चर को प्रधान मन्त्री बनाया गया। अब श्रीभीमसेन सच्चर पर अविश्वास का प्रस्ताव ला कर उन्हें त्यागपत्र देनेको बाधित किया गया और पुनः श्री डा० भार्गव जी को प्रधान मन्त्री बनाया गया। इस प्रकार के शीघ्र २ परिवर्तनो का जनता पर जो प्रभाव पड़ता है और शासन मे जो अस्थिरता आती है वह अवाञ्छनीय है। भाषा की समस्या को सच्चर मन्त्रिमंडल ने जिस रूप मे हल करने का यत्न किया था उससे जनता में नितान्त असन्तोष था। पंजाब को भाषा के आधार पर दो भागोंमे विभक्त करने का उस मे प्रयत्न किया गया था। आशा है अब श्री डा० भार्गव का मन्त्रिमण्डल इस समस्या को ऐसे रूप मे हल करने का यत्न करेगा जिससे हिन्दी भाषियों के साथ जिन की प्रान्त मे बहुत अधिक संख्या है किसी प्रकार का अन्याय न हो। पंजाबी को रखना ही हो तो देवनागरी व गुरुमुखी दोनों लिपियों में लिखने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये। शिक्षा के माध्यम के चुनाव मे भी विद्यार्थियो के अभिभावको को स्वतन्त्रता होनी चाहिये। अन्य विषयो मे भी जनता के हित और न्याय का विचार करके यदि यह नया मन्त्रिमण्डल कार्य करेगा तो अच्छा होगा। अन्यथा इस दुर्भाग्यपूर्ण प्रान्तका शासन केन्द्र को अपने हाथ मे ले लेना चाहिये।

महर्षि दयानन्द की जय—क्या यह नारा सिद्धान्त विरुद्ध है?

भिवानी आर्य समाज के उत्साही प्रधान श्री फूलचन्द्रजी शर्मा द्वारा हम यह जानकर आश्चर्य हुआ कि एक 'बेधड़क' नामक अशिक्षित सा व्यक्ति जो अपनेको 'आर्य सन्यासी' बताता है इस बातका प्रचार करता फिरता है कि क्योंकि स्वामी दयानन्द जी का देहान्त हो चुका है अतः उनके नाम की जय बोलना वैदिक सिद्धान्त विरुद्ध है। वस्तुतः ऐसे जयघोष का इतना ही तात्पर्य है कि महर्षि दयानन्द जिस उच्च ध्येय को लेकर कार्य करते थे और जिस सार्वभौम वैदिक धर्म के वे पुनरुद्धारक शिरमणि थे उनका सर्वत्र विजय और प्रसार हो। इसमे कोई सिद्धान्त विरुद्ध बात नहीं। जो व्यक्ति इतनी साधारण सी बात को भी नहीं समझ सकता वह केवल अपनी अयोग्यता ही प्रकट करता है।

निष्क्रान्त सम्पत्ति विषयक नया आदेशः—

भारत सरकार ने कुछ दिन पूर्व निष्क्रान्तों की सम्पत्ति आदि के विषय मे एक नया केन्द्रीय विशेषाधिकार आदेश निकाला है। इस के अनुसार भारत छोड़ने पर ही कोई व्यक्ति निष्क्रान्त समझा जाएगा जबकि पहले कुछ

रियासतों के विशेषाधिकार कानूनों द्वारा कोई व्यक्ति उन रियासतों को छोड़ देने पर निष्क्रान्त घोषित कर दिया जाता था चाहे वह भारत संघ मे ही रहता हो। इस नये आदेश के अनु-सार किसी व्यक्ति के अपने परिवार के किसी सदस्य को पाकिस्तान भेजने और उसको पाकिस्तान में रहते हुये निर्वाहार्थ धन भेजने पर कोई प्रति-बन्ध न रहेगा। यदि किसी व्यक्ति का साझीदार या सम्बन्धी पाकिस्तान चला गया हो और वहा उसने व्यापारादि द्वारा लाभ उठाना प्रारम्भ कर दिया हो तो भी उस व्यक्ति को निष्क्रान्त न समझा जाएगा। निष्क्रान्त सम्पत्ति पर सरकारी अधिकार जमाने विषयक विधि को अब अधिक उदार बना दिया गया है। उसे पहले नोटिस आदि देना होगा कि क्यों उसकी सम्पत्ति को जप्त न किया जाए। अपील विषयक नियमों को भी अधिक उदार बना दिया गया है। पहले सहायक संरक्षक (डिप्टी कस्टोडियन) के निर्णय के विरुद्ध केवल संरक्षक (कस्टोडियन) को ही अपील की जा सकती थी अब विशेष रूप से नियुक्त जि[illegible] न्यायाधीशों से भी अपील की जा सकेगी। जिलान्यायाधीशों [illegible] निर्णय अन्तिम होगा किन्तु प्रमुख संरक्षक (कस्टो-डियन जनरल) को पुनर्विचार का अधिकार होगा। इत्यादि अनेक रूपों मे इस अध्यादेश (आर्डिनेन्स) को पूर्वापेक्षया बहुत उदार बना दिया गया है जिसका परिणाम असुस्लिम निष्क्रान्तों की सम्पत्ति के लिये भयकर होगा। हा, [illegible] उलेमा की अनुचित मांगों को ([illegible] जाता है कि मौ० अबुल कलाम [illegible] भी प्रबल समर्थन प्राप्त था।) पूरा करते हुए मुसलमानों के प्रति बड़ी उदारता दिखाने का यत्न किया गया है जिसे हम तो अन्याय और पक्षपात होने के कारण घातक तथा निन्दनीय समझते हैं। जैसे कि अखिल भारतीय पुरुषार्थी संघ के प्रधान डा० चोयथ-राम गिद्वानी ने इन्डियन न्यूज़ क्रानिकल नई देहली के २५ अक्तूबर के अक मे प्रकाशित अपने विचार पूर्ण लेख मे बताया है ऐसा करना देशभक्ति विरुद्ध और देश द्रोहात्मक प्रवृत्ति वाले मुसलमानों को प्रोत्साहन देने वाला है। हमे आश्चर्य है कि हमारे राष्ट्र के मान्य कर्ण-धार क्यों अभी तक घातक 'उदारता' को अपनाये हुये हैं जिसके भयंकर परिणामों से वे स्वय पूर्णतया परिचित हैं। हम भारत सरकार से अनुरोध करते हैं कि वह मुस्लिम पक्षपात की घातक "उदारता" का परित्याग करके इन विषयों मे पूर्ण न्याय और उग्रता से काम ले। कहां तो पाकिस्तान सरकार का निष्क्रान्त सम्पत्ति विषयक कानून को इतना कठोर बना देना और कहा भारत सरकार का इतनी मृदुता सम्भावित देश द्रोहियों के प्रति दिखाना राज-नीति और देशहित की दृष्टि से हम इस नवीन अध्यादेश का प्रतिवाद करना जनता का कर्तव्य समझते हैं और सरकार से गत जुलाई मास में निष्क्रान्तों को माननीय गोपाल स्वामी आयङ्गार द्वारा सरकार की ओर से दिये आश्वासनों को पूरा करने का प्रबल अनुरोध करते हैं।

बालदीक्षा:—

जैनियों के तेरा पन्थ सम्प्रदाय के आचार्य तुलसी राम जी तथा उनके अनुयायी जो छोटी आयु के कुमार कुमारियों को साधुत्व या संन्यास

की दीक्षा देते रहते हैं उसके विरुद्ध प्रबल आन्दोलन पिछले दिनों अनेक विचार शील जैन भाइयों तथा अन्य प्रमुख महानुभावों ने किया है जिस से हम सर्वथा सहमत हैं। संन्यास सब से उच्च आश्रम है जिसमें प्रवेश का अधिकार पूर्ण ज्ञान युक्त, सच्चे वैराग्य सम्पन्न अनुभवी नर-नारियों का ही होना सर्वथा शास्त्रीय और युक्ति सङ्गत है। १०, १२ या १५ वर्ष के अपक्वमति बालक बालिकाओं को संन्यास की दीक्षा देना जिससे वे विचार परिवर्तन की अवस्था में भी वापिस न आ सकें सर्वथा अनुचित है और गुप्त दुराचार की प्रवृत्ति का वर्धक है। तेरा पन्थियों की इस सन्यास दीक्षा के अवसर पर हमें २ वर्ष हुए डूंगर गढ मे जाने का अवसर प्राप्त हुआ था। हमने अपनी आखों से कई बहुत छोटी आयु के (१० से १५ वर्ष के) बालक बालिकाओं को दीक्षित किये जाते हुये देखा यद्यपि उससे पूर्व तेरा पन्थ सम्प्रदाय के वर्तमान आचार्य श्री तुलसी रामजी ने हमे विश्वास दिलाया था कि वे पूर्ण परीक्षा लेने के बाद ही ऐसी दीक्षा देते हैं। अभी हमें जोधपुर समाज के उत्सव पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ जहां सुजानगढ के एक सज्जन और देवी ने दो बालक बालिकाओं का स्वय ज्ञात वृत्तान्त हमे लिख कर दिया जिन्हें अनेक सम्मानादि के प्रलोभन देकर दीक्षित कर दिया गया था और उनकी अनिच्छा होते हुए भी बाध्य किया गया था। उस बालक को दीक्षित करके छ मास के लिये घर से बहुत दूर भेज दिया गया। "जब उसके पश्चात् भिक्षा के निमित्त वह १०-११ वर्ष का बालक घर गया तो अपनी माता को देख कर उसके गले मे चिपट कर रोने और चिल्लाने लगा तथा कहने लगा मैं बहुत दुखी हूँ। इस पर माता ने उस साधु बालक से कहा 'अब पछताने से कुछ नहीं होता। हमारी जाति बिरादरी के अन्दर बुराई होगी तथा हमारे कुटुम्ब पर बट्टा लगेगा तथा जातिवाले कोई लड़की नहीं देंगे। जो कुछ हो गया सो हो गया।" इत्यादि यह लगभग ६ साल पूर्व की घटना है और यह दीक्षा श्री तुलसी राम जी ने ही दी थी। ऐसी बाल दीक्षाओं का जनता को प्रबल विरोध करना चाहिये और यह विधान केन्द्रीय विधान सभा तथा प्रान्तीय विधान सभाओं द्वारा बनवाना चाहिये कि ४० वर्ष की आयु से पूर्व किसी को भी सन्यास की दीक्षा न दी जाए अन्यथा गुप्त व्यभिचार तथा अनाचार की वृद्धि होती रहेगी जिसके अनेक उदाहरण समय समय पर जनता के सन्मुख आते रहते हैं यद्यपि उन्हे छिपाने का यत्न किया जाता है।

धर्मदेव वि० वा०

—०()०—

दैनिक पत्र

सार्वदेशिक प्रकाशन लि० की संचालक समिति (Board of Directors) के अधिवेशन ता० २० अक्टूबर १९४९ मे निम्न प्रकार महत्त्व पूर्ण निश्चय किया गया कि आर्य जगत् की मांग को दृष्टि में रखते हुए इस कम्पनी के मुख्योद्देश्य की पूर्ति अर्थात् हिन्दी में **दैनिक पत्र** जारी करने के लिये पग उठाया जाये।

निश्चय स० २ ता० २०-१०-४९

प्रबन्धक संचालक ने सघ के कार्य की प्रगति के सम्बन्ध मे अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस बात को दृष्टि मे रखते हुए कि अब प्रेस लग चुका है और भली भांति कार्य कर रहा है, अतः अब यह वाञ्छनीय प्रतीत होता है कि अब कम्पनी के मुख्योद्देश्य अर्थात् दैनिक पत्र को जारी करने का कार्य गम्भीरता पूर्वक हाथ में लिया जाये। अतः निश्चय किया जाता है:—

(१) हिन्दी दैनिक पत्र आगामी ऋषि-बोधोत्सव (शिवरात्रि) सं० २००६ से जारी किया जाये।

(२) प्रबन्धक सचालक पत्र के जारी करने के लिये प्रारम्भिक प्रबन्ध की पूर्ति का उपाय करें।

(३) २५% प्रथम मंगती धन अर्थात् २॥) प्रति हिस्सा के हिसाब से हिस्सेदारों से तुरन्त मांगा जाये।

संचालक समिति के इस निश्चय के अनुसार सब हिस्सेदारो से निवेदन है कि वे २५% प्रथम मगती धन अर्थात् अपने हिस्सों पर २॥) प्रति हिस्से के हिसाब से तुरन्त कम्पनी के कार्यालय में भेजने की कृपा करें।

आर्य सज्जनों से निवेदन है कि वे अपने २ स्थानों से दैनिक पत्र के लिये ग्राहक बनाने का कार्य प्रारम्भ करें और प्रत्येक ग्राहक से ५) प्राप्त करके इस कार्यालय में भेजने की कृपा करे।

जो सज्जन दैनिक पत्र की एजेंसी लेना चाहे वे भी इस कार्यालय को पत्र लिखने की कृपा करें ताकि उन्हें एजेंसी फार्म भेजा जाये।

जो सज्जन दैनिक पत्र के लिये विज्ञापन प्राप्त करने के लिये एजेण्ट के रूप में कार्य करना चाहें वे भी पत्र लिखने की कृपा करें ताकि उन्हें भी एजेंसी का फार्म भेजा जाये।

ज्ञानचन्द्र आर्य—प्रबन्ध सचालक, सार्वदेशिक प्रकाशन लि० देहली।

वेदोपदेश

(लेखक—श्री पूज्यपाद महात्मा प्रभु-आश्रितजी महाराज)

ओ३म् अव रुद्रमदीमह्यव देव त्र्यम्बकम् ।
यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसाययात् ॥ यजु० ३ ५८॥

इस मन्त्र मे बताया गया है कि मनुष्य को सावधान रहना चाहिये। वह कभी यह न समझे कि मैं जो चाहूँ, वही कुछ हर हाल और हर काल मे अवश्य ही कर लूंगा। इस मन्त्र पर विस्तार से कुछ कहने से पूर्व इसका पदार्थ दे देना उचित प्रतीत होता है।

पदार्थ इस प्रकार है।

पदार्थ = हम लोग (त्र्यम्बकम) तीनों कालों में एक रस ज्ञान युक्त (देवम्) दाता (रुद्रम्) दुष्टों को रुलाने वाले जगदीश्वर की उपासना करके सब दुःखों को (अव अदीमहि) अच्छे प्रकार नष्ट करे (यथा) जैसे परमेश्वर (न) हम लोगो को (वस्यस) उत्तम २ वास करने वाले (अवाकरत्) अच्छे प्रकार करे' (यथा) जेसे (न) हम लोगों को (श्रेयस) अत्यन्त श्रेष्ठ (करत्) करे (यथा) जैसे (न) हम लोगों को (व्यवसाययात्) निश्चय करने वाले करे वेसे सुख पूर्वक निवास कराने वा उत्तम गुणयुक्त तथा सत्यपन से निश्चय देने वाले परमेश्वर ही की प्रार्थना करें।

अनेकों बार देखा जाता है कि कई डाक्टर वैद्य लोग शर्तिया चिकित्सा के विज्ञापन देते हैं और बड़े गर्व के साथ कहते हैं कि हमारी अमुक औषधि अमुक प्रकार के भयंकर से भयकर और पुराने से पुराने रोग का अचूक बाण है। रोग उस के सम्मुख ऐसा दौड़ता है जैसे गधे के सिर से सींग। ऐसी अभिमान युक्त बात करते हुवे वह परमात्मा को सर्वथा भूल जाते हैं।

किसान का पुरुषार्थ तभी सफल होता है जब परमेश्वर की कृपा की दृष्टि होती है। किसान कभी यह दावा नहीं करता कि मेरा यह बीज डाला हुआ अवश्य ही फल लायगा, वह बीज डालते ही प्रभु की ओर दृष्टि रखता है। और उसी के आश्रित होकर ही रहता है। इसी प्रकार मनुष्य जैसे कार्य धनबल और बुद्धिबल से करते हैं वह तब तक सफल नहीं होते जबतक परमेश्वर की कृपा न हो। पर वाह रे मनुष्य! प्राय यही देखते हैं कि जब तुझे सफलता प्राप्त हो जाती है, तो तू अपने ही बुद्धि बल तथा धन बल पर ही इतराता है और उसी का ही जिक्र करता है, परमेश्वर की कृपा को तो तू भूल ही जाता है। नाम ही नहीं लेता। जिसके बिना हम रा कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता उस का भुला देना कितने आश्चर्य की बात है। तभी तो वेद भगवान् ने मानव की इस त्रुटि को सामने रखते हुवे चेतावनी रूप मे बता दिया कि याद रख! कोई भी कार्य बिना प्रभु की कृपा के सफल नहीं हो सकता। देखो सूर्य हमें प्रकाश देता है हमारी

आख देखती है कि जिसके द्वारा यह शरीर देवताओं की दी हुई सम्पत्ति से लाभ उठाता है। परमेश्वर ने एक चीज दी जिसका नाम प्राण है।

प्राणका महत्त्व हमारे देवताओं का आशीर्वाद व्यर्थ होजाय यदि प्राण साथ न दें अर्थात् सहयोग न दें। नेत्र तब देखती है जब प्राण उसके भीतर कार्य करता है। इसी प्रकार नासिका कान जिह्वा आदि किसी वस्तु को ग्रहण नहीं करते जब तक प्राण साथ न दे। मल मूत्र का विसर्जन भी विना प्राण की गीत के नहीं हो सकता। प्राण ! इतना सहायक है !! यह परमेश्वर की विलक्षण देन है। यदि श्वास इच्छा पूर्वक लेना पडता तो हम कोई भी कार्य न कर सकते। क्यों ?

कारण कि जीवन रक्षा के लिये तो प्रतिक्षण हमे प्राण लेने की क्रिया करनी पडती है। वर्तमान स्थितिमे तो हम ससार के सब व्यवहार करते हैं। प्राण अनायास आ जा रहा है। हाथ से कार्य करने के लिये हाथ को हिलाना पडता है। नेत्र से देखने के लिये नेत्रोन्मीलन करना ही पडता है। परन्तु प्राण तो बिना हमारे कुछ निवेदन किये बिना किमी पुरुषार्थ तथा परिश्रम के कार्य कर ही रहा है। यह सर्वत्र फैला हुआ है। यह मेरे सब कार्य कर रहा है, मैं इसका कुछ भी नहीं कर रहा। यह सहायक आदि में है अन्त मे है। ६वर प्राण का मूल्य नहीं दे सकता। हम तो

अद्भुत नासिका शक्ति यह भी नहीं जानते कि वायु में प्राण कौन सा है और कहा है, परन्त यह नितान्त सत्य है कि वायु के अन्दर प्राण विचर रहा है। परमेश्वर ने नासिका के अन्दर अद्भुत कला रखी है कि वह अपने आप (automatically) कार्य करती और प्राण ही ले लेता है जो मेरे जीवन की रक्षा करने वाला है।

आश्चर्य ! इसका मूल्य होता, बाजार से क्रय करना पडता तो हम कहा से अदा करते। बिडला सेठ का भी दिवाला निकल जाता। पर आश्चर्य ! आश्चर्य !! हम उस प्राणदाता को भूल गये।

याद कैसे हो उस दाता की याद कैसे आए? जबतक मंजिल का ध्येयका ही ज्ञान नहीं वह अपनी प्रगतिकी मर्यादा कैसे बाधे ? यदि मुझे मालूम हो कि मेरे पास एक घण्टे का समय है और मैंने एक कोस चलना है तो मैं अपनी प्रगति की मर्यादा निश्चित कर लूगा। यदि यह ज्ञान हो कि मुझे दिन भर का अवकाश है तो मैं ठमकर कर चलूगा। हमे तो ज्ञान नहीं कि उस परमेश्वर का ध्यान कितनी दूर है। जिसको अधिक यात्रा करनी होती है वह समझता है कि मैं पैदल नहीं पहुँच सकता, साइकल पर चढता है, यदि साइकल से भी काम न हो सके तो मोटर पर चढ़ता है। परन्तु परमेश्वरकी मजिलका किसीने ध्यान नहीं दिया अन्न, धन कमाना हो तो सर्व प्रकार के साधन प्रयुक्त करेंगे, अपना सारा ज्ञानबल, बुद्धिबल उस के उपार्जन तथा वृद्धि मे ही लगा देंगे। बस उस अवस्थामे हमें यही विचार रहता है कि हमारी यह कामना कैसे पूर्ण हो। बालक को पौण्ड और पैसा दे दो उसके लिये दोनों समान हैं। हमारे लिये पौंड जो परमेश्वर का ज्ञान है ऐसा ही है जैसे बालक के लिये पौंड और पैसा

है, इस यात्रा को (जीवन यात्रा को) सुखी बनाने के लिये आवागमन के चक्र से छूटने के लिये चिन्ता नहीं।

वेद ने कहा--

तीनों काल के अन्दर एक रस रहने वाला भगवान् का जो ज्ञान है, उस ओ३म् ज्ञान को हम नहीं जानते। उस भगवान् को हम आपत्ति मे पुकारते हैं। वह पैदा करने वाला है। भगवान् का नाम रुद्र है। जिस समय चारो ओर अन्धकार होता है तो मुक्त कठ से अनायास परमेश्वर का नाम निकलता है। उस भगवान् की पुकार पहले क्यों न की ?

गुरुनानक ने कहा है

दु खमे सिमरे सब कोई, सुखमे सिमरे न कोय,
जो सुख सिमिरे मानका, दु ख काहे को होय ॥

उसे मित्र क्यो न बनाया ?

कारण हमारे अन्दर न्यूनता है कि निश्चयात्मिका बुद्धि नहीं है। जब तक ज्ञान न हो जाए कि परमेश्वर ही हमारी सर्व आवश्यकताओ को पूरी करता है, हम उसकी शरण मे कैसे जाने लगे है और कैसे उसे अपनाने लगे हैं ? भगवान् हम से दूर २ ही प्रतीत होता है, यद्यपि वह सर्व व्यापक है। क्या वह रुठ रहा है ? विचार करने से पता लगेगा कि वास्तव मे हमारे कार्य ऐसे है कि जिनकी कृपा से हम उससे पृथक हो रहे है। कल्पना करो एक बड़ा सुन्दर चित्र आपका रखा है, किसी बालक ने पेन्सिल उठाकर उस पर लकीरे लगा कर उस के सौन्दर्य को विकृत कर दिया तो आप तुरन्त उसे थप्पड़ लगादेंगे। तो क्या परमेश्वर की परम विचित्र सुन्दरता को हम यदि बिगाड़ दें तो क्या वह रुष्ट न होगा ? होगा, अवश्य होगा। उसने सुन्दर हस्त दिया, नयन दिये। हमने नयन को विकृत कर दिया तो उसने अगले जन्म मे हमे चक्षु दोष सम्पन्न बना दिया, ऐसे ही नहीं कि जिसको चाहे रूपवान बनादे और जिसको चाहे कुरूप बनादे। उस का प्रत्येक कार्य न्याय पर निर्भर है। कुरूप अथवा दोष युक्त होना भगवान की सुन्दरता के विकृत करने का परिणाम है। हम भगवान की बनाई चीजो की रक्षा तथा सत्कार करते, अन्त मे वह सुन्दर भगवान हमे अपना ही रूप दे देता।

माता पिता रूपवान् हो, तो वह अपनी सन्तान को रूपवान बनाने का प्रयत्न करते हैं।

मनुष्य जब परमेश्वर की आज्ञाओ का पालन करता हुआ उस के सौन्दर्य की रक्षा करता है जिस स्वरूप के देखने पर ईश्वर का स्मरण हो जाय वही सुन्दर स्वरूप है। जैसे किसी बालक को देख कर हम पूछते है कि तुम किसके बालक हो, जब वह कहता है कि अमुक के, तो हम कहते हैं हा भाई ! तुम्हारा स्वरूप उस से मिलता जुलता है।

संशयनिवृत्त सन्तों के पास जाते ही संशय मिट जाते हैं। लोग उन्हे कहते है, "भगवान्" अब उसके स्वरूप को देख कर संशय निवृत्त हो गए और उसको भगवान मान कर ही उस से दु ख निवृत्ति करते है। परमेश्वरका तब तक नहीं बनता जब तक यह न समझे कि सर्व आवश्यकताओ को वही पूर्ण करता है। भगवानके होने न होने पर हमे हर्ष शोक नहीं है। हमे हर्ष है संसार की उन वस्तुओं मे जिनका हमे ज्ञान है।

आर्य कम बने हमार नियम कितने उच्च हों परन्तु जब आचरण नहीं, वह किस काम के। आर्य समाजी होने के नाते हम ने बहुत लोगों को आर्य समाजी बनाया और रजिस्टर मे उनका नाम अङ्कित भी हो गया। परन्तु जो अङ्कित न हुआ और आचरण आर्यों का सा है, सस्कार कराता है, हवन करता है तो हम ने समझा कि वह भी आर्य समाजी है। समाजी बहुत बन गए परन्तु आर्य कम बने। तो इस अवस्था मे समाज किस की होगी, सूलों की अर्थात् शिथिलअङ्गा की।

भक्ति जीवन है भक्ति तो जीवन है। भगवान का ज्ञान नहीं होता जब तक उसके साथ न रहेगा। बढ़ई को लकड़ी का ज्ञान न होगा जब तक दिन भर लकड़ी के साथ न रहे। भगवान का सग हम ने एक घण्टा भी न दिया, कह देने मात्र से सग नहीं होता।

फिर कैसे देखें इन्द्रिया ससार का ज्ञान कराती हैं साकार को आकार वाली देखगी, निराकार को आकार रहित ही देखेगा। मन और बुद्धि तो आकार वाले हैं। उनका वही आकार है जैसे जल को जिस पात्र मे डाल दो, वैसा बन जायगा। किसी की मृत्यु पर शोक प्रगट करने आओ, शोक मुख पर छा जायगा। भीतर मन ने अपना आकार बनाकर मुख पर छाप लगादी। तो मन और बुद्धि का आकार है। परमेश्वर उनसे नहीं जाना जाता। आत्मा ही जान सकता है, अकेला नहीं जान सकता, वह अन्यों की सहा यता चाहता है कि वह देव=इन्द्रियों का मुख भीतर का ओर हो जाए, बाहर कुछ भी न देखे। अत परमात्मा को देखने के लिये अन्त करण से सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करे।

पूजा क्या है इन्द्रियों से हटना, अर्थात् उन्मुख होना परमेश्वर की पूजा है, विषय मे आसक्त होना परमेश्वर से विमुख होना है।

फिर बाधा क्या है फिर कौन सी बाधा है जो वह निश्चय नहीं होने देती कि भगवान् ही सब कुछ देता है। ससार के विषय अपनी ओर खींचते है और उधर जाने नही देते। इससे भी बढकर जो बाधा है वह मनुष्य का स्वार्थ है। हमारी कोई वस्तु परमेश्वर से पूरी नहीं होती, मैं कुछ करना चाहता हू वह इच्छा मेरी पूरी नहीं करता अत मुझे उससे प्रेम नहीं हो सकता। मेरा पूर्ति स्वार्थ से विषयों से होगी। जिस व्यक्ति के अन्दर स्वार्थ नहीं रहा, उसका दपण साफ हो जायगा। स्वार्थ मिट जाय तो कोई कष्ट नहीं, अत परमेश्वर प्राप्ति के लिये स्वार्थ को जो विषयो से सबन्ध रखता है, हटाना होगा।

अपने आपको बनाओ परन्तु स्वार्थ का एक दूसरा ज्वलन्त पहलू भी है। स्व=आत्मा अर्थ=लक्ष्य, ध्येय तो स्वार्थ से आत्मा का ध्येय अभिप्रेत है। आत्मा का ध्येय सर्वदा सामने रखो। परन्तु हमारी दशा ही और है। हम तो जो काम करते है वह अपने लिये नहीं दूसरों के लिये। आर्य समाज कहता है पण्डित बुलाओ जनता के लिये। अपने लिये नहीं। उत्सव होता है, धुरन्धर विद्वान् आकर

उपदेश दे जाते हैं, मन्त्री प्रधान प्रबन्ध मे ही लगे रहते हैं, उनको उपदेश सुनने का अवकाश ही नहीं मिलता। उन्होंने समय का त्याग तो किया, पर ससार के लिये, अपने लिये नहीं। प्रत्यक्ष देखने मे तो यह बडा भारी त्याग है परन्तु जिस प्रकार कूप के लोटे उपकार करते हैं, भर भर कर आते है और निसार मे सर्व त्याग करते है। निसार भी त्याग करती है वह जल को आगे पहु चा देती है। निसार से खाडे मे, खाडे से नाली मे, नाली से खेत मे जल जा पहु चा। लोटों ने, निसार ने, खाडे ने, न ली ने सब ने त्याग किया परन्तु इस त्याग का परिणाम क्या निकला, यही कि लोटा, लोटे की फासी (रस्सी), छेवल (काही), खाडा, नाली सब म दुर्गन्ध पैदा हो गई, दूसरों के लिये त्याग किया, अपने लिये कुछ नहीं किया। प्रफुल्लित न हुवे, बहुमूल्य जल को धारण हीं न किया। जिसने धारण किया वह तो हरा भरा हो गया। खेत ने धारण किया वह हरा भरा हो गया। जनता मे से जिसने भी उपदेश को धारण किया उन्नत हो गया। प्रधान और मन्त्री मे अथवा प्रबन्धकर्त्ताओं मे तो अभिमानकी अकड ने दुर्गन्ध पैदा करदी। अत सर्व प्रथम अपने आप को बनाओ। ऋषि दयानन्द न अपने को बनाया, महात्मा गाधी ने अपने को बनाया, मानापमान से वे उपरत हो गये। उन्हो ने पहले अपने को बनाया, तप किया फिर काम किया।

ऋषि दयानन्दका तप

कुम्भ के महोत्सव पर ऋषि दयानन्द ने देखा कि मैं विरोध नहीं कर सकता, पएडी पर्वत पर आकर तप किया चार वर्ष पर्यन्त। नग्न भ्रमण किया। शीतोष्ण को सहन किया, सिंह, बघियाड, हस्ती आदि के समूहों मे घूमे, डट कर विरोध किया। जब देखा कि पक गया तब प्रचारार्थ निकले।

बिना तप के कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता

कोयले को अग्नि मे डालो, तो जब उसके अन्दर अग्नि प्रविष्ट हो जायगी, अग्नि बन जायगा। जल मे जब अग्नि प्रवेश कर गई तो वह आकाश मे चढ जायगा। भगवान् की अग्नि मे जिसने अपने आपको तपाया, वह सर्वत्र भगवान् की तरह फैल गया। महात्मा गाधी की विभूति भी फैल गई। बिना तप मनुष्य सत्य को, नहीं ?, कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता इसलिये कहा—

प्रमाण

ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसो ऽध्यजायत। भगवान् न ऋत और सत्य को तप से प्रकट किया, इसलिये उसका सत्य कायम है। गाधी का सत्य इसलिये कायम है कि उसने तप किया। आर्य समाज ने तप नहीं किया।

तप क्या है?

बडा तप है हानि लाभ को सहना, इससे बडा तप है मान अपमान की उपेक्षावृत्ति। इस तप का सम्बन्ध आत्मा के साथ है। शीतोष्ण का तप शरीर का तप है। हानि लाभ का सहना बुद्धि का। क्षुधा पिपासा का तप प्राण का तप है। जिसने अहकार का त्याग कर दिया, वह परमात्मा को पायेगा। इसलिये महर्षि ने नियम बनाया, ससार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है। अत यह शरीर संसार के काम आये मन मे प्रीति हो और अभिमान का त्याग हो,

तो जब ऐसी अवस्था आ जाय, समझ लो, पग आगे बढ़ रहा है।

अभिमान का त्याग और मनमे प्रीति सच्ची प्रार्थना से प्राप्त हो सकते है। प्रार्थना निर्जीव न हो, जिस प्रार्थना को करे उसमें जीवन डाल दे। इस पर विचार करना ही समाधि है। यह बडा कर्म है। कहने और करने मे बडा अन्तर है, कवि ने कहा है

कहना करना दो हैं भाई,
करने की है नेक कमाई।
कहना कह कर जावे थक,
करना पहुचे मंजिल तक॥

जब तक मनुष्य इसको न जाने, वह कुछ नहीं कर सकता। थोडा करे, समझ से करे तो उसका बेडा पार है। भगवान् करे कि हमे शक्ति और बुद्धि प्राप्त हो ताकि हम महर्षि के शब्दों में

"कोई भी मनुष्य ईश्वर की प्रार्थना वा उपासना के बिना सब दुखों के अन्त को नहीं प्राप्त हो सकता। क्योंकि वही परमेश्वर सब सुख पूर्वक निवास वा उत्तम २ सत्य निश्चयों को कराता है इससे जैसी उसकी आज्ञा है उसका पालन वैसा ही सब मनुष्यो को करना चाहिये।" प्रदर्शित भाव को समझे और जीवन मे घटाते हुये सर्व गुण सम्पन्न बन सके।

ओ३म् शम्

—०(⌓)(⌓)०—

महर्षि दयानन्द के प्रति श्रद्धाञ्जलियां

कुछ जगद्विख्यात महापुरुषों द्वारा समर्पित

[खेद है कि ये श्रद्धाञ्जलिया सार्वदेशिक के गताङ्क में स्थानाभाव के कारण छपने से रह गई थीं। यद्यपि सम्पादकीय मे उन का निर्देश किया गया था—सम्पादक सा० दे०]

विश्व-विख्यात योगी श्री अरविन्द जी—

स्वामी दयानन्द दिव्य ज्ञान का सच्चा सैनिक, विश्व को प्रभु की शरण मे लाने वाला योद्धा और मनुष्य व संस्थाओ का शिल्पी तथा प्रकृति द्वारा आत्मा के मार्ग मे उपस्थित की जाने वाली बाधाओ का वीर विजेता था और इस प्रकार मेरे समक्ष आध्यात्मिक क्रियात्मकता की एक शक्ति सम्पन्न मूर्ति उपस्थित होती है। इन दो शब्दों का, जो कि हमारी भावनाओ के अनुसार एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं मिश्रण ही मुझे दयानन्द की उपयुक्त परिभाषा प्रतीत होती है। उन के व्यक्तित्व की व्याख्या यों की जा सकती है—एक मनुष्य जिसकी आत्मा मे परमात्मा है, चर्म चक्षुओं मे दिव्य तेज है और हाथो मे इतनी शक्ति है कि जीवन तत्त्व से अभीष्ट स्वरूप वाली मूर्ति गढ सके तथा कल्पना को क्रिया मे परिणत कर सके। दयानन्द की इस धारणा मे कोई अवास्तविकता नहीं है कि वेदों मे विज्ञान सम्मत तथा धार्मिक सत्य निहित हैं।"

"वेदों का भाष्य करने के विषय मे मेरा विश्वास है कि चाहे अन्तिम पूर्ण भाष्य कुछ भी हो किन्तु इस बात का श्रेय दयानन्द को ही प्राप्त होगा। उन्होंने सर्वप्रथम वेदों की व्याख्या के लिये निर्दोष मार्ग का फिर से पता लगाया था। चिरकालीन अव्यवस्था और अज्ञान परम्परा के अन्धकार में से सूक्ष्म और मर्म भेदिनी दृष्टि से उसी ने सत्य को खोज निकाला था। जगली लोगो की रचना कही जाने वाली पुस्तक के भीतर उस के धर्म पुस्तक होने का वास्तविक अनुभव उन्होने ही किया था। ऋषि दयानन्द ने उन द्वारो की कुञ्जी प्राप्त की है जो युगो से बन्द थे और उसने अवरुद्ध झरनो का मुख खोल दिया।"

"ईश्वर करे कि उसकी पवित्र, निर्विकार, विशुद्ध आत्मा भारत मे कार्य करे और हमे पुन इन गुणों को देने मे सहायक हो जिनकी हमारे जीवन को विशेष आवश्यकता है अर्थात् पवित्र शक्ति, उच्च स्पष्टता, सूक्ष्म दृष्टि, चतुर कार्यदक्ष हस्त, श्रेष्ठ और सर्वाधिक सत्य-निष्ठता।"

('Bankim Tilak Dayananda by Shri Aurabindo'' P 50, 55 67 71)

जगद्विख्यात नेता श्री सुभाषचन्द्र बोस जी—

स्वामी दयानन्द सरस्वती निश्चय से उन अत्यन्त शक्ति शाली महा पुरुषों मे से एक हैं जिन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण किया है और जो उस के आचार सम्बन्धी पुनरुत्थान तथा धार्मिक पुनरुद्धार के उत्तरदाता हैं। हिन्दू-भारत की संस्थाओं के सुधार, पुनर्जीवन और

पुनरुद्धार मे उनके आर्यसमाज का निस्सन्देह सब से अधिक हाथ है। मैं स्वामी दयानन्द को एक धार्मिक और सामाजिक सुधारक तथा कर्म-योगी मानता हू। स्वामी दयानन्द का उद्देश्य हिन्दू समाज तथा धर्म का सुधार करने और उस को पुन जीवनशक्ति प्रदान करने तथा इस प्रकार के पुनर्निर्माण का था जो भारत की प्राचीन सस्कृति और प्रणाली के अनुकूल हो। दढता, सगठित कार्यशक्ति, गम्भीरता और एकता मे आर्यसमाज किसी से पीछे नहीं है। ईश्वर करे स्वामी दयानन्द द्वारा प्रवर्तित समाज उस के अनुरूप हो और हमारे अत्यन्त प्रिय भारत को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और आध्यात्मिक मुक्ति का साधन बने।

(वैदिक मेगजीन दिस० १६०३ मे प्रकाशित लेख का अनुवाद)

विश्वविख्यात कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर—

'मेरा सादर प्रणाम हो उस महान् गुरु दयानन्द को जिस की दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास मे सत्य और एकता को देखा और जिस के मन ने भारतीय जीवन के अङ्गों को प्रदीप्त कर दिया। जिस गुरु का उद्देश्य भारत को अविद्या, आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति मे लाना था उसे मेरा बारम्बार प्रणाम है।"

मैं वर्तमान काल के महान् पथ प्रदर्शक स्वामी दयानन्द के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ जिसने अनेक मतों और प्रथाओं के भयङ्कर जङ्गल, मे से जो हमारे देश की अवनत दशा के समय की उपज थे एक सरल सीधे मार्ग को साफ कर दिया जिस से हिन्दू ईश्वर के प्रति युक्ति युक्त भक्ति और मनुष्य सेवा की ओर अग्रसर हो सकें।"

(Dayananda Commemoration Volume P 23)

विश्ववन्द्य महात्मा गांधी जीः—

महर्षि दयानन्द के लिये मेरा मन्तव्य यह है कि वे भारत के आधुनिक ऋषियो मे, सुधारकों मे, श्रेष्ठ पुरुषों मे एक थे। उन का ब्रह्मचर्य उन की विचार स्वतन्त्रता, उन का सब के प्रति प्रेम, उनकी कार्य कुशलता इत्यादि गुण लोगो को मुग्ध करते थे। उनके जीवन का प्रभाव भारत पर बहुत ही पडा है।"

('दिव्य दयानन्द" पृ० ५ से उद्धृत)

भारत के गवर्नर जनरल श्री चक्रवर्ती राज गोपालाचार्य जीः—

स्वामी दयानन्द हमारे बीच उस समय आये जब हिन्दू धर्म पर एक ओर तो आधुनिक विज्ञान का और दूसरी ओर ईसाई मत का जबर्दस्त दबाव पड रहा था। इस्लाम के पुराने हमले भी तब तक जारी थे। महर्षि दयानन्द ने देखा कि दोष वेदों और उपनिषदों के बनाने वाले ऋषियों का नहीं, बल्कि हमारा ही था। रोग को अच्छी तरह परख करने के बाद उन्होंने उसे ठीक करने के लिये डाक्टर की तरह बहादुरी के साथ चीर फाड की।

जब स्वामी दयानन्द ने देखा कि हिन्दू धर्म मे कमी है और वह युग धर्म नहीं हो रहा तो उनकी आत्मा ने बगावत कर दी। उन्होंने हिन्दू धर्म के विकार रूपी झाड़-झंखाड़ को निर्दयता से

(शेष पृष्ठ ४३५ पर देखिये)

ग्रीक भाषा का संस्कृत से वंशानुगत सम्बन्ध
विश्वविद्यालय नैतिक जीवनों की परीक्षणशालायें हैं।

एथेन्स विश्वविद्यालय के कुलपति के उद्गार

एथेन्स (ग्रीक) विश्वविद्यालय के कुलपति श्री जी० पी० आईकोनोमोस ने गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के कुलपति पण्डित इन्द्रजी विद्यावाचस्पति को गुरुकुल की सम्भावित स्वर्णजयन्ती के सम्बन्ध में एक पत्र लिख कर अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए लिखा है —

ग्रीक और लेटिन साहित्य जगत का सबसे प्राचीन विश्वविद्यालय इस शुभअवसर पर अपनी परम हार्दिक शुभ कामनायें प्रकट करता है। विश्वविद्यालय इन युगान्त अनुभवों से महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए सिद्धान्तों पर आश्रित नैतिक जीवनों की परीक्षणशालायें हैं।

हमने संस्कृत के साथ अपने वंशानुक्रम भाषा सम्बन्ध को विस्मृत नहीं किया है, तथापि उसका प्रयोग करने की असमर्थता पर हमें खेद है। किन्तु हमें भारतीय काव्य, दर्शन और धर्म का ज्ञान है और हम उस बौद्धिक विरासत को भी जानते हैं जो आधुनिक आविष्कारों से संयुक्त होकर आपकी शिक्षा को अनुप्राणित किये हुए है।

राष्ट्रों की प्रभावपूर्ण प्रगति तभी सम्भव है जब कि हम अपने इतिहास का सम्यक् सम्मान करें, और अपने चरित्र की विशेषता को कायम करें। यही राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों का मुख्य प्रयोजन है। इस लक्ष्य पूर्ति के लिये एथेन्स विश्वविद्यालय अनेक शताब्दियों तक आपके उज्ज्वल भविष्य जीवन की कामना करता है।

वैदिक सप्ताह में मेरी दक्षिण यात्रा

आर्य समाज लातूर (हैदराबाद राज्य) के निमन्त्रण पर मैं ७-८-५१ की प्रात काल लातूर पहुँचा, और १६ ता० तक रहा। इस काल में मैंने ८ व्याख्यान 'सन्ध्या' पर प्रात काल और ७ व्याख्यान 'वैदिक धर्म का महत्व' 'समाजवाद' भारतीय संस्कृति 'स्वामी दयानन्द का विश्व पर उपकार' सुख और शान्ति के साधन, श्री कृष्ण चरित्र इत्यादि पर दिये।

लातूर ६०००० की आबादी का एक सम्पन्न कस्बा है। लातूर आर्य समाज के लिये सड़क के एक किनारे पर एक प्रभावशाली स्थान पर सुन्दर भूमि क्रय करली गई है। उसमें एक अखाड़ा बन गया है। एक ओर टीन डालकर लगभग ५०० आदमियों के बैठने के लिये साप्ताहिक सत्सङ्ग के लिये स्थान बना लिया गया है। शेष भूमि खाली पड़ी है जिसमें वार्षिक उत्सव, आदि

अच्छी तरह हो सकते हैं। भवन के निर्माण की तय्यारियां हो रही हैं। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि लातुर के सामाजिक भाई सिद्धान्तों को समझने और उनके विषय में व्याख्यान सुनने से प्रेम रखते हैं, जात पात तोड़ कर आर्य परिवारों में प्रेम बढाने के साधन हैदराबाद राज्य में विशेषता से पाये जाते हैं। कई लड़कियां गुरुकुल हाथरस की स्नातिका और कई नवयुवक अन्यान्य गुरुकुलों के पढे हुये हैं। कुछ डी० ए० वी० कालेज शोलापुर में भी पढ़ते हैं। नगर में सामाजिक भाइयों के लिये आदर है। समाज ने सम्प्रति १०१) दयानन्द पुरस्कार निधि के लिये मेरी भेंट किये और अधिक देने का वचन दिया। १७-८-५४ को मैं शोलापुर पहुँचा। श्री पं० श्रीराम जी शर्मा प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज के निमन्त्रण पर उनके निवास स्थान पर ठहरा। डी० ए० वी० कालेज हैदराबाद सत्याग्रह के पश्चात् उसी की स्मृति के रूप में स्थापित किया गया था। आज यह बम्बई प्रान्त का एक अत्यन्त उच्चश्रेणी का कालेज है इसमें १५०० सौ से अधिक विद्यार्थी हैं। भवन बड़ा सुरम्य है प्रबन्ध बहुत अच्छा है। नगर और निकटस्थ स्थानों में इसका अच्छा प्रभाव है। मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि प्रिं० श्रीराम जी वेद प्रचार में गहरी रुचि रखते हैं। वे अङ्गरेजी के एक अच्छे लेखक हैं। महात्मा हंसराज जी का अङ्गरेजी जीवन चरित्र उनकी लेखन शैली का एक उज्ज्वल प्रमाण है। वे मराठी में आर्य समाज का साहित्य तय्यार कराने में लगे हुये हैं। अभी मराठी में शुद्धि विषय पर एक गवेषणा पूर्ण पुस्तिका छप रही है। शोलापुर में विशेषतया इस लिये गया था कि सार्वदेशिक सभा ने ४ ५ वर्ष हुये मेरे द्वारा समाज मन्दिर के लिये एक भूमि ६०००) मे क्रय की थी और उसके निर्माण के लिये ६०००) अपने कोष में सुरक्षित रक्खे थे। प्रयत्न हो रहा था कि समाज मन्दिर बन जाय मैं उसी की प्रगति को तीव्र करने वहा गया। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री प्रिन्सिपल साहब श्री लक्ष्मीनारायण जी राठी, श्री लोहे जी इञ्जीनियर तथा समाज के प्रधान और मन्त्री इसके विषय में भूले हुये नहीं हैं। नकशा म्युनिसिपैल्टी से पास करा लिया गया है। ५०००) के लगभग दान एकत्र हो चुका है। सीमेन्ट न मिलने के कारण देरी हो रही है। मेरी प्रेरणा पर यह निश्चित हुआ है कि १००००) के लगभग जो अपने हाथ में है खर्च करके अभी इतना स्थान बना लिया जाय जिससे साप्ताहिक सत्सङ्ग वहां लगना प्रारम्भ हो जाय। १० वर्ष पहले तो १४ १५ हजार में अच्छा भवन बन जाता था परन्तु आज उसके लिये कम से कम २५ हजार रुपया चाहिये। आज कल समाज के सत्संग एक दर्जी की दुकान के ऊपर किराये के अटेट में होते हैं जो प्रभाव की दृष्टि से अत्यन्त अनुपयोगी है। कोई प्रतिष्ठित पुरुष वहां नहीं पहुँच सकता। आर्य पुरुषों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि शोलापुर के नगर की परिस्थिति में कुछ परिवर्तन होने के कारण जो भूमि समाज मन्दिर के लिये ली गई है वह अत्यन्त प्रभाव युक्त है। उसके दो तरफ सड़कें लगी हैं। म्युनिसिपैल्टी ने अभी हाल में वहां एक अच्छा बाजार लगाया है। और उसके सामने ही म्युनिसिपैलिटी का एक पार्क है। इससे समाज की भूमि का मूल्य कई गुना बढ़ गया है और यदि

अच्छा भवन बन गया तो वैदिक धर्म प्रचार में इससे बड़ी सहायता मिलेगी। सत्याग्रह से पहले शोलापुर में आर्य समाज का कोई चिह्न न था और अब भी वहा के स्थानिक भाई सम्पन्न कोटि के नहीं हैं। शोलापुर महाराष्ट्र प्रान्त का एक औद्योगिक केन्द्र है। मैंने बम्बई प्रान्त की प्रतिनिधि सभा का ध्यान भी शोलापुर की ओर आकृष्ट किया है क्योंकि शोलापुर बम्बई प्रान्त मे है। पूना, कोल्हापुर, शोलापुर, अहमद नगर, मनमाड, धोन्ध, महाराष्ट्र संस्कृति के केन्द्र हैं। यदि इन स्थानों मे आर्य समाज बल पकड़ जाये तो उसका प्रभाव भारत भर की संस्कृति पर पड़ सकता है क्योंकि पूना अब भी संस्कृत साहित्य का केन्द्र है। वहा के विद्वानों पर आर्य समाज के सिद्धान्तों की छाप नहीं है अत उनकी साहित्यिक कृतियो से वैदिक धर्म के प्रचार मे अधिक सहायता नहीं मिल रही। हम इस शक्तिपुञ्ज को अपने कार्य का साधक कैसे बनाये इस पर गभीरता पूर्वक विचार करना होगा। मैं शोलापुर केवल १ ही दिन रहा और वहा के भद्र पुरुषों के सहयोग से एक दिन मे भी बहुत कुछ कार्य होगया यह सन्तोष की बात है।

इसके पश्चात् मैं बम्बई आया और प्रसिद्ध काकड़वाड़ी समाज मे ठहरा। श्री विजयशङ्करजी को मैंने पहले से ही लिख दिया था। उनसे और कई अन्य सज्जनों से बम्बई की आर्य प्रतिनिधि सभा तथा आर्य समाज की प्रगति के सम्बन्ध में बात चीत हुई। बम्बई भारत यूनियन का एक प्रभावशाली प्रान्त है। गुजराती, मराठी, कन्नड़ तीन तो मुख्य भाषाए है ही। इसके अतिरिक्त और कई भाषायें यहा बोली जाती हैं। बड़ौदा स्टेट बम्बई प्रान्त मे विलीन होगई है परन्तु खेद का स्थान यह है कि बम्बई जैसे बड़े प्रान्त मे आर्य समाज का बहुत ही कम प्रभाव है। महाराष्ट्र और कन्नड़ भागों मे तो कुछ काम हो ही नहीं रहा। समाज मे द्वेष की अग्नि अधिक है। मैंने कई सज्जनों से इस विषय मे बातचीत की कुछ ने यह भी परामर्श दिया कि यदि मैं महीने दो महीने वहा ठहर सकू वा प्रान्त मे भ्रमण कर सकू तो शायद कुछ काम हो जाय। मैंने वहा के लोगों से कह दिया है कि यदि उनकी इच्छा होगी तो उनकी सुविधा पर कुछ समय निकाल दू गा।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय,
मन्त्री —
सार्वदेशिक सभा।

गृहस्थ की सुख वृद्धि के सुनहरी नियम

(गताङ्क से आगे)

लेखक—श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक

प्रात स्मरणीय पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के जीवन चरित्र में हम पढ़ते हैं कि उनकी माता जब कभी उनके पिता से रूठ कर द्वार बन्द करके घर के भीतर पड जाया करती थीं तब उनके पिता अपनी पत्नी को प्रसन्न करने के लिए एक रामबाण ओषधि का प्रयोग किया करते थे और वह थी कि वे कोई बहुत अच्छी खाने की वस्तु खोज करके लाते जो उनकी माता को प्रिय होती थी । और उसे आगन मे जोर से पटक कर कहते 'बच्चो, आओ इस चीज को देखो, अपनी माता को मत दिखाना' यह सुनते ही उनकी माता तत्काल द्वार खोलकर बाहर आतीं उस वस्तु को उठाकर ले जातीं और पति पत्नी का मनोमालिन्य दूर हो जाया करता था।

यह बात बडी साधारण देख पड़ती है परन्तु दाम्पत्य प्रेम की दृष्टि से यह बडी आवश्यक है। इस प्रकार की छोटी छोटी बातों पर ध्यान रखने से पति पत्नी के सम्बन्ध मधुर और इनकी उपेक्षा करने से कटु बन जाया करते हैं। जिस प्रकार चिन्ता मनुष्य के शरीर को धीरे २ जलाकर खाक कर देता है, उसी प्रकार पारस्परिक व्यवहार की छोटी २ बातों की उपेक्षा पति पत्नी के प्रेम को धीरे २ नष्ट कर देती है। पत्नी क्षमा और त्याग की साक्षात् मूर्ति होती है। वह पति की शारीरिक दुर्बलता को सहन कर सकती है, निर्धनता मे सन्तोष मान सकती है, सन्तान हीनता की उपेक्षा कर सकती है परन्तु पति की निरन्तर उपेक्षाओं और अनादर को सहन नहीं कर सकती। इस भाव को एक पाश्चात्य देवी ने बड़े सुन्दर रूप मे प्रस्तुत किया है। वे कहती हैं —

"T'is not love's going hurts my days
But that it went in little ways'

प्रेम चला गया इसका रोना नहीं है। रोना इस बात का है कि यह छोटी २ बातों से गया"

पश्चिम मे रावर्ट ब्राउनिंग नामक एक सज्जन हुए हैं। वे नि सन्तान थे परन्तु अपनी पत्नी का बड़ा आदर करते और उससे बहुत प्रेम करते थे। एक बार उनकी पत्नी ने अपनी बहन को पत्र लिखते हुए लिखा 'मैं नहीं जानती कि किस प्रकार अपने हृदय गत आश्चर्य को प्रकट करू । मैं सोचा करती हूँ कि क्या स्वर्ग की देवी और मुझ में कोई अन्तर है ?"

ज्यार्ज ऐम० कोहन नामक एक अमेरिकन बड़े व्यस्त व्यक्ति थे। इस पर भी प्रतिदिन अपने कार्य्यालय से अपनी माता को जब तक वे जीवित रहीं, दो बार टेलीफोन किया करते थे। क्या आप यह समझते है कि वे प्रत्येक बार आश्चर्य जनक समाचार दिया करते थे ? नहीं। इस से स्पष्ट है कि जिस व्यक्ति को आप बहुत चाहते हैं उसका ध्यान आपको हर समय रहता है और उसे आप प्रसन्न रखना चाहते हैं।

एक देवी के पतिदेव तेज स्वभाव के व्यक्ति थे। जरा २ सी बात पर रुष्ट होजाना उनके लिए साधारण सी बात थी। सायंकाल को कचहरी से घर लौटने पर यदि उनका क्रोध प्रज्वलित होजाता तो घर वालों की शामत आजाया करती थी। वह देवी बड़ी चतुर और मनुष्य

स्वभाव की स्त्री थी। ज्योंही पतिदेव घर में प्रविष्ट होते त्योंही ठंडे जल का एक गिलास लाकर उन्हें दे देती थी। जल पीकर वे शान्त चित्त होजाया करते थे।

एक दूसरी देवी प्राय उदास रहा करती थी। घर में धन था और संतान भी थी। उसकी निरन्तर उदासी का कारण यह था कि उसके पतिदेव कभी उससे हंसकर बात न करते थे। अकस्मात् जब उन पर प्रफुल्ल रहने और लोगों से मुस्कराते हुए बाते करने की जीवन प्रदायिनी शक्ति का स्वरूप प्रकट हुआ तो उन्होंने उसका सर्व प्रथम परीक्षण अपनी पत्नी पर किया। फल यह हुआ कि पत्नी की उदासी दूर होगई और घर के वातावरण मे प्रफुल्लता और मधुरता प्राप्त होगई।

अमेरिका इत्यादि देशों मे जहा विवाह को वह पवित्रता और स्थायित्व प्राप्त नहीं है जो हमारे देश में प्राप्त है आए दिन तलाकों की भरमार रहती है। शिकागो के जज जोसेफ महोदय जिन्होंने सहस्रों वैवाहिक अभियोगों का पर्य्यालोचन किया और लगभग २००० जोड़ों को उनका मनमुटाव दूर करके आपस मे पुन मिलाया है, कहते हैं "वैवाहिक कटुता के मूल मे प्राय बहुत छोटी २ बातें पाई जाती हैं। किन्हीं मामलों मे पत्नी की रुष्टता का कारण यह पाया गया कि पतिदेव ने उसे फूल लाकर न दिए थे। उसने पत्नी की वर्षगाठ न मनाई थी। इत्यादि। किन्हीं मामलों मे पति की रुष्टता का कारण यह पाया गया कि पत्नी ने आफिस जाते समय पतिदेव को अभिवादन न किया था। इत्यादि। इस प्रकार की छोटी २ बातों के न होने से बहुत से तलाक रुक जाते"

गृहस्थ की सुख की वृद्धि के लिए छठा नियम यह है कि 'छोटी २ बातों पर ध्यान दो' उनकी अवहेलना मत करो।

साहित्य समीक्षा

Vedic Culture

by Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M A Published by the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha Delhi

Price 3 8 0

"वैदिक संस्कृति" के विषय मे अनेक भ्रान्तिया शिक्षित समाज मे फैली हुई हैं। बहुत से पाश्चात्य विद्वानो और उन के अनुयायी भारतीयों ने वैदिक संस्कृति को एक असभ्य लोगों की हीन संस्कृति समझ रक्खा है। कईयों ने इसे केवल आध्यात्मिक संस्कृति माना हुआ है। आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध यशस्वी लेखक श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम ए ने 'वैदिक-संस्कृति' पर अंग्रेजी मे यह महत्त्व पूर्ण पुस्तक लिख कर इन भ्रान्तियों का निराकरण करते हुए वैदिक संस्कृति का यथार्थ स्वरूप बडी उत्तमता से दिखाया है। संस्कृति और सभ्यता का अर्थ तथा परस्पर सम्बन्ध, वेदों के इस विषयक विचार, समानता, ईश्वर और संस्कृति, व्यष्टि और समष्टि, कृषि, पशु, शिल्पकला और व्यवसाय, वस्त्र, गृहनिर्माणकला, जाति और वर्ण मे भेद और वैदिक वर्णाश्रमव्यवस्था का स्वरूप, परिवार का वैदिक आदर्श, मृत्यु और उस के पश्चात् इन विषयों पर सप्रमाण उत्तम प्रकाश डालते हुए सुयोग्य सिद्धहस्त लेखक महोदय ने प्रत्येक क्षेत्र मे वैदिक संस्कृति के महत्त्व का प्रतिपादन किया है। हम चाहते हैं कि विद्यार्थियो और शिक्षित वर्ग तथा नेताओं मे इस पुस्तक का विशेष रूप से प्रचार किया जाए। बड़ी २ समाजें इस ग्रन्थरत्न की बहुत सी पुस्तकें खरीद कर कालेजों के विद्यार्थियों और धारा सभा, विधान परिषत् के सदस्यों तथा अन्य सुशिक्षित महानुभावों तक इसे पहुचाएं तो बड़ा लाभ हो सकता है। वैदिकसंस्कृति के प्रचार से ही जगत् का कल्याण हो सकता है इस विषय का बड़ा सुन्दर निरूपण इस पुस्तक मे किया गया है। पुस्तक का मुद्रण कला प्रेस प्रयाग म बडे आकर्षक रूप मे हुआ है। भूमिका लेखक श्री डा० गोकुलचन्द्र जी नारङ्ग एम ए, पी एच डी हैं। देहली के श्री जगन्नाथ जी ने पुस्तक प्रकाशनार्थ १०००) का दान दे कर बड़ा पुण्य कार्य किया है। इस के प्रचार मे सब समाजों को पूर्ण सहयोग देना चाहिये। ध० दे०

नागरिक शास्त्र की प्रारम्भिक शिक्षा—

भाग १, २, ३, ४

लेखक—श्री सूर्य नारायण जी एम ए, प्रकाशक—सुमर ब्रदर्स ऐण्ड को, बिरला लाइन्स देहली मूल्य—क्रमश ६½ आ०, १२ आ०, ६ आ०, १०½ आ०

नागरिक शास्त्र एक अत्यावश्यक शास्त्र है जिसकी उपयोगिता के विषय मे इन पुस्तकों के सुयोग्य लेखक श्री सूर्यनारायण जी एम ए ने भूमिका मे ठीक ही लिखा है कि "स्वतन्त्र देश के नागरिक को प्रत्येक काम करते समय अपने देश का हित देखना पड़ता है। इस महान् उत्तरदायित्व को भली भाति पूरा करने के लिये आवश्यक है कि नागरिकों को नागरिकता की उचित शिक्षा दी जाए।"

ये ४ भाग देहली प्रान्त के विद्यालयों की क्रमश पञ्चम, षष्ठ, सप्तम और अष्टम कक्षा

के विद्यार्थियों के लिये बड़ी मनोरञ्जक और सरल शैली से लिखे गये हैं। इन में नगर, प्रान्त, तथा केन्द्र के साथ सम्बन्ध रखने वाले विधानादि विषयक सभी आवश्यक बातों का उत्तमता से उल्लेख किया गया है। मन्त्रिमण्डल तथा प्रत्येक विभाग के कर्तव्यों का निर्देश करते हुए वर्तमान भारतीय सरकार के अधिकारियों के नामादि बताये गये हैं। प्रत्येक पाठ के अन्त में उपयोगी प्रश्न दे दिये गए हैं। इस प्रकार इस पुस्तक के चारों भाग विद्यार्थियों के लिये अत्यन्त उपयोगी बन गये हैं जिस के लिये सुयोग्य लेखक धन्यवाद और अभिनन्दन के पात्र हैं।

आर्य सत्सङ्ग पद्धति
नित्य कर्म विधि
आर्य भजन माला

} सार्वदेशिक प्रकाशन लि पटौदी हाउस देहली द्वारा प्रकाशित मूल्य क्रमशः ।=), =)॥, ।)

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि सार्वदेशिक प्रकाशन लि० का अपना सार्वदेशिक प्रेस हो गया है जहां ये उपर्युक्त उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इन का विषय नाम से ही स्पष्ट है। आर्य सत्सङ्ग पद्धति में सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा द्वारा निश्चित क्रम के अनुसार सन्ध्या हवन पद्धति, प्रार्थनामन्त्र, स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरण, ऋग्वेद का अन्तिम संगठन सूक्त कवितामय अनुवाद तथा ५० उत्तम भजनों सहित दिये गए हैं। नित्य कर्मविधि में दैनिक सन्ध्या, हवन तथा स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरणादि के मन्त्र हैं और आर्य भजन माला में सुप्रसिद्ध आर्य कवियों के भक्तिमय उत्तम भजन ६४ पृष्ठों में दिये गए हैं। तीनों पुस्तकें उपादेय और प्रचार योग्य हैं। सब समाजों को इन्हें मंगवा कर इन का सर्वत्र प्रचार करना चाहिये।

राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधन—

लेखक श्री स्वामी वेदानन्दजी तीर्थ भूमिका लेखक—माननीय डाक्टर भीमराव जी अम्बेदकर न्याय मन्त्री भारत सरकार प्रकाशक "सार्वदेशिक प्रकाशन लि० पटौदी हाऊस देहली।

मूल्य १)

वैदिक धर्म, स्वाध्याय सुमन, स्वाध्याय संग्रह, स्वाध्यायसन्दोहादि उत्तम, विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थों के लेखक श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ अध्यक्ष विरजानन्द वैदिक संस्थान आर्य जगत के सुप्रसिद्ध पृथिवी सूक्त (का १२ सू० १) के मन्त्रों की सारगर्भित विशद व्याख्या करते हुए राष्ट्र रक्षा के वैदिक साधनों के साथ साथ वैदिक राजनीति के अनेक अङ्गों पर प्रकाश डाला है। भारत सरकार के सुयोग्य न्याय सचिव डा० भीमराव जी अम्बेदकर एम० ए०, पी० एच० डी० ने अपनी सङ्क्षिप्त किन्तु विचारोत्पादक भूमिका में लिखा है कि मैं यह अवश्य कह सकता हूँ कि यह पुस्तक पुरातन आर्यों के धर्म ग्रन्थों से संकलित उद्धरणों का केवल अद्भुत संग्रह ही नहीं प्रत्युत यह चामत्कारिक रीति से उस विचार धारा तथा आचार की शक्ति को प्रकट करती है जो पुरातन आर्यों को अनुप्राणित करती थी। पुस्तक प्रधानतया यह प्रतिपादित करती है कि पुरातन आर्यों में उस निराशावाद का लवलेश भी नहीं था जो वर्तमान काल के हिन्दुओं पर प्रबल रूप से छाया हुआ है। "..... तथापि इस समय हमारे ज्ञान में यह कोई अल्प या तुच्छ वृद्धि नहीं है कि भावात्मक नवीन कल्पना है। इस दृष्टि से मैं इस पुस्तक का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।"

पुस्तक सरल शैली और ओजस्विनी भाषा में लिखी गई है अतः निस्संदेह पाठकों के अन्दर नवीन स्फूर्ति और उत्साह को भर देने वाली होगी ऐसा हमारा विश्वास है। राष्ट्र के

प्रत्येक नेता और वैदिक राजनीति के मुख्यतत्व जानने की इच्छा वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस का पाठ अवश्य करना चाहिए।

वैदिक गृहस्थाश्रम—लेखक श्री प्रो० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार भू० पू० वेदोपाध्याय तथा उपाचार्य गुरुकुल विश्वविद्यालय काङ्गड़ी—प्राप्तिस्थान—अध्यक्ष वैदिक साहित्य मण्डल ६ लक्ष्मण चौक देहरादून मूल्य ५) डाक व्यय अलग

श्री प्रो० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार आर्य जगत् के माने हुए वैदिक विद्वान् हैं जिनकी 'वैदिक जीवन' 'वैदिक पशुयज्ञ मीमांसा' सन्ध्या रहस्य इत्यादि अनेक विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आपका वैदिक साहित्य पर अद्भुत आधिपत्य है। आपका स्वाध्याय बहुत ही विशाल है। गृहस्थाश्रम के सम्बन्ध में सब ज्ञातव्य बातों का वेदों के आधार पर इस में सुन्दर प्रतिपादन है। ४०० से अधिक पृष्ठों में सुयोग्य लेखक महोदय ने पति पत्नी के कर्तव्य, विवाह के वैदिक आदर्श, पत्नी का वस्त्र निर्माण, भाई बहनों में प्रेम व्यवहार, परिवार में शिष्टाचार और प्रसन्नता, पुत्रोत्पादन के साधन, सन्तानों में सद्गुणों के उपाय, सन्तानों में भावनाएं, निषिद्ध विवाह, पत्नी का सम्पत्ति मे अधिकार इत्यादि आवश्यक विषयों पर २८५ वेद मंत्रों की व्याख्या करते हुए अत्युत्तम प्रकाश डाला है जिससे प्रत्येक गृहस्थ लाभ उठा सकता है। गृहस्थाश्रम को शास्त्रों में ज्येष्ठाश्रम माना गया है उसके महत्त्व और कर्तव्यों को समझने के लिए इस ग्रन्थरत्न की एक प्रति प्रत्येक गृहस्थ परिवार में तथा प्रत्येक सामाजिक संस्था के पुस्तकालय में होनी चाहिए। ऐसी अत्यन्त उपयोगी पुस्तक के निर्माण पर हम अपने मान्य उपाध्याय श्री प० विश्वनाथ जी विद्यालंकार का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। गृहस्थाश्रम के वैदिक आदर्श पर प्रकाशित पुस्तकों में यह नि सन्देह सर्वोत्तम है। ध० दे०

समालोचनार्थ प्राप्त 'दयानन्द सन्देश के स्वराज्याङ्क'' तथा अन्य पुस्तकों की समीक्षा अगले अंक में होगी।

ऋषि दयानन्द और अन्य भारतीय धर्माचार्य--तुलनात्मक अध्ययन

(ले० श्री भवानी लाल जी सिद्धान्तशास्त्री जोधपुर)

"It is perfectly certain that India never saw a more learned Sanskrit scholar, a deeper metaphysician, a more wonderful orator, and a more fearless denunciator of any evil, than Dayanand since the time of Shankaracharya" थियोसोफी मत की प्रवर्तिका मैडम ब्लेवेट्स्की का यह कथन हमें उचित ज्ञात पड़ता है कि शंकराचार्य के पश्चात् भारतवर्ष में दयानन्द के समान संस्कृत का विद्वान, आत्मज्ञानी, व्याख्याता और बुराइयों का निर्भीक आलोचक कोई उत्पन्न नहीं हुआ। इतना ही नहीं हम स्वामी दयानन्द में अन्य कई ऐसी विशेषतायें पाते हैं, जिनसे पता चलता है कि उनके जैसा महापुरुष संसार में सदैव नहीं आता। यदि हम स्वामी दयानन्द के महत्त्व को नहीं समझें तो यह हमारी ही भूल है। स्वामी जी वैदिक युग के ऋषियों की श्रेणी में आते हैं परन्तु उनकी महत्ता और औदार्य को देखिये कि वे अपने को उन प्राचीन महर्षियों की चरण रज के तुल्य भी नहीं समझते।

सार्वभौमिक वैदिक धर्म की पुन. स्थापना के लिये स्वामी जी ने अपना जीवन बलिदान करदिया। भारत भूमि में अनेक आचार्य उत्पन्न हुये हैं परन्तु अपने नवीन मत स्थापना करना श्रेयस्कर समझा। ऋषि दयानन्द ही ऐसे एक महापुरुष हैं जिन्हों ने उसी धर्म को महत्त्व दिया, जिसे 'ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि' पर्यन्त ऋषि मुनि मानते चले आये हैं। अपने ग्रन्थों में उन्होंने स्थान स्थान पर यह स्पष्ट कर दिया है कि इनका उद्देश्य किसी नवीन सम्प्रदाय का प्रवर्त्तन करना नहीं है, अपितु वे उसी सनातन धर्म का उद्धार करना चाहते हैं जो महाभारत के पश्चात् पतनावस्था को प्राप्त हो गया है।

श्रीकृष्ण की 'यदा यदा हि धर्मस्य' वाली उक्ति इसी अर्थ मे माननीय है कि जब जब शाश्वत धर्म पर अत्याचार होते हैं और उसमें अनाचार तथा बुराइयों का प्रवेश हो जाता है, तो उसका पुनः संस्कार करने के लिये किसी न किसी महान् आत्मा का प्रादुर्भाव होता है। भारत के युद्ध के पश्चात् भारतीय धर्म में वाममार्ग की अनाचार मूलक प्रवृत्तियां बढ़ने लगीं। जन्म से वर्णव्यवस्था मानी जाने लगी और यज्ञों मे पशुहिंसा का प्रचलन हो गया और इन सब बुराइयों का मूल वेदों में खोजा जाने लगा। वेदों के हिंसा परक अर्थ महीधर आदि भाष्यकारों द्वारा लगाये गये। चार्वाक ने यह दशा देख कर कहा 'त्रयो वेदस्य कर्तारो धूर्तभण्डनिशाचराः'। इसी कारण बुद्ध ने भी श्रुति प्रामाण्य को अस्वीकार कर दिया। वह वाममार्ग की

चित प्रतिक्रया थी। उस समय विकृत ब्राह्मण धर्म मे सुधार की आवश्यकता प्रतीत हो रही थी। बुद्ध ने इस काम का बीड़ा उठाया। उन्होंने यद्यपि सस्कृत का अध्ययन किया था परन्तु फिर भी वेदों की वास्तविक शिक्षा से वे अपरिचित रहे। यदि उन्होंने वेदों के मार्मिक अर्थों का विचार किया होता तो वे ईश्वर के प्रति उदासीन या तटस्थ नहीं रहते। बुद्ध ने वेद और ईश्वर के सम्बन्ध मे चार्वाक की बात को उचित ठहराया और जहा उन्होंने अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि वैदिक सदाचार को धर्म का मूल ठहराया, वहा, यज्ञ, ईश्वरोपासना आदि के प्रति वे एक प्रकार से तटस्थ रहे।

स्वामी दयानन्द की स्थिति इसके विपरीत थी। १६ वीं शताब्दी मे जब वे उत्पन्न हुये थे हिन्दू धर्म का अत्यधिक पतन हो चुका था। यदि वे चाहते तो किसी नवीन धर्म की स्थापना कर सकते थे। परन्तु उन्होंने अपनी दृष्टि वेदों पर रक्खी। वेदो ऽखिलो धर्ममूल' का आर्य सिद्धान्त लेकर वे धार्मिक सग्राम मे उतर पड़े। उन्होंने सब प्रकार के वेद बाह्य आचरण को छोड़ने की शिक्षा दी। बुद्ध और दयानन्द दोनों सनातन धर्म का उद्धार करना चाहते थे। एक का मार्ग वेद के दृढ मार्ग को लिये था, और दूसरा वेद से उदासीन था। इसका परिणाम हम देख रहे हैं। आज बौद्धमत देश से निर्वासित सा है और आर्य धर्म का जय जयकार हो रहा है। महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने एक स्थान पर बुद्ध और दयानन्द की तुलना करते हुये लिखा है, "दयानन्द वेद, आत्मा तथा ईश्वर के बधन मे बधे हुये हैं और बुद्ध ने अनात्मवाद को ग्रहण कर अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी है।" परन्तु हम तो यह जानते हैं कि जो अपनी आत्मा और सर्वात्मा से डरता है वही सबसे बड़ा निर्भीक है। बौद्ध मत को चाहे डेमोक्रेटिक कहा जाय परन्तु उसमे धर्म और सघ की शरण मे जाने के साथ २ बुद्ध की शरण मे जाना भी आवश्यक है किन्तु दयानन्द ने किसी भी स्थान पर अपने अनुयायियों को 'बुद्धशरणं गच्छामि' की तरह 'दयानन्दशरणं गच्छामि' का उपदेश नहीं दिया।

बुद्ध की शिक्षा कोई नई शिक्षा नहीं है। उनके धर्म सम्बन्धी सिद्धान्त उपनिषद् आदि ग्रन्थों की शिक्षाओं पर निर्भर हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि बुद्ध ईश्वर की सत्ता और वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार नहीं करते। हालाकि पहली बात को लेकर विद्वानों मे मतभेद है।* 'काश! भगवान् बुद्ध वेद के मानव प्रेम के समर्थक सिद्धान्तों को हृदयगम कर पाते। परन्तु ऐसा होना कठिन था। वाममार्गियों ने वैदिक धर्म को इतना बदनाम कर रक्खा था कि उसके सत्य स्वरूप से सब कोई अपरिचित था। परिस्थितियाँ ही ऐसी थीं, जो कि जनसाधारण की मनोवृत्ति को सुधार मूलक न बना कर विद्रोहमूलक बनातीं। इतना होने पर भी बुद्ध ने कभी भी श्रुति का विरोध नहीं किया। इस ओर से वे एक प्रकार से उदासीन ही रहे। स्वामी दयानन्द की महत्ता इसी बात से प्रकट होती है कि उन्होंने

*हमारा विश्वास है कि श्री गौतमबुद्ध नास्तिक न थे। इस पर यथावसर हम प्रकाश डालेंगे। सम्पादक सा० दे०।

(Escapist mentality) को प्रोत्साहन देना। जिसने संसार को ही मिथ्या समझ लिया वह अभ्युदय की सिद्धि किस प्रकार कर सकता है? मनुष्य को तो चाहिये कि वह संसार को कर्मभूमि समझे और यहा कुशलता से कर्मों का सम्पादन करे क्यों कि गीता के अनुसार कर्म मे कुशलता दिखलाना ही योग है—योग कर्म्मसु कौशलम्।

ऋषि दयानन्द ने इन बातों को समझा था और "वेदान्तध्वान्त निवारण" नामक पुस्तिका द्वारा शांकर वेदान्त का खण्डन किया था। उन्होंने विशुद्ध वैदिक त्रैतवाद की स्थापना की। स्वामी दयानन्द शकराचार्य से दो कदम आगे बढ जाते हैं जब वे वैदिक धर्म की उत्कृष्टता बताने के साथ २ उसे किसी भी प्रकार की अकर्मण्यता में न बाध कर शुद्ध कर्मवाद की भित्ति पर खड़ा करते हैं। वस्तुत ज्ञान और कर्म का समन्वय ही वैदिक विचार का मूल आधार है।

शकराचार्य का अल्पायु मे ही स्वर्गवास हो गया। उनके शिष्यों ने भारत के चारों कोनों में मठ स्थापित कर लिये—दक्षिण मे शृगेरी, पूर्व में गोवर्धन, उत्तर मे जोशी और पश्चिम में शारदा पीठ की स्थापना की और ऐश्वर्य के स्वामी होकर विलास मे रत हो गये। इसके बाद देश मुसलमानों के हाथों परतन्त्र हुआ। भारतीय जनता पर गहन आलस्य और अकर्मण्यता की रात्रि ने काला परदा डाल दिया। लोग कर्मठ जीवन को भुलाकर आलस्य और प्रमाद का जीवन व्यतीत करने लगे। सम्पूर्ण देश में निराशा की लहर छा गई। ऐसे समय में श्रीशंकराचार्य के नीरस दार्शनिक विचारों को कौन पूछता। अद्वैत वेदान्त एक रूखा और अलौकिक सिद्धान्त समझा जाने लगा। इसकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था। रामानुजाचार्य ने वैष्णव सम्प्रदाय को उत्कृष्टता प्रदान की और भक्ति मार्ग का प्रचार किया। मध्वाचार्य, निम्बार्क, बल्लभ और रामानन्द आदि अन्य सम्प्रदायाचार्यों ने भी वैष्णव धर्म को महत्ता दी। निराकार के स्थान पर साकार ईश्वर की उपासना आरम्भ हुई और अवतारों की कल्पना की गई। जैन और बौद्धों की देखादेखी मूर्तिपूजा विधान हुआ और इसके साथ २ अनेक साम्प्रदायिक तत्त्वों का समावेश धर्म मे किया गया। प्रमाण के लिये पुराणों की रचना महर्षि व्यास के नाम पर हुई और उन्हे वेदों से भी अधिक महत्त्व दिया जाने लगा। सक्षेप मे प्राचीन सनातन धर्म का यह रूप अत्यन्त विकृत और घिनौना हो गया। अनेकों सम्प्रदायों की सृष्टि हुई और एक ब्रह्म की उपासना का विचार ठुकरा दिया गया। इसे यदि हम वैदिक धर्म के चरम पतन का काल कहे तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

स्वामी दयानन्द ने मुख्यतया इसी पौराणिक मत का खण्डन किया। पोपलीला और गुरुडम के जनक पुराणों का जो पर्दाफाश ऋषि ने किया उसे देखकर समस्त संसार चकित रह गया। मूर्तिपूजा, अवतार, तीर्थ, मृतक श्राद्ध, तिलक, छाप आदि विविध साम्प्रदायिक बुराइयों के प्रवर्तक इन तथाकथित धार्मिक आचार्यों की तुलना महर्षि से नहीं की जा सकती। कहा तो ऋषि प्रतिपाद्य निराकार, सर्वशक्तिमान्, सर्वान्तर्यामी, सच्चिदानन्द परमब्रह्म और कहा साम्प्रदायिकों, के उपास्य राम और कृष्ण आदि जो स्वयं अपने कर्म के बन्ध

में फँसकर दुःखी हुये और जिन्होने अपने पूर्व जन्म कृत पापो को अपने दुःखों के लिये जिम्मेवार बताकर अवतार वाद की नींव हिला दी। देखो वाल्मीकीय रामायण मे श्री राम की उक्ति —

न मद्विधो दुष्कृत कर्मकारी,
मन्ये द्वितीयोऽस्ति वसुन्धरायाम् ।
शोकानुशोको हि परम्पराया
मामेति भिन्दन् हृदय मनश्च ॥
पूर्वं मया नून मभीप्सितानि,
पापानि कर्माण्यसकृत् कृतानि ।
तत्रायमद्यापतितो विपाको
दुःखेन दुःख यदहं विशामि ॥
(आरण्यकाण्ड सर्ग ६३।३—४)

इसके बाद एक बार फिर निर्गुण उपासना का युग आता है। नानक, कबीर, दादू, सुन्दरदास आदि सतो ने साकार उपासना की बुराइयों को समझ कर निर्गुण ईश्वर की उपासना आरम्भ की। इन मध्ययुगीन संतों का अध्ययन अत्यन्त स्वल्प था। वेद शास्त्रों की शिक्षाओं से अनभिज्ञ परन्तु अपने अनुभव की सत्यता के आधार पर इन्होंने मूर्तिपूजा और अवतारवाद का खण्डन किया। जहा इन्होंने वैष्णव परम्परा से चले आने वाले पौराणिक मत का खण्डन किया वहां वैदिक कर्म काण्ड का विरोध भी किया। ये लोग प्राय संसार की उन्नति से उदासीन वैरागी लोग हुआ करते थे, इसलिये इन्होंने जीवन के विस्तार की अपेक्षा उसके संकोच को ही अधिक महत्त्व दिया है। इन्होंने लोगों के दिलों में वैराग्य की भावना को जागृत किया, परन्तु वह सच्चा वैराग्य नहीं था, वह भी सांसारिक बाधाओं से छुटकारा पाने की मनोवृत्ति। 'अजगर करे न चाकरी, पछी करे न काम' दास मलूका कह गये सबके दाता राम ॥, इस सत वाणी के द्वारा जिस भाग्यवाद का प्रचार किया गया, स्वामी दयानन्द उसके विरोधी थे। वे पुरुषार्थवादी थे और उनका दृढ विश्वास था कि यदि मोक्ष प्राप्त करना है तो वह दुनिया से उस पार जाकर नहीं किया जा सकता। मनुष्य जीवन की सफलता कर्म करने मे है न कि कर्म से उदासीन होकर गोमुखी मे हाथ डाल कर बैठ जाने मे–जैसा कि कविवर रवीन्द्र नाथ ने कहा है—"हे साधक, ईश्वर इस गोमुखी मे नहीं है, वरन् ईश्वर तो वहा है जहा किसान तपती हुई धूप मे हल चला रहा है।'

यह पहले कहा जा चुका है कि ये सन्त चूकि विद्या के विषय मे प्राय नितान्त अशिक्षित थे और कभी कभी अहंकार वश वेदादि शास्त्रों की निन्दा भी कर जाते थे' इसलिये ऋषि ने इनके आशय की प्रशसा करते हुये गुरु नानक के सिद्धान्तों की समालोचना के प्रकरण में लिखा कि "नानक जी का आशय तो अच्छा था, परन्तु विद्या कुछ नहीं थी"। इसी प्रकार गुरु ग्रन्थ के इस वचन—" वेद पढ़त ब्रह्मा मरे चारों वेद कहानी, संत की महिमा वेद न जानी ॥,, की स्वामी जी ने कड़ी टीका की है क्योंकि द के महान् विद्वान् ऋषि दयानन्द उन वेदों क झूठी निन्दा कभी सहन नहीं कर सकते थे जिनके लिये वैशेषिक सूत्रों ने लिखा है—'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्' अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान ने से वेदों का प्रामाण्य है।

इसी प्रकार समय के साथ २ भारत के धर्म और राजनीति में परिवर्तन होने लगा। अंग्रेजों

का राज्य स्थिर हुआ और उनकी शासन नीति लार्ड मैकाले के शब्दों मे इस प्रकार निर्धारित हुई—

We must do our best to form a class of persons, Indian in blood and colour but English in tastes, in opinions, in morals and in intellect अर्थात् हमे एक ऐसे वर्ग का निर्माण करना है जो शरीर से तो भारतीय हो, परन्तु विचारों और भावनाओं से अंग्रेज हो। अंग्रेजों का हमेशा यह उद्देश्य रहा कि वे हम लोगों की राजनैतिक स्वतत्रता तो छीने ही, साथ ही साथ हमे स्वदेशी धर्म और सस्कृत से वंचित रक्खा जावे। ऐसे समय मे राजा राम मोहन राय ने बगाल मे ब्रह्मसमाज की स्थापना की और उसके द्वारा धार्मिक सुधारों की नींव डाली। सतीप्रथा, मूर्तिपूजा आदि बुराइयों के राजाराम मोहन राय कट्टर विरोधी थे, परन्तु धर्म मे उनकी गति केवल उपनिषदों तक ही थी, जैसा कि सुप्रसिद्ध योगी श्री० अरविन्द ने लिखा है।"

Ram Mohan Roy stopped short at the Upnishads, Dayanand looked beyond and perceived that our true original seed was the Veda

राजा राममोहन राय यद्यपि शुद्ध रूप में आर्य धर्म का उद्धार करना चाहते थे परन्तु पाश्चात्य सभ्यता का रग उन पर बहुत कुछ चढ चुका था और उस रंग से भारतियों को रंगना उनकी उन्नति के लिये वे बहुत आवश्यक समझते थे। जैसा कि वर्तमान युग के सुप्रसिद्ध विचारक श्री०रौमा रौला ने लिखा है।"

Raja Ram Mohan Roy went so far as to wish his people to adopt English as their universal language, to make India Western socially and then to achieve independence and enlighten the rest of Asia (Life of Ramakrishna Paramhansa P 112)

महर्षि दयानन्द ब्रह्म समाज की इस प्रवृत्ति के कट्टर विरोधी थे। वे इसे देश और समाज के लिये अत्यन्त घातक समझते थे। श्री० केशवचन्द्र सेन ने तो इस प्रवृत्ति को और भी बढा दिया था। उन्होंने पाश्चात्य सभ्यता को ही नहीं अपनाया था बल्कि उनका झुकाव ईसाइयत की ओर भी बहुत अधिक था। सन् १८७६ मे दिये गये एक व्याख्यान मे श्री० सेन की यह मनोवृत्ति स्पष्ट झलकती है। उस व्याख्यान का एक अंश यह है—

My Christ, my sweet Christ, the brightest jewel of my heart, the necklace of my soul, for twenty years have I cherished Him in my miserable heart श्री रौमा रौला ने इस पर टिप्पणी करते हुये लिखा है।"

Christ had touched him and it was to be his mission in life to introduce him to the Brahmo Samaj Keshava not only accepted and adopted Christian trinity, but extolled it with greatness and was enlightened with it He called it loftiest expression of the world's religious consciousness" केशव बाबू के इन विचारों को लिखते हुये श्री० रौला लिखते

हैं—"Did any thing still separate him from Christianty" महर्षि दयानन्द ने ब्राह्म समाज की इस पाश्चात्य प्रियता के विरुद्ध बड़े जोर से आवाज उठाई। अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के ११ वें समुल्लास मे ब्राह्म समाज कीसमालोचना करते हुये वे लिखते हैं। "जो कुछ ब्राह्म समाज और प्रार्थना समाज ने ईसाई मत में मिलने से थोड़े मनुष्यों को बचाया और कुछ २ पाषाणादि मूर्तिपूजा को हटाया, अन्य जाल ग्रन्थों के फन्दे से भी कुछ बचाया, इत्यादि अच्छी बातें हैं। परन्तु इन लोगों मे स्वदेश भक्ति बहुत न्यून है। ईसाइयों के आचरण बहुत से लिये हैं। अपने पूर्वजों की बड़ाई करना तो बहुत दूर रहा, उसके बदले पेट भर निन्दा करते हैं। व्याख्यानों मे ईसाई आदि अ ग्रेजों की प्रशंसा करते हैं परन्तु ब्रह्मादि महर्षियों का नाम भी नहीं लेते।" इन महत्त्वपूर्ण वाक्यों से जहा ऋषि दयानन्द की उज्वल देश भक्ति का परिचय मिलता है वहा ‍ ्ह्मसमाज के नेताओं से उनका भेद भी स्पष्ट प्रतीत हो जाता है। आर्य संस्कृति और सभ्यता का महत्त्व समझते हुये ऋषि दयानन्द पाश्चात्य सभ्यता की अन्धाधुन्ध नकल को हानिकारक समझते थे। महर्षि के इस विषयक अद्‌भुत कार्य पर प्रकाश डालते हुये श्री० रोमां रोला ने ठीक ही लिखा है।"

"Dayanand alone hurled the defiance of India against her invaders He declared war on Christianity and his heavy massive sword cleft it asunder'

भारतीयता का पोषक दयानन्द प्रत्येक क्षेत्र मे राष्ट्रीयता देखना पसन्द करता था। ब्राह्मसमाजवालों की पश्चिम पूजा उसे नहीं रुची। उसने उसका खुल कर विरोध किया। और यह कह दिया कि "कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।" (सत्यार्थ प्रकाश) यहा यह स्मरण रखना चाहिये कि ब्राह्मसमाज के प्राण केशव बाबू यज्ञोपवीत धारण नहीं करते थे और ऋषि दयानन्द द्वारा निमन्त्रित दिल्ली दरबार के अवसर पर किये गये धर्म सम्मेलन मे उन्होंने वेदों की प्रामाणिकता को अस्वीकार कर दिया था।

ब्राह्मसमाज के बाद ही ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। ऋषि की प्रतिभा और योग्यता ने समस्त संसार को चकित कर दिया और उससे आकर्षित होकर अमेरिका मे थियोसोफी मत के प्रवर्तक कर्नल हेनरी एस० आलकाट और मैडम एह०पी०बलैवेट्स्की ने ऋषि की शिष्यता स्वीकार की। उन्होंने थियोसोफीकल सोसाइटी को आर्य समाज की शाखा घोषित कर दिय और वैदिक धर्म का महत्त्व स्वीकार कर लिया। परन्तु थियोसोफी के सचालकों का अन्त करण शुद्ध नहीं था। वे स्वार्थ की भावना को लेकर आर्य समाज में आये थे। वास्तव में वे ईश्वर में अविश्वास करने वाले प्रच्छन्न नास्तिक थे। उनका एक मात्र यही उद्देश्य था कि आर्यसमाज की आड़ में अपने सिद्धान्तों का प्रचार करें। (शेष अगले अंक में)

बिना विचार किये ही वेदों का तिरस्कार नहीं किया अपितु वेदों के सत्यार्थ को समझ कर उन्होंने ज्ञान की वह कुञ्जी प्राप्त कर ली जिसके कारण वे सनातन धर्म का उद्धार करने मे समर्थ हो सके।

बुद्ध के निर्वाण के पश्चात् बौद्धो और ब्राह्मणों का विरोध बढने लगा। विरोध के कारण वही थे जो स्वय बुद्ध के समय में थे। जन्मानुसार वर्ण व्यवस्था यज्ञ, मे पशु हिंसा आदि बातों को लेकर पारस्परिक वैमनस्य बढ़ने लगा। इसी बीच सम्राटों की सरक्षता मे बौद्ध धर्म ने खूब प्रचार पा लिया और वैदिक धर्म के धरा धाम से उठ जाने के दिन आ गये। बौद्ध विद्वान् चन्द्रकीर्ति ने जिस कडे लहजे से वैदिक धर्म की आलोचना की उसका उत्तर कोई भी ब्राह्मण पडित नहीं दे सका।

ऐसे ही सक्रान्ति काल मे शकराचार्य ने एक बार फिर से वैदिक धर्म के उद्धार का झण्डा उठाया। यद्यपि शंकरस्वामी के दार्शनिक मतवादों और महर्षि के दार्शनिक सिद्धान्तों मे आकाश पाताल का अन्तर है फिर भी वैदिक धर्म की रक्षा के लिये जो प्रयत्न शकराचार्य ने किये थे स्वामी दयानन्द उनका महत्त्व भली प्रकार समझते थे। देश की धार्मिक अवस्था का वर्णन करते हुये महर्षि लिखते हैं, "बाईससौ वर्ष हुये कि एक शकराचार्य द्रविड देशोत्पन्न ब्राह्मण ब्रह्मचर्य से व्याकरणादि शास्त्रों को पढ़ कर सोचने लगे कि अहह! सत्य आस्तिक वेदमत का छूट जाना और जैन नास्तिक मत का चल पड़ना बडी हानि की बात हुई है इनको किसी प्रकार हटाना चाहिये।" सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास।

हम यहा अद्वैत मत की निस्सारता के विषय में अधिक नहीं लिखना चाहते। इतना ही कहना पर्याप्त है कि यह सिद्धान्त वैदिक नहीं है। वेद ने तो 'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया' आदि मन्त्रों मे स्पष्ट रूप से तीन अनादि सत्ताओं की ओर सकेत किया है। ईश्वर, जीव प्रकृति यही तीन अनादि पदार्थ सृष्टि रचना के कारण हैं। वेदों की कोई ऋचा शाकर मायावाद की पुष्टि नहीं करती, तब भला, 'ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या' का सिद्धान्त कैसे सत्य हो सकता है? वेदान्त के प्रचार से दो स्पष्ट हानिया हुई। लोगों ने जीव और ब्रह्म की मिथ्या एकता को समझकर ईश्वरोपासना से मुख मोड लिया। आज भी अद्वैत वेदान्त के समर्थक तुच्छाति तुच्छ व्यक्ति भी अपने को ब्रह्म कहने का दावा रखते हैं और ईश्वर प्राप्ति के लिये उपासना, तप, स्वाध्याय, सत्सग आदि की कोई आवश्यकता नहीं समझते। लेखक की भेंट एक ऐसे ही कन फटे नाथ सम्प्रदाय के घरबारी साधु से हुई। उसने कहा कि मुझे किसी प्रकार की सध्योपासना और धर्म कर्म की आवश्यकता नहीं है, मैं तो स्वय ब्रह्म हूँ। दूसरी हानि जो अद्वैत सिद्धान्त को मानने से होती है वह है जगन्मिथ्या की भावना और उसका कुपरिणाम। कहा तो वेदों की यह शिक्षा कि 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा' (यजु०४०।२) सौ वर्ष पर्यन्त कर्तव्य पालन की भावना से कर्म करना चाहिये और कहा इसके विपरीत संसार को मिथ्या बतलाकर पलायन मनोवृत्ति

१—वेद प्रामाण्य कस्यचित् कर्तृवाद, स्नाने धर्मेच्छा जातिवादावलेप।
सन्तापारम्भ पाप हानाय चेतिध्वस्त प्रज्ञाना पच लिंगानि जाड्ये॥

(पृ० ४१८ का शेष)

काटना शुरू कर दिया इस तरह उन्होंने एक पुराने जंगल को साफ करके उसे रहने लायक बना दिया। हमे चाहिये कि हम उनके मिशन को समझें और पूरा करे अर्थात् हम हिन्दू धर्म को प्रगति शील और आधुनिक जीवन के उपयुक्त बनाए। उसे एक ऐसा धर्म बनाएं जिसकी संस्कृति, परम्परा और सिद्धान्तो मे बुराई के लिये कोई स्थान न हो। हिन्दू धर्म उन्नति मे बाधक न होना चाहिये। यदि इस ससार मे सत्य को ही अपना प्राण समझने वाला कोई धर्म है तो वह हमारे पुरखो का धर्म है। स्वामी दयानन्द की शिक्षाए सबके दिलों मे घर कर चुकी है। अब तो वह जमाना आ गया है जब कि एक खास सम्प्रदाय ही अपने आपको इन शिक्षाओं का ठकेदार नहीं कह सकता। अब ये शिक्षाए हिन्दू धर्म का अङ्ग हो जानी चाहिये ॥

(परम माननीय चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य जी के रामलीला मैदान मे ३१—१०—४८ को आयोजित ऋषि निर्वाणोत्सव मे दिये भाषण से ("भारतीय समाचार" १ दिस० १६४८ के अंक से उद्धृत पृ० ३०६—३१०)

अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सिटी के सस्थापक सर सैय्यद अहमद खां:—

"निहायत अफसोस की बात है कि स्वामी दयानन्द साहब ने जो सस्कृत के बडे आलिम और वेदों के बहुत बडे मुहक्किक थे ३० वीं अक्तूबर १८८३ को ७ बजे शाम के अजमेर मे इन्तकाल किया। इलावा इल्म ओ फजल के वे निहायत नेक और दरवेश सिफ्त आदमी थे। इन के मुतअक्कद (अनुयायी) इनको देवता मानते थे और बेशक वे इसी लायक थे। वह सिर्फ ज्योति स्वरूप निरकार के सिवा दूसरे की पूजा जायज नहीं रखते थे। हमसे और स्वामी दयानन्द मरहूम से बहुत मुलाकात थी। हम हमेशा उनका निहायत अदब करते थे क्योकि ऐसे आलिम और उम्दा शख्स थे कि हरएक मजहब वाले को इनका अदब लाजिम था। बहरहाल एसे शख्स थे जिनका मसल इस वक्त हिन्दुस्तान म नहीं है और हरएक शख्स को उनकी वफात (मृत्यु) का गम करना लाजमी है कि ऐसे बेनजीर शख्स (अनुपम मनुष्य) इनके दरम्यान से जाता रहा।'

(अलीगढ इन्स्टीच्यूट मैगजीन ६ नव० १८८३)

जगत्प्रसिद्ध विचारक श्री रोमा रोलाः—

ऋषि दयानन्द ने भारत के शक्ति शून्य शरीर मे अपनी अजेय शक्ति, अविचल कर्मण्यता तथा सिंह समान पराक्रम फूक दिये। स्वामी दयानन्द सरस्वती उच्चतम व्यक्तित्व के पुरुष थे। उनके अन्दर कर्मयोगी, विचारक और नेता के उपयुक्त प्रतिभा ये सभी प्रकार के दुर्लभ गुण थे। स्वामी दयानन्द ने अस्पृश्यता के अन्याय को सहन नहीं किया। उनसे अधिक अस्पृश्यों के अपहृत अधिकारा का उत्साही समर्थक दूसरा कोई नहीं हुआ। भारत मे स्त्रियों की शोचनीय दशा को सुधारने मे भी दयानन्द ने बडी उदारता व साहस से काम लिया। वास्तव में राष्ट्रीय भावना और जन जागृति के विचार को क्रियात्मक रूप देने मे सबसे अधिक प्रबल शक्ति उन्हीं की थी। वे पुनर्निर्माण और राष्ट्र सगठन के अत्यन्त उत्साही पैगम्बरों मे से थे।

(Life of Ram Krishna Param Hans by Romain Rolland P 146, 162-163)

❀ ओ३म् ❀

महर्षि महिमा

(कवयिता—श्री वि वा रुद्र मित्र शास्त्री "कमलेश")

जीवन दीप जला कर ऋषि ने जग की ज्योति जगाई ।
घोर निराशा निशा विश्व से पल मे दूर भगाई ॥

(१)

धन्य कार्तिकी अमा धन्य सन्ध्या की स्वर्णिम वेला ।
धन्य धन्य वह रात कि जिसमे लगा अलौकिक मेला ॥
धन्य काल, पल, क्षण, मुहूर्त्त, घड़ी, निमेष सुहाया ।
धन्य दिवाली पर्व कि जिसको ऋषि ने धन्य बनाया ॥
धन्य अलौकिक महाशक्ति की दिव्य प्रभा छवि छाई ॥

(२)

एक ओर थी घनी रात विकराल काल-सी भारी ।
और दूसरी ओर चमकती ज्योति सुनहली प्यारी ॥
वेद- ज्ञान से विमुख विश्व व्याकुल व्यापन्न पड़ा था ।
किं कर्त्तव्य विमूढ़ चतुष्पथ पर अति दीन खड़ा था ॥
दयानन्द ने दिव्य धाम से दया दृष्टि दर्शाई ॥

(३)

आये कितने पुरुष विश्व मे बडे बडे राजेश्वर ।
साधु, सन्त, सन्यासी, ऋषि, मुनिवर, योगी. योगीश्वर ॥
लोलुप स्वार्थपरायण जन कितने पापी पाखण्डी ।
फैले मत पथ, चली कुपूजा काली दुर्गा चण्डी ॥
युग द्रष्टा ऋषि ने ही जग को सच्ची राह दिखाई ॥

(४)

दूर किया तम तोम व्योम से विमल विभा विकसाई ।
जन मन की भय भीति मिटा कर शक्ति सबलता लाई ॥
नव निर्माण किया नव युग का, अखिल विश्व मानव का ।
दलन किया "कमलेश" दु ख दारिद्रय द्वेष दानव का ॥
निज निर्वाण सुपथ पर ऋषि ने आज अमरता पाई ॥

यजर्वेद द्वारा ऋषि परिचय

(प्रोफेसर विश्वनाथ जी वदोपाध्याय)

महर्षि दयानन्द महायुग के प्रवर्त्तक थे। शिक्षा, विद्या, सामाजिक जीवन, राष्ट्रजीवन, अन्तर्राष्ट्र जीवन, धार्मिक जीवन आदि नाना क्षेत्रों मे महर्षि के मौलिक विचार उन के ग्रन्थो मे भरे पडे हैं। आज मैं उन के विद्या क्षेत्र के एक अंश पर कुछ प्रकाश डालना चाहता हूँ। महर्षि ने वेद भाष्य भी किया जो कि अपूर्ण रह गया है। यह वेद भाष्य चमत्कारी भाष्य है। महर्षि से पूर्व वेदो को याज्ञिक पद्धति के शिकजे मे सायण, माधव आदि वेद भाष्य कारो ने जकड दिया था। साथ ही ये भाष्यकार, यह मानते हुए भी कि वेद नित्य हैं, उन मे अनित्य इतिहास का लवलेश भी नहीं, ऐसे वेदभाष्य करने मे असमर्थ रहे जिनमे कि अनित्य इतिहास न पाया जाय। इन भाष्यकारो ने वेदा को बहु-देवतावादी का भी रूप दे दिया। इत्यादि नाना आक्षेपयोग्य पद्धतिया इन भाष्यकारों ने चला दी थीं। लोग यह भी समझने लग पडे थे कि वेदों म अध्यात्म विद्या का वर्णन नहीं है। यह भ्रम भी इन वेदभाष्यकारों के भाष्यो के कारण हुआ। इन वेद भाष्यकारों के पीछे के विद्वान भी इन बहावो मे बह निकले। ये अपने आप को स्वतन्त्र विचारक कहते थे, परन्तु वदो के सम्बन्ध में इन्होंने अपने विचारों को स्वतन्त्र न रहने दिया। सम्बन्ध मे वे सायण तथा माधव के ही चेले बने रहे। पाश्चात्य तथा पूर्व य विद्वान् इस सम्बन्ध मे एक से हैं। महर्षि दयानन्द ने इस प्रचलित अन्ध परम्परा को तोड डाला, और उन्होंने एक चमत्कारी भाष्य की नींव डाली। महर्षि ने वेदों मे अनित्य इतिहास नहीं माना। महर्षि नहीं मानते कि वेदों मे किसी भी ऋषि का—जोकि किसी विशेषकाल मे हुआ हो, वर्णन हुआ है। महर्षि मानते थे कि वेदो के असली भाष्य वे हो सकेंगे जोकि वैदिकपरिभाषाओ के आधार पर रचे गये हों। आज सक्षेप मे मै ऋषियों के सम्बन्ध मे कुछ परिचय देना चाहता हू। इस सम्बन्ध में मैं यजुर्वेद के कतिपय प्रमाण उपस्थित करू गा। और साथ ही शतपथ आदि आर्ष ग्रन्थों के भी प्रमाण उपस्थित करू गा। यजुर्वेद के तेरहवें अध्याय से प्रतीत होता है कि यजुर्वेद की दृष्टि मे वसिष्ठ, भारद्वाज, जमदग्नि, विश्वामित्र, विश्वकर्मा,—ये ऋषि नाम किन्हीं ऐसे व्यक्तियों के नहीं है जो कि किसी विशेष समय के हों, और अनित्य हो।

१३। ५४ यजु मे लिखा है कि "वसिष्ठ ऋषि प्राण गृह्णामि"। इस का अभिप्राय यह है कि "वसिष्ठ ऋषि" का अर्थ है "प्राण"। इस उद्धरण मे वसिष्ठ शब्द के साथ ऋषि शब्द का भी प्रयोग किया गया है जोकि बड़े महत्त्व का है। लोग ऋषि शब्द द्वारा मनुष्य ऋषि का ग्रहण किया करते हैं। परन्तु यहा प्राण को वसिष्ठ ही नहीं कहा, अपितु वसिष्ठ ऋषि कहा है। वसिष्ठ का अर्थ होता है "बसाने का सर्व श्रेष्ठ

साधन"। शरीर मे जो इन्द्रिया बस रही हैं उन के बसाने का सर्वश्रेष्ठ साधन "प्राण" ही है। उपनिषदों मे भी एक गाथा द्वारा इस कथन को परिपुष्ट किया गया है। वहा कहा है कि "शरीर मे कौन बडा है इस सम्बन्ध मे इन्द्रियों मे और प्राण मे विवाद खडा हो गया। इन्द्रियों मे से प्रत्येक इन्द्रिय ने अपनी २ महिमा का बखान किया और अपनी २ शक्ति के प्रदर्शन के लिये प्रत्येक इन्द्रिय एक २ करके शरीर को त्याग कर चलने लगी। परन्तु प्रत्येक इन्द्रिय ने यह देख लिया कि उस के चल जाने पर भी शरीर का काम चलता जा रहा है। उस २ इन्द्रिय का अभिमान भग हो गया। अन्त मे प्राण ने भी अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। प्राण के उखडते ही शरीर की सब इन्द्रिया उखडने लगीं। अन्त मे इन्द्रिया ने प्राण की ज्येष्ठता और श्रेष्ठता को स्वीकार किया। तब प्राण का नाम "वसिष्ठ" सार्थक हुआ। इस प्रकार उपनिषद् म भी वसिष्ठ का अर्थ प्राण किया है। इस मन्त्र पर शतपथ ब्राह्मण मे लिखा है कि "प्राणो वै वसिष्ठ ऋषि, यद्वै नु श्रेष्ठ तेन वसिष्ठो ऽथ यद्वस्तृतमो वसति तेनो एव वसिष्ठ" (श ब्रा ८।१।१।६)। शतपथ के इस प्रमाण मे कहा है कि प्राण चू कि श्रेष्ठ हैं वसुरूप है इस लिये प्राण वसिष्ठ है तथा चू कि प्राण शरीर के बसाने मे सर्वश्रेष्ठ साधन है इस लिये भी प्राण वसिष्ठ है। इसलिये वैदिक विद्वानों को चाहिये कि वैदिक स्वाध्याय मे यदि मन्त्रों मे वसिष्ठ पद आए तो वे उस से वसिष्ठ नाम वाले किसी निश्चित मनुष्य का ग्रहण न करे। अपितु वे वसिष्ठ पद द्वारा=प्राण, प्राणायाम, प्राणाभ्यासी, प्राणशक्ति वाला, सन्यासी,—ऐसे और इस प्रकार के नित्य अर्थों का ही ग्रहण किया करे। तथा जिस प्राणाभ्यासी की प्राणशक्ति मे दिव्यता आ गई हो उसे ही वे "वसिष्ठ ऋषि" कहे।

भरद्वाज ऋषि के सम्बन्ध में १३।५५ यजु मे लिखा है कि "भरद्वाज ऋषि—मनो गृह्णामि"। अर्थात् भरद्वाज ऋषि का अर्थ है "मन"। आचार्य महीधर इस पर लिखते है कि "भरत् का अर्थ है, धारणकरने वाला, तथा वाज का अर्थ है—अन्न। अर्थात् अन्न का धारण करने वाला। मन अन्न का धारण करता है, इस लिये मन को भरद्वाज कहते हैं। क्योंकि मन के स्वस्थ होने पर ही अन्न के खाने मे इच्छा उत्पन्न होती है" इस मन्त्र के शतपथ ब्राह्मण मे भी लिखा है कि "मनो वै भरद्वाज ऋषि, अन्न वाज, यो वै मनो बिभर्त्ति सो ऽन्न वाज भरति, तस्मान्मनो भरद्वाज ऋषि" (शतपथ ८।१।१।६)। इस का अभिप्राय यह है कि "मन निश्चय से भरद्वाज ऋषि है। वाज का अर्थ है,- अन्न। जो मन को धारण करता है वह वाज अर्थात् अन्न को धारण करता है। इस लिये मन भरद्वाज ऋषि है"।

इसलिये वेदों में जहा २ भरद्वाज नाम आवे वहा अर्थ लेना चाहिये मन, या मन वाला, मनस्वी, इत्यादि।

जमदग्नि ऋषि के सम्बन्ध मे १३।५६ यजु० मे लिखा है कि "जमदग्नि ऋषि चक्षु गृह्णामि"। अर्थात् जमदग्नि ऋषि का अर्थ है चक्षु, आख। इस पर महीधराचार्य लिखते हैं कि "जमदग्नि ऋषि, जमति जम्पश्यतीति जमत्। अञ्चति सर्वत्र गच्छतीति अग्नि।

ऋषति जानाति ऋषि । ईदृशं चक्षु"। अभिप्राय यह है कि "जमदग्निऋषि" मे तीन पद हैं। जमत्, अग्नि, और ऋषि। जमत् का अर्थ है,-देखने वाला। अग्नि का अर्थ है,—सर्वत्र गति करने वाला, पहुचने वाला। ऋषि का अर्थ है,—जानने वाला। आख देखती है, तारा गण आदि दूर २ के स्थानों तक आख की गति है, तथा इस द्वारा ज्ञान होता है। इन तीन गुणों की सत्ता के कारण चक्षु को जमदग्नि ऋषि कहते हैं। शतपथ ब्राह्मण मे भी इसी प्रकार का लेख मिलता है। 'चक्षुर्वै जमदग्निऋषि, यदेनेन जगत् पश्यति, अथो मनुते, तस्माच्चक्षु-र्जमदग्नि ऋषि (८।१।२।३)।

इस लिये यह स्पष्ट है कि वेदों मे यदि जमदग्नि ऋषि नाम आए तो इस द्वारा चक्षु का ग्रहण करना चाहिये। या दिव्य दृष्टि दिव्यदृष्टि वाला, आख वाला,—इत्यादि अर्थों का ग्रहण करना चाहिये।

विश्वामित्र ऋषि के सम्बन्ध मे १३।५७ यजु० म लिखा है कि "विश्वामित्र ऋषि श्रोत्र गृह्णामि"। अर्थात् विश्वामित्र ऋषि का अर्थ है,—श्रोत्र, अर्थात् कान। महीधराचार्य लिखते हैं कि "विश्वामित्र ऋषि, विश्व सर्वं मित्र येन। मित्रे चर्षौ इति दीर्घ, श्रोत्रम्। श्रद्धयान्यवाक्य श्रवणात् सर्वं मित्रं भवति, अत विश्वामित्र ऋषिरूप श्रोत्रम्"। इस का अभिप्राय यह है कि "विश्वामित्र का अर्थ है,—श्रोत्र। क्योंकि श्रोत्र द्वारा सब मित्र हो जाते हैं, जिस किसी के कथन को श्रद्धा से सुना जाय वह उस का मित्र बन जाता है। इस लिये विश्वामित्र ऋषि का अर्थ है,—श्रोत्र।"

इस लिये वेदों मे यदि विश्वामित्र ऋषि नाम आए तो इस द्वारा श्रोत्र, दिव्य श्रोत्र, दिव्यश्रोत्र वाला,—इत्यादि अर्थों का ग्रहण करना चाहिये। शतपथ ब्राह्मण मे भी लिखा है कि "श्रोत्रं वै विश्वामित्र ऋषि, यदेनेन सर्वत शृणोति, अथो यदस्मै सर्वतो मित्रं भवति, तस्मात् श्रोत्र विश्वामित्र ऋषि (८।१।२।६)।

इसी प्रकार विश्वकर्मा ऋषि का वर्णन १३।५८ यजु म हुआ है। इस मन्त्र मे लिखा है कि "विश्वकर्मा ऋषि वाच गृह्णामि"। इस से स्पष्ट प्रतीत होता है कि "विश्वकर्मा ऋषि का अर्थ है, वाक्, अर्थात् वाणी। महीधराचार्य लिखते हैं कि "विश्व सर्वं करोतीति विश्वकर्मा ऋषि वाक् एव वाचा सर्वं कुरुते"। अभिप्राय यह कि "विश्व अर्थात् सब कामो को जो करता है वह विश्वकर्मा है। वाक् द्वारा सब काम किये जाते है इस लिये वाक अर्थात् वाणी,—विश्वकर्मा ऋषि है"। शतपथ ब्राह्मण मे भी विश्वकर्मा ऋषि का यही अर्थ लिखा है। यथा —"वाक् वै विश्वकर्मा ऋषि, वाचा हीद सर्वं कृतम्, तस्मात वाक् विश्वकर्मा ऋषि (८।१।२।६)

इस प्रकार पाच ऋषियों के स्वरूप इन पाच मन्त्रों मे दर्शाए गये है। वेद जब अपनी परिभाषाओं की स्वय व्याख्या करत है, तब उस व्याख्या से भिन्न प्रकार के अर्थों के ग्रहण करने मे हमे स्वतन्त्रता नहीं रहती। अत इन पाच ऋषियों के नाम जब २ वेदमन्त्रों मे मिलें तो व्याख्याकारो को वेदोक्त अर्थ ही ग्रहणकर तदनुसारी व्याख्याए करनी चाहिये। वे ही व्याख्याए सत्य माननी चाहियें। अगले किसी लेख मे अन्य ऋषियों के सम्बन्ध मे वेद की परिभाषाओं को प्रकट किया जायगा।

—०()०—

मेरी तीन आग्रह पूर्वक मांगें

(१)

दयानन्द पुरस्कारनिधि

सार्वदेशिक सभा की इस एक लाख रुपये की अपील को शीघ्र पूरा कीजिये। क्योंकि बिना उच्च कोटि के साहित्य के आर्य्य समाज की प्रगति रुकी हुई है। आपकी आमदनी पर यह मुल्य भार (फर्स्ट चार्ज) होना चाहिये। सब काम छोडकर पहले इसकी ओर ध्यान दीजिये। जिससे पुरस्कार का काम आरम्भ कर दिया जाय। साहित्यकारों को पुरस्कृत करने से ही प्रोत्साहन हो सकेगा। देर न कीजिये।

(२)

वैदिक कल्चर (अग्रेजी में)

बढिया जिल्द मूल्य ३॥)। सार्वदेशिक सभा ने मेरी लिखी यह पुस्तक आर्य्य समाज की आवाज उन लोगों तक पहुँचाने के लिये छपाई है जो अगरेजी के बिना आर्य्य समाज की बात नहीं सुन सकते। आप शीघ्र खरीद कर उसको ऐसे लोगो तक पहुँचाइये। **कोई सभा या सज्जन इसे मुफ्त न मांगें।** इस की बिक्री से मैं शीघ्र एक दूसरी पुस्तक छपवाना चाहता हू। Swami Dayanand s Views on Great Questions (बडी समस्याओ पर ऋषि दयानन्द के विचार) यह पुस्तक बहुत दिनों से लिखी पडी है। जब तक 'वैदिक कलचर' नहीं बिक जाती दूसरी पुस्तक आरम्भ नहीं की जा सकती।

'वेद पढो' माला के ट्रैक्ट

[illegible] गभग एक फार्म के होंगे। इन मे वेदों के सूक्तों का हिन्दी अ [illegible] रेजी मे सरल अर्थ होगा लम्बी चौडी व्यारया न होगी। आकार लगभग १६ पृष्ठ दाम सवा आना (पाच पैसे) मात्र। इस से वेद पाठ मे लोगों की रुचि बढेगी। यह भी सार्वदेशिक सभा की ओर से छपेगी। कम से कम ५० प्रति की माग पहले से आनी चाहिये। इन को तभी छापना आरम्भ किया जायगा जब देख लिया जाय कि माग कैसी है। अत फौरन लिखिये। अभी आरम्भमे १० ट्रैक्ट छापने का विचार है।

नोट —इन योजनाओ से सीधा या टेढा किसी प्रकार का भी उजरत या मुनाफे का लाभ नहीं होगा। केवल वेद प्रचार ही इसका उद्देश्य है। किसी प्रकार की भ्रांति न हो इस लिये मैं ऐसा स्पष्ट लिख रहा हू।

गगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री सार्वदेशिक सभा बलिदान भवन,
दिल्ली।

आर्यकुमार जगत्

संयुक्त प्रान्तीय आर्यकुमार सम्मेलन

आप को यह सूचित करते हुये अपार हर्ष होता है कि १४ वां सयुक्त प्रान्तीय आर्यकुमार सम्मेलन २६, २७, २८ सितम्बर १९४९ ई० को राजा ज्वालाप्रसाद नगर (आर्य समाज मन्दिर) बिजनौर में समारोह पूर्वक मनाया गया।

सम्मेलन के अध्यक्ष प्रांत के प्रसिद्ध आर्य विद्वान् तथा विधान-परिषद् के सदस्य श्री प० अलगूराय जी शास्त्री एम० एल० ए० थे। तथा उद्घाटन समारोह भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् के प्रधान श्री चौ० चरणसिंह जी सभा-सचिव सयुक्त प्रान्तीय सरकार द्वारा सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर राष्ट्र तथा आर्य जगत् के महान् नेता, विचारक तथा विद्वान् पधारे। अनेक उपयोगी तथा मनोरंजक आयोजन भी इस अवसर पर सम्पन्न हुए।

ईश्वर दयालु आर्य — स्वागताध्यक्ष
रघुवर दयालु आर्य — स्वागत मन्त्री

देहली प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद्

दिल्ली प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद् का वार्षिक अधिवेशन श्री प० धर्मदेव जी विद्या-वाचस्पति के सभापतित्व में ता० ११—९—४९ को इस प्रकार हुवा —

प्रधान—श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
उपप्रधान—श्री राजारामसिंहजी, श्री जगन्नाथजी
मन्त्री—श्री देवी दयाल जी
उप मन्त्री—श्री हरि सिंह जी, श्री सत्यदेव जी, श्री वेद प्रकाश जी
कोषाध्यक्ष—श्री गोविन्द राम जी

सत्याग्रही आर्य कुमारो की भव्य विजय

आर्य कुमार सभा, गोरखपुर की ओर से श्री सत्यव्रत जी आर्य प्रधान आर्य कुमार सभा की अध्यक्षता मे जन्म अष्टमी के अवसर पर मन्दिरो में वेश्या नृत्य एव अन्य सभी नृत्य कराने के विरोध मे सत्याग्रह किया गया। कुमारों के अतिरिक्त आर्य एव आर्येतर जनता ने भी सत्याग्रह मे भाग लिया था। सत्याग्रही जिन मन्दिरो में नृत्य हो रहे थे, उनमे जाकर शान्ति पूर्ण ढग से 'मन्दिरों मे नाच कराना पाप है', 'वेश्या नृत्य महा पाप है' आदि नारे लगाते तथा प्रार्थना करते थे कि अविलम्ब नृत्य बन्द किया जावे। इस प्रकार से अनेको मन्दिरो मे जाकर सत्याग्रहियो ने वेश्या नृत्य एवं अन्य सभी प्रकार के नृत्य बन्द कराये। आर्य कुमारों के इस कार्य से गोरखपुर की जनता अत्यन्त प्रभावित हुई। अनेको मन्दिर प्रबन्धको ने इस दुष्कृत्य के लिये क्षमा याचना की। सत्याग्रह पूर्ण सफल रहा।

प्रधान आर्य कुमार सभा
गोरखपुर

आर्यजगत—

आर्यनगर गाजियाबाद

आर्यनगर गाजियाबाद के प्लाटों की पर्याप्त सख्या में रजिस्ट्री हो चुकी है अतएव समस्त पट्टेदारों की एक बैठक ४-१०-४९ को बलिदान भवन मे नगर निर्माण की योजनाओं पर विचार करने के लिये बुलाई गई थी। इस बैठक के निश्चयानुसार आर्य नगर के निर्माणादि के लिये आर्यनगर सहयोग समिति (Co-operative Society) बनाने का निश्चय हुआ है। इस समिति के कार्य सचालन के लिए ७ सदस्यों की एक अस्थायी कार्यकारिणी समिति का निर्माण हुआ है जिसके मन्त्री श्री विश्वम्भरदास जी दिल्ली तथा कोषाध्यक्ष श्री लाला दीवानचन्द जी नया बाजार दिल्ली निर्वाचित हुए हैं। इस कार्य कारिणी को यह अधिकार दिया गया है कि वह शेष पट्टेदारो से इस समिति का सदस्य बनने की स्वीकृति प्राप्त करे। कार्यकारिणी के सदस्यों मे से सहयोग समिति के नियम व विधान बनाने के लिये ३ सदस्यों की एक उपसमिति नियुक्त की गई है। जो १५ दिन के भीतर नियम बनाकर कार्यकारिणी के सामने पेश करेगी। प्रारम्भिक व्यय के लिये ५) प्रति सदस्य प्रवेश शुल्क नियत किया गया जिसमे सम्प्रति २, ७) लिये जायगे। शेष बाद मे।

गगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मंत्री सार्वदेशिक सभा देहली

१ आज की बैठक के लिये श्री पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय सर्वसम्मतिसे प्रधान निर्वाचित हुए।

२ सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि आर्य नगर के निर्माणादि के लिये एक समिति बनाई जाय जिसका नाम आर्यनगर सहयोग समिति (Co operat ve Society) रखा जाय।

प्रस्तावक=श्री० बनारसीदासजी शैदा

अनुमोदक=श्री०ज्ञानी पिंडीदासजी

(ख) उपस्थित पट्टेदारों ने यह स्वीकार किया कि उनमे से प्रत्येक समिति का सदस्य है।

३ सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि इसके काम को सुचारु रूप से चलाने के लिये एक अस्थायी कार्य कारिणी समिति बनाई जाय जिसके ७ सभासद् हो और उन्हे अपने मे ४ तक सदस्य बढ़ाने का अधिकार दिया जाय।

४ (१) श्री० भोलानाथ शिवदयालु जी (२) श्री० विद्यासागर जी (३) श्री० विश्वम्भरदास जी (४) श्री० ज्ञानी पिंडीदास जी (५) श्री ला० बनारसीदास जी (६) श्री० पं० दीवानचन्द जी (७) श्री० द्वारिका दास जी मानकतला।

इस समिति के मत्री श्री० विश्वम्भरदास जी तथा कोषाध्यक्ष श्री० पं दीवानचन्द जी शर्मा सर्व सम्मति से निर्वाचित हुए।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र

(कृपया इसे भर कर स्वयं भेजें और अपने इष्टमित्रों से भिजवाएं

सेवा में,

श्री मन्त्री जी

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा,

बलिदान भवन, देहली

श्रीयुत मन्त्री जी, नमस्ते !

देश देशान्तरों में सार्वभौम वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति के प्रचार की व्यवस्था के उद्देश्य से स्थापित सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि की योजना को मैं अत्यावश्यक और उपयुक्त समझता हूँ और इस पुण्यकार्य की सहायतार्थ ' ' रु० की

तथा

राशि ~~अथवा~~ रु० के वार्षिक दान की प्रतिज्ञा करता हूँ । यह राशि आप की सेवा में भेजी जा रही है ।

भवदीय

ह०

नाम—

पूरा पता—

तिथि—

५ निश्चय हुआ कि आज की यह सभा सर्व सम्मति से इस कार्य कारिणी को अधिकार देती है कि वह शेष पट्टेदारों से इस समिति का सदस्य बनने की स्वीकृति प्राप्त करे।

६ यह सभा कार्य कारिणी के सदस्यों मे से निम्न लिखित सदस्यो की उपसमिति बनाती है जो १५ दिन के भीतर २ समिति के नियम व विधान बनाकर कार्यकारिणी के पास भेजे जो जनरल सभा मे स्वीकृति के लिये पेश करेगी।

(१) श्री० बनारसीदास जी (२) श्री० ज्ञानी पिंडीदास जी (३) श्री० भोलाराम शिवदयालु जी

७ सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि प्रारम्भिक व्यय के लिये ५) प्रति सदस्य प्रवेश शुल्क के रूप मे लिया जाय। इस समय २, २) प्राप्त किए जायं शेष बाद मे।

पट्टेदार महोदयों से निवेदन है कि वे इस विज्ञप्ति के मिलते ही सहयोग समिति की सदस्यता की स्वीकृति भेजदे जिससे समिति का कार्य वेग से चल सके और नगर निर्माण का कार्य शीघ्र ही आरम्भ हो सके। स्वीकृति के साथ ही शुल्क का धन भी भेजिये।

धन भेजने का पता—श्री० प० दीवानचन्द जी शर्मा शर्मा ऐड सस नया बाजार देहली।

सम्प्रति समिति का कार्यालय श्रद्धानन्द बलिदान भवन मे रखा गया है। सम्बद्ध सज्जन इस पते से पत्र व्यवहार करे। मुझसे मिलने का पता निम्न प्रकार है।

६३८ शिवाजी स्ट्रीट आर्य समाज रोड करौल बाग देहली।

विश्वम्भर दास
मंत्री
आर्य नगर गाजियाबाद सहयोग समिति

—*—

परन्तु सार्वदेशिक लिमिटिड एक कम्पनी है। कानून की दृष्टि में उसका सार्वदेशिक सभा से अलग अस्तित्व है। उसके डायरेक्टर अलग हैं। सार्वदेशिक सभा ने अपना पुराना प्रकाशन का काम अपने हाथ से अलग नहीं किया। वह पूर्ववत् चल रहा है। बादल को देखकर घड़े फोड़ देने की नीति को नहीं बर्ता गया। और न इस समय ऐसी कोई विचार धारा है। सार्वदेशिक मासिक पत्र भी पूर्ववत् सार्वदेशिक सभा के ही आधीन है। वह सार्वदेशिक लिमिटिड का पत्र नहीं बना।

परन्तु सार्वदेशिक सभा की ओर से कोई समुचित योजना ऐसी नहीं है जिससे यथेष्ट साहित्य तैय्यार किया जा सके। श्री नारायण स्वामी जी महाराज के उपनिषद् भाष्य के लिये पहले कुछ भक्त दान देते थे, उन्हीं से उनकी पुस्तक छप जाती है। श्री ब्रह्ममुनि जी ने कुछ किताबें लिखी वे भी येन केन प्रकारेण ही छप सकीं। उनकी कई किताबें जैसे 'योग का भाष्य' अभी छपने को पड़ा है। इस सबका कारण है धन का अभाव और जनता की उपेक्षा।

कलकत्ते के सम्मेलन के निश्चय की सम्पुष्टि में सार्वदेशिक सभा ने यह निश्चय किया है कि एक लाख रुपये की एक दयानन्द पुरस्कार निधि खोली जाय। उसके ब्याज से आर्य साहित्य के सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ पर प्रतिवर्ष १५ ०) रु० का एक पुरस्कार दिया जाया करे। साहित्य सम्मेलन प्रयाग से जो मंगला प्रसाद पारितोषिक दिया जाता है उसने पिछले पच्चीस वर्षों में हिन्दी साहित्य के निर्माण को बहुत प्रोत्साहित किया है। साहित्य की उन्नति का यह एक बड़े अच्छा साधन है। इससे आर्य्य जगत् के सभी उच्च कोटि के साहित्यकार और प्रकाशक नई उमंगों से परिपूरित होंगे और आर्य साहित्य का भण्डार बढ़ेगा परन्तु आज अपील निकाले हुए १० मास हो चुके मुझे तो कोई प्रोत्साहन मिला नहीं। क्या ३ समाजों और ५० लाख आर्यों में एक हजार व्यक्ति भी ऐसे नहीं कि एकबार सौ रुपए दे सकें। परन्तु कारण यह है कि सभाओं समाजों और संस्थाओं के अधिकारी अपील को जनता तक पहुंचाने में उपेक्षा करते हैं। उनकी दृष्टि में समाज की झाडू का अधिक महत्त्व है दयानन्द पुरस्कार निधि का नहीं। कुछ तो यही कह कर टाल देते हैं कि एक लाख की इतनी बड़ी अपील हमारे इस पांच रुपये के दान से कैसे पूरित होगी। किसी मोटा आसामी को पकड़ो। परन्तु मोटा आसामी कहां से आवे। उनके लिये भी तो साहित्य फर्स्ट चार्ज नहीं लास्ट चार्ज है।

मैं सोचता हूं कि यदि साहित्य नहीं बनता तो न तो देश में चलने वाली संस्थाओं से कुछ लाभ है न विदेश में प्रचार किया जा सकता है। जब तक आप अपने उपदेशकों के हाथ में साहित्य नहीं देते कहीं प्रचार सम्भव नहीं है। यह कैसे हो समझ में नहीं आता।

मेरे पास अनेक विद्वानों के पत्र आते रहते हैं कि हम अमुक पुस्तक लिख रहे हैं उसे सभा छपवादे। वे पारिश्रमिक भी नहीं मांगते। परन्तु इधर छपाई का व्यय चौगुने से भी अधिक हो गया है। सभा कैसे छपवाये और कैसे बेचे। भजनों को या किस्से कहानियों को छोड़कर उत्कृष्ट पुस्तकें बिकती नहीं। बड़े आदमी उत्सवों पर भी अपने लिये पुस्तकें नहीं खरीदते।

(शेष अगले अङ्क में)

दान सूची सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

(१८-१०-५६ तक प्राप्त दान)

१) श्री निरंजनलाल जी गौतम शाहदरा
१०) ,, चन्द्रप्रकाश जी दरयागज देहली
५) ,, राम० आर्य मो० मैसूर स्टेट
१५) ,, डाक्टर जगदीश रायजी गोयल नया बाजार देहली
६) ,, श्रीमती सुभद्रा देवी जी देहली
६) ,, गणेशदास जी देहली
६) , श्रीमती सरस्वती देवी जी नई देहली
६) ,, ला० रामशरणदास जी देहली
२) ,, प० रुद्रदेव जी शास्त्री आ० स० कार्कला
३) ,, गोपालरामजी टेलर आ० स० कार्कला
२५) ,, रुद्रमित्र शास्त्री देहली द्वारा संगृहीत
५) ,, एन० जी० राव इगलिश टेलरिंग कालिज प्रिन्सेस स्ट्रीट बम्बई
५) ,, सत्यदेव जी भण्डारी मैनेजर पानीपत
२) ,, ठाकुरदास जी सुजानपुर
५) , केदारनाथ जी दीवानहाल देहली
२०) ,, चौ० देशराज जी ७४ दरियागज देहली
२५) ,, बालचन्द्र जी स्टेशन मास्टर हिसार
२) ,, गुलजारी लाल जी गुरुकुल कागड़ी
५) ,, चौ० लक्ष्मीचन्द्र जी नारायण भवन ज्वालापुर
१) ,, बालमुकुन्द जी वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर
१०) ,, पं० ज्ञानचन्द्र जी बी० ए० देहली
५) ,, श्रीमती रूपवती जी धर्म पत्नी श्री० रा० ब० हरदुर लाल वर्मा हरदोई
५) ,, अर्जुनपाल जी मत्री आ० स० नीमच छावनी
२५) , मंत्री जी आ० स० दीवानहाल देहली द्वार
५०) ,, रघुनाथसहाय जी प्रमोद भवन रोहतक रोड देहली
५०) ,, ला० रलियाराम जी ठेकेदार नई-देहली

३००)
१३६७।।) गतयोग

१६६७।।)

दान दाताओं को धन्यवाद

(क्रमश)

देशदेशान्तरों मे प्रचार की समुचित व्यवस्था के उद्देश्य से आयोजित इस सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि के लिये उदार दान देना प्रत्येक आर्य नरनारी का कर्तव्य है। खेद है कि अभी तक बहुत से आर्य सज्जनों और आर्यसमाजों ने अपने इस कर्तव्य का पालन नहीं किया, उन्हे अवश्य ही सलग्न फार्म भर कर अपना उदार दान सार्वदेशिक सभा कार्यालय मे भिजवा देना चाहिये।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मंत्री सार्वदेशिक सभा देहली।

दान सूची दयानन्द पुरस्कार निधि

२।।) श्री मत्री आ० स० जमालपुर (मुंगेर)

२५) ,, मंत्री आ० स० गुरुकुल विभाग करनाल
२१) ,, राय साहिब अमरनाथ जी पुरी इजिनियर लुधियाना
११) ,, दौलतराम जी नैयर सुपुत्र श्री लब्भूराम जी नैयर लुधियाना
१०) ,, केप्टन हेमराज जी Engineer भूपाल स्टेट
१०) ,, प्रीतमलाल जी विज शालामार होजरी मेरठ
५) ,, सेठ खेमचन्द्र जी रईस पानीपत
५) ,, बलवन्तराय जी खन्ना Supdt नई देहली
५) ,, मोहनलाल जी अग्रवाल B A LL B लुधियाना
५) ,, फकीरचन्द्र जी महाशय दी हट्टी लुधियाना
५) , सरदार गुरवचनसिंह जी B A LL B वकील लुधियाना
५) ,, दीवान कृपाराम राधाकृष्ण रईस लुधियाना
५) ,, सेठ मोठूराम जी पैट्रोल मरचेन्ट G T. Road लुधियाना
५) , डाक्टर वृन्दावन प्रीतमलाल जी लुधियाना
५) ,, डाक्टर तुलसीराम जी मोदी शुगर फेक्टरी मोदीनगर
५) ,, देवदत्त जी चोपड़ा Engineer जालन्धर शहर
५) ,, कीमतराय जी Retired Chief Judge मलेर कोटला
५) ,, धर्मपत्नी श्री० ला० डालचन्द जी लुधियाना
५) ,, बलराज रत्नचन्द्र जी खन्ना मुरादाबाद
४) ,, रामस्वरूप जी बहल तहसीलदार कन्डाघाट S K R
२) ,, रलाराम जी शुगर फेक्टरी मोदीनगर
२) ,, सत्यदेव जी भण्डारी पानीपत
२) ,, ठाकुरदास जी भण्डारी सुजानपुर (गुरदासपुर)
२०) ,, मंत्री जी

१७४॥)
*७२८५) गतयोग
७४५६॥)

दान दाताओं को धन्यवाद—

(क्रमशः)

*इसमे ५०००) श्री० अमृतधारा ट्रस्ट देहरादून का दान भी सम्मिलित है।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मंत्री सार्वदेशिक सभा

दान सूची स्थापना दिवस

८॥) श्री० मंत्री जी आर्य समाज कटरा प्रयाग
५) ,, ,, ,, ,, नीमच छावनी
११) ,, , ,, सोहनगज देहली

२५)
६६२॥।) गतयोग
१०१७॥।)

दान दाताओं को धन्यवाद।

(क्रमशः)

इस वर्ष सभा के कोष में यह राशि कम से कम २०००) आनी चाहिए। जिन समाजो का भाग अभी तक अप्राप्त है उन्हे शीघ्रता करनी चाहिए।

विविध दान

५) श्री० जी० एल० चावला आगरा

२०) ,, प० रुद्रमित्र शास्त्री देहली द्वारा संगृहीत

२५)

६८) गतयोग

६३) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद।

गंगाप्रसाद उपाध्याय

मन्त्री सार्वदेशिक सभा

ग्राहकों से नम्र निवेदन

निम्नलिखित ग्राहकों का चन्दा नवम्बर मास के साथ समाप्त होता है। अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल ही मनीआर्डर द्वारा भेज देवे अन्यथा आगामी अङ्क उनकी सेवा मे वी० पी० द्वारा भेजा जायगा। धन प्रत्येक दशा मे ३०।११।४६ तक कार्यालय मे पहुँच जाना चाहिये। कृपया कम से कम अपने ५ मित्रों को भी ग्राहक बनाइये। मनी आर्डर अथवा सभा के साथ पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या को लिखना कभी न भूले इस से पत्र व्यवहार मे असुविधा होती है।

ग्राहक स०	नाम समाज
३३	श्री बा० रामजीदास जी स्यालकोट वाला देववन्द, सहारनपुर
७४	श्री रूपशकर जी शर्मा असिस्टैन्ट ट्रैफिक मेनेजर, उदयपुर मेवाड
८९	श्री प्रीतम आर्यसमाज पुस्तकालय आर्य समाज चन्दनपुरा जि० मुगेर
६२	श्री अमरनाथ जी, द्वारा ईश्वरदास एण्ड सन्स पीतलकारखाना उज्जैन,
१४२	श्री हेड मास्टर साहब, केशव मैमोरियल आर्य हाई स्कूल नारायणगुडा,
२१६	श्री महेश्वरानन्द जी सरस्वती आर्य समाज चन्दनपुरा मुगेर
२१७	श्री मौनमासी मोरार जी नायक गण हेवा वाया, गणदेवी सूरत
२१८	श्री माईधन जी आर्य मु० गान्धीगज पोस्ट रायगढ विलासपुर
२२१	श्री मथुराप्रसाद जी एडवोकेट, आगरा
२२२	श्री सत्यव्रत जी वेदालंकार मटियारी पोल, लुणसावाग, अहमदाबाद
२३४	श्री वेदव्रत जी आर्य हिन्दुस्तानी केसर कस्तूरी भडार, अमृतसर
४३०	श्री मन्त्री जी आर्यसमाज सौहसराय जि० पटना

ग्राहक स०	नाम
५६८	श्री मन्त्री जी आर्य समाज रामा मन्डी पटियाला स्टेट
५८३	श्री मन्त्री जी आर्य समाज वारसली गज जिला गया
६१०	श्री सीताराम जी गुप्त १४ फैज बाजार दरियागज, दिल्ली
६११	श्री शिवदत्त राय फतेहचन्द जी नई मन्डी हिसार
६१६	श्री मन्त्री जी आर्य समाज मिर्जापुर यू० पी०
६२०	श्री मन्त्री जी आर्य समाज शाहगज जि० जौनपुर
६२४	श्री मनसाराम जी आयुर्वेदाचार्य शाहपुर जिला कागडा
६२५	श्री मन्त्री जी आर्यसमाज गोन्डा
६३५	श्री मन्त्री जी आर्य समाज तिलकद्वार मथुरा
६३६	श्री रणजीतसिंह प्रभातसिंह जी आर्य अडवाक पो० वन्धूका
६३७	श्री प० नरेन्द्र जी सुलतान बाजार हैदराबाद
६३८	श्री लक्ष्मी नारायण जी शास्त्री मासरा जिला कटक
६३६	श्री मन्त्री जी आर्यसमाज लक्ष्मणसर जि० अमृतसर
८०४	श्रीमती प्रेमसुलभायती जी आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर, सहारनपुर

प्रकाशक:—श्री प० रघुनाथप्रसाद जी पाठक

आश्विन सं० २००६ वि०
सितम्बर १९४९ ई०

सम्पादक—
श्री पं० धर्मदेव सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति

मूल्य स्वदेश ५
विदेश १० शि

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २६ } अक्टूबर १९४९, आश्विन २००६ वि०, दयानन्दाब्द १२५ { अङ्क ८

॥ ओ३म् ॥

वैदिक-प्रार्थना

ओ३म् ॥ अग्ने वाजस्य गोमत ईशान सहसो यहो ।
अस्मे देहि जातवेदो महि श्रवः ॥ सामवेद मं० ९९

शब्दार्थ—हे (अग्ने) ज्ञान स्वरूप (यहो) भक्तो द्वारा हृदय मे आहूत परमेश्वर तू (वाजस्य) शक्ति का और (गोमत सहस) उत्तम वाणी और बलशाली भक्त का (ईशान) स्वामी है। (जातवेद) हे सर्व व्यापक और सर्वज्ञ परमेश्वर (अस्मे) हम मे (महि) उत्तम, महत्व पूर्ण (श्रव) ज्ञान और भक्ति रूप यश को (देहि) दे।

विनय—हे परमात्मन्! तुम सर्व व्यापक, सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान हो। सब भक्त सदा तुम्हें ही अपना सच्चा स्वामी समझते हैं। हम सब आप से यही प्रार्थना करते हैं कि आपकी कृपा से हम सदा उत्तम कार्य करते रहे साथ ही ज्ञान और भक्ति को हम धारण करे जिससे हमे महर्षि दयानन्द जैसे सच्चे भक्तों के समान श्रेष्ठ यश की प्राप्ति हो।

स्वतन्त्र भारत के लिये महर्षि का दिव्य सन्देश—

वैदिकधर्मोद्धारकशिरोमणि आदित्य ब्रह्मचारी स्वनाम धन्य महर्षि दयानन्द का धर्म की वेदी पर अमर बलिदान दीपावली के दिन ३० अक्तूबर १८८३ को अजमेर में हुआ था। इस वर्ष अंग्रेजी तिथि के अनुसार यह उत्सव २१ अक्तूबर को सर्वत्र उत्साह और श्रद्धापूर्वक मनाया जाएगा। इस अङ्क में पाठक जगद्विख्यात योगी श्री अरविन्द जी कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर, मान्य नेता सुभाषचन्द्र जी बोस, विश्व वन्द्य महात्मा गान्धी जी, मुसलमानों के सुप्रसिद्ध नेता सर सय्यद अहमद खां, जगत्प्रसिद्ध विचारक रोमा रोला तथा अन्य सुविख्यात महापुरुषों द्वारा महर्षि के प्रति समर्पित श्रद्धाञ्जलियों को पाएंगे। 'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। परन्तु भिन्न २ भाषा, पृथक २ शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इन के छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है॥'

(सत्यार्थप्रकाश अष्टम समुल्लास)

इन स्वर्णाक्षरों में उल्लेखनीय अमर शब्दों के लेखक महर्षि दयानन्द इस युगमें स्वराज्य के प्रथम प्रचारक थे इस बात को सब निष्पक्षपात विचारकों ने मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है। जहां फ्रान्स के जगद्विख्यात विचारक रोमा रोला ने महर्षि दयानन्द को श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हुए लिखा कि "I have said enough about this Sanyasi with the soul of a leader, to show how great an uplifter of the people he was, in fact the most vigorous force of the immediate and present action in India, at the moment of the rebirth and re-awakening of the national consciousness. He was one of the most ardent prophets of re-construction and of national organisation. I feel that it was he who kept the vigil."

(Life of Rama Krishna P 164)

भावार्थ यह है कि मैं ने इस नेता सन्यासी के विषय में यह दिखाने के लिये पर्याप्त लिख दिया है कि वह मनुष्यों का कितना बड़ा उद्धारक था वस्तुत भारत में राष्ट्रीय जागृति लाने में उसकी शक्ति सब से अधिक काम कर रही थी।

वह राष्ट्र के पुनरुद्धारको और राष्ट्रीय संगठन करने वालो के अत्यन्त उत्साही अग्रणियो मे से था। मैं अनुभव करता हूँ कि उसने ही ज्योति जगाई थी।' वहा सुप्रसिद्ध इसाई प्रचारक ग्रिसवोल्ड ने भी Insight into modern 'Hinduism' नामक अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ में स्वामी दयानन्द के सम्बन्ध मे स्पष्ट शब्दो मे स्वीकार किया कि "Because of the present Swaraj movement one may rightly reckon Swami Dayananda Saraswati among the creators of modern India" (P 117)

अर्थात् वर्तमान स्वराज्य आन्दोलन के कारण स्वामी दयानन्द की गणना ठीक तौर पर वर्तमान भारत के निर्माताओ में का जासकती है

ऐसे स्वराज्य प्रेमी महर्षि को आर्यावर्त व भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति पर अवश्य प्रसन्नता होती इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता। उनके स्वतन्त्र भारत के निवासियो के प्रति दिव्य सन्देश को निम्न शब्दो मे प्रकट किया जा सकता है।

प्रिय देशवासियो !

(१) सार्वभौम, असाम्प्रदायिक युक्ति सङ्गत वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति के अवलम्बन से ही तुम अपना तथा जगत् का कल्याण कर सकते हो।

(२) यदि तुम्हारे अपने राष्ट्र को असाम्प्रदायिक वा Secular घोषित करने का यह अर्थ है कि यह राष्ट्र सर्वथा साम्प्रदायिक पक्षपात रहित और पूर्ण न्याय युक्त होगा तब तो ठीक है किंतु यदि इसका तात्पर्य अधार्मिक है तो न केवल तुम्हारी वास्तविक उन्नति न हो सकगी किन्तु अशान्त सन्तप्त विश्व को भी जो आध्यात्मिक और शान्ति का सन्देश तुम दे सकते हो उसे न दे सकोगे।

(३) विदेशी भाषा, सभ्यता और वेषभूषा से मोह का परित्याग करके अपनी विशुद्ध संस्कृत तथा उसकी ज्येष्ठ पुत्री आर्य भाषा, प्राचीन आर्य सभ्यता और भारतीय वेषभूषा से प्रेम करना सीखो। दास मनोवृत्ति को रखते हुए तुम वस्तुत स्वतन्त्र नहीं कहला सकते।

(४) ब्रह्मचर्य, सदाचार और तप के द्वारा ही राष्ट्र का निर्माण और उद्धार होता है। शिक्षा प्रणाली मे इनका अधिक समावेश कराओ। विद्यार्थियो म जो नास्तिकता भोग-विलास की प्रवृत्ति तथा सदाचार की उपेक्षा बढ रही है वह तुम्हारा नाश करन वाली होगी। राजनैतिक दृष्टि से स्वराज्य प्राप्त होने पर भी दुराचार और भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति यदि बढती गई तो वह तुम्हारे लिये घातिका सिद्ध होगी अत युक्ति युक्त, असाम्प्रदायिक, सार्वभौम धर्म की शिक्षा से अपना सन्तान को वञ्चित न रक्खो।

(५) राजा प्रजा वा शासक शासित का सम्बन्ध पिता पुत्र का है। यदि 'विशि राजा प्रतिष्ठित', "विशो मेऽङ्गानि सर्वत।" (यजु० अ० २०) अर्थात् राजा का आधार प्रजाओ पर है। प्रजा मुझ राजा के अङ्ग के समान हैं इन वैदिक आदर्शों का सब अधिकारी सदा पालन करे और प्रजा ऐसे शुभचिन्तक, राष्ट्र-सेवक अधिकारियों की आज्ञाओ का प्रेम पूर्वक पालन करे इस प्रकार सच्चे स्वराज्य अथवा सुराज्य

की स्थापना होगी जिसका अभी तक अभाव है। परस्पर पूर्ण विश्वास से ही ऐसा होना सभव है। अधिकारियो मे स्वार्थ, लोभ, अहकार अथवा उपेक्षावृत्ति की वृद्धि होने से स्वराज्य भी स्थायी न हो सकेगा और सुराज्य तो कोसो दूर रहेगा।

यदि सब देशवासी महर्षि के इस दिव्य सन्देश को सुनकर इसके अनुसार आचरण करने लगे तो हमारा राष्ट्र सारे जगत् के लिये आदर्श रूप नेता और विश्वशाति का अग्रणी बन जाए।

सविधान परिषत् का राज्यभाषा और लिपि विषयक निर्णयः—

अन्तत लगभग ३ वर्ष की प्रतीक्षा के पश्चात् भारतीय सविधान परिषत् ने गत १४ सितम्बर को राज्यभाषा और लिपि विषयक निर्णय हिन्दी और देवनागरी लिपि के पक्ष मे कर दिया। यद्यपि जिस रूप मे और जिन प्रतिबन्धो के साथ 'भारतीय सघ की राज्य भाषा देवनागरी लिपि मे लिखित हिन्दी होगी' यह निर्णय किया गया है उससे हमे पूर्ण सन्तोष नहीं हो सकता तथापि यह प्रसन्नता की बात है कि लोकमत का आदर करते हुए उन लोगो ने भी जो किसी अवस्था मे भी हिन्दी के राष्ट्र भाषा व राज्यभाषा बनने का घोर विरोध कर रहे थे उसे स्वीकार करना ही उचित समझा। 'सार्वदेशिक' के गत अङ्क मे हमने उस समय के प्रस्ताव पर जो 'मुन्शी आयङ्गर मसौदा' के नाम से प्रसिद्ध था विस्तृत टिप्पणी की थी और उसके अनेक अशो को अत्यन्त आक्षेप योग्य और अस्वीकरणीय बताया था। हमने सार्वदेशिक के उस अङ्क को श्री कन्हैय्या लाल जी मुन्शी, श्री माननीय श्री प० जवाहर लाल जी नेहरू, श्रद्धेय राजर्षि पुरुषोत्तम दास जी टण्डन तथा अन्य महानुभावो के पास भी भेजा था। इस विषय मे सविधान परिषत् के अनेक सदस्यो से विचार विनिमय भी किया था। हमे हर्ष है कि अब जिस रूप मे वह लगभग सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ है उस मे उन मे से अनेक आक्षेपयोग्य स्थलो को निकाल दिया गया है। यद्यपि अब भी सरकारी कार्यों के लिये अङ्को के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के ही प्रयोग का विधान किया गया है पर राष्ट्रपति की अनुमति से देवनागरी अङ्को के प्रचलन को भी स्वीकृत किया गया है। जिन प्रातो मे हिन्दी राज्यभाषा घोषित की जा चुकी है उन को अन्त प्रातीय पत्रव्यवहारादि हिन्दी मे करने की स्वतत्रता दे दी गई है। धारा सभा हाईकोर्ट आदि मे भी कुछ थोडी सी बातो को छोड कर हिन्दी मे शेष सारी कार्यवाही हो सकेगी। १५ वर्ष के अन्त कालीन समय को हम अब भी अत्यधिक समझते है किंतु दक्षिणभारतीयो तथा अन्य अहिंदी भाषियो के लिये इतने समय को देना आवश्यक समझा गया। देवनागरी अङ्कों के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय वा अङ्गरेजी अङ्को के प्रयोग पर जो बल दिया गया और जो दक्षिणभारतीय सदस्यो तथा माननीय श्री० डा० श्यामा प्रसादजी मुखर्जी तथा मा० गाडगिल जी आदि की अपील पर स्वीकृत कर लिया गया हमारे लिये अत्यन्त आश्चर्य जनक था। १३ सितम्बर को सविधान परिषत् के दोनो समय के अधिवेशन मे आद्योपान्त दर्शक रूप से उप-

स्थित होने का उत्तम अवसर हमे प्राप्त हुआ था। दक्षिण भारतीय सदस्यो मे से प्राय प्रत्येक ने इस बात पर बल दिया कि जब हम ६५ प्रति शतक तुम हिन्दी वालो की बात मानने को तय्यार हो गये हैं तो तुम्हे अन्तर्राष्ट्रीय अङ्को के प्रयोग विषयक हमारी बात को अवश्य मान लेना चाहिये। यद्यपि हमे यह हठ बच्चो का सा तथा अयुक्त प्रतीत होता था तथापि प्रतीत होता है कि संविधान परिषत् के अनेक हिन्दी समर्थक सदस्यो ने यह समझकर कि कहीं इस पर डटे रहने से हिन्दी और देवनागरी लिपि विषयक प्रस्ताव ही न गिर जाए इसे अनुचित समझते हुए भी मान लिया। अंग्रेजी भाषा के प्रति श्री आयङ्गर तथा अन्य दाक्षिणात्य सदस्यों का मोह आश्चर्य जनक था। उनका यह कथन तो सर्वथा अशुद्ध ही था कि अंग्रेजी के द्वारा ही हमे स्वतन्त्रता मिली। दासमनोवृत्ति के अनेक उदाहरण अनेक सदस्यों के भाषणों मे दृष्टिगोचर हो रहे थे। मुस्लिम सदस्यों ने महात्मा गान्धी जी के नाम की दुहाई देते हुए हिन्दुस्तानी और उर्दू लिपि को भी राष्ट्रभाषा तथा लिपि घोषित करने का प्रतिपादन किया किन्तु उन्हे क्रमश १४ और १० से अधिक मत न मिल सके। मौ० आजाद का भाषण हमे बड़ा निराशा जनक प्रतीत हुआ जिसमे उन्होने रोमन लिपि को सर्वोत्कृष्ट बताते हुए आशा प्रकट की कि भविष्य मे भारत उस लिपि को स्वीकार कर लेगा। ये वही राष्ट्रवादी आजाद थे जिनके विषय मे प्रसिद्ध है कि उन्होंने देवनागरी लिपि को अपनाने का पूर्ण समर्थन किया था। कांग्रेस के प्रधान म श्री श्री शकरराव देव द्वारा हिन्दुस्तानी का समर्थन भी उसी पुरानी अपरिवर्तित मनोवृत्ति का सूचक था जिसको हम अभिनन्दनीय नहीं समझते। श्रद्धेय पुरुषोत्तम दास जी टन्डन, माननीय श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त, डा० रघुवीर जी तथा अन्य जिन मान्य महानुभावों के निरन्तर प्रयत्न ने देवनागरी लिपि मे लिखी हिंदी को राजभाषा के रूप मे स्वीकृत कराने में सफलता प्राप्त की उनका हम हार्दिक अभिनन्दन करते है किन्तु साथ ही यह लिखना आवश्यक समझते है कि देवनागरी अंको के प्रयोग विषयक आन्दोलन को हमे जारी रखना चाहिये तथा इस विषयक जनमत को प्रबल बनाना चाहिये जिससे सविधान परिषद् को भी अपने प्रस्ताव के इस अंश को परिवर्तित करने को विवश होना पड़े। हिंदी साहित्य को दार्शनिक, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक सब दृष्टियो से खूब समृद्ध करना चाहिये जिससे किसी को अब की तरह यह कहने का अवसर न हो कि इसका साहित्य समृद्ध व उन्नत नहीं है।

डी० ए० वी० कालेज कानपुर में निन्दनीय अस्पृश्यता कलङ्क:—

पाठकों ने 'वीर अर्जुन', 'विश्वमित्र' इत्यादि पत्रों मे पढा होगा कि डी० ए० वी० कालेज कानपुर के छात्रावास मे प० शंकरदेवजी वेदालकार नामक गुरुकुल कांगड़ी के एक सुयोग्य स्नातक के साथ दलित वर्गोत्पन्न होने के कारण किस प्रकार दुर्व्यहार किया गया जिसके विरुद्ध उन्हे आमरण अनशन का निश्चय करना पड़ा जो माननीय श्री सम्पूर्णानन्द जी की ओर से कान-

पुर के जिला मेजिस्ट्रेट के उचित आश्वासन देने पर कई दिनों के पश्चात् भग किया गया। यह सारी घटना नि सन्देह आश्चर्यजनक तथा निन्दनीय थी। सार्वदेशिक सभा की ओर से समाचार पत्रों में इस विषयक समाचार देखते ही वस्तु स्थिति के जानने के लिये एक पत्र डी ए० वी कालेज कानपुर के प्रिन्सिपल महोदय को और एक प शकरदेव जी को लिखा गया।

१ सितम्बर को प्रिन्सिपल महोदय के नाम सभा की ओर से निम्न तार भेजा गया।

Shock d learnin Shankardeva Vedalankars fas against untou chability observan e in College hostel Please intervene immediately saving his life removing blot

अर्थात् प शकरदेव वेदालकार के कालेज के छात्रावास में अस्पृश्यता के आचरण के विरुद्ध उपवास का समाचार जान कर आघात पहुँचा। कृपया तुरन्त हस्तक्षेप करके इनके जीवन की रक्षा कर और इस कलक का निवारण कर।

जाति भेद निवारक आर्य परिवार सघ के अध्यक्ष के रूप मे भी मैंने प्रिन्सिपल महोदय के नाम इस आशय का तार इस अस्पृश्यता को अत्यन्त निन्दनीय बताते हुए दिया। इस पर प्रिन्सिपल महोदय का पत्र सार्वदेशिक सभा के मन्त्री जी के नाम आया जिसमे उन्होंने लिखा कि होस्टल और कालेज के अधिकारी इस बात से पूर्ण सहमत है कि छात्रावास मे किसी प्रकार का भी धर्म और जाति पाति के कारण भेद भाव न हो किन्तु साथ ही साथ यह अनुभव करते हैं कि वे किसी भी विद्यार्थी को किसी के भी साथ बैठ कर खाने के लिए बाधित नहीं कर सकते हैं या ऐसा नियम भी नहीं बनाया जा सकता कि जो विद्यार्थी हरिजन विद्यार्थी के साथ बैठकर भोजन न करे उसको कालेज अथवा छात्रावास म प्रविष्ट न किया जाये। दयानन्द कालेज और उसका छात्रावास यद्यपि आर्य समाज द्वारा सचालित होता है तथापि इसमे बिना किसी जाति अथवा धर्म के भेद भाव के विद्यार्थी प्रविष्ट हो सकते है। और यहा अधिकारी जिस प्रकार से किसी विद्यार्थी से धार्मिक विचार छोडने को नहीं कह सकते है इसी प्रकार मे वे किसी भी विद्यार्थी को किसी भी विद्यार्थी के साथ भोजन करने के लिये बाधित नहीं कर सकते इत्यादि। हम इस उत्तर से सन्तोष नहीं हुआ और यह यत्न किया जा रहा है कि छात्रावास से इस कलक का निवारण होजाए। प्रिन्सिपल महोदय की उपर्युक्त युक्ति के अनुसार तो जाति भेद अस्पृश्यतादि का निवारण सभव ही नहीं है। आर्य सस्थाओ को अपने अनुशासन का पालन कराना ही चाहिये अन्यथा सुधार असम्भव है। हम डी ए वी० कालेज कानपुर के अधिकारियों से निवेदन करना चाहते हैं कि वे प्रेम पूर्वक समझा बुझा कर तथा अपने अनुशासन को काम म लाकर अपने छात्रावासो से इस कलक को दूर करादे। हमे इन पक्तियों को लिखने की इस लिये भी विशेष आवश्यकता हुई है कि दक्षिण हैदराबाद के 'आर्यभानु' आदि कुछ पत्रों मे यह भ्रमजनक समाचार प्रकाशित हुआ है कि सार्वदेशिक सभा आदि की ओर से इस विषय मे कुछ नहीं किया गया अथवा आर्य नेता क्यों चुप हैं? इत्यादि। ऐसे भ्रमजनक

अशुद्ध समाचारों को बिना यथार्थ स्थिति का पता लगाए प्रकाशित करना अनुचित है। आशा है आर्य जनता को वस्तुस्थिति का ज्ञान इन पंक्तियों से हो जाएगा। ऐसे कलङ्क सर्वत्र दूर होने चाहियें इसमें कोई सन्देह ही नहीं। अपने जीवन को सङ्कट में डालकर भी पं० शंकरदेवजी ने अस्पृश्यता निवारणार्थ जो प्रयत्न किया वह अभिनन्दनीय था।

देश के नाम विषयक संविधान परिषत्‌का निर्णय:-

संविधान परिषत् ने अपने गत अधिवेशन में जहां राजभाषा और लिपि विषयक निर्णय किया है वहां १७ सितम्बर को देश के नाम के सम्बन्ध में भी उसने 'भारत" के पक्ष में निर्णय किया है यद्यपि अन्य देशों के साथ किये गये सन्धि पत्रों तथा गत कई शताब्दियों में प्रचलित इण्डिया शब्द को ध्यान में रखते हुए उसने अङ्गरेजी में "इण्डिया अर्थात् भारत' और हिन्दी में 'भारत अर्थात् इण्डिया'' इस प्रकार के विचित्र प्रयोग का निश्चय किया है। उस निर्णय से भी हमें पूर्ण सन्तोष नहीं हो सकता। हम तो इस बात को पसन्द करते कि देश का सब से प्राचीन श्रेष्ठ तथा स्फूर्तिदायक नाम आर्यावर्त ही स्वीकार किया जाता किन्तु अभी वातावरण उस के अनुकूल नहीं हुआ। हम डा० पट्टाभिसीतारामैय्या के विचार से सहमति प्रकट करते हुए आशा करते हैं कि कुछ समय पश्चात् उस नाम के महत्त्व को भी लोग समझने लग जाएंगे। भारत यह नाम भी पर्याप्त प्राचीन है। राजा दुष्यन्त के चक्रवर्ती महापराक्रमी पुत्र भरत के नाम से देश का नाम भारत पड गया ऐसा महाभारतादि में बताया गया है। महाभारत आदि पर्व ६९।१७ व ७४।२६ में भारत के विषय में लिखा है —

स विजित्य महीपालाश्चकार वशवर्तिन ।
चचार च सतां धर्मं, प्राप चानुत्तम यशः ॥
स राजा चक्रवर्त्यासीत्, सार्वभौम प्रतापवान्।
ईजे च बहुभिर्यज्ञैर्यथा शक्रो मरुत्पति ॥

अर्थात भरत ने सब राजाओं को अपने अधीन कर के उत्तम धर्म का अनुष्ठान किया था। वह सार्वभौम चक्रवर्ती प्रतापी राजा था जिसने अनेक प्रकार के यज्ञ किये थे।

भरताद् भारती कीर्तिर्येनेदं भारतं कुलम् ॥

उसी धर्मात्मा चक्रवर्ती राजा भरतके नाम से देश तथा कुल का नाम भारत हो गया। इस प्रकार भारत यह नाम हमारे उज्ज्वल, अतीत गौरव का स्मारक है। महर्षि दयानन्द जी ने पूना के अपने व्याख्यानों में इस भारत तथा हिन्दुस्तान आदि नामों के सम्बन्ध में निम्न-लिखित महत्त्वपूर्ण बातें बताई थी।

"इस(नल)के अनन्तर भरत कुलमें राजा होते रहे इसी कारण पर उस समय से आर्यावर्त का नाम भारतवर्ष भी हो गया। तदनन्तर राजा रघु हुआ। वह भी बडा महात्मा था। रामराजा से रघुराजा बडा था। रघु के पीछे रामराजा हुए। इन से रावण का युद्ध हुआ। इन का इतिहास रामायण में वर्णन किया गया है।'

(उपदेश मंजरी पृ० १५०)

महर्षि दयानन्द के इस व्याख्यान से सिद्ध होता है कि रघु राजा से भी पूर्व देश का भारत वर्ष यह नाम प्रचलित हो चुका था।

हिन्दुस्तान इस नाम के विषय में उन्हीं व्याख्यानों में महर्षि दयानन्द ने कहा था कि—

'हमारे देश का नाम आर्य स्थान अथवा आर्यखण्ड होना चाहिये सो उसे छोड न जाने हिंदुस्तान यह नाम कहां से निकला ? भाई श्रोता गण ! हिंदु शब्द का अर्थ तो काला काफिर, चोर इत्यादि है और हिन्दुस्तान कहने से काले काफिर, चोर लोगों की जगह अथवा देश, ऐसा अर्थ होता है तो भाई इस प्रकार का बुरा नाम क्यों ग्रहण करते हो ! और आर्य अर्थात श्रेष्ठ अथवा अभिज्ञात इत्यादि, और आवर्त कहने से ऐसों का देश अर्थात् आर्यावर्त का अर्थ श्रेष्ठों का देश। (उपदेश मंजरी ८म व्याख्यान पृ० १४०)

अत हिन्दुस्तान के स्थान पर 'भारत' इस नाम का प्रचलित होना (जिसका महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास मे "भारत वर्ष की स्त्रियो मे भूषण रूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रों को पढ के पूर्ण विदुषी हुई थीं।' इत्यादि वाक्यो मे प्रयोग किया) अच्छा ही है। इण्डिया इस विदेशी नाम के मोह का भी हम परित्याग कर देना ही उचित है।

भारतीय सेना का प्रशसनीय निश्चय:—

२० सितम्बर के इण्डियन न्यूज क्रानिकल (नई देहली) तथा अन्य पत्रों द्वारा यह जान कर हम प्रसन्नता हुई है कि भारतीय सेना ने सैनिकों को २५ वर्ष की आयु से पूर्व विवाह को अनुत्साहित करने का निश्चय किया है। यद्यपि पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायगा तथापि २५ वर्ष की आयु से पूर्व विवाह करने वालो को निवासार्थ मकान आदि की सुविधा न दी जाएगी।

हम भारतीय सेना के इस निश्चय का अभिनन्दन करते है। शास्त्रानुसार २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन सब के लिये आवश्यक है। शक्ति का मूल स्रोत ब्रह्मचर्य है अत सैनिकों को शक्ति सम्पन्न बनने के लिये २५ वर्ष तक इसका पालन अत्यन्त उपयोगी है। २५ वर्ष तक केवल विवाह न करना ही पर्याप्त नहीं है हम आशा करते हैं कि सैनिक पूर्ण सदाचार पूर्वक जीवन व्यतीत करना अपना कर्तव्य समझेंगे।

भारत सरकार का अभिनन्दनीय आदेश:—

सरदार दातारसिंह जी अध्यक्ष कृषि अनुसन्धान विभाग ने मद्रास मे पिछले दिनों भाषण करते हुए बताया कि भारत सरकार ने सब प्रांतीय सरकारों को आदेश दे दिया है कि गाय, बैल, बछडे तथा अन्य उपयोगी पशुओं के बध पर प्रतिबन्ध लगाया जाए। हम भारत सरकार के इस आदेश का अभिनन्दन करते और आशा करते हैं कि इस आदेश का प्रांतीय सरकारें पूर्णतया पालन कराने की व्यवस्था करेंगी जिससे गवादि पशुधन की रक्षा हो और दूध, घी आदि पुष्टिकारक पदार्थ जनता को शुद्ध रूप मे प्राप्त हो सके।

काश्मीर कमीशन की असफलता:—

हम इस समाचार से तनिक भी आश्चर्य नहीं हुआ कि सयुक्त राष्ट्र सघ द्वारा नियुक्त काश्मीर कमीशन ने पाकिस्तान और भारत सरकार मे काश्मीर के प्रश्न पर सन्धि कराने मे असफल होकर इस प्रश्न को सयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् मे पुन भेजने का निश्चय किया है। इस असफलता का कारण जहा पाकिस्तान सरकार की अडियल नीति है वहा काश्मीर कमीशन की दुरगी चाल भी कही जाए तो अयथार्थ न होगा। आजाद काश्मीर सेना के भग के विषय मे काश्मीर कमीशन ने भारत सरकार को एक प्रकार का आश्वासन दिया और पाकिस्तान को दूसरी प्रकार का जो उसके ठीक विरुद्ध था। इसी प्रकार भारत और आक्रान्त पाकिस्तान को एक ही कोटि मे रखना भी वस्तुत सर्वथा अनुचित था। भारत सरकार ने इस पर सारे मामले को एक निर्णायक के निर्णय पर छोडने के प्रस्ताव को ठुकरा कर बडी बुद्धिमत्ता का कार्य किया है अन्यथा वह बडे चक्कर मे पड जाता।

पाकिस्तान सरकार की शरारत:—

काश्मीर निष्क्रात सम्पत्ति तथा पूर्वी पजाब के नहरों के जल के प्रयोग इत्यादि के विषय में पाकिस्तान सरकार जिस शरारत का प्रयोग कर रही है उसके सम्बन्ध मे जितना भी कम लिखा जाए उतना ही अच्छा है। भारत सरकार को इन विषयों मे बडी सतर्कता और उग्रता से काम लेने की आवश्यकता है। हमारा विश्वास है कि हमारे राष्ट्र के कर्णधार इस विषय मे सतर्क हैं जैसे कि हमारे माननीय प्रधान मन्त्री श्री प० जवाहरलाल जी ने पजाब के अपने भाषणों मे तथा अन्यत्र स्पष्ट किया है।

आय जगत् क सुप्रासद्ध कमठ तपस्वा सवमान्य नता श्रा महात्मा नारायणस्वामा जा महाराज जिन का दहावसान [illegible] अक्टबर [illegible] का बरला म हुआ उनका स्वा याय शीलता याग तप वादक धम क प्रात आस्था कत यतत्परता आर सदगुणा का सब आय नर नारिया का विशप रूप म स्मरण करत हुए उन्ह अपन अन्दर धारण करन का प्रय न करना चाहिय ।

वेदोपदेश

आत्मा का बल

(लेखक श्री महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज यज्ञ भवन जवाहर नगर, देहली)

आ प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नियंसते । इन्द्र नृम्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् । ऋ० १।८०।३

(इन्द्र) आत्मन् तू (स्वराज्य अनु) स्वराज्य के अनुकूल (अर्चन) भावना करता हुआ (प्र इहि) आगे बढ (अभीहि) मुकाबला कर (धृष्णुहि) शत्रु का धर्षण कर (ते) तेरा (वज्र) वज्र (न) नहीं (नियंसते) रोका जा सकता (ते) तेरा (शवः) बल (हि) निश्चय से (नृम्ण) सबको नमाने वाला सच्चा बल है। (वृत्र) वृत्रासुर को कामरूप या पाप रूप शत्रु को (हन) हनन कर और अपनी प्रजाओं को (जया) जीत।

जीवात्मा प्रभु का अमृत पुत्र है। वेद प्रभु का ज्ञान है, जो इसे भूला हुआ है। उसकी भूल सुझाने के लिये वेद कह रहा है तू राजा है। सचमुच यह ऐसा है कि जैसा किसी कुम्हार के हाथ एक शेर का बच्चा लग गया। कुम्हार उस पर भी वैसे ही भार लादता जैसे गदहों पर। एक बार पानी पीते हुए उसे किसी दूसरे सिंह ने कहा कि तू अपने को पहचान किन मे बँधा है। सिंह शिशु ने जिस समय जल मे देखा तो हुँकार की और सब गदहों को मालिक सहित डराकर भगा दिया।

यह मन्त्र आत्मा को प्रभु का स्वरूप दिखाने के लिये कह रहा है, कि तेरा अन्दर बाहर राज्य है। तू भूल गया है और तेरे पर विदेशियों (वृत्रासुरों) ने कब्जा कर लिया है। यह वृत्रासुर वास्तव मे तुम्हारा शत्रु नहीं। शत्रु अपने अपने स्वार्थ के लिये बनता है। शत्रु कहते है नाश करने वाले को दुश्मन का अर्थ है बुरे मन वाला। पर इसे वृत्रासुर कहते हैं। ढकने वाला—पर्दा डालने वाला। हम शत्रु को कभी घर नहीं आने देते उससे घृणा करते हैं। निन्दा करते हैं। यह वह शत्रु नहीं जिसका नाम हम आता नहीं। काम क्रोधादि हमारे शत्रु नहीं। हमने इनके शत्रु का नाम दिया है।

अंग्रेज डाक्टर बाटन बादशाह शाहजहाँ की कन्या का इलाज करने आया और उसने फलस्वरूप मांगा कि अंग्रेजों से कोई व्यापार करते हुए टैक्स न लिया जाय। लेकिन वह यहां आकर घुस गये और यहां के मालिक बन गये। आये थे कल्याण के लिये पर राज्य छीनकर बैठ गये। सचमुच यही शत्रु हमारे लिये हैं।

ये थे तो आत्मा के कल्याण के लिये लेकिन अन्दर घुस गये। समुद्र से सूर्य जल लेता है पर उपकार करना चाहता है। सूर्य प्रत्युपकार करता है वह वृत्रासुर मेघ बन जाता है। वह सूर्य की रोशनी को रोकता है।

काम क्रोध को अपने लिये तो कोई लाभ नहीं है। यह हमारे शत्रु नहीं हमने इन्हे अपने लाभ के लिये स्वीकार किया है। हम सुख मे मस्त हो

गये। हम अब पीटते है रोते है। प्रभु कहते हैं। सम्भल जा। इनसे घबरा नहीं। जन्मजन्मान्तर से तुम इनके दास हो। जैसे हम शरार से, बुद्धि मे अर्थ से अंगरजो के दास बने रहे। सुझाने वाले ने 'सत्याग्रह' का शस्त्र पकडा। उसने पार्टी बनाई, और दिखा दिया कि राज्य कैसे लिया जाता है।

एक शत्रु अकला लडता है,दूसरा पार्टी बना कर। बुद्धिमान पार्टी से लडता है, मूर्ख अकेला। दुश्मन होते तो कोई न कोई मारा जाता। जीवात्मा तो कभी मरता नही। न काम क्रोधादि मरे जीत पता नही किसकी हुई। जीवात्मा तो अब भी राजा हे। इसलिये वद भगवान कहते हैं कि स्वराज्य प्राप्ति के लिये खडा हो जा। तेरी शक्ति को किसने निर्बल कर दिया है।

काम और मोह से आत्मा की शक्ति निर्वल होती ह। लोभ क्रोध स दुर्बल होती है।

निर्बल आत्मा कायर होती ह और दुर्बल आत्मा निर्दय होती है।

जो कायर होता है, वह प्रतिज्ञा करता ही नहीं, और जो दुर्बल है वह प्रतिज्ञा करक भग कर देता ह काम और मोह ने हमे निर्बल कर दिया है।

महात्मा गाधी देश सेवा करना चाहते थ पर काम वश न कर सकते थ। सन १६०६ मे उन्होंन ब्रह्मचर्य व्रत लिया और ससार को हिला दिया।

उन्ह काम और मोह न निर्बल कर दिया हुआ था। जिसमे काम और मोह हैं उसमे समझ कम होती है।

क्रोध लोभ वाला सशयात्मिका बुद्धि रखता है। अब हम अपनी पडताल करे जो हम प्रतिज्ञा करते है वह पूरी क्यो नहीं होती उसका भी यही कारण है।

वेद भगवान् बतलाते है, अपनी सकल्प शक्ति को जगाओ तुम्हारे म शक्ति है, पर सोई हुई है।

ये वृत्र अकेले नहीं लडत। इनका राजा है अहकार। उसन हमारी राजधानी पर कब्जा किया हुआ हे। उसका मन्त्री काम है। उसे सेना की आवश्यकता हे। क्रोध मोह लोभ उसके सेना पति है। उन्होने अपनी सेना बनाई, जैसे पाकिस्तानी हमे तंग करने के लिये इधर उधर से आक्रमण कर देते है। ताकि कार्य रुद्ध (गलतान) रहे। ऐसे हमारे शरीर मे आंख नाक इत्यादि के प्रान्त है।

सब स्थान पर लडाई है कहीं आँख मे, नाक मे, कान मे और कहीं मुख मे। आत्मा व्याकुल है—सोच नहीं सकती। जो पार्टीबाज है—वह कभी मेरे—मित्र या सम्बन्धी को छेडेगा ताकि यह गलतान रहे। ऐसे ही आत्मा की स्थिति है। क्रोध ने पार्टी बनाई।

क्रोध की फौज है—निन्दा, ईर्ष्या, द्वेष वदला बाजी। यह इसके सहायक हैं। क्रोध का अपना नाम कहीं नहीं है। जो मेरी निन्दा करता है, उससे मेरी दुश्मनी हो जाती है। निन्दा मे मनुष्य भीरु बन जाता है।

लोभ की फौज—झूठ, चोरी रिश्वत बेईमानी उसके साथी है। पर लोभ का अपना नाम नहीं हे। यह सब काम लोभ की खातिर करते है।

एक लोभ से कितनी पाप की वृत्तिया आ गई। यह गोल दायरे के समान हे, वृत्राकार हैं। इनका न आदि हे न अन्त है। न सिर है न

पाव है।

मोह बडा बादशाह है, आलस्य प्रमाद स्थूल शरीर मोटा प्राण स्थूल मन, जड बुद्धि इनसे हम बेहोश हो जाते है। सब ओर शत्रु मुँह फाडेखडे हैं। देखने वाला सोचता है, क्या करू।

वेद भगवान कहते है तू अपनी शक्ति सम्हाल फौज तो मामूली बात ह। फोज के जीतने पर राजाका राज्य तो रह जाताहै राजा के हरन पर सेना स्वय ही पराजित होती ह। निजाम हैदराबाद के हारने पर सारी सेना मन्त्रिमण्डल स्वय ही वशीभूत हो गये।

इसलिये अंहकार को नमाओ।
सब अपन आप गुलाम हो जायगे।

जीवात्मा मे बडी शक्ति ह। वह है सत्य सकल्प की। सत्य मे जल है। जिसमे सत् नही वह क्या करगा। कहावत ह, जिसक जन्म म सत् (वार्य) नहीं तो वह क्या करेगा।

हमारा अस्तित्व सत्य क साथ ह। उनका शक्ति सत्य सकल्प ह। हठ भी शक्ति ह पर इस दुराग्रह कहत है। जिसस सब का कल्याण हो वह सत्य है।

निजाम को मारा नही गया पर जाता गया है उसे हा अहकार रह पर अधान होकर। त अपन सकल्प को जगा। कैस जगाये ? सत्य सोया हुआ ह। सत्य चला ह ज्ञान गुरु ह।

हम शुद्ध ज्ञान नहीं है। सभी सत्य की दुहाई देते है। पर उन्हे शुद्ध ज्ञान नहीं है। धर्म मे शुद्ध ज्ञान ह। जिन बन्धना स हम बधे है उनका हम ज्ञान हो। इनसे छूटने की हमारी इच्छा नहीं। लोग अब भी कहते है कि हम अगरेजो का राज्य अच्छा लगता था। व तप करना नहीं जानते। हम तपके न होने से सत्य को जगा नहीं सकते।

सत्य पुनातु पुन शिरसि-तप के लिये ज्ञान की आवश्यकता है। तप सत्य ज्ञान एक दूसरे के साथ ॰ रहते है। प्रभु पूजा आराधना सब इस लिये है, कि हम सत्य का ज्ञान हो। थोडा सा प्रकाश हो तो अन्धकार स्वय भाग जायेगा। हमारे म अग्नि जगी नहीं नहीं तो यह स्वय ही भाग जाये।

अब हम क्या करे ? कभी सोचा कि हमार शत्रु कई है। मक्कारी रूप मच्छर हम घेरते है। चादर ओढ लो ये दूर हो जायेग।

जुए और रिंड पड जाव तो क्या करे। यह तो घर के मालिक है। मच्छर बाहर क मल से आये। परन्तु यह जुए रिंड हमार अदर के मल से आये। अपनी मैल को हटा दो दूर हो जायेगे।

सफाइ का नाम ह भक्ति। मोटर को चलान क लिये पेट्रोल चाहिये। यदि सफाई न कर तो पेट्रोल इंजन को जला देगी। हमार मे पटोल ज्ञान है।

सफाई तो भक्ति से होगा ये वासनाए भक्ति स धोई जायगी। भक्ति तो हम प्रतिदिन करते है। पर हमारी शुद्धि नहीं। भक्ति का अर्थ ह बाटना। जिसकी जो चीज है उसे दे दे। जब हमने दे दा तो हम खाली हो गये।

जीवात्मा निर्मल है, निर्मलता पदा करे। पर यह कठिन है। निन्दा हम किसको दे। इसका आसान तरीका है। यथा मैं स्वराज्य को चाहता हू। किसी ने निन्दा की, मुझे क्रोध आ गया क्रोध मेरा दुश्मन ह। मे उसका निशाना बन गया वह मुझ पर छा गया, उसका झडा मेरी रान।

धानी पर गढ़ गया। पर यदि मैं उस निन्दा को ठोकर लगादू तो वह मुझ से परास्त हो गया।

अब क्रोध की बारी आई। उसके साथ घृणा भी आ गई, आख ऊपर हो गई, उसका राज्य हो गया। कहता आपको हूँ, सुनाता आपको हूँ।

ईसा ने कहा कि प्रभु पूजा करो मनमे सोचो कि तुमने क्या दुर्व्यवहार किया। पहले उसको उखाडो। इससे अंतःकरण शुद्ध हो जायेगा। और कोई पूजा का मतलब नहीं। मैल को दूर करो। यदि मैल रह गई तो पूजा कठिन है। यह काम वह करे जो निकम्मा हो।

ला० लोकनाथ काम कर रहा है, उसे याद आ गया। वह दूसरे से क्षमा मागने गया, तो सारा दिन उसी मे बीत जाये। यह निकम्मों का काम है। यदि स्वय जाऊ तो मेरी हतक है, बस फिर अहंकार आ गया।

आसान काम—

कई आज्ञाए शरीर से सम्बन्ध रखती हैं, कई आत्मा से। जो आज्ञाए शरीर से सम्बन्ध रखती हैं वह शरीर मे रोग और दुःख पैदा करती हैं। जो हम मन से करते हैं वह आत्मा मे सम्बन्धित है, हम कम से कम शरीर को ठीक कर ले।

जो बीमारी हमे लिटा दे उसका कारण सोचे, कि वह कहा से आई? किस कर्म का फल है? एक आदमी को सदा जुकाम रहता है उसका कारण सोचे, यह नाक की बीमारी है जिससे हम घृणा करते है, उससे नाक भौ चढ जाती है। उसका इलाज करे। जब तक हम घृणा को न छोडेगे, तब तक जुकाम दूर न होगा।

भगवान ने शरीर दिया वह वृत्ति साथ दे दी। जन्म के साथ बीमारी नहीं है।

वह बीमारी तब ही आई जब उसका साधन कारण बना, उस दिन से हमारी पाप वृत्ति जाग उठी। उससे जुकाम हो गया। यह एक उदाहरण है।

जिनको हिस्टीरिया हो जाता है दौरे होते हैं पूर्वजन्म मे उनकी शौकीनी के विचार के कारण से यह रोग हुआ। यह दौरे तब तक दूर न होंगे जब तक उन विचारों को दूर नहीं किया जाता। आत्मा के सम्बन्ध मे हमने जिस प्रभु आज्ञा को भंग किया, उसके फलस्वरूप तब तक वह उच्च पद तो पा नहीं सकता और योग फल को निर्बल मन समझ सकता नहीं। दुर्बल मन संशयग्रस्त रहता है। निर्बल मन योग बिना रहता है और दुर्बल मन को सशय रह जाता है। चाहे पढे लिखे भी क्यो न हो। आज सारा संसार इन्हीं मे ग्रस्त है। वह योग विद्या से अनभिज्ञ रहता है।

इस लिये आत्मा के साथ सम्बन्ध रखने वाले रोग जन्म जन्मान्तर मे खराब करेगे।

कई लोग जप करते हुए आख मींचते हुए कहते हैं कि हमे अन्दर से बलाए आ घेरती है। जब खोलकर करे तो अन्दर की आख कैसे खुलेगी। आख खुली भयानक है जिन्दा आदमी किसी को देखे तो कहते है, आख फाड़कर क्यों देखते हो। ऐसे खुली जिह्वा भी अच्छा नहीं। ऐसे जो मुह खोले रक्खे तो कहते हैं कि तुम तो मुह फट हो। मरने के समय सारा शरीर अकड़ा रहता है हम तो अकड़े हुए है गर्दन मे कील है धन की। जिससे हमारा सारा शरीर अकडा हुआ है।

अपने रोग को विचारो कि यह किस पाप से आया। उसके कारण को ढूढो। पर हमे तनिक भी फुरसत नहीं। हमे आत्मा के कल्याण की इच्छा नहीं।

कारण न जानने से बीमारी भी रहती है, उसका कारण भी जन्म जन्मान्तर साथ रहता है। वृक्ष से फल गिरा, बीज बना, फिर उगा, इस प्रकार उसने जगल का रूप धारण कर लिया। ऐसे हमारी पाप वृत्तिया है जिन्होंने जंगल का रूप धारण कर लिया है।

वेद ने वह शक्ति बतादी, वह है सत्य। इसके जग जाने से हमारा शरीर आत्मा दोनों जग जायेगे। प्रभु आशीर्वाद दें ताकि सत्य संकल्प से हमारे शरीर आत्मा दोनों जग जावें।

पाश्चात्य विद्वानों का ऋग्वेद के दशममण्डल पर कुठाराघात

(लेखक—अनुसन्धान विद्वान् श्री शिवपूजन सिंह जी कानपुर)

(गताङ्क से आगे)

प्रो० मैकडोनल ने यह भी लिखा है कि इस मे लोक प्रचलित नवीन शब्दों का आवेश है। यदि लोक प्रचलित शब्दो की विद्यमानता किसी मण्डल को नवीन बना सकती है तो पुरान मण्डलो म भी इन की उपस्थिति है। यथा लाङ्गल यह शब्द ऋ ४।५७।४ मे आया है। लाङ्गल=हल, क्या कृषक होते हुये बारम्बार हल का भी वर्णन न करते केवल एक बार क्यो आया ?

वणिक्, ऋ ५।४५।६ मे आया है, १०म मडल मे नहीं।

छाग, ऋ १।१६२।३ मे आया है।

ये शब्द लोक प्रचलित है और प्राचीन मडल मे क्यो आए ?

अतएव उनकी यह युक्ति भी भ्रम पूर्ण है।

प्रोफेसर बलदेव उपाध्याय एम ए, श्री रजनीकान्त शास्त्री, श्रीमेधार्थी प्रभृति विद्वानो को उचित था कि वे निष्पक्ष होकर ऊहापोह से विचार करते। परन्तु इन विद्वानों ने पाश्चात्य विद्वानो के लेखों को ईश्वरकृत समझ कर विना तर्क की कसौटी पर कसे हुए आख मूद कर मान लिया।

जब प्रोफेसर मैकडोनल महोदय की युक्तिया ही भ्रान्तिपूर्ण हैं तो उनके अनुयायियों की कैसी होगी, विज्ञ पाठक स्वय विचार सकते हैं।

अतएव दशम मण्डल अर्वाचीन वा परिशिष्ट नहीं है क्योकि प्राचीनतम शौनकानुक्रमणी मे उस मण्डल पर कोई सन्देह प्रकट नहीं किया गया।

निरुक्त मे ऋग्वेद सहिता को दाशतयी नाम से पुकारा गया है अत पाश्चात्य विद्वानो का मत सर्वथा अशुद्ध है कि ऋग्वेद का दशम मण्डल परिशिष्ट है।

चतुर्वेद भाष्यकार, विद्वद्वर्य प० जयदेव शर्मा विद्यालकार मीमासातीर्थ लिखते हैं—ऋग्वद सहिता क दश मण्डल होने से इसको 'दाशतयी' कहते है। अध्याय, वर्ग, क्रम से इस मे ६४ अध्याय थे और मडल अनुवाक सूक्त क्रम से दश मण्डल रहे, सब शाखाओ मे यह समान विभाग था।

वैदिक गवेषक प० भगवद्दत्त जी बी० ए० अपने इतिहास [12] मे लिखते है।

"ऋग्वेद की प्रत्येक शाखा मे दश ही मण्डल थे, अत जब सब शाखाओ का वर्णन करना होता है, तो दाशतयी शब्द का प्रयोग

[11] ऋग्वेद सहिता भाष्य [illegible] प्रथमखण्ड, द्वितीयावृत्ति, भूमिका पृष्ठ २६।

[12] "वैदिकवाङ्मय का इतिहास प्रथम भाग प्रथम सस्करण, पृष्ठ १३१ १४०

किया जाता है। इसी प्रकार यह भी प्रतीत होता है कि प्रत्येक आर्च शाखा मे ६४ अध्याय ही थे। अनुवाकानुक्रमणी और चरणव्यूहो मे लिखा है—

'अध्यायाश्चतु षष्टिर्मण्डलानि दशैव तु

अर्थात्—६४ अध्याय और १० ही मण्डल हैं —

इसी भाव से कुमारिल अपने 'तन्त्रवार्तिक' मे लिखता है —

'प्रपाठकचतु षष्टिनियतस्वरकै पदै

लोकेष्वप्यश्रुतप्रायै ऋग्वेद क करिष्यति"

(चौखम्बा संस्करण पृष्ठ १७८)

कुछ लोग ऋ० मडल ८ के सूक्तो मे आए हुए ८० बालखिल्यमन्त्रो को अर्वाचीन मानते हैं। यथा वैदिक मुनि स्वामी हर प्रसाद जी ने 'वेदसर्वस्व 'स्वाध्याय सहिता' मे वेदो के विषय मे अटकल पच्चू बाते लिखा है। उन्हीं के लेखो के आधार पर साहित्य भूषण प० रघुनन्दन शर्मा लिखते है—"ऋग्वेद के बाल खिल्य सूक्तो के लिए ऐतरेय ब्रा० ५८८ में लिखा है कि वज्रेण बालखिल्याभिर्वाच कूटेन'। इसके भाष्य मे सायणाचाय कहते हैं कि 'बालखिल्यनामका कचन महर्षय तेषा सम्ब-न्धीन्यष्टौ सूक्तानि विद्यन्ते तानि बालखिल्य नामके ग्रन्थे समाम्नायन्ते' । इस वर्णन मे मालूम हुआ कि बालखिल्य सूक्तों की अलग पुस्तक थी। वही पुस्तक ऋग्वेद के परिशिष्ट मे आगई है। और अब तक 'अथ बालखिल्य' और 'इति बालखिल्य' के साथ ऋग्वेद मे ही सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त अनुवाका नुक्रमणी मे स्पष्ट लिखा हुआ है कि सहस्रमे-तत्सूक्ताना निश्चित खैलिकेर्विना' अर्थात् खिल भाग को छोडकर ऋग्वेद के एक सहस्र सूक्त निश्चित हैं। यहा बालखिल्यो को ऋग्वेद की गिनती मे नहीं गिना गया। इस तरह से ऋग्वेद का खिल सब को ज्ञात है" [१३]

समीक्षा—यद्यपि प० रघुनन्दन शर्मा ने वेदो के विषय मे बीस वर्ष के अन्वेषण के पश्चात् "वैदिक सम्पत्ति नामक एक अत्यन्त महत्व पूर्ण ग्रन्थ लिखा है तथापि इस ग्रन्थ म आर्य सिद्धान्त क विरुद्ध बहुत सी बाते लिखी हुई है। [१४]

शर्मा जी के भ्रम का कारण स्वामी हरि प्रसाद जी की 'वेदसर्वस्व' नामक पुस्तक है। वास्तव मे बालखिल्य सूक्त परिशिष्ट नहीं क्योंकि ऋग्वेद के पद, मन्त्र, सूक्त, सख्याओ मे उनकी गिनती की जाती है। श्रौत सूत्र ऐतरेय ब्राह्मण, निरुक्त आदि ने इन सूक्तो को वेद भाग स्वीकार किया है।

शर्मा जी ने ऐतरेय ब्रा० ५८८ का प्रमाण दिया वह प्रक्षिप्त है [१५]

उनका दिया हुआ प्रमाण इसी भाग के अन्तर्गत है इसलिये कोई अप्रामाणिक लेख किसी दूसरे के अप्रामाणिक करने मे प्रमाण

[१३] "वैदिक सम्पत्ति" द्वितीय सस्करण पृष्ठ ५७०

[१४] "देखो मासिक पत्र दयानन्द सन्देश' दहला माला ३ मई सन् १९४१ ई, मुक्ता ४, पृष्ठ ४३७-४३८ मे 'वैदिक सम्पत्ति शीर्षक लेख।

[१५] देखो 'Encyclopedia Britannica" मे प्राचीन सस्कृत (Ancient Sanskrit Literature) सम्बन्धी लेख।

किस प्रकार माना जा सकता है ?

श्री सायणाचार्य का कोई (केचन) शब्द स्वय बतलाता है कि उसको बालखिल्य नामक किसी कथित महर्षि का कुछ ज्ञान नहीं था। ऐसा प्रतीत होता है कि, उसने, बिना किसी प्रमाण के ही बालखिल्य ऋषि और उनके कथित बालखिल्य ग्रन्थ की कल्पना करली।

दूसरा प्रमाण शर्मा जी ने किसी 'अनुवाका-नुक्रमणी' के नाम से दिया है। परन्तु इसी अनुवाकानुक्रमणी के नाम से प० भगवद्दत्त जी बी० ए० ने लिखा है।

एतत् सहस्र दश सप्त चैवाष्टावतो वाष्कलकेऽधिकानि।
तान्पारणे शाकले शैशिरीये वदन्ति शिष्टा न खिलेषु विप्रा ॥६३॥"

अर्थात्—वाष्कल शाखा पाठ मे शाकल शाखा पाठ से आठ सूक्त अधिक हैं। इस प्रकार शाकल पाठ मे १०१७ सूक्त है और वाष्कल शाखा पाठ मे १०२५ सूक्त है।[1]

इससे स्पष्ट हो जाता है कि शर्मा जी का उद्धृत किया हुआ वाक्य ऋग्वेद सहिता से नही किन्तु किसी शाखा विशेष से सम्बद्ध है

अत ये बालखिल्य सूक्त ऋग्वेद सहिता के अन्दर उनके जन्म काल से ही सम्मिलित है। शाखाओं से ऋग्वेद सहिता पृथक् थी और उसमे बालखिल्य सूक्त सम्मिलित थे। ये बालखिल्य सूक्त न प्रक्षिप्त है न परिशिष्ट है, किन्तु वेद के अग हैं। सम्भव है ये सूक्त प्रारम्भ मे बहुत प्रचलित हों या बालखिल्य नामक कोई व्यक्ति प्रचारक हो। इसलिये उसी के नाम से इनकी प्रसिद्धि हो गई, और सुगमता से लोगों को मिल जाय इसलिये उनको आरम्भ और अन्त मे "अथ" और "इति" किसी ने लगा दी।

ये सूक्त आठवे मण्डल के अन्त मे नहीं किन्तु उसके बीच मे हैं। प्रो० मैक्समूलर ने जो ऋग्वेद का शुद्ध सस्करण प्रकाशित किया था उसमे भी ये सूक्त मौजूद है।

ग्रीफिथ ने बड़ी भारी भूल की है कि इन सूक्तों को आठवे मण्डल के अन्त मे रख दिया है। चतुर्वेद भाष्यकार प० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार, मीमासातीर्थ ने लिखा है —

बालखिल्य सूक्तो का पीछे से प्रविष्ट हो जाना यह भी युक्त ठीक नहीं। भिन्न २ शाखा मे बालखिल्य का होना और न होना है। परन्तु बालखिल्य सूक्त को ऋग्वेद का अश सभी मानते है। यज्ञ कर्म मे उन सूक्तों का भी विनियोग अन्यसूक्तो के समान ऋषियो ने किया है। आश्वलायन और शाखायन दोनों ही श्रौत सूत्रो मे उसका यथास्थान प्रयोग है।[17]

वैदिक गवेषक प० भगवद्दत्त जी लिखते है —

'यथा शाकलो मे कई बालखिल्य सूक्त नहीं है, परन्तु वाष्कलो मे ये मिलते है। मूल ऋग्वेद मे ये सारे समाविष्ट है।'[18]

पुन 'आठवे मण्डल के ११ सूक्तों मे आए हुए ८० बालखिल्य मन्त्र भी सम्मिलित है।

[16] "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" प्रथम भाग प्रथम सस्करण पृष्ठ ६८।

[17] ऋग्वेद सहिता भाषा भाष्य, प्रथम खण्ड, द्वितीयावृत्ति, भूमिका पृष्ठ ८-९

[18] "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" प्रथम सस्करण, पृष्ठ ७६

ये ऋग्वेद के अङ्ग है। हा, कई शाखाओं मे ये नहीं पाए जाते।"

इन्हीं बालखिल्यसूक्तो की प्राचीनता के सम्बन्ध मे विन्टरनिज ने लिखा है —

'The word Khila means "Supplement' and this name in itself indicates that they are texts which were collected and added to the Samhita only after the latter had already been conducted This does not exclude the possibility that some of these Khilas are of no less antiquity then the hymns of the Rigveda Samhita, but for some reason unknown to us were not included in the collection ' २०

अर्थात—खिल शब्द के अर्थ परिशिष्ट के हैं और यह नाम स्वय प्रकट करता है कि यह मूल है और एकत्रित करके सहिता में पीछे से शामिल किए गए। परन्तु यह सम्भावना है कि इन (खिल मंत्रो) मे से कुछेक की प्राचीनता ऋग्वेद की अन्य ऋचाओं से कम नहीं। यह बात समझ मे नहीं आती कि इन्हे परिशिष्ट क्यों कहा गया?" पुन आप लिखते हैं —

"The eleven Balkhilya hymns in all manuscripts are found at the end of the book VIII" २१०

अर्थात—ये ११ सूक्त बालखिल्य के सभी हस्तलिखित कापियों मे पाए जाते हैं। इन प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि ऋग्वेद के १० मण्डल और अष्टम मण्डल के बालखिल्यसूक्त आधुनिक नहीं हैं।

श्री नगेन्द्रनाथवसु 'प्राच्यविद्यामहार्णव तत्त्वचिन्तामणि' 'सिद्धान्तवारिधि,' एम० आर० ए० एस० ने भी अपने कोष मे १० मडल माने है। आप लिखते है —

'ऋग्वेद मे १० मण्डल है। प्रथम मे २४ अनुवाक, १६१ सूक्त द्वितीय मे ४३ सूक्त तृतीय मे ५ अनुवाक ६२ सूक्त चतुर्थ मे ५ अनुवाक ८७ सूक्त षष्ठ मे ६ अनुवाक, ७५ सूक्त अष्टम मे १० अनुवाक १०३ सूक्त नवम मे ७ अनुवाक, ११४ सूक्त और दशम मण्डल मे १२ अनुवाक १६१ सूक्त विद्यमान है। इस प्रकार सूक्तसमष्टि १०२८ है।"२२

राव राजा डा० श्यामविहारी मिश्र रायबहादुर. डि लिट् तथा रायबहादुर प० शुकदेव विहारी मिश्र "मिश्रबन्धु" पाश्चात्यों के पूरे भक्त होते हुए भी ऋग्वेद के १०म मण्डल को आधुनिक नहीं मानते। आप लिखत है —

' पूरे दशवे मण्डल का इनके पीछे बनना समझ मे नहीं आता। दशवे मण्डल मे बहुत से बड़े पुराने ऋषि है जैसे चाक्षुष मनु आदि। तीसरे और सातवे मण्डल मे राजा सुदास का वर्णन आया है जो पुरु के वंशधरों मे ४० वीं पीढी पर थे। चाक्षुष मनु वैवस्वत

१९ वही, पृष्ठे १३५
२० A History of Indian literature" P 59-60
२१ Ibid P 60
२२ "हिन्दी विश्वकोष" तृतीय भाग, पृष्ठ ४२६ कालम १

मनु से भी पहले के हैं।। सुदास का तीसरे और सातवे मडलो के अनुसार ययाति के वशजो से युद्ध हुआ था। इधर दसवे मडल मे 'स्वयं' ययाति की रचनाएँ प्रस्तुत है। अत पौराणिक साक्षी पर न विचार करने से भी वेदो ही के आधार पर सिद्ध होता है कि दसवे मडल की कम से कम कुछ ऋचाए तीसरे और सातवे मडलो से भी पुरानी है।[२३]

यह सम्मति वेदो पर प्रहार करने वाले और गोमास भक्षण[२४] सिद्ध करने वाले की है। ऐसे व्यक्ति भी ऋग्वेद के १० मडलों को अर्वाचीन नहीं मानते !!

अनेक पाश्चात्य विद्वान् भी ऋग्वेद को अत्यंत प्राचीन मानते हैं। यथा—

मि० डब्ल्यू डब्ल्यू हण्टर कहते है —

The age of this venerable hymnal Rig-Veda is unknown[२३]

अर्थात्—इस पूजनीय ऋग्वेद की आयु अज्ञेय, अपरिमित है।

प्रो० हीरन कहते हैं —"वेद ससार मे सब से प्राचीन रचना है।" २६

प्रो० मैक्समूलर कहते हैं —

"They (the Vedas) are the oldest of books in the library of mankind'[२४]

अर्थात्—वेद मानवीय पुस्तकालय मे सब से प्राचीन हैं।

पुन आप लिखते हैं —

One thing is certain, there is nothing more ancient and primitive, not only in India, but in the whole Aryan world, than the hymns of the Rig Veda[२५]

अर्थात्—एक बात निश्चित है कि ऋग्वेद की ऋचाओं की अपेक्षा केवल भारत ही नहीं, वरन सम्पूर्ण आर्य जगत् मे कोई भी चीज प्राचीन नहीं है।

वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से परिवर्तन शील नहीं है। परमात्मा ने सृष्टि के आदि मे पूर्ण ज्ञान दे दिया है। उसमे कभी घट बढ नहीं होता। मनुष्यो के ज्ञान मे परिवर्तन होता रहता है। इसका वास्तविक कारण मनुष्य की अल्पज्ञता है। ब्राह्मण ग्रन्थो से लेकर तुलसीकृत रामायण तक मे धूर्त्तो ने मिलावट कर दी है। परन्तु संहिताओ मे किसी ने भी मिलावट नहीं की जब किसी ने कभी भी वेद विषय मे धोखा देना चाहा वह पकडा गया और लज्जित हुआ है। यथा ऋग्वेद १०।१८।७ के *"इमा नारीरविधवा सुपत्नी जनयो यानिमग्रे"* मन्त्र मे धूर्तोंने *"योनि-मग्रे"* के स्थान मे *"योनिमग्ने"* बना दिया। और सती प्रथा की पुष्टि मे इस मत्र को प्रस्तुत किया था।

परन्तु श्री सायणाचार्य ने *"योनिमग्रे"* शब्द की ही व्याख्या की है इससे धर्म ध्वज

[२३] "बुद्ध पूर्व का भारतीय इतिहास" तृतीय सस्करण, पृष्ठ १४६-१५०

[२४] देखो वही पृष्ठ १४१ पंक्ति १०

[२५] Hindu Superiority Second edition P 179

पण्डितो की चाल न चल सकी।

इसी प्रकार मुस्तफापुर के शास्त्रार्थ मे यजुर्वेद में प० गङ्गा विष्णु काव्यतीर्थ ने '*आखु-वाहन गजाननाय*" ऐसा पाठ अपनी ओर से जोड़ दिया था। वे भी पकडे गए थे। ३०

जिस प्रकार परमात्मा के रचे हुए सूर्य, चन्द्र, पृथिव्यादि को कोई नही बना सकता है उसी प्रकार ईश्वर के रचे हुए वेदो को कोई नहीं बना सकता और न उसमे कुछ मिला सकता है। वेद भगवान् स्वय कहते हैं-"*पश्य देवस्य काव्य न ममार न जीर्यति* '=परमेश्वर के काव्य (वेद) को देखो, वे (वद) न मरते है, न बूढे होते हैं।

Historical Researches Vol II P 146 Max Muller's India, what can it teach us' P 121 Hindu Superiority Secend Edition P 179 Max Muller's Origin and growth of religion B 152

२९ देखो—प० बदरीदत्त जोशी कृत '*विधर्मो द्वाह मीमासा* ' प्रथम सस्करण, पृष्ठ ४५ तथा प० शिवशङ्कर शर्मा काव्य तीर्थ कृत "*वैदिक-इतिहामार्थ निर्णय*" प्रथम सस्करण भूमिका पृष्ठ ×।

३० देखो—महोपदेशक प० शिव शर्मा जी कृत "*धर्म शिक्षा* ' तृतीय भाग, पृ०ठ ७४ इस विषय की साक्षी प्रो०मैक्समूलर भी देते हैं—

"The texts of the Vedas have been handed down to us with such accuracy that there is hardly a various reading in the proper sense of the word, or even an uncertain in the whole of the Rigveda" 31

अर्थात्—"वेद सहिताए हमको इस शुद्ध रीति से प्राप्त कराई गई हैं कि उनमे कोई भी पाठ-भेद हम को नहीं मिलता। सारे ऋग्वेद मे किसी एक स्वर का भी भेद हमको नहीं मिला।' प्रो० केगी साहब भी लिखते है—

"Since that time, nearly 3000 years ago, it (the text) has suffered no change whatever with a care such that the history of other literatures has nothing similar to compare with it '

अर्थात्—तीन सहस्र वर्ष से अब तक वेदों की सहिताओं मे कोई पाठ भेद नहीं हुआ। इसकी समानता किसी दूसरे साहित्य मे नहीं पाई जाती।

अतएव प्रो० मैकडौनल तथा उनके अनुयायियो का यह भ्रम है कि वे ऋग्वेद के १० म मण्डल को अर्वाचीन व परिशिष्ट मानते है। आशा है आर्यजगत् के विद्वान इधर ध्यान देंगे। शमित्योम्!!!

Max Mulle r s Origin of Religion "B 131 तथा Rigveda Vol I, Bage XXVII

Keige s Rigveda P 22

[डा० भण्डारकर "Indian antiquity 1874 मे लिखते है -The object of these different arrangements is simply the most accurate preservation of the sacred text अर्थात् भिन्न पाठो का अभिप्राय उस पवित्र पुस्तक के पाठ को अतीव शुद्धता से रक्षित रखने का है।"

एव म० आयर अपनी "*ऋक्स*" पुस्तक के पृष्ठ १७३ मे लिखते हैं—The care with which the hymns hav been preserved has no precedence in human history " अर्थात्—जिस यत्न से वेदो की रक्षा की गई उसका प्रतिबिम्ब मानुषी इतिहास में नहीं मिलता।

श्री अरविन्द का अमरीका को संदेश

१५ अगस्त के दिन श्रीमती पर्ल बक की अध्यक्षता मे श्री अरविन्द जयन्ती मनाने के लिये न्यूयार्क म एक अधिवेशन क आयोजना हुई थी। उस अधिवेशन क आयोजको ने ही अमरीका के लिये एक सदेश की प्रार्थना की थी। सदेश म श्री अरविन्द बताते है कि उन्हे जो कहना है 'वह समान रूप से पूर्व के लिये भी सदेश हो सकता है"। वह सदेश पूरे का पूरा निम्न प्रकार है—

ऐसा मत सोचो कि तुम पश्चिम के हो और दूसरे पूर्व के। सब मनुष्य एकही दिव्य स्रोत से प्रकट हुये है और उसी स्रोत की एकता को भूतल पर अभिव्यक्त करना ही उनका वास्तविक उददेश्य है।

४८५९ —श्री माता जी

पन्द्रहवीं अगस्त के उपलक्ष्य म पश्चिम के नाम सदेश भेजने की मुझ से प्रार्थना की गई है परन्तु मुझे जो संदेश देना है वह समान रूप से पूर्व को भी दिया जासकता है। मानव परिवार के इन दो अगो के भेद वैषम्य की विस्तत चर्चा करने और यहा तक कि इन्हे एक दूसरे के विरोध म खडा करने की आजकल प्रथा सी पड गई है, परन्तु मैं तो भेद वैषम्य की अपेक्षा अभेद एकत्व का ही विशेष कर विस्तार से वर्णन करना चाहू गा सच पूछिये तो पूर्व और पश्चिम के लोगो की एक ही प्रकृति है, एक ही भवितव्यता है, महत्तर पूर्णता के लिये एक समान अभीप्सा है, अपने से उच्चतर किसी वस्तु के लिये एक समान जिज्ञासा है,—किसी ऐसी वस्तु के लिये जिसकी ओर वे भीतर से और बाहर से भी अग्रसर हो रहे है। कुछ विचारकों की ऐसी प्रवृत्ति ही हो गई है कि वे पूर्व की आध्यात्मिकता या गुह्यवाद तथा पश्चिम के जडवाद पर दृष्टि गडाये रहते हैं,। परन्तु पश्चिम मे भी आध्यात्मिक स्रोत एव जिज्ञासा पूर्व से कम नहीं रही है और चाहे वहा ऋषि मुनि तथा गुह्यदर्शी पूर्व की भाति बहुतायत से न हुए हों पर वे हुए अवश्य है। दूसरी ओर पूर्व म भी जडात्मक प्रवृत्तिया रही हैं और भौतिक एश्वर्य-वैभव, तथा जीवन, जडतत्व एव इहलोक के साथ पश्चिम सरीखे या तदभिन्न व्यवहार भी रहे है। पूर्व और पश्चिम म न्यूनाधिक निकट संपर्क और मेल जोल सदा ही रहा है, उन्होंने एक दूसरे पर प्रबल प्रभाव डाला है और आज तो निकटतर सपर्क के लिये विश्वप्रकृति तथा नियति का अत्यधिक दबाव पड रहा है।

हमारे सामने आज आध्यात्मिक और भौतिक दोनो प्रकार की एक ऐसी साझी आशा तथा एक ऐसी साझी भवितव्यता जगमगा रही

है जिसके लिये दोनो को मिलजुलकर काम करने की जरूरत है। हमे अब अपना ध्यान पहले की तरह भेद वैषम्य पर नहीं बल्कि मेल तथा ऐक्य और यहा तक कि एकत्व पर लगाना चाहिये, क्योकि उस साझे आदर्श एव अटल लक्ष्य तथा चरितार्थता को सपादित एव साधित करने के लिये इन्हीं चीजो की जरूरत है। उसी आदर्श के पथ पर विश्वप्रकृति ने शुरु शुरु मे अधवत् कदम रखा था और उसी की ओर वह आज अपने प्रारभिक अज्ञान की जगह उदीयमान वृद्धिशील

सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी

ज्ञान की ज्योति म निरन्तर धैर्यपूर्वक बढ रही है।

परन्तु वह आदर्श और वह उद्देश्य क्या होगा ? यह तो इस बात पर निर्भर है कि जीवन की वास्तविकताओ तथा परम सद्वस्तु के सम्बन्ध मे हमारा विचार क्या है ?

यहा हमे यह ध्यान मे रखने की जरूरत है कि पूर्व और पश्चिम की प्रवृत्तियो मे कोई आत्यन्तिक भेद नहीं है। वे केवल उत्तरोत्तर भिन्न भिन्न दिशाओ मे विकसित होती गई हैं। सर्वोच्च सत्य है आत्मा का सत्य। वह आत्मा विश्वातीत परम आत्मा होता हुआ भी संसार मे तथा सर्वभूत मे अन्तर्यामी रूप से विद्यमान है। वह सब को धारण कर रहा तथा चेतना के विकाश द्वारा उस उद्देश्य, लक्ष्य एव चरितार्थता की ओर ले चल रहा है जो चरितार्थता प्रकृति की धु धली अचेतन प्रारभिक अवस्थाओं से लेकर निरन्तर उसका लक्ष्य रही है। वह परम आत्मा सत्ता का एक ऐसा रूप है जो हमारे अस्तित्व के रहस्य का सूत्र हमे पकडा देता है और ससार की सार्थकता प्रदान करता है। पूर्व ने नित्यनिरन्तर तथा उत्तरोत्तर आत्मा के परम सत्य पर ही अधिक से अधिक बल दिया है, यहा तक कि इसने अपने ऐकातिक दर्शन शास्त्रो मे जगत् को माया कह कर त्याग दिया है और आत्मा को एकमात्र सद्वस्तु माना है। पश्चिम ने सदा सर्वदा अधिकाधिक अपना सारा बल ससार पर लगाया गया है अर्थात् हमारी भौतिक सत्ता के साथ मन तथा प्राण के व्यवहारो पर, ऐहिक प्रभुत्व पर, मन तथा प्राण की पूर्णता और मानव प्राणी की किसी न किसी प्रकार की ऐहिक कृतार्थता पर। हाल ही म यह स्थिति पराकाष्ठा को पहु च गई है और उसने आत्मा का निषेध कर डाला है, यहा तक कि जडप्रकृति को एकमात्र सद्वस्तु के रूप मे सिंहासनासीन कर दिया है। एक ओर तो आध्यात्मिक पूर्णता का अनन्य आदर्श और दूसरी ओर जाति की पूर्णता, समाज की पूर्णता तथा मानव मन एव प्राण का और मनुष्य के भौ

तिक जीवन का पूर्ण विकास ही भविष्य का महान् मे महान् स्वप्न बन गया है। तथापि दोनों ही सत्य हैं और दोनों ही विश्वप्रकृति मे आत्मा के उद्देश्यके अग समझे जासकते हैं, ये एक दूसरे से असगत नहीं। असल मे आवश्यकता इस बात की है कि इन्हे विषमता से मुक्त कर अपनी भविष्य दृष्टि मे समाविष्ट तथा समन्वित कर लिया जाय।

पश्चिम के विज्ञान ने यह गवेषणा की है कि विकास इस जड जगत् मे जीवन तथा उसकी प्रक्रिया का रहस्य है, परन्तु इसने चेतना के विकास की अपेक्षा आकृति और उपजातियो के विकास पर ही अधिक बल दिया है। यहा तक कि चेतना को विकास के प्रयोजन का सम्पूर्ण मर्म नहीं वरन दैव सयोग माना है। पूर्व मे भी कुछ विचारकों तथा कतिपय दर्शनो एव धर्म शास्त्रो ने विकास का सिद्धान्त स्वीकार किया है, परन्तु वहा इसका अभिप्राय है आत्मा का विकास अर्थात् व्यक्ति के विकसनशील तथा क्रमिक रूपो और अनेक जन्मो मे से गुजरते हुए आत्मा का अपने सर्वोच्च सत्य स्वरूप मे विकसित होना। क्योंकि यदि आकार के भीतर कोई चेतन सत्ता है तो वह सत्ता चेतनाका अस्थायी दृग्विषय नहीं हो सकती, यह एक ऐसी आत्मा होनी चाहिये जो अपनेको चरितार्थ कर रही है और वह चरितार्थता तभी सम्पन्न हो सकती है यदि आत्मा अनेकानेक क्रमागत जन्मो तथा नानाक्रमिक शरीरो मे फिर फिर पृथ्वी पर प्रकट हो।

अब तक विकासकी प्रतिक्रिया यही रही है कि अचेतन जड प्रकृतिसे तथा उसमे पहले अवचेतनका और सचेतन प्राणका उद्भव और फिर सचेतन मनका विकास—प्रथमन पशुके जीवनमे और फिर सचेतन तथा विचारशील मानवमे, जो मानव विकासात्मिका प्रकृतिकी सर्वोच्च वर्तमान उपलब्धि है। मनोमय प्राणी का सर्जन इस समय प्रकृतिका परमोच्च कार्य है और इसे ही उसका अन्तिम कार्य समझने की ओर विचारकों की प्रवृत्ति दीख पडती है परन्तु इससे आगे विकासके एक और कदम की भी कल्पना की जा सकती है प्रकृति के सामने यह लक्ष्य भी हो सकता है कि वह मनुष्य के अपूर्ण मन से परकी एक ऐसी चेतना का विकास करे जो सबके अज्ञानका अतिक्रम कर सत्यको अपने जन्मसिद्ध अधिकार एव स्वभावके रूपमे धारण करे। नि सन्देह एक ऐसी परमोच्च चेतनाका भी अस्तित्व है जिसे वदमे ऋत चेतना कहा गया है और जिसे मैंने अतिमानसका नाम दिया है। उसमे परम ज्ञान अन्तर्निहित है और न तो उसे इसकी खोज करनी पडती है और न ही इससे बार २ चूक जानेकी कोई बात उपस्थित होती है। एक उपनिषद् मे कहा गया है कि मनोमय पुरुष से अगला और उपरला सोपान है विज्ञानमय जीव उसीमे आत्माको आरोहण करना है और उसी के द्वारा इसे आध्यात्मिक सत्ता का पूर्ण आनन्द उपलब्ध करना है। यदि इस लक्ष्य मे विश्व प्रकृतिके अगले विकास-सोपान के रूपमे विज्ञानमय स्तरकी उपलब्धि हो सके तो प्रकृति का उद्देश्य चरितार्थ हो जायगा और हम इस लोक मे भी जीवनकी पूर्णता तथा इस शरीरमे भी या सम्भवत पूर्णता प्राप्त शरीर मे पूर्ण

आध्यात्मिक जीवन की प्राप्तिकी कल्पना को हृदयगम कर सकेंगे। यहा तक कि हम पृथ्वी पर दिव्य जीवनकी प्रतिष्ठा की चर्चा कर सकेंगे और पूर्णताकी सभावनाका हमारा मानवी स्वप्न सिद्ध हो जायगा। इसके साथ ही पृथ्वी पर स्वर्गको प्रतिष्ठित करनेकी हमारी वह अभीप्सा भी पूरी हो जायगी जो अनेक धर्मों तथा आध्यात्मिक ऋषियो एव मनीषियोम समान रूपसे पाइ जाती है।

मानव जीव का परम आत्माकी ओर आरोहण ही जीव का सर्वोच्च लक्ष्य एव ध्रुव नियति है, क्योकि वह परम आत्मा ही सद्वस्तु है, परन्तु आत्मा तथा उसकी शक्तियों का इस जगत् मे अवतरण भी हो सकता हे और वह जड जगत के अस्तित्व को उचित सिद्ध करेगा तथा सृष्टि को सार्थकता प्रदानकर उसका दिव्य प्रयोजन प्रकाशित करेगा और उसकी गुत्थी सुलभा देगा। इस अत्युच्च और अति महान् आदर्श के अनुसरणमे पूर्व और पश्चिम का समन्वय किया जासकता है, आत्मा जड प्रकृतिका आलिंगन कर सकती हे और प्रकृति आत्मा के अन्तर्गत अपने निजी सत्य स्वरूपकी तथा वस्तुमात्रम निगूढ सद्वस्तु की उपलब्धि कर सकती है।

—०—

मृत्यु के पश्चात् जीव की गति

अर्थात् पुनर्जन्म का पूर्वरूप

आर्य विद्वानो के विचारार्थ

[लेखक—श्री प० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० कार्य निवृत्त मुख्य न्यायाधीश टिहरी—जयपुर]

(गतोक से आगे)

१५. आत्मवाद Spiritualism थियो० सो० और श्री अरविन्द के सिवाय एक और सस्था है जो मृत्यु के बाद तुरन्त ही जीव का एक आत्मिक लोक (Spiritual World) मे जाना मानते हैं ये लोग (Spiritualists) आत्मवादी कहलाते है। उनका पुनर्जन्म मे विश्वास नहीं परन्तु वे उसका खण्डन भी नहीं करते। उनका मुख्य सिद्धान्त यह है कि जीवात्मा अमर है। मृत्यु के समय वह मरता नहीं, किन्तु एक नये लोक को जाता है। जो बहुत कुछ इस जगत् के सदृश है। वहा उसकी अपने पुराने परिचित आत्माओ और सम्बन्धियो से भेट होती है और उस लोक मे अपनी योग्यता और परिश्रम के अनुसार अपनी आत्मिक शुद्धि व उन्नति करता है। उस लोक से जाने का उद्देश्य भी यही है कि उसका आत्मिक विकास हो। उसके पहले मित्र व अन्य अच्छी आत्मायें उस की इस विकास मे सहायक होती हैं।

१६ आत्म लोक के निवासियों से बातचीत

इस जगत् के लोग कुछ अश तक उन मृत आत्माओं से बातचीत कर सकते हैं। उसके कई उपाय हैं। एक साधारण उपाय यह है कि छोटे से तख्ते पर जिसको Planchett प्लैन शीट कहते हैं और जिसमे दो घूमते हुए पहिये और एक पेंसिल लगे रहते है, प्रयोग करने वाले मनुष्य अपने हाथ रखते है, और जिस आत्मा से बातचीत करना अभीष्ट है उससे प्रश्न करते है। वह तख्ता पहियों के कारण घूमता है, और उस के नीचे जो कागज रक्खा जाय उस पर पेंसिल से कुछ लिख जाता है। आत्मवादियो Spiritualists का यह विश्वास है कि वास्तव मे उस आत्मा की ही शक्ति से प्लैन शीट घूमती है, और प्रश्नो के उत्तर लिखती है। जो इस मत के विरोधी हैं वे इसको प्रयोग करने वालो का भ्रम, अर्थात् उनके अन्त करण के विचारों का फल, अथवा ढोंग समझते हैं। माध्यमो द्वारा जिनको इस कार्य्य का कुछ अभ्यास हो किसी प्रकार से मृत आत्मा को बुला कर और माध्यम के द्वारा उससे बातचीत करना भी माना जाता है।

१७ आत्मवादियों की संख्या

इस सस्था के अनुयायिओ की सख्या भारत मे तथा देशान्तरों मे पर्याप्त है और उनके अन्तर्जातीय सम्मेलन आदि भी होते रहते है। श्री बी० डी० ऋषि B. D Rishi भारत के एक प्रसिद्ध आत्म

वादी Spiritualist हैं जो भारत मे प्रचार करते है और देश देशान्तरों मे भी जाते है। उनकी सुभद्रा नामक एक पुस्तक लिखी हुई है जिसमे आत्मिक लोक Spirit World का अच्छा रोचक वर्णन है सुभद्रा उनकी स्त्री थी। जिमका कुछ वर्ष हुए देहान्त हो गया। ऋषि जी का दावा है कि उनको सुभद्रा जी से आत्मिक लोक से सवाद और प्रश्नो के उत्तर मिलते है। उन्हीं के आधार पर वह पुस्तक रची गई है।

१८ सर आलीवर लौज इग्लैंड के एक योग्य और सपन्नविद्वान् Sir Arther-Doyle सर आर्थर डायेल जिन का हाल मे देहावसान हुआ इस मत के प्रसिद्ध समर्थक थे और उनके लिखे हुए कुछ ग्रन्थ भी है। पर इस मत के सबसे बडे और सुप्रसिद्ध समर्थक सर आलीवर लाज Sir Oliver Lodge थे जिनके देहावसान को थोड़ाही समय हुआ। वे इग्लैंएड मे प्राकृत विज्ञान Physical Science के एक प्रमुख विद्वान् थे और रायल सोसायटी Royal Socitiey के कई वर्ष तक प्रधान रहे। इग्लैंड व योरप की और कई वैज्ञानिक सस्थाओं से उनका घनिष्ट सम्बन्ध था। उनके विषय मे एक बात यह भी है कि उनके एक सबन्धी योरप के दूसरे युद्ध मे मारे गये। उनकी मृत्यु के बाद उनकी आत्मा से उन का सपर्क हुआ जिससे उनकी आत्मा का और आत्मिक लोक Spirit world की सत्ता का उन पूर्ण प्रमाण मिल गया। परन्तु उन्होंने विज्ञान के आधार पर उस को सिद्ध करने के लिये कई प्रसिद्ध पुस्तके The Survival of the man और Phantom walls आदि लिखी है।

१७ आत्म लोक के निवासियों से वार्ता लाप का परिणाम थियो० सो० के विद्वान् व श्री अरविन्द भी इन प्रयोगों की सत्यता मे सन्देह नहीं करते, और प्राणमय व मनोमय लोकों तक ऐसे प्रयोगों द्वारा मृत आत्माओं से वार्तालाप करना सभव समझते है, श्री लेड बीटर ने अपने Inner life vol II मे आत्मवाद की प्रशसा की है और लिखा है कि उसकी शिक्षा मे बहुत कुछ थियोसफी की शिक्षा शामिल है। यह भी लिखा है आत्मवाद का एक उन्नत रूप भी है जिमको साधारण लोग नहीं जानते।

इसके साथ ही श्री एनीबेसट—ने यह मत प्रकट किया है कि जो मृत आत्मायें ऐसे प्रयोगों मे अपना अधिक समय लगाती है उनकी आध्यात्मिक उन्नति रुक जाती है। इस लिये ऐसे प्रयोगो मे अधिक व्यस्त होना उनके लिये हानि कारक है और जीवित मनुष्यों के लिये भी विशेष लाभ दायक नहीं सिवाय इसके कि उनका अपने मृत संबन्धियों वा मित्रों से एक प्रकार का मिलना हो जाता है। इसको पूर्वोक्त सब विद्वान् मानते हैं कि ऐसी आत्माओं की मरने के बाद कोई विशेष शक्ति या योग्यता नहीं बढ़ जाती और न किसी प्रकार भविष्य के ज्ञान की सामर्थ्य हो जाती है।

२० पूर्व जन्म की स्मृति के कुछ उदाहरण पुन र्जन्म होजाने

पर जीव को अपने पहले जन्म की स्मृति नहीं रहती। कुछ लोग यह आपत्ति उठाते हैं कि फिर पुनर्जन्म सत्य क्यो माना जाय, यह आपत्ति निराधार है श्री अरविन्द ने इसका बडे बल पूर्वक खण्डन किया है और दिख लाया है कि जब पुराना दिमाग Brain व सूक्ष्म शरीर भी छूट गया तो पुराने जीवन की स्मृति रहना (सिवाय विशेष दशा के) सर्वथा असम्भव है। (देखो Di ine Life vol II

परन्तु अपवाद रूप से (जिसके विशेष कारण होते हैं) कुछ व्यक्तियों को बाल्य अवस्था मे कुछ समय तक अपने पूर्व जीवन की स्मृति बनी रहती है। इसके उदाहरण बहुधा मिलते रहते हैं और पत्रादि मे छपते हैं, क्यो कि अपवाद रूप होते हुए भी वे पुनर्जन्म के सिद्धान्त का समर्थन करते हैं।

२१ उनसे पूर्वोक्त सिद्धान्त का समर्थन

मैंने ऐसे कई उदाहरणों की जो मेरी जानकारी मे आये जाच की वे सब सत्य पाये गये परन्तु ऐसा कोई भी उदाहरण नहीं पाया गया जिसमे पूर्व मृत्यु और दूसरे जन्म के बीच केवल १० मासका अन्तर हो। कुछ मास वा कुछ उदाहरणों मे एक दो वर्षो तक का अधिक अन्तर पाया गया जिस से परिणाम यही निकला कि मृत्यु के बाद जीव तुरन्त ही गर्भ मे प्रवेश करके दूसरा देह धारण नहीं कर लेता। ऐसे व्यक्तियों से पूछा गया तो वे पहली मृत्यु और दूसरे जन्म के बीच का हाल नहीं बतला सके। इस से इसी सिद्धान्त का समर्थन होता है कि वे आत्माये अपनी मृत्यु के बाद कुछ समय तक प्राणमय लोक मे रही परन्तु विशेष कारणों से जिनकी सभवता मानी गई है उनको अपने कर्मानुसार शीघ्र ही दूसरे शरीर मिल गये। प्राणमय लोक मे बहुत थोडे समय रहने के कारण उनको अपने पहले जीवन की स्मृति दूसरे शरीर म कुछ समय तक बनी रही। प्राणमय लोक के वृत्तान्तों की स्मृति रहना उस लोक के नियमो के किसी प्रकार अनुकूल नहीं माना जाता।

आर्य समाज साहित्य में इस विषय का विवेचन

आर्य समाजके साहित्य मे मैंने इस विषय पर केवल एक ग्रन्थ 'मृत्यु और परलोक देखा जो स्वर्गीय श्री महात्मा नारायण स्वामी जी का लिखा हुआ है उसमे श्री स्वामी जी ने इसी मत को माना है कि मृत्यु के बाद आत्मा को तुरन्त ही दूसरा शरीर धारण करना होता है। इसकी पुष्टि मे केवल एक प्रमाण *बृहदारण्यक* उपनिषद ४।४।३ कडिका का दिया है। मैं उक्त ग्रन्थ से स्वामी जी का पूरा वाक्य लिखता हूँ—

"याज्ञवल्क्य ने जनक को इसी प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था कि जैसे 'तृण जलायुका' (एक कीट विशेष) एक तिनके के अन्तिम भाग पर पहुँचकर दूसरे तिनके पर अपने अगले पाव जमाकर तब पहले तिनके को छोडता है इसी प्रकार जीवात्मा एक शरीर को उसी समय छोडता है जब दूसरे नये शरीर का आश्रय ग्रहण कर लेता है।' (*मृत्यु और परलोक* पृ० ८६)

श्री नारायण स्वामी जी की अपूर्व योग्यता का श्रद्धा पूर्वक मान करते हुए मुझको लिखना पड़ता है कि ऊपर उपनिषद् के प्रमाण से उनके मत का समर्थन नहीं होता। मैं उपनिषद् की उस पूरी कण्डिका को नीचे लिखता हूँ जिसके दो शब्द 'तृण जलायुका' श्री स्वामी जी ने अपनी पुस्तक मे दिये है—

श्री नारायण स्वामी जी का मत

'तद्यथा तृणजलायुका तृणस्यान्त गत्वा अन्यमाक्रम माक्रम्यात्मानमुपसहरत्येवमेवायमात्मेद शरीर निहत्याविद्या गमयित्वाऽन्यमाक्रममाक्रम्यात्मानमुपसहरति। (बृहद्० उप० ४।४।३)

इसका शब्दार्थ यह है—

जैसे तृणजलायुका नाम कीडा (जिसको सूंडी कहते है) एक तृण के किनारे पर पहुँच कर दूसरे सहारे (आक्रम) को पारकर (आक्रमण करके) अपने आप को लाता है इसी प्रकार यह आत्मा इस शरीर को छोडकर (निहत्य=नष्ट करके) अविद्या को पार करके दूसरे सहारे (आक्रम) को पार करके अपने को लाता है।"

उससे मेरा मत भेद

उपनिषद् मे ये शब्द नहीं है कि 'इस शरीर को छोड़ कर दूसर शरीर को पाकर अपने को लाता है। परन्तु शब्द आक्रम है, जिसका अर्थ सहारा है। क्रमु (पाद विक्षेपे,) धातु से आक्रम शब्द बना है जिसके अर्थ पाव रखने के हैं। जब जीवात्मा मृत्यु के समय भौतिक शरीर को छोड़ता हे तो (दूसरे मत के अनुसार) प्राणमय लोक मे उसके लिये स्थान निश्चित हो जाता हे तब ही वह इस स्थूल शरीर को छोडता है। इसलिये उपनिषद् का पूर्व लिखित वचन उस मत के विरुद्ध नहीं और तृण जलायुका का जो दृष्टान्त दिया गया है वह दोनो मत पर एक सा लागू हो सकता है। उसका यह भाव लेना आवश्यक नहीं कि एक शरीर से दूसरे शरीर ही मे जाता है। छोडने के समय शरीर शब्द का प्रयोग है (इद शरीर निहत्य) परन्तु दूसरे स्थान पर जाने के लिये आक्रम शब्द आया है (अन्य माक्रममाक्रम्य आत्मान उपसहरति) यह भाव भी हो सकता है कि स्थूल शरीर को छोडकर प्राणमय लोक को जाता है।

२५. उपनिषद् का मत

मैं बृहदारण्यक की पूर्वोक्त कण्डिका से अगली कण्डिका ४ को भी लिखना उचित समझता हूँ जिस से स्पष्ट होगा कि उक्त उपनिषद् से दूसरे मत की ही अधिक पुष्टि होती है "तद् यथा पेशस्कारी पेशसो मात्रामुपादायान्यन्नवतर कल्याणतर रूप तनुते, एवमेवायमात्मेद शरीर निहत्याविद्या गमयित्वान्यन्नवतर कल्याणतर रूप कुरुते, पित्र्य वा गन्धर्व वा, दैव वा प्राजापत्य वा, ब्राह्म वान्येषा भूतानाम्।"

(बृहद् उप० ४।४।४)

(अर्थ) जैसे सुवर्णकार सोने की मात्रा लेकर दूसरा नया अतिशय सुन्दर स्वरूप (वस्तु) बनाता है। इसी प्रकार यह आत्मा इस शरीर को नष्ट कर के, (निहत्य) अविद्या को दूर करके (जन्मान्तर के लिये) नया अधिक कल्याणकारी रूप बनाता है, पितृ सम्बन्धी वा गन्धर्व वा देव वा प्रजापति सम्बन्धी वा ब्रह्मसम्बन्धी

वा अन्य भूतो का।

पेरा १ १० व १४ मे ऊपर कहा गया है कि जीवात्मा का मृत्यु के बाद प्राणमय (या कर्म लोक) और मनोमय (देव स्थान) लोक मे इसी अभिप्राय से निवास होता है कि जीवात्मा वहा रह कर पूर्व जीवन के प्राणमय कोष को नष्ट कर के दूसरा नया अधिक उन्नत कोश तय्यार करे और मनोमय कोश को भी अधिक उन्नत रूप का बनावे। यही भाव ऊपर लिखी कण्डिका का है। इस प्रकार पूर्व जन्म के सूक्ष्म शरीर को उन्नत करके और नये देह के लिये अधिक उपयोगी बना कर जीवात्मा दूसरा नया देह धारण करता है वह शरीर चाहे साधारण मनुष्य का हो, अथवा 'पितर वा गन्धर्व वा देव वा प्रजापति वा ब्रह्म का हो वा अन्य भूतों का हो। पितर, गन्धर्व, देव प्रजापति, व ब्रह्म भी साधारण मनुष्यों से ऊपर जीवो की अन्य अवस्थाओं के नाम है जिनका इसी बृहदारण्यक उप के ३ ब्राह्मण की ३३ कण्डिका मे सविस्तर वर्णन आया है और तैत्तिरीय उपनिषद् की ब्रह्मवल्ली म भी लगभग उसी प्रकार आया है।

२६. आत्म वाद की आलोचना

श्री स्व नारायण स्वामी जी ने पूर्वोक्त मत के समर्थन मे और कोई प्रमाण 'मृत्यु और परलोक' पुस्तक मे नहीं दिये। आत्मवाद Spiritualism के खण्डन मे जिसका पैरा १५ से १६ तक्म वर्णन आया है बहुत विस्तार के साथ लिखा है, वास्तव मे योरुप व अमरीका मे इस आत्मवाद के बहुत से अनुयायी रुपया कमाने के लिये अनेक प्रकार के छल कर के मृत आत्माओ को बुलाने के ढोग रचते है। इस लिये इस सस्था के प्रयोग करने वालो और माध्यमो mediums की ओर अब शिक्षित लोगों की श्रद्धा कम होगई है। स्वामी जी ने भी ऐसे पाखण्डी लोगो के उदाहरण दिये है। परन्तु इससे उस मसार के मूल सिद्धान्तका खण्डन नहीं होता। यह ठीक है कि लन्दन की Psychic soc ety या आत्म विद्या सभा की जाच म कुछ आत्मवादी माध्यमो के छल पाये गये। परन्तु सर ओलिवर लाज Oliver Lodge ने जो अपने समय के सर्व श्रेष्ठ विज्ञान वेत्ता थे पूर्वोक्त आत्मवादियो के छल स्वीकार करते हुए उनके इस मूल सिद्धान्त को विज्ञान के आधार पर सिद्ध माना है कि मृत्यु के बाद जीवात्मा का अस्तित्व रहता है और वह दूसरे लोकमे निवास करता है जो इस लोक से भिन्न है, और उस लोक मे भी उसके पूर्व जीवन की मानसिक शक्तिया (सूक्ष्म शरीर के रूप मे) बनी रहती है।

२७. पूर्व जन्म की स्मृति

पैरा २ मे बतलाया गया है कि कुछ बालको को अपने पहले जन्म की स्मृति रहती है जो जाच से सत्य पाये गये। श्री नारायण स्वामी जी ने अपने पुस्तक मे स्वय ऐसी, घटनाओं का उल्लेख प० १६४ १६६ पर किया है। मैंने लिखा है कि ऐसी घटनाओ की जाच करने पर यह पाया गया कि उनके पहली मृत्यु और दूसरे जन्म के बीच मे १० मास से कुछ अधिक का अन्तर था जिससे परिणाम यही निकला कि है कि दूसरा शरीर धारण करने से पहले जीवात्मा कुछ समय तक किसी अन्य स्थान मे रहा उपर्युक्त घटनाओ मे पहली घटना के विषय मे (जो

कुवर केकयीनन्दन सहाय बी ए ऐल ऐल बी वकील बरेली के पुत्र जगदीशचन्द्र की थी) मैंने बरेली निवासी प्रसिद्ध आर्योपदेशक स्व० प० वशीधर पाठक द्वारा जाच कराई थी। पहली मृत्यु और दूसरे जन्म मे १० मास से अधिक कुछ अन्तर पाया गया। पर जगदीशचन्द्र जी उसके सम्बन्ध मे कुछ न बतला सके। इसी प्रकार ७ वीं घटना के बाबत जो देहली निवासी श्री रंगबहादुर की पुत्री की थी। मैंने श्री माननीय देशबन्धु गुप्त एम० एल० ए० से जो आर्य्य समाज व देहली के प्रसिद्ध नेता हैं और उक्त कन्या के साथ मथुरा जाने वाली पार्टी के एक प्रमुख सज्जन थे वार्तालाप किया था। उसमे भी उक्त कन्या बीच के समय का कुछ वर्णन नहीं दे सकी।

विचार का सार जहा तक मेरी जानकारी है इस विषय पर ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों मे उनका मत कहीं प्रकट नहीं होता। परन्तु पूर्वोक्त प्रमाणों व युक्तियो के आधार पर मेरी समझ मे यही सिद्धान्त युक्त प्रतीत होता है कि जीव मृत्यु के बाद साधारणतया कुछ समय तक अन्य लोकों मे रहकर अपने सूक्ष्म शरीर का सशोधन करके उसको दूसरे जन्म और देह के लिये अधिक उपयोगी बनाता है और फिर नया देह धारण करने के लिये गर्भ मे जाता है, पर वेद और शास्त्रों की शिक्षा के किसी प्रकार विरुद्ध नहीं प्रत्युत उपनिषदो की शिक्षा के अनुकूल है। इस से पुनर्जन्म के सिद्धान्त मे कोई बाधा नहीं पडती और स्वर्ग व नरक के मत की उसके साथ एक प्रकार से अनुकूलता हो जाती है। थियोसो० व श्री अरविन्द के मत के बिलकुल अनुकूल है।

विषय विवादास्पद अवश्य है परन्तु बडे महत्व का है, वह केवल सिद्धान्त दृष्टि Theoretical Consideration से देखने का नहीं किन्तु practical व्यावहारिक दृष्टि से भी विचारने योग्य है। क्योकि इस विषय पर जो मत ग्रहण किया जाय उसका हमारी कर्त्तव्यता पर भी कुछ प्रभाव पडता है। इस मत के अनुसार मृत्यु के समय (जो केवल स्थूल शरीर की मृत्यु है) हमारे मित्रों व सम्बधियो से सदा के लिये हमारा नाता नहीं टूटता किन्तु कुछ समय के लिये उनसे फिर सम्बन्ध जुडने की सम्भावना रहती है।

आत्मवाद इसका समर्थन करता है। ईश्वर हम सबको सद्विचार देवे।

मनुस्मृति और स्त्रियां

(लेखक —श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०)

(गताङ्क से आगे)

मनु की सम्मति स्त्रियों के विषय मे जाननी हो तो एक ही श्लोक पर्याप्त है —

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला क्रिया
(३—५६)

अर्थ —"जहाँ स्त्रियों की पूजा होनी है वहा देवता रमण करते हैं। जहा स्त्रियों की पूजा नहीं होती वहाँ सब काम निष्फल होजाते हैं इससे अधिक स्त्रियों के सन्मान के विषय मे कहा नहीं जासकता। जो कुछ जहा कहीं कहा जायगा इसी का अनुमोदन या व्याख्यान होगा। 'पूजा शब्द इतना महान् और गौरव सूचक है कि कि इससे अधिक कहना कठिन हैं। और तत्त्व भी यही है। मनु महाराज ने 'पूजा' शब्द का प्रयोग करके किसी प्रकार की अत्युक्ति नहीं की। आप ससार के व्यक्तियो, परिवारो, देशो और जातियो का इतिहास पढे। आप को ज्ञात होगा कि जहा स्त्रियों का अपमान हुआ या उनको कष्ट दिया गया वहा लोगो का सर्वनाश हो गया। स्त्रिया वामाङ्ग हैं। शरीर के वामाङ्ग मे ही हृदय होता है। जो मनुष्य अपने हृदय की उपेक्षा करता है वह शीघ्र ही मरजाता है। यह आशय अगले श्लोक से स्पष्ट होता है —

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत् कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा॥
(३—५७)

जिस कुल मे स्त्रिया दुखी रहती है वह कुल शीघ्र नष्ट हो जाता है। जहा स्त्रिया दुखी नहीं रहती वह कुल अवश्यमेव बढता हैं।

जामयो यानि गेहानि शपत्यप्रतिपूजिता ।
तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्तत ॥
(३ ५८)

स्त्रिया जिन घरों से अनादर पाने के कारण शाप देती है वे घर सब प्रकार से नष्ट हो जाते हैं विषके मारे जैसे।

तस्मादेता सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनै ।
भूतिकामैर्नरैर्नित्य सत्कारेषूत्सवेषु च ॥
(३—५९)

इस लिये जो लोग यह चाहते है कि उनके घर विभूति से सम्पन्न हो उनको चाहिये कि वे स्त्रियो की आभूषण, वस्त्र, भोजन आदि से उत्सवो और अन्य शुभअवसरो पर नित्य पूजा किया करे।

अब इस के आगे मनुजी कहते है कि स्त्री और पुरुष की परस्पर एक दूसरे के साथ प्रीति होनी चाहिये। जैसे एक चीज को दूसरी चीज के साथ जोडने के लिये गोद चाहिये इसी प्रकार स्त्री और पुरुष को जोडने के लिये प्रेमरूपी गोंद चाहिये जिससे परिवार रूपी पुस्तक के पत्ते बिखरने न पावे।

सतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्य्या तथैवच।
यस्मिन्नेव कुले नित्य कल्याण तत्रवै ध्रुवम्।
(३—६०)

अर्थ —जिस कुल मे स्त्री से पुरुष सन्तुष्ट हे और पुरुष से स्त्री वहा नित्य सुख वास करता है।

बात भी ठीक है। जहा पुरुष का कर्त्तव्य है स्त्री की पूजा करना वहा स्त्री का भी तो पुरुष के प्रति कुछ कर्त्तव्य है। यदि स्त्री अपना बडप्पन ही दिखाती रहे और पुरुष उसकी शुश्रूषा मे ही लगा रहे तो यह कडी कभी न कभी टूटेगी। प्रेम की तो दोना ओर से आवश्यकता है। अत कहा कि स्त्री को भी चाहिये कि पति को सन्तुष्ट रक्खे।

यदि हि स्त्री न रोचेत पुमास न प्रमोदयन्।
अप्रमोदात् पुन पुस प्रजन न प्रवर्तते॥
(३ ५५-६१)

यदि स्त्री सुन्दर न लगे तो पुरुष को आकर्षित न करगी और यदि पुरुष आकर्षित न हुआ तो सन्तान न होगी।

स्त्रिया तु रोचमानाया सर्वं तद्रोचते कुलम्।
तस्या त्वरोचमानाया सर्वमेव न रोचते॥
(३ ४६ ६२)

स्त्री सुन्दर लगे तो समस्त कुल सुन्दर लगता है। यदि स्त्री सुन्दर न लगे तो कुल भर बुरा लगता है।

इसीलिये तो स्त्री को घर का दीपक कहा है। उस के बिना अधेरा रहता है। इन श्लोकों से पता चलता है कि मनु के भाव स्त्रियों के प्रति बडे उच्च थे। यह उच्च भाव उन्होंने स्त्रियो के ही लिये क्यों व्यक्त किये पुरुषों के लिये क्यो नहीं। मनुजी ने स्त्रियों के पक्ष मे और पुरुषों के विरुद्ध यह पक्षपात क्यो किया ?

इसका एक कारण है। क्या ? वही

न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति।

स्त्री शारीरिक बल मे कम होने के कारण असभ्य समाज के पुरुषों से सताई जा सकती है। उस पर अत्याचार किये जा सकते है। उसके दो आन्तरिक शत्रु है शारीरिक निर्बलता और सौंदर्य। इन दोनो शत्रुओ से बचाने के लिये सामाजिक नियमों और राजनियमो की आवश्यकता है। सोने की रक्षा के लिए बक्सो की आवश्यकता है कूडे की रक्षा के लिये नहीं। स्त्री रत्न है अत उनके अधिकारो को सुरक्षित रखने के लिये राजनियम (कानून) और समाज नियम बनाये गये जिससे उनको कोई सतावे नहीं। इस नियम की उपेक्षा करके पुरुष ने अपने शारीरिक बल का दुरुपयोग किया, स्त्रियो को उत्पन्न होते ही मार डाला गया। युवती स्त्रियो से बलात् विवाह करने के यत्न किये गये। और बडे बडे राजो महाराजो और विजेताओ ने सुन्दर स्त्रियों को छीनने के लिए उनके पिताओं, भाइयों और पतियो से युद्ध करके अपने जीवन को कलंकित किया। युद्ध या अराजकता फैलने पर स्त्रियों को गुडे पकडकर ले गये और उनके धर्म को भ्रष्ट किया। धूर्तों ने मक्कारी करके स्त्रियों को बहकाने का यत्न किया। स्त्रियों के सौन्दर्य का उपभोग करने के लिये उनको अकथनीय नाना विधियो से तग किया गया। अत मनु महाराज ने आदेश दिया है कि —

पितृभि र्भ्रातृभिश्चैता पतिभिर्देवरैस्तथा।
पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभि॥
(३—५५)

पिता, भाई, पति, देवर अर्थात् सभी

सम्बन्धियों को चाहिये कि स्त्रियों को पूजे और उनको आभूषण आदि से आभूषित करे यदि वे अपना कल्याण चाहते हैं तो।

कुछ मन चली देवियां शायद कहे कि हम को निर्बल बताकर हमारा अपमान किया जाता है। हम वे सब काम कर सकती हैं जो पुरुष किया करते हैं। हम लक्ष्मी बाई के समान युद्ध कर सकती हैं। हम अन्य भीषण से भीषण कार्य्य कर सकती हैं।

परन्तु याद रखना चाहिये कि यह सब मन के लड्डू हैं। वास्तविक बात नहीं है। एक दो लक्ष्मी बाईयां भी हो सकती हैं। परन्तु उसी समय तक जब कि पुरुषों की सतर्कता और सामाजिक संगठन के कारण समाज का ढांचा बना हुआ है। जब कभी विद्रोह फैलते है तो क्या कारण है कि पुरुष गुण्डे तो स्त्रियों को उठालेजाते हैं, और स्त्रियां कभी पुरुषों को उठा नहीं ले गई? आप भूत और वर्तमान इतिहास पर कैसे पानी फेर सकते हैं? इसलिये यही कहना पड़ेगा कि स्त्रियों को पुरुषों के संरक्षण और पूजन की आवश्यकता है। और स्त्रियों की ओर से कोई ऐसी परिस्थिति उत्पन्न नहीं होनी चाहिये कि पुरुषों को इस भावना की ठेस लगे और वे संरक्षण का कार्य छोड़ देवे। स्वतंत्रता की इच्छा अच्छी है परन्तु स्वतन्त्रता की रक्षा सुगम नहीं है। इसीलिये मनु ने कहा —

पित्रा भर्त्रा सुतैर्वापि नेच्छेद् विरहमात्मन।
एषा हि विरहेण स्त्री गर्ह्ये कुर्यादुभे कुले॥
(५-१४६)

स्त्री को चाहिये कि पिता, पति या पुत्र से अलग रहने की इच्छा न करे, ऐसा करने से दोनो कुलों को दोष लगने का भय है।

सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहकार्येषु दक्षया।
सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया॥
(५-१५०)

सदा प्रसन्न रहे, घर के काम को चातुर्य से करे, बर्तमानों को शुद्ध रक्खे और खुले हाथ व्यय न करे।

यहां मनु जी ने चार बाते बताई है। यह दोष प्रायः स्त्रियों में पाये जाते है। कुछ स्त्रियोंका स्वभाव ही होता है कि व रात दिन भीकती रहती है। बच्चे तंग करते है, नौकर ठीक काम नहीं करता। पैसे की कमी है, पडोसिने ठीक नहीं है। सास ननद तीक्ष्ण है इत्यादि इत्यादि। ऐसा करने से उनका स्वास्थ्य बिगड जाता है। और घर का काम ठीक होने पर नहीं आता। भींकना किसी रोग की दवा नहीं है। हां रोग बढ तो अवश्य जाता है। इसलिये कहा, 'सदा प्रहृष्टया भाव्यं' प्रसन्नवदन और प्रसन्नचित्त रहो जिससे तुमको देखकर ही तुम्हारे पुत्र पति आदि भी प्रसन्न रहे।

"दूसरी बात कही गृहकार्येषु दक्षया भाव्यं 'घर का काम चातुर्य से करो' यदि स्त्री घर का काम न करे तो कौन करे। नौकर तो नौकर की भांति करेगा। यह तो गृहिणी को ही करना है।

तीसरी बात कही कि घर की सब चीजें शुद्ध रहें 'शुद्ध घर परिवार के लिये अत्यावश्यक है। और इसका प्रबन्ध स्त्री को ही करना है।

चौथी बात है कि मुट्ठी बांधकर काम करो। अपव्यय या अतिव्यय तो ऐसा रोग है जिसने सहस्रो परिवारो को नष्ट कर दिया। यूरोप और

अमेरिका के पति तो अपनी पत्नियों के हाथ तग है। उनकी मुट्ठी सदा खुली रहती है और पति की पूरे मास की आय आधे ही महीने में काम आ जाती है। वहा फैशन का इतना जाल है कि बाजार म नित्य नये-नये ढग के वस्त्र, आभूषण आदि आते रहते है। जिनका पहनना एक भद्र महिला के लिये अनिवार्य समझा जाताहै। इससे पहले तो पति दरिद्र हो जाता है, फिर ऋणी फिर चिंतित और अन्त मे अनबन होकर तलाक (सम्बन्ध विच्छेद) की नौबत आ जाती हैं। मनुस्मृति की विशेषता यह है कि वह छोटी बाते भी ऐसी कहती है जो बडे महत्व की होती हैं

अब प्रश्न है कुछ अधिकारो का। बहुत सी स्त्रियो की माग है —

(१) कि जिस प्रकार रडुओ के विवाह होते है विधवा स्त्रियो के विवाह क्यो नहीं होने चाहिये ?

(२) जिस प्रकार एक पुरुष कई विवाह एक साथ कर सकता है उसी प्रकार स्त्रियों को भी बहुत से पुरुषों से एक साथ विवाह क्यों न करना चाहिये ?

(३) आचार के लिये स्त्रियों के ऊपर इतना नियंत्रण क्यों है, पुरुषों पर क्यों नहीं ?

(४) स्त्रियों को जायदाद मे भाग क्यों नहीं मिलता ?

हमको यहा केवल यह दिखाना है कि मनु स्मृति का इन मार्गो के साथ कहा तक सम्बन्ध है। यदि कोई माग अनुचित है और मनुस्मृति इसको विहित नहीं समझती तो अच्छा ही है। और यदि कोई माग उचित है तो प्रश्न है कि मनुस्मृति मे इसको क्यों विहित नहीं समझा गया। एक एक को लीजिये

प्रथम विधवा और विधुर के पुनर्विवाह क प्रश्न ! मनु ने स्पष्ट लिखा है —

साचेदक्षतयोनि स्याद् गतप्रत्यागतापि वा।
पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुन संस्कारमर्हति ॥

९—६८—१७६

'अर्थात् यदि कोई स्त्री अक्षत योनि विधवा है। चाहे वह पति के घर आई गई ही हो उसका पुन विवाह हो सकता है।'

विवाह के विषय मे मनु ने स्त्री और पुरुष को समान अधिकार दिये हैं —

प्रजनार्थं स्त्रिय सृष्टा सतानार्थं च मानवा।
तस्मात् साधारणोधर्मे श्रुतौ पत्न्या सहोदित ॥

९—५२—९६

"जनने के लिये स्त्रिया बनाई गई हैं और सतान के लिये पुरुष। इसलिये वेद मे पत्नी और पति का विवाह के विषय मे एक ही सा धर्म है।"

यह ठीक है कि पीछे की स्मृतियों ने और विशेषकर रिवाज ने विधवा पुनर्विवाह को हिन्दू समाज मे वर्जित बता दिया गया। परन्तु इसमे न तो श्रुति का दोष है, न स्मृति का। रिवाज को देखकर भाष्यकारों * ने भी कहीं-कहीं गड-बड कर दी है।

कुछ भाष्यकारों ने ऊपर दिये हुये श्लोक के एक पद "पौनर्भवेन भर्त्रा" पर बहुत टीका टिप्पणी की है। यद्यपि इसका अर्थ

* इस विषय मे देखो हमारी बनाई हुई "विधवा विवाह मीमासा" (चाद प्रेस, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित)

स्पष्ट है।

अर्थात्—जब स्त्री का पुनर्विवाह हुआ तो वह भर्ता पौनर्भव कहलाया। (पुन भवतीति पौनर्भव)। इसका यह अर्थ नहीं है कि पुन र्विवाह से पहले पति को 'पौनर्भव' होना चाहिये और न 'पौनर्भव' की विचित्र कल्पित परिभाषा करने की आवश्यकता है।

यह विधान स्त्री और पुरुष दोनों के लिये समान है। अर्थात् अक्षत वीर्य विधुर अक्षत योनि विधवा से पुन विवाह कर सकता है। अन्य अवस्था मे मनु ने नियोग की आज्ञा दी है—

देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया सम्यड् नियुक्तया।
प्रजेप्सिताधिगन्तव्या सतानस्य परिक्षये ॥
९-३३—५८

अर्थात्—सतान के क्षय का भय हो तो देवर या सपिण्ड पुरुष से नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर लेवे।

यह नियोग का नियम भी दोनो के लिये समान है। नियोग के विषय मे स्मृति मे बहुत स क्षेपक पीछे से मिला दिये गये हैं जिनसे बहुत कुछ गडबड हो गई है। इसकी सविस्तार मीमासा हमने अपनी पुस्तक 'विधवा विवाह मीमासा' मे की है।

दूसरा प्रश्न लीजिये। मनु ने एक साथ कई स्त्रियो से विवाह की आज्ञा कहीं नहीं दी। उन्होने तो इतना ही लिखा है कि—

गुरुणानुमत स्नात्वा समावृत्तो यथाविधि।
उद्वहेत द्विजो भार्या सवर्णा लक्षणान्विताम्॥

अर्थात् गुरु की अनुमति से स्नातक होकर और यथाविधि समावर्तन सस्कार करके द्विज पुरुष सवर्ण और गुणवती स्त्री से विवाह कर। इससे बहुविवाह की आज्ञा नहीं पाई जाती। न कोई और श्लोक इस प्रकार की आज्ञा देता है। यहा 'भार्या' शब्द एक वचन है। बहु विवाह की प्रथा पुरुषों के लिये भी बुरी है। जिन जातियो मे यह प्रथा है उनमे अनेक दुष्परिणाम निकलते हैं। परिवार तो बन ही नहीं पाता। 'दम्पती' शब्द जो पति और पत्नी दोनो का वाचक है द्विवचन है। यदि अनेक विवाह की प्रथा अभि प्रेत होती तो बहुवचन का प्रयोग होता। वर्तमान हिन्दू जाति मे यद्यपि बहु विवाह का निषेध नहीं है तथापि प्रथा अत्यन्त कम है केवल अपवाद मात्र और उसके भी बुरे परिणाम अवश्य निक लते हैं। स्त्रियो की यह माग तो उनको घोर आपत्ति म डालने वाली है। इसकी अधिक मीमासा अनावश्यक है।

तीसरा प्रश्न आचार सम्बन्धी नियंत्रण का है। मनु ने पुरुषो क लिये भी उतना ही नियत्रण दिया है— देखो—

व्यभिचारात्तु भर्तु स्त्री, लोके प्राप्नोति निन्द्यताम्।
शृगालयोनिं प्राप्नोति पापरोगैश्च पीड्यते॥
५—५९—१६६

अर्थात्—व्यभिचार से स्त्री लोक मे निन्दित होती है शृगाल की योनि पाती है और पाप रोगों से पीडित होती है।

यह हुआ स्त्री के विषय मे। अब पुरुष के विषय मे लीजिये।

परस्य पत्न्या पुरुष संभाषा योजयन् रह।
पूर्वमाक्षारितो दोषै प्राप्नुयान् पूर्वसाहसम्॥
८—२२६—३५४

"यदि कोई पुरुष पराई स्त्री से एकान्त मे

बात भी करे और यदि पहले भी इस अपराध मे बदनाम होचुका हो तो उसे 'पूर्व साहस' दण्ड देना चाहिये।

अन्योन्यस्याव्यभीचारो भवेदामरणान्तिक ।
एष धर्म समासेन ज्ञेय स्त्रीपुसयो पर ॥
९—५४—१०१

समासरूप से स्त्री और पुरुष का यही धर्म है कि मरण पर्यन्त दोनों कभी एक दूसरे के प्रति व्यभिचारी सिद्ध न हों। अर्थात् पति और पत्नी दोनो को अपने आचार व्यवहार मे सच्चा होना चाहिये।

नहीदृशमनायुष्यं लोके किंचन विद्यते ।
यादृश पुरुषस्येह परदारोपसेवनम् ॥
४--८०--१३४

"आयु को नष्ट करने वाली ससार मे ऐसी और कोई वस्तु नहीं है जैसी पराई स्त्री का संसर्ग"

विप्रदुष्टा स्त्रियं भर्ता निरुन्ध्यादेकवेश्मनि ।
यत् पु स परदारेषु तच्चैना चारयेद् व्रतम ॥
११—१०६--१७६

भर्ता को चाहिये कि दुष्ट स्त्री को घर मे बंद करके और उससे वही व्रत प्रायश्चित्त रूप मे करावे जो पुरुष के लिये पर स्त्री गमन के अपराध मे प्रस्तावित है।

इससे तो विदित होता है कि मनु महाराज किसी का पक्षपात नहीं करते, न पुरुष का न स्त्री का। यदि दुराचारी पुरुष दण्ड से बच जाते है और दुराचारिणी स्त्रियो को मर्यादा से अधिक दण्ड दिया जाता है तो इसमे मनुस्मृति का दोष नहीं है। पाप तो मनुष्य मात्र के लिये विष है स्त्री के लिये भी और पुरुष के लिये भी। हा! एक बात है। यह विष स्वादिष्ठ और प्रलोभनप्रद है। अत कभी कभी स्त्रियों को यह शिकायत हो जाती है कि जब पुरुषों को इस विष के पान से नहीं रोका जाता तो हमको क्यों रोका जाता है। परन्तु यह माग है मूर्खतापूर्ण। स्त्रियों की यह माग तो उचित है कि पुरुषों पर भी सदाचार की मर्यादा को कठोरता से स्थापित किया जाय परन्तु उनकी यह माग गलत है कि पुरुषो की भाति उनको भी पाप रूपी विष के पान के लिये स्वतत्र छोड़ दिया जाय।

अब चौथा दाय भाग का प्रश्न लीजिये। इस प्रश्न का सम्बन्ध एक दूसरे प्रश्न से है अर्थात् मनु के अनुसार परिवार पैतृक है मातृक नहीं। अर्थात् स्त्री विवाह के पश्चात् पुरुष के घर जाती है और वह घर 'पतिलोक कहलाता है। पुरुष विवाह के पश्चात् स्त्री के साथ नहीं जाता। परिवार पुरुष से चलता है स्त्री से नहीं। एक दो अपवादों को छोडकर प्राय सभी जातियों मे यही प्रथा है। यदि परिवार बनाना है, यदि विवाह के पश्चात् स्त्री पुरुष को साथ रहना है तो यह निर्धारित करना पड़ेगा कि स्त्री पुरुष के घर जाय या पुरुष स्त्री के घर आवे। दोनों अलग अलग रहकर तो परिवार नहीं बना सकते। यदि पुरुष स्त्री के घर जाया करे तो जितनी लड़किया होगी वह अपने पतियों को विवाह कर अपने घर लाया करेगी और जितने लड़के होंगे वह विवाह के पश्चात् अपनी वधुओ के घर जाया करेंगे। हम पहले कह चुके हैं कि स्त्रिया शारीरिक बल मे कम है। इस प्रकार समाज का नाश अवश्यंभावी है। जिन अपवाद मात्र जातियों मे स्त्री कई पति कर सकती है उनमे पति लोग उसी

प्रकार स्त्रियो के अधीन नहीं रहते जैसे पतियों के साथ पत्निया रहती हैं। मनु ने केवल एक दशा मे पति को पत्नी के घर रहना लिखा है अर्थात् जब किसी पुरुष के कोई लडका न हो, केवल लडकी हो और वह कुल चलान के हेतु अपने दामाद को अपने घर रखले। ऐसी पुत्री को पुत्रिका कहते हैं। परन्तु यहा भी वह अपने पिता के घर अपन पति को बुलाती है और दामाद पुत्र का स्थानापन्न होकर रहता है। परिवार यहा भी पैतृक ही होता है मातृक नहीं।

जब यह निश्चित हो गया कि परिवार पैतृक होना चाहिये, तो परिवार की जायदाद भी मुख्यत पुत्र को ही मिलनी चाहिये। पुत्री के लिये केवल निर्वाह मात्र होना चाहिये जिससे जायदाद तितर बितर न हो जाय। अत मनु न दो प्रकार के नियम बनाये —

(१) जायदाद पुत्रो को मिले।

(२) कन्याओं को भी धन मिले।

मुसलमानों और ईसाइयों मे भी जहा पुत्रिया का भी पिता की जायदाद मे भाग रक्खा है पुत्रो और पुत्रियो म जायदाद बराबर बराबर नहीं दी जाती। वहा भी पुत्रियों का भाग पुत्रो की अपेक्षा बहुत कम रक्खा है। और इस भाग के विहित होने के कारण जो परिवार की जायदाद मे दोष आये है उनको चचा ताऊ की लडकी के साथ विवाह करने की अति दूषित प्रथा के द्वारा दूर किया गया है। अत पैतृक परिवार मे यही प्रथा ठीक है कि लडको को जायदाद मिले और लडकियो को कुछ गुजारामात्र वह भी विपत्ति पडने पर। पुत्रिया विवाह के पश्चात अपने पति के घर जाकर उसके धन की साझीदार होंगी। स्त्री और पुरुष के बीच म अलग अलग थैली हो ही नहीं सकती और न होनी चाहिये। हा वैयक्तिक जेब खर्च के लिये कुछ स्त्री धन दिलाया गया है। उसके लिये बड कडे नियम रक्खे गये है कि कोई उसको हडप न करने पावे जसे —

स्वेभ्योऽशेभ्यस्तु कन्याभ्य प्रदद्यु भ्रातर पृथक्।
स्वात्स्वादशाच्चतुर्भाग पतिता स्युरदित्सव ।
(६—६६—११७)

भाइयो को चाहिय कि अपन अपन भागो का चौथाइ चौथाई लडकिया को दे दवे। जो न द वह पतित समझे जावे।

यथैवात्मा तथा पुत्र पुत्रेण दुहिता समा।
तस्यामात्मनि तिष्ठन्त्या कथमन्यो धन हरत ॥
(६—७२—१३०)

जेसा मनुष्य स्वय ह वैसा ही उसका पुत्र है। पुत्र और पुत्री एक से हैं। जब तक पुत्री विद्यमान है उसकी जायदाद को दूसरा कैसे ले जा सकता है?

इस श्लोक क सम्बन्ध म एक विप्रतिपत्ति का दूर करना आवश्यक है। जब मनु ने पुत्र और पुत्री को समान बताया तो साधारण अवस्था मे भी पुत्र और पुत्री को बराबर जायदाद क्यो नहीं दिलाई। हम ऊपर बता चुके है कि परिवार पैतृक है मातृक नहीं। पैतृक जायदाद मे पुत्री का बटवारा जायदाद को सुरक्षित नहीं रख सकता। इस लिये पुत्रो को जायदाद दिलाई और उनका कर्त्तव्य ठहराया कि पुत्रियों की वह सहायता करे। अन्यथा समाज म पतित समझे जावे। यदि पुत्र न हो तो अन्य कुटुम्बियो को जायदाद न जावे पुत्री को मिले जिससे पुत्री का

लडका परिवार का नाम चला सके।

और लीजिये —

जनन्या संस्थिताया तु सम सर्वे सहोदरा ।
भजेरन् मातृक रिक्थ भगिन्यश्च सनाभय ॥
(६——१६२)

यदि माता मर जाय और जायदाद छोड जाय तो सब सहोदर भाई बहन उसको बराबर बाट लेवे।

यास्तासा स्युर्दुहितर स्तासामपि यथार्हत ।
मातामह्या धनात् किंचित् प्रदेय प्रीतिपूर्वकम् ॥
(६——१६३)

यदि उन पुत्रियो की पुत्रिया हो तो नानी की जायदाद से उनको भी कुछ मिलना चाहिये।

अब स्त्री धन की विवेचना कीजिये —

अध्यग्न्यध्यावाहनिक दत्त च प्रीतिकर्मणि।
भ्रातृमातृपितृप्राप्त षड्विधं स्त्रीधन स्मृतम् ॥
(६——१६४)

अन्वाधेय च यद् दत्त पत्या प्रीतेन चैव यत्।
पत्यौ जीवति वृत्ताया प्रजायास्तद्धन भवेत् ॥
(६——१६५)

स्त्रीधन छ प्रकार का होता है —

(१) विवाह के समय दिया हुआ।

(२) बुलावे के समय।

(३) त्यौहार आदि पर।

(४) भाई, माता या पिता से मिले।

(५) जो पति के कुल से विवाह के समय भेंट में मिले।

(६) पति प्रीति पूर्वक देवे।

मनु के अनुसार स्त्रीधन अत्यन्त पवित्र है। इस पर स्त्री के सिवाय किसी का अधिकार नहीं

पत्यौ जीवति य स्त्रीभिरलकारो धृतो भवेत्।
न त भजेरन दायादा भजमाना पतन्ति ते ॥
(६——२००)

पति के जीते हुये जो स्त्री अपने आभूषण बना ले वह उसी के होगे। वारिसो को उनके छीनने का अधिकार नहीं है। यदि वे ले तो पतित समझे जावे।

स्त्रीधनानि तु ये मोहादुपजीवन्ति बान्धवा ।
नारीयानानि वस्त्र वा ते पापा यान्त्यधोगतिम् ॥
(३——५२)

जो रिश्तेदार मोह म फसकर स्त्री के धन, सवारी या कपडो को ल लेते है। वे पापी है। उनकी उन्नति कभी नहीं होती।

इस प्रकार मनु ने स्त्रियो के अधिकारो की राज्य और समाज दोनो की ओर से पर्याप्त रक्षा की है। जो लोग स्त्रियों के विषय मे मनु को दोष देते हैं वे दो बाते भूल जाते हैं। प्रथम तो कई वर्तमान प्रथाये जो स्त्रियों के विरुद्ध जाती हैं मनु की नहीं हैं। पीछे से मिला दी गई हैं। मनु निर्दोष हैं। दूसरे मनु ने किसी नियम को एकाङ्गी नहीं होने दिया। नियम बनाते हुये इस बात का पूर्ण ध्यान रखा है कि समाज निर्माण म व्यक्तियो का कौन सा स्थान है और उसी के अनुसार व्यक्तियों के अधिकार और कर्तव्य निर्धारित किये है जिससे किसी के साथ अन्याय न हो। वर्तमान प्रथा यह है कि सुधारक और आन्दोलन किसी एक का पक्ष लेकर चल पडते हैं और उसी के अधिकारों का पुष्टीकरण करते हैं। अन्यों को आख से ओझल कर देते हैं। वस्तुत यह सुधार नहीं बिगाड है। शरीर के एक निर्बल अग को इतना पुष्ट करना कि दूसरे अंग निर्बल हो जायं रोग

का निवारण नहीं अपितु रोग का स्थानान्तर कर देना है। इससे शरीर तो रोगी ही रहता है। किसी की तिल्ली बढ जाय या जिगर बढ जाय तो इस पर कोई हर्ष नहीं मनाता क्योकि इनका बढना ही रोग का रूप है। इसी प्रकार यदि समाज का एक अंश अपनी मर्यादा से बढ जाय, चाहे ब्राह्मण हो, चाहे शूद्र, चाहे पुरुष हो चाहे स्त्री, तो इसको स्वस्थ समाज नहीं कह सकेंगे। जो स्त्रिया पुरुष के अत्याचारो का बदला लेने के व्याज से मनुप्रदत्त अधिकारो से अधिक मागती हैं वे न केवल पुरुषो का ही अपितु अपना और समाज का अहित करती है। क्योकि स्त्रियो का हित समाज के हित मे अलग नहीं है।

वैदिक संस्कृति और प्राचीन भारतीय संस्कृति

[लेखक श्री भवानी लाल जी सि० शास्त्री]

सरस्वती के मार्च महीने के अक मे 'प्राचीन भारतीय सस्कृति' शीर्षक एक लेख छपा है लेखक ने उसमे यह दिखाया है। कि किस तरह आज लोग वैदिक सस्कृति को प्राचीन भारतीय सस्कृति समझ बैठे है परन्तु वास्तव मे वैदिक सस्कृति एक साम्प्रदायिक सस्कृति है और उसका क्षेत्र अत्यन्त सकुचित है। वैदिक सस्कृति की धारणाये अत्यन्त भ्रमात्मक और वर्ण विद्वेष के अधार पर रक्खी हुई हैं। लेखक ने वैदिक सस्कृति की कटु आलोचना करने के साथ २ यह भी प्रयत्न किया है कि पाठकों के हृदय मे एक तथाकथित 'प्राचीन भारतीय सस्कृति के अस्तित्व के प्रति विश्वास पैदा कराया जाय। सम्पूर्ण लेख के पढने से ज्ञात होता है कि लेखक का एक मात्र उद्देश्य वैदिक सस्कृति और उनके समर्थकों को बदनाम करना है क्योंकि उसने वैदिक सस्कृति के विरोध मे तथा प्राचीन भारतीय सस्कृति के समर्थन मे जो तर्क दिये है वे अत्यन्त असगत और भ्रमपूर्ण है।

अपने लेख के आरम्भ मे लेखक ने यह बतलाया है कि 'सस्कृति' शब्द की भिन्न २ परिभाषाये कोषकारों अथवा अन्य विद्वानो द्वारा की गई हैं परन्तु उसकी कोई सर्वसम्मत परिभाषा अभी नहीं बन पाई है। इसके बाद लेखक ने दैशिक और धार्मिक रूपों मे सस्कृति के दो भाग किये है। लेख का आरम्भिक भाग पढने से ज्ञात होता है कि लेखक की सहानुभूति धार्मिक सस्कृति के नहीं अपितु दैनिक सस्कृति से है। हम लेखक के इस विचार से पर्याप्त सहानुभूति रखते है। परन्तु लेखक ने जिस प्रकार शुद्धि सस्कार का सम्बन्ध सस्कृति शब्द से जोड कर वैदिक सस्कृति को एक सकुचित क्षेत्र मे बन्द करने की चेष्टा की है वह असगत ही कही जा सकती है।

इसी प्रकार भारत मे दैशिक और धार्मिक सस्कृति के सघर्ष का विवरण देते हुये लेखक लिखता है—"भारत मे हम देखते है, यहा की दैशिक और स्वाभाविक सस्कृति पर धार्मिक सस्कृतियों ने राजसत्ता केवल से विजय प्राप्त कर ली है। आज भारतीय मानव समाज मे सघर्ष दैशिक सस्कृति मे नहीं अपितु धार्मिक सस्कृतियों के कारण है। यह सकीर्ण धार्मिकता या साम्प्रदायिकता यहाँ की भाषाओं और लिपियों के भीतर भी अड्डा जमाये बैठी है। दुःख के साथ लिखना पडता है कि लिपि और भाषा के प्रश्न को भी जो विशुद्ध वैज्ञानिक और औपादेयिक था, शुद्ध वैयक्तिक स्वार्थवश अथवा अदूरदर्शिता के कारण 'सास्कृतिक' बना दिया गया।' वस्तुत आज भारत मे सस्कृति के नाम पर कोई सघर्ष नहीं है। इसके विपरीत साम्प्रदायिक सस्कृति की विजय और दैशिक सस्कृति की पराजय तो उस समय हुई थी जब कि इस्लामी सस्कृति की रक्षा के लिये देश का अगभग किया गया और साम्प्रदायिक सस्कृति के सरक्षक पाकिस्तान राष्ट्र का जन्म

हुआ। इसी प्रकार भाषा के वैज्ञानिक और उपयोगितावादि प्रश्न को भी सास्कृतिक और साम्प्रदायिक बनाकर वे ही लोग देखते हैं जिन्हे हिन्दी जैसी वैज्ञानिक और उपयोगी भाषा को राष्ट्रभाषा स्वीकार कर लेने मे अपनी 'सास्कृतिक' हानि दिखाई देती है।

देश के स्वतत्र हो जाने के पश्चात् एक संस्कृति की आवश्यकता को लेखक महोदय भी स्वीकार करते है परन्तु आपका विश्वास है कि लोग अपनी सकीर्ण साम्प्रदायिक मनोवृत्ति के कारण अपनी साम्प्रदायिक सत्कृति को देश पर लादने के लिये प्रयत्नशील हैं। लेखक महोदय का कहना है कि साम्प्रदायिक पक्षपात मे लोग इतने अध हो गये है कि अपने सम्प्रदाय को विश्वजनीन समझ बैठ है। और दूसरे सम्प्रदायो को सकीर्ण, भ्रान्त, अवैज्ञानिक और एकदेशीय कहने मे नहीं हिचकते।' यहाँ लखक का स्पष्ट कटाक्ष वेदिक सस्कृति का प्रचार करन वाली सस्था आर्यसमाज पर है परन्तु लेखक महोदय ने यह नहीं बतलाया कि वैदिक सस्कृति का समर्थन करने वालो ने अपनी सस्कृति को देश पर लाद ' का किस प्रकार प्रयत्न किया? इसी सम्बन्ध मे आपने दिल्ली के एक हिन्दी दैनिक के सम्पादकीय का उल्लेख किया है जिसने लेखक के शब्दो मे वैदिक सस्कृति के विरोधियो को चैलेज दिया है। दिल्ली का यह पत्र प्रसिद्ध राष्ट्रवादी दैनिक 'अर्जुन' के सिवाय कौन हो सकता है।

लेखक ने साम्प्रदायिक सैनिक सगठनो की बुराई की है उससे हम पूर्णतया सहमत हैं। हम यह भी मानते हैं कि भारत को एक असाम्प्रदायिक राष्ट्र बनाये रखने के लिये साम्प्रदायिक सेना सगठनो पर प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक हे। परन्तु लेखक को हम यह भी बताना चाहते है कि भारत की एक सस्कृति का नारा किसी हिन्दू सभावादी अथवा सघी का न होकर विशुद्ध राष्ट्रीयतावादी टण्डन जी का है। जिस एक सस्कृति की आवश्यकता स्वय लेखक अपने लेख मे स्वीकार कर चुका है। यहा लेखक की एक और भूल पर प्रकाश डालना आवश्यक है। हिन्दू सभा, धर्म सघ, राष्ट्रिय स्वयसेवक सङ्घ आदि अर्द्ध राजनैतिक या साम्प्रदायिक सस्थाओं मे आपने आर्यसमाज का नाम भी नि सकोच लिख दिया है। और कहते हैं— ये सस्थाये अब सास्कृतिक क्षेत्र मे काम करेगी।" लेखक को ज्ञात होना चाहिये कि आर्य समाज ने न केवल आज अपितु पिछले ७५ वर्षों से ही सास्कृतिक क्षेत्र को चुन रक्खा है। और उसके विशुद्ध सेवा कार्य से बडे से बडे राष्टवादी को भी साम्प्रदायिक कहने का साहस नहीं हुआ। सकीर्ण सम्प्रदायवादी सस्थाओ की श्रेणी मे ससार की उन्नति को अपना लक्ष्य समझने वाली आर्य समाज को रखना अत्यन्त अशुद्ध और निन्दनीय है।

वस्तुत यहीं से लेख का मुख्य विषय आरम्भ होता है। जिसका उद्देश्य वैदिक सस्कृति के स्थान पर एक अस्तित्वहीन 'प्राचीन भारतीय सस्कृति' की स्थापना करना है। लेखक का विश्वास है कि जिस प्राचीन भारतीय सस्कृति का वे उल्लेख करने जा रहे हैं वह आज भी विद्यमान है परन्तु लेखक ने उस

विद्यमान संस्कृति के स्वरूप की चर्चा नहीं की। और वह करता भी कैसे जब कि आज भी समस्त भारत मे एक वैदिक संस्कृति ही किसी न किसी रूप मे पाई जाती है। यह संस्कृति चाहे अपने शुद्ध रूप मे हो अथवा पौराणिक विकृत रूप मे–आज भी सारे भारत म मौजूद है, इसके विषय मे दो मत नहीं हो सकते।

वेद ससार की प्राचीनतम पुस्तके है ऐसा लेखक भी मानता है परन्तु आपका कहना है कि वैदिक आर्यों के पहिले भी यहा कोई लोग रहते थे और उनकी प्रथक् संस्कृति थी। अपने मत के समर्थन मे आप तीन प्रमाण देते है।

(१) प्राचीन भारत मे आर्येतर लोगो का अस्तित्व सिद्ध करन के लिये आप वैदिक सध्या मे प्रयुक्त होने वाली जिस अत्यन्त शुद्ध और पवित्र (innocent) ऋचा को उद्धृत करते है वह यह है 'योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वय द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्म जिसका सीधा सा अर्थ है जो हमसे द्वेष करता है अथवा जिससे हम द्वेष करते है उसको आपकी विनाशक शक्ति के सामने रखते है। सध्या की इस द्वेष भावना को दूर करन वाली प्रार्थना से आर्येतर लोगो का अस्तित्व किस प्रकार सिद्ध हो सकता है यह हमारी समझ के बाहर है। लेखक ने आर्येतर लोगों के जितने नाम (दस्यु, दास, शूद्र, वृषल, व्रात्य, अव्रती दैत्य, दानव, असुर, राक्षस, निशाचर) गिनाये हैं वे वस्तुत आर्येतर नहीं अपितु उनके दुष्कर्मों और हीन संस्कारों के कारण ही स्मृतिकारों ने उन्हे यह नाम दिये हैं। इससे यह सिद्ध नहीं होता कि इन लोगों की कोई पृथक संस्कृति थी या ये आर्यों से भिन्न थे। हम अपने विचार के समर्थन मे मनुस्मृति का प्रमाण देते हैं —

अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृता।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिता।२,३९

उपनयन रहित द्विजों की व्रात्य संज्ञा है। इसी प्रकार

न तिष्ठति तु य पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम्।
स शूद्रवद्बहिष्कार्य सर्वस्माद द्विजकर्मण।।२,१०३

जो प्रात कालीन और साय कालीन सध्या नहीं करे वह सम्पूर्ण द्विजो के कर्म से बहिष्कृत किया, जाकर शूद्र संज्ञा को पाता है। उपर्युक्त प्रमाणो से यह सिद्ध होता है कि व्रात्य या शूद्र आर्यों से अलग नहीं अपितु संस्कार भ्रष्ट आर्यों का ही नाम था और उनकी कोई प्रथक संस्कृति नहीं थी।

(२) तथा कथित प्राचीन भारतीय संस्कृति के पक्ष मे प्रमाण देते हुये सिंधु घाटी की हरप्पा और मोहजोदारो की खुदाई का उल्लेख किया गया है और लेखक कहता है कि यह सभ्यता आर्य पूर्व लोगो की है। परन्तु यह आर्य पूर्व लोग कैसे थे, उनका धर्म कर्म, उनका रहन सहन, आचार विचार कैसा था यह लेखक नहीं बता सका है।

(३) जैन और बौद्ध मत की अधिकाश बाते वैदिक धर्म से ही ली हुइ हैं। वे स्वयम् अपने को आर्य कहते हैं और बुद्ध ने अपनी शिक्षा को 'आर्य सत्य' का नाम दिया है। महात्मा बुद्ध या 'जिन (जैन) धर्म प्रवर्त्तक' ने कभी यह दावा नहीं किया कि वे किसी नवीन धर्म का उपदेश कर रहे हैं। इन धर्मों का कोई भी निष्पक्ष विद्वान् यह कहने का साहस नहीं कर सकता

कि जैन या बौद्ध मत ने किसी नवीन शिक्षा को अपनाया है। इसके विपरीत इन धर्मों का दर्शन सदाचार और इन धर्मों की देवगाथा (mytho logy) सम्पूर्ण रूप से वैदिक धर्म पर ही आश्रित है।

इस प्रकार अपने निराधार प्रमाणों के बल पर एक अस्तित्वहीन संस्कृति की कल्पना कर लेखक ने वैदिक संस्कृति को जिन शब्दों में याद किया है वे अत्यन्त अनुत्तरदायित्वपूर्ण और भ्रमात्मक तथा तर्क का गला घोटने वाले हैं। लेखक की धारणा है कि वैदिक संस्कृति अन्य सभी संस्कृतियों को कुचल कर सब पर आतंक जमा कर धर्म के नाम से इस देश पर अपना निष्कंटक और एक छत्र शासनाधिकार चाहती है।" वैदिक संस्कृति के लिये इन घृणित शब्दों का प्रयोग क्यों किया गया यह हमारी समझ के बाहर है क्योंकि हम जानते हैं कि यह सत्य के अपलाप के सिवा कुछ नहीं है।

यह सत्य है कि बौद्ध और जैन धर्म का उदय विकृत ब्राह्मण धर्म की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ। जिस समय महात्मा बुद्ध उत्पन्न हुये उस समय ब्राह्मण धर्म में वे सभी बुराइयाँ आ गई थीं जिनका कि लेखक ने जिक्र किया है। वर्ण भेद, जातिभेद, अधिकारभेद, उच्च नीच एवं हिंसापूर्ण यज्ञादि तथा अनाचार के विरुद्ध तत्कालीन समाज में प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई जो स्वाभाविक ही थी। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि उपर्युक्त बुराइयाँ वैदिक संस्कृति के मूल स्रोत में पाई जाती हैं। वेद में वर्ण भेद अवश्य है परन्तु वह किसी प्रकार की ऊंच नीच की भावना या किसी वर्ण विशेष को प्रभुता देने के लिये नहीं बनाया गया है अपितु उसका तो उद्देश्य श्रम का उचित वर्गीकरण मात्र है जो आज के समाज में भी पाया जाता है। यह वर्णभेद जन्मगत न होकर गुण कर्म और स्वभाव के अनुसार होना था, परन्तु समय की गति के कारण कर्मानुसार वर्णव्यवस्था जन्मगत जाति के रूप में परिणत हो गई और उसके आधार पर ही छूत छात जैसी हीन भावनाओं का प्रसार हुआ। इसी प्रकार वैदिक यज्ञों में हिंसा का कोई विधान नहीं पाया जाता अपितु यज्ञ को वहां अध्वर (हिंसाविहीन) कहा गया है। पुरोहितों की लोलुपता के कारण यदि यज्ञों में पशु हिंसा का प्रचलन हुआ तो उसके लिये वैदिक धर्म उत्तरदायी नहीं है, इसके उत्तर दाता वे लोग हैं जिन्होंने अपने स्वार्थ के लिये शास्त्रों में प्रक्षेप किये और अपनी बुराइयों का प्रमाण वेदों में ढूंढना आरम्भ किया। इन्हीं लोगों के विरुद्ध यदि जैन या बौद्ध धर्मों ने आवाज उठाई तो वह अत्यन्त समयोचित थी और कोई भी बुद्धिवादी उसका कुछ अंशों तक समर्थन किये बिना नहीं रह सकता।

जैन, बौद्ध आदि अवैदिक मतों की वैदिक धर्म से तुलना करते समय लेखक ने अपने जिस अज्ञान का परिचय दिया है वह शोचनीय है। पाश्चात्य विद्वानों का विश्वास था कि वेदों में बहुदेवतावाद पाया जाता है और सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वायु, इन्द्र आदि देवता अपना पृथक् २ अस्तित्व रखते हैं। उनकी यह अज्ञानपूर्ण धारणा कितनी मिथ्या थी यह आज स्पष्ट हो गया है क्योंकि 'एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः (ऋ० १।१६४।४६) और

"तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमा" (यजु ३२।१) जैसे एकेश्वरवाद प्रतिपादक मन्त्रो के होते हुये कौन कह सकता है कि वेद मे अनेक देवताओ की पूजा का विधान है। स्वय मैक्स-मूलर को बहुदेवता सम्बन्धी अपनी धारणा को अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे बदलना पड़ा था यह किसी से छिपा नहीं है। यह ठीक है कि जैन या बौद्ध धर्म ईश्वर, आत्मा की सत्ता या वेद प्रमाण को स्वीकार नहीं करते। ईश्वर या वेद के प्रति उनकी अनास्था यही बतलाती है कि वे तत्कालीन प्रचलित धर्मके विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में उत्पन्न हुये थे।

जिन दया, करुणा, मैत्री, सद्ज्ञान और सदाचार को लेखक महाशय जैन और बौद्ध धर्म का मूलाधार बतलाते हैं वह वस्तुत वैदिक धर्म का मूलाधार है क्योंकि वेदों मे ही 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सभ्रातरो वावृधु सौभगाय (ऋ० ५।६०।५) और 'मित्रस्य चक्षुषा समीक्षा महे' (यजु० ३६।१८) के रूप मे विश्वप्रेम, समता और मैत्री का ही उपदेश किया गया है। स्थानाभाव के कारण हम उन अनेको मन्त्रो को लिखने मे असमर्थ हैं जो दया, करुणा, समता या मैत्री के भाव को स्पष्ट करते है।

लेखक का विश्वास है कि केवल बौद्ध या जैन धर्म मे ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य मोक्ष या निर्वाण की खोज करना बतलाया गया है। ऐसी धारणा प्रकट कर लेखक ने अपने दर्शन ज्ञान की कमी का परिचय दिया है क्योकि हमारे तो सभी दर्शनो का अन्तिम लक्ष्य निश्रेयस, मोक्ष या परमार्थ की प्राप्ति रहा है। सांख्य, न्याय, योग, वेदान्त सभी अपना अन्तिम उद्देश्य निर्वाण प्राप्ति ही बतलाते है। फिर जैन या बौद्धों के मोक्ष मे क्या विशेषता रही ?

उत्तर मीमासा के कर्म काण्ड और स्वर्गादि की प्राप्ति को देखकर लेखक ने वैदिक धर्म के लक्ष्य को नीचा बतलाने का यत्न किया है। आप लिखते हैं—'इन दोनो धर्मों (बौद्ध और जैन) मे जहा तृष्णा के त्याग की प्रेरणा है वहां वैदिक धर्म मे यज्ञादि कर्मकाण्ड द्वारा सासारिक भोगैश्वर्य की प्राप्ति और मरने पर स्वर्गलोक तथा ब्रह्मलोक के अपरिमित सुखभोगो व आनन्द की प्राप्ति की अभिलाषा है।" यहाँ लेखक की चालाकी देखने योग्य है। क्योकि आपने मीमासा का स्वर्ग लोक तथा भोग और वेदान्त के ब्रह्म तथा आनन्द को एक ही श्रेणी मे रखकर पाठक की आखो मे धूल झोंकने का प्रयत्न किया है। परन्तु यहा मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति के साथ २ उसकी सासारिक उन्नति को भी प्रधानता दी है तो वह अपने गौरव पूर्ण पद से नीचा नहीं गिराया जा सकता। इसके विपरीत जिन धर्मो ने केवल आध्यात्मिकता का ही उपदेश दिया है और मनुष्य के सासारिक जीवन की उपेक्षा की है वे कितने असफल रहे है यह इतिहास हमें बताता है। यहा तो वैदिक धर्म के अद्भुत समन्वयात्मक स्वरूप का हमें दर्शन होता है जहा ससार के प्रति पलायनवादी (escapist) मनोवृत्ति न रखकर स्वस्थ सासारिक उन्नति पर भी जोर दिया गया है और उसे आध्यात्मिक उन्नति के लिये आवश्यक बतलाया है।

काल्पनिक प्राचीन भारतीय सस्कृति के समर्थन मे लेखक ने कुछ और भी प्रमाण दिये

हैं। आपने बुद्ध के (एष धर्मो सनातनो) के आधार पर यह कहना चाहा है कि प्रचलित वैदिक धर्म 'सनातन धर्म' नहीं, बुद्ध जो कहते हैं वह है मानव का सदा से चला आया 'सनातन प्राचीन भारतीय धर्म'। हम भी यह मानते हैं कि बुद्ध के समय मे जो वैदिक धर्म के नाम पर प्रचलित मत था वह सनातन धर्म नहीं था परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं होता कि (एष धम्मो सनातनो) कह कर बुद्ध सत्य सनातन धर्म के अतिरिक्त किसी अन्य 'आदि सनातन प्राचीन भारतीय धर्म' का वर्णन कर रहे है। परन्तु यह तो सर्व सम्मत ही है कि बुद्ध ने अपने द्वारा प्रचारित धर्म को ही सत्य सनातन धर्म कहकर सम्बोधित किया था। यह भी ठीक है जिन (जैन) या बौद्ध धर्म प्रवर्त्तक ने हिंसात्मक वैदिक कर्मकाण्ड का विरोध किया परन्तु उन्होंने स्वप्रचारितमतों को ही सनातन धर्म बताया और सनातन धर्म से उनका तात्पर्य किसी काल्पनिक 'भारतीय या सनातन धर्म' से नहीं था बल्कि वे प्राचीन वैदिक धर्म को ही सत्य सनातन धर्म समझते थे। उनका यह विश्वास था कि सनातन वैदिक धर्म मे जन्मपरक वर्णव्यवस्था और पशुहिंसा का विधान नहीं है जैसा कि प्रचलित हिन्दू धर्म मे था।

मध्यकालीन सन्तों ने यदि वेद का या वैदिक धर्म का तिरस्कार किया तो यह उनके अज्ञान का ही द्योतक है। यह स्पष्ट है कि ये मध्यकालीन सन्त संस्कृत विद्या या वेदो से नितान्त अनभिज्ञ थे और यदि वेदों से अनजान मनुष्य वेदों का तिरस्कार और उपेक्षा करे तो यह उनका दोष नहीं अपितु उनकी शिक्षा का ही दोष कहा जायगा। इसी प्रकार श्रौतस्मार्त धर्म को सामन्ती राजपुरुषों द्वारा आश्रित कहना सत्य की अवहेलना करना है क्योंकि आज भी भारत के करोड़ों निवासी उसी श्रौतस्मार्त धर्म का अनुकरण कर रहे हैं, जिसका कि उनके पूर्वजों न किया था। धर्म के मानने या न मानने मे राजा या शोषित वर्ग का कोई प्रश्न नहीं रहता क्योंकि धर्म के प्रश्न को साम्यवादी विचार धारा के अनुसार राजनीति से जोड़ना उचित नहीं। वस्तुत न तो कोई राजा अपनी शोषक राज्य व्यवस्था को बनाये रखने के लिये किसी धर्म को अपनाता है और न ऐसा मानने के लिये कोई ऐतिहासिक प्रमाण ही मिलता है।

पाठको को आतंकित करने के लिये लेखक ने गवर्नर जनरल और प्रधान मन्त्री की सम्मति उद्धृत की है। वस्तुत उसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। श्री राजगोपालाचार्य का यह कथन है कि गुरु नानक ने यह महान् कार्य उस समय किया जब जनता वैदिक कर्मकाण्ड के चक्कर मे धर्म के सच्चे अर्थ को भूल गई थी सत्य से कोसों दूर है। क्योंकि इतिहास का एक साधारण सा विद्यार्थी भी यह जानता है कि गुरु नानक के समय मे किसी प्रकार के वैदिक कर्मकाण्ड का प्रसार नहीं था। सत्य तो यह है कि गुरु नानक के समय मे हिन्दू और मुसलमानों का धार्मिक संघर्ष अपनी पराकाष्ठा को पहुँच गया था और हिन्दू मुसलमानों मे प्रेम और सौहार्द उत्पन्न करने के लिये गुरु नानक ने अपने सिक्ख धर्म की स्थापना की थी।

मान्य प्रधान मन्त्री जी के इस मन्तव्य से हम सहमत हैं कि सनातन धर्म शब्द पर आजकल हिन्दुओं के कुछ कट्टर दलो ने एकाधिकार

कर रक्खा है और इसी प्रकार बौद्ध या जैन धर्म को शत प्रतिशत भारतीय उपज मानते है परन्तु लेखक के कथनानुसार यह सिद्ध नहीं होता कि व वैदिक संस्कृति को आज के अर्थों मे प्रयुक्त होने वाली हिन्दू सस्कृति समझते हैं और यह तो और भी स्पष्ट है कि तथाकथित 'प्राचीन भारतीय सस्कृति" की रूपरेखा तथा उसके आवश्यक तत्त्वो को पेश करने मे प० नेहरू और लेखक दोनो ही असफल रहे है।

इसी प्रकार 'पिता के पत्र पुत्री के नाम पुस्तक मे सिन्धुघाटी की जिस सभ्यता का वर्णन पंडित जी ने या सर जान मार्शल ने किया है उससे यह सिद्ध नहीं होता कि यह आर्येतर सभ्यता थी। केवल पांच हजार ही क्या, रामायण कालीन सामग्री के मिल जाने से यह निश्चय प्रमाण मिलता है कि भारत मे आर्य सभ्यता लाखो करोडो वर्ष पुरानी है और उसी सभ्यता का एक नमूना हमे मोहजोदारो की खुदाइ मे मिलता हैं। प० नेहरू का यह कथन अशुद्ध है कि "जिस समय मोहजोदरो की यह सभ्यता भारत मे फल फूल रही थी, उस समय भारत मे आर्यों न कदम भी नहीं रक्खा था।" आर्य लोग विदेश से भारत म आये यह विदेशी इतिहासकारो की निराधार कल्पना है। आर्य लोग यहीं के निवासी थे, कहीं बाहर से नहीं आये। इसे पुष्ट करने के लिये यहा प्रमाण देना स्थानाभाव के कारण उचित नहीं होगा। हा पाठको से प्रार्थना की जाती है कि वे श्री सम्पूर्णानन्द लिखित 'आर्यों का आदि देश' नामक विचार पूर्ण पुस्तक को पढने का कष्ट करे जिसमे सिद्ध किया गया है कि आर्य लोगों का आदि देश भारत ही था।

तथा कथित भारतीय सस्कृति और वैदिक सस्कृति का विरोध दिखलाने मे लेखक ने कल्पना की ऊंची उडाने भरी है। लेखक का यह कथन कि यह सस्कृति वैदिक सस्कृति के विकाश के पहिले प्रौढ रूप मे विद्यमान थी उसके ऐतिहासिक अज्ञान का परिचायक है क्योकि हमे किसी भी इतिहास मे उसकी विद्य मानता का प्रमाण नही मिलता। यह तो सर्व सम्मत बात है कि वेद ससार की प्राचीनतम पुस्तके हैं फिर उनके आधार पर स्थापित वैदिक सस्कृति को विश्व की प्राचीनतम सस्कृति कहा जाय तो अनुपयुक्त नही होगा। लेखक विदेशी लेखकों और इतिहासकारको के स्वर मे स्वर मिलाकर वैदिक सस्कृति को विदेशी सस्कृति कहने का साहस करता है। इससे बढकर राष्ट्र की अधिक कुसेवा और क्या हो सकती है कि घर की वस्तु को पराई कहा जाय। वर्णव्यवस्था के नाम पर वैदिक सस्कृति को भेदभाव पर आश्रित या विषमतापूर्ण कहना पहले दर्जे की धूर्त्तता होगी क्योकि जैसा कि पहिले कहा जा चुका है कि वर्ण व्यवस्था एक प्रकार का Division of Labour या श्रम का वर्गीकरण मात्र है उसके आधार पर किसी प्रकार के जन्मसिद्ध भेदभाव की कल्पना करना बुद्धि का विपर्यय ही कहा जायगा। इसी प्रकार आर्य अनार्य भेदभाव या आर्य दस्यु भेद किसी सामाजिक विषमता का प्रतीक न होकर सदा चार और दुराचार की विभिन्नता का प्रतीक है।

वैदिक सभ्यता को नाजी व फासिस्टवाद

का प्रतीक बतलाना सत्य का सबसे अधिक अपलाप करना है। 'वैदिक संस्कृति में भोग। के लिये छीना झपटी और संघर्ष है' इस कथन के लिये कोई प्रमाण नहीं देना स्पष्ट कर देता है कि लेखक का उद्देश्य सच्चाई को न लिखकर केवल वैदिक संस्कृति को बदनाम करना है। इसी प्रकार लेखक का यह कथन कि यह धर्म सदा मुट्ठी भर द्विजातियो का तो धर्म रहा, बहुसंख्यक भारतीय जनता ने उसे स्वीकार नहीं किया" सर्वथा असगत और सत्य के विरुद्ध है। क्योंकि आज भी करोड़ो भारतवासी वैदिक धर्म के किसी न किसी सम्प्रदाय को मानते है और उसके सिद्धान्तो का पालन करते है। दस करोड़ अछूतों के लिये वैदिक धर्म को जिम्मेवार नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि वैदिक धर्म ने शूद्रो का सदा आदर करना सिखलाया है और इसके विरुद्ध अछूतों की सामाजिक दुर्व्यवस्था के लिये वे कट्टरपंथी जिम्मेवार है जिन्होंने जन्म परक जाति व्यवस्था के आधार पर मनुष्य को मनुष्य से घृणा करना सिखलाया।

अपने लेख के अन्तिम भाग मे लेखक ने फिर एक बार अपनी कल्पना को दुहराया है। बुद्ध के वचन "एष धम्मो सनातनो" से किस धर्म का तात्पर्य है यह तो पहिले ही बतलाया जा चुका है, उसको बार बार अप्रासंगिक रूप से उद्धृत करना यह बताता है कि लेखक के पास अपनी कल्पना को सिद्ध करने के लिये पर्याप्त प्रमाण नहीं हैं। केवल बुद्ध ने ही बहुजनहिताय बहुजनसुखाय' का उपदेश नहीं किया है वरन् वैदिक ऋचाओ मे भी उसी सार्वभौम और सार्वकालिक धर्म का उपदेश दिया गया है जो मनुष्य मात्र के लिये हितकारी है। तभी तो वैदिक ऋचा स्पष्ट रूप से घोषणा करती है कि—यथमा वाच कल्याणीमावदानि जनेभ्य' अर्थात वेद ज्ञान बिना किसी भेद भाव के समस्त मनुष्य मात्र के लिये पदा किया गया है और प्रत्येक को यह अधिकार है कि वह उससे समुचित लाभ उठावे। सम्पूर्ण ससार मे परमात्मतत्व का दर्शन करने वाला वैदिक धर्म ही 'बहुजन हिताय धर्म है यहा 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' की उदार शिक्षा दी गई और गीता के इस श्लोक मे तो स्पष्ट कहा है कि—

"*विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मण गवि हस्तिनि।*
शुनि चैव श्वपाक च पण्डिता समदर्शिन॥

बुद्धिमान् मनुष्य, विद्वान और विनययुक्त ब्राह्मण, गौ, हाथी कुत्ता और चाण्डाल सबको समान दृष्टि से देखता है। वैदिक धर्म मे समानता का भाव मनुष्य जाति तक ही सीमित नही रहता परन्तु अपने मे प्राणी मात्र के प्रेम और भूत दया को भी सम्मिलित कर लेता है। बुद्ध धर्म और सघ की शरण को आवश्यक बतलाने वाला बौद्ध धर्म कितना उदार है यह हम नहीं जानते।

महात्मा बुद्ध ने जिस 'पचशील का उपदेश दिया था उसको लेखक ने अतिशयोक्ति से गौरवान्वित किया है परन्तु जब हम बुद्ध की इस पचशील सम्बन्धी प्रतिज्ञा का ध्यानपूर्वक मनन करते है तो हमे पता चलता है कि यह तो अष्टाग योग के प्रथम वर्ग 'यमो' का वर्णन मात्र है।

(१) तुम हिंसा नहीं करोगे—यह अहिंसा की शिक्षा पहला यम है।

(२) तुम झूठ नहीं बोलोगे—इसे पतञ्जलि मुनि ने सत्य कहा है।

(३) तुम विना दिये किसी की कोई वस्तु नहीं लिया करोगे इसे अस्तेय कहा गया है।

(४) तुम अवैध कामाचार नहीं करोगे—यह ब्रह्मचर्य की शिक्षा है।

(५) नशे के सेवन का निषेध करना भी वैदिक धर्म की ही शिक्षा है क्योंकि हमारे यहा मदिरा पान आदि पच महापातकों मे माना गया है। पाठको को अब स्पष्ट रूप से मालूम हो गया होगा कि महात्मा बुद्ध ने जिस धर्म का उपदेश किया वह वैदिक धर्म का ही सदाचार सम्बन्धी भाग था। उनके इस सदाचार सम्बन्धी धर्म को वैदिक धर्म से भिन्न बतलाना उचित नहीं क्योंकि उन शिक्षाओ का मूल हमे वैदिक धर्म मे मिल जाता है। इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि 'एष धम्मो सनातनो' से बुद्ध का तात्पर्य सनातन वैदिक धर्म से ही था।

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी की शिक्षाये भी प्राचीन वैदिक धर्म की सदाचार और समानता-मूलक शिक्षाओं पर ही आधारित हैं। इसे स्वय महात्मा जी ने भी स्वीकार किया था कि जिन अहिंसा, सत्य, विश्वप्रेम आदि सिद्धान्तों का वे प्रचार कर रहे हैं वे स्वयम् उनके आविष्कृत नहीं हैं अपितु सनातन धर्म की ही अत्यन्त प्राचीन शिक्षाये हैं जिनको कालान्तर मे भारतवासी भूल गये हैं। महात्मा गाधी का प्रयत्न एकबार फिर उन सनातन शिक्षाओं का समस्त ससार मे प्रचार और प्रसार करने के लिये हुआ, इसलिये हम कह सकते हैं कि महात्मा गाधी केवल देश के राष्ट्रनेता ही नहीं अपितु हिन्दू धर्म के महान् नेता और प्रचारक भी थे। महात्मा गाधी की शिक्षाओ का सम्बन्ध तथाकथित प्राचीन भारतीय सस्कृति से लगाना स्वयं महात्मा गाधी के साथ अन्याय करना है क्योंकि उन्होंने अपना सम्बन्ध हमेशा सनातन धर्म से बनाये रक्खा था और वे अपने जीवन मे अपने को आदर्श जीवन हिन्दू समझते रहे।

लेखक ने अपने सम्पूर्ण लेख मे न तो तथा कथित प्राचीन भारतीय सस्कृति की कोई रूप रेखा ही दी है और न उनकी शिक्षाओ की ओर ही सकेत किया है फिर महात्मा गाधी या अन्य किसी महापुरुष का उसके साथ सम्बन्ध बताना कहा तक उचित है, यह पाठक भी समझ सकते हैं।

[लेखक के इस विचार से हम सहमत नहीं कि बुद्धभगवान् अनीश्वरवादी वा नास्तिक थे। हम इस पर फिर कभी प्रकाश डालेंगे। जो अ ग्रेजी शिक्षित सज्जन वैदिक सस्कृति के सच्चे स्वरूप को जानना चाहते है उन्हें श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय कृत Vedic Culture नामक पुस्तक सार्वदेशिक सभा से मगवा कर पढनी चाहिए।

—सम्पादक सा० दे]

जंजीवार में आर्य समाज का प्रचार

[लेखक—श्री जोरावरसिंह जी आर्य पोस्टबाक्स ७७, दार सलाम]

अफ्रीका महाद्वीप के केनिया व युगाडा दो प्रदेशों मे ६ मास प्रचार करने के पश्चात् मैं वापिस स्वदेश गया और ५ मास देश मे रह कर पुन अफ्रीका के टागानिका प्रदेश मे आया और टागानिका की राजधानी दारेस्सलाम मे २० भाषण दिये। टागानिका के अन्य नगरों मे जाने से पूर्व मैंने जजीवार जाना उचित समझा। अत २३ जून को विमान द्वारा मैं जजीवार गया। आर्य समाज व हिन्दू मंडल के कार्यकर्ताओं ने विमान घर पर मेरा स्वागत किया तथा जंजीवार के प्रख्यात आर्य बन्धु श्री गोकुलदास रूघाणी के यहा मुझे ठहराया गया।

जजीवार ४० मील लम्बा व २० मील चौडा हरियाली से लदा हुआ हिन्द महासागर मे एक बडा ही सुन्दर द्वीप है। यहा का शासक एक अरबी मुसलमान हैं जो कि सुल्तान कहलाता है। परन्तु सुल्तान तो नाम मात्र का शासक है वास्तव मे सारा ही शासन प्रबन्ध अंग्रेजों के हाथ मे है। जजीवार राज्य मे जजीवार व उससे ६० मील दूरी पर का एक दूसरा द्वीप पेम्बा भी है जो कि जंजीवार से कुछ ही छोटा है। ये दोनों द्वीप लौंग की पैदावार के लिये प्रख्यात है। सारे संसार की लौंग की उपज का तीन चौथाई भाग इन दोनों द्वीपों मे होता है। सारी ही भूमि लौंग के सुन्दर वृक्षों से ढकी हुई एक सुन्दर बाग जैसा लगती है। यों तो यहा नारियल, जायफल, कालीमिर्च व काजू भी पैदा होते हैं परन्तु लौंग ही यहा की मुख्य उपज है। जिस पर कि यहा का व्यापार व जनता का निर्वाह निर्भर है। और यह अधिकाश व्यापार भारतीयों के हाथ मे है।

यहा के मूलनिवासी हब्शी हैं और जन सख्या ढाई लाख से कुछ ऊपर है जिसमे हब्शी, अरब व भारतवासी सब सम्मिलित हैं। भारतीयो की कुल सख्या लगभग १६ हजार है। जिसमे ६ हजार हिन्दू है शेष खोजा, बोहरा व अन्य मुसलमान है। हिन्दुओं मे कच्छ के भाटिया लोग अधिक है। सबसे पहिले १७८४ ई० मे मस्कत से सुल्तान सैयद बिन अहमद के साथ एक व्यापारी भाटिया पेढी ही इस द्वीप मे आई थी। ये भाटिया लोग सुल्तान के बहुत विश्वास पात्र थे। तथा चुगी व राज कोष का सारा कारोबार इन्हीं के हाथों मे था। सारे ही अफ्रीका प्रदेश मे सबसे पहले आने वाले भारतीय यही थे। और भारत की खोज में निकले हुए वास्कोडिगामा को यहीं पर एक भारतीय माझी ने भारत का पता दिया था।

सारे ससार मे बदनाम गुलामो के व्यापार का केन्द्र यही जजीवार था। अफ्रीका तो उस समय नितान्त उजाड था। अफ्रीका के जंगलो से हजारो की सख्या मे जगली हब्शियो को पकड कर यहीं लाया जाता था और अमेरिका व अन्य देशो के दलालो के हाथो पशुओ के समान बाजार मे बेचा जाता था। इन गुलामो का मूल्य उस समय पशुओ से भी कम होता था। यह आपको इसी से पता चलेगा कि १८६० ई० मे छोटे लडके व लडकी का मूल्य १५ से लेकर २५

रु० तक, बडे स्त्री व पुरुष का मूल्य ७५ से ६० रुपये तक तथा अरब के गधे का मूल्य ६० से ८७५ रुपये तक था। स्त्रियों को खरीदते समय उस बुरे ढग से उनकी जाच की जाती थी कि किसी भी सभ्य मनुष्य का शिर लज्जा से झुके बिना नहीं रह सकता। मनुष्यता का कलक वह गुलाम प्रथा आज ससार से मिट चुकी है परन्तु उन अत्यचारों की कहानिया आज भी आपको जजीबार मे सुनने को मिल सकता है। आप यह जानकर प्रसन्न होगे कि जिस स्थान पर गुलामो का बाजार लगा करता था आज वहा पर आर्य समाज मन्दिर बना हुआ है जहा कि वदमन्त्रो के गान से आकाश गू जा करता है तथा विश्व कल्याणकारी ओ३म् पताका फहराती रहती है।

जञ्जीवार द्वीप के जगलो मे यो तो कितने ही छोटे २ ग्राम हैं। परन्तु बडा और राजधानी का नगर जञ्जीवार ही है जो कि इस द्वीप के ही नाम पर है। इसमे फिरते समय आपको यही प्रतीत होगा कि आप भारत के ही किसी नगर मे आगये है। छोटी २ गलिया तो वृन्दावन की कु ज गलियों की याद दिलाये बिना नहीं रहती। यहा आर्य समाज का एक सुन्दर मन्दिर है जहा कि प्रति शनिवार को साप्ताहिक अधिवेशन लगता है। पहले तो आर्य समाज की एक कन्या पाठशाला भी थी परन्तु कुछ समय से वह हिन्दू कन्या पाठशाला में मिलादी गई है। यद्यपि वह काम हिन्दू सगठन की दृष्टि से किया गया था परन्तु वह अभी तक नहीं हो सका। यहा के हिन्दुओ के परस्पर के वैमनस्य व रूढियो को देखकर किस हिन्दू जाति हितैषी का शिर लज्जा से न झुक जायगा ?

आज से दश पूर्व यहा आर्य समाज बहुत प्रगतिशील था। उस समय मे यहा श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी, पडित चमूपतिजी, महता जैमिनि जी, ठा० प्रवीणसिंह जी, प० महारानी शकरजी, स्वामी भवानीदयाल जी प्रभृति विद्वान् भी आ चुके है। पिछले ? वर्षों से यहाँ कोई भी प्रचारक नहीं आया है जिसके कारण दिन पर दिन शिथल होता हुआ आर्य समाज निष्प्रभाव होता जा रहा है। आर्य समाज की शिथिलता का दूसरा बडा कारण यहा के रूढि उपासक भाठिया लोगो का विरोध भी है जो कि बहुसख्यक होने के साथ ही प्रमुख व्यापारी भी हैं। य लोग इतन रूढिवादी है कि इस बीसवीं शताब्दी म और वह भी विदेश मे भी किसी भी अन्य जाति के हिन्दू के साथ बैठकर भोजन भी नहीं कर सकते। इनमे से कई लोग थियोसोफिस्ट भी बन गये है परन्तु आर्य समाज जैसी विश्व कल्याणकारी सस्था की गन्ध भी उनको नहीं सुहाती।

मैंन यहा आर्य समाज, हिन्दू मडल, सिख गुरुद्वारा, हिन्दू महिला मण्डल, व हिन्दू विद्या र्थिनी मडल के तत्वाधान मे ७० भाषण दिये। भाषण वैदिक धर्म, आर्य सस्कृति, प्राचीन इतिहास, स्वतत्र भारत, हिन्दू सगठन व इनसे सम्बद्ध विषयो पर हुए। यहा के कार्यकर्त्ताओं ने मुझे बताया कि मैं पहला प्रचारक हूँ जिसने कि एक ही साथ लगातार इतने भाषण दिये हैं। अधिकाश भाठियों के अतिरिक्त सभी हिन्दू बिना किसी धार्मिक भेदभाव के बडी सख्या मे भाषण सुनन आते रहे। यद्यपि यहा की लगभग सभी हिन्दू जनता गुजराती भाषा भाषी है परन्तु

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

सहायतार्थ प्रतिज्ञा पत्र

(इसे पढकर दान राशि कृपया शीघ्र सभा कार्यालय मे भेजिये और अन्या से भिजवाइये ।

सेवा मे,

श्री मन्त्री जी

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा,

बलिदान भवन, देहली

श्रीयुत मन्त्री जी, नमस्ते !

देश देशातरों मे सार्वभौम वैदिक धर्म और वैदिक सस्कृति क प्रचार की व्यवस्था के उद्द श्य से स्थापित सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि की योजना को मै अत्यावश्यक और उपयुक्त समझता हू और इस पुण्यकार्य की सहायतार्थ रु०की राशि

तथा
अथवा रु० के वार्षिक दान को प्रतिज्ञा करता हू । यह राशि आप की सेवा में भेजी जा रही है ।

भवदीय

ह०

नाम—

पूरा पता—

तिथि—

हिन्दी सभी समझ सकते हैं। अन्तिम दिन आर्य समाज ने मुझे मानपत्र दिया तथा एक थैली भी। विद्यार्थिनी मण्डल की ओर से संगीत का पुरोगम भी रक्खा गया था। मुझे इतना सम्मान तथा सहायता दी इसी से आप अनुमान कर सकते हैं कि जनता कितनी भावुक तथा प्रेमी है और प्रचार की कितनी भूखी है। पेम्वा द्वीप के हिन्दू भाइयों के आग्रह पर मै पेम्वा भी गया। यहा स्टीमर से जाते है। स्टीमर सप्ताह मे केवल एक ही बार आता तथा जाता है। कुल १० घंटे का मार्ग है। मेरे साथ मे जंजीवार समाज के मन्त्री श्री रघुनाथजी महता भी गये। पेम्वा के वेटे बन्दर पर जाकर जब हम पहुँचे तो देखा कि वेटे तथा चाके चाके दोनो ही ग्रामों के प्रमुख हिन्दू बन्दरगाह पर स्वागतार्थ उपस्थित थे। हमारे जाते ही सारे ही द्वीप के हिन्दुओं मे उत्साह की एक लहर सी दौड़ गई। पेम्वा द्वीप के इतिहास मे केवल एक बार आज से पन्द्रह वर्ष पूर्व महता जैमिनिजी प्रचारार्थ आये थे। और वह भी दो दिन के लिए। अत लोग भूखों के समान भाषणों पर टूट पडे। जगलों से बीस २ मील से लोग आते ~

पेम्वा मे मैं ६ दिन रहा और ६ दिन मे १५ भाषण दिए। यहा आर्य समाज नहीं है। वेटे और चाके चाके दोनों ही ग्रामों मे हिन्दू मण्डल है। अत हिन्दू मण्डल के तत्त्वाधान मे वेटे मे ८ तथा चाके चाके मे ७ भाषण दिये। दोनो ग्रामों मे एक एक भाषण हिन्दू मुसलमान सबके लिये तथा दो दो भाषण स्त्रियो के लिए गुजराती भाषा मे दिये क्योकि यहा की बहुत ही कम स्त्रिया हिन्दी समझ पाती हैं। जगल के और भी छोटे ग्रामों के हिन्दू भी प्रतिदिन भाषण सुनने आते रहे। चाके चाके मे जो अन्तिम भाषण हुआ उसमे तो लगभग सारे ही द्वीप के हिन्दू एकत्र थे। सारे ही द्वीप के हिन्दुओं की ओर से मुझे मानपत्र दिया गया जिसे छपाया गया था। मेरे कार्य की सहायतार्थ एक थैली भी दी। स्त्री और पुरुषों सभी की ओर से मुझसे अत्यन्त आग्रह किया गया कि मैं वहाँ एक सप्ताह और ठहरू परन्तु आगामी सप्ताह का स्टीमर ही बन्द था और इस प्रकार दो सप्ताह ठहरना पडता अत सबको निराश करके मुझे ज जीवार लौटना ही पडा और जजीवार से १८ जुलाई को विमान द्वारा फिर दारेस्सलाम।

चाके चाके ग्राम की एक घटना का उल्लेख करना आवश्यक है। लगभग आधा ग्राम थियोसोफिस्ट बन चुका था और शेष पेम्वा के सभी हिन्दुओ को थियोसोफिस्ट बनाने की योजना थी। इस काम के लिये एक पारसी थियोसोफिस्ट प्रचारक उन्हीं दिनो आया था जिन दिनों कि मैं वहा पहुँचा। मैंने थियोसोफिस्टों की पोल खोल-कर बताई जिसका परिणाम यह हुआ कि नया थियोसोफिस्ट तो कोई बना ही नहीं वरन् पुरानो म से भी कइयों ने उनके प्रमाण पत्र फाड फेके। इस प्रकार एक अनिष्ट होते होते बच गया।

वस्तुस्थिति की जानकारी के लिये पाठको को इतना और बता देना चाहता हू कि जजीवार राज्य की ६ हजार हिन्दू जनता को नगण्य न समझे। यह भारतवर्ष नहीं है जहा कि करोडों हिन्दू हैं। जजीवार विदेश है और विदेशो मे इतनी संख्या बहुत मानी जाती है। साथ ही मानपत्रों व भाषणो का जो वर्णन मैंने किया है

वह अपनी प्रशंसा के लिए नहीं वरन् पाठको को वहां की जनता की भावना व अपने कार्य का दिग्दर्शन कराने के लिये किया है।

यहां की जनता दिन पर दिन अपनी संस्कृति सभ्यता व धर्म से दूर ही होती जा रही है। यदि शीघ्र ही ध्यान नहीं दिया गया तो बड़ा अनिष्ट होने की आशंका है। यहां धन की कमी नहीं है, कमी है प्रचारको की, यदि कोई प्रचारक यहां आना चाहे तो उनका सब प्रबन्ध किया जा सकता है।

यह विवरण मैं टॉगानिका प्रदेश के म्वाजा नगर से लिख रहा हूँ जो कि विक्टोरिया झील के किनारे पर बसा हुआ है। यदि सम्पादकजी व पाठकों ने इसे पसन्द किया तो अफ्रीका संबंधी अन्य लेख भी भेजूंगा।

(सार्वदेशिक सभा ऐसे प्रदेशों मे प्रचारकों को भेजना चाहती है। जनता को सार्वदेशिक वेद प्रचार निध्यर्थ उदार आर्थिक सहायता देकर उसे सक्रिय सहयोग देना चाहिये।

—सम्पादक सार्वदेशिक]

—❀—

दानसूची सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

(१६—९—४९ तक प्राप्त दान)

१८।) ५) से कम दान का योग
१५।≈) आर्यसमाज अबोहर मंडी
५) ,, बदलूसिंह जी पाकसेमा (रोहतक)
४०) ,, आर्यसमाज लातूर
१०) ,, आर्यसमाज भटपुरा असमौली (मुरादाबाद)
५) ,, बुलाकचन्द्र राय आर्यसमाज आरा
१०) ,, आर्यसमाज विहार शरीफ पटना
१०) ,, रघुनाथ जी शर्मा प्रोप्राइटर नेशनल दिगम्बर कुटीं बाजार जोधपुर
१०) ,, सत्यप्रकाश जी हैदराबाद (दक्षिण)
१७॥) ,, आर्यसमाज गाजियाबाद के सदस्यों द्वारा
३३) ,आर्यसमाज पटियाला के सदस्यों द्वारा
१६।) ,, आर्यसमाज जौनपुर यू० पी०
५) ,, अमरनाथ जी आर्य शिमोगा मैसूर स्टेट
५) ,, रामचन्द्र जी जिज्ञासु देहली
१०) ,, प० गंगाप्रसाद उपाध्याय जी मत्री-सार्वदेशिक सभा देहली
१०) ,, शिवचरणदास जी देहली
५) ,, आर्यसमाज फलावदा मेरठ
५) , आर्यसमाज कारजा अकोला
१०) ,, विश्वम्भरदास जी खुल्लर आ० स० रोड करौलबाग देहली
२-) श्री
१००) ,, ला० नारायणदत्त जी नई देहली
१००) ,, ,, रलाराम मेलाराम जी नई देहली
१००) ,, ,, हंसराज जी गुप्त नई देहली

५६२॥≈)
८०४॥≈) गतयोग
१३६७॥) सर्वयोग

(क्रमश)

दान दाताओं को धन्यवाद

देशदेशान्तरों मे वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रचार की समुचित व्यवस्था कराने के

पवित्र उद्देश्य से आयोजित इस सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि में उदार दान देना प्रत्येक आर्य नरनारी का कर्तव्य है। जिन सज्जनों और समाजों ने अभी तक अपने इस कर्तव्य का पालन नहीं किया वे आज ही सलग्न फार्म को भर कर और अन्य मित्रों से भरवा कर सार्वदेशिक सभा कार्यालय मे दान राशि सहित भेज दे।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मंत्री
सार्वदेशिक सभा

स्थापना दिवस

१) श्री ओमप्रकाश जी सब्जीमडी देहली
१७॥) ,, मत्री आर्यसमाज आबूरोड राजस्थान
१०) ,, आर्यसमाज नरवर भवन आर्य समाज मोती कटला जयपुर
७) ,, मंत्रिणी जी आर्य स्त्री समाज अतरसुइया प्रयाग
११॥) ,, मत्री जी आर्य समाज बारिकपुर २४ परगना
१०) , कोषाध्यक्ष जी आर्य समाज बरौठा हरदुआगंज (अलीगढ)
१०) ,, ,, आर्य समाज हिंगोली (दक्षिण)
१५) ,, मत्री जी आर्य समाज जम्मू
७) ,, ,, आर्य समाज बुरहानपुर (निमाड)

८६)
६०३॥) गतयोग
६६२॥) सर्वयोग

(क्रमश)

दान दाताओं को धन्यवाद

इस बार इस निधि का कम से कम २०००) के दान का बजट बनाया गया है। आधा तो पूरा हो चुका है, शेष आधे को भी आर्य समाजो को शीघ्र से शीघ्र पूरा कर देना चाहिए।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मंत्री—
सार्वदेशिक सभा

दयानन्द पुरस्कार निधि

५)	श्री गुरुदत्त जी गौतम बिरला मिल्स सब्जी मंडी देहली
५)	,, राजेश्वरप्रसाद जी आ० स० डाल्टन गंज पलामू (बिहार)
५)	रघुराजप्रसाद जी
५)	वासदेव प्रसाद जी
१०१)	मन्त्री जी आर्य समाज लातूर
५)	स्वा० शिवानन्द तीर्थ लोहरदगा शान्ति आश्रम रांची
५)	मन्त्री जी आ० स० फलावदा मेरठ
१४।–)	आ० स० आबूरोड राजपूताना
७)	इन्द्रदेव जी c o भगवन्त चंदगीराम जी गुरुकुल हसनपुर
११–)	बालकृष्ण जी बृटिश गायना
१५८॥=)	
७८२६।=) गत योग	
७९८५) सर्व योग	

* इसमें ५०००) अमृतधारा ट्रस्ट देहरादून का दान सम्मिलित है।

दानदाताओं को धन्यवाद
गंगा प्रसाद उपाध्याय
मंत्री
सार्वदेशिक सभा

भूलसुधार

अगस्त के सार्वदेशिक मे प्रकाशित दयानन्द पुरस्कार निधि की दान सूची मे ५) श्री प० श्री राम जी बी० ए० वकील लुधियाना के छपने से रह गए। पाठक गण कृपया सुधार कर पढें।

मन्त्री—
सार्वदेशिक
आर्य प्रतिनिधि सभा

दान सूची सत्याग्रह बलिदान दिवस

७) अज्ञात ।
३५) श्री ईश्वरदास जी द्वारा आर्य समाज जम्मू

४२)
७) गतयोग

४६) सर्वयोग

दानदाताओं को धन्यवाद
मन्त्री—
सार्वदेशिक सभा

—✤—

विविध दान

५) श्री रहतूलाला जी आ० स० अम्बहटा (सहारनपुर)
५) धर्मदास जी „ „
१) हरिश्चन्द्र जी „ „

११)
५७) गतयोग

६८) सर्वयोग

दान दाताओं को धन्यवाद
गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक सभा

—×—

ग्राहकों से नम्र निवेदन

निम्न लिखित ग्राहकों का चन्दा अक्टूबर मास मे समाप्त होता है। अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल ही मनीआर्डर द्वारा भेज दे अन्यथा आगामी अंक उनकी सेवामे वी० पी० द्वारा भेजा जायगा। धन प्रत्येक दशा मे ३०।१०।४९ तक कार्यालय मे पहुँच जाना चाहिये। कृपया कम से कम अपने ५ मित्रो को भी ग्राहक बनाइये। मनीआर्डर अथवा सभा के साथ पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक सख्या अवश्य लिखें।

ग्राहक संख्या	पता
२२	श्री भगवान शरण जी खेमरिया झासी
६१	श्री आत्माराम जी परिहार सोजतीगेट जोधपुर
६७	श्री मीका जी कृष्णा जी पानसेमल
१४७	श्री मन्त्री जी आर्य समाज जगन्नाथ भवन पो० बादली रोहतक
१८५	श्री मन्त्रा जी आर्य समाज हवेली खड़गपुर
१८६	श्री राजेन्द्र प्रसाद सिंह जी बाबू बाजार आरा
१९१	श्री मन्त्री जी आर्य समाज कुल्टी जिला वर्द्धवान
१९४	श्री श्यामलाल जी द्विवेदी हेडमास्टर बुरहानपुर निमाड़
१९५	श्री मन्त्री जी आर्य समाज पूरनपुर पीलीभीत
१९८	श्री हरिहर सिंह जी आर्य पो० तलसीपुर पो० राजगढ़
१९९	श्री मन्त्री जी राष्ट्रीय धर्म पुस्तकालय मवाना कला मेरठ
२००	श्री मन्त्री जी आर्य समाज राजोदा देवास जूनियर
२०५	श्री मन्त्री जी आर्य समाज बहराइच
५५५	श्री मन्त्री जी आर्य समाज राजामण्डी आगरा
५५७	श्री मन्त्री जी आर्य समाज हस्पताल रोड जम्मू तवी
५५८	श्री रामचन्द्र जी जुडीशल क्लर्क ऊधमपुर स्टेट
५६०	श्री रामलाल जी आर्य वियोगी ईशनामपुर पोस्ट अमौर
५६४	श्री मन्त्री जी आर्य समाज दीवान टन्डन-पार्क चेम्बर रिफयुजी कैम्प बम्बई
५६६	श्री मन्त्री जी आर्य समाज शामली जिला मुजफ्फर नगर
५६७	श्री ठाकुरदास जी भंडारी पानीपत जिला कर्नाल
५६९	श्री मन्त्री जी आर्य समाज कर्णपुर देहरादून
५७०	श्री मन्त्री जी आर्य कन्या गुरुकुल राजा-वाड़ी पोरबन्दर सौराष्ट्र
५७१	श्री मन्त्री जी आर्य समाज भाटपार रानी देवरिया
५७२	श्री मन्त्री जी आर्य समाज लालकुर्ती मेरठ
५७३	श्री मन्त्री जी आर्य समाज चामपुर जिला बिजनौर
५७४	श्री मन्त्री जी आर्य समाज फिरोजाबाद (आगरा)

ग्राहक संख्या पता

५७५ श्री मुख्याधिष्ठाता जी कन्या गु० कु० पचगाम डालमिया दादरी

५७६ श्री मन्त्री जी आर्य समाज विकडा जिला मेरठ

५७७ श्री मन्त्री जी आर्य समाज थाना भवन मुजफ्फर नगर

५७८ श्री मन्त्री जी आर्य समाज फलावदा जिला मेरठ

५७९ श्री मन्त्री जी आर्य समाज गुरुकुल कांगडी सहारनपुर

५८० श्री मन्त्री जी आर्य समाज सरधना जिला मेरठ

५८१ श्री मन्त्री जी आर्य समाज सदर बाजार मेरठ

५८४ श्री मन्त्री जी आर्य समाज सिवहारा जिला बिजनौर

५८५ श्री मन्त्री जी आर्य समाज मैनपुरी

५८६ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बदायू

५८७ श्री मन्त्री जी आर्य समाज खतौली जिला मेरठ

५८८ श्री मन्त्री जी आर्य समाज हसनपुर जिला मुरादाबाद

५८९ श्री मन्त्री जी आर्य समाज छपरौली

५९० श्री मन्त्री जी आर्य समाज जलाली जिला अलीगढ

५९१ श्री मन्त्री जी आर्य समाज जेवर जिला बुलन्दशहर

५९२ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बिजनौर

५९३ श्री मन्त्री जी आर्य समाज भटपुरा पो० अस्मौली मुरादाबाद

५९४ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बिन्दकी फतेहपुर

५९५ श्री मन्त्री जी आर्य समाज चन्दोसी मुरादाबाद

ग्राहक संख्या पता

५९६ श्री मन्त्री जी आर्य समाज अकबर पुर जिला कानपुर

५९७ श्री मन्त्री जी नगर आर्य समाज मण्डी सैंदखा आगरा

५९८ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बीसलपुर (पीलीभीत)

५९९ श्री मन्त्री जी आर्य समाज चान्दपुर जिला बिजनौर

६०० श्री मन्त्री जी आर्यसमाज पुवाया जिला शाहजहानपुर

६०१ श्री मन्त्री जी आर्य समाज आमला, बरेली

६०२ श्री मन्त्री जी कर्मवीर पुस्तकालय गौरया कोठी सारन

६०३ श्री देवदत्त जी मौद्गिल मुरार

६०४ श्री मन्त्री जी आर्य समाज अलावलपुर जालन्धर

६०५ श्री रामदेव जी शास्त्री वामलेशवाडी जि० सितारा

६०६ श्री मन्त्री जी आर्य समाज मालेरकोटला

६०७ श्री मन्त्री जी आर्य समाज इटावा

६०८ श्री मन्त्री जी आर्य समाज बान्दा यू० पी०

६१२ श्री किशनचन्द जी रि० चीफ इन्जीनियर कुछ बाया जम्मू तवी

६१३ श्री मेनेजर साहब, बुलाकचन्दराय देशबन्धु खादी भण्डार आरा

६१४ श्री मन्त्री जी आर्य समाज फतेहगढ

६१५ श्री मन्त्री जी आर्य समाज फर्रुखाबाद

६१६ श्री मन्त्री जी आर्य समाज फरीदपुर बरेली

६१७ श्री मन्त्री जी आर्य समाज चौक इलाहाबाद

६१८ श्री मन्त्री जी आर्य समाज विशहर पो० हथगाव अलीगढ

७०६ श्री गुमान सिंह जी प्रिन्सिपल आफिस इम्पीरियल बैंक फोर्ट बम्बई

७७८ श्री एम० एल० नारायणराव जी गोरी बिदनूर कोलार (मैसूर स्टेट)

ओ३म्

विषयानुक्रमणिका

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

वर्ष २८ } दिसम्बर १९४९, मार्गशीर्ष २००६ वि०, दयानन्दाब्द १२५ { अङ्क ९

❀ ओ३म् ❀

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् मह्यं यजन्तां मम यानीष्टाकूतिः सत्या मनसो मे अस्तु ।
एनो मा निगां कतमच्चनाहं विश्वे देवा अभिरक्षन्तु मेह ॥

शब्दार्थ —(मम यानि इष्टा) मेरे जो इष्ट उत्तम गुणादि है, वे (मह्य यजन्ताम्) मुझ से सयुक्त हो जाए —मुझे प्राप्त हो जाए । (मे मनस) मेरे मन का (आकूति) सकल्प (सत्या अस्तु) सच्चा होवे (अहम्) मैं (कतमत् चन) किसी भी (एन) पाप को (मा निगाम्) न प्राप्त होऊ (इह) इस ससार मे (विश्वे देवा) सब ज्ञानी, धर्मात्मा सत्यनिष्ठ मनुष्य (मा रक्षन्तु) मेरी रक्षा करें ॥

पद्यानुवाद —

दिव्य गुण हो प्राप्त मुझ को, मैं जिन्हे हू चाहता
सत्य हो सकल्प मन का, मैं प्रभो ! यह चाहता ।
पाप कोई पास तक, मेरे नहीं आवे कभी
लोक मे रक्षा करे मम, सत्यनिष्ठ यती सभी ॥

सम्पादकीय

अमर धर्मवीर की पुण्यस्मृति में:—

'सार्वदेशिक' का यह अङ्क १ दिस० को प्रकाशित होकर ग्राहकों को भेज दिया जाएगा। २३ दिस० को अमर धर्मवीर श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की बलिदान जयन्ती उत्सव है अतः उन का विशेषरूप से स्मरण आर्यों में नव जीवन का सञ्चार करने के लिए आवश्यक है। ५ दिस० को गीताजयन्ती भी है जिसका मुख्य सन्देश कर्मयोग का है इस लिये भगवद् गीता के कर्मयोग विषयक दो अत्युत्तम श्लोकों को हमने आदर्श कर्मयोगी स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की व्याख्या के साथ इस अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित किया है। अमर धर्मवीर का पुण्यस्मरण वस्तुतः अत्यन्त स्फूर्तिदायक है। उन का त्याग और तपोमय सरल विमल जीवन, उनकी विशुद्ध ईश्वरभक्ति वैदिक धर्म और संस्कृति में उनकी अचल श्रद्धा, उनकी निर्भयता और साहस, परोपकार की भावना, स्मान और राष्ट्र के हित के लिय किये गये उनके महत्त्वपूर्ण गुरुकुल स्थापन, दलितोद्धार, शुद्धि और सघट नादि कार्य किसको उन महात्मा के प्रति श्रद्धापूर्वक नतमस्तक नहीं कर देते ? किन्तु किसी महा पुरुष के प्रति केवल श्रद्धाभक्ति का प्रदर्शन करने से कोई लाभ नहीं हो सकता जब तक कि उनके सन्देश को हम जीवन में परिणत करने का प्रयत्न न करें। इस दृष्टि से हम अपने सब पाठक महानुभावों का ध्यान इस वर्ष पुनः अमर धर्मवीर के २१-५-१६२५ को देहली से दक्षिण भारत के आर्यों के नाम मगलौर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर अपने द्वारा प्रेषित दिव्य सन्देश की ओर आकृष्ट करना अपना कर्तव्य समझते हैं क्योंकि हमारा विश्वास है कि इस दिव्य सन्देश को कार्यरूप में परिणत करने पर ही आर्यसमाज तथा आर्यजाति का भविष्य निर्भर है। वह दिव्य सन्देश निम्न है —

"तुम यह मत भूलो कि वैदिक धर्म कोई सम्प्रदाय वा पन्थ नहीं है। वह सत्य सनातन धर्म है जिसके बिना ससार की सामाजिक व्यवस्था एक पल के लिये भी नहीं रह सकती। प्राचीन काल में असंख्य आध्यात्मिक कोषों को खोलने वाली चाबी तुम्हारे ही हाथों में दी गई थी और अब भी अशान्त ससार को शान्ति देना तुम्हारा ही काम है।

किन्तु पहले तुम्हें अपनी सब अपवित्रताओं को धोना होगा। आज गम्भीर भाव से यह प्रतिज्ञा करो कि (१) तुम दैनिक पञ्चमहायज्ञों के अनुष्ठान में प्रमाद न करोगे, (२) तुम अस्वाभाविक जातिभेद के बन्धन तोड़कर वर्णाश्रम व्यवस्था को अपने जीवन में परिणत करोगे (३) तुम अपनी मातृभूमि में से अस्पृश्यता के कलङ्क का समूलनाश कर दोगे और तुम आर्य समाज के सार्वभौम मन्दिर द्वार मत, सम्प्रदाय जाति, रङ्ग आदि के भेद भाव का कुछ भी विचार न कर मनुष्यमात्र के लिये खोल दोगे। परम पुरुष परमात्मा इस गम्भीर प्रतिज्ञा के पालन में तुम्हारे सहायक हों ॥"

श्रद्धेय आचार्य जी का यह सन्देश इतना महत्त्वपूर्ण है कि प्रतिवर्ष इसकी ओर समस्त आर्य नरनारियों का ध्यान आकृष्ट करना हम आवश्यक प्रतीत होता है। आवश्यकता आत्म निरीक्षण करके अपनी त्रुटियों को दूर करने की है। हम देखना यह है कि हममें से कितने आर्य हैं जो पञ्च महायज्ञों के नाम और स्वरूप तक से भली भांति परिचित हैं और उनका श्रद्धापूर्वक अनुष्ठान करते हैं ? कितने हैं जिन्होंने अपने को क्रियात्मक रूप से जात पात की दलदल से ऊपर निकाल कर वर्णाश्रम व्यवस्था को जीवन में क्रियात्मक रूप दिया है ? यह खेद के साथ स्वीकार करना पडेगा कि ऐसे श्रद्धालु आर्य नर नारियों की सख्या बहुत कम है किन्तु इसमें निराश होने की कोई बात नहीं। मुन्शीराम जी

दिव्य सन्देश को हमने ऊपर उद्धृत किया है उसमे जाति बन्धन की शृंखला को तोड़ने की भी बात कही गई है। हमे हर्ष है कि इस की ओर आर्यों का ध्यान गया है और जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की तो स्थापना ही इस आवश्यक कार्य की ओर जनता का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करने के लिये की गई है। इस संघ के प्रोत्साहन से कई उल्लेखनीय महत्त्वपूर्ण विवाह गत दिन वर्षों में हुए हैं। गत ९ अक्तूबर को नई देहली में हमारे पौरोहित्य मे एक ऐसा ही उल्लेखनीय अन्तर्जातीय विवाह सम्पन्न हुआ। वर देहली के एक उत्साही प्रतिष्ठित आर्य, चन्द्र प्रिन्टिंग प्रेस के प्रधान व्यवस्थापक श्री सेवाराम जी के सुपुत्र श्री सुदर्शन लाल जी बी० एस० सी और वधू श्री अमरसिंह जी सचदेव की सुपुत्री श्री राजेन्द्र कौर नामक एक शिक्षित कन्या थीं जिनका एक सिक्ख परिवार से सम्बन्ध है। संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से व्याख्या सहित करनी में हुआ जिसमे सिक्ख नर नारी बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित हुए और वैदिक विधि से वे अत्यधिक प्रभावित हुए यहां तक कि एक श्री मुन्शी सिंह नामक 'ज्ञानी' सिक्ख सज्जन ने भरी सभा में गुरु ग्रन्थ साहेब के वचन उद्धृत करते हुए कहा कि *वह सच्चा सिक्ख ही नहीं जो वेदों का आदर नहीं करता।* हमे यह जान कर बड़ा हर्ष हुआ कि ये दम्पती प्रतिदिन अब सत्यार्थ प्रकाश का पाठ करते हैं और वैदिक जीवन व्यतीत करने का पूर्ण प्रयत्न कर रहे हैं। हम उदारता सूचक ऐसे विवाहों का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए भगवान् से दम्पती की सर्वविधसमृद्धि आरोग्य और शान्ति की प्रार्थना करते हैं और आशा करते हैं कि अन्य आर्य भी सकुचित भावनाओं का परित्याग करके आर्यत्व की सर्वत्र वृद्धि करने में सहायक होंगे।

नाथूराम गौडसे और आप्टे को मृत्यु दण्ड:—

गत १५ नवम्बर को प्रातः अम्बाला जेल में महात्मा गान्धी जी के हत्यारे नाथूराम विनायक गोडसे और उस के षड्यन्त्र में उस के प्रधान सहायक नारायण दत्तात्रेय आप्टे को फांसी दे दी गई। गोडसे के माता पिता और आप्टे की पत्नी की दयाप्रार्थना को शासक प्रमुख श्री राजगोपालाचार्य जी द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था। जहां तक न्याय का सम्बन्ध है महात्मा गान्धी जी जैसे विश्ववन्द्य महापुरुष की हत्या करने वाले व्यक्ति के लिये न्यायानुसार निश्चित मृत्यु दण्ड को कोई अनुचित नहीं कह सकता। महात्मा गान्धी जी के मृत्युदण्ड विरोधी तथा अहिंसात्मक विचारों को दृष्टि में रखते हुए यदि इन को मृत्युदण्ड के स्थान में आजन्म कारावास का दण्ड दिया जाता तो अधिक अच्छा होता ऐसा अनेक महानुभावों का कथन है किन्तु सरकार सर्वथा महात्मा जी के मार्ग पर नहीं चल रही है और न चल कर न्याय और व्यवस्था की रक्षा कर सकती है। गोडसे की अपनी सुख सुविधा की दृष्टि से भी आजीवन कारावास मृत्यु दण्ड की अपेक्षा अधिक सुखदायक न हो सकता था। उस ने अन्त तक मनोवृत्ति में परिवर्तन के कोई चिन्ह नहीं दिखाए थे और अपने कार्य को वह देश के लिये हितसाधक और अतएव उत्तम ही समझता रहा, उस ने अपने लिये दया की प्रार्थना करने से भी इन्कार कर दिया था अतः शासक प्रमुख के लिये न्याय में हस्ताक्षेप का कोई कारण वस्तुतः रह नहीं जाता था। गौडसे की घोर राजनैतिक मतभेद के कारण महात्मा गाधी

जैसी विश्व विभूति की हत्या को किसी प्रकार भी उचित वा न्याय सङ्गत नहीं कहा जा सकता यद्यपि आदि से अन्त तक अपने इस नृशस कार्य को उत्तम समझते हुए उसने जिस दृढता का परिचय दिया उस की प्रशसा करने वाले अनेक व्यक्ति रहे हैं और रहेंगे। आप्टे न तो इतने नृशसकार्य मे पूर्णसहायता देने के अतिरिक्त (जैसे कि न्यायाधिपतियों के निर्णय से प्रमाणित होता है) कायरता का भी परिचय दिया अत उस को सर्वथा अविश्वसनीय समझते हुए शासकप्रमुख का न्याय मे हस्तक्षेप न करना अथवा दयाप्रार्थना को ठकरा देना अनुचित नहीं कहा जा सकता

सयुक्तप्रान्त का नाम आर्यावर्त :—

पाठकों ने समाचारपत्रों मे पढा ही होगा कि सयुक्तप्रान्तीय काग्रेस कमेटी ने ७७ के विरुद्ध १०६ मतों से शिक्षामन्त्री माननीय श्री डा० सम्पूर्णानन्द जी के इस प्रस्ताव को स्वीकृत कर लिया था कि सयुक्तप्रान्त का नाम 'आर्यावर्त' रखा जाए। सयुक्तप्रान्तीय मन्त्रिमण्डल ने भी स० प्रा० काग्रेस कमेटी के उस निर्णय को मान्यता दी थी किन्तु भारतीय सविधान परिषत् ने इसे इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया कि 'आर्यावर्त' यह नाम सारे देश का था केवल सयुक्तप्रान्त का नहीं। जहा तक इस आधार पर सयुक्त प्रान्त के लिये 'आर्यावर्त' नाम को अस्वीकृत करने का प्रश्न है वह हमारे विचार मे भी उचित ही है। हमे स्वयम् इस समाचार से कि सयुक्त प्रान्तीय काग्रेस कमेटी और फिर स० प्रा० मन्त्रिमण्डल ने प्रान्त के लिये 'आर्यावर्त' नाम का निर्णय किया है विशेष हर्ष न हुआ था। माननीय डा० सम्पूर्णानन्द जी ने सयुक्त प्रान्तीय काग्रेस कमेटी मे अपना प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए कहा था कि यह 'आर्यावर्त' बहुत प्राचीन नाम है जिस का हमारी प्राचीन शानदार सस्कृति से सम्बन्ध है और आज भी लाखों करोडों आदमी धार्मिक समारोहों मे इस नाम को स्मरण करते हैं यद्यपि देश के बहुत बडे भाग को पहले आर्यावर्त कहा जाता था तो भी इस सयुक्त प्रान्त का यह प्राचीन नाम रखने मे कोई सकोच न होना चाहिये क्यों कि हम अपने विभाजित देश को अब भी इन्डिया या भारतवर्ष कहते हैं।" हम माननीय श्री सम्पूर्णानन्द जी तथा उन के समर्थकों का जिन्हों ने 'आर्यावर्त' इस नाम को स्वीकृत करके प्राचीन सस्कृति के प्रति अपने प्रेम का परिचय दिया हार्दिक अभिनन्दन करते हैं किन्तु प्राचीन काल मे जो नाम सारे देश का (जिस मे दक्षिणभारत भी सम्मिलित था जैसे कि वाल्मीकि रामायण किष्किन्धाकाण्ड के 'दक्षिणस्योदधेस्तीरे विन्ध्योऽयमिति निश्चित' इत्यादि प्रमाणों से हम सार्वदेशिक के पिछले अङ्कों मे दिखा चुके हैं) था उसे केवल एक प्रान्त के लिये निर्धारित कर देने से हम सहमत नहीं हो सकते। इस से आगे बडे भ्रम होने की सम्भावना हो जाती और भावी ऐतिहासिक केवल सयुक्तप्रान्त को ही आर्यावर्त समझने लग जाते। अत माननीय डा० सम्पूर्णानन्द जी तथा अन्य उन के सब समर्थकों से जिन मे भारतीय सस्कृति के अद्भुत प्रेमी श्रद्धेय पुरुषोत्तम दास जी प्रधान सयुक्त प्रान्तीय काग्रेस कमेटी भी सम्मिलित हैं हमारा निवेदन यह है कि वे सारे देश का नाम (आर्यावर्त) रखा जाए इस के लिये अब भी प्रयत्नशील रहें। वर्तमान भारतीय विधान के अस्पृश्यता निवारण, सम्प्रदायिकता का प्राय अन्त, विस्तृत मताधिकार इत्यादि अनेक अच्छे अङ्ग होते हुए भी उस से बहुत से विचारशील महानुभावों का घोर असन्तोष इस आधार पर है कि इस मे भारतीय सस्कृति का विशेष ध्यान नहीं रखा गया और यह अधिकतर विदेशीय विधानों पर आश्रित है। माननीय मावलङ्कर जी अध्यक्ष भारतीय ससत् तथा माननीय श्री सम्पूर्णानन्द जी शिक्षामन्त्री सयुक्त प्रान्त सरकार

जैसे सुशिक्षित, प्रतिष्ठित और गम्भीर महानु भावों ने भा न की इस आधार पर तीव्र आलोचना की है। ऐसी अवस्था में निकट भविष्य में ही उस में अनेक परिवर्तनों की सम्भावना है। तब सम्पूर्ण देश का भारत की अपेक्षा भी अत्यधिक गौरवसूचक और स्फूर्तिदायक 'आर्यावर्त' यह नाम रखना तथा भारतीय संस्कृति और परम्परा के अनुसार वर्तमान विधान में उचित संशोधन करना आवश्यक होगा। समस्त आर्यों को इस के सम्बन्ध में आन्दोलन करके अनुकूल प्रबल जनमत बनाने का अवश्य यत्न करना चाहिये।

क्या इस घोर असत्य से धर्म प्रचार सम्भव है?

एक मित्र ने आज हमारे पास जोधपुर से प्रकाशित होने वाले 'मारवाड़ी जैन विकास' नामक पत्र का ८ सितम्बर १६४६ का अङ्क भेजा है जिसमें एक सम्पादकीय लेख का शीर्षक 'वैदिक ऋषियों की स्तुति' है। सम्पादक महोदय ने निम्न टिप्पणी के साथ दो मनघड़न्त वचन ऋग्वेद और यजुर्वेद अ० २५ म० १६ के नाम से उद्धृत करते हुए लिखा है कि—

'अनेक इतिहासकारों की अपूर्ण खोजो, साम्प्रदायिक पक्षपात तथा भ्रमपूर्ण मन्तव्यों ने अनेकों मानवों के हृदयों में यह विश्वास बैठा दिया है कि जैनधर्म महावीर द्वारा प्रवृत्तित है उस से पहले का उस का इतिहास कल्पना की उड़ानमात्र है। वे इतिहासकार तथा वे भोले मानव जो आज भी यह मान रहे हों वैदिक ऋषियों की निम्नलिखित स्तुतियों पर ध्यान दें। महावीर के उत्पन्न होने से पहिले ही ऋग्वेदिक ऋषियों की प्रार्थना उनके भ्रमपूर्ण मन्तव्यों को बदलने के लिये क्या पर्याप्त नहीं है? क्या वे अब भी जैन धर्म को वेदों से प्राचीन, वैदिक धर्म से प्राचीन तथा भारतवर्ष का सब से प्राचीन धर्म मानने की उदारता न दिखाएंगे? वे भले साम्प्रदायिक प्रमादवश ऐसी उदारता न दिखाएं परन्तु लुकाछुप कर आखिर उन्हें मानना पड़ेगा कि जैनधर्म ही संसार का सब से एक मात्र प्राचीन धर्म है।'—सम्पादक मारवाड़ जैन विकास।

कल्पित प्रमाण—

(१) ॐ नमोऽर्हन्तो ऋषभो वा ॐ ऋषभ पवित्रम् यजुर्वेद अध्याय २५ म १६

अर्थ—अर्हन्त ऋषभ देव को मैं नमस्कार करता हूं।

(२) ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठितानां चतुर्विंशति तीर्थङ्कराणां ऋषभादिवर्धमानान्तानां सिद्धानां शरणं प्रपद्यते॥ ऋग्वेद

अर्थ—तीनों लोकों में जो प्रतिष्ठित हैं २४ तीर्थों की जिन्होंने रचना की है ऐसे ऋषभ देव से लगाकर महावीर तक होने वाले सिद्धों की मैं शरण प्राप्त होता हूं।

यदि सचमुच ये प्रमाण ऋग्वेद और यजुर्वेद में होते तो सम्पादक महोदय के ऊपर की पंक्तियों को लिखने का कुछ अर्थ होता और उन पर विद्वानों को विचार करना पड़ता किन्तु तथ्य यह है कि ये दोनों वचन जो लेखक ने (चाहे वे स्वयं सम्पादक जी हों या कोई अन्य) यजुर्वेद और ऋग्वेद के नाम से उद्धृत किये हैं सर्वथा कपोलकल्पित और मनघड़न्त हैं। हमें आश्चर्य है कि भोली जनता को भ्रम में डालने के लिये किसी ने इतने 'काले झूठ' बोलने व

लिखने का दुस्साहस कैसे किया है। हमारा 'मारवाड़ जैन विकास' के सम्पादक व उस लेख के लेखक को खुला आह्वान (चैलज) है कि सम्पूर्ण ऋग्वेद और यजुर्वेद अ० २५ म० १९ में उन मनघड़न्त वाक्यो को किसी भी निष्पक्षपात विद्वान् के सामने दिखा दे जिस के आधार पर उस ने ऊपर उद्धृत पंक्तियां लिखी हैं यदि वे ऐसा नहीं कर सकते (जैसा कि हमें शतप्रतिशत निश्चय है) तो ऐसे असत्य लेख को प्रकाशित करने पर स्पष्टतया खेद प्रकाशित करना और क्षमा मांगना उनका कर्त्तव्य है।

एक सुप्रसिद्ध आर्य सन्यासी का आकस्मिक देहावसान

हम अपने पाठकों को यह सूचित करते हुए अत्यन्त दुःखी हैं कि आर्य जगत् के एक सुप्रसिद्ध और सुयोग्य सन्यासी श्री स्वामी केवलानन्द जी का जो अपने उदात्त चरित्र सौम्यस्वभाव तथा गम्भीर आध्यात्मिक प्रवचनों के कारण सर्वत्र उत्तमख्याति थी गत २० नव० की रात्रि ११ बजे देहली के इर्विन हस्पताल में पक्षाघात से देहावसान हो गया। मान्य स्वामी जी आर्यसमाज सीताराम बाजार देहली के वार्षिकोत्सव पर वेदकथा के लिये निमन्त्रित होकर अपने सुन्दर और उत्तम दारानगरगंज बिजनौर के निगम आश्रम से देहली पधारे थे और कई दिनों तक प्रभावशालिनी वेदकथा करने के अतिरिक्त १९ नव० की रात को ८ बजे भी उनका नवजीवनदायक प्रवचन उत्सव में हुआ था। उसी रात को उनके हृदय पर अकस्मात् पक्षाघात व अर्धांग का भयङ्कर आक्रमण हुआ और उत्तम उपचार करने पर भी २० की रात को हस्पताल मे उनका शोक जनक देहावसान होगया। हमे भी दिवंगत स्वामी जी के स्फूर्तिदायक आध्यात्मिक प्रवचन सुनने का कई बार सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वे आर्य परिव्राजक मण्डल के प्रधान भी थे और बिजनौर जिले के दारानगर गंज मे अपने आश्रम के द्वारा संस्कृत विद्या के प्रचार में व गत २० वर्षों से तत्पर थे। ऐसे सुयोग्य आर्य सन्यासी के देहावसान से आर्य जगत् को जो क्षति पहुँची है उसकी पूर्ति बड़ी कठिन है। भगवान् से दिवंगत पवित्र आत्मा की सद्गति के साथ हम यह प्रार्थना करते हैं कि वे आर्यों को ऐसे मान्य महानुभावों के चरणचिन्हों पर चलने का सामर्थ्य प्रदान करे।

कुछ अन्य प्रतिष्ठित आर्यों का वियोग

श्री स्वामी केवलानन्द जी महाराज के अतिरिक्त गत २, ३ मासों में आर्यजगत् को अन्य भी अनेक सुयोग्य और प्रतिष्ठित आर्यों का वियोग सहना पड़ा है जिनमें मालावार में सार्वदेशिक सभा के उत्साही प्रचारक, सच्चे ईश्वरभक्त हमारे परममित्र श्री साधु शिवप्रसाद जी, बिहार प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के सुयोग्य उपप्रधान श्री महेशलाल जी आर्य और गुरुकुल हुसंगाबाद के भू० पू० आचार्य प० रामचन्द्र जी विद्यार्थी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। हम इन सब महानुभावों के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुये इन के शोकसन्तप्त परिवारों से समवेदना प्रकाशित करते हैं। भगवान उन्हें धैर्य और शान्ति दे॥

साहित्य समीक्षा

'दयानन्द सन्देश' का स्वराज्याङ्क—

प्रधान सम्पादक—आचार्य राजेन्द्रनाथजी शास्त्री, "दयानन्द सन्देश कार्यालय" ईदगाह सराय, नई देहली पृष्ठ लगभग १८०। इस अङ्क का मूल्य ४)

हमारे सहयोगी 'दयानन्द सन्देश' ने लगभग १८ पृष्ठों में स्वराज्य विशेषाङ्क निकाल कर जनता को उत्तम पाठ्य सामग्री दी है जिसके लिये सम्पादक मण्डल धन्यवाद का पात्र है। भारतीय लोकसङ्घ के प्रधान पूज्य स्वामी आत्मानन्द जी महाराज के 'भारतीय निर्वाचन प्रणाली और राष्ट्रपति कौन हो ?' श्री प्रेमप्रकाश जी शास्त्री का 'मनुस्मृति और राज्य व्यवस्था

श्री सत्यकाम जी सिद्धान्तशास्त्री की 'रामायण काल में राज्य व्यवस्था', प० वेदबन्धु जी एम ए का 'बेरलियों की वैदिक शासन पद्धति' इत्यादि प्राय सभी लेख पठनीय है। राष्ट्रीय कवि विकल जी की 'आजादी में वधशाला' आदि कविताए भी बडी ओजस्विनी हैं किन्तु इतना उत्तम, उपयुक्त और गम्भीर पाठ्य सामग्री के साथ श्री विश्वश्रवा जी का 'स्वराज्य का उपहार वा हिन्दू कोडबिल के अनुसार नई विवाह पद्धति, विषयक लेख हमे अत्यन्त अरुचिकर और हीनकोटि का प्रतीत हुआ। हिन्दू कोडबिल के अनेक प्रावधान बडे विवादास्पद हैं उन पर यदि गम्भीरता से शास्त्र और समाजहित की दृष्टि से विचार किया जाता तो उपयोगी होता किन्तु मन घडन्त श्लोक और मन्त्र घडकर जिस से विलक्षण विषय मे नीति मर्यादा, अनभिज्ञता सूचित होती है भद्दा उपहास करना विद्वानो के लिये गौरव वर्धक व शोभाजनक नहीं। सम्पादकों को भी इस विषय मे अधिक गम्भीरता दिखानी चाहिये थी। तथापि सम्पूर्णतया विद्वत्तापूर्ण, परिश्रम से संकलित उत्तम लेखों के संग्रह के कारण हम इस स्वराज्याङ्क का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

भारतीयं धर्मशास्त्रम्—लेखक—श्री प० चूडामणि जी शास्त्री शाण्डिल्य, प्रकाशक—प० केदारनाथ जी शर्मा सारस्वत मन्त्री भारतीय सस्कृति सम्मेलन काशी पृष्ठ १६० मूल्य १॥)

मुलतान के सनातन धर्म सस्कृत कालेज के कार्य निवृत्त आचार्य श्री प० चूडामणिजी शास्त्री ने देश की वर्तमान परिस्थिति को ध्यान मे रखते हुए उदार भावना से इस पुस्तक को सस्कृत श्लोकों में बनाया था जिसे भाषा अनुवादसहित प्रकाशित किया गया है। श्रीयुत मान्य शास्त्रीजी ने इस पुस्तक मे धर्म, उपधर्म, वर्णाश्रम व्यवस्था भक्ष्याभक्ष्य, स्पृश्यास्पृश्य, स्त्रियों और शूद्रों का वैवाहिक र, अनार्यो की शुद्धि, राष्ट्र और उसकी रक्षा, भारतीय पर्व इत्यादि विषयों पर बडी उदार दृष्टि से सुन्दर प्रकाश डाला है। पुस्तक सभी विद्वानो और समाज प्रेमियो के लिये उपादेय है। विस्तृत आलोचना अगले अङ्क मे की जायगी।

"अन्तर्जातीय विवाह पत्रिका" कैसर गंज अजमेर

सम्पादक आचार्य भद्र सेन जी सचालक जातिभेद निवारक आर्य परिवार सङ्घ अजमेर वार्षिक शुल्क सघ के सदस्यो से ८ आ०, सहायको से १२ आ०, अन्यो से १)

यह जातिभेद निवारक आर्य परिवार सघ अजमेर की ओर से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका का प्रथम अङ्क है जिस मे प० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज श्री धर्मदेव विद्या वाचस्पति प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार इत्यादि महानुभावोके 'जातिभेद निवारक आ० प० सङ्घ का सक्षिप्त परिचय, जातिभेद प्रथा की अशास्त्रीयता, सवर्ण विवाह क्या है? इत्यादि विषयक उत्तम लेख और डा० सूर्य देव जी एम० ए० डी० लिट् की 'जातिभेद का भ्रामक भूत' और प्रकाश चन्द्र जी कविरत्न की 'हम यही चाहते आज शीर्षक ओजस्विनी कविताओं के अतिरिक्त विवाहार्थी युवक युवतियो का परिचय दिया गया है जिस से अन्तर्जातीय विवाह के लिये उद्यत नरनारियो को विशेष लाभ हो सकता है। पुत्र पुत्रियों के विवाह सम्बन्ध निश्चित करने मे जो माता पिता आदि को कठिनाई होती है उस के निराकरण मे भी इस से अवश्य सहायता मिलेगी। इस पत्रिका के ग्राहक बन कर सबको लाभ उठाना चाहिये।

—:X:()X:—

उदारतम आचार्य महर्षि दयानन्द

(लेखक—श्री प० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली)

कलियुग मे श्री शङ्कराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य (स्वामी आनन्दतीर्थ), वल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य, सायणाचार्य आदि अनेक सुप्रसिद्ध आचार्य हुए है किन्तु मुझे ऐसे प्रतीत होता है कि इन सब मे से वैदिक धर्म के पूर्ण मर्मज्ञ और सबसे अधिक उदार आचार्य महर्षि दयानन्द ही थे। इस लेख मे मैं वेदाधिकार, शूद्रों और स्त्रियो की स्थिति इत्यादि की दृष्टि से तुलनात्मक अनुशीलन का परिणाम निष्पक्षपात विद्वानो के सन्मुख रखना चाहता हूँ जिससे उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है।

वेदाध्ययन का अधिकार

(श्री शंकराचार्य का मत)

श्री शङ्कराचार्य जी इस युग के दार्शनिक विद्वानो मे बड़ा उच्च स्थान रखते है। उनके अनुयायी तो उन्हे जगत् का दार्शनिकशिरोमणि तक मानते है। किन्तु यह देख कर दुख होता है कि उन्होने वेदो की ईश्वरीयता 'शास्त्रयोनित्वात्', 'अतएव च नित्यत्वम्' इत्यादि वेदान्त सूत्रो के भाष्य मे प्रतिपादित करते हुए भी उन्होने मूल वेदो अथवा संहिताओ का बहुत कम आश्रय लिया है और श्रुति के नाम से ही उपनिषदो को ही सर्वत्र प्रधानता दी है। उनके ब्रह्म सूत्र भाष्य तथा अन्य ग्रन्थो मे मूल वेदो के कठिनाई से ८—१० उद्धरण पाये जाते है यद्यपि उपनिषद्वचनो की उनमे भरमार है। शूद्रों और स्त्रियो की स्थिति पर उनके विचार अत्यन्त अनुदारतापूर्ण थे जैसे कि निम्न उद्धरणों से जो अधिकतर उनके ब्रह्मसूत्र भाष्य से लिये गये है स्पष्ट प्रतीत होता है।

वेदान्त दर्शन के प्रथम अध्याय तृतीयपाद के भाष्य मे श्री शङ्कराचार्य निम्न पूर्वपक्ष उठा कर (जो वस्तुत बडा प्रबल और युक्तियुक्त है) उसका उत्तर देने का विचित्र प्रयास करते है—

तत्र शूद्रस्याप्यधिकार स्यादिति तत्र प्राप्तम् अर्थित्वसामर्थ्ययो सम्भवात्। 'तस्माच्छूद्रो यज्ञेऽनवक्लृप्त इतिवत् शूद्रो विद्यायामनवक्लृप्त इति निषेधाश्रवणात्। भवति च श्रौत लिङ्ग शूद्राधिकारस्योपोद्बलकम्। संवर्गविद्याया हि जानश्रुतिं शुश्रूषु शूद्रशब्देन परामृशति—'अथ-हारे त्वा शूद्र सह गोभिरस्तु' इति। विदुर प्रभृतयश्च शूद्रयोनिप्रभवा अपि विशिष्टविज्ञान-सम्पन्ना स्मर्यन्ते तस्मादधिक्रियते शूद्रो विद्या-स्वित्येव प्राप्ते ब्रूम ॥

अर्थात् शूद्र का भी वेदाध्ययन, ब्रह्मज्ञानादि मे अधिकार हो सकता है क्योकि इच्छा और सामर्थ्य उस मे सम्भव है। इसम श्रुति (छान्दोग्य उपनिषत्) के वचन का भी प्रमाण है जहा जानश्रुति को शूद्र के नाम से पुकारा गया है और फिर उसे ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया गया है। शूद्र योनि मे उत्पन्न भी विदुर आदि विशेष ज्ञान से सम्पन्न सुने जाते है इसलिये शूद्र का भी विद्याओं मे अधिकार है। इस पूर्व-पक्ष को उठाकर श्री शङ्कराचार्य जी उसका यो निराकरण करने का प्रयत्न करते है।

न शूद्रस्याधिकारो वेदाध्ययनाभावात्। अधीतवेदो हि विदितवेदार्थो वेदार्थेष्वधिक्रियते। न च शूद्रस्य वेदाध्ययनमस्ति उपनयनपूर्वकत्वाद् वेदाध्ययनस्य उपनयनस्य च वर्णत्रयविषयत्वात्। यस्त्वर्थित्वन तत् असति सामर्थ्ये अधिकार-कारणं भवति। शास्त्रीयेऽर्थे शास्त्रीयस्य सामर्थ्य-स्यापेक्षितत्वात्। शास्त्रीयस्य च सामर्थ्यस्याध्ययननिराकरणेन निराकृतत्वात्। (ब्रह्मसूत्र शाङ्करभाष्यम् निर्णय सागर प्रेस पृ १३६)

अर्थात् शूद्र का अधिकार नहीं है वेदाध्ययन के अभाव के कारण। जिसने वेदों का अध्ययन किया और वेदार्थ को जान लिया उसका ही वेदार्थ मे अधिकार होता है किन्तु शूद्र का वेदाध्ययन का अधिकार नहीं क्योंकि वेदाध्ययन उपनयनपूर्वक होता है और उपनयन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन वर्णों का ही होता है। इच्छा, सामर्थ्य के अभाव मे अधिकार का कारण नहीं हो सकती। शास्त्रीय विषय मे शास्त्रीय सामर्थ्य की ही आवश्यकता होती हैं और जब शूद्र के लिये अध्ययन का ही निषेध है तो शास्त्रीय सामर्थ्य का तो निषेध स्वयं हो जाता है।

श्री शङ्कराचार्य जी यहीं तक नहीं ठहरते। वे अपने इस अनुदार पक्ष की पुष्टि मे कुछ भयङ्कर अत्याचारपूर्ण, अमानुषिकतासूचक तथा कथित स्मृतिवचनों को उद्धृत करते हुए लिखते है

'इतश्च न शूद्रस्याधिकार। यदस्य स्मृते श्रवणाध्ययनार्थप्रतिषेधो भवति। वेदप्रतिषेधो वेदाध्ययनप्रतिषेधस्तदर्थज्ञानानुष्ठानयोश्च प्रतिषेध शूद्रस्य स्मर्यते। श्रवणप्रतिषेधस्तावत् 'अथास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रपरिपूरणमिति। 'पद्यु ह वा एतत् श्मशानं यत् शूद्र तस्मात् शूद्रसमीपे नाध्येतव्यम्' इति च। अतएवाध्ययनप्रतिषेध। यस्य हि समीपेऽपि नाध्येतव्य भवति स कथमश्रुतमधीयीत। भवति च वेदोच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद इति। अतएव चाथादर्थज्ञानानुष्ठानयो प्रतिषेधो भवति 'न शूद्राय मतिं दद्यात्' इति। द्विजातीनामध्ययनमिज्या दानम् इति च येषां पुन पूर्वकृतसंस्कारवशाद् विदुरधर्मव्याधप्रभृतीनां ज्ञानोत्पत्तिस्तेषां न शक्यते फलप्राप्ति प्रतिषेद्धुं ज्ञानस्यैकान्तिकफलत्वात्। 'श्रावयेच्चतुरो वर्णान्' इति चेतिहासपुराणाधिगमे चातुर्वर्ण्यस्याधिकारस्मरणात्। वेदपूर्वकस्तु नास्त्यधिकार शूद्राणामिति स्थितम्। (ब्रह्मसूत्रशाङ्कर भाष्यम् पृ० १३८)

अर्थात् इसलिये भी शूद्र को अधिकार नहीं क्योंकि स्मृति के द्वारा इन के लिये वेद के सुनने और पढने का निषेध है। सुनने का निषेध करते हुए स्मृति (गौतमधर्म सूत्र के नाम से कल्पित स्मृति) मे कहा है कि यदि शूद्र वेद के शब्द सुन ले तो उस के कान को सीसे और लाख से भर देना चाहिये। शूद्र चलता फिरता श्मशान है इसलिये उसके समीप अध्ययन नही करना चाहिये, इसी से अध्ययन का निषेध स्पष्ट है। जिस के समीप अध्ययन भी न करना चाहिए वह बिना सुने हुए कैसे अध्ययन कर सकता है? वेद के उच्चारण करने पर जिह्वाच्छेद (जीभ काट डालना) और शरीर छेद (शरीर के टुकडे २ कर डालने) का विधान है। इस लिये वेद के अर्थ

ज्ञान और उनके अनुसार आचरण का निषेध है। जिन विदुर धर्मव्याध आदि को पूर्वकृत सस्कार वश ज्ञान की उत्पत्ति हुई उन के फल की प्राप्ति को तो रोका नहीं जा सकता। 'श्रावयेच्चतुरो वर्णान्' इत्यादि महाभारत के वचन द्वारा इतिहास पुराण के अध्ययन मे चारों वर्णों का अधिकार है। शूद्रों का वेदपूर्वक अध्ययन तो नहीं है।

यदि श्री शङ्कराचार्य द्वारा अनुमोदित इन तथाकल्पित स्मृति वचनों पर आज कोई आचरण करने लगे तो निस्सन्देह वह मृत्युदण्ड वा फासी पाएगा क्योंकि वेदमन्त्रो को याद करने वाले अब हजारो और लाखो व्यक्ति महर्षि दयानन्द जैसे उदारतम आचार्य की कृपा से विद्यमान है जिनको वेदाध्ययन से रोकने का अब कोई साहस नहीं कर सकता उन की जीभ काटने वा शरीर के टुकडे २ करने का तो कहना ही क्या है।

श्रीशङ्कराचार्य के स्त्रियों के विषय मे अनुदार विचार

स्त्रियों के विषय मे भी श्री शङ्कराचार्य के बडे अनुदार विचार थे ऐसा उन के नाम से प्रचलित ग्रन्थो के अध्ययन से प्रतीत होता है। 'प्रश्नोत्तरी' नामक ग्रन्थ के निम्न प्रश्न तथा उत्तर इस विषय मे उल्लेखनीय हैं। वहा प्रश्न उठाया गया है 'विश्वासपात्र न किमस्ति ? अर्थात् कौन है जिस पर कभी विश्वास न करना चाहिये। इसका श्री शङ्कराचार्य जी उत्तर देते है "नारी" अर्थात् स्त्री है जिस पर विश्वास न करना चाहिये। आगे प्रश्न किया है ' द्वार किमेक नरकस्य' अर्थात् कौन है जो नरक का एक द्वार है ? उसका श्री शङ्कराचार्य जी उत्तर देते हैं कि "नारी" स्त्री है जो नरक का एक द्वार है। आगे प्रश्न उठाते है 'किं तद्विषं भाति सुधोपमम् यत्' अर्थात् वह कौन सा विष है जो अमृत के समान प्रतीत होता है उत्तर दिया है 'नारी' स्त्री ही ऐसा विष है। इस के पश्चात् प्रश्न आया 'विज्ञान्महाविज्ञतमोऽस्ति को वा' अर्थात् कौन सब से बडा ज्ञानी है इसका उत्तर श्री शङ्कराचार्य जी देते हैं—

"नार्या पिशाच्या न च वञ्चितो य ।"

अर्थात् जिसको स्त्री रूप पिशाची वा राक्षसी ने ठग नहीं लिया।

इन उत्तरों से श्री शङ्कराचार्य जी के स्त्रियों के सम्बन्ध मे अनुदार और वस्तुत 'शुद्धा पूता योषितो यज्ञिया इमा" इत्यादि वेद वचनों के विरुद्ध विचार ज्ञात होते है। स्त्रियों के वेदाधिकार के सम्बन्ध मे उन के ऐसे ही अनुदार विचार थे यह बृहदारण्यक उपनिषद् के भाष्य से ज्ञात होता है जहा 'अथ य इच्छेद् दुहिता मे पण्डिता जायेत' (बृहदा० ६।४।१७) इस के भाष्य मे पण्डिता का अर्थ करते हुए वे लिखते है कि 'दुहितु पाण्डित्यं गृहतन्त्रविषयमेव वेदेऽनधिकारात्।' अर्थात् इस उपनिषत् मे कन्याओं के पाडित्य का जो प्रतिपादन है वह गृह कार्य विषयक ही समझना चाहिये क्योकि वेद मे इन का अधिकार नहीं। इसी उपनिषद् मे ब्रह्मवादिनी गार्गी वाचक्नवी और मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी (४।५।१) का वर्णन आ चुका है जहा शङ्कराचार्य जी ने भी 'ब्रह्मवादिनी' का अर्थ 'ब्रह्म वदनशीला' अर्थात् वेद और ब्रह्मविषयक उपदेश करने वाली किया है तथा पाण्डित्य का अर्थ

भा 'बाल्य पाण्डित्य च निर्विद्य" (बृहदा० ३।५।१) के भाष्य मे 'आत्मज्ञान' किया है जिस पर आनन्दगिरि ने टीका म लिखा है कि 'आचार्य-पारचर्यापूर्वक वेदान्ताना तात्पर्यावधारण पाण्डित्यम्' (बृहदारण्यकशाङ्करभाष्यम् आनन्दाश्रम पूना पृ० ४६४) अर्थात् आचार्य की सेवा पूर्वक वेदान्तो के तात्पर्य को निश्चय करना पाण्डित्य कहाता है । किन्तु अनुदारतावश स्त्रियों का वेदाध्ययन म अनधिकार बता दिया है जो ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम् ।' (अथर्व ११।५।१८) इत्यादि वेदक आदेश के विरुद्ध है। ब्रह्मचर्य का अर्थ यादच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति) इस कठोपनिषत् के वचन की व्याख्या म श्री शङ्कराचार्य जी ने 'गुरुकुलवास-लक्षणम् अन्यद् वा ब्रह्मप्राप्त्यर्थम्' यह किया है अर्थात् गुरुकुल म वास न या ब्रह्म की प्राप्ति के लिय किया हुआ अन्य काय । ऐसी अवस्था म उन का 'स्त्रीणा वेदऽनधिकारात्' न केवल अनुदारता पूर्ण अपितु वेदविरुद्ध है ।

अब म अन्य सुप्रसिद्ध आचार्यों का इस विषय म मत सक्षेप से दिखाना चाहता हूँ ।

श्रीरामानुजाचार्य और शूद्र

श्री रामानुजाचार्य उदार विचारों के आचार्य माने जाते है किन्तु उन के विचार भी शूद्रो और स्त्रियो के वेदाध्ययनादि विषयो मे उदारतापूर्ण नही प्रतीत होते । वेदान्त १।३।३८ के भाष्य म श्री रामानुजाचार्य ने लिखा है (शूद्रस्य वेदश्रवण तदध्ययनतदर्थानुष्ठानानि प्रतिषिध्यन्ते । यद्यु ह वा एतत् श्मशान यच्छूद्र तस्मान् शूद्रसमीपे नाध्येतव्यम् । (वसिष्ठ स्मृ० १८।८) तस्मात् शूद्रो बहुपशुरयज्ञिय इति बहुपशु पशुसदृश इत्यर्थ । अनुपशृण्वतोऽध्ययनतदर्थज्ञानतदर्थानुष्ठानानि न सम्भवन्ति । अतस्तान्यपि प्रतिषिद्धान्येव । स्मर्यते च श्रवणादिनिषेध । अथ हास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्या श्रोत्रप्रपूरणमुदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद इति । न चास्योपदिशेद् धर्मं न चास्य व्रतमादिशेत् । (मनु ४।८०) इति च । अत शूद्रस्यानधिकार इति सिद्धम् ॥ (श्री भाष्ये पृ० ३२८)

अर्थात् शूद्र के लिये वेद का श्रवण, अध्ययन और उनका अनुष्ठान व आचरण प्रतिषिद्ध है। शूद्र चलता फिरता श्मशान है अत उस के समीप अध्ययन न करना चाहिये वह पशु समान है । जब वेद का श्रवण ही उस के लिये निषिद्ध है तो अध्ययन, उनके अर्थज्ञान और वैदिक आचरण तो सम्भव ही नहीं। शूद्र वेद सुनले तो उनके कानों को सीसे और लाख से भर देना चाहिये। वेद मन्त्र का वह उच्चारण करे तो उसकी जीभ काट देनी चाहिये और वेद मन्त्र को याद करले तो उसके शरीर के टुकडे २ कर डालने चाहियें। इस लिये शूद्र का वेदाध्ययन और ब्रह्मविद्या में सर्वथा अनधिकार है।

श्री मध्वाचार्य और शूद्र तथा स्त्रियां

द्वैतमत प्रचारक श्री मध्वाचार्य (स्वामी आनन्दतीर्थ) ने स्त्रियों के वेदाधिकार के विषय में अन्य आचार्यों की अपेक्षा कुछ उदारता दिखाई है किन्तु शूद्रों के वेदाध्ययन तथा ब्रह्मविद्या मे अधिकार का उन्होंने ब्रह्मसूत्रभाष्यादि मे स्पष्ट प्रतिषेध किया है। उन्होंने भी कुछ कल्पित वेदविरुद्ध स्मृतिवचनों को उद्धृत करते हुए जिनका पहले उल्लेख किया जा चुका है

लिखा है —

"श्रवणे त्रपुजतुभ्या श्रोत्रपरिपूरणम् अध्ययने जिह्वाच्छेद । अर्थावधारणे हृदयविदारणम् इति-प्रतिषेधात्। 'नाग्निर्न यज्ञ शूद्रस्य, तथैवाध्ययन कुत । केवलैव तु शुश्रूषा त्रिवर्णाना विधीयते।' इति स्मृतेश्च। विदुरादीना तूत्पन्नज्ञानत्वान्न कश्चिद् विशेष ॥ (ब्रह्मसूत्राणुभाष्ये पृ० ६७)

यहा स्मृतिवचनों का पाठ श्री शङ्कराचार्य तथा श्री रामानुजाचार्य द्वारा उद्धृत पाठ से कुछ भिन्न है किन्तु अर्थ वही है कि यदि शूद्र वेद के शब्द को सुनले तो उसके कान को सीसे और लाख से भर देना चाहिये। वेद का अध्ययन करने पर उसकी जीभ काट डालनी चाहिये और अर्थ का ज्ञान व निश्चय करने पर उसके हृदय के टुकडे कर देने चाहियें। शूद्र को अग्निहोत्र, यज्ञ, अध्ययनादि का अधिकार नहीं, उसका कार्य केवल तीन वर्णों की सेवा है ऐसा स्मृति म कहा है। विदुर आदि को जन्म से ही ज्ञान उत्पन्न हो गया था अत उसमे कुछ विशेषता नही।

श्री मध्वाचार्य ने अपने ब्रह्मसूत्र अणुभाष्य पृ० ८१ मे 'व्योम सहिता' नामक ग्रन्थ के निम्न वचन को उद्धृत करते हुए शूद्रकुलोत्पन्नों का वेद के अतिरिक्त अन्य शास्त्रों में अधिकार माना है। वे लिखते हैं — 'अन्त्यजा अपि ये भक्ता, नामज्ञानाधिकारिण । स्त्री शूद्रब्रह्मबन्धूना, तन्त्रज्ञानेऽधिकारिता। आहुरप्युत्तमस्त्रीणामधिकार तु वैदिके। यथोर्वशी यमी चैव शच्याद्याश्च तथापरा ॥ (ब्रह्मसूत्र अणुभाष्य पृ०८७)

अर्थात् जो अन्त्यज होते हुए भी भक्त है उन्हे नाम के ज्ञान का अधिकार है। स्त्री, शूद्र और पतित ब्राह्मण इनको शास्त्रों के ज्ञान का अधिकार है। उत्तम स्त्रियों का तो वेदाध्ययन मे भी अधिकार है जैसे उर्वशी, यमी, शची तथा अन्य स्त्रिया प्राचीन काल मे वेदों का अध्ययन करने वाली हुई हैं। "वेदा अप्युत्तमस्त्रीभि कृष्णाद्याभिरिहाखिला ॥" 'उत्तमस्त्रीणा तु न शूद्रवत्।"

इत्यादि शब्दों द्वारा भी ब्रह्मसूत्रभाष्यादि मे श्री मध्वाचार्य ने उत्तम स्त्रियों का द्रौपदी आदि की तरह सब वेद पढने का अधिकार माना है।

श्री वल्लभाचार्य और शूद्र

श्री वल्लभाचार्य की गणना भी मध्यकाल के प्रसिद्ध वैष्णव आचार्यों मे की जाती है। उन्होंने भी अपने ब्रह्मसूत्र भाष्य मे शूद्रों के वेदाधिकार का निम्न लिखित स्पष्ट शब्दों मे निषेध किया है। 'दूरे ह्यधिकारचिन्ता वेदस्य श्रवणमध्ययनमर्थज्ञान त्रयमपि तस्य (शूद्रस्य) प्रतिषिद्धम्। तत्सन्निधावन्यस्य च। अथास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्या श्रोत्रपरिपूरणमिति । पद्यु ह वा एतत् श्मशानं यच्छूद्रस्तस्माच्छूद्रसमीपे नाध्येतव्यमिति। उदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद (गौतम स्मृ० १२।४) स्मृतियुक्त्याऽपि वेदार्थे न शूद्राधिकार इत्याह। स्मृतेश्च 'वेदाक्षरविचारेण शूद्र पतति तत्क्षणात्। (पाराशर स्मृ० १।७३) इति। स्मार्तपौराणिकज्ञानादौ तु कारणविशेषेण शूद्रयोनौ गताना महतामधिकार । तत्रापि न कर्मजातिशूद्राणाम्। तस्मान्नास्ति वैदिके क्वचिदपि शूद्राधिकार इति स्थितम्। (अणुभाष्ये पृ० ६५ आर्य भानु प्रेस पूना)

अर्थात् शूद्र के लिये वेद के सुनने, पढ़ने और उसके अर्थज्ञान तीनों का निषेध है अत उसके वेदाधिकार की चिन्ता तो बहुत दूर का विषय

है। शूद्र यदि वेद के मन्त्रो को सुन ले तो उसके कानो को सीसे और लाख से भर देना चाहिये, उच्चारण करे तो उसकी जीभ काट लेनी चाहिये, मन्त्र याद कर ले तो उसके शरीर के टुकडे २ कर देने चाहिये। वेद के एक अक्षर के विचार से भी शूद्र उसी क्षण मे पतित हो जाता है ऐसा परा शर स्मृति आदि मे कहा है स्मृति और पुराणो के ज्ञान मे भी अधिकार किसी विशेष कारण शूद्र कुल मे उत्पन्न महापुरुषों का ही है कर्म या जन्म से शूद्रो का नहीं इसलिये वैदिक ज्ञान मे तो कहीं भी शूद्रों का अधिकार नहीं यह सिद्ध होता है।

आश्चर्य है कि इन मध्यकालीन बडे बडे आचार्यों ने शूद्रकुलोत्पन्नों पर अत्याचारसमर्थक वाक्यों को सचमुच प्रामाणिक आर्ष वचन मान कर इतनी अनुदारता का परिचय दिया। इस प्रकार के स्मृतिवचन 'यथेमा वाच कल्याणी-मावदानि जनेभ्य । ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय चारणाय च स्वाय।' (यजु० २६।२) समानो मन्त्र समिति समानी' (ऋ० १०।१६०।३) इत्यादि वैदिक आदेशो के विरुद्ध होने के कारण भी ये वचन सर्वथा अमान्य हैं।

श्री निम्बार्काचार्य और शूद्र

श्री निम्बार्काचार्य भी वैष्णव सम्प्रदाय के एक मध्यकालीन आचार्य हुये हैं जिनका वेदान्त सूत्रों पर भाष्य उपलब्ध होता है। उसमे १।३।३८ के भाष्य मे वेदान्तपारिजातसौरभ मे उन्होंने लिखा है —

शूद्रो नाधिक्रियते। शूद्रसमीपे नाध्येतव्य-मित्यादिना तस्य वेदश्रवणादिप्रतिषेधात । न चास्योपदिशेद् धर्ममित्यादिस्मृतेश्च ॥ (वेदान्त पारिजातकौस्तुभे पृ० ११०) अर्थात् शूद्र का वेदाध्ययनादि में अधिकार नहीं। शूद्र के समीप अध्ययन नहीं करना चाहिये इस विधान से उसके वेद श्रवणादि का निषेध है। स्मृति मे भी कहा है कि शूद्र को धर्म का उपदेश नहीं देना चाहिये। इत्यादि

श्री निवासाचार्य ने वेदान्त कौस्तुभ पृ०११० मे इस पर टिप्पणी करते हुए पूर्वोद्धृत यद्यु ह्वा एतत् श्मशान यत् शूद्रस्तस्मात् शूद्रसमीपे नाध्येतव्यम्' इत्यादि वचनो को उद्धृत करके लिखा है कि 'यस्य समीपेऽध्ययनमपि न कर्तव्यम्। तस्य वेदश्रवण तदध्ययन तदर्थज्ञान तदुक्तधर्मानुष्ठान च सुतरा निषिद्ध मित्यर्थ ॥' (वेदान्त कौस्तुभे पृ० ११०)

अर्थात् जिसके समीप अध्ययन भी नहीं करना चाहिये ऐसे शूद्र का वेद श्रवण, उसका अध्ययन, उसका अर्थ ज्ञान और उसके धर्म का अनुष्ठान तो सर्वथा निषिद्ध ही है।

श्रीयति पण्डित भगवत्पादाचार्य और शूद्र

दक्षिण मे वीर शैवमत का बहुत प्रचार है उस सम्प्रदाय के श्रीयतिपण्डित भगवत्पादाचार्य ने वेदान्त सूत्रों का श्रीकर भाष्य किया है जो मैसूर मे छपा है उसमे श्रीपति पण्डित लिखते है —'इतश्च न शूद्रस्याधिकार। कस्मात् स्मृतेश्च। स्मृतितो वेदश्रवणस्य तदध्ययनस्य तत्प्रयोजनयो-रर्थज्ञानानुष्ठानरूपयोरर्थयो प्रतिषेधान्निषेधादि-त्यर्थ । अथ वास्य वेदमुपशृण्वत त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रपरिपूरणम् उदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेद इति श्रुतौ। शूद्रस्य वेदाध्ययनादौ शिक्षा श्रूयते। शूद्रस्य वेदश्रवणे, तच्छ्रोत्रे

परमादरात्। त्रपु प्रपूरयेद् राजा, तदुच्चारणमात्रत। तज्जिह्वा छेदयेत् तूर्णं तद्धारणवशात्तदा। शरीर भेदं कुर्याद्, विधिरेषोऽयमुच्यते। इति स्मृतिरपि श्रूयते॥ (वेदान्तसूत्र श्रीकर भाष्ये पृ० १५६)

अर्थात् शूद्र का अधिकार नहीं। स्मृतियों मे उसके वेद के श्रवण, अध्ययन और अर्थज्ञान का निषेध है। यह कह कर पूर्वोद्धृत 'अथवाऽस्य शूद्रस्य वेदमुपशृण्वत धारणे शरीरभेद' इस स्मृति-वचन को श्रुति के नाम से उद्धृत करने की धृष्टता और धूर्तता की गई है। इसके पश्चात् न जाने कहा के श्लोक उद्धृत करके या मनगढन्त बनाकर कहा गया है कि यदि शूद्र वेद का श्रवण कर ले तो राजा को चाहिये कि बडे आदर से (परमादरात्) उसके कानों मे सीसा भर दे। वेद मन्त्रों का कोई शूद्र उच्चारण करे तो उसकी जीभ को झट से (तूर्णम्) काट दे। वेद मन्त्र को कोई धारण व याद करे तो उसका शरीर काट डाले यह विधि है ऐसा स्मृति मे कहा है।

श्रीसायणाचार्य और शूद्र तथा स्त्रियां

श्रीसायणाचार्य १४ वीं शताब्दी के सुप्रसिद्ध वेद भाष्यकार हुए है। उन्होने अपने ऋग्वेद भाष्य की भूमिका मे लिखा है कि —'धर्मब्रह्मज्ञानार्थी वेदेऽधिकारी। स च त्रैवर्णिक पुरुष। स्त्रीशूद्रयोस्तु सत्यामपि ज्ञानापेक्षायाम् उपनयनाभावेन अध्ययनराहित्याद् वेदे अधिकार प्रतिषिद्ध। धर्मब्रह्मज्ञानं तु पुराणादिमुखेन उत्पद्यते। तस्मात् त्रैवर्णिकपुरुषाणा वेदमुखेन अर्थज्ञाने अधिकार॥ (सायणाचार्यकृता ऋग्वेदभाष्योपक्रमणिका वेदभाष्य भूमिकासंग्रहे पृ० ४६) इसका भाव भी वह ही है जो उपरोक्त आचार्यों का है।

महर्षि दयानन्द और वेदाधिकार

इस प्रकार जहा मध्यकाल के श्री शङ्कराचार्य, श्री रामानुजाचार्य श्री मध्वाचार्य, श्रीवल्लभाचार्य, श्री निम्बार्काचार्य, श्रीसायणाचार्य, श्री निवासाचार्य, श्री यतिपण्डित भगवत्पादाचार्य आदि सब प्रसिद्ध आचार्य स्त्रियो और शूद्र-कुलोत्पन्नों के लिये वेदाधिकार का निषेध करते हुए उनके प्रति अनुदार भावना को प्रकाशित करते है वहा वैदिक धर्मोद्धारक-शिरोमणि महर्षि दयानन्द जी ही है जिन्होंने इन विषयों मे निम्न शब्दो मे अपने हृदय की विशालता का परिचय दिया है —

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका मे महर्षि लिखते है—अथाधिकारानधिकारविषय सक्षेपत — वेदादिशास्त्रपठने सर्वेषामधिकारोऽस्त्याहोस्विन्नेति। सर्वेषामस्ति वेदानामीश्वरोक्तत्वात् सर्वमनुष्योपकारार्थत्वात् सत्यविद्याप्रकाशकत्वाच्च। यद यद्धि खलु परमेश्वररचित वस्त्वस्ति तत् तत्सर्वं सर्वार्थमस्तीति विजानीम। यथेमा वाच कल्याणी मावदानि जनेभ्य। ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय चारणाय च स्वाय॥ यजु० २६।२

अस्याभिप्राय —परमेश्वर सर्वमनुष्यैर्वेदा पठनीया पाठ्या इत्याज्ञा ददाति तद्— (यथा) येन प्रकारेण (इमाम्) प्रत्यक्षभूताम् ऋग्वेदादिवेदचतुष्टयीम् (कल्याणीम्) कल्याणसाधिकाम् (वाचम्) वाणीम् (जनेभ्य) सर्वेभ्यो मनुष्येभ्योऽर्थात् सकलजीवोपकाराय (आवदानि) आ समन्तात् उपदिशानि तथैव सर्वैर्विद्वद्भि सर्वमनुष्येभ्यो वेदचतुष्टयी वागुपदेष्टव्येति। अत्र कश्चिदेव ब्रूयात् जनेभ्यो

द्विजेभ्य इत्यध्याहार्यं वेदाध्ययनाध्यापने तेषामेवा धिकारत्वात् नैव शक्यम्। उत्तरमन्त्रभागार्थ-विरोधात् तद्यथा । कस्य कस्य वेदाध्ययन श्रवणेऽधिकारोऽस्तीति आकाङ्क्षायामिदमुच्यते (ब्रह्मराजन्याभ्याम्) ब्राह्मणक्षत्रियाभ्याम् (अर्याय) वैश्याय (शूद्राय) (चारणाय) अति शूद्रायान्त्यजाय सैषा वेदचतुष्टया श्राव्यति। यथाहमीश्वर पक्षपात विहाय सर्वोपकारकर णेन सह वर्तमान सन् देवाना विदुषा प्रिय स्या तथैव भवद्भि सर्वविद्वद्भिरपि सर्वोपकार सर्व प्रियाचरण मत्वा सर्वेभ्यो वेदवाणी श्राव्येति।

यथा मया वदविद्या सर्वार्था प्रकाशिता तथैव युष्माभिरपि सवार्थोपकर्तव्या नात्र वैषम्य कर्तव्यमिति। कुत यथा मम सवप्रियार्था पक्षपातरहिता च प्रवृत्तिरस्ति तथैव युष्माभि राचरणे कृते मम प्रसन्नता भवति नान्यथेति ।'

(ऋग्वदादिभाष्यभूमिका शताब्दी सस्करणम् पृ० ६४६-६४७)

अर्थात् वेदादिशास्त्रों के पढने म सबका अधिकार है वा नहीं ? उत्तर—सबका ह क्या कि वेद ईश्वरोक्त होन क कारण सब मनुष्यो के लिये उपकारक और स य विद्या क प्रकाशक है। परमेश्वर द्वारा निर्मित प्रत्येक वस्तु सबके लिये है ऐसा हम जानते है। इसम निम्न लिखित प्रमाण है—

'यथेमा वाच कल्याणीमावदानि जनेभ्य

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि वेदो के पढने पढाने का सब मनुष्यो को अधिकार है और विद्वानो को उनके पढान का। इसलिये ईश्वर आज्ञा देता है कि हे मनुष्यो । जिस प्रकार मैं तुमको चारों वेदों का उपदेश करता हूँ उसी प्रकार से तुम भी उनको पढ के सब मनुष्यों को पढाया और सुनाया करो क्यों कि यह चारो वेदरूपवाणी सब की कल्याण करने वाली है। तथा (आवदानि जनेभ्य) जैसे सब मनुष्यो के लिये मैं वेदो का उपदेश करता हूँ वैसे ही तुम भी किया करो (प्रश्न) 'जनेभ्य ' इस पदसे द्विजों ही का ग्रहण करना चाहिये (उत्तर) यह बात ठीक नहीं क्योंकि जो ईश्वर का द्विजों ही के ग्रहण का होता तो मनुष्य मात्र को उनके पढ़ने का अधिकार कभी न देता जैसा कि इस मन्त्र में प्रत्यक्ष विधान है। (ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय) अर्थात् वेदाधिकार जैसा ब्राह्मण वर्ण के लिये वेसा ही क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, पुत्र, भृत्य और अतिशूद्र के लिये भी बराबर है क्यो कि वेद ईश्वर प्रकाशित है। जो विद्या का पुस्तक होता है वह सबका हितकारक है और ईश्वर रचित पदार्थो के दायभागी सब मनुष्य अवश्य होते है। इस लिये उसका जानना सब मनुष्यो को उचित है क्यों कि वह माल सबके पिता का सब पुत्रो के लिये है किसी वर्ण विशेष के लिये नहीं। जसे यह वेदो का प्रचार रूप मेरा काम ससार के बीच मे यथावत् प्रचरित होता है इसी प्रकार की इच्छा तुम लोग भी करो कि जिस से उक्त विद्या आगे को भी सब मनुष्यो मे प्रकाशित होती रहे। (उपमादो नमतु) जैसे मुझ मे अनन्त विद्या से सब सुख है वैसे जो कोई विद्या का ग्रहण और प्रचार करेगा उसको भी मोक्ष तथा ससार का सुख प्राप्त होगा । यही इस मन्त्र का ठीक अर्थ है क्यो कि इस से अगले मन्त्र मे भी (बृहस्पते अति यदर्य) परमेश्वर ही का ग्रहण है। इस से सब के लिये वेदाधिकार है ॥

इसी प्रकार का लेख सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास मे है । वहाँ यह प्रश्न उठा कर कि 'क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढे ? जो वे पढे गे तो फिर हम क्या क गे ? और इन के पढने मे प्रमाण भी नहीं है जैसा यह निषेध है —

स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुते —
स्त्री और शूद्र न पढे यह श्रुति है ।
निम्न महत्त्वपूर्ण उत्तर दिया है —

(उत्तर) सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को पढने का अधिकार है । तुम कुआ मे पडो और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुई है किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं । और सब मनुष्यो के वेदादि शास्त्र पढने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के २६ वे अध्याय मे दूसरा मन्त्र —

'यथेमा वाच कल्याणी मावदानि जनेभ्य '

इत्यादि (व्याख्या ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के उद्धरण म आचुकी ह अत उसे पुन सत्यार्थ-प्रकाश से देने का आवश्यकता नहीं , क्या परमेश्वर शूद्रो का भला करना नहीं चाहता ? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदो के पढने सुनने का शूद्रो के लिये निषेध और द्विजो के लिये विधि करे ? जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये है वैसे ही वेद भी सब के लिये प्रकाशित किये हैं ।

और जो स्त्रियो के लिये पढने का निषेध करते हो वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है । देखो वेद म कन्याओ के पढने का प्रमाण —

ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम् ॥
अथर्व ११ । ३ । १८

जैसे लडके ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त हो के युवती, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियो के साथ विवाह करते है वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य सेवन से वेदादिशास्त्रों को पढ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती हो के पूर्ण युवावस्था मे अपने सदृश प्रिय विद्वान् (युवानम्) पूर्ण युवावस्थायुक्त पुरुष को (विन्दते) प्राप्त होवे इसलिये स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिये । इत्यादि (सत्यार्थ प्रकाश ३य समुल्लास)

महर्षि स्त्रियों के प्रति बडा उच्च भाव रखते थे क्योंकि वे शुद्धा पूता योषितो यज्ञिया इमा ' इत्यादि वैदिक भावनाओं के मानने वाले थे जहा स्त्रियों को शुद्ध, पवित्र और यज्ञाधिकारिणी बताया गया है । मनुस्मृति के "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता । यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफला क्रिया ॥ (मनु० ३-५६)

इत्यादि श्लोको को सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास म आदर पूर्वक उद्धृत करके महर्षि ने लिखा है कि —

' जिस घर मे स्त्रियो का सत्कार होता है उसमे विद्यायुक्त पुरुष हो के 'देव' संज्ञा धरा के आनन्द से क्रीडा करते हैं और जिस घर मे स्त्रियों का सत्कार नहीं होता वहा सब क्रिया निष्फल हो जाती हैं ।" इत्यादि (सत्यार्थ प्रकाश ३य समुल्लास पृ० ११२)

सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में

प ्चा ातन पूना का ्यारया करत हुए महर्षि न लिखा कि ्त्र के लिय पति और पति क लिये द ी पूजनय ह । (र ्यार्थ प्रकाश ११ वा र मुल्लास पृ० २६७ निर्वाण अर्धशताब्दी र स्करण) इसमे ्नातात्रया क प्रति आद र सूचक भाव सस्कार ि ि आदि म है।

महर्षि की उदारता का पाश्चात्य विद्वानो पर प्रभाव —

जगाद्विख्यात विचारक श्री रोमा रौला जसे पाश्च त्य विद्वान महर्षि दयान द का उदार म ्तव्या से अत्यन्त प्रभावित हुए हैं। श्री रौमा रौला ने यहा तक लिखा कि —

'It was in truth an epoch making date for India when a Brahmin not only acknowledged that all human beings have the right to know the Vedas whose study had been previously prohibited by orthodox Brahmins but insisted that their study and propoganda was the duty of every Arya (Life of Rama Krishna by Roman Rolland P 159)

अर्थात व स्तुत भारत म यह एक नवयुग निर्माता दिन था जब एक ब्राह्मण ने (स्वामी दयानन्द सरस्वत न) न केवल यह स्वीकार किया कि सब मनुष्यो को वेदा के अध्ययन का (जिसे कट्टर प न्थी ब्राह्मणा न निषिद्ध कर रखा था) अधिकार ह प्रत्युत साथ ही इस पर उसने बल दिया कि उनका पढना पढाना और सुनना सुनाना प्रत्येक आर्य का मुख्य धर्म है।

अस्पृश्यता निवा णार्थ महर्षि दयानन्द के कार्य का उल्लेख करते हुए श्री रौमा रौला ने लिखा कि —

Dayanand would not tolerate the abominable injustice of the untouchables and nobody has been a more ardent champion of their outraged rights They were admitted to the Arya Samaj on a basis of equality for the Aryas are not a caste

(Life of Rama Krishna P 163)

अर्थात् स्वामी दयानन्द ने अस्पृश्यों की निन्दनीय अन्याय पूर्ण सत्ता को कभी सहन नहीं किया और उनसे बढकर दलित वर्ग के अपहृत अधिकारों का उत्साही समर्थक और कोई नहा हुआ। अस्पृश्य समझे जाने वाल लोगा को आर्यसमाज म समान रूप म प्रविष्ट कर लिया गया क्योंकि आर्य कोई जाति नहीं।

महिलाओ की स्थिति के सम्बन्ध म महर्षि दयानन्द के उदार विचारो की प्रशसा करते हुए श्री रौमा रौला ने लिखा कि —

Dayanand was no less generous and no less bold in his crusade to improve the condition of women a deplorable one in India He revolted against the abuses from which they suffered recalling that in the heroic age they occupied in the home and in society a position at least equal to men

(Life of Rama Krishna P 163)

अर्थात् भारत मे शोचनीय स्त्रियों की स्थिति को सुधारन के प्रयत्न में भी दयानन्द कम

उदार और साहसी न था। जिन सामाजिक कुरीतियों का वे शिकार हो रही थीं उनके विरुद्ध उसने क्रान्ति की और लोगों को स्मरण कराया कि प्राचीन वैदिक युग में उनकी स्थिति घर में तथा समाज में कम से कम पुरुषों के समान थी। इत्यादि

ऐसे ही सुप्रसिद्ध जर्मन विद्वान् History of the Ancient Sanskrit Literature आदि ग्रन्थों के लेखक डा० विन्टर्नीज ने ऋषि दयानन्द के जातिभेदनिवारणार्थ किये प्रयत्न की प्रशंसा करते हुए लिखा —

"If the founder of the Arya Samaj had done nothing else, but roused his followers to a vigorous fight against the folly and dangers of the caste system, he would deserve to be honoured as one of the great leaders of men in modern India"

(Dayanand commemoration volume P 165)

अर्थात् यदि आर्यसमाज के प्रवर्तक ने अपने अनुयायियों को जातिभेद की मूर्खता और हानियों के विरुद्ध उग्र युद्ध करने के लिये प्रोत्साहित करने के अतिरिक्त और कुछ काम न किया होता तो भी उनको वर्तमान भारत के महान् नेताओं में से नेता के रूप में शामिल करना उचित होता।

इसी प्रकार की श्रद्धाञ्जलि डा० जेम्स कजिन्स, नार्वे के डा० स्टेनकोनो Ph D तथा अन्य अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने महर्षि के उदार विचारों के प्रति समर्पित की है।

महर्षि की उदारता का भारतीय विद्वानों पर प्रभावः—

भारत के अनेक निष्पक्षपात विद्वानों पर भी महर्षि की उदारता का बड़ा प्रभाव हुआ है और उन्होंने 'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।" 'ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्"। "समानो मन्त्रः समितिः समानी" इत्यादि वेदमन्त्रों को उद्धृत करते हुए स्त्रियों तथा शूद्रों का वेदाधिकार प्रतिपादित किया है। ऐसे विद्वानों में बंगाल के सुप्रसिद्ध विद्वान् आचार्य सत्यव्रत जी सामश्रमी, दर्शन शास्त्रों के भाष्यकार श्री स्वामी हरिप्रसाद जी, वेदान्तसूत्र तथा सामवेद के भाष्यकार श्री स्वामी भगवदाचार्य जी, सिद्धान्त कौमुदी की टिप्पणी लेखक श्री महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। आचार्य सत्यव्रत जी सामश्रमी ने 'ऐतरेयालोचनम्' नामक अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ में वेदाधिकार प्रकरण में यह सिद्ध करते हुए कि ऐतरेय ब्राह्मण का कर्ता महीदास इतरा नामक दासी का पुत्र था शूद्रस्य वेदाधिकारे साक्षाद् वेदवचनम प्रदर्शितं स्वामिदयानन्देन

"यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय" (यजुर्वेद २६।२)

तदेव वेदविषये पक्षपातदोषभाक्त्वं न कथमपीति स्पष्टम्।" (ऐतरेयालोचनम् पृ० १७) अर्थात् शूद्रों के वेदाधिकार के विषय में स्पष्ट वेदवचन भी स्वामी दयानन्द जी ने यजु० २६।२ दिखाया है 'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि

जनेभ्य।" इत्यादि। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वेद के विधान में किसी प्रकार का पक्षपात दोष नहीं आता है।

यदि प० दीनानाथ जी शास्त्री जैसे वर्तमान पौराणिक पण्डितों के समान आचार्य सत्यव्रत जी सामश्रमी ऋषि दयानन्द के 'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि' इस मन्त्र को अशुद्ध समझते तो वे उसे आदर पूर्वक उद्धृत न करते अथवा उसका खण्डन करते किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया।

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र वैदिकमुनि स्वामी हरिप्रसाद जी ने वेदान्त सूत्रों की वैदिकवृत्ति में प्रथम अध्याय के तृतीय पाद के ३३ से ३८ तक की सूत्रों की व्याख्या में शूद्र के वेदाधिकार का सविस्तार विवेचन करते हुए पृ० २७६ पर यथा चेह तथा शास्त्राधिकारविषयेऽप्यविशिष्य वेदितव्य। एष हि तत्प्रतिपादको मन्त्र यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।' (यजु० २६।२)

अत्र वेदविदो ब्रह्मपण्डित उपदिश्यन्ते (यथा) येन प्रकारेण अहम् (इमाम्) प्रत्यक्षभूताम् (कल्याणीम्) कल्याणसाधिका (वाचम्) वेदवाचम् (जनेभ्य) सर्वमनुष्येभ्य (आवदानि) समन्तादुपदिशानि तथा यूयमप्युपदिशत।

न च सत्यस्मिन् मन्त्रे शास्त्राधिकारविषय कश्चित् कस्यचिदवशिष्यते। स्पष्टो ह्यस्मान्मन्त्रात् सर्वेषां शास्त्रेऽधिकारोऽविशिष्ट॥" (पृ० २८०) इस प्रकार लिखा है। यथेमां वाचं कल्याणीम्' इस मन्त्र को उद्धृत करके और उसका ऋषि दयानन्द के समान अर्थ करते हुए उन्होंने लिखा है कि इस मन्त्र के होते हुए किसी के मन में भी वेदाधिकार विषयक संशय रह नहीं सकता। इस मन्त्र से सबका वेद शास्त्र में अधिकार स्पष्ट है। इत्यादि। पृ० २८१ पर स्वामी हरिप्रसाद जी ने लिखा कि 'एतेन स्त्रीणामपि शास्त्रेऽधिकारो व्याख्यातो विज्ञातव्य तासामपि शूद्रवत् केषाञ्चित्सूक्तानां ऋषित्वस्य स्मर्यमाणत्वात्। तस्माद् यथा मनुष्यास्तत्र (शास्त्र) अधिक्रियन्ते तथा स्त्रियाऽप्यधिक्रियन्त इति सम्यगवगच्छामह।' (वेदान्त वैदिक वृत्तौ पृ० २८१)

अर्थात् इससे स्त्रियों का भी वेदशास्त्र में अधिकार जानना चाहिए। शूद्रों की तरह अनेक स्त्रियां भी वेदमन्त्रों की ऋषिकाएं वा द्रष्ट्री हुई हैं इसलिए पुरुषों की तरह उनका भी वेद शास्त्र में अधिकार है इसी को हम ठीक समझते हैं।

अपनी 'स्वाध्याय संहिता' नामक पुस्तक के पृष्ठ ८२ पर भी स्वामी हरप्रसाद जी ने 'यथेमां वाचं कल्याणीम्' इस मन्त्र को उपर्युक्त अर्थ सहित उद्धृत किया है। हे ब्राह्मण (वेद आदि समस्त विद्याओं के पारंगत विद्वान्) जैसे मैं इस कल्याणी वाणी को प्रकट रूप से कहता हूं वैसे तू सब मनुष्यों को ब्राह्मण क्षत्रिय को शूद्र और वैश्य दोनों को अपने और बेगाने दोनों को कह।" ऐसा आर्यभाषा में उसका अर्थ दिया है।

स्वामी भगवदाचार्य जी का महत्वपूर्ण स्पष्ट लेखः—

सामवेद और ब्रह्मसूत्र के वैदिक भाष्यकार वर्तमान काल के अत्युत्तम विद्वान रामानन्द

सम्प्रदाय के गुरु स्वामी भगवदाचार्य जी ने साम संस्कार भाष्य की भूमिका और ब्रह्म सूत्र वैदिक भाष्य के प्रथम अध्याय के ३य पाद की व्याख्या मे वेदाधिकार पर सुन्दर विवेचन किया है जिस पर महर्षिदयानन्द की छाप हमे स्पष्ट दिखाई देती है। ब्रह्मसूत्रस्य वैदिक भाष्यम्' के पृ १६४ पर वे लिखते हैं 'किं च वस्तावद् वेदाधिकार ति वेदेनैव वक्तव्यम्। तत्र तु न कुत्रापि सकेतेनापि निवारितोऽधिकार शूद्राणाम्। प्रत्युत 'यथेमा वाच कल्याणामावदानि जनेभ्य।" इत्यस्मिन् मन्त्रे सर्वाधिकारा परमाप्ता परमात्मवाणात्येवोपदिष्टम्। (पृ० १६४)

अर्थात् वेद का अधिकारी कौन है इस का प्रतिपादन वेद को स्वय करना चाहिये। वहा तो सकेत व इशारे से भी कहीं शूद्र के वेदाध्ययन का निषेध नहीं बल्कि 'यथेमा वाच कल्याणी म्' इस मन्त्र म परम आप्त परमात्मा की वाणी (वेद) मे सब का अधिकार ह यह स्पष्ट उपदेश किया गया हे। ऋग्वेद क प्रथम मण्डल के ११६ वें सूक्त का ऋषि कक्षीवान् है। जिसे दीर्घतमा ने अङ्गराज की पट्टरानी का दासी उशिक् ने उत्पन्न किया था ऋग्वेद ६।७४ का भी वहा ऋषि ह। उसका पुत्र वा गोत्रज शबर ऋ० १।१६६ का ऋषि हे। कक्षीवान् की पुत्री घोषा दशम मण्डल के अनेक सूक्तों की ऋषिका है। ऐसे ही अदिति गोधा, यमी, शश्वती, सरमा, सूर्या उर्वशी, आत्रेयी, इन्द्राणी इत्यादि ब्रह्मवादिनिया ऋग्वेद की ऋषिकाए है।

उपसहार करते हुए स्वामी भगवदाचार्य जी कहते है 'नैकस्य सम्पित्ता सम्पत्तिर्वेदा। सर्वेषा हि ते। तदाध्ययनऽपि सर्वेषामधिकार।" (पृ० १६५)

अर्थात् वेद किसी एक की सम्पत्ति नहीं। उस पर सबका अधिकार हे। वे सब के है। उनके अध्ययन मे सभी का अधिकार ह। श्री स्वामी शङ्कराचार्य, रामानुजाचार्य वल्लभाचार्य, म वा चार्यादि ने जिस गौतम धर्म सूत्र के 'अथ हास्य शूद्रस्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्या कर्णपरिपूरणम्' आदि वचन को प्रामाणिक मानकर शूद्रो का वेदाधिकार निषेध किया था उसके विषय में स्वामी भगवदाचार्य जी लिखते हैं कि गौतम वचन त्ववैदिकमेव यथा तथोपरि साधितम्। समानो मन्त्र समिति समानी समान मन सह चित्तमेषाम्। समान मन्त्रमभिमन्त्रये व समानेन वो हविषा जुहो म।" ऋग्वेदे १०।१९१।३) इत्यन्तिममण्डलस्यान्तिममन्त्रस्यापान्त्येन मन्त्रेण सर्वेषा ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राणा समान मन्त्रप्रतिपादनम पश्य वेदाना सर्वाधिकारत्वं समर्थयते।" (पृ० १६५)

अर्थात् गौतम का वचन वेद विरुद्ध हे इस को हमने ऊपर यथेमा वाचम् इत्यादि मन्त्र देकर सिद्ध किया हे। समानो मन्त्र समान मन्त्रमभिमन्त्रये व इस ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त के मन्त्र मे भी यही स्पष्ट सिद्ध होता ह कि वेद मन्त्र सबके लिये समान होन से उनके अध्ययन का अधिकार सबको ह।

वर्तमान कालीन कुछ विद्वानो द्वारा महर्षि का समर्थन

वर्तमान काल के अनेक धुरन्धर विद्वानो ने जिनमे सनातन धर्माभिमानी कई विद्वान् भी सम्मिलित है महर्षि दयानन्द के वेदाधिकार

विषयक मत का प्रबल समर्थन किया है।

श्री कन्हैयालाल जी मुन्शी द्वारा स्थापित भारतीय विद्याभवन बम्बई मे इतिहासोपाध्याय श्री प० शिवदत्त जी ज्ञानी एम ए ने अपने 'भारतीय संस्कृति' विषयक उत्तम ग्रन्थ के पृ० १७७ पर लिखा है कि —

"वैदिककाल मे शूद्रो को भी वेद पढने का पूर्ण अधिकार था जैसे कि निम्नाङ्कित मन्त्र मे कहा गया है — यथेमा वाच कल्याणीमावदानि जनेभ्य । ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय ॥ (यजु० २६ २)

मैने यह कल्याणकारी वाणी मनुष्यो के लिये—ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र, अरण आदि के लिये कही है।" (भारतीय सस्कृति पृ० १७७)

इसी पुस्तक के पृ० १६५ पर 'समाज मे स्त्रियो का स्थान' के 'ब्रह्मचर्य व्रत' उपशीर्षक मे सुयोग्य लेखक महोदय लिखते है 'अथर्व वेद से पता लगता है कि लडकियों को गुरुकुल मे रह कर वेदादि पठन कर ब्रह्मचर्य का पालन करना पडता था। तत्पश्चात् उन्हे विवाह करने का अधिकार प्राप्त होता था।

'ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम्' ॥ ब्रह्मचर्य व्रत के द्वारा अर्थात् उस आश्रम को समाप्त करने के पश्चात् कन्या युवा पति को प्राप्त होती है। इससे स्पष्ट है कि एक प्रकार से वेदाभ्यास लडकियो के लिए भी अनिवार्य था। ("भारतीय सस्कृति" पृ० १६५)

जगद्विख्यात विचारक और विद्वान् डा० राधाकृष्णन् ने Religion and Society के पृ० १४१ पर और हिन्दु विश्वविद्यालय बनारस के प्राचीन भारतीय इतिहास के महोपाध्याय डा० अलतेकर एम ए, डी लिट ने Education in Ancient India के पृ० २ पर कन्याओ के वेदाध्ययन और उपनयन के समर्थन मे ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम्' इसी अथर्व वेद (११।५।१८) के मन्त्र को उद्धृत किया जिसका महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाशादि मे उल्लेख किया था।

श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी शास्त्री का महत्त्वपूर्ण लेख

देहली के श्री प० गङ्गाप्रसाद जी शास्त्री एक प्रसिद्ध सनातनधर्माभिमानी निष्पक्षपात विद्वान् हैं जिन्होने 'अछूतोद्धार निर्णय' नामक एक उत्तम ग्रन्थ लिखने के अतिरिक्त जो 'श्री सनातन धर्म पुस्तक भवन' देहली से प्रकाशित हुआ है यजुर्वेद का भाष्य भी किया है। अपने 'अछूतोद्धार निर्णय' नामक ग्रन्थ मे श्री शास्त्री जी ने पृ० ३० से ३३ मे 'यथेमा वाचं कल्याणीम्' इस मन्त्र पर विस्तृत विवेचन किया है। उव्वट, महीधर, ज्वालाप्रसादमिश्रादि पौराणिक भाष्यकारो का कथन है कि यह मन्त्र यज्ञ कर्ता राजा कहता है। जिस प्रकार मैं 'दीयताम्, भुज्यताम्, दो और खाओ यह कल्याणकारी वाणी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, मित्र और शत्रु सब को कहता हूँ इस लिये मैं देवताओ का प्यारा होऊ और दक्षिणा देने वाले का प्यारा होऊ, यह मेरी कामना सिद्ध हो।"

इस अर्थ का खण्डन करते और इस मे अनेक दोष दर्शाते हुए प० गङ्गाप्रसाद जी शास्त्री कहते है कि इस पर विचार करने से यह अर्थ स्पष्ट खैचा तानी का प्रतीत होता है। वेद मे कल्याणकारी वाणी से सर्वत्र सब भाष्यकारों

ने वेद वाणी का ही ग्रहण किया है। स्वयं वेद ने भी कल्याणकारी वाणी का संकेत वेद वाणी ही दिया है । महीधर भाष्य में तथा का अध्याहार करके उसका अर्थ तत 'इस लिये' किया है यह नहीं हो सकता। अरण शब्द का अर्थ करते हुए महीधर लिखते हैं—'नास्ति रणो वाक् सम्बन्धो येन सह सोऽरणः' अर्थात् जिसके साथ वाणी का सम्बन्ध न हो वह अरण है फिर जिससे बात ही नहीं उससे कैसे 'दो और गाओ' यह वाणी कही जा सकती है। यजमान स्वयं यज्ञकर्ता और दक्षिणा का देने वाला है। फिर यह कैसे कहा जा सकता है कि मैं दक्षिणा देने वाला का प्रिय होऊं ? इस कथन से ज्ञात हो जाता है कि यह उक्ति यजमान राजा की नहीं हो सकती।'

(अछूतोद्धार निर्णय पृ० ३०)

अन्त में श्री प० गङ्गाप्रसाद जी शास्त्री ने इस मन्त्र का अर्थ अपने विचारानुसार इस प्रकार दिया है—

"हमारी सम्मति में आचार्य अपने शिष्य को वेदाध्ययन कराता हुआ कहता है —

हे शिष्यो ! जिस प्रकार मैं इस वेद वाणी को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र मित्र, शत्रु सब के लिये कहता हूँ इसी प्रकार तुम भी इसका सब मनुष्यों को उपदेश दिया करो। इस प्रकार मैं विद्वान् और दक्षिणा देने वाले धनियों का प्रिय होऊं गा। यह मेरा वेद प्रचार की कामना पूर्ण हो।' वाक् का अर्थ वेदों में वेदवाणी है इसके लिये श्री शास्त्री जी ने 'पृच्छामि वाचः परमं व्योम' (यजु० २३। ६१) और उसका उत्तर 'ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम' (य० २३।६२) महीधर भाष्य सहित उद्धृत किया है जहां 'वाच' का अर्थ 'वाण्या त्रयीलक्षणाया' अर्थात् वेद वाणी ही किया गया है।

मुझे ऐसे प्रतीत होता है कि श्री पं० गङ्गा प्रसाद जी शास्त्री ने 'यथेमां वाचं कल्याणीम्' का यजुर्वेद भाष्य में जो अर्थ महर्षि दयानन्द ने दिया है उसे ध्यान पूर्वक नहीं देखा। सत्यार्थ प्रकाश में प्रसङ्गवश संक्षेप से दिये अर्थ को देख कर उन्हें उसकी यथार्थता में कुछ शङ्काएं हो गई हैं तथापि जो अर्थ शास्त्री जी ने किया है उससे कुछ शाब्दिक भेद होने पर भी महर्षि दयानन्द के शूद्राधिकार विषयक मन्तव्य की पुष्टि होती है इसमें सन्देह नहीं। महर्षि दयानन्द जी ने इसे ईश्वर की उक्ति माना है उसके लिये उन्होंने "बृहस्पते अति यदर्यो अर्हात्" इस अगले मन्त्र का प्रमाण दिया है जहां परमात्मा को बृहस्पति नाम से स्मरण किया गया है जिसका अर्थ महीधर ने भी 'हे बृहस्पते—बृहतां वेदानां पते पालक !" अर्थात् वेदों के रक्षक यह किया है और उससे ज्ञानरूप सर्वोत्तम अद्भुत धन की प्रार्थना की गई है। इसी २६ वें अध्याय के नवम मन्त्र 'अग्निऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयम्।' (यजु० २६। ९) में अग्नि का विशेषण पाञ्चजन्य आया है जिसका अर्थ उव्वट 'पञ्चजनेभ्यो हितः—चत्वारो वर्णा निषाद पञ्चमाः पञ्चजनाः तेषां हि यज्ञेऽधिकारोऽस्ति।' और महीधर 'पाञ्चजन्यः—पञ्चजनेभ्यो हितः। विप्र दयश्चत्वारो वर्णा निषादश्चेति पञ्च जनास्तेषां यज्ञाधिकारात्।" (शुक्ल यजुर्वेद संहिता भाष्ये निर्णयसागर प्रेस पृ० ४७५) ऐसा करते हैं। इनका अर्थ स्पष्ट है कि

अग्नि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद इन सब के लिये हितकारी है। इन सबका निश्चय से यज्ञ में अधिकार है। अग्नि को यहां 'ऋषि' कहा गया है जिसका अर्थ उव्वट और महीधर दोनों 'द्रष्टा मन्त्राणाम्' मन्त्रों का द्रष्टा वा साक्षात्कर्ता करते हैं उसी को पवमान और पुरोहित भी कहा गया है। ये विशेषण मुख्यतया परमेश्वर पर ही घटते हैं। मन्त्रों के साक्षात्कर्ता ऋषि पर भी मान तो उससे भी सिद्ध होता है कि वह परमेश्वर के आदेशानुसार उसी के समान ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद, सब का हितकारी है और यज्ञ में सबका निश्चय से अधिकार है।

इस प्रकार इस सम्पूर्ण अध्याय के अनेक मन्त्रों द्वारा महर्षि दयानन्द कृत अर्थ की ही पुष्टि होती है जिसके समर्थन में पञ्चजना मम होत्रं जुषध्वम्' (ऋ०)

'श्रोत्रम विश्वमाताहि शची भिरन्तर्विश्वासु मानुष षु दिक्षु॥ (अथर्व ५।११।८)

इत्यादि अनेक अन्य वेद मन्त्रों को भी उद्धृत किया जा सकता है। महर्षि दयानन्द के यजुर्वेद भाष्य २६।२ में 'परमेश्वर सर्वेभ्यो मनुष्येभ्यो वेदपठनश्रवणाधिकारं ददातीत्याह" इतना स्पष्ट लेख होने पर भी प० दीनानाथ जी शास्त्री आदि का यह आक्षेप कि जब स्वामी दयानन्द जी के अनुसार इस "यथेमां वाचं कल्याणी म्" का ईश्वरो देवता' है तो ईश्वर प्रतिपाद्य विषय है प्रतिपादक वा उपदेश देने वाला नहीं उपहास जनक है। देवता का अर्थ महर्षि दयानन्द तथा निरुक्तादि के अनुसार केवल प्रतिपाद्य विषय ही नहीं है 'देवो दानाद्वा द्योतनाद्वा दीपनाद्वा' आदि निरुक्तवचन के अनुसार देनेवाला, प्रकाशित करने वाला इत्यादि भी है। ईश्वर ने उपदेश दिया है तथा वह सत्य ज्ञान को प्रकाशित करता है अतः उसे देव वा देवता कहना सर्वथा उचित ही है। अतः यह आक्षेप सर्वथा असङ्गत है। यदि महीधर-कृत अर्थ को ही प० दीनानाथ जी शास्त्री आदि प्रामाणिक मानते हों तो उन्हें २६।१ में किये भाष्यानुसार यज्ञ में सब का अधिकार तथा २६।२ के भाष्यानुसार 'देव" का अर्थ "दक्षिणादातार" अर्थात् दक्षिणा देने वाले विद्वान् यह भी मानना चाहिये जिसे स्वीकार करने को वे शायद उद्यत न होंगे।

इस प्रकार विवेचन से यह स्पष्टतया प्रमाणित होता है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती उदारतम आचार्य थे जिन्हों ने सनातन वैदिक धर्म का विशुद्ध रूप में प्रचार किया। स्त्रियों और शूद्रों की स्थिति तथा अन्य विषयों में उन्होंने जितनी उदारता वैदिक आदेशानुसार दिखाई उतनी इस युग के अन्य किसी आचार्य में नहीं पाई जाती यह निष्पक्षपात विद्वानों को स्पष्ट ज्ञात होगा। महर्षि की इस उदारता का भारतीय और पाश्चात्य निष्पक्षपात विचारकों पर बड़ा प्रभाव पड़ा है जैसे कि इस लेख में संक्षेप से दिखाया गया है।

—०(※)(※)०—

॥ ओ३म् ॥

वेदोपदेश

वेद मनुष्य मात्र के लिये है

(व्याख्याकार परमहंस परिव्राजक स्वामी भगवदाचार्य जी अहमदाबाद)

ओ३म् कस्य नूनं परीणसि धिया जिन्वसि सत्पते । गोषाता यस्य ते गिरः ॥

सामवेद मं० ३४

हे (सत्पते) सतां पूतमनसा—पूतकर्मणां च पते-स्वामिन् (अग्ने) परमात्मन् (यस्य) (ते) तव (गिर) वेदरूपा वाच (गोषाता) गवां पृथिवीस्थितानां सर्वेषां मानवानां सातौ लाभे-लाभाय भवन्तीत्यर्थ । अनेन परमकृपा-कूपारस्य परमेश्वरस्य वेदेषु सर्वेषामेव ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्रातिशूद्रादिविभेदविभक्तानां तत्पुत्राणां स्त्रीपु सशरीरभृतां जीवानां समानोऽधिकार इति विस्पष्टं सूचितं भवति । स त्वं (कस्य) सुखस्य (परीणसि) बहूनि (परीणसेति बहु नामसु पठितम् निघण्टु ३।१।६) (धिय) कर्माणि धीरिति कर्म नाम (निघ० २।१।२१) वेदप्रतिपादितानि सर्वैरनुष्ठातव्यानि, वेदोदितानि सर्वाणि ज्ञानानि वा धीरिति प्रज्ञानाम (निघ० ३।६।७) (नूनम्) अवश्यं (जिन्वसि) प्रीणयसि सर्वमनुष्यदेहिनां सुखजनकानि वैदिक कर्माणि वैदिकज्ञानानि वा सम्पादयानीति त्वं मन्यस इति भाव ॥

भाषार्थ-हे पवित्र मन वालों के, पवित्र वचन वालो के और पवित्र कर्म वालों के स्वामी परमेश्वर ! आप की वेदरूपी वाणी पृथिवी पर निवास करने वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अतिशूद्रादि, स्त्रीपुरुष सभी मनुष्य देहधारियों के लाभ के लिये है। सब को समान रूप से ज्ञान प्रदान करने वाले वे आप, वेदप्रतिपादित सभी कर्म और सभी ज्ञान सब मनुष्यों को समान रूप से प्राप्त हों, ऐसा चाहते हैं। इस से परम दयालु परमेश्वर द्वारा प्रदत्त वेदों के पढने का सब मनुष्यमात्र को समान अधिकार है यह स्पष्टतया सूचित होता है।

॥ ओ३म् ॥

अध्यात्मसुधा—

नाम दान

(श्री पूज्यपाद महात्मा प्रभु आश्रित जी के भक्ति साधनाश्रम सुन्दरपुर जिला रोहतक में ? ? ? ४९ को दिया प्रवचन)

महे च न त्वाद्रिवः परा शुल्काय दीयसे।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ॥
(ऋ० ८।१।५॥ साम पू० प्र० ३-१ द ५ म० ६)

यह पवित्र मन्त्र साम वेद का है। साम वेद भक्ति रस से भरपूर है। इस मन्त्र पर कुछ विचार से पूर्व शब्दार्थ नीचे देना उचित प्रतीत होता है।

शब्दार्थ हे (अद्रिव) हे अन्धकार का हरण करने हारे ज्ञानवान ! हे (वज्रिव) वज्र को धारण करने हारे त्यागी आत्मन् ! (महे चन शुल्काय) बडे भारी मूल्य के बदले भी (न परादीयसे) तुझ को नहीं दिया जा सकता। (शतामघ) हे सैकड़ों ज्ञानकर्मों से सम्पन्न ! (न शताय) न सौ के बदले (न सहस्राय) न हजार के बदले (नायुताय) न लाख के बदले तुझे दिया जा सकता है।

इस मन्त्र के अन्दर भक्त भगवान से प्रार्थना करता है कि भगवान् मुझे तेरे नाम की समझ आ जाए और मैं तुझे किसी प्रकार किसी मूल्य पर किसी भी काम के लिए न बेचूं तेरा त्याग न करू । न हजार के बदले न लाख और करोड़ के बदले न अरब खरब के बदले और न राज्य और जागीर के बदले तुझे छोड़ू ।

हमारी आयु बढ़ती जा रही है परन्तु ज्ञान प्रतिदिन कम होता जा रहा है। ऐसी कोई वस्तु है जो हम को ज्ञान नहीं करने देती। सब से बडा ज्ञानदाता गुरु हमारा परमेश्वर है। जिस प्रकार सूर्य हमारी आंख को मार्ग दिखाता और ससार के सभी पदार्थ को प्रकाशित कर देता है, बाह्य तिमिर को मिटा उजाला कर देता है। इसी प्रकार परमात्मा हमारे सर्व प्रकार के अन्धकार का नाश कर के सच्चा वास्तविक ज्ञान का दाता है। कितनी बढिया से बढिया टार्च क्यों न हो, फानूस और बिजली के लैम्प क्यों न हों उनका प्रकाश उतना नहीं हो सकता जितना कि सूर्य देता है। इसी प्रकार ससार के समस्त विद्वान मिल कर के भी इतना ज्ञान नहीं दे सकते जितना परमेश्वर देता है। परमेश्वर हमारे अन्दर बैठा हुआ है हम उसको नहीं सुनते क्योंकि हमने परमेश्वर को बेच दिया है और हमें उसका ध्यान ही नहीं।

दृष्टान्त —मैं बीकानेर में बैठा हुआ था और एक सिंधी श्रद्धालु भक्त भी मेरे पास था। मैंने भक्त से पूछा आप का भगवान् के साथ कितना प्यार है। क्या आपको टट्टी से ज्यादा प्यार है ? हस पड़ा। मैं ने कहा एक तरफ आप

का ग्राहक आया हो और उसी समय टट्टी का वेग हो जाए तो पहले किस की सुध लोगे ? निश्चय टट्टी जाना पहले पसन्द करोगे ग्राहक की खबर बाद मे लोगे और अगर आप का ग्राहक भी आया हो और सन्ध्या का समय होगा तो पहिले परमेश्वर का ध्यान करोगे या ग्राहक का ? सिन्धी भक्त ने कहा सच तो यही है कि पहले ग्राहक का ध्यान करेंगे। इस लिये तो भक्त ने कहा है कि भगवान्, तुझ बेचू न छोड़ू न किसी भी कामत पर। परन्तु हम तो कौड़ियों के बदले इसे बेच देते हैं।

महाराजा रणजीतसिंह का समय था। एक दिन महाराजा रणजीतसिंह प्रातःकाल वायु सेवन को बाहिर जा रहे थे। उन्होंने देखा एक कुम्हार गधे पर चढ़ा हुआ ढोला गाता जा रहा है। महाराजा को वह लय बड़ी पसन्द आयी। नाम पूछा। उसने कहा कि मेरा नाम बुद्धू कुम्हार है। महाराजा चला गया। दरबार म जा कर बुद्धू कुम्हार को बुलवाया और कहा कि बुद्धू वही ढोला सुनाओ। उसने कहा मैं नहीं सुना सकता तो महाराज ने कहा तुम्हे एक ग्राम पुरस्कार मे देंगे परन्तु बुद्धू ने इसे स्वीकार न किया। महाराजा ने यह समझ कर कि शायद एक ग्राम थोड़ा हो उसे और अधिक प्रलोभन दिया कि दो ग्राम ले लो पर ढोला तो सुना दो। परन्तु बुद्धू ने अन्तत यह उत्तर दिया कि मैं ढोला बेचकर अपना और आने वाली सन्तान का नाम मैला नहीं करना चाहता कि बुद्धू ने अमुक ग्राम ढोला बेच कर लिया। वाह रे बुद्धू! तेरी अवस्था तो सचमुच वर्तमान काल के असंख्य लोगों से अच्छी थी। आज तो हम कौड़ियों के बदले परमात्मा के नाम को बेच रहे हैं।

इस स्थान पर किसी ने प्रश्न किया कि वह कौन सी चीज है जिस के द्वारा हम परमेश्वर को पा सकते हैं ? वह कौन सा गुण है जिसके धारण करने पर वह हमारे सामने आ जाय ! किसी ने उत्तर दिया कि झूठ का त्याग ऐसी चीज है। परन्तु वास्तव मे झूठ का न बोलना वीरता नहीं है। वीरता है सत्य बोलने की जो पशु नहीं बोल सकता। यदि हम झूठ बोल दें और सत्य न बोलें तो हम पशु से भी कम हो गए क्योंकि पशु झूठ नहीं बोलता है और सत्य बोल नहीं सकता।

परमेश्वर के त्याग और बेचने का क्या कारण है ?

परमेश्वर का त्याग हम तब कर सकते हैं जब भय आता है और बेचते तब हैं जब लोभ आ जाता है। तो सब से बड़ी चीज भय और दूसरी लोभ है। जिस व्यक्ति के अन्दर किंचित् मात्र भी भय है सर्प बिच्छू आदि से भय की बात नहीं इस बात का भय है कि मेरा मान घट जाय, वह आदमी सत्य को धारण नहीं कर सकता और इसलिए वह ईश्वर को धारण नहीं कर सकता। हम ने पाच बार आहुति दी "अनृतात् सत्यमुपैमि" यदि आहुति देने से हमारा सत्य भागता है और अनृत को अपनाते हैं तो हम परमेश्वर से धोका करते हैं, लोगों से भी, और अपने आप को भी धोका देते हैं। जब किसी स्त्री को गर्भ हो जाता है तो वह उसकी रक्षा करती है, इसी प्रकार जब मनुष्य गर्भ के समान परमेश्वर की दात की रक्षा करता है तो वह सचमुच गर्भ के समान ही बढ़ेगा, जैसे गर्भ

पूर्ण हो कर निकलता है, प्रभु की दात भी पूर्ण होकर बाहर आयगी। अत अब हमे जरा ऊ चा होना चाहिये।

माता का दूध हमने छोड दिया जब दात निकले, माता ने छुडा दिया, कहा कि दूध खारा हो गया है। माता ने अगुली पकड कर हमे खडा कर दिया कि अब बैठे न रहो, खडे हो जाओ। इसी प्रकार यदि अपनी जीवन यात्रा मे अपने आप को बदलते नही तो समझो कि हमारा विनाश हुआ, पतन हुआ, हमारा अभी उत्थान नहीं हुआ, अभी हम परमेश्वर के नाम की समझ न आई। इसी प्रकार वे लोग जिन को परमेश्वर की दात बरसी कि वेद पढो, यज्ञ करो, होम करो, जप करो, और वह वहीं के वहीं रह गए तो उनका वही हाल रहा, कोल्हू वृषभ की तरह आगे बढे ही नहीं।

ब्रह्मचारी लेता ही लेता है भोग के लिये नहीं वह ज्ञान के विकास के लिये लेता है, आप के द्वार से पैसा, दूध वस्त्र आदि मागता है ज्ञान के विकास के लिये। २५ वर्ष पश्चात गृहस्थी बना, अब देता और लेता है। उसके दो काम हैं, अब वह भोग के लिये देता और लेता है। वानप्रस्थी बना अब भी ले और दे तो क्या बना? अब वह देता ही देता है। वानप्रस्थी अपने कर्म के विकास के लिये देता है। वान प्रस्थी ने धन, सम्पत्ति, महल माडी, पुत्र परिवार को छोडा, यदि फिर भी वह धन के आश्रित रहता है तो उसका क्या बना। उसका काम तो देना ही देना है। सन्यास को पाकर यदि वह कर्म के लिये देता रहे तो वह बिगड गया। सन्यासी ने अब सब कुछ खो दिया, अहं और मम को खो दिया, वह पूर्ण हो गया। यदि हम एक ही स्थान पर रहे तो हमारा कुछ उद्धार न हुआ। वानप्रस्थ मे सत्य हमारा स्वरूप बन गया अब हम सत्य की उपासना करते हैं। इसी प्रकार भक्त कहता है कि परमेश्वर का हम से त्याग न हो, बेचा न जाय, बेचा गया लोभ के कारण। वेद ने कहा

यदि वीरो अनुष्यादग्निमिन्धीत मर्त्य।
आजह्वद्धव्यमानुषक्शर्म भक्षीत दैव्यम्॥
साम० पू० प्र० १२, द० ४, म० ७॥

शब्दार्थ. (यदि) जब (वीर) पुरुष ब्रह्मचर्य आदि द्वारा वीर्यवान् एव पुत्रवान (अनुस्यात्) हो जाय तब (अग्निम्) उस ईश्वरीय अग्नि को (मर्त्य) मरणधमा पुरुष (इन्धीत) प्रदीप्त करे, अपने अन्तरात्मा म जगावे और (आनुषक्) निरन्तर (हव्यम्) प्राणापान रूप आहुतियों को (आजुह्वन्) उस मे ही समर्पण करता हुआ (दैव्यम्) दिव्य प्रकार की (शर्म) सुख और शान्ति का (भक्षीत) भोग करता है।

इस मन्त्र मे मनुष्य जीवन के अतिम उद्देश्य और उसके साधन बताए गए हैं। अतिम उद्देश्य है दु खों की अत्यन्त निवृत्ति अर्थात् मुक्ति की प्राप्ति। ब्रह्मचर्य आदि आश्रमों की मर्यादाओं का पालन करता हुआ मनुष्य क्रमश योग द्वारा आनन्द के सर्वोच्च भंडार परमात्मा को प्राप्त कर सकता है और क्लेशों से छूट सकता है। थोडे से शब्दों मे ही सारे भाव को भर दिया है परन्तु वास्तव में देखें तो उस लक्ष्य पर पहुँचना इतना सरल नहीं जितना दर्शाया गया है। मनुष्य घिरा हुआ है शत्रुओं से सर्दी मे

सर्दी गर्मी में गर्मी हमारी दुश्मन है। मच्छर, मक्खी, ततीए बिच्छू, और साप आदि सब हमारे दुश्मन हैं परन्तु इनका तो हम मकाबला भी कर सकते हैं और बच भी सकते हैं। मच्छर आदि से बचने के लिये मच्छरदानी को ओढ लेंगे अथवा अपने आप को किसी प्रकार से बचा लेंगे परन्तु आन्तरिक शत्रुओ से बचना मुकाबिला करना बडा कठिन है। इस अवस्था में काम, क्रोध, मोह, लोभ आदि आन्तरिक शत्रुओं से कैसे बचें यह एक समस्या है। यदि इसका हल न हुआ और यदि हम न बच सके तो यह पुन हमे आवागमन के चक्र मे डाल देगा।

जब हमने शत्रु को शत्रु समझ लिया तो फिर हम भय हो गया और उसे परास्त करने के लिये हम उपाय ढूढते हैं। परन्तु जब हमने शत्रु ही न समझा और हमने उसके साथ मित्रता गाठ ली तो हम भी डाकू बन गए। शत्रु से प्रेम है तो हम डाकू हैं। हमारी तो इस समय मोह, लोभ, काम, क्रोध सब से मित्रता है। जिन्हों ने अगरेजों को देश का शत्रु और घातक समझा उन्होंने देश को बचाने के लिये सब कुछ निछावर कर दिया, फासी पर चढ गए और वे देश को स्वतन्त्र कराकर अपना नाम अमर कर गये। इसी प्रकार जब हम काम, क्रोध आदि को शत्रु समझ लें तो उनको निकाल कर ही दम लेगे। घर में सर्प घुस आय तो उस को निकालने का मनुष्य पूरा प्रयत्न करता है। सपेरे से निकलवाता है। तो क्या इन राक्षसों को निकालने के लिये कोई सपेरा नहीं है ? नहीं! सपेरा है। सामवेद के दसवें मन्त्र में आया है —

ओ३म् अग्ने विवस्वदा भरास्मभ्यमूतये महे। देवो ह्यसि नो दृशे ॥ १०॥ साम० पृ० १११०

भगवान् का भक्त कहता है कि भगवन्! मेरा तो एक आश्रय तू ही है। एक वह पुरुष है जो धनधान्य पुत्र परिवार की प्रार्थना करता है और यह सब कुछ शरीर के लिए है। एक वह है जो शरीर की परवाह नहीं करता वह ऊचा चढता है और कहता है कि भगवन् हमारा जीवन आदर और सत्कार का जीवन हो। रोटी मिले तो आदर की मिले। परन्तु ये लोग मध्यम श्रेणी के हैं। पहली श्रेणी के लोग प्राण और दूसरी के उन्नर को प्रसन्न करना चाहते हैं। आत्मा के लिए कुछ नहीं मागते। भगवान का भक्त इन श्रेणियों से भी ऊपर है। इस की सज्ञा उत्तम पुरुषो मे से है। जो प्रभु से कहता है कि हमे अपना नाम दान द। नामदान कब मिलता है? नामदान तो मिला हुआ है। गायत्री म कितने नाम भगवान के आये हुए हैं परन्तु क्या जपने से नाम दान हो जाता है। नहीं यह नाम, दान मे तो नहीं मिला। यदि दान मे मिल जाता तो हमारा होजाता। नाम दान नहीं मिलता तो नाम तो मेरा होगया। भूखे को खिला दिया उसकी भूख मिट गई, प्यासे को पिला दिया उसकी प्यास मिट गई। दान तो बन्धनों के काटने वाला है। अगर हमारे बन्धन कट गये तो दान मिल चुका। हम तो नाम को चुरा लेते हैं यह दान नहीं। विद्या पढकर आये तो वह क्या दान लेकर नहीं आये पैसा देकर प्राप्त किया। इस लिए उनका भी छुटकारा नहीं होगा। दान मिलता तो शान्ति आजाती। इसलिये कहा भगवन् हमे वह सदगुरु मिलाओ जो सत्य को जान

चुके हैं उनके द्वारा अपना मार्ग मालूम हो जायगा।

राधास्वामी मत के अन्दर जाये तो सबसे पहिले प्रश्न वे यह करते हैं कि आप कैसे आए। जब उत्तर मिलता है दर्शन करने। तो पूछते हैं कि क्या नाम दान लिया हुआ है। यदि नहीं लिया हो तो उसको मिलने नहीं देते। मनु महाराज ने कहा—

'सर्वेषामेव दानाना ब्रह्मदान विशिष्यते॥

वेद का दान सबसे उत्तम दान है। मैं दान नहीं ले रहा आप ले नहीं रहे। जो स्वय भूखा है दूसरे को क्या देगा। मैं वेद जानता नहीं हूँ मुझे तो दान नहीं मिला हुआ है मैं पोथी का लिखा सुना रहा हू, न दानी हूँ न आप लेने वाले हैं। यदि सचमुच मैं वैसा होता जसे ऋषि दयानन्द जो प्रकाण्ड पडित था जिसकी किरण घर घर पहुँची और पहुँच रही है तो क्या अच्छा होता। हम तो नक्ल कर रहे हैं। शायद कभी असल बन जाय। किसी के सिर पर गठडी थी कपडे में सुराख था। कनक के दाने गिर पडे। भूमि तैयार थी वह उग आई। इस प्रकार हो सकता है किसी की भूमि तैयार हो रही हो और यह बीज उसमें पड जाय। जैसे छज्जू भक्त को जब वह गली में जा रहा था सामने से भगिन आ रही थी। तो भगिन को देखकर कभी वह गली के एक सिरे पर होता कभी दूसरी ओर। उसे इस दुविधा में देखकर भगिन ने कहा भक्त जी एक ओर हो जाओ। भूमि तैयार थी इस समय तक छज्जू कभी माया से प्यार करता कभी राम से। इन शब्दों ने आखे खोल दीं। दुविधा मे दोनों गए माया मिली न राम। छज्जू को समझ आ गई और चौवारे मे बैठकर ही भगवान् की ओर मग्न होगया। तभी से कहा है 'जो सुख छज्जू के चबारे न बलख न बुखारे।'

शंकर को चूढा (भंगी) मिला। शकर ने कहा कि हट जाओ। चूडे ने पूछा, आप कौन हैं? शकर ने कहा मैं ब्रह्म का प्रचारक हूँ। तो चूडे ने पूछा क्या जिस टोकरी को मैंने उठाया हुआ है उसमे ब्रह्म है, टट्टी मे है, झाड़ू में है? शकर ने उत्तर दिया हा। तो चूडे ने कहा तुम ब्रह्म का प्रचार नहीं कर सकते, जाओ। भूमि तैयार थी, शकर के नेत्र खुल गये कि अरे शकर जब सर्वत्र ब्रह्म को देखता है और 'एकं ब्रह्म द्वितीय नास्ति' का प्रचार करता है तो चूडे को कैसे कह सकता है कि हट जाओ। ब्रह्म के प्रचारक मे भेद भाव कैसे?

इसलिये भक्त कहता है न अन्न चाहिए न मान, मुझे तो नाम चाहिए। मुझे सद्गुरु प्राप्त कराओ। भगवान् तो अन्दर बैठे हैं जब पर्दा उठाया दर्शन हो गए। भक्त ने कहा ऐसी बुद्धि प्रदान करो कि तेरे नाम को किसी हाल, किसी काल मे न बेचे।

साम क्या है?

साम बराबर है स+अ+म। मानो स और म के दरम्यान अ है। "म" प्रकृति, माया, प्रलोभनों मे फसाने वाली है और स जीव है। "अ" परमेश्वर है। अब माया ईश्वर को उलाघ कर कैसे जीवात्मा को प्रलोभन दे सकती है। अब भक्त को सर्वत्र भगवान् नजर आता है। जब भक्ति के द्वारा भगवान् को मध्य मे ले आता है तो माया का साप उसे डस नहीं सकता। इसलिए साम वेद के इस मन्त्र द्वारा भक्त कहता है कि प्रभु देव! आओ मेरे और माया के दरम्यान आओ, ताकि मैं माया के प्रलोभना से बच कर तेरे दामन को कभी न छोडू, तेरे नाम को कभी न बेचू। भगवान् करें कि हमे ऐसी बुद्धि, बल और योग्यता प्रदान हो कि जिससे हम भगवान् के नाम की महिमा को जान सकें।

(संकलयिता—आचार्य सत्यभूषण जी)

गीतोक्त कर्म योग का आदर्श

(लेखक स्वर्गीय अमर धर्मवीर श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज)

यज्ञो दान तप कर्म न त्याज्य कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चव पावनानि मनीषिणाम्।
(गीता अ० १८ श्लोक ५)

एत न्यपि त कर्माणि सग त्यक्त्वा फलानि च।
क ० ।ाति मे पार्थ । निश्चित मतमुत्तमम॥
(गीता अ० १८ श्लोक ६)

उपदेश

कर्मों के नाश से मुक्ति होती है। जब तक कर्म का बन्धन नहीं छूटता तब तक मनुष्य शरीर रूपी कारागार म बन्द रहता है, इसलिए मुक्ति की इच्छा रखने वालों के लिए आवश्यक है कि वह कर्मों का अन्त करदें। क्या इसका अभिप्राय यह है कि कर्म करें ही नहीं? हीं मैंने एक बार एक दृश्य देखा जो कभी भूलता नहीं। एक साधु महात्मा मेरे स्थान के समीप आकर ठहरे। उनका नाम ही जनता ने निष्काम रख लिया था। वह नग्न रहते थे। मैंने भी बडी प्रशसा सुनी दर्शनों के लिए उपस्थित हुआ। न बोलते थे न कुछ करते थे। कुर पर च कडी मारे बैठे थ। ~ के स्थूल शरीर का ~र ~ादमी मल ~ कर धो रहे थे। उन्हीं में से एक भक्त ने बदन अंगोछ दिया, उठाया उठ खडे हुए, हिलाया हिल पडे, परन्तु गद्दी पर पहुँचते ही बैठ गये। मैं भी प्रणाम करके बैठ गया। गले में सुगन्धित फूलों की माला डाली गई। साधु जी ने मौन साधन किया हुआ था और भक्त जन प्रशंसा के पुल बाध रहे थे। इतने में एक देवी आई और उसने मुह के पास कलाकन्द (मिठाई) रक्खी। महात्मा जी ने मुह खोल दिया। जब कलाकन्द मुह के अन्दर गया तो खाने लग गये। तब मुझसे न रहा गया और मैंने कहा "महात्मा जी! अगर आप मुह न खोलते और मिठाई को दांतों से न चबाते तब मैं इन मनुष्यों के कहने पर आपको "निष्काम" समझता। महात्मा जी की आखें सुरख लाल होगई और मौनव्रत टूट गया। मैं बाहर चला आया। लोगों ने आकर मुझसे कहा यह साधु सदाचारी तो है? मैंने जवाब दिया कि अगर सदाचारी है तो यह इसका कर्तव्य है। परन्तु जो मनुष्य क्रोध को वश में नहीं कर सकता उससे हमें क्या लाभ हो सकता है? जैसा कि कहा गया था, सम्भव है कि वह साधु सदाचारी हो। परन्तु फिर वह क्यों क्रोध में आया? इसलिये कि उसने "निष्काम" शब्द के अर्थ नहीं समझे। कर्म कौन मनुष्य छोड सकता है? क्या आख से देखना बन्द हो सकता है? कान को सुनने से रोका जा सकता है? कोई भी इन्द्रिय अपने काम को नहीं छोड़ती। तब क्या करना चाहिये?

कृष्ण भगवान् कहते हैं—यज्ञ, दान और तप इन कर्मों का कभी भी त्याग न करना चाहिये। छोडने योग्य बुरे काम है न कि अच्छे।

वैदिक कर्म को न छोडे परन्तु इन कर्मा को नियम पूर्वक करना मनुष्य का परम धर्म है। यह क्यो ? इस लिये कि मनुष्य एक स्थान पर ठहर नहीं सकता। गति जगत् का नियम है। सिवाय परमात्मा के और किसी सासारिक पदार्थ की स्थिति नहीं, फिर निर्बल मनुष्य कब एक स्थान पर ठहर सकता है ? मुक्ति बडी दूर है। आत्मिक हिमालय की चोटी पर उसकी झलक सी दीखती है। मुक्ति के अभिलाषियोको ऊपर चलना है। मार्ग बडा विकट है, चढाई सीधी है। अगर दृढता के साथ श्वास को ठीक कर, बदन को ठीक अवस्था में रखकर ऊपर को नहीं चलते तो एक दम नीचे गिर पडोगे। नीचे की दूरी से सिर मे चक्कर आजाये और न जाने किस प्रकार नीचे आन गिरे। इस लिए कृष्णदेव कहते हैं कि आत्मा की शुद्धि और दृढता के लिए यज्ञ, दान और तप का अभ्यास नित्य करे। बिना तप के मनुष्य दान के योग्य नहीं होता। जिसके पास स्वय धन नहीं वह दूसरो को क्या दगा ? जिसके अपने पास विद्या रूपी रत्न नहीं, वह दूसरों को विद्या दान कैसे कर सकता है ? इसलिए तप का अभ्यास सबसे पहले करना चाहिये, उसके साथ दान का भ्यास स्वयमेव होगा। जिसके पास ऐश्वर्य है उसका चित्त देने की तरफ प्रवृत्त होगा। जिस के शरीर मे बल नहीं, वह दीनों की रक्षा क्या करेगा ? जब तप और दान दोनों इकट्ठे हो जाते हैं तब यज्ञ का प्रकाश होता है।

क्या कभी इस तरह कर्मो का अन्त हो सकेगा ? यदि कर्मों का अन्त न होगा तो क्या कभी भी हम मुक्ति की चोटी पर पहुँच सकेंगे ? इसका उत्तर फिर ईश्वरीय विज्ञान की रुह यता से भगवान् कृष्ण देते है—कर्म बराबर करो क्यों कि इन्द्रिया बिना कर्मों के रह नहीं सकतीं, किन्तु उन कर्मों के फल भोग की इच्छा को छोड दो। बस यही निष्काम कर्म कहलाते हैं। कर्म करते हुए ही पूरी आयु भोगने की इच्छा करो, परन्तु उन कर्मो के फल से कुछ भी सम्बन्ध न रक्खो। इस तरह तुम उन कर्मो के बन्धन से छूट सकते हो। कर्म अपने आप मे कुछ भी नहीं कर सकते, उनमे फसावट ही सब कुछ करती है।

मनुष्यों को यदि पाप रूपी नरक मे गिराती है तो कर्मो की फसावट। इस लिए ऐ मेरे प्यारे भाइयो ! ससार के गृहस्थ रूपी युद्ध से मत भागो। जिसने इन्द्रियो को वश मे किया है उसका घर भी तपोवन है किन्तु जो वन मे जाकर भी इन्द्रियों का दास ही रहा वह घोर सर्मीम में फंसा हुआ है। ब्राह्मण निष्काम कर्म करने से ही जगत् गुरु कहलाते थे। अन्यथा उनके शरीर भी दूसरे मनुष्यो की ही तरह थे। इस समय निष्काम भाव से काम करने की बडी आवश्यकता है। तुम यश के भूखे हो ! निष्काम भाव से कर्म करो, यश तुम्हारे पीछे मारा मारा फिरेगा। तुम्हे आश्चर्य होगा कि यश का निष्काम भाव से क्या सम्बन्ध ! परन्तु आश्चर्य की कोई बात नहीं है। कवि ने सच कहा है "बिन मागे मोती मिले मागे मिले न भीख"। तुम अपना उद्देश्य उच्च बनाओ, उसके लिए तप, दान और यज्ञ के अभ्यास की आवश्यकता है। इन तीनों प्रकार के कर्मो से शरीर मन और आत्मा को शुद्ध करो। फिर निडर होकर ससार मे विचरो। जब फल भोग की कामना न रही तो

बजाय इसके कि विषय इन्द्रियों को अपनी तरफ खींच सकें, मन इन्द्रियों को अन्दर की तरफ खींच सकेगा और बजाय इसके कि मन आत्मा को बहिर्मुख कर सके, आत्मा अपने अन्दर मन और इन्द्रियों को खींच कर उनका राजा बना हुआ परम धाम की तरफ चल सकेगा। उस परम धाम का मालिक परम आत्मा है। उसीका सारा ऐश्वर्य है। उसको पाकर फिर किसी वस्तु की इच्छा बाकी नहीं रहती। परमात्मा पूर्ण कृपा करें कि हम सब योगीराज कृष्ण के गम्भीर नाद को सुनें और उसके अनुकूल चलें।

शब्दार्थ

(यज्ञो दानं तप) मनुष्य के लिए यज्ञ दान और तप (कर्म) यह तीन कर्तव्य हैं। (न त्याज्यम्) यह कर्तव्य मनुष्य कभी न छोड़े, (यज्ञो दानं तपश्चैव) यज्ञ, दान और तप यह तीनों (मनीषिणाम) बुद्धिमान मनुष्यों के (पावनानि) हृदयों को शुद्ध पवित्र करने वाले हैं। अत एव (पार्थ!) हे अर्जुन! (एतान्यपि तु कर्माणि) यह सब कर्म (सगं फलानि च त्यक्त्वा) आसक्ति तथा फल त्याग की भावना से (कर्तव्यानि) करने चाहियें, यह (उत्तम मत निश्चितम्) मेरा उत्तम तथा निश्चित मत है।

सार्वदेशिक सभा और साहित्य प्रकाशन

(गताङ्क से आगे)

और स्त्रियों के जी बहलाने वाली पुस्तकें ही अधिक बिकती है। आर्य समाज के उच्चकोटि के पुरुष तो सोच लेते है कि यहा मिलेगा ही क्या। वह पढते तो हैं और पुस्तको पर व्यय भी करते हैं परन्तु अगरेजी विक्रेताओं की पुस्तको पर।

इसका क्या इलाज है? मैंने सोचकर एक और प्रस्ताव निकाला है। पाठकगण हसेंगे या शायद कुपित भी हों कि यह नये २ प्रस्तावों को सामने लाकर हमको व्यर्थ हा।दक किया करता है। जिस चीज की महत्ता हमारी समझ मे नहीं आती उसको बार २ दुहरान से क्या लाभ? परन्तु इसका उत्तर ही क्या दिया जाय। क्या आप चाहते हैं कि मैं मुह ढक कर सो रहूँ। अच्छा प्रस्ताव तो सुन लीजिये। आपकी रद्दी की टोकरी तो काफी बडी है।

वह प्रस्ताव यह है कि १००० ऐसे आर्य सज्जन हो जो हर साल १५) रु० की नई पुस्तकें सार्वदेशिक सभा से खरीद लिया करें। वे अपना नाम और पता सभा को भेज देवे और वचन दें कि सभा के वी० पी० छुड़ा लिया करेंगे। या १५) सभा के पास भेज देवें। यदि सभा को यह निश्चय हो कि हर नई पुस्तक की कम से कम १००० प्रतिया छपते ही एक सप्ताह के भीतर निकल जायंगी तो वर्ष भर में आठ सात अच्छी पुस्तकें निकल सकती हैं जिनकी २००० प्रतिया छपवाई जा सकती हैं, १००० स्थायी ग्राहकों के लिये और १००० साधारण बिक्री के लिये। इससे आप अपना निजी पुस्तकालय भी बना सकेंगे और आर्य समाज का सामूहिक रीति से भी साहित्य भण्डार बढता जायगा। जब सभा का आर्थिक शक्ति निश्चयात्मक होगी तो सभा देश विदेश की आवश्यकताओं का विचार करके उच्च विद्वानों से अपने मन का साहित्य भी बनवा सकेगी। यह योजना कठिन तो नहीं है। परन्तु एक प्रकार से कठिन भी है। समाजों और सभाओं के अधिकारियो का मनोवृत्ति कैसे बदली जाय, क्या मैं आशा करू कि आर्य समाज के सहयोगी पत्र मेरे इस लेखको छाप देंगे और क्या मुझे अपने मन को यह आश्वासन दे लेना चाहिये कि समाजों के मत्री गण इस लेख को सुनाने और इस योजना को सफल बनाने मे सभा का हाथ बटावेगे। यदि भारत वर्ष की ढाई सो समाजे भी अपने वार्षिक बजट में से पुस्तकालय के लिये १५) अलग निकाल सकें तो शेष ७५० खरीदार भी मिल जायगे।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मत्री सभा

———०———

आर्य जन क्या करें ?

लेखक—श्री पं० इन्द्र जी विद्या वाचस्पति प्रधान सार्वदेशिक सभा देहली

प्राय आर्य पुरुष मिल कर तथा पत्र द्वारा यह पूछते रहते हैं कि आर्यसमाजी होने की हैसियत से उन्हें क्या करना चाहिये ? आर्य समाज की आवश्यकता और प्रोग्राम के सम्बन्ध में भी कई प्रश्न किये जाते हैं। उन के समाधान के लिये मैं निम्नलिखित निर्देश उपस्थित करता हूं। ये निर्देश संक्षिप्त है, परन्तु इनका अभिप्राय सर्वथा स्पष्ट है।

(१) आर्यसमाज का मुख्य लक्ष्य विश्व भर को आर्य बनाना है। यह तभी सम्भव हो सकता है यदि प्रत्येक आर्य केवल नाममात्र का आर्य न बन कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करने वाला सच्चा आर्य बने। अत एव आर्यसमाजों के कार्यक्रम का सब से प्रथम और स्थायी अङ्ग यह होना चाहिये कि वह अपने सदस्यों और सहायकों को श्रेष्ठ विचार और श्रेष्ठ आचार से युक्त आर्य बनाये।

(२) विचार और आचार में आर्यत्व लाने के लिये अत्यन्त आवश्यक है कि आर्यजन आर्य ग्रन्थों का स्वाध्याय नित्य नियम से करें और अपनी सन्तानों को करायें। आर्यमात्र का ध्यान व्यक्तिगत और सामूहिक स्वाध्याय की ओर खींचना अत्यावश्यक है। आशा है कि सब आर्य घरानों और आर्य समाजों में नित्य स्वाध्याय की व्यवस्था की जायगी।

(४) यह बात निश्चित है कि संसार में तब तक कोई राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता और न कोई राज्य चल सकता है जब तक उसके नेता श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने वाले लोभ मोह से शून्य आर्य व्यक्ति न हों। अत आर्यमात्र का कर्त्तव्य है कि वे व्यक्तिश आर्यसमाज के नियमों का पालन करते हुए अपने अपने राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में प्रमुख भाग लें और प्रत्येक दिशा में अग्रगामी बनें। इस से जहां सार्वजनिक जीवन में शुद्धता और दृढता आयगी वहां संसार में आर्यधर्म का प्रभाव बढेगा।

(५) आर्यसमाजों को अपनी कार्य शक्ति निम्नलिखित लक्ष्यों पर केन्द्रित करनी चाहिये।

(क) स्वाध्याय तथा सत्संग द्वारा आर्यजनों के जीवनों को सच्चा आर्य जीवन बनाने का यत्न किया जाय।

(ख) आर्यसमाज के आन्तरिक विरोधों को दूर किया जाय।

(ग) आर्यजन और आर्यसमाजें प्रत्येक स्थान पर सेवा के कार्य में अग्रसर हों, और सेवा केन्द्रों का संगठन करें।

(घ) धर्मप्रचार के कार्य में शान्तिपूर्वक प्रचार, सेवा और शिक्षा आदि साधनों को मुख्य स्थान दिया जाय।

गुरुकुल शिक्षा का महत्त्व

लेखक—श्री प० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार

बड़े बड़े विद्वान विभिन्न दृष्टियों से विचार करते हैं कि शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिये। परन्तु वे इस महत्त्व पूर्ण प्रश्न का उत्तर उतनी स्पष्टता से नहीं देते जितनी स्पष्टता और निश्चयात्मकता से दे देना चाहिये। निरुक्तकार यास्काचार्य इस गम्भीर प्रश्न का हल तीन अक्षरों के आचार्य शब्द मे करते हैं। यह संस्कृत भाषा की अपूर्व और विचित्र महिमा है कि उसका प्रत्येक शब्द अपने में बड़े विस्तृत ज्ञान को ढाके रहता है। आचार्य का निर्वचन करते हुवे यास्काचार्य लिखते हैं। "आचार्य आचारं ग्राहयति आचिनोति अर्थान् आचिनोति बुद्धिम्" अर्थात् आचार्य वह है जो शिष्य को सदाचार ग्रहण करावे उसमे शब्दों के अर्थों का संचय करे, और उसकी बुद्धि को बढावे। बस शिक्षा के एकमात्र यही तीन उद्देश्य होने चाहियें कि १ विद्यार्थियों के सदाचार का निर्माण किया जावे। २ उसे प्रत्येक शब्द के अर्थ का साक्षातकार कराते हुये उस में वस्तुओं का यथार्थ बोध संचित कर दिया जावे। और ३ उसकी ईश्वरीय प्रदत्त बुद्धि को पूर्णतया विकसित किया जावे। यदि वर्तमान यूनिवर्सिटियों की शिक्षा पद्धति की ओर दृष्टि डाली जावे तो हमें स्पष्ट रूप से विदित होता है कि सदाचार निर्माण, पदार्थावबोध और बुद्धिविकास, शिक्षा के इन तीन उद्देश्यों में से प्रथम और अन्तिम उद्देश्य को सर्वथा भुलाया हुवा है। सदाचार निर्माण तो शिक्षा क्षेत्रमें से बहिष्कृत है ही परन्तु इस के साथ साथ पाठ प्रणाली की यन्त्र कला में से बिना किसी ननु नच के प्रत्येक विद्यार्थी को गुजारने से उन की ईश्वर प्रदत्त बुद्धि का विकास भी नहीं हो पाता। होना तो यह चाहिये था कि जैसे सूर्योदय के होने पर सूर्य प्रकाश से रोग कृमि नष्ट हो जाते हैं, चोर चोरी से और यार यारी से विरत हो जाते हैं, मलिनता दूर हो जाती है और बन्द कमल खिल जाता है उसी प्रकार विद्योदय के होने पर विद्या प्रकाश से काम क्रोध, लोभ, मोहादि मल दूर हों, पाप कृमि नष्ट हों, और बुद्धि कमल का विकास हो। परन्तु इस माया रूप धारण विद्या से पाप मल की वृद्धि होती है और बुद्धि कमल बिना खिले ही मुरझा जाता है।

एवं शिक्षा के दूसरे उद्देश्य की पूर्ति के लिये किताबी शिक्षा की ओर ध्यान दिया जाता है। ऐसी शिक्षा से दूसरा उद्देश्य भी पूर्णतया पूरा नहीं होता, पदों की रटन्त पर पूरा बल लगाया जाता है, पदार्थावबोध यथार्थ में नहीं होता। इस से पाठक समझ सकते हैं कि आधुनिक यूनिवर्सिटी शिक्षा पद्धति कितनी दोषपूर्ण है। यह शिक्षा पद्धति वह है जो कि शिक्षा के तीनों उद्देश्यों मे से किसी भी उद्देश्य को सच्चे अर्थ में पूर्ण नहीं करती। इस लिये हमारे ऋषियों ने जो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली प्रचलित की थी वह विवेक पूर्वक है और वही वास्तव में मनुष्य को मनुष्य बनाने वाली है। वह शिक्षाप्रणाली कैसी है उसे मैं ऋषि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश के आधार पर ही बतलाना चाहता हूँ जिससे कि

विद्वान लोग उस पर अधिकाधिक विचार करते हुए विद्यार्थियों के जीवन को सफल बनावें।

शिक्षा का महत्व केवल विद्वत्ता मे नहीं प्रत्युत सदाचार से है। एक बड़ा भारी विद्वान् प्रत्येक दार्शनिक विषयों को भली प्रकार समझाने की योग्यता रखने वाला यदि अपने आचार द्वारा प्रभाव नहीं डाल सकता तो उसकी समस्त विद्वत्ता लोगों के लिये व्यर्थ और उसके लिये भार स्वरूप है उसके विरुद्ध एक साधारण विद्वान जो अपने आचार द्वारा यह सिखा सकता है कि श्रेय और हेय मार्ग क्या हैं, ससार का बड़ा उपकार कर सकता है। अतएव शिक्षा पूर्ण तभी है जब कि विद्वत्ता के साथ साथ चरित्र सगठन का भी बल हो। वही शिक्षा सस्था वस्तुत लोकोपयोगी सस्था है जहां इस प्रकार का प्रबन्ध हो।

गुरुकुल इस प्रकार की सस्थाओं में से है जहां विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत कराते हुये विद्या की प्राप्ति कराई जाती है। वृक्ष की उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता उसके फल द्वारा निश्चय की जाती है। गुरुकुल के निकले स्नातकों में से कइयों ने पाठकों को यह दिखला दिया है कि उनकी शिक्षादात्री सस्था सचमुच देश के एक आवश्यक अग की पूर्ति कर रही है।

यह ठीक है कि बहुत से लोग इससे निराश हो गये हैं परन्तु इसका कारण यह है कि कार्य आरम्भ करते ही लोग बड़े २ फल की इच्छा करने लग जाते हैं। उन बड़े लोगों ने आशा की थी कि गुरुकुल से कणाद और गौतम निकलेंगे परन्तु यह ध्यान नहीं दिया कि इतने दिनों की बिगड़ी हुई परिपाटी एक दम कैसे सुधर सकती है। आखिर वे बालक जो गुरुकुल मे प्रविष्ट हुये हैं उन लोगों की ही सन्तान हैं जिन्होंने नियम पूर्वक गृहस्थाश्रम मे प्रवेश नहीं किया है और उनके पढाने वाले किसी गुरुकुल के नहीं प्रत्युत कालिज के निकले हुये हैं और आधुनिक शिक्षा प्रणाली के वातावरण से बाहर नहीं हैं। धैर्य पूर्वक स्वामी जी के बतालए हुये मार्ग का अनुसरण करते चले जाय तो आशा है अवश्य सफलता प्राप्त होगी और किसी न किसी समय वह दिन भी देखने मे आ जायेगा जिसकी सबको प्रतीक्षा है। ईश्वर वह दिन लावे।

आर्यों का कर्तव्य—यह वृक्ष अमर स्वामी श्रद्धानन्द के हाथों से लगाया हुआ है और उन्हीं के रुधिर से सींचा हुआ है। ऐसे अद्भुत वृक्ष की पच्चासवीं वर्ष गाठ अगले मार्च मास मे मनाई जा रही है आर्य जाति को कुछ विशेष प्रण करने चाहिए। आर्य जाति से मैं केवल दो प्रणों की अभ्यर्थना करता हूँ एक तो यह कि अपने आचार्य ऋषि दयानन्द की आज्ञा को शिरोधार्य करते हुये उस जाति का प्रत्येक व्यक्ति अपनी सन्तानों को गुरुकुल के वृक्ष के ही नीचे बैठाना अपना कर्तव्य समझे और दूसरा उस वृक्ष के सींचने मे तन मन और धन किसी की कमी न रखें। ऐसा न हो कि आर्य जाति की असावधानता से अमर श्रद्धानन्द का लगाया हुआ यह भारत पावक वृक्ष कभी मुरझा कर सूख जावे और फिर पीछे पछताकर सिर नीचा किये सबसे यह सुनना पड़े कि अब पछताने से क्या होता है जब चिड़िया चुग गई खेत। अत हे आर्य जाति के वीरो उठो, कमर कस कर तैय्यार होवो अब अधिक प्रतीक्षा का काल नहीं रहा।

मेरी श्रीस्वामीजी विषयक भावनामें कुछ आक्षेप

(लेखक—श्री प० चूडामणिजी शास्त्री कार्यवृत्त आचार्य सनातन धर्म कालेज मुलतान)

काशी से निकलने वाले सिद्धान्त के २९ अगस्त तथा १३ सितम्बर १९४९ के अङ्कों में सार्वदेशिक मासिक में प्रकाशित 'श्री स्वामी दयानन्द जी के विषयमें मेरी भावना' पर श्री प० दीनानाथ जी शास्त्री ने कुछ आक्षेप किये हैं। मैं उनका उत्तर देता हूँ—

श्री प० दीनानाथ जी शास्त्री पूरे मेधावी है, अनुसन्धाता हैं, सयमी और साधु स्वभाव हैं वे किसी विषय की तह तक पहुँचने का प्रयास करते हैं, उनमें बहुधा पहुँच भी जाते हैं अत मैं उनकी मेधा से प्रभावित हूँ। किन्तु कतिपय विषयों में उनकी क्लिष्ट कल्पना भी देखने को मिलती है, उसका कारण यह होता है कि जो विषय मौलिक नहीं होता केवल काल्पनिक होता है उसे भी वे जैसे तैसे सिद्ध करने का प्रयास कर देते हैं, अत एव वे उसमे वैसे सफल नहीं हो पाते जैसे व मौलिक विषयों में प्रकाम प्राप्तफल हो जाते हैं। यही बात मेरे आक्षेपों पर भी है।

मेरी जो भावना श्री स्वामी जी के विषय मे थी वह अब भी है उसमें कोई न्यूनता न आएगी। किन्तु उसके लिये भावुक को यह दल-हना देना कि भावनीयकी एक एक बात को मानने के लिये उसे तैयार रहना चाहिए। यह ठीक नहीं। जब कि मेरी भावना के आदर्श श्री स्वामी जी ने स्वयम् उदारता पूर्वक कह दिया है कि विद्वान लोग यदि मेरी बात को भी कहीं वेद विरुद्ध समझे तो उसे एकमति होने पर त्याग भी सकते हैं। उन्होंने तो नियम भी ऐसा बनाया है कि सत्य को छोडने और असत्य को ग्रहण करने मे सर्वदा उद्यत रहना चाहिये तब किसी के मत को साकल्येन मानना अपनी बुद्धि को बेचना है अथवा अनेक वेद सिद्ध करना है। वेद तो चार ही हैं, वे ही स्वत प्रमाण हैं शेष ग्रन्थ या ऋषिवाक्य तो परत प्रमाण है—वेदानुकूल हों तो प्रमाण अन्यथा अप्रमाण। तभी तो 'या वेदबाह्या स्मृतय याश्च काश्च कुदृष्टय। सर्वास्ता निष्फला प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ता मता॥ (मनु०) ऐसा वाक्य श्री मनु ने कहा है। अत चार वेदो के अतिरिक्त किसी भी ग्रन्थ को मानने या उसका प्रमाण उद्धृत करने वाले को इस लिये अनुरोधित करना कि 'यदि तुम उसको मानते हो तो उसकी इस बात को मानो' नितराम् असङ्गत है।

दूसरा—मेरे 'सनातन धर्मी होने मे भी आक्षेप है। 'सनातनधर्मी' आज उसको कहा जाता है जो आखमूंद कर सभी ग्रन्थों को (शीघ्रबोधतक) वेदवत् प्रमाण माने, जो उसमें किञ्चिन्मात्रभी विचलित हो बस वह 'सनातन धर्मी' के पर्वत से गिरा। यह भूल है। सनातन-धर्मी तो वस्तुत वही है जो वेदानुयायी हो। वेदानुकूल सभी शास्त्र ठीक हैं तब पुराण भी ठीक हैं। किन्तु वेदों को पीठ देने वाले पौरा-णिक प्रकरण कैसे प्रमाण माने जा सकते हैं।

पुराणों की आयु अधिक से अधिक पाच सहस्र वर्ष। पर एक अरब सत्तानवे करोड़ वर्षों की सृष्टि में इनकी आयु तो नगण्य सी है। वैसे भी 'पुरानव भवति' से पुराण भी कुछ सहस्र वर्ष नवीन ही थे। अच्छा यदि वे पुराने भी हों तो क्या 'पुराने हैं' इसलिये प्रमाण हैं? ऐसा तो हो नहीं सकता। इस पर सम्भवत कालिदास ने भी कह दिया है कि 'पुराण मित्येव न साधु सर्वम्' यत यह पुरान है अत उसे अवश्य मानो' ऐसा तो हो नहीं सकता। इसलिये सनातनधर्मी होने का क्षेत्र इतना सकुचित नही बनाना चाहिये।

तीसरा—मैंने जो शनैश्चर बुध और केतु के मन्त्र दिये हैं वे तो उपलक्षण मात्र हैं इन पर कहना कि शान्ति मन्त्र प्रमाण हैं' सुतराम् असङ्गत है। वैसे लिखने का मेरा तात्पर्य तो यह था वैदिक काल में ग्रहों की पूजा उन २ मन्त्रों से प्रचलित न थी। तब पुराण प्रोक्त पूजा प्रकार भी न था। यह दूसरी बात है कि ये ग्रह शान्ति दायक हों' ऐसा कहा जाय या उनका वर्णन वेद मे मिलता हो। इन ग्रहों का अपलाप तो किया नहीं गया। पर शनैश्चर का जल प्रधान होने से शनैः २ चलना नितराम् असङ्गत है। वह तो उसकी परिधि भूमि से इतनी दूर है कि सभी ग्रहों के समान गतियुक्त होने पर भी अत्यल्प परिधिवाला चन्द्रमा जहा अढाई दिनों मे राशि को पार कर जाता है वहा दूर परिधिवाला शनैश्चर उसी राशि को पार करने में अढाई वर्ष लगा देता है। किन्तु जल प्रधान होने से उसकी गति मे मन्दता बतलाना ठीक नहीं। एवम् 'उद् बुध्यस्व=बुधो भव' ऐसी क्लिष्ट कल्पना भी हृदयङ्गम नहीं होती। यह तो 'त्रिभ्य आख्यातेभ्यो जायते'। की तरह बहुत दूर चले जाना है। एवम् विनियोग लिखने वालों की व्यापकता की आड लेकर इन मन्त्रों को जैसे तैसे पूजा परक लगाना जहा क्लिष्ट कल्पना है वहा अमौलिक भी है। पुराणों का ध्येय तो था 'सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च। वंशानुचरितं चैव पुराण पञ्चलक्षणम्॥' सृष्टि क्रमवर्णन राजेतिहासवर्णन और मन्वन्तरवर्णन बस। ऐसी स्थिति में तो मुझे इतिहास पुराणाभ्या वेदार्थमुपबृहयेत्' यह भारतीय वाक्य भी खटकता है। हम क्या अधिक से अधिक पाच सहस्र वर्षों की आयुवाले पुराणों से करोडो वर्षों से चले आने वाले वेदों को परखे? स्वत प्रमाण वेदो को परत प्रमाण पुराण से परखें? यह तो मेरी समझ मे नहीं आता। हा वैदिक रहस्यों को देख कर उनकी आलङ्कारिक रचना को पुराणों म परखें तो और बात है एवम् पुराणों के आख्यानों की मौलिकता को भी हम वेद मे देखें। जैसे 'अहल्या अप्सरसः विष्णु सुपर्ण आदि शब्दों के वैदिक रहस्यों को जानते हुए उन्हे पुराणों में आलङ्कारिक या ऐतिहासिक वेष पहिने हुए देखे। इसलिये पुराणों की दृष्टि से ग्रहों की पूजा को वैदिक सिद्ध करना ठीक नहीं। प्रत्युत वैदिक वर्णन से पुराणों के पूजा प्रकार को आलङ्कारिक रूप देना कहीं माना जा सकता है। पर उन २ मन्त्रों को भी उनकी पूजा में लगाना उचित नहीं प्रतीत होता।

चौथा—मुझ पर यह आक्षेप भी ठीक नहीं जंचता कि मैंने श्री स्वामी जी के ग्रन्थ पढ़ कर वैसा लेख लिखा है। सच तो यह है कि मैंने

आज तक सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों का एक प्रकरण भी साद्यन्त नहीं पढा। परन्तु उनके सामूहिक उत्थायक विचारो से मैं अवश्य सहमत हूँ और उन्हे सम्मान की दृष्टि से देखता हूँ।

पाचवा—ग्रहों के मन्त्रों की सिद्धि में जितने ग्रन्थों के प्रमाण दिये गये हैं वे सभी पाच सहस्र वर्षों के अन्दर बने हुए ग्रन्थों के हैं जिनका पुराणानुकूल होना आश्चर्यजनक नहीं। मनु तो गणेश पूजन को न लिखे पर याज्ञवल्क्य उसे लिखे तो उसकी प्राचीनता या प्रामाणिकता का क्या मूल्य ? अत इन ग्रन्थों की स्वत प्रमाणता नहीं हो सकती। दूसरा उन २ ग्रहों के प्रतीक एक दूसरे से नहीं मिलते यत वे कल्पित हैं मौलिक नहीं। सत्य पक्ष एक जैसा होता है और असत्य पक्ष भिन्न भिन्न।

छठा—ध्वजकी पूजा में केतु की पूजा कहना निरराम् ध्वज को ही केतु मानकर उसे पूजा के लिये खडा करना है। केतु तो राहुकी छाया मात्र है कोई भिन्न ग्रह तो है नहीं अत एव ठीक उस राहु के सामने सातवें राशि में रहता है उसकी गति के साम्मुख्य में वह इञ्च भर भी आगे पीछे नहीं होता जैसे किसी की छाया। अत उसे पृथक् ग्रह मानना और फिर उसकी पूजा के लिये एक मन्त्र खडा करना एव ध्वजको केतु मानना यह सब अमौलिक कल्पना है।

सातवा—शूद्रों को अछूत सिद्ध करना भी मेरे विषय में ठीक नहीं। इसका उत्तर नो मैं पहले ही दे चुका हू कि किसी के विषय मे यह कहना कि वह उसकी सभी बातें माने ठीक नहीं। यदि कोई शूद्रों के विषय में मेरे समग्र विचार देखना चाहे तो मेरे द्वारा (प्रभुके आदेशसे) प्रणीत 'भारतीय धर्मशास्त्र' में देख सकता है। उक्त ग्रन्थ मन्त्री भारतीय संस्कृति सम्मेलन काशी को १॥।—) मनी आर्डर भेजने से मिल सकता है। इसका दूसरा भाग भी शीघ्र प्रकाशित होने वाला है। अन्त मे एक बात प्रकरणगत लिख देना चाहता हूँ कि मेरा यह लेख सार्वदेशिक, के सम्पादक श्री धर्मदेवजी सिद्धान्तालङ्कार ने उदारता पूर्वक छापा है उनका धन्यवाद है अच्छा हो यदि 'सिद्धान्त' सम्पादक भी अपनी उदारता से मेरे लेख प्रकाशित करें। यहा पर मैं 'संस्कृतम्' के सम्पादक उदारधी सुधी श्री प० कालीप्रसाद श्री शास्त्री को भी धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता कि उन्होंने मेरे एक (वर्णाश्रमाणा वतमाने कीदश स्वरूप मपेक्षितम्) निबन्ध को अपने पत्र में छापा है। मने उन्हें उक्त ग्रन्थ भी आलोचनार्थ भेजा है। उसपर उन्होंने उपहासात्मक किन्तु अमौलिक आलोचना तो की। किन्तु उस ग्रन्थ की मौलिक आलोचना नहीं की। फिर भी मैं उनको धन्यवाद करता हूँ कि उन्होंने 'संस्कृतम्' में भारतीय धर्म शास्त्र के कतिपय लेख ज्यों के त्यों उद्धृत कर दिये हैं। बस ऐसी उदारता का परिचय यदि एक सूचना द्वारा मुझे प्राप्त होजाय तो मैं आगेको उन २ पत्रों में अपने विचार उपस्थापित कर सकूंगा।

अब मेरा ध्येय यही है कि मैं भारतीय विद्वान् महानुभावों के विचारों को इतना ऊंचा ले जाऊं कि वे वहा पहुँच कर समग्र भारत को उतना ऊंचा ले जायें। इस मध्यमकालिक विचारधारा से हमारा पर्याप्त पतन हुआ है जिसका फल हमारी जातिका ह्रास और विधर्मियों की वृद्धि हुई है जिसका प्रत्यक्षफल पाकिस्तान, सर्व विदित है।

दान सूची

सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि

(१६-११-५१ तक प्राप्त दान)

१८।।) (योग) दान उन सज्जनो का जिनका ५) से कम है।

५०) श्री मन्त्री जी आर्य समाज रौयल रोड सिंगापुर
५) ,, रामदेव जी गुप्त भरतपुर मंडीनाज मुरादाबाद
५) ,, मंत्री आर्य समाज अमरावती
२१) ,, ला० रोशनलाल जी तलवाड
५) ,, लोचन विशाल जी जोधपुर
२५=) ,, ला० ज्ञानचन्द जी नई देहली प्रतिज्ञात राशि १००) का एक अंश
५) ,, प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति देहली
७) ,, ज्वालाप्रसाद जी वकील गोन्डा
५) ,, जगदेवप्रसाद जी प्रधान आर्य समाज गोन्डा
१५) ,, अमरनाथ जी आर्य उज्जैन मालवा
१६) ,, सेवाराम जी चावला देहली
१०) ,, परमानन्द जी कानपुर
२५) ,, परमानन्द जी सनेजा कानपुर
५) श्रीमती जयदेवी जी देहली
५) श्री मंजुनाथ जी कार्कल देहली
५१) श्री चरणदास जी पुरी एडवोकेट दिल्ली।
१२।।।) श्री प० रामप्रताप जी तितिक्षु त्रिवेदतीर्थ पुरोहित आ० स० सांभर लेक।

२८६।=)
१६६७।।) गतयोग
१६५३।।।=) सर्वयोग

सब दान दाताओं को धन्यवाद।

देश देशान्तरों में वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रचार की समुचित व्यवस्था कराने के उद्देश्य से स्थापित 'सार्वदेशिक वेद प्रचार निधि' के लिये उदार दान देना प्रत्येक आर्य नरनारी का कर्तव्य है। खेद है कि अनेक आर्य नर नारियों ने अब तक इस कर्तव्य का पालन नहीं किया। प्रत्येक आर्य समाज का कर्तव्य है कि अपने सदस्यों से कम से कम १) वार्षिक दान की राशि एकत्रित करके सार्वदेशिक सभा कार्यालय में तत्काल भिजवा दें। यह न्यूनतम धार्मिक कर है जिसके देने का सभा ने सब आर्यों को आदेश दिया है। यदि इतना भी प्रत्येक आर्य कर दें तो इस शुभ-कार्यार्थ अच्छी राशि एकत्रित हो सकती है। जो जितना उदार दान इस पुण्यकार्यार्थ देगा वह उतना ही अधिक पुण्य और यश का भागी होगा।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा

स्थापना दिवस

२०) श्री सत्यप्रकाश जी अमरोहा (मुरादाबाद)
५) ,, मन्त्री आ० स० सोमेसर मारवाड़
१०) ,, ,, आ० स० ठाकुरद्वारा मुरादाबाद

३५)
१०१७।।) गत योग
१०५२।।) सर्व योग

इस वर्ष सभा के कोष में यह राशि कम से कम २०००) आनी चाहिए। इस राशि की पूर्ति में लगभग ६००) की कमी है। जिन समाजों का

भाग अप्राप्त है उन्हे अपना भाग भेजने मे विलम्ब न करना चाहिए।

दयानन्द पुरस्कार निधि

५०) श्री ला० रलियाराम जी ठेकेदार नई देहली
२५) „ ....
५) „ रामबहादुर जी मुख्तार पूरनपुर पीलीभीत
१०१) „ शूरजी बल्लभदास जी बम्बई
५) „ विजयराम शर्मा पुराणपुर
५) „ बाबू ज्योतिस्वरूपजी शेरसीसराय इटावा
५) „ विद्याभूषण जी कला प्रेस इलाहाबाद
१५) „ अमरनाथ जी आर्य उज्जैन मालवा
२००) „ मंत्री जी आर्य समाज दारे सलाम ईस्ट अफ्रीका
१००) „ मंत्री जी आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट-अफ्रीका नैरोबी

५११) * इसमें से ५०००) श्री अमृतधारा
* ७४५९।।) ट्रस्ट देहरादून का दान भी सम्मिलित है
७९७०।।)

दान दाताओं को धन्यवाद
गंगा प्रसाद उपाध्याय
मंत्री सार्वदेशिक सभा, देहली।

ग्राहकों से नम्र निवेदन,

निम्नलिखित ग्राहकों का चन्दा दिसम्बर मास के साथ समाप्त होता है अत प्रार्थना है कि वे अपना चन्दा तत्काल हु मनी आर्डर द्वारा भेज दें अन्यथा आगामी अक उनकी सेवा मे वी पी, द्वारा भेजा जायगा। धन प्रत्येक दशा मे ३० १-४६ तक कार्यालय मे पहुंच जाना चाहिये। कृपया कम से कम अपने ५ मित्रों को भी सार्वदेशिक पत्र का ग्राहक बनाइये। मनी आर्डर अथवा सभा के साथ पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक सख्या लिखना कभी न भूले। इससे पत्र व्यवहार मे असुविधा होती है।

ग्राहक सख्या	पता
१०	श्री ठा० ब्रजनन्दन सिंह जी पोस्ट मनेर जिला पटना
१८	,, मन्त्री जी आर्य समाज राना का तालाब फीरोजपुर सिटी
०३	,, मन्त्री जी आर्य युवक पुस्तकालय लल्लापुर काशी
०६	श्रीमती मुख्याधिष्ठात्री जी, कन्या गु० कु० सासनी जिला अलीगढ
०८	,, मन्त्री जी आर्य समाज आबूरोड (राजपूताना)
५१	,, डा० रामनारायणसिंह जी आर्य होम्यो-हाल आरा
७३	, राधाकृष्ण जी तारबाड सक्थू बरबरशाह श्रीनगर, काश्मीर
७४	, बा० जगनन्दन लाल जी गडवाकर इलाहाबाद
७०	रामचन्द्र सहाय जी गर्ग नगाना
७७	,, मदनजित जी आर्य महाशय दी हट्टी फारोजपुर
७८	, लक्ष्मीचन्द जी वार्ष्णेय काजिमाबाद अलीगढ
७०	,, लालाराम जी ठेकेदार दिल्ली शाहदरा स्टेशन एस० एस० आर०
८०	, कुवर जोरावर सिंह जी आर्य कन्या महा विद्यालय बड़ौदा
८३	, मन्त्री जी आर्य समाज अम्बाला शहर
८७	, मुख्याधिष्ठाता जी गु० कु० घामीपुरा पोस्ट मन्सूरपुर
८६	श्रीमती मुख्याधिष्ठात्री जी आर्य कन्या पाठशाला हाई स्कूल हरदोई
६७	,, आर० वेणु गोपाल जी केवेलरी रोड बगलौर कैन्ट
०६	,, मन्त्री जी आर्य समाज हासापुर पोस्ट सीखड जिला मिर्जापुर
१०३	, मन्त्री जी आर्य कुमार सभा विश्व भवन जौनपुर
१४	, मन्त्री जी वैदिक वाचनालय आर्य समाज गुलबर्गा हैदराबाद दक्षिण
१४६	, चौ० नानकचन्द जी अलवर स्टेट
१६७	गोपालदास जी सेकसरिया आगरा
०००	,, प्यारेलाल जी ७, किंग एडवर्ड रोड, नई दिल्ली
२०४	,, अनेकेशवार्य जी शास्त्री जमीगोल्वेपल्ली जिला कृष्णा
००६	,, जुगलकिशोर जी सराय मु० महादेव गढ रोसड़ा घाट

२३० ,, दौवालाल जी पटेल मु० बरबन्वा पोस्ट मान्ढर
२३५ ,, मन्त्री जी आर्य समाज एतमादपुर जिला आगरा
२३६ ,, शिवदयाल सोमचन्द जी आर्य आमला जिला बेतूल
२३७ ,, सीताराम जी पोस्ट स्थान काठ जिला मुरादाबाद
२३६ ,, मन्त्री जी आर्य समाज वैदिक वाचनालय लातुर
२४१ ,, अध्यक्ष जी ग्रामोन्नकारिणी सभा कु वर भवन आमला जिला बेतूल सी० पी०
२४३ ,, जोखनराम जी मन्त्री नगर आर्य समाज उटारी जिला पलामू
२५१ ,, मन्त्री जी आर्य समाज पथरगामा जिला उसका विहार
२५२ ,, गया प्रसाद जी मन्त्री आर्य कन्या पाठशाला बान्दा यू० पी०
२५४ ,, प्रिन्सिपल डी० ए० वी० हाई स्कूल मैनपुरी यू० पी०
२५८ ,, रामशरण जी आर्य प्रधान आर्य समाज माला खेड़ा (अल्वर राज्य)
२६० ,, आर० सी० शास्त्री गार्ड मधुपुर जिला सन्थाल परगना (विहार)
२६२ ,, तीरथराम जी आर्य वेल्डर जुबेली मिल अहमदाबाद
२६६ ,, बाल किशन पन्नालाल जी मलपनी पूना
२७३ ,, आचार्य जी गु० कु० झज्जर जिला रोहतक
२८७ ,, मन्त्री जी आर्य समाज शामसाबाद खोर जिला फर्रुखाबाद
३०२ ,, शूरजी बल्लभदास जी कच्छ केसल सेन्डर्स ट्रब्रिज बम्बई
३४७ ,, गौरीशंकर जी पाठक माधोगंज जिला हरदोई
३५२ ,, मन्त्री जी आर्य समाज चरथावल जिला मुजफ्फरनगर
३६० ,, यादराम जी आर्य पाठशाला गुडाम रामपुरा बेरी
३७४ ,, ऋषिराम ब्रह्मदत्त जी त्यागी ग्राम खन्दावली मेरठ
४११ ,, मन्त्री जी आर्य समाज झज्झर रोड जिला रोहतक
४६७ ,, मानीराम जी आर्य मु० वोरी अरब जिला यवतमाल
५६५ ,, मन्त्री जी आर्य समाज हापुड़ जिला मेरठ
६२१ ,, हेडमास्टर साहब, डी० ए० वी० हाई स्कूल सीवान
६२२ ,, स्वामी आनन्द तीर्थ जी भर्थना इटावा
६२३ ,, मन्त्री जी आर्य समाज शिवगंज पोस्ट ऐरनपुरा सिरोही
६२५ ,, मन्त्री जी आर्य समाज सदर बाजार झान्सी
६२६ ,, मैनेजर, भालकेश्वर वाचनालय गंज भालकी
६२७ ,, शिवकुमार सिंह जी आर्य जूही शहर कानपुर
६२८ ,, रामस्वरूप जी गोलमार्केट नई दिल्ली
६२६ ,, मन्त्री जी आर्य समाज पुसद जिला यवतमाल
६३१ ,, मन्त्री जी आर्य समाज शेरकोट जिला बिजनौर
६३२ ,, मन्त्री जी आर्य समाज दाल बाजार लुध्याना

६३३ „ जानकीनाथ जी आर्य नई दिल्ली
६४० „ देवीदयाल जी आर्य खारी बावली दिल्ली
६४१ „ एस० देसाई बी० ए० आर्य सभा केरल चैंगानूर
६४२ श्री चक्रपाणि जी जैना बड़ा कुशास्थली जिला गंजाम
६४३ „ सीताराम जी शिल्पी आर्य कानपुर
६४४ „ प्रधान जी आर्य कुमार सभा बुरहानपुर
६४५ „ डी० जेड बदगूजर आमलनेर जिला खान्देश
६४६ „ मुन्नालाल रामकुमार जी शर्मा स्थान भगवानपुर कुन्दन
६४७ „ मन्त्री जी आर्य समाज मुंगेर विहार
६४८ „ मन्त्री जी आर्य समाज काशीपुर जिला नैनीताल
६४६ „ पुस्तकाध्यक्ष जी मोहनलाल आर्य पुस्तकालय गोपालगंज जिला सारन
६५० „ मुन्नीलाल जी आर्य मालिक देवेन्द्र फ्लोर मिल बंगा जिला धार
६५१ „ वेदव्रत जी शास्त्री आर्य समाज पुलसरा जिला गंजाम
६५२ „ मगलदेव जी शर्मा ग्राम नंगला चन्दी अलीगढ़
६५३ „ मन्त्री जी आर्य समाज हलदवानी जिला नैनीताल
६५४ „ मन्त्री जी आर्य समाज खरगौन जिला निमाड
६५५ „ मन्त्री जी महावीर हिन्दी पुस्तकालय आजमगढ़
६५६ „ मन्त्री जी आर्य समाज ४ दरियागंज मुरारी फाइन आर्ट प्रेस दिल्ली
६५७ „ बा० आनन्द स्वरूप जी सिद्धिपुरा करोलबाग, दिल्ली
६६० श्रीमती सत्यवती देवी जी पुराना बाजार फीरोजपुर शहर
७२२ „ स्वामी इशानन्द जी सरस्वती मिडिल स्कूल डालावास पोस्ट भादरा जिला महेन्द्रगढ़
८०२ „ मन्त्री जी आर्य समाज बीकानेर
८०५ „ मन्त्री जी आर्य समाज बनारस छावनी भोजवीर बनारस केन्ट
८११ „ हरनन्दन प्रसाद जी मुख्तार मु० गोला आरा
८३५ „ हरिसिंह जी आर्य मु० पोस्ट दाहा जिला मेरठ
२० „ रामस्वरूप जी अवस्थी रायचूर जी आई.पी
५२६ „ मन्त्री जी आर्य समाज व्यावल भोपाल राज्य
६८६ „ मन्त्री जी लालकुर्ति बाजार अम्बाला शहर
७३६ „ रामस्वरूप चिरन्जीलाल जी धुरी

व्यवस्थापक
सार्वदेशिक पत्र

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार

की

उत्तमोत्तम पुस्तकें

—○—

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,, ,,	१।)
(३) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,, ,,	१॥)
(४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, ,,	२)
(५) आर्य डायरेक्टरी	,, ,,	१।)
(६) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,, ,,	।)
(७) आर्यसमाज के महाधन सचित्र	,, (स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी)	२॥)
(८) स्त्रियों का वेदाधिकार	प० धर्मदेव जी (विद्या वाचस्पति)	१।)
(९) आर्यवीरदल बौद्धिकशिक्षण	श्री प०इन्द्रजी	≡)
(१०) यम पितृ परिचय	प० प्रियरत्न जी आर्ष	२)
(११) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(१२) वैदिक ज्योतिष् शास्त्र	,,	१॥)
(१३) वैदिक सूर्य विज्ञान	,,	≡)
(१४) वेद में असित शब्द	,,	–)
(१५) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	–)
(१६) वेद में दो बड़ी वैदिक शक्तियां	,,	१)
(१७) विमान शास्त्र	,,	।≡)॥
(१८) वैदिक राष्ट्रियता	(स्वा० ब्रह्ममुनि जी)	।)
(१९) स्वराज्य दर्शन सजिल्द—	(प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित	१)
(२०) नया संसार	(श्री प० रघुनाथप्रसाद जी पाठक	≡)
(२१) मातृत्व की ओर	,, ,,	१।)
(२२) कथा माला	(म० नारायण स्वामी जी की कथाओं के आधार पर)	॥।)
(२३) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म	,,	॥≡)
(२४) आर्य शब्द का महत्त्व	,,	–)॥
(२५) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२६) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी	(श्री महात्मा नारायण स्वामी जी कृत)	२)
(२७) योग रहस्य	,, ,,	१॥)
(२८) मृत्यु और परलोक	,, ,,	१।)
(२९) विद्यार्थी जीवन रहस्य	,, ,,	॥)
(३०) प्राणायाम विधि	,, ,,	≡)
(३१) उपनिषद् ईश ।≡) केन ॥) कठ ॥) प्रश्न ।≡) मुण्डक ।≡) माण्डूक्य ≡) ऐतरेय ।) तत्तिरय ॥।)		
(३२) श्रीनारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		–)
(३३) शहीदी पट्टिका		।≡)
(३४) आर्य समाज मन्दिर चित्र		।)
(३५) इजहारे हकीकत	श्रीला० ज्ञानचन्द्जी आर्य	॥≡)
(३६) बहिनों की बातें	प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न	१)
(३७) भूमिका प्रकाश	(श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)	१॥)
(३८) वेद और गोमेध	श्री बा० श्यामसुन्दरजी	≡)
(३९) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास		।≡)

(४०) सत्यार्थ प्रकाश गान
प० सत्यभूषण योगी जी) ।=)

(४१) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ।।=)

(४२) भारतवर्ष मे जाति भेद ।)

(४३) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता –)

(४४) आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संघ का कार्यक्रम –)

(४५) शाकर भाष्यालोचन सजिल्द
(प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०) ५)

(४६) महाराणा सागा (श्री हरविलासजी शारदा) १)

(४७) एशियाका वैनिस (स्वामी सदानन्दजी) ।।।)

(४८) आर्य समाज का परिचय „ ≡)
(प० रघुनाथ प्रसाद पाठक)

(४६) सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश ५)

(५०) आर्य समाज के नियमोपनियम –)।।

(५१) धर्मार्य सभा की घोषणानुसार दैनिक सन्ध्या हवन की विधि –)

(५२) आर्यपर्व्व पद्धति (प० भवानी प्रसादजी) १।)

(५३) वर्ण व्यवस्था का वैदिक रूप १।।)
(श्री ला० ज्ञानचन्द जी आर्य)

— o —

BOOKS TO BE HAD FROM

Sarvadeshik Sabha, Delhi.

1 In Defence of Satyarth Prakash 0 2 0
2 Rishi Dayanand & Satyarth Prakash 0 6 0
3 We and Our Critics 0 1 6
4 Universality of Satyarth Prakash 0 1 0
5 Voice of Arya Varta 0 2 0
6. Truth and Vedas
by Late Rai Thakur Dutta Dhavan 0 1
7 Truth Bed Rock of Aryan Culture 0 8 0
8 Vedic Teachings (Atma) 1 4 0
9 Kenopnishat (English)
(Pt Ganga Prasad ji M A) 0 4 0
10 Hindu Philosophy and Modern Science (Rama Chandra M A P E S)
11 The Case of Satyarth Prakash
by S Chandra 1 8 0
12 Arya Samaj & Theosophical Society
(Shri Shyam Sundar Lal Vakil) 0 3 0
13 Daily Prayer of an Arya
(Shri Narayan Swami ji) 0 8 0
14 Glimpses of Swami Dayanand
Bound (Late Pt Chamupati M A) 1 8 0
15 Principles and Bye laws of the
Arya Samaj 0 1 0
16 The Arya Samaj & International
Aryan League 0 1 0
17 Landmarks of Swami Dayanand
Bound (Pt Ganga Prasad ji
Upadhyaya M A) 1 0 0
18 Vedic Culture 3 8 0

卐卐
卐卐